बृहत्पाराशर-
होराशास्त्रम्

बृहत्पाराशरहोराशास्त्रम्

श्री० पं० ताराचन्द्र शास्त्रि विरचितया

एवं तत्पुत्र

श्री० पं० कामाख्या प्रसाद शर्मणा सम्पादितया

'भावप्रकाशिका–'

हिन्दी टीकया सहितम्

**

खेमराज श्रीकृष्णदास प्रकाशन बम्बई

संस्करण- सन् १९८९, संवत् २०४६

मूल्य Rs. १६०।

मुद्रक और प्रकाशक-
मे० खेमराज श्रीकृष्णदास, अध्यक्ष-श्रीवेंकटेश्वर प्रेस, बम्बई-४, के लिये
दे० से० शर्मा, मेनेजर, द्वारा श्रीवेंकटेश्वर प्रेस, खेतवाड़ी, बम्बई-४ में मुद्रित।

श्रीः

भूमिका

विफलान्यन्यशास्त्राणि विवादस्तेषु केवलम् ।
प्रत्यक्षं ज्यौतिषं शास्त्रं चन्द्रार्कौ यत्र साक्षिणौ ।।

सूर्य, चन्द्र, तारा आदि ज्योतिष्पिण्डों के विज्ञान का प्रदर्शक होने से इस शास्त्र का नाम 'ज्यौतिष'शास्त्र है। सूर्य एवं भौमादि ग्रह तथा चन्द्र आदि उपग्रहों की गति, ग्रहण आदि का ज्ञान एवं दिन, मास आदि समय का ज्ञान इसी के द्वारा होने से इसकी सार्थकता है (यद्यपि चन्द्रमा को फलित एवं गणित ज्यौतिष में 'ग्रह' ही कहा गया है 'उपग्रह' नहीं, तथापि आधुनिक विज्ञान द्वारा यह सिद्ध है कि-चन्द्रमा पृथ्वी का 'उपग्रह' है) तथा अमावास्या पूर्णिमा आदि यज्ञ के समय का निर्णायक होने से वैदिक धर्म का अंग है। मनुष्यों के शुभाशुभ का सूचक होने से तो इस शास्त्र की विशेष सार्थकता है तथा मुहूर्तों का निर्णायक होने से भी। यह ज्यौतिष शास्त्र 'सिद्धान्त, संहिता, होरा' इन तीन विभागों में विभक्त है। गणित भाग के प्रदर्शक 'सूर्य सिद्धान्त, सिद्धान्तशिरोमणि' आदि ग्रन्थ सिद्धान्त विषय के ज्ञापक हैं, तथा ग्रह आदि के लक्षण, स्वरूप आदि प्रकीर्ण विषयों के संग्रह ग्रन्थ 'वाराही संहिता' आदि संहिता ग्रन्थ हैं, एवं मनुष्यों के शुभाशुभ का परिचायक 'होरा' भाग है, यह 'बृहत्पाराशर होराशास्त्र' ग्रन्थ इस विषय का मूर्द्धन्य है यह विदितप्राय है। 'अहोरात्र' शब्द जो कि 'दिनरात्रि' का अर्थ वाचक है, इसी के आदि और अन्त के लोप से 'होरा' शब्द की उत्पत्ति हुई है, यथा-"**होरेत्यहोरात्रविकल्पमेके वांछन्ति पूर्वापर-वर्ण लोपात्।**"इस शास्त्र के प्रवर्तक सूर्य आदि १८ ऋषि सुने जाते हैं। यथा-

सूर्यः पितामहो व्यासो वसिष्ठोऽत्रिः पराशरः ।
कश्यपो नारदो गर्गो मरीचिर्मनुरंगिराः ।।
लोमशः पौलिशश्चैव च्यवनो यवनो मनुः ।
शौनकोऽष्टादशश्चैते ज्योतिःशास्त्र प्रवर्तकाः ।।

इस शास्त्र की प्रवर्तन परम्परा भी प्राचीन काल से इस प्रकार सुनी जाती है—

'ज्योतिःशास्त्रं समग्रं प्रथमपुरुषतः स्वर्णगर्भाद्विदित्वा
पूर्वं ब्रह्मा, ततोऽयं निखिलमुनिगण प्रार्थनाद्यच्चकार ।
तच्चेदं सुप्रसन्नं मृदुपदनिकरैर्गुह्यमध्यात्मरूपम्
शश्वद्विश्व प्रकाशं ग्रहचरितविदां निर्मलं ज्ञानचक्षुः ।।

और वर्तमान कलियुगमें तो सर्वमान्य फलानुबन्धि होने से पाराशरसंहिता ही सर्वतः प्रचलित है,

कृते तु मानवं शास्त्रं त्रेतायां बादरायणिः ।
द्वापरे शंखलिखितः कलौ पाराशरी स्मृता ।।

इस कथन से स्पष्ट बोधित होता है कि, वर्तमान समय में यह 'पाराशर होराशास्त्र' ही फलादेश के लिए सर्वोपकारी शास्त्र है, इसका प्रकाशन प्रायः सौ वर्ष से श्रीसेठ खेमराज श्रीकृष्णदासजी-मालिक-'श्रीवेंकटेश्वर प्रेस' द्वारा होता आया है।

इधर कुछ वर्ष से इस ग्रन्थ का १ संस्करण भाषा टीका युक्त काशी से भी प्रकाशित होता है, उसके विषय में यहां दो शव्द लिखना अप्रासंगिक नहीं होगा। यद्यपि मेरा अभिप्राय किसी दुर्भावनामूलक नहीं है, मेरा उन टीकाकार महानुभाव से कोई परिचय भी नहीं है तथापि उनकी प्रखर प्रतिभा की प्रशंसा कौन नहीं करेगा, किन्तु बम्वई की प्रकाशित पुस्तक में एक स्थान पर पूर्व प्रकाशित पृ० १३ में 'प्राणपदसाधन' शीर्षक मे कुछ भ्रामक पाठ जो कि प्रेस के भूतों की कृपा से असली पाठ छूट कर इधर उधर का छप गया था, आपने उसको लेकर तिल का ताड बना डाला, वहां का उद्धरण देकर यहां तक लिखने में भी संकोच नहीं किया कि-इष्टशोधन' नामकी कोई वस्तु ही नहीं है, आदि २ । इस पर भी सन्तोष न हुआ तो 'भूमिका' का भी कुछ भाग इसी बात से भर दिया, अस्तु वे महामहिमशाली हैं उनको सब शोभा देता है, परन्तु इस वार वे 'इष्टशोधन' देखें, जो कि, अत्यन्त गवेषणा से प्राप्त करके संयुक्त किया गया है, और इसी 'इष्टशोधन' का विशेषविस्तार 'ज्योतिस्तत्व' आदि बृहद् ग्रन्थों में देखें कि, यह वस्तु होराशास्त्र में है या नही। परन्तु वास्तव में जब मनुष्य दूसरे के दूषण देखने में तल्लीन होता है तब **'आत्मनो विल्वमात्राणि पश्यन्नपि न पश्यति'** यहां हमें तत्सम नहीं होना है, तथापि पाठकों को संशय न हो इस लिए काशी की प्रकाशित पुस्तक के कुछ भ्रामक स्थलों का दिग्दर्शन कराते हैं।

१-अन्तर्दशा (विंशोत्तरी) प्रकरण में सूर्यान्तर में बुध को त्रिकोण या ६।८ आदि स्थानों में तथा शुक्र को भी ६।८ त्रिकोण आदि स्थान में होना और उनका फल कहा गया है, इसी प्रकार बुधान्तर में सूर्य तथा शुक्र एवं शुक्रान्तर में बुध तथा सूर्य का उपर्युक्त स्थानो में होना और उनका शुभाशुभफल भी उन्होंने लिखा है, और भूमिका में उन्होंने यह भी लिखा है कि-बहुत वर्षों तक इसको शुद्ध करने में व्यतीत किये, एवं अन्य भी महान् २ विद्वानों द्वारा संशोधित कराया गया है, तो भी यह अत्यन्त मोटी भूल कैसे रह गई? क्योंकि-सूर्यमण्डल के अंति समीप बुध का परिभ्रमंण मार्ग है और बुध के पश्चात् शुक्र का, अतः सूर्य से बुध २८ अंश और शुक्र ४८ अंश से अधिक दूर हो ही नहीं सकते, तब सूर्य, बुध और शुक्र ये परस्पर उपर्युक्त स्थानों में हो ही नहीं सकते और यह भी समझ लेना चाहिए कि-बुध और शुक्र भी परस्पर ७५ अंश से अधिक दूर नहीं हो सकते।

२-पृ० १८२ में जो विषय है, वह बम्वई की प्रकाशित पुस्तक के गद्यभाग का सारांश मात्र है।

३-पाराशर मत से चन्द्रमा की मारकता मान्य नहीं है, तो भी पृ० २०२ में मिथुन लग्न में मारक कहा है।

४-पृ० ६५३ में प्रश्नोत्तर में प्रतिमास १ लग्न ही कथनानुसार संभव है।

ये केवल दिग्दर्शन मात्र है, मनुष्यसे भूल होना असंभव नहीं कहा जा सकता, फिर किसी एक बात को लेकर इतना बतंगड नहीं बनाना चाहिए, प्रत्युत उसका अन्वेषण करके समाधान करना चाहिए। प्रथम भूमिका में तो आप लिखते हैं कि -श्री पं० अमुकजी के पास से दक्षिणा देकर नकल प्राप्त की और अन्त में कुछ और ही लिखते हैं कि-इधर उधर से खण्डशः प्राप्त करके और उसका जोड़ तोड़ करके निर्माण किया, खैर जो भी हो प्रयत्न स्तुत्य है और सराहनीय है, श्रीमानजी कुछ स्पष्टोक्ति के लिए क्षमा करेंगे।

जन्मेष्ट काल के शोधन के श्लोक हमको, ज्योतिःशास्त्र प्रेमी श्रीकुमारसाहब तुषारनाथ मिश्र, सुपुत्र श्रीराजा कन्हाईलालजी बहादुर के प्राचीन ग्रन्थ संग्रहालय में सुरक्षित 'बृ०पा०हो०शा०' की अति प्राचीन प्रति में मिले, केवल मूल श्लोक थे, हमने भाषा टीका तथा उदाहरण सहित इस ग्रन्थ में यथावत् संयुक्त किये हैं। इसके लिए हम कुमार साहब के आभारी हैं। बम्बई से प्रकाशित पुस्तक से अधिक विस्तृत कोई प्रति देखने में नहीं आई। काशी से प्रकाशित पुस्तक में भी आद्यन्त श्लोक सं० ४००१ है, जब कि-मूलशान्ति आदि अनेक प्रकीर्णक जो कि-होराशास्त्र का विषय न होकर संहिता का विषय है, उनका संग्रह किया गया है। क्योंकि–

'ग्रहाणाञ्चैव भावानां बलाबल–विवेकतः ।
दशादिना फलं यत्र होराशास्त्रं तदुच्यते ॥'

यद्यपि उन्होंने व्यर्थ का संग्रह करके ९७ अध्याय कर दी हैं तथापि बम्बई की प्रकाशित पुस्तक में ५७८१ श्लोक हैं, जो कि-काशी की प्रकाशित से १७८१ श्लोक अधिक हैं, प्रति पाद्य विषय का संकोच और विस्तार तथा उत्तरखण्ड में अनावश्यक संग्रह प्रायः दोनों में ही हैं, किन्तु काशी की में अविषय का संग्रह और बम्बई की पुस्तक में शास्त्रीय विषय का संग्रह हैं, इस होराशास्त्र के ही कारक मारक विचार को तथा गुलिकादि विचार को लेकर जैमिनीय सूत्र की रचना हुई, अस्तु यह स्वतन्त्र विवेचना का विषय है। केवल कारक मारक विचार को तथा धनयोगों को लेकर लघु और मध्य पाराशरी का निर्माण हुआ। हमको बम्बई की प्रकाशित पुस्तक मे अधिक भाग अब तक नहीं प्राप्त हुआ है, यदि किसी के पास हो तो देने की कृपा करेंगे।

एक विषय विवेचनीय और है, वह है जन्मकालीन सूर्य के राश्यादि के समान राश्यादि के समय 'वर्ष गणना' की परिपाटी' जिस संकलना को लेकर 'ताजिक नीलकण्ठी' आदि ग्रन्थ बने, 'इसका विचार होराशास्त्र में नहीं है' यह कहने से भी चल सकता है, यद्यपि 'वर्षचर्या' 'मासचर्या' में दिग्दर्शन मात्र है तथापि प्रधान तथा जन्मकाल को लेकर ही विचार किया गया है। इस विषय का तात्कालिक सूक्ष्म विचार साम्प्रतिक पाश्चात्य ज्योतिर्विदों ने दृष्टि योगों (Aspects) के माध्यम से बहुत अच्छा किया है, उस विषय के जिज्ञासुओं की अभिलाषापूर्ति के निमित्त अंग्रेजी में ही संक्षिप्त (उदाहरण सहित) प्रकार आगे दे रहे हैं :-

English Method of Casting Horoscope
(with delineations to Hindu Method)

Horoscope-is the position of the planets and signs of the zodiac in relation to a particular place at a particular time. It foretells, after being finally cast, the regular and irregular movements of planets and their good and bad effects on human beings and earth.

In order to prepare the said map, the following should be born in mind :-

Planets-		
English Names	**Hindi Names**	**Symbols**
Sun	सूर्य......	☉
Moon	चन्द्रमा......	☽
Mars	मंगल......	♂
Mercury	बुध......	☿
Jupiter	बृहस्पति......	♃
Venus	शुक्र......	♀
Saturn	शनि......	♄
Dragon's Head....	राहु......	☊
Dragon's Tail....	केतु......	☋
Uranus or Hershell.	इन्द्र......	⛢ or ♅
Neptune	वरुण	♆
Pluto	रुद्र......	♇

The last three planates are newly invented, not given in Hora Shastra.

Signs

English Names	Hindi Names	Symbols
Aries......	मेष	♈
Taurus.........	वृष	♉
Gemini.........	मिथुन	♊
Cancer.........	कर्क	♋
Leo............	सिंह	♌
Virgo..........	कन्या	♍
Libra..........	तुला	♎
Scorpio........	वृश्चिक	♏
Saggitarius....	धन	♐
Capricorn......	मकर	♑
Aquarius........	कुंभ	♒
Pisces.........	मीन	♓

Aspects

English Names	Hindi Names	Degrees	Symbols
Semi- Sextile	द्विर्द्वादश योग	30	⊻
Semi Square or Semi-Quadrate	अर्धकेन्द्रयोग	45	∠
Sextile	त्रिरेकादश योग	60	✱
Square or Quadrate	केन्द्र योग	90	□
Trine	त्रिकोण योग	120	△
Sesqui-Quadrate	सार्धकेन्द्रयोग	135	⚼
Injunct or Quincunx	षडाष्टक योग	150	⊼ or ⚻
Opposition	प्रतियोग या समसप्तक योग	180	☍
Conjuction	युति	0	☌
Parallel	क्रांतिसाम्य	---	P
Mutual Disposition	परस्परराशि सम्बन्ध	---	M.D.

Aspects are nothing but only the inter-relation of positions and sights of the planets in 12 houses. This has more elaborately been dealt in 'Drishti Adhyaya' of Parasar Shastra in Hindi. These aspects are only few of them.

Method of casting–Western astronomers adopt the moving zodiac (Sayan system), while the Hindu astronomers go by the fixed zodiac (Nirayan system) for the calculation of the positions of the planets. But the Hindu positions of the planets may be obtained from the Western positions by subtracting the Ayanamsa from the western positions. Similary, the western positions may be found out by adding Ayanamsa to the Hindu positions of the plantes. Here Nirayan method will be taken into consideration. The ephemeris by Mr. N.C.Lahiri, M.A., which is being published in Calcutta, is preferable for the calculation. This ephemeris (Indian Ephemeris) is calculated for the central meridian of India, 5 h. 30 m. or 82 1/2 E Long.

It will be seen in the ephemeris of any particular year that the siderial time is given just opposite to the dates. The S.T. of the birth date is to be taken for the calculation and minus or plus in it the number of hours back or advance will bring the exact S.T. at birth. It should not be forgotten that the S.T. is given at 12 h. Noon.

After that, from the Ascendant Chart (given in the last pages) take the S.T. at birth from the S.T. Column and see the opposite end column of Ascendant and take the longitude of the ascending sign and prepare the map of Heavens posting the ascending sign in the map. From this chart too, the longitude of the tenth house is ascertained from the column provide for from the same S.T. After preparing Ascendant and the tenth house, the other remaining houses might easily be found out by Hindu method given in Hindi Translation. Thus with the longitude of the ascendant or lagna, the longitude of the different houses are ascertained easily.

In Western method, the map is prepared with the longitude of the houses and no other map (Bhava Chakra) is required. Westerners ascertain from the Tables of Houses with the S.T. at birth, the longitude of the sign in the different six houses (Ascendant, 2nd, 3rd,

10th, 11th and 12th). The other six are very easy to find out by adding 180 degrees to evey realised longitude of the signs. or in other words, the opposite signs of those with the same degrees are the other six houses' longitudes.

Longitude of the planets

In the ephemeris, the longitude of the planets are calculated at 5h. 30m. a.m. I.S.T. This has to be corrected for the time before or after 5h. 30m. a.m. I.S.T. at which the birth took place. For the calculation, the daily motion of every planet is to be taken which is given in the middle pages of the ephemeris. The motion of the planets should be divided by 24 to get the motion per hour, and this after being multiplied by the number of hours before or after 5h. 30m. a.m. I.S.T. at birth. The result being added or subtracted to or from the positions at 5h. 30m. I.S.T. becomes the planets' positions at the time of birth. By the use of Diurnal Logarithms, (given in the last pages of the ephemeris) the longitude of the planets might be calculated easily. This use reduces the work of elaborate calculations. The method of calcualtions is- Add the logarithm of the planets' motion to the logarithm of the time (before or after 5h. 30m. a.m. I.S.T.) and get the logarithm of the motion for that time, and this being applied to the longitude of the planet at 5h. 30m. a.m. I.S.T. will give the true place for the hour and minute required.

Dasha Period or Timing Events

In the middle pages of the ephemeris, the Balance of Vimsottari Dasha Chart is given. From this Chart, the balance of Dasha for the particular planet concerned can easily be found out at a glance with the longitude of the moon. Take the degrees and minutes at birth and see opposite to that in the column of the sign concerned (the sign of the moon) and the balance of Dasha in years, months and days is ascertained. Add this balance to the birth date, month and year, the result is the ending point of the balance of Dasha and the starting point of the next comming Dasha period. The other periods and sub-periods can be found out by adding the different days, months and years provided for the different planets. This will be clear from the example which is given at the end. The Hindu method can be understood from the Hindi translation.

Westerners follow the "Directional" system for the timing events. They adopt the rule of "One day for one year". That is to say, they measure one day for one year and the predictions for a day is the predictions for the year. In this way the following formula is to be taken into considerations :-

One month is equal to two hours.
One week is equal to thirty minutes.
One day is equal to four minutes.
Six hours is equal to one minute.

From this, weekly and even hourly predictions might be made. But this is possible only if "Progressed Horoscope" is made for each year. Thus the system is progressed direction. Next to progressed direction, the influence of transits is to be considered. Direction indicate the general nature of the period and predict the nature and source of good and bad effects in life. Transits define the exact time at which these predictions will come into play. This method is found to be purely imaginary and fictitious and has not been giving such astonishing results as the Indian method is giving. If the exact calculations on correct birth time are made, no doubt, the most astonishing and wonderful results can be had from this Hindu method. Thus it can be said that the Hindu method positively score over the Western method.

Example

Baby born on the 13th August, 1957, Tuesday at 9h. 10m. a.m. I.S.T. in Calcutta, the Long 88 deg.24 ms. E and Lat. 22 deg. 34 ms. N.

Now, the I.S.T. is .... 9h. 10m. a.m.
Calcutta Time is .... 9h. 33m. "
Cal.Mean Time is .... 9h. 28m. "

12h. Noon---9h. 28m. a.m. equal to 2h. 32m. difference.

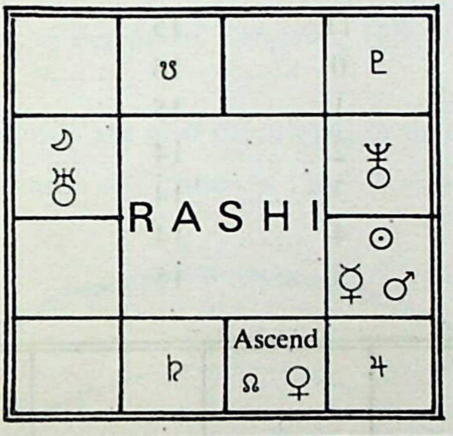
Now, again,S.T. for 13th August,1957 is .. 9h.26m. 38s.
-minus the number of hours back
from Noon upto birth ....2h. 32m. Os.

S.T. at birth. 6h. 54m. 38s.

With this S.T. at birth, the longitude of the Ascendant and the tenth house, from the ascendant chart in the ephemeris, comes as under :-

	S.	Deg.	Ms.	Sec.
Ascendant	6	16	17	19
Tenth House	3	14	8	25

Taking this Ascendant the map is to be erected as follows:

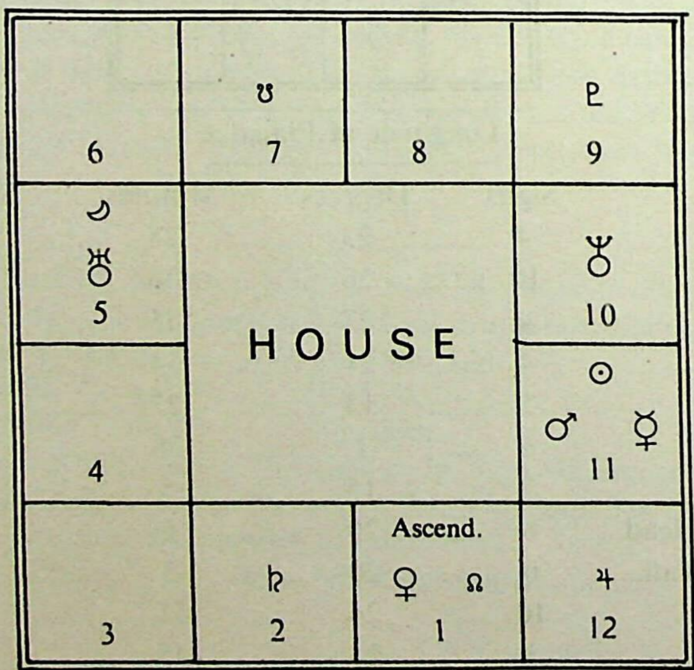


Longitude of Planates

Planets	Signs		Degrees		Minutes		Seconds
Sun......	4	....	23	....	28	....	18
Moon.....	10	....	26	....	30	....	33
Mars.....	4	....	27	....	45	....	38
Mercury....	4	....	21	....	34	....	45
Jupiter....	5	....	13	....	27	....	36
Venus.......	6	....	1	....	58	....	34
Saturn......	7	....	15	....	5	....	12
Dragon's Head......	6	....	20	....	5	....	15
Dragon's Tail......	0	....	20	....	5	....	15
Uranus.......	10	....	24	....	11	....	20
Neptune......	3	....	24	....	45	....	15
Pluto........	2	....	18	....	36	....	11

Longitude of Houses

Houses	Signs	Degrees	Minutes	Seconds
Ist..........	6	16	17	19
2nd..........	7	15	34	21
3rd..........	8	14	51	23
4th..........	9	14	8	25
5th..........	10	14	51	23
6th..........	11	15	34	21
7th..........	0	16	17	19
8th..........	1	15	34	21
9th..........	2	14	51	23
10th..........	3	14	8	25
11th..........	4	14	51	23
12th..........	5	15	34	21

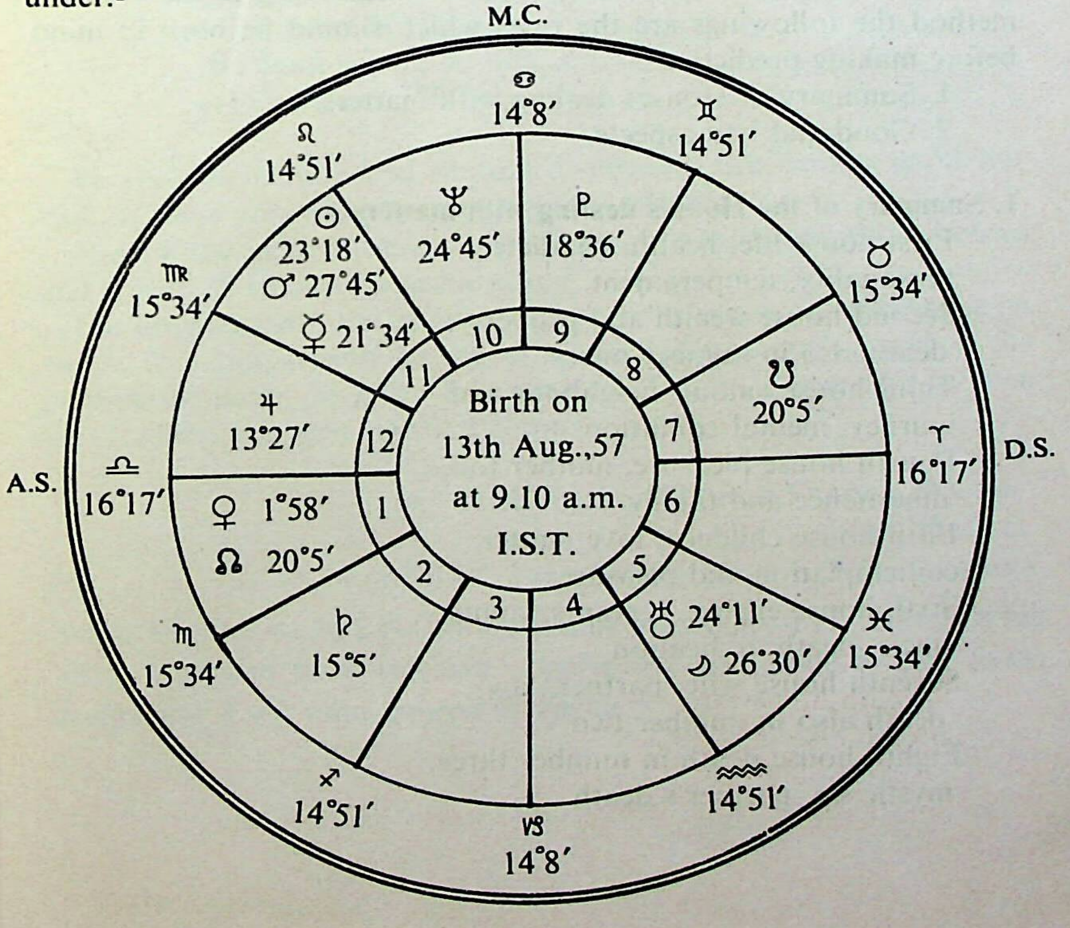


Dasha Period :-

13-8-1957.....Date Of birth
12-2- 8.....Balance of Jupiter Period.
25-10-1965
19.......Period of Saturn.
25-10-1984
17......Period of Mercury.
25-10-2001
7.......Period of Dragon's Tail.
25-10-2008

Sub-periods are also calculated in this way.

The same thing can be shown in Western position as under:-



Some of the aspects calculated approximately:-		
☋ △ ☿:☉:♂	☿ P ☉:♂	♂ P ☉:☿
☋ ☊ ♃	☿ ⚹ ☊	♂ ⚺ ♀
☋ ☍ ☊	♀ △ ♅:☽	♂ ∠ ☊
♇ ⚹ ☿:☉:♂	☉ P ♂:☿	♂ △ ♅:☽
♇ △ ☊	☉ ⚹ ☊	♃ ⚹ ♄
♆ ⚺ ☿:☉:♂	☉ △ ☽	♃ △ ♅:☽
♆ ∠ ♃		♀ ∠ ♄
♆ ⚼ ♄		♅ P ☽

The predictions according to the Hindu method (Dasha system) have been given in the Hindi Translation. According to the Western method the followings are the rules which should be born in mind before making predictions:–

1. Summary of Houses dealing with matters.
2. Good and bad aspects.

1. Summary of the Houses dealing with matters:–

First house life, health, character, personality, temperament.
Second house wealth and property, death also in number one.
Third house valour, neighbour and journey, mental condition.
Fourth house pleasure, mother too, inheritence and family.
Fifth house childern, love matter, contemplation and pleasure.
Sixth house enemy, servants, aunts, uncle, death, indication.
Seventh house wife, partner, law, death also in number two.
Eighth house death in number three, mysticism, partner's death.

Ninth house fate and Voyages,
religion, science matter too.
Tenth house honours, professions,
employment and morality.
Eleventh house profits, wishes too,
friends and acquaintances.
Twelvth house expenditure, death,
confinement, aunt, uncle too.

2. Good and bad aspects:–

Good aspects:–

(i). Sextile 60 deg. ⚹
(ii). Semi-sextile 30 deg. ⊻
(iii) Trine 120 deg. △

Bad aspects:–

(i) Opposition 180 deg. ☍
(ii) Sesqui-Quadrate 135 deg. ⚼
(iii) Square 90 deg. □
(iv) Semi-square 45 deg. ∠
(v) Quincunx 150 deg. ⚻

Parallel, conjuction and mutual disposition are neither good nor bad, as these are only positions and not aspects.

Now, if the aspects are good, good results concerning those houses and if bad, ill results are account for.

For timing events, the transits aspects are given in the ephemeris on which the comparision to the progressed horoscope's aspects, the predictions might be given following the formula "one day for one year" which has been clarified before.

By– Pt. Kamakhya Prasad Sharma, B.Com.,
Jyotirbhushan.
Son of Sri Pt. Tarachandra Shastri, Jyotishacharya

तथा यह भी सूचित कर देते हैं कि–इस ग्रन्थ में अनेक स्थलों पर पुराने ही उदाहरण रख दिये गये हैं, वे इस लिए कि–वे स्थल प्राय: अनुपयुक्त और अव्यवहारिक हैं, किन्तु जिनका व्यवहार चालू है वहां **नवीन उदाहरण** ही रखे गये हैं।

अन्त में एक स्थल विवेचनीय और रह जाता है, वह है शनि की महादशा के शुक्रान्तर में पद्यखंड-**"गुरुचारवशाद् भाग्यं सौख्यं च धनसम्पदः ॥ शनिचारान्मनुष्योऽसौ योग माप्नोत्यसंशयम् ॥" अध्याय ३८ श्लो० २७/२८** इसका अर्थ काशी की प्रकाशित पुस्तक में यह किया है-'उस समय बृहस्पति अनुकूल हो तो भाग्योदय सम्पत्ति की वृद्धि, शनिगोचर से अनुकूल हो तो राजयोग....।' पृष्ठ ४४५ इसके अर्थ करने में 'चार' का अर्थ 'अनुकूल' किस आधार पर किया सो तो वे ही जानें, किन्तु यदि वे थोड़ा विचार करते तो और अच्छा होता। यह विषय असल में 'देवकेरलम्' तथा नाड़ी ग्रन्थों का है। चन्द्रकलानाड़ी में सूर्यादि ग्रहचार का फल कहते हुए उपर्युक्त श्लोक आया है, यह ग्रन्थ मद्रास सरकार के प्रकाशन विभाग द्वारा एक बार प्रकाशित भी हुआ था, उसका विषय अति गहन एवं प्रत्यक्ष फल प्रदर्शक तथा मननीय है, शुभाशुभ फलके घटित होने का समय जानने की सरल सुस्पष्ट रीति है। पाठकों के ध्यानार्थ साररूप में यहाँ लिखते हैं। जन्म काल के भावस्पष्ट तथा ग्रह स्पष्ट करके चरकारक स्थापित करे, अर्थात् सर्वाधिक अंश वाला आत्मकारक, उससे न्यून अंश वाला 'अमात्यकारक' है उससे कम अंशवाला भ्रातृकारक आदि कारक अध्यायोक्त रीति से लिखे और मान्दी=गुलिक लग्न भी लिखे नीचे उनकी राशि त्याग कर अंशादि लिखे, अब यह चक्र तैयार है, इसमें गुरु का चार=भ्रमण तथा शनि का चार=भ्रमण देखना चाहिए। अर्थात् गुरु और शनि जिस जिस कारक के अंशादि पर से जिस जिस मास और तिथ्यादि को सञ्चार करेगा, उस समय उपर्युक्त श्लोकोक्त फल होगा, इस विषय में विशेष देखना हो तो नाड़ी ग्रन्थों में देखना चाहिए, हमने केवल दिग्दर्शन मात्र कर दिया है। वास्तव में उपर्युक्त श्लोक खण्ड किसी ने नोटरूप से अपनी पुस्तक में लिखा होगा और कालान्तर में सम्मिलित हो गया, नहीं तो ९X ९ = ८१ अन्तरों में केवल मात्र शनिदशा के शुक्रान्तर में ही ये ग्रह फल देने आये तथा अन्य दशा और अन्तरों में कही भी दर्शन देने नहीं गये। अन्त में एक बात और कह कर इस भूमिका को समाप्त करते हैं। इस ग्रन्थ में 'लोमश संहिता' का एक अध्याय 'क्षेपक' रूप से पूर्वखण्ड में उसका वास्तविक रहस्य स्पष्ट लिख कर रख दिया है, उसके रहस्य प्रकाशन में हमारे स्नेही मित्र ज्योतिर्वित् श्री पं० चिरञ्जीलालजी ने सहायता की है उसके लिये वे धन्यवाद के पात्र हैं।

शेष में विद्वद्वरों से यही कहना है कि–इसके अनुवाद में जो भूल या त्रुटि रही हो उसे सुधार लें और हमें सूचित करें ताकि अगले संस्करण में सुधार किया जा सके।

इति

ज्योतिर्विदां कृपाभिलाषी

ताराचन्द्र शास्त्री,

ज्यौतिषाचार्य

सलकिया (हावड़ा)

दीपावली

सं० २०१८ वि०

बृहत्पाराशरहोराशास्त्रपूर्वखंडसारांशस्थ-विषयानुक्रमणिका

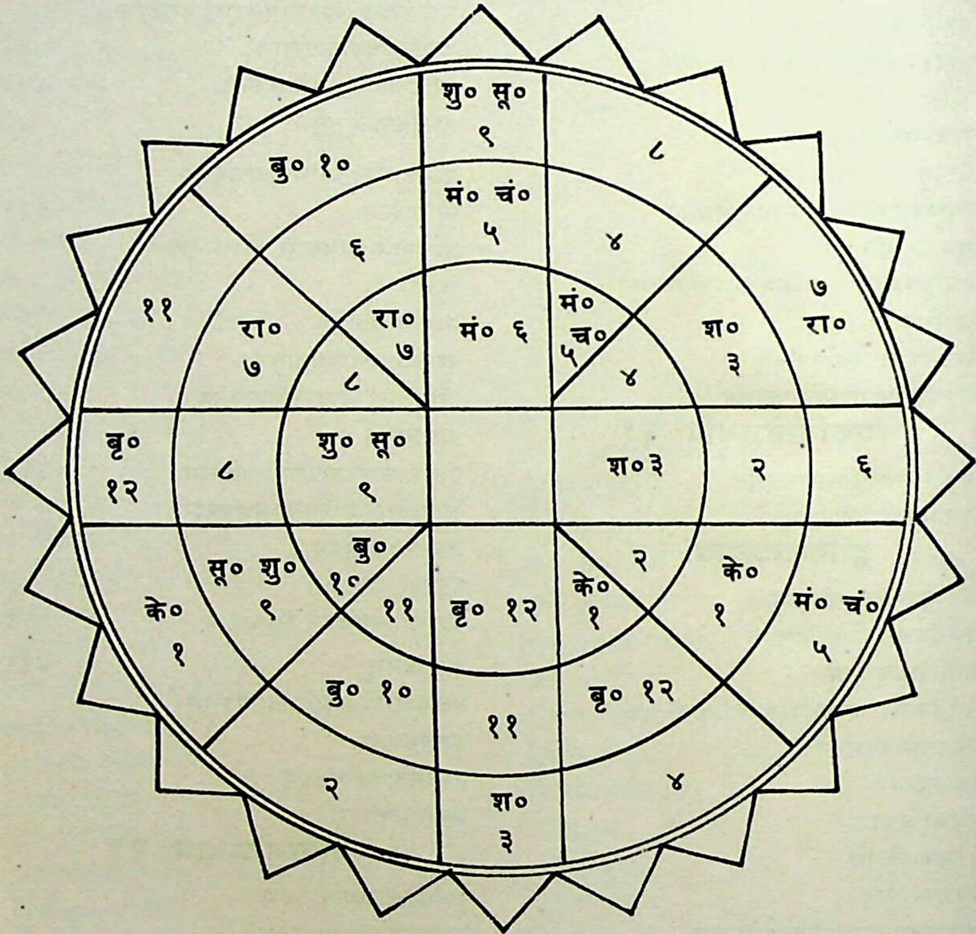
द्वात्रिंशोऽध्यायः ३२

इति बृहत्पाराशरहोराशास्त्रपूर्वखंडस्थविषयानुक्रमणिका समाप्ता

बृहत्पाराशरहोराशास्त्रउत्तरखंडसारांशस्थ-विषयानुक्रमणिका

इति बृहत्पाराशरहोराशास्त्रउत्तरखंडस्थविषयानुक्रमणिका समाप्ता

अथ सुदर्शनचक्रम्



सन्दर्भ पृष्ठ संख्या ४९८

श्रीः

बृहत्-पाराशर-होरा-शास्त्रम्

पूर्वखण्डम्

अथैकदा मुनिश्रेष्ठं त्रिकालज्ञं पराशरम् ।। पप्रच्छोपेत्य मैत्रेयः प्रणिपत्य यथाविधि ।।१।। मैत्रेय उवाच–नमस्तस्मै भगवते बोधरूपाय सर्वदा ।। परमानन्दकन्दाय गुरवेऽज्ञान ध्वंसिने ।।२।। इति स्तुत्या सुसंहृष्टो मुनिस्तत्वविदाम्वरः ।। अथादिदेश सच्छास्त्रं सारं यज्ज्योतिषां शुभम् ।।३।। शुक्लाम्बरधरं विष्णुं शुक्लाम्बरधरां गिरम् ।। प्रणम्य, पाञ्चजन्यञ्च वीणां याभ्यां धृतं द्वयम् ।।४।। सूर्यं नत्वा ग्रहपतिं जगदुत्पत्तिकारणम् ।। वक्ष्यामि वेदनयनं यथा ब्रह्ममुखाच्छुतम् ।।५।।

**सुमंगलानां कर्त्तारं हर्तारं निखिलापदां, वन्दे बुद्धिप्रदातारं गणानाम्पतिमीश्वरम् ।।१।।
होराशास्त्रेऽतिगम्भीरे भावार्थख्यापनायवै, शारदे त्वां प्रपन्नोऽस्मि भव 'भावप्रकाशिका' ।।२।।**

एक समय त्रिकालज्ञ मुनिवर पराशरजी के पास आकर यथाविधि प्रणाम करके मैत्रेयजी ने पूछा।।१।। मैत्रेय ने कहा–अज्ञान का नाश करनेवाले आनन्दकन्द ज्ञानस्वरूप भगवान् पराशर को प्रणाम करता हूँ।।२।। तत्वज्ञानियों में श्रेष्ठ भगवान् पराशरमुनि, मैत्रेय पर प्रसन्न होकर ज्यौतिष शास्त्र के साररूप इस शास्त्र का उपदेश करने लगे।।३।। पराशरजी ने कहा–सात्त्विकज्ञानरूप शुक्ल अम्बरधारी विष्णु तथा तद्रूपा श्रीसरस्वती को प्रणाम करता हूं, जिन्होंने पाञ्चजन्य शंख और वीणा धारण की है।।४।। जगत् की उत्पत्ति करनेवाले सूर्य तथा गणपति को नमस्कार करके ब्रह्मा से सुने हुए वेद के नयनरूप इस ज्योतिष शास्त्र को यथावत् कहता हूं।।५।।

शान्ताय गुरुभक्तायऋजवेऽर्चितस्वामिने ।। आस्तिकाय प्रदातव्यं ततः श्रेयो ह्यवाप्स्यति ।।६।। न देयं परशिष्याय नास्तिकाय शठाय च ।। दत्ते प्रतिदिनं दुःखं जायते नात्र संशयः ।।७।। एको व्यक्तात्मको विष्णुरनादिः प्रभुरीश्वरः ।। शुद्धसत्त्वो जगत्स्वामी निर्गुणस्त्रिगुणान्वितः ।।८।। संसारकारकः श्रीमान्निमित्तात्मा प्रतापवान् ।। एकांशेन जगत्सर्वं सृजत्यवति लीलया ।।९।।

उपदेश योग्य शिष्य का लक्षण

जो सरल तथा शान्तस्वभाव, ईश्वर तथा धर्म में विश्वास रखनेवाला, गुरु का भक्त तथा गुरु की सेवा-पूजा की हो ऐसे श्रेष्ठ शिष्य को इस शास्त्र का उपदेश करना चाहिये, तभी मंगल होता है।।६।। इसके विपरीत जो नास्तिक, शठमति तथा दूसरे का शिष्य हो उसको उपदेश देने से दैनन्दिन क्लेश होता है, यह निश्चित है।।७।।

श्रुति के अनुसार सृष्टि की उत्पत्ति

"एको व्यक्ता०" इत्यादि–

एक=अद्वितीय, अनाद्यनन्त, सर्वैश्वर्यविशिष्ट, चराचरजगत् का स्वामी, शुद्धसत्वगुणप्रधान माया का अधीश्वर, अव्यक्तरूप से निर्गुण ब्रह्म तथा व्यक्तरूप से त्रिगुणमयी प्रकृति का स्वामी भगवान् विष्णु।।८।। षड्विध ऐश्वर्यरूपा लक्ष्मी के पति, वन्दनीय तेजोरूप वह विष्णु ही व्यापक होने से इस संसार का निमित्त रूप से (अथवा अभिन्न–निमित्तोपादानरूप से) उत्पत्तिस्थितिलय का कारण है। वह विष्णु ही अपने एक अंश से, इस संसार को उत्पन्न करके लीलामात्र से पालन करता है।।९।। (पुरुष सूक्त=वेद के अनुसार उत्पत्ति दिखाकर 'लोकवत्तु लीलाकैवल्यम्' ब्र० सूत्रानुसार उत्पत्यादि वर्णन की है)

त्रिपादं तस्य देवस्य ह्यमृतं तत्त्वदर्शिनः ।। विदंति तत्प्रमाणं च सप्रधानं तथैकपात् ।।१०।। व्यक्ताव्यक्तात्मको विष्णुर्वासुदेवस्तु गीयते ।। यदव्यक्तात्मको विष्णुः शक्तिद्वयसमन्वितः ।।११।। व्यक्तात्मकस्त्रिशक्तीभिः संयुतोऽनंतशक्तिमान् ।। सत्त्वप्रधाना श्रीशक्तिर्भूशक्तिश्च रजोगुणा ।।१२।। शक्तिस्तृतीया या प्रोक्ता नीलाख्या ध्वांतरूपिणी ।। वासुदेवश्चतुर्थोऽभूच्छ्री शक्त्या प्रेरितो यदा ।।१३।। संकर्षणश्च प्रद्युम्नोऽनिरुद्ध इति मूर्तिधृक् ।। तमःशक्त्याऽन्वितो विष्णुर्देवः संकर्षणाभिधः ।।१४।।

"पादोऽस्य विश्वाभूतानि त्रिपादस्यामृतं दिवि। इत्यादि श्रुति तथा 'विष्टभ्याऽहंमिदं कृत्स्नमेकांशेन स्थितो जगत् ।" आदि स्मृति तात्पर्यानुसार कहते हैं–त्रिगुणात्मक प्रधान माया का अधीश्वर होने से वह देव=दिव्यरूप है, उसके तीन पाद तो अमृतरूप से स्थित हैं, जिसको तत्वदर्शी जानते हैं, (मायारहित निर्विकार ब्रह्मरूप से वर्तमान हैं) और एक पाद=विष्णुरूप से त्रिगुणात्मक प्रधान का स्वामी वेद में कहा गया है।।१०।। इस प्रकार व्यक्त तथा अव्यक्तरूप से विष्णु अभयस्वरूप हैं, और वासुदेव कहे जाते हैं। और जो अव्यक्तस्वरूप विष्णु हैं, वे दो शक्ति से युक्त हैं।।११।। व्यक्तरूप भगवान् सर्वव्यापक विष्णु सत्व, रजस् तथा तमस् इन तीन गुणों से युक्त हैं, एवं इनकी शक्ति अनन्त है। इन तीन गुणों में सत्वगुणप्रधाना 'श्रीशक्ति' रजोगुणप्रधाना 'भूशक्ति'।।१२।। तथा तमोगुणप्रधाना 'नीलाशक्ति' है। श्रीशक्ति की प्रेरणा से विष्णु के चार रूप हुए।।१३।। वासुदेव (पूर्वानुवृत्त) संकर्षण, प्रद्युम्न और अनिरुद्ध ये चार रूप हुए। इनमें वासुदेव तो आदि विष्णु स्वरूप हीं हैं, इनसे तमोगुणप्रधान नीला शक्तियुक्त 'संकर्षण' का आविर्भाव हुआ।।१४।।

प्रद्युम्नो रजसा शक्त्या निरुद्धः सत्त्वया युतः।।महान्संकर्षणाज्जातः प्रद्युम्नाद्यदहंकृतिः ।।१५।। अनिरुद्धात्स्वयं जातो ब्रह्माहंकारमूर्त्तिधृक् ।। सर्वेषु सर्वशक्तिश्च स्वशक्त्याऽधिकया युतः ।।१६।। अहंकारस्त्रिधा भूत्वा सर्वमेतदविस्तरात् ।। सात्त्विको राजसश्चैव तामसश्चेदहंकृतिः ।।१७।। देवा वैकारिकाज्जातास्तैजसादिंद्रियाणि च ।। तामसाच्चैव भूतानि खादीनि स्वस्वशक्तिभिः ।।१८।। श्रीशक्त्या सहितो विष्णुः सदा पाति जगत्त्रयम् ।। भूशक्त्या सृजते विष्णुर्नीलशक्त्या युतोऽस्ति हि ।।१९।।

एवं रज=शक्तियुक्त, 'प्रद्युम्न' तथा सत्वशक्ति से युक्त 'अनिरुद्ध' का आविर्भाव हुआ। (इस प्रकार श्रुति, स्मृति, सूत्र (वेदान्त) सिद्धान्त से पाशुपत–पाञ्चरात्र आदि शाक्त सिद्धान्त का समन्वय करते हुए सांख्य सिद्धांत से समन्वय करते हैं) संकर्षण से महत् तत्त्व की उत्पत्ति हुई, प्रद्युम्न से अहंकार की उत्पत्ति हुई।।१५।। अहंकार के मूर्तरूप में स्वयं ब्रह्मा 'अनिरुद्ध' से प्रकट हुए। वैसे तो संकर्षण, प्रद्युम्न और अनिरुद्ध इन तीनों में तीनों शक्तियां (सात्विकी, राजसी, तामसी) हैं तथापि प्रत्येक में अपनी शक्ति प्रधानरूप से तथा अन्यशक्ति गौणरूप से स्थित है।।१६।। पश्चात् अहंकार तत्व के तीन भेद हुए 'सात्विक, राजस, तामस' बाद प्रथम संक्षिप्तसृष्टि हुई अर्थात् पूर्वोक्त तीन रूपों में अहंकार आविर्भूत हुआ।।१७।। सात्विक अहंकार से देवता, तैजस अहंकार से इन्द्रियां एवं तामस अहंकार से आकाशादिक पञ्चभूत हुए।।१८।। इस प्रकार उत्पन्न हुए संसार को श्रीशक्तियुक्त विष्णु पालन करते हैं, भूशक्तियुक्त विष्णु उत्पन्न करते हैं तथा नील=तमः शक्तियुक्त होकर संहार करते हैं।।१९।।

(यहां क्रम विवक्षित नहीं है)

सर्वेषु चैव जीवेषु परमात्मा वीराजते ।। सर्वं हि तदिदं ब्रह्मन् स्थितं हि परमात्मनि ।।२०।। सर्वेषु चैव जीवेषु स्थितं ह्यंशद्वयं क्वचित् ।। जीवांशमधिकं तद्वत्परमात्मांशकः किल ।।२१।। सूर्योदयो ग्रहाः सर्वे ब्रह्मकामद्विषादयः ।। एते चान्ये च बहवः परमात्मांशकाधिकाः ।।२२।। शक्तयश्च तथैतेषामधिकांशाः श्रियादयः ।। अन्यासु स्वस्वशक्तीषु ज्ञेया जीवांशकाधिकाः।।२३।।

मैत्रेय उवाच–

रामकृष्णादयो ये च ह्यवतारा रमापतेः।।तेऽपि जीवांशसंयुक्ताः किं वा ब्रूहि मुनीश्वर ।।२४।।

हे मैत्रेय ! इस प्रकार सम्पूर्ण जीवों में परमात्मा हैं, और चराचर सारा संसार परमात्मा में स्थित है।।२०।। सम्पूर्ण जीवों में दो अंश (जीवांश और परमात्मांश भेद से) हैं, उनमें से किसी में जीवांश और किसी में परमात्मांश अधिक होता है।।२१।। सूर्य आदि ग्रह तथा ब्रह्मा और कामारि=महादेव आदि देवता तथा अन्यों में भी परमात्मांश अधिक है।।२२।। तथा श्री, लक्ष्मी, दुर्गा आदि शक्तियों में भी परमात्मांश अधिक है, अन्य सांसारिक जीवों में जीवांश अधिक है।।२३।।

मैत्रेय जी बोले–(इस संसार में आविर्भूत होने वाले) रामचन्द्र, श्रीकृष्ण आदि जो विष्णु के अवतार शास्त्रों में कहे गये हैं, क्या वे भी जीवांश से युक्त हैं ? ।।२४।।

पराशर उवाच–

रामःकृष्णश्च भो विप्र नृसिंहः सूकरस्तथा ।। एते पूर्णावताराश्च ह्यन्ये जीवांशकान्विताः ।।२५।। अवताराण्यनेकानि ह्यजस्य परमात्मनः ।। जीवानां कर्मफलदो ग्रहरूपी जर्नादनः ।।२६।। दैत्यानां बलनाशाय देवानां बलवृद्धये ।। धर्मसंस्थापनार्थाय ग्रहा जाताः शुभाः क्रमात् ।।२७।। रामोऽवतारः सूर्यस्य चंद्रस्य यदुनायकः ।। नृसिंहो भूमिपुत्रस्य बुद्धः सोमसुतस्य च ।।२८।।वामनो विबुधेज्यस्य भार्गवो भार्गवस्य च ।। कूर्मो भास्करपुत्रस्य सैंहिकेयस्य सूकरः ।।२९।। केतोर्मीनावतारश्च ये चान्ये तेऽपि खेटजाः ।। परमात्मांशमधिकं येषु ते खेचराभिधाः ।।३०।। जीवांशमधिकं येषु जीवास्ते वै प्रकीर्तिताः ।। सूर्यादिभ्यो ग्रहेभ्यश्च परमात्मांशनिःसृताः ।।३१।। रामकृष्णादयः सर्वे ह्यवतारा भवंति वै ।। तत्रैव ते विलीयंते पुनः कार्योत्तरे सदा ।।३२।।

पराशरजी ने कहा–इन अवतारों में राम, कृष्ण, नृसिंह तथा सूकर अवतार तो सम्पूर्ण रूप से परमात्मांशरूप हैं, अन्य अवतारों में कलारूप से जीवांश भी है।।२५।। यद्यपि (विवक्षित विषय का अवतरण) अजन्मा वासुदेव के अनेक अवतार हैं तथापि जीवों के कर्मफल के देनेवाले ग्रहरूप अवतार मुख्य हैं।।२६।। क्योंकि–धर्मद्वेषी दैत्यों के बल के नाश तथा देवताओं के बल की वृद्धि एवं धर्म का संस्थापन करने के लिये ही इन मंगलमय ग्रहों से ही अवतारों का आविर्भाव हुआ है।।२७।। सो इस क्रम से हुआ=सूर्य से रामावतार, चन्द्रमा से कृष्णावतार, मंगल से नृसिंह, बुध से बौद्धावतार।।२८।। बृहस्पति से वामन, शुक्र से परशुराम, शनि से कूर्म, राहु से वाराह।।२९।। केतु से मत्स्यावतार का आविर्भाव हुआ, इसी प्रकार अन्य अवतार भी इन्हीं सूर्यादिग्रहों से ही आविर्भूत हुए हैं। परमात्मांश के प्रावल्य से ही इन ग्रहों की खेचर संज्ञा है।।३०।। जिसमें जीवांश की अधिकता होती है वे जीव कहलाते हैं (अर्थात् अवतार नहीं), परमात्मांश और जीवांशरूप उभयशक्ति संपन्न सूर्यादि ग्रहों के परमात्मांश के आधिक्य से आविर्भूत।।३१।। राम, कृष्ण, आदि अवतार अपना अपना अवतार कार्य करके ग्रहों में ही लीन हो जाते हैं और सृष्टि के प्रलयकाल में ये ग्रह भी अपने कारण रूप 'अव्यक्त' में लीन हो जाते हैं।।३२।।

जीवांशनिःसृतास्तेषां तेभ्यो जाता नरादयः।। तेऽपि तत्रैव लीयंते तेऽव्यक्ते समयंति हि ।।३३।। इदं ते कथितं विप्र सर्वं यस्मिन्भवेदिति ।। भूतान्यपि भविष्यंति तत्तत्सर्वज्ञतामियात् ।।३४।। विना सज्ज्योतिषं नान्यो ज्ञातुं शक्नोति कर्हिचित् ।। तस्मादवश्यमध्येयं ब्राह्मणैश्च विशेषतः ।।३५।। यो नरः शास्त्रमज्ञात्वा ज्योतिषं खलु निन्दति ।। रौरवं नरकं भुक्त्वा चांधत्वं चान्यजन्मनि ।।३६।।

इति श्रीबृहत्पाराशरहोरायांपूर्वखंडे शास्त्रावतारणं नाम प्रथमोऽध्यायः ।।१।।

ग्रहों के जीवांशाधिक्य से मन्वादि सृष्टि हुई और उसके बाद मनुष्य, पशु, पक्षी आदि की सृष्टि हुई। प्रलयकाल में ये सब भी उन्हीं में लीन होते हैं और वे ग्रह भी अव्यक्त में लीन होते हैं।।३३।। हे मैत्रेय ! जिस अव्यक्त तत्त्व से यह सर्ग उत्पन्न होता है वह सब विज्ञान हमने

तुमसे कहा है, इस विज्ञान को जानने से भूत तथा भविष्यत् सर्ग का ज्ञान प्राप्त कर सकता है।।३४।। कोई भी विज्ञानी विना ज्योतिषज्ञान के इसका रहस्य नहीं जान सकता। इसलिये सबको और विशेष करके ब्राह्मणों को अवश्य ज्यौतिषशास्त्र का ज्ञान प्राप्त करना चाहिये।।३५।। जो मनुष्य ज्यौतिषशास्त्र के रहस्य को न जानकर इसकी निन्दा करता है वह मरने के बाद रौरव नरक भोग कर इस संसार में अन्धा होकर जन्म लेता है।।३६।।

इति श्रीबृहत्पाराशर होरासारांशे पूर्वखण्डे भावप्रकाशिकायां
शास्त्रावतारणं नाम प्रथमोऽध्यायः ।।१।।

पराशर उवाच–

तिर्यक्पंच तथोर्ध्वगाश्च लिखिता रेखाश्च राश्यात्मकं चक्रं स्यात्पुरुहूतदिग्ग्रहमुखा लग्नादिराशिग्रहाः।। संलेख्योदयचंद्रकारकपदारूढात्महोराघटी वर्गाणां च दशोक्तलग्नपवशात्त-त्तत्फलं वक्ष्यति ।।१।।

भावफल विचाररीति

तिरछी पांच और सीधी पाँच रेखा करने से राशिचक्र होता है, इस राशिचक्र के पूर्वदिशा के कोष्ठक से आरंभ करके जन्म समय के लग्न आदि १२ भावों की राशि और ग्रह लिखकर; लग्न, चन्द्रमा तथा कारक, पद, उपपद, आरूढ, और भाव, होरा, प्रकरण में कहे अनुसार लग्न तथा लग्नेश, भावेश एवं दायेश के द्वारा शुभाशुभ फल कहा जायगा।।१।।

पराशर उवाच

कालात्माच दिवानाथो मनः कुमुदबांधवः ।। सत्त्वं कुजो विजानीयाद्बुधो वाणीप्रदायकः ।।२।। देवेज्यो ज्ञानसुखदोभृगुर्वीर्यप्रदायकः ।। विचार्यतामिदं सर्वं छायासुनुश्च दुःखदः ।।३।। राजानौ भानुहिमगू नेता ज्ञेयो धरात्मजः ।। बुधो राजकुमारश्च सचिवौ गुरुभार्गवौ ।।४।। प्रेष्यको रविपुत्रश्च सेना स्वर्भानुपुच्छकौ ।। एवं क्रमेण वै विप्र सूर्यादीनि विंचितयेत् ।।५।। रक्तश्यामो दिवाधीशो गौरगात्रो निशाकरः ।। अत्युच्चांगो रक्तभौमो दूर्वाश्यामो बुधस्तथा ।।६।। गौरगात्रो गुरुर्ज्ञेयः शुक्रः श्यामस्तथैव च ।। कृष्णदेहो रवेः पुत्रो ज्ञायते द्विजसत्तम ।।७।। वह्न्यंबुशिखिकाविष्णुबिडौजशचिका द्विज ।। सूर्यादीनां खगानां च तथा ज्ञेयाः क्रमेण च ।।८।। क्लीबौ द्वौ सौम्यसौरी च युवतींदुभृगू द्विज ।। नराः शेषाश्च विज्ञेया भानुर्भौमो गुरुस्तथा ।।९।।अग्निभूमिनभस्तोयवायवः क्रमतो द्विज।।भौमादीनां ग्रहाणां च तत्त्वाश्चामी प्रकीर्तिताः। ।।१०।।

ग्रह तथा राशियों के स्वरूप

पराशरजी ने कहा–सूर्य समय का रूप है, चन्द्रमा, मन तथा मंगल को बल का रूप जानना, बुध, वाणी का देनेवाला।।२।। बृहस्पति, ज्ञान और सुख का देनेवाला, शुक्र, वीर्य का

दाता है। शनि, दु:ख देनेवाला है, यह सब लग्न से विचार करना चाहिये।।३।। सूर्य, चन्द्रमा, राजा हैं। मंगल नेता है, बुध राजकुमार है, गुरु, शुक्र दोनों मन्त्री हैं।।४।। शनि दूत है। राहु, केतु सेनारूप में हैं। हे मैत्रेय ! इस प्रकर से इन ग्रहों में राजा आदि भाव की नैसर्गिक स्थिति है।।५।। सूर्य रक्तश्याम वर्ण है, चन्द्रमा गौरवर्ण है, मंगल अति उच्च अंगवाला रक्त वर्ण है, बुध हरितवर्ण है।।६।। बृहस्पति गौरवर्ण है। शुक्र श्याम वर्ण है, शनि कृष्ण वर्ण है।।७।। अब देवता कहते हैं–अग्नि, जल, ब्रह्मा, विष्णु, इन्द्र, इन्द्राणी क्रम से सूर्यादि ग्रहों के देवता हैं।।८।। बुध और शनि नपुसंक, चन्द्रमा, शुक्र ये स्त्री तथा सूर्य, मंगल और गुरु पुरुष हैं।।९।। अब तत्त्व सुनिये–अग्नि, भूमि, आकाश, जल वायु ये तत्त्व क्रम से मंगल आदि ग्रहों के जानना।।१०।।

गुरुशुक्रौ विप्रवर्णौ कुजार्कौ क्षत्रियौ द्विज । शशिसौम्यौ वैश्यवर्णौ शनिःशूद्रो द्विजोत्तम ।।११।। चंद्रसूर्यगुरुसौम्या भृग्वारशनयो द्विज ।। सत्त्वं रजस्तम इति स्वभावो ज्ञायते क्रमात् ।।१२।। मधुपिंगलदृक्सूर्यश्चतुरस्रः शुचिर्द्विज ।। पित्तप्रकृतिको धीमान्पुमानल्पकचो द्विज ।।१३।। बहुवातकफःप्रज्ञाश्चंद्रो वृत्ततनुर्द्विज ।। शुभदृङ्मधुवाक्यश्च चंचलो मदनातुरः।।१४।। क्रूररक्तारुणो भौमश्चपलो–दारमूर्तिकः ।। पित्तप्रकृतिकःक्रोधी कृशमध्यतनुर्द्विज ।।१५।। वपुःश्रेष्ठो क्लिष्टवाक्च ह्यतिहास्यरुचिर्बुधः ।। पित्तवान्कफवान्विप्र मारुतप्रकृतिस्तथा।।१६।।बृहद्गात्रो गुरुश्चैव पिंगलो मूर्द्धजेक्षणः ।। कफप्रकृतिको धीमान् सर्वशास्त्रविशारदः ।।१७।।

वर्ण=गुरु, शुक्र, विप्रवर्ण, सूर्य मंगल क्षत्री तथा चन्द्र, बुध, वैश्यवर्ण एवं शनि शूद्रवर्ण है।।११।। चन्द्र, सूर्य, गुरु, बुध, शुक्र, मंगल तथा शनि ये क्रमशः सत्व, रजस् तथा तमस् स्वभाव वाले हैं।।१२।। (अब ग्रहों की प्रकृति आदि भिन्न भिन्न कहते हैं।) सूर्य–मधुभाषी, पिंगल दृष्टि, चौकोर, पवित्र स्वभाव पित्तप्रकृतिवाला, बुद्धिमान्, पुरुष, अल्पकेशी है।।१३।। चन्द्रमा=वायु तथा कफ प्रकृति वाला, बुद्धिमान्, गोल आकृतिवाला, सौम्यदृष्टि, मनोहर वाणी वाला, चंचल तथा कामी है।।१४।। मंगल=क्रूरस्वभाव, रक्तवर्ण, अरुणदेह, चंचल, उदार हृदयवाला, पित्तप्रकृति, क्रोधी, कृश, अंगवाला, मँझोला कदवाला है।।१५।। बुध=सुन्दर शरीर, कम बोलनेवाला, बहुत हँसोड़ स्वभाव, पित्त तथा कफ प्रकृति, वायुस्वभाव वाला है।।१६।। बृहस्पति=बृहत् शरीर पिंगल दृष्टि, और उठे केशवाला कफ प्रकृति, सर्वविद्याविशारद और बुद्धिमान् है।।१७।।

सुखी कांतवपुः श्रेष्ठः सुलोचनो भृगोःसुतः ।। काव्यकर्ता कफाधिक्यानिलात्मा वक्रमूर्धजः ।।१८।। कृशदीर्घतनुः शौरिः पिंगदृष्टचनिलात्मकः ।। स्थूलदंतो लसत्पुंगः खररोमकचो द्विज ।।१९।। धूम्राकारो नीलतनुर्वनस्थोऽपि भयंकरः ।। वातप्रकृतिको धीमान् स्वर्भानुप्रतिमः शिखी ।।२०।। अस्थिरक्तस्तथा मज्जा त्वक्चर्म वीर्यस्नायवः ।। तासामीशाःक्रमेणोक्ता ज्ञेयाः सूर्यादयो द्विज ।।२१।। देवालयजलं वह्निक्रीडादीनां तथैव च ।। कोशशय्या ह्युत्करणामीशाः सूर्यादयः क्रमात् ।।२२।। अयनक्षणवारर्तुमासपक्षसमा द्विज ।। सूर्यादीनां क्रमाज्ज्ञेया निर्विशंकं द्विजोत्तम ।।२३।। कटुलवणतिक्तमिष्टमधुरेक्षुकषायकाः ।। क्रमेण सर्वे विज्ञेयाः सूर्यादीनां

द्विजोत्तम ।।२४।। बुधेज्यौ बलिनौ पूर्वे रविभौमौ च दक्षिणे ।। वारुणः सूर्यपुत्रश्च सितचंद्रौ तथोत्तरे ।।२५।। निशायां बलिनश्चंद्रकुजसौरा भवंति हि ।। सर्वदाज्ञो बलीज्ञेयो दिनशेषा द्विजोत्तम ।।२६।। कृष्णे च बलिनः क्रूराः सौम्या वीर्ययुताः सिते ।। सौम्यायने सौम्यखेटो बली याम्यायनेऽपरः ।।२७।।

शुक्र=सुखी, सुन्दर, श्रेष्ठ, सुलोचन, कवि, कफ वात प्रकृति तथा कुंचित केशवाला है।।१८।। शनि=कृश और लम्बा कद, पिंगलदृष्टि, वायुप्रकृति, स्थूल दाँतवाला, शोभित पुरुषाकृति तथा कड़े केश और रोमवाला है।।१९।। राहु तथा केतु=धूम्र, नीलवर्ण, वनचारी, भयंकर रूप तथा वातप्रकृति वाले हैं।।२०।। सूर्यादि ग्रहों के स्थान–देवमन्दिर, जलागार, अग्निस्थान, खेलने का स्थान, कोशागार, शय्या, कूड़ा घर ये क्रमशः जानना।।२२।। इसी प्रकार समय–अयन, मुहूर्त, वार, ऋतु, मास, पक्ष तथा वर्ष ये क्रमशः सूर्य आदि ग्रहों के निश्चित हैं।।२३।। रस क्रमशः–कटु, लवण, तिक्त, मीठा, मधुर, ईख, कषाय, ये सूर्य आदि ग्रहों के रस हैं।।२४।। दिशा–बुध तथा गुरु पूर्वबली, सूर्य मंगल, दक्षिण बली, शनि पश्चिम बली तथा शुक्र चन्द्रमा उत्तर बली हैं।।२५।। समय बल–चन्द्रमा, मंगल, शनि ये रात्रि में बलवान् हैं, बुध सर्वकाल में बली है, सूर्य, गुरु, शुक्र ये दिन में बली हैं।।२६।। अयन तथा पक्ष बल–क्रूरग्रह कृष्णपक्ष में और सौम्यग्रह शुक्लपक्ष में बली हैं। इसी प्रकार उत्तरायण में सौम्यग्रह और दक्षिणायन में क्रूरग्रह बली हैं।।२७।।

स्वदिवससमहोरामासपर्वःकालवीर्यकम् ।। शकुबुगुशुचराद्या वृद्धितो वीर्यवत्तराः ।।२८।। स्थूलाञ् जनयति सूर्यो दुर्भगान्सूर्यपुत्रकः ।। क्षीरोपेतांस्तथा चंद्रः कटुकाद्यान्धरासुतः ।।२९।। गुरुज्ञौ सफलान्विप्र पुष्पवृक्षान् भृगोः सुतः ।। नीरसान्सूर्यपुत्रश्च एवं ज्ञेयाःखगा द्विज ।।३०।। राहुश्चांडालजातिश्च केतुर्जात्यंतरस्तथा ।। शिखिस्वर्भानुमंदानां वल्मीकं स्थानमुच्यते ।।३१।। चित्रकंथा फणींद्रस्य केतोश्छिद्रयुतो द्विज ।। सीसं राहोर्नीलमणिः केतोर्ज्ञेयो द्विजोत्तम ।।३२।। गुरोः पीतांबरं विप्र भृगोः क्षौमं तथैव च ।। रक्त क्षौमं भास्करस्यइंदोः क्षौमं सितं द्विज ।।३३।। बुधस्य तु कृष्णक्षौमं रक्तचित्रं कुजस्य च ।। वस्त्रं चित्रं शनेर्विप्र पट्टवस्त्रं तथैव च ।।३४।। भृगोर्ऋतुर्वसंतश्च कुजभान्वोश्च ग्रीष्मकः ।। चंद्रस्य वर्षा विज्ञेया शरच्चैवतथा विदः ।।३५।। हेमंतोऽपि गुरोर्ज्ञेयःशनेस्तुशिशिरो द्विज ।। अष्टौ मासाश्च स्वर्भानोः केतोर्मासत्रयं द्विज ।।३६।। राह्वारपंगुचंद्राश्च विज्ञेया धातुखेचराः ।। मूलग्रहौ सूर्यशुक्रौ अपरा जीवसंज्ञकाः ।।३७।। ग्रहेषु मंदो वृद्धोऽस्ति आयुर्वृद्धिप्रदायकः ।। नैसर्गिके बहुसमान्ददाति द्विजसत्तम ।।३८।।

अपने दिन, वर्ष, होरा, मास, राशिसंक्रमण तथा समय में बलवान् होते हुए भी शनि, मंगल, बुध गुरु शुक्र, चन्द्रमा, राहु तथा सूर्य क्रमशः उत्तरोत्तर अधिक बली (नैसर्गिक) हैं।।२८।। बली होने का फल कहते हैं–सूर्य बली हो तो स्थूल–वनस्पति की विशेष उत्पत्ति करता है, इसी प्रकार शनि, दुर्भग (कटीली झाड़ी, शमी आदि) की, चन्द्रमा, दूधवाले (दूध के समान रसवाले) वृक्षों की, मंगल, कड़वे एवं बुध तथा गुरु, फलवाले वृक्षों की तथा शुक्र, पुष्पवाले वृक्षों की एवं शनि, नीरस वृक्षों की विशेष वृद्धि करता है।।३०।। ग्रहों की

जाति–राहु चाण्डाल, केतु वर्णसंकर, राहु, केतु तथा शनि का बल्मीक स्थान कहा है।।३१।।
वस्त्र तथा आभरण–राहु की चित्रविचित्र कन्था (गुदड़ी) केतु की सछिद्र (फटी हुई) राहु की धातु सीसा तथा केतु का नीलमणि है।।३२।। हे मैत्रेय ! गुरु का वस्त्र, पीताम्बर, शुक्र का महीन (फाइन), सूर्य का लाल तथा महीन, चन्द्रमा का श्वेत महीन।।३३।। इसी प्रकार बुध का काला महीन और मंगल का लाल तथा सचित्र और शनि का रेशमी तथा चित्रित वस्त्र होता है।।३४।। ग्रहों की ऋतु–शुक्र की वसन्त ऋतु, मंगल और सूर्य की ग्रीष्म तथा चन्द्रमा की वर्षा और शरद् ऋतु है।।३५।। बृहस्पति की हेमन्त तथा शनि की शिशिर ऋतु है। राहु अपना प्रभाव ८ मास तक और केतु ३ मास तक करता है।।३६।। ग्रहों की धातु–राहु, मंगल, शनि, चन्द्रमा ये धातु के स्वामी हैं, सूर्य तथा शुक्र मूल के तथा बुध गुरु केतु ये जीव संज्ञक हैं।।३७।। ग्रहों में शनि वृद्ध अर्थात् निर्बल है परन्तु नैसर्गिक दशा में यह शनि बहुत वर्ष तक आयुर्दाय प्रदाता है।।३८।।

यहाँ ग्रहों का स्वभाव आदि वर्णन समाप्त हुआ

अथ पचांगस्थितग्रहेषु चालनमाह

स्वेष्टादग्रे भवेत्पंक्तिः पंक्तौ स्वेष्टं विशोधयेत् ।। स्वेष्टात् पृष्ठे भवेत्पंक्तिः स्वेष्टे पंक्तिं विशोधयेत् ।। ऋणं धनं तथा ज्ञेयं चालने विधिरेव हि ।।३९।।

अथ ग्रहाणां तात्कालिकीकरणमाह

गतगम्यदिनाहतद्युभुक्तेः खरसाप्तांशवियुग्यतो ग्रहः स्यात् ।। तत्कालभवस्तथा घटिघ्नाः खरसैर्लब्धकलोनसंयुतः स्यात् ।।४०।।

इष्टकालिक ग्रह स्पष्ट करने के लिये पंचांग स्थित ग्रहस्पष्ट में 'चालन'

अपने इष्टकाल से आगे की पंक्ति हो तो पंक्ति में इष्ट (वार, घटी, पल) घटाना चाहिये। एवं अपने इष्टकाल से पीछे की पंक्ति हो तो इष्ट में पंक्ति घटाने से जो शेष अंक रहता है वह (वार, घटी, पलात्मक) चालन होता है और क्रम से प्रथम ऋण तथा दूसरा धन चालन होता है।।३९।।

ग्रहों का तात्कालिक स्पष्ट करना

ऋण तथा धन चालन से ग्रह की दैनिक गति को गुणा करके ६० का भाग देकर लब्ध, अंश, घटी, पल अंक को पंक्ति के ग्रहस्पष्ट में चालन ऋण हो तो घटावे और धन हो तो जोड़ने से इष्ट दिन का ग्रहस्पष्ट होगा। इसी प्रकार चालन के घटी, पल अंक से ग्रह गति गुणित कर उपर्युक्त रीति से संस्कार करने पर तात्कालिक अर्थात् इष्टकाल का स्पष्ट ग्रह होता है।।४०।।

अथ भयातभभोगसाधनम्

इष्टमधिकं नक्षत्रन्यूनं तदा इष्टादित्यनेन ज्ञेयम् । इष्टाद्विहीनं च दिनर्क्षनाडी भयातसंज्ञा भवतीह तस्य । दिनर्क्षनाडी खरसेषु शुद्धा निजर्क्षयुक्तः सहिते भभोगः ।।४१।। इष्टं न्यूनं नक्षत्रमधिकं तदा गतर्क्षनाड्येति ज्ञेयम् ।। गर्तर्क्षनाडी खरसेषुशुद्धा सूर्योदयादिष्टघटीषु युक्ता ।। भयातसंज्ञा भवतीह तस्य निजर्क्षनाडीसहिते भभोगः ।।४२।।

अथ चंद्रस्पष्टमाह

गतर्क्षं पष्टिगुणितं भभोगेन च भाजितम् ।। दस्रादिषष्टिगुणितैर्लब्धं तत्र सुयोजयेत् ।।४३।। तच्चापि द्विगुणं कृत्वा ह्यंकेन विभजेत्पु नः ।। मृगांकलब्धमंशादीन्सुसाधय द्विजोत्तम ।।४४।। खखशून्याष्टवेदेन गतिर्भभोगभाजिता ।। एवं चंद्रस्य विज्ञेया रीतिः स्पष्टतरा बुधैः ।।४५।।

भयात—भभोग साधन

यदि इष्ट अधिक और नक्षत्र कम हो तो—

इष्टमें से दिन नक्षत्र की घटीपल घटाने से 'भयात' होता है और दिन नक्षत्र की घटी पलकों को ६० में से घटा कर वर्तमान नक्षत्र की अर्थात् अगले दिननक्षत्रकी घटी पर जोड़ने से 'भभोग' होता है।।४१।।

यदि इष्ट कम और नक्षत्र अधिक हो तो—

दिन नक्षत्र की घटी पल को ६० में घटा कर इष्ट में जोड़ने से 'भयात' होता है और इष्टकालिक नक्षत्र की घटी-पल जोड़ने से 'भभोग' होता है।।४२।।

चन्द्र स्पष्ट करना

'भयात' को ६० से गुणा करके 'भभोग' का भाग देकर जो अंक प्राप्त हो उसमें गत अश्विनी आदि नक्षत्र संख्या को ६० से गुणा कर जोड़े।।४३।। और अब इस राशि को २ से गुणा कर ९ का भाग देने से (ऊपर के अंक में ३० का भाग देने पर) जो अंक प्राप्त होगा, वह राशि, अंश, कला, विकलात्मक चन्द्रस्पष्ट होगा।।४४।।

चन्द्रमा की गति का स्पष्ट

चन्द्रगति स्पष्ट करने के लिये चन्द्रमा की मध्यम गति ४८००० में भभोग की संख्या का भाग देने से चन्द्रमा की इष्ट दिन की गति स्पष्ट होती है।।४५।।

यह होराशास्त्र मनुष्यों के शुभाशुभ फल का प्रदर्शक है। इस फलाफल निर्णय के उपकरण ग्रह स्पष्ट और भावस्पष्ट है, यह सिद्धान्त (करण) ग्रन्थों का विषय होने से इनके साधन की रीति भगवान् पराशरजी ने नहीं कही है। तथापि पञ्चांगसिद्ध ग्रहस्पष्टों में इष्ट दिन और

समय का चालन देकर ग्रह और भावस्पष्ट की रीति अन्य ग्रन्थों से लेकर आवश्यक प्रक्रिया मूल में ही संगृहीत कर दी गई है, तथा कुछ अन्य आवश्यक अयनांश आदि भी क्षेपकरूप से लिखे गये हैं। यद्यपि भारत में बेधसिद्ध पंचांगो का अभाव है, तथापि वर्तमान में 'जन्मभूमि, संदेश, विशुद्ध सिद्धान्त पंजिका, इण्डियन एफेमेरी, सरस्वती तथा काशी से निकलनेवाले अनेक पञ्चांग ऐसे उपलब्ध हैं, जिनमें दैनिक ग्रह स्पष्ट रहते हैं, उनसे केलव इष्ट मात्र का चालन देना होगा, यदि दैनिक स्पष्ट प्राप्त न हो तो साप्ताहिक पंक्ति से चालन करके ग्रह स्पष्ट करना चाहिए। ग्रह स्पष्ट करने में दैनिक प्रातःकालिक या जिस इष्ट के ग्रह स्पष्ट हों उससे अथवा साप्ताहिक समीप की इष्ट से आगे या पीछे की पंक्ति से उपर्युक्त नियमानुसार चालक करके तब इस चालक से ग्रह गति को गुणा करना चाहिए। इस गुणन में प्रायः चालक में घटी, पल अथवा दिन, घटी, पल, अंक, संख्या रहती है, यह गुणक संख्या है, तथा ग्रह गति भी घटी पल ये दो संख्या रहती हैं। अतः भिन्न जातीय संख्या के गुणन में या तो एक जात्ति करके गुणन होता है, जिसमें अंक पात बहुत होता है, अतः सरल रीति 'गोमूत्रिका' रीति है और यही प्रचलित भी है। इस रीति से 'गुणक' संख्या के अंकों को ऊपर कोष्टकों में क्रमशः रखा जाता है और ग्रह गति के घटी, पल जो कि 'गुण्य' हैं वे प्रत्येक अंक के नीचे रखे जाते हैं। जैसे–

गुणक- चालक-	दिन	घटी	पल
	घटी	घटी	घटी
गुण्य- ग्रहगति	पल	पल	पल

इस प्रकार सन्निवेशित करके ऊपर के प्रत्येक गुणकांक से नीचे की घटी पल गुणित कर पल में ६० का भाग देकर अपने ऊपर की घटी संख्या में युक्त करे। पश्चात् गुणक पल गुणित गुण्य की घटीराशि कोगुणक घटी के पलांक में युक्त कर ६० का भाग देकर ऊपर युक्त करके उसको भी गुणक दिनांक की पलसंख्या में युक्त कर ६० का भाग देकर लब्ध संख्या को घटी संख्या में जोड़े, ६० से अधिक होने पर ६० का भाग देने से अंश स्थानी संख्या होती है। इस प्रकार आये हुए अंश, घटी, पल को पंक्ति के ग्रहस्पष्ट में, 'चालक' ऋण हो तो घटावे और 'धन' हो तो जोड़े। वक्री ग्रह में ऋण हो तो जोड़े और धन हो तो घटावे तथा राहु केतुमें सदा विपरीत के ही समान करे तो इष्टकाल का ग्रह स्पष्ट होता है।

उदाहरण–

श्री सं० २०१४ भाद्रपद कृष्णपक्ष ३ भौमवासरे दिने ९/१० (इं० स्टे० टा०) समये (कलकत्ता नगरे)· कस्यचिज्जन्म । अक्षांशाः २२।३४ पलभा ४/५९ । अयनांशाः २३ ॥ दिनमान ३२। ४०॥ यहां 'सरस्वती' पंचांग में समीप की गत पंक्ति श्रावण शुक्ल १५

शनिवार इष्ट २५/३४ है। प्रथम जन्मकाल का इष्ट हुआ– (दिने ९।१०+०।२३=९।३३ बेलान्तर ÷ ०।५=९।२८ का घटचादि इष्ट–) १०।०० इसमें पंक्ति का इष्टकाल घटाया तो २।४५।०२ दिनादि धन चालक प्राप्त हुआ। इस चालक से सूर्य गति ५८।१२ को गोमूत्रिका न्याय से गुणा किया तो २।४०।५ दिनादि फल प्राप्त हुआ। इसको पंक्तिस्थ सूर्य ४।२०।४८।१३ में युक्त किया तो ४।२३।२८।१८ सूर्य स्पष्ट हुआ। इसी प्रकार अन्य ग्रहों को स्पष्ट किया तो–मं ४।२७।४५।३८ ग० ३९।२६, बु० ४।२१।३४।४५ ग० ९९।४८ वक्र बृ० ५।१३।२७।३६ ग० १३।१८ शु० ६।१।५८।३४ ग० ७१।२२ श० ७।१५ ०५।१२ ग० २/४२ रा० ६।२०।०५।१५ ग० ३।११ ॥ अब चन्द्रस्पष्ट के लिए भभोग ६६।१ भयात ३०।१ से उपर्युक्त रीति से प्राप्त स्पष्ट चन्द्र १०।२६।३०।३३ । ग० ७२७।५० इस प्रकार ९ ग्रह स्पष्ट हुए–

सू०	च०	मं०	बु०	बृ०	शु०	श०	रा०	के०
४	१०	४	४	५	६	७	६	९
२३	२६	२७	२१	१३	१	१५	२०	२०
२८	३०	४५	३४	२७	५८	०५	०५	०५
१८	३३	३८	४५	३६	३४	१२	१५	१५
ग०	ग०	ग०	ग०	ग०	ग०	ग०	ग०	ग०
५७	७२७	३९	९९	१३	७१	२	३	३
२२	५०	३६	४८	१८	२२	४२	११	११
			वक्री					

अथोच्चनीचग्रहाः

अजो वृषो मृगः कन्या कुलीरझषतौलिकाः ॥ सूर्यादीनां क्रमादेतास्तुंगसंज्ञाः प्रकीर्तिताः ॥ नीचास्तत्सप्तमा ज्ञेया ग्रहा नीचा विनिश्चिताः ॥४६॥ सूर्यस्य भागे दशमे तृतीये चंद्रस्य जीवस्य तु पंचमेंऽशे ॥ सौरस्य विंशे त्वधिसप्त केतोर्विद्याद्भृगोः पंचदशे बुधस्य ॥४७॥ भौमस्य विंशेऽष्टयुते परोच्चैर्विंशल्लवे सूर्यसुतस्य नीचाः ॥४८॥

अथ मूलत्रिकोणमाह

विंशतिरंशाः सिंहेत्रि कोणमपरेस्वभवनभर्कस्य ॥उच्चं भागत्रितयं वृषमिंदोः स्यात्त्रिकोणमप-रेंशाः ॥४९॥ द्वादश भागा मेषे त्रिकोणमपरे स्वभे तु भौमस्य ॥ उच्चफलं कन्यायां बुधस्य तिथ्यंश कैः सदा चिंत्यम् ॥५०॥ परतस्त्रिकोणजाते पंचभिरंशैःस्वराशिजं परतः ॥ दशभिर्भागैर्जीवत्रिकोणफलं स्वभं परं चापे ॥५१॥ शुक्रस्य तु तिथयोंऽशास्त्रिकोणमपरे तुले स्वराशिश्च ॥ कुंभे त्रिकोणनिजभै रविजस्य रविर्यथा सिंहे ॥५२॥

ग्रहों का 'उच्च' तथा 'नीच'

सूर्यादि ग्रहों की क्रम से मेष, वृष, मकर, कन्या, कर्क, मीन तथा तुला ये 'उच्चराशि' हैं

इन कथित राशियों से सातवीं राशि 'नीच' संज्ञक होती हैं।।४६।। सूर्य १० अंश पर, चन्द्रमा ३ तथा गुरु ५ अंश पर एवं शुक्र २७ अंश पर, मंगल २८ अंश पर, बुध १५ और शनि २० अंश पर 'परमोच्च' होता है और सातवीं राशि के इन्ही अंशो में 'परमनीच' होता है।।४८।।

मूल त्रिकोण

सूर्य–सिंह में २० अंश तक 'मूल त्रिकोण' बाद में 'स्वराशि' है।
चन्द्र–वृष में ३ अंश तक 'उच्च' बाद शेष तक 'मूल त्रिकोण' है।
मंगल–मेष में १२ अंश तक 'मूलत्रिकोण' बाद स्वराशि है।
बुध–कन्या में १५ अंश तक 'उच्च' बाद ५ अंश 'मू० त्रि०' शेष १० अंश स्वराशि है।
गुरु–धनुराशि में १० अंश तक 'मूल त्रिकोण' है। बाद स्वराशि है।
शुक्र–तुला में १५ अंश तक 'मूलत्रिकोण' है। शेष स्वराशि है।
शनि–कुंभ में २० अंश तक 'मूल त्रिकोण' है। शेष स्वराशि है।

(श्लोक ४९ से ५२ तक)

अथ मित्रामित्रविधिमाह

रवेः समो ज्ञः सितसूर्यपुत्रावरी, परे ये सुहृदो वरायः ।। चंद्रस्य नारी, रविचंद्रपुत्रौ मित्रे, समाः शेषनभश्चराः स्युः ।।५३।। समौ सितार्की, शशिजश्च शत्रुर्मित्राणि शेषाः पृथिवीसुतस्य ।। शत्रुः शशी सूर्यसितौ च मित्रे, समाः परे स्युः शशिनंदनस्य ।।५४।। गुरोर्ज्ञशुक्रौ रिपुसंज्ञकौ तु, शनिः समोऽन्ये सुहृदो भवंति ।। शुक्रस्य मित्रे बुधसूर्यपुत्रौ, समौ कुजार्यावितरावरी तौ ।।५५।। शनेः समो वाक्पतिरिंदुसूनुशुक्रौ च मित्रे, रिपवः परेऽपि ।। ध्रुवंग्रहाणां चतुराननेन शत्रुत्वमित्रत्वस मत्वमुक्तम् ।।५६।। दशायबंधुसहजस्वांत्यस्थास्ते परस्परम् ।। सुहृद्भूवेदधिसुहृत्समो मित्रं परः समः ।।५७।। तथा त्रिकोणषष्ठाष्टसप्तैकस्थितखेचराः ।। अन्योन्यं रिपुतां यांति तत्कालं तानि वै मुने ।।५८।।

नैसर्गिक मैत्री विचार

सूर्य के–बुध सम, शुक्र शनि शत्रु तथा बाकी ग्रह मित्र है।
चन्द्रमा के–सूर्य, बुध, मित्र और मं० गुरु, शुक्र, शनि शत्रु हैं।।५३।।
मंगल के–शुक्र, शनि, सम, बुध शत्रु बाकी सू० चं० बृ० मित्र हैं।
बुध के–चन्द्र, शत्रु, सूर्य, शुक्र मित्र और मं० गु० श० सम हैं।।५४।।
गुरु के–बुध, शुक्र शत्रु; शनि, सम तथा सू० चं० मं० मित्र हैं।
शुक्र के–बुध, शनि, मित्र, मंगल, गुरु सम, सूर्य चन्द्र शत्रु हैं।।५५।।
शनि के–गुरु सम; बुध शुक्र मित्र और सूर्य, चन्द्र, मंगल शत्रु हैं।
इस प्रकार यह नैसर्गिक भाव ब्रह्मा द्वारा कहा गया है।।५६।।

तात्कालिक मैत्री

जो ग्रह २।३।४।१०।११।१२ वे भाव में हो वे परस्पर मित्र होते हैं। और १।५।६।७।८।९

वें भाव स्थित ग्रह परस्पर शत्रु होते हैं।। तथा मित्र X मित्र=अतिमित्र । मित्र X सम=सम । सम Xशत्रु = शत्रु। और शत्रु X शत्रु=अतिशत्रु, यह 'पञ्चधामैत्री' कही जाती है।।५७।।५८।।

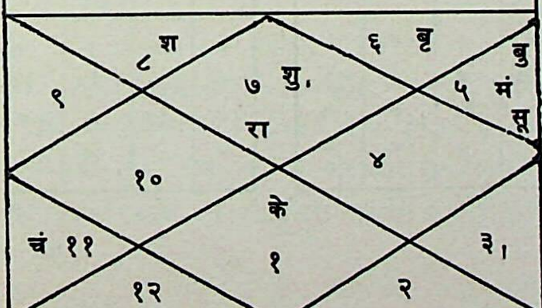
निसर्गमैत्रीचक्रम्

सू०	चं०	मं०	बु०	बृ०	शु०	श०	ग्रह
चं० मं० गु०	सू० बु०	र० चं० गु०	र० शु०	र० चं० मं०	बु० श०	बु० शु०	मित्र
बु०	मं० गु० शु० श०	शु० श०	मं० गु० श०	श०	मं० गु०	०	सम
शु० श०	०	बु०	चं०	बु० शु०	र० चं०	र० चं० मं०	शत्रु

तात्कालिकमैत्रीचक्रम्

	सू	चं	मं	बु	बृ	शु	श
मित्र	बृ शु श	श ० ०	बृ शु श	बृ श शु	श शु सू मं बु०	श सू मं बु बृ०	चं सू मं बु बृ शु०
शत्रु	मं बु चं	सू मं बु बृ शु ०	सू बु चं ०	मं सू चं ०	चं ० ०	चं ० ०	० ० ०
मित्र	२,३,४,१०,११,१२						
शत्रु	१,५,६,७,८,९,						

जन्मलग्नचक्रम्



अथ पंचधामैत्रीचक्रम्

सू०	चं०	मं०	बु०	बृ०	शु०	श०	ग्रह
बृ	०	बृ	शु	सू मं	बु श	बु० ० शु	ऽति० मि०
०	श०	श शु	बृ श		मं बृ सू	बृ	मि०
चं श मं शु	बु ० सू	सू चं	सू	बु शु चं	०	सू चं मं	सम०
बु	मं बृ शु	०	मं	०	०	०	शत्रु
०	०	बु	चं	०	चं		ऽति० शत्रु

अथ शुभबलचक्रम्

उच्च०	मूल	स्व०	मित्र	सम	नीच	शत्रु
१	०	०	०	०	०	०
०	४५	३०	१५	७	०	०
०	०	०	०	३०	०	०
०	०	०	०	०	०	०

अथाशुभबलचक्रम्

उच्च	मूल	स्व०	मित्र	सम	नीच	शत्रु
०	०	०	०	०	१	१
०	७	४५	३०	४५	०	०
०	३०	०	०	०	०	०
०	०	०	०	०	०	०

अथ ग्रहाणां बलमाह

स्वोच्चे शुभं बलं पूर्णं त्रिकोणे पादवर्जितम् ।। स्वर्क्षे दलं मित्रगेहे पादमात्रं प्रकीर्तितम् ।।५९।।
पादार्धं समभे प्रोक्तं व्यर्थं नीचास्तशत्रुगे ।। तद्वद्दुष्टबलं ब्रूयाद्व्यत्ययेन विचक्षणः ।।६०।।

अथ धूमाद्यप्रकाशग्रहस्पष्टीकरणम्

लग्नगे चन्द्रगे वापि वंशायुर्ज्ञाननाशनम् । इति धूमादिदोषाणां फलं पद्मासनोदितम् ।।६१।।

ग्रहों का बलपरिमाण

शुभग्रह चं०, बु० गु० शु० का बल उच्चराशि का होने से पूर्ण तथा मूलत्रिकोण में तीनपाद और मित्रराशि में एक पाद, अपनी राशि में आधा समराशि में पादार्ध तथा नीच, अस्त और शत्रु राशि में बलशून्य होता है। इसी प्रकार पाप ग्रह इससे विपरीत बल पाते हैं।।५९।।६०।।

धूमादि अप्रकाशग्रह फल तथा स्पष्टीकरण

आगे कहे गये धूमादि अप्रकाशग्रह, लग्न अथवा चन्द्रमा के साथ हों तो वंश, आयु और ज्ञान का नाश करते हैं। यह फल पूर्वकाल में ब्रह्मा ने कहा था।।६१।।

चत्वारो राशयो भानौ युक्तभागास्त्रयोदश ।। धूमो नाममहादोषः सर्वकर्मविनाशकः ।।६२।।
धूमो मंडलतः शुद्धौ व्यतीपातोत्र दोषदः ।। स षट्भेत्र व्यतीपाते परिवेषस्तु दोषकृत् ।।६३।।
परिवेषश्च्युतश्चक्रादिंद्रचापश्च दोषदः ।। अत्यष्टयंशयुते चापे केतुखेटः परो विषम् ।।६४।।
एकराशियुते केतौ सूर्यः स्यात्पूर्ववत्समः ।। अप्रकाशग्रहाश्चैते दोषाः पापग्रहाः स्मृताः ।।६५।।

स्पष्टीकरण रीति

तात्कालिक स्पष्ट सूर्य में ४।१३।२० जोड़ने से 'धूम' नाम का महादोष होता है, जो सब कार्य का नाश करनेवाला है।।६२।। इस धूम को १२ राशिमें कम राशि से 'व्यतिपात' दोष (नाम) होता है। इसमें ६ राशि योग करने से 'परिवेष' नामक दोष होता है।।६३।। परिवेष को १२ राशि में घटाने से 'इन्द्रचाप' नाम का दोष है। इन्द्रचाप में १६ अं० ४० क० योग करने से 'केतु' होता है।।६४।। केतु में १ राशि योग करने से पूर्वोक्त स्पष्ट सूर्य के समान अंक होता है। इस प्रकार ये ५ अप्रकाश ग्रह स्पष्ट होते हैं।।६५।।

उदाहरण–(काल्पनिक)

जन्मकालीन सूर्य स्पष्ट २।४।२८।१ इसमें ४।१३।२०। योग किया तो 'धूम' ६।१७।४८।१ हुआ। १२ राशि में घटाया तो 'व्यतीपात' ५।१२।११।५९ हुआ। ६ राशि युक्त किया तो ११।१२।११।५९ यह 'परिवेष' हुआ, पुनः १२ में घटाया, १७।४८।१ तो इन्द्रचाप हुआ, १६।४० योग किया तो ध्वज' १।४।२६।१ हुआ। इसमें १ राशि युक्त की तो पूर्वोक्त २।४।२८।१ सूर्य हुआ। चक्र

अप्रकाशिकक्षेपकाः स्युः				
धूमः	व्यतीपातः	परिवेषः	इन्द्रधनुः	ध्वजः
रा. १४	१२	६	१२	०
अंश. १३	०	०	०	१६
क. २०	०	०	०	४०

अप्रकाशिकग्रहाः स्पष्टाः स्युः						
धूमः	व्यतीपातः	परिवेषः	इन्द्रधनुः	ध्वजः	गुलिकः	प्राणपद
६	५	११	०	१	५	३
१७	१२	१२	१७	४	६	४
४८	११	११	४८	२८	०	०
१	५९	५९	१	१	०	०

अथ जन्मकाले गुलिकसाधनमाह

रविवारादि शन्यंतं गुलिकादि निरूप्यते ।।६६।। दिवसानष्टधा कृत्वा वारेशाद्गणयेत्क्रमात् ।।६७।। अष्टमांशो निरीशः स्याच्छन्यंशो गुलिकः स्मृतः ।। रात्रिरप्यष्टधा भक्ता वारेशात्पंचमादितः ।।६८।। गणयेदष्टमः खंडो निष्पत्तिः परिकीर्तितः ।। शन्यंशे गुलिकः प्रोक्तो गुर्वंशे यमघंटक ।।६९।। भौमांशे मृत्युरादिष्टो रव्यंशे कालसंज्ञकः ।। सौम्यांशेऽर्द्धप्रहरकः स्पष्टकर्मप्रदेशकः ।।७०।।

गुलिक साधन

रविवार आदि से शनिवार तक के 'गुलिक' आदि योग कहते हैं। दिनमान में ८ का भाग देकर प्राप्त अष्टमांश को प्रथम भाग और द्विगुण द्वितीय भाग इसी प्रकार ८ भाग कल्पना करे, और वार के स्वामी से क्रम से सातों ग्रहों के सात 'काल' जाने। आठवां भाग निरीश अर्थात् अधिपति रहित होता है। इन भागों में शनि का भाग 'गुलिक' कहा जाता है। इसी प्रकार रात्रि के भी ८ भाग करके वारेश से पाँचवें ग्रह से आरंभ करके सातों ग्रहों के भाग समझे। आठवां भाग निरीश है। इन सातों भागों में शनि का भाग 'गुलिक' है और गुरु का भाग 'यमघंटक' है। मंगल का भाग 'मृत्यु' संज्ञक है। सूर्य का भाग 'कालवेला' और बुध का भाग 'अर्धयाम' होता हैं। ये योग अपने नामानुसार कर्म के निर्देशक हैं।।

(श्लोक सं० ६६ से ७० तक)

उदाहरण–श्री० सं० २०१४ भाद्र० कृ० ३ भौमे–दिनमान ३२।४ में ८ का भाग दिया, लब्ध ४।५ यहां वारेश मंगल है अतः मंगल से गणना किया–तो प्रथम मंगल का सूर्योदय से ४।५ (घटी पल तक) मृत्युयोग । बाद ८।१० तक अर्धयाम। बाद १२।१५ तक यमघंटक, इसके बाद शुक्र का भाग त्यागकर १६।२० से २०।२५ तक 'गुलिक' योग है। इसमें गुलिकारंभ में इष्ट १६।२१ पर पूर्वोक्त रीति से लग्नस्पष्ट करने से। ७।२१।४०।२० यह गुलिक लग्न स्पष्ट हुआ।

गुलिकगुणकध्रुवांकाः स्युः							
रवि	चन्द्र	मंगल	बुध	गुरु	शुक्र	शनि	ग्रहाः
७	६	५	४	३	२	१	दिवा
३	२	१	७	६	५	४	रात्रिः

गुलिक लग्न साधन

गुलिकारम्भसमयात् लग्नं संसाधयेद् बुधः । तल्लग्नं च ततः सर्वं जातकस्य फलं भवेत् ।।७१।।

दिन के ८ भागों में से 'गुलिक' भाग आरंभ के इष्ट पर लग्न स्पष्ट करे। उसका नाम 'गुलिकलग्न' है। उससे आगे कहे अनुसार जातक का शुभाशुभ फल जाने।।७१।।

अथ प्राणपदसाधनमाह

घटी चतुर्गुणा कार्या तिथ्या १५ प्तैश्च पलैर्युता ।। दिनकरेणापहृतं शेषं प्राणपदं स्मृतम् ।।७२।। शेषात्पलांताद्द्विगुणीविधाय राश्यंशसूर्यर्क्षनियोजिताय ।। तत्रापि तद्राशिचरान् क्रमेण लग्नांशप्राणांशपदैक्यता स्यात् ।।७३ पुनः—स्वेष्टकालं पलीकृत्य तिथ्याप्तं भादिकं च यत् ।।७४।। चरागद्विभगे भागे भानौ युङ्नमवे सुते ।। स्फुटं प्राणपदं तस्मात्पूर्ववच्छोधयेत्तनुः ।।७५।।

इति श्री बृ० पा० होरासारांशेपूर्वखण्डे ग्रह–गुण–स्वरूपादिकथनो नाम द्वितीयोऽध्यायः ।।२।।

प्राणपदलग्नसाधन

जन्म इष्ट घटी को ४ से गुणा करके पृथक् स्थापन करे तथा पल यदि १५ से अधिक हो तो १५ का भाग देकर लब्ध चतुर्गुणित घटी में योग करे, यह राशि हैं अतः १२ से अधिक हो तो १२ का भाग देकर शेप अंक ले। अथवा इष्ट घटी पल को पलात्मक (घटी को ६० से गुण कर पलअंक योग) करे, १५ का भाग दे, लब्ध अंक राशि और शेष को द्विगुणित करे, यह अंश है। अब इस अंक को सूर्य, चर राशि में हो तो राशि आदि में योग करे और स्थिर राशि में सूर्य हो तो राशि में ८ जोड़कर एवं द्विस्वभाव राशि में सूर्य हो तो ४ जोड़कर पूर्वोक्त राशि अंश का योग करे तो शुद्ध 'प्राणपद लग्न' स्पष्ट होता है। इसका फलाफल आगे ६ठे अध्याय के अन्त में कहा गया है।।श्लो० ७२ से ७५ तक)

प्राणपदलग्न का उदाहरण–

इष्ट ६।४३ सूर्यस्पष्ट २।३।९।२७ है।

यहां पर इष्ट घटी ६ को ४ से गुणा किया तो २४ हुआ, इसको अलग रखा तथा फल ४३

में १५ का भाग दिया तो २ लब्ध हुआ, इसको पूर्व प्राप्त २४ में युक्त किया तो २६ हुआ, शेष १३ को ६० से गुणा करके ३० का भाग देने से अथवा पलांक १३ को द्विगुण करने से २६ अंश प्राप्त हुआ तो २६।२६ हुआ, राशि में १२ का भाग दिया तो २।२६ हुआ। यहां सूर्य द्विस्वभाव राशि में है, अतः २।२६ में ४ राशि जोड़ा तो ६।२६ हुआ, इसको स्पष्टसूर्य २।३।९।२७ में जोड़ने से ८।२९।९।२७ यह प्राणपद लग्नस्पष्ट हुआ।

इति श्री० बृ० पा० हो० शा० पूर्वखण्डे भावप्रकाशिकायां ग्रहगुणस्वरूपादिकथनं नाम द्वितीयोऽध्यायः ।।२।।

अथ इष्टशोधनमाह

पराशर उवाच–यदेतज्जन्मलग्नं वै तन्निषेकस्य चन्द्रमा ।। जन्मचन्द्रस्य राश्यादि तल्लग्नं वै निषेकजम् ।।१।। इति सिद्धंविजानीयात्यथा शंभुप्रणोदितम् । जन्मलग्नस्य घटिकाः भक्ता वसुशतैरिह ।।२।। लब्धमाधानगतभंजन्मपूर्वांकमासकम् ।शिष्टा संख्या तु विप्रेन्द्रः खरसघ्ना तु भाजिता ।।३।। खशून्य वसुभिश्चैव आधानसमकालभम् । यस्मिन् काले भभुक्तं तत् मध्यमेष्टं तदेव हि ।। तस्मात् प्रसाधयेत् सूर्यं भोग्यकालं ततो नयेत् । जन्मचन्द्रस्य भुक्तं वै कालमानीय यत्नतः ।। जन्मकालीन चन्द्रस्तु गर्भलग्नं विदुर्बुधाः । तत्सर्वं साधयेद्धीमान् सायनाच्चन्द्र सूर्यभात् ।।

पराशरजी ने कहा–जो यह जन्मलग्न है, उसी के समान गर्भाधान समय का चन्द्र स्पष्ट होता है। इसी प्रकार जन्म समय का जो चन्द्रस्पष्ट है, उसीके आसन्न (आसपास) आधानकाल के लग्न का राशि अंश होता है। ऐसा इष्टशोधन में स्वयंसिद्ध नियम है, यह भगवान् शंकर ने कहा है। राश्यादि जन्मलग्न को घटचात्मक करके ८०० आठ सौ का भाग देने से लब्ध संख्या गर्भाधान के गतनक्षत्र की होती है, शेष को भी ६० से गुणा कर ८०० का भाग देने से आधान काल के वर्तमान नक्षत्र का भयात होता है और इसको जन्म से नौ मास पूर्व देखना चाहिए, वह भयात जिस दिन, जिस इष्ट में प्राप्त हो, वह आधान काल का मध्यम इष्ट है। उस मध्यम इष्ट पर सूर्यस्पष्ट करके उसका (सूर्य का) भोग्य काल लेना और जन्मकालीन चन्द्रस्पष्ट का भुक्तकाल लेना। 'जन्मकाल का चन्द्रस्पष्ट ही आधानकाल का लग्नस्पष्ट है' यह होरा शास्त्रज्ञों ने कहा है, चन्द्र तथा सूर्य स्पष्ट से होने वाली सब क्रिया, अयनांश युक्त करके सावधानता से गणित करनी।

भोग्यं भुक्तं सुंसेयोज्यं मध्योदयसमन्वितम् । खरसाप्तं ततः कुर्यात् निषेकेष्टं सुमध्यमम् ।। लग्नस्पष्टं ततः कुर्यात् सुविचार्य तपोधनः ! । अस्य लग्नस्य राश्यादि जन्मेन्दोश्च तथैव च ।। मैत्रेय ! सुमहाप्राज्ञः ! समासन्नगतं भवेत् । एतयोरन्तरं कार्यं लग्नोदय हतं तथा ।। अष्टादश शतेनाप्तं फलं घटचादि जायते गर्भलग्ने जन्मचन्द्रात् अल्पे चैवाधिके तथा ।। पूर्वागतं धनर्णं स्यात् घटचाद्येवं निषेकजे । मध्येष्टे तु, तत्तश्चन्द्रः सः स्याज्जन्मोदयामितः ।। अस्य चन्द्रस्य भुक्तश्च जन्मसूर्यस्य भोग्यकम् । योज्यं मध्योदयैश्चैव जननेष्टं स्फुटं भवेत् ।।

इस प्रकार सूर्य का भोग्यकाल तथा चन्द्रमा का भुक्तक़ाल जोड़ना और उसमें मध्यगत राशियों के उदय पल जोड़ना, इस संख्या में ६० का भाग देना तो आधान काल का मध्यम इष्ट होता है। हे तपोधन! इस इष्ट से लग्नस्पष्ट करना तो इस स्पष्ट किये हुए लग्न की राशि आदि तथा जन्मकाल के चन्द्रमा की राश्यादि परस्पर आसपास होंगी। इस आधान लग्न और जन्मचन्द्र की राश्यादि का परस्पर अन्तर करे और उस अन्तर को लग्न के स्वोदय से गुणा करके १८०० अठारह सौ का भाग दे, जो लब्ध हो वह घटचादि अंक होगा।

जन्मकाल के चन्द्रस्पष्ट से आधानकाल का लग्नस्पष्ट कम हो अथवा अधिक हो, तो यह आया हुआ घटचादि, आधानकाल के मध्यम इष्ट में क्रमशः धन या ऋण करना, पश्चात् उससे चन्द्रस्पष्ट करना, तो यह चन्द्रस्पष्ट जन्मकाल के लग्न स्पष्ट के आसन्न (आसपास) होगा। बाद इस आधान चन्द्र का भुक्तकाल और जन्मकाल के सूर्यस्पष्ट का भोग्यकाल युक्त करना और इन दोनों के मध्य की राशियों के पलात्मक मान युक्त करना, ६० का भाग देना तो जन्म काल मध्यम 'इष्ट' होता है।

चन्द्रमाधानलग्नन्तु कल्पयित्वा ततो द्विज ! जननार्कस्य भोग्यञ्च भुक्तमेतस्य योजयेत् । मध्योदयाः सुसंयोज्याः खरसाप्तं सुलिखेत् । इष्टमेतत् मध्यमन्तु तस्माल्लग्नं सुसाधयेत् । लग्नं चन्द्रमसश्चैव साध्यं वै द्विजसत्तम ! आधानचन्द्रस्पष्टञ्च जन्मलग्नसमं भवेत् । एवं संसाधनीयञ्च गर्भजन्मभवं फलम् । यावत् साम्यं भवेदेतत् तावत् कुर्यात् अतंन्द्रितः । इष्टशोधन मेतत्तु यथा शंभुप्रणोदितम् । साधारणं सुसंप्रोक्तं ज्ञेयं विस्तर मन्यतः ।

इसी को पुनः स्पष्ट करते हैं कि चन्द्रमा को आधान लग्न कल्पना करे तथा जन्म कालिक सूर्य के भोग्य काल में कल्पित लग्न का भुक्तकाल युक्त करे और मध्य के 'उदयकाल' युक्त करे। ६० का भाग दे तो मध्यम जन्मेष्टकाल होता है। इस मध्यम जन्म इष्ट से लग्न तथा चन्द्र स्पष्ट करे।

एनं चन्द्रमसं चैव आधानोदयकल्पनम् । तद्भुक्तकालमादाय आधानेनस्य भोग्यकम् । योज्यं मध्योदयैश्चैव षष्टिभक्तन्तथैवा च । आधानकालीनमिष्टं स्यात्तस्माल्लग्नमानयेत् । तल्लग्नस्य तु राश्यादि जन्म चन्द्रसमं भवेत् । एवं निषेकचन्द्रस्य जन्मलग्न समं भवेत् । निषेकलग्नराश्यादि जन्मचन्द्रमसस्थता। अनयोरन्तरं कार्यं तेन घटचादि साधयेत्। तेन संचालयेच्चैव जन्मेन्दुं गर्भलग्नकम् ।तथैव जन्मलग्नस्य गर्भचन्द्रमसस्तथा ।अन्तरेण चालयेच्च लग्नं चन्द्रं तथैव हि ।एवं मुहुर्मुहुः कार्यं यावनं समतां व्रजेत् ।इष्टशोधनकं चैतत् भाषितं शंभुना पुरा।

इस जन्मकालीन स्पष्टचन्द्र को 'आधानलग्न मानकर भुक्तकाल स्पष्ट करे, तथा आधान कालीन सूर्य का भोग्यकाल स्पष्ट करे। इन दोनों का योग करे तथा इसमें मध्य के उदयकाल युक्त करे। ६० का भाग दे तो आधानकाल का इष्ट होता है, पश्चात् इससे लग्नस्पष्ट करे तो इस लग्न के राश्यादि तथा जन्मचन्द्र के राश्यादि समान होते हैं। इसी प्रकार आधान चन्द्र

और जन्मलग्न के राश्यादि समान होते हैं। आधान लग्न के राश्यादि तथा जन्म चन्द्र के राश्यादिका (विशेष अन्तर हो तो) परस्पर अन्तर करे, उस अन्तर की घटचादि करे, उस घटचादि से जन्मचन्द्र और आधान लग्न को चालित करे, इसी प्रकार जन्मलग्न और गर्भचन्द्र के अन्तर की घटी पल से जन्मलग्न और गर्भचालित करे। जब तक पूर्वोक्त प्रकार से परस्पर राश्यादि समान न हों। यह 'इष्टशोधन' प्रक्रिया भगवान् शंभु ने वर्णन की है। समान होने पर इष्ट शुद्ध जाने।

इष्टशोधन के मुख्य नियम

स्वयं सिद्ध–जन्मलग्न के समान आधानचन्द्र तथा जन्मचन्द्र के समान आधानलग्न ।

१–जन्मलग्न को घटचात्मक करके ८०० का भाग दे, लब्धगत 'नक्षत्र' हैं। और शेष को ६० से गुणा कर ८०० का भाग देने पर भयात होता है।

२–आगत भयात ९ मास पूर्व जिस दिन, जिस इष्ट पर मिले वह आधानकाल (मध्यम इष्ट) होता है।

३–इस इष्ट पर सूर्यस्पष्ट करके, इसका भोग्यकाल और जन्मचन्द्र स्पष्ट का भुक्त काल मध्य राशियों के उदय सहित करने से आधान काल का गणितागत मध्यम इष्ट होता है।

४–इस इष्ट पर लग्न स्पष्ट करना । इस लग्न जन्मचन्द्र की राश्यादि आसन्न (आसपास) होंगी।

५–आधानलग्न और जन्म चन्द्र की राश्यादि के अन्तर को स्वोदय से गुणा करके १८०० का भाग दे, लब्ध घटचादि अंक को जन्मचन्द्र से आधानलग्न कम हो तो मध्यम इष्ट में जोड़े एवं अधिक हो तो घटावे ।

६–उस मध्यम इष्ट से चन्द्रस्पष्ट करे तो वह जन्मलग्न के आसन्न होगा।

७–बाद आधान चन्द्र का भुक्तकाल और जन्मसूर्य का भोग्यकाल तथा मध्योदय (बीच की राशियों के उदय) सहित (सब का योग) में ६० का भाग देने से जन्म समय का मध्यम इष्टकाल होता है।

८–इस मध्यम जन्म इष्ट से लग्न तथा चन्द्रस्पष्ट करे।

९–इस चन्द्र का भुक्तकाल तथा आधानसूर्य का भोग्यकाल मध्योदयो सहित, आधान कालिक इष्ट होता है।

१०–इस इष्ट से लग्नस्पष्ट करे तो वह जन्मचन्द्र के समान होता है।

११–यदि इस लग्नस्पष्ट के राश्यादि और जन्मचन्द्र के राश्यादि में विशेष अन्तर हो तो, उनका अन्तर करके, अन्तर की घटचादि से जन्मचन्द्र और आधान लग्न को चालित करे तथा आधान चन्द्र और जन्म लग्न में यही संस्कार करे, जब तक कि राश्यादि में समानता न हो, तब तक करे। समान होने पर इष्ट शुद्ध हुआ जाने।

इष्टशोधन का उदाहरण

श्रीशुभसम्वत् २०१८ द्वितीय ज्येष्ठ शुदी ५ रविवार प्रातः ७।२५ (इं० स्टें० टा०) काल में कलकत्ता में जन्म हुआ, (कल० स्टें० टा० ७।४८ कल० मेन टाइम ७।४९) मध्यम समय

७।४८ स्पष्ट घटात्मक समय ७।४९ घटचादि 'इष्ट' ६।४३ लग्नस्पष्ट ३।९।१०।०५ सूर्यस्पष्ट २।३।९।२७ चन्द्रस्पष्ट ३।२७।४२।१० यह है। अब 'इष्टशोधन' के लिये उपर्युक्त क्रिया के अनुसार लग्न ३।९।१०।५ इसकी घटी ५९५० में ८०० का भाग दिया तो लब्धांक ७ यह गत नक्षत्र संख्या प्राप्त हुई, अतः पुनर्वसु, नक्षत्र गत हुआ। शेष ३५० को ६० से गुणा करके ८०० का भाग दिया तो पुष्य नक्षत्र की भुक्त घटचादि २८।१५ प्राप्त हुई। इस पर आधान काल ९ मास पूर्व का प्राप्त हुआ—श्री सं २०१७ आश्विन कृ० ११ शुक्रवार । इष्ट २६।०१ अयनांश २३।० सूर्य स्पष्ट ४।२९।४७।५४ तथा चन्द्रस्पष्ट ३।८।५४।२६ अब आधान काल का सायन सूर्य ५।२२।४७।५४ को लेकर, उसके भोग्य अंशादि को कन्या के कलकत्ता के उदय पल ३२९ से गुणा करके ६० का भाग दिया तो लब्ध भोग्यकाल ८६।१५ प्राप्त हुआ। और सायन जन्मचन्द्र ४।२०।४२।१० को लग्न कल्पना करके **"अर्कभोग्यस्तनोभुक्तकालान्वितो युक्तमध्योदयोभीष्टकालो भवेत्"** (ग्रहलाघव)की रीति के भुक्तकाल साधन किया तो २३५।८ हुआ, ये दोनों युक्त किये, तथा इसमें कलकत्ता के (मध्य के) लग्नमान तुला से ३२९।३३९।३३९।३०५।२५९।२२९।२२९।२५९।३०५।३३९ इन सबका योग किया तो ३२५३।२३ हुआ। इसमें ६० का भाग दिया तो ५४।१३ यह गर्भाधान का मध्यम इष्टकाल हुआ। इस इष्ट पर सूर्यस्पष्ट ५।००।१५।२४ हुआ। इसको सायन किया तो ५।२३।१५।२४ इस सायन सूर्य से **"तत्कालार्कः सायनः स्वोदयघ्नाः ०"** इत्यादि ग्रहलाघवोक्त रीति से लग्नस्पष्ट किया तो ३।२६।४०।०० हुआ। इसके राश्यादि, जन्मकालीन चन्द्र के राश्यादि के आसन्न (आसपास) हैं। अतः इनके अन्तर १।२ को कर्क के स्वोदय ३३९ से गुणा किया ३५०।१८ हुए। इसमें '१८००' का भाग दिया तो लब्ध ११।५६। हुए। यह अंक घटी आदि हैं। यहां जन्मचन्द्र से निषेकलग्न अधिक है तो निषेक के मध्यम इष्ट में हीन किया तो ४२।१७ यह मध्यम निषेक इष्ट हुआ। इससे चन्द्रस्पष्ट किया तो ३।१२।१२।४० हुआ। इसका भुक्तकाल ५७ हुआ। जन्मकालिक सूर्य का भोग्यकाल २६४ पल, इन दोनों का योग किया तो ३२१ हुआ। ६० का भाग देने से ६।२१ यह जन्म कालिक इष्ट (शुद्ध) हुआ। इससे सूर्यस्पष्ट २।३।९।७ परमासन्न है, इससे लग्नस्पष्ट किया तो ३।८।१।५ हुआ और चन्द्रस्पष्ट ३।२७।३८।०५ इसको आधान लग्न मान कर अयनांश युक्त करके 'भुक्तकाल' और आधान कालिक सूर्य का भोग्यकाल मध्योदय सहित करने पर परमासन्न अंक प्राप्त होते हैं। यहां पर जन्म लग्न और आधान चन्द्र तथा आधानलग्न और जन्मचन्द्र के अंशादि परस्पर आसन्न हैं। और प्राप्त जन्मेष्ट काल भी परमासन्न है। अतः जन्म–इष्ट शुद्ध है, इसके सूर्यादि स्पष्ट—

जन्मकालिक—

इष्ट	सूर्य	सायन	चन्द्र	सायन	लग्न	सायन	
६	२	२	३	४	३	४	**गणितागत भेद**
४३	३	२६	२७	२०	९	४	
०	९	९	४२	४२	१०	१०	**गणितोदाहरण में देखें।**
०	२७	२७	१०	१०	००	००	

आधानकालिक–

इष्ट	सूर्य	सायन	चन्द्र	सायन	लग्न	
३६	४	५	३	४	९	गणितागत भेद उदाहरण में देखें।
०१	२९	२२	८	१	२६	
०	४९	४९	५४	५४	०	
०	५४	५४	२६	२६	०	

उपर्युक्त उदाहरण तथा विवरण निदर्शन मात्र दिखाया है, इसमें सूर्य, चन्द्र, लग्न स्पष्टीकरण में गणित का जटिल भाग छोड़ दिया है, कारण कि–वह करण ग्रन्थ का विषय है, इस स्थान में उसका विशेष उपयोग नहीं है। यहां पर मूलग्रन्थ में पाराशरी का इष्टशोधन अंश छपने के समय छूट गया था, उसी की खोज करके तथा अन्य हस्तलिपियों से मिलान करके इस बार संयुक्त किया जा रहा है। जो किसी 'महानुभाव ने (काशी में मुद्रित) यह कहा है कि 'इष्टशोधन' नाम की कोई वस्तु ही ज्योतिष शास्त्र में नहीं है, हम उनका आभार मानते हैं कि जिसके कारण छिपी हुई वस्तु की खोज हुई हैं और वह वस्तु सर्वसाधारण के सम्मुख आई।

पराशर उवाच

मेषो वृषश्च मिथुनः कर्कसिंहकुमारिकाः ।। तुलालिधनुषो नक्रे कुंभमीनास्ततः पराः ।।१।। अहोरात्राद्यंतलोपाद्धोरेति प्रोच्यते बुधैः । तस्य हि ज्ञानमात्रेण जातकर्मफलं वदेत् ।।२।। पदव्यक्तात्मको विष्णुः कालरूपो जनार्दनः ।। तस्यांगानि निबोध त्वं क्रमान्मेषादिराशयः ।।३।। शीर्षाननौ तथा बाहू हृत्क्रोडकटिबस्तयः ।। गुह्योरुयुगले जानुयुग्मे वै जंघके तथा ।।४।। चरणौ द्वौ तथा लग्नात् ज्ञेयाः शीर्षादयः क्रमात् ।। चरस्थिरद्विस्वभावाः क्रूराक्रूरौ नरस्त्रियौ ।।५।। पित्तानिलत्रिधात्वैक्यं श्लेष्मिकाश्च क्रियादयः ।। रक्तवर्णो बृहद् गात्रश्चतुष्पाद्रात्रिविक्रमी ।।६।। पूर्ववासी नृपज्ञातिः शैलचारी रजोगुणी ।। पृष्ठोदयी पावकी च मेषराशिः कुजाधिपः ।।७।। श्वेतः शुक्राधिपो दीर्घश्चतुष्पाच्छर्वरीबली ।। याम्येट् ग्राम्यो वणिग्भूमिः रजी पृष्ठोदयो वृषः ।।८।।

राशियों के स्वरूप

पराशरजी ने कहा–मेष, वृष, मिथुन, कर्क, सिंह, कन्या, तुला, वृश्चिक, धनु, मकर, कुम्भ तथा मीन ये १२ राशियां हैं।।१।। 'अहोरात्र' शब्द के आदि अकार और अन्त के 'त्र' लुप्त होने से 'होरा' शब्द बना है, अतः एतद्विषयक शास्त्र के ज्ञान होने से मनुष्य के कर्म का फल कहा जा सकता है।।२।। अव्यक्त ब्रह्म का एकपादरूप जो व्यक्त स्वरूपात्मक भगवान् विष्णु हैं, वही अहोरात्र समय के स्वरूप होने से जनार्दन कालरूप हैं, और उन्हीं के अंग–ये मेष आदि १२ राशियां हैं।।३।। ये मेषादि द्वादश राशियां ही मनुष्य के जन्मलग्न से लिखे प्रकार जानना। जन्मलग्न शिर, द्वितीय भाव मुख, तृतीय बाहू, इसी प्रकार हृदय, छाती, कटिभाग, बस्ति (पेडू=पेट का निम्नभाग, गुह्यभाग, ऊपर की आधी जंघाद्वय, बाकी आधी जंघाद्वय, जानुयुगल (गोडे=घुटने) तथा चरण (पैर). हैं। और १२ राशियां क्रम से चर, स्थिर, द्विस्वभाव (तीन कक्षाओं की चार बार आवृत्ति) हैं। तथा विषम राशियां क्रूर और सम राशियां सौम्य हैं। एवं विषय राशियां 'पुरुष' और सम राशि 'स्त्री' संज्ञक हैं।।४।।५।। तथा पित्त, वायु, कफ और ये तीन बार आवृत्ति करने से प्रकृति जानना। (अब एक-एक राशि का

पूरा स्वरूप विस्तार से कहते हैं) मेष राशि का रक्त वर्ण, लम्बा शरीर, चार पैरवाला, रात्रि में वलवान्, पूर्व दिशा का वासी, क्षत्रिय जाति, पर्वतचारी, रजोगुणी, पृष्ठोदयी, अग्नितत्व है, तथा मंगल इसका स्वामी है।।६।।७।। वृष राशि–श्वेत वर्ण शुक्रग्रह स्वामी, लम्बा कद, चतुष्पाद, रात्रिबली, दक्षिणदिशा का स्वामी, ग्रामवासी, वैश्य जाति, भूमिचारी, रजोगुणी, और पृष्ठोदयी ।।८।।

शीर्षोदयी नृमिथुनं सगदं च सवीणकम् ।। प्रत्यक्शमी द्विपाद्रात्रिबली ग्राम्यो व्रजोऽनिली ।।९।। समगात्रो हरिद्वर्णो मिथुनाख्यो बुधाधिपः ।। पाटलो वनचारी च ब्राह्मणो निशि वीर्यवान् ।।१०।। बहुपटुतरः स्थौल्यतनुः सत्त्वगुणी जली ।। पृष्ठोदयी कर्कराशिर्मृगांकाऽधि-पतिःस्मृतः।११। सिंहः सूर्याधिपः सत्त्वी चतुष्पात्क्षत्रियो बली ।। शीर्षोदयी बृहद्गात्रः पांडुः पूर्वेड् द्युवीर्यवान् ।।१२।। पार्वतीयाथ कन्याख्या राशिर्दिनबलान्विता ।। शीर्षोदया च मध्यांगा द्विपाद्याम्यचरा च सा ।।१३।। सा सस्यदहना वैश्या चित्रवर्णा प्रभंजिनी ।। कुमारी तमसा युक्ता बालभावा बुधाधिपः ।।१४।। शीर्षोदयी द्युवीर्याढचस्तथा कृष्णो रजोगुणी ।। पंचमोद्भूचरो घाती शूद्रो मध्यतनुर्द्विपात् ।।१५।। शुक्रोऽधिपोऽथ स्वल्पांगो बहुपाद्ब्राह्मणो बली।। सौम्यस्थो दिनवीर्याढचः पिशंगो जलभूवहः ।।१६।। रोमस्वाढचोऽतितीक्ष्णांगो वृश्चिकश्च कुजाधिपः ।। पृष्ठोदयी त्वथ धनुर्गुरुस्वामी च सात्त्विकः ।।१७।। पिंगलो निशिवीर्याढचः पावकः क्षत्रियो द्विपात् ।। आदावंते चतुष्पादःसमगात्रो धनुर्धरः।।१८।।

मिथुन–शीर्षोदय, स्त्रीपुरुष युग, रूप, पुरुष के हाथ में गदा और स्त्री के हाथ में वीणा है, पश्चिम दिशा का स्वामी, दो पैरवाला, रात्रिबली, ग्रामवासी, समूहचारी, वायुप्रकृति।।९।। समगात्र, (मंझोला कद) हरा रंग तथा बुधग्रह का स्वामी है। कर्क–पाटल रंग, वनचारी, ब्राह्मण वर्ण, रात्रिबली, बहुपाद, स्थूलशरीर, सत्त्वगुणी, जलचारी, पृष्ठोदयी और चन्द्रमा स्वामी है।।११।। सिंहराशि का सूर्य स्वामी है, सत्त्वगुणी, चतुष्पाद, क्षत्रिय जाति, बलशाली, शीर्षोदयी, भारी शरीरवाला, पाण्डु वर्ण, पूर्वदिशा का स्वामी तथा दिन में बली है।।१२।। कन्याराशि-पर्वतचारी,दिनबली, शीर्षोदयी, सम शरीर, दो पैरवाली दक्षिण दिशा।।१३।। सस्य=अन्न और अग्नि रखनेवाली, वैश्य वर्ण, चित्र विचित्र रंग, वायु तत्त्व, कुमार अवस्था, तमोगुणी, बाल्य स्वभाव तथा बुध स्वामी है।१४। तुलाराशि-शीर्षोदयी,दिनबली,कृष्णवर्ण. रजोगुणी, पृथ्वीचारी, हानिकारी स्वभाव, शूद्र वर्ण, दोपाया तथा शुक्रस्वामी, कद मंझोला है।।१५।। वृश्चिकराशि–स्वल्प अंगवाला, बहुपाद, ब्राह्मण वर्ण, बलयुक्त तथा उत्तर दिशाचारी, दिन बली, पिशंग (हलका पीला), वर्ण, जल तथा पृथ्वीचारी, रोमयुक्त, तीक्ष्ण अंगवाला तथा मंगल ग्रह इसका स्वामी है।। धनुः राशि- पृष्ठोदशी, सत्त्वगुणी, पिंगल वर्ण, रात्रि बली, अग्नि तत्त्व क्षत्रिय वर्ण, पूर्वार्द्ध में दो पैरवाला, उत्तरार्द्ध में चार पैर वाला, समान शरीर धनुषधारी।।१८।।

पूर्वस्थो वसुधाचारी तेजस्वान्पृष्ठताद्गमा ।। मदाधिपस्तमी भौमी याम्येट् च निशि वीर्यवान् ।।१९।। पृष्ठोदयी बृहद्गात्रः कर्बुरो वनभूचरः ।। आदौ चतुष्पादंते तु विपदो जलगो मतः

।।२०।। कुंभः कुंभी नरो बभ्रुर्वर्णमध्यतनुर्द्विपात् ।। द्युवीर्यो जलमध्यस्थो वातशीर्षोदयी तमः ।।२१।। शूद्रः पश्चिमदेशस्य स्वामी दैवाकरिः स्मृतः ।। मीनौ पुच्छास्यसंलग्नौ मीनराशिर्दिवा बली ।।२२।। जली सत्त्वगुणाढ्यश्च स्वस्थो जलचरो द्विजः ।। अपदो मध्यदेही च सौम्यस्थो ह्युभयोदयी ।।२३।। सुराचार्योधिपश्चास्य राशीनां गदितं मया ।। त्रिंशद्भगणात्मकः स्थूलसूक्ष्माकरफलाय च ।।२४।।

पूर्वदिशा का स्वामी पृथ्वीचारी, तेजस्वी तथा बृहस्पति इसका स्वामी है। मकर राशि–इस राशि का शनि स्वामी है, तमोगुणी, पृथ्वीचारी, दक्षिण का स्वामी, रात्रिबली, पृष्ठोदयी, भारी शरीर, विचित्र वर्ण, वनचारी, पूर्वार्द्ध चतुष्पाद तथा उत्तरार्द्ध विपद, जलचारी है।।२०।। कुम्भराशि–रिक्तघटधारी पुरुष, बभ्रु वर्ण, मध्यम शरीर, दो पैरवाला, दिन में बली, जलचारी, वात प्रकृति, शीर्षोदयी तथा तमोगुणी है।।२१।। शूद्र वर्ण, शनि स्वामी, पश्चिम दिशा का स्वामी है। मीनराशि दो मछली परस्पर मुख पुच्छ संयुक्त स्वरूप, दिन में बली, जलचारी, सत्वगुणी, पुष्ट शरीर, जल तत्त्व, ब्राह्मण वर्ण, पदहीन, मध्यम शरीर, उत्तरदिशा का स्वामी उभयोदयी तथा बृहस्पति स्वामी है।। इस प्रकार ये बारह राशियों के स्वरूप कहे। भगण के ३६० अंश में से प्रत्येक राशि के ३०–३० अंश हैं।। स्थूल और सूक्ष्म फल विचार इसका प्रयोजन है।।२४।।

अथातः संप्रवक्ष्यामि श्रृणुष्व मुनिपुंगव ।। जन्मलग्नं च संशोध्य निषेकं परिशोधयेत् ।।२५।। तदहं संप्रवक्ष्यामि मैत्रेय त्वं विधारय ।। जन्मलग्नात् परिज्ञानं निषेकं सर्वजंतु यत् ।।२६।। यस्मिन् भावे स्थितोमन्दस्तस्य मांदेर्यदंतरम् ।। लग्नभाग्यांतरं योज्यं यच्च राश्यादि जायते ।।२७।। मासादिस्तन्मितं ज्ञेयं जन्मतः प्राक् निषेकजम् ।। यद्यदृश्यदलेंगेशस्तदेंदोर्भुक्तभागयुक् ।।२८।। तत्काले साधयेल्लग्नं शोधयेत्पूर्ववत्तनु ।। तस्माच्छुभाशुभं वाच्यं गर्भस्थस्य विशेषतः ।।२९।। शुभाशुभं वदेत् पित्रोर्जीवनं मरणं तथा ।। एवं निषेकलग्नेन सम्यक् ज्ञेयं स्वकल्पनात् ।।३०।।

निषेक लग्नज्ञान

हे मैत्रेय! स्पष्ट जन्मलग्न के बाद निषेक=गर्भाधान लग्न की विधि कही जाती है। जिस भाव में शनि हो उस भाव और मान्दी का अन्तर करे, इसमें लग्न तथा नवम् भाव के अन्तर को जोड़े। योगफल के अनुसार जन्मलग्न से पूर्व उतने ही मासादि जानना यदि लग्नेश लग्न से पूर्व ६ राशि में हो तो चन्द्रमा के भुक्त अंशादि और जोड़ना चाहिये। योग फल में क्रमशः मास, दिन, घटी, पल जन्म समय से पूर्व मानकर, घटी पल से लग्नस्पष्ट करे और उससे गर्भावस्था का शुभाशुभ तथा माता पिता का शुभाशुभ फल कहना चाहिये।।२५-३०।।

निषेक लग्न का उदाहरण–

शनिस्थित भाव ७।१५।०५।१२ तथा मान्दी ७।२१।४०।२० इनका अन्तर किया तो ००। ६। ५ । ८ प्राप्त हुआ। इसको लग्नस्पष्ट ६।१६।१७।१९ तथा भाग्यभाव स्पष्ट

२।१४।५१।२३ इनका अनन्तर ७ । २८ । ३४ । ४ में युक्त किया तो ८ । ४ । ३९ ।१२ हुआ। यहां शुक्र अदृश्य दल में है, अतः चन्द्रमा के भुक्तांश २६।३०।३३ और युक्त किया तो ९।००।०९।४५ यह मारादि इष्ट प्राप्त हुआ। अर्थात् जन्म से ९ मास ० दिन पूर्व ९।४५ इष्ट हुआ, इससे लग्न स्पष्ट किया तो ८।२८।५०।३०, यह आधानलग्न (निषेक) सिद्ध हुआ। अर्थात् सं० २०१३ मागशीर्ष कृ० प० में समझना।

अयनांशसाधनरीति

ग्रहलाघव से "वेदाब्ध्यब्ध्यूनः खरसहृतः शकोऽयनांशाः।" इष्ट शक में ४४४ घटाकर ६० का भाग दे, लब्धि अंश तथा शेष घटी ही 'अयनांश' होते हैं। इसमें सूर्य की प्रति भुक्त राशि ५ पल जोड़ना।

उदाहरण–शक '१८८३' इसमें ४४४ घटाया तो १४३९ हुआ। ६० का २३ अंश और शेष ५९ घटी। यह अयनांश हुआ।

विशेष

विक्रम संवत्सर में १३५ घटाने से 'शक सम्वत्' होता है, शक सं० में ७८ जोड़ने से 'ईसवी सन्' होता है, ईसवी सन् में ५८३ घटाने से 'हिजरी सन्' तथा इसमें १ घटाने से 'बंगला सन्' होता है।)

मकरन्दीय अयनांश साधन

भूनयनाब्धिरहितः शकः स्वीयदृशांशयुक् ।। खांगैर्भक्तस्तथा त्रिघ्नं सार्द्धं सूर्य पलेषु च ।

इष्ट शक में ४२१ कम करना, शेष को दो स्थान में रखकर एक स्थान में १० दस का भाग देकर लब्ध अंक दूसरी संख्या में कम करना, शेष में ६० का भाग देना, तथा इसमें मेषादि स्पष्ट सूर्य की राश्यादि अंक को त्रिगुणित करके जो अंक राश्यादि हो उसका आधा उसी में युक्त करके पूर्वागत अंश तथा घटी अंक के नीचे पल में युक्त करने से अयनांश स्पष्ट होता है।

उदाहरण–शक सं० १८८३ द्वि० ज्ये० शु० २ को शक १८८३ में ४२१ घटाया तो १४६२ शेष रहे, इसको दो जगह रखा, एक जगह दस १० का भाग दिया तो १४६।१२ लब्धाक प्राप्त हुआ, इसको दूसरे में युक्त किया तो १३१५।४८ हुआ। इसमें प्रातःकालीन सूर्य स्पष्ट २।००।१२।१४ को त्रिगुणित किया तो ६।०।३६।४२ हुए, इसका आधा ३।०।१८।२१ को युक्त किया तो ९।०।५५।०३ इसकी राशि संख्या ९ को पूर्वानीत १३१५।४८ में विकला स्थान में युक्त किया तो १३१५।५४।९ इसमें ६० का भाग दिया तो २१।५५।५४ 'अयनांश' स्पष्ट हुआ। तथा ६० का भाग देकर भी सूर्यस्पष्ट से प्राप्त अंक का योग कर सकते हैं। इस मत में शाकसं० का आरंभ मेष संक्रान्ति के आरंभ से माना जाता है। आजकल प्रायः चैत्र शुक्ल प्रतिपदा से जो शकसम्वत् का परिवर्तन लिखने की प्रणाली है, इसके कारण मेष संक्रमण से प्रथम अयनांश स्पष्ट करने में पूर्व (गत) शक ग्रहण करना होता है। विस्तार भय से अन्यान्य रीति नहीं लिखी गई।

अथ पलभाज्ञानं चरखंडसाधनमाह

मेषो रविरयनांशयुतो भवति यद्दिने ।। शंकुच्छायादिनार्द्धे तु पलभेत्युच्यते बुधैः ।।३१।। स्थानत्रये च सा स्थाप्या गुण्या दिग्वसुपालकैः ।। अंते गुणोद्धृते सद्भिरश्चरखण्डः प्रकीर्तितः ।।३२।।

अथ लंकोदयमाह

वसुसागरनेत्राणि पलानि लंकोदये मेषराशौ ।। शंकोंकनेत्रे वृषभे मिथुनेऽग्नियुङ्नेत्रसंख्यातम् ।।३३।। विपर्ययमग्निमत्रितये षड्लग्नेष्वेवमेव निर्दिष्टम् ।। हीनं खंडत्रितयं युक्तः स्वदेश-लग्नोऽयम् ।।३४।।

अथ लग्नसाधनमाह

यस्मिन्काले लग्नं साध्यं च यदा तदा भवेद्विज्ञैः ।। तात्कालिकसूर्यो वै युक्तः कार्योऽथ सायनांशेन ।।३५।। तद्राशेर्यत्स्वादेश्य उदयस्तेनाथ भोग्यांशाः ।। निधेश्च भागास्त्रिंशच्च्युतास्तथा भुक्तभागाश्च गुण्याः ।।३६।। भूताद्यग्न्युद्धृतास्ते च ह्यंकाग्निभाजिता यदि ।। भोग्यकालोऽथ द्युमणेर्विज्ञेयश्च द्विजोत्तम ।।३७।। इति सायनयातांशैर्भुक्तकालो विधीयते इष्टघटचाः पलैः शोध्यो भोग्यकाल इति स्थितिः ।।३८।। हातव्या राश्युदयकालात्तावंतः शोधयेदथ । यच्छेषं खगुणघ्नं तद्धृतमशुद्धोदयेनाथ ।।३९।। यल्लब्धं च लवाद्यं चायनांशहीनैर्लग्नंस्यात्।। जानीहि द्विजसत्तम नतोन्नतप्रकारमेवैतत् ।।४०।।

अथ नतोन्नतसाधनमाह

दिनगतघटीभिर्हीनं कार्य्यं मुनिभिश्च दिवसार्द्धम् ।। पूर्वनतं तद्रात्रौ लक्षणमेतद्धि विज्ञेयम् ।।४१।। यदा दिनार्धादुपरीष्टकालो भगोदयादिष्टघटीषु शोध्यम् ।। तदा दिनार्धस्य नतं परं तद्धचमु च सर्वं खलु बोधहेतुम् ।।४२।। रात्र्यर्द्धादुपरिचेत्स्यादिष्टकालो विचक्षण ।। सूर्यास्तेष्टघटीशुद्धं रात्र्यर्धे पश्चिमं नतम् ।।४३।।

'पलभा' तथा 'चरखंड' साधन प्रकार–

जिस दिन सायन सूर्य मेष राशि में प्रवेश करे उस दिन मध्याह्नकाल में १२ अंगुल का शंकु (कील) धूप में सीधा रख कर उसकी छाया लेनी चाहिये। वही 'पलभा' कहाती है। उस पलभा को ३ जगह रख कर १०–८–१० क्रमशः इन अंको से गुणा करे। अन्त्य के खण्ड में ३ का भाग देने से ३ चरखण्ड होते हैं।।३२।।

लंकोदयपल

मेष के लंकोदय २७८। वृष के २९९। मिथुन के ३२३ हैं। इनसे अगली तीन राशियों में यही अंक विपरीत क्रम से जानना। इसी प्रकार अगली ६ राशियों में भी जानना। ये 'लंकोदय' पल कहलाते हैं।।३३।।ऊपर बताये हुए चरखण्ड प्रथम तीन राशियों में घटाना, पश्चात् तीन राशियों में जोड़ना। इसी प्रकार अगली ६ राशियों में भी करना। इस संस्कार से 'स्वदेशोदय' या 'स्वीयोदय' लग्नमान होते हैं।।३४।।

लग्नसाधन

जिस समय का लग्न स्पष्ट करना हो उस समय का तात्कालिक सूर्य स्पष्ट करके अयनांश जोड़े, पश्चात् राशि का अंक अलग स्थापित कर अंश, कला, विकला अंक लेकर ३० अंश में से घटावे तो 'भोग्यांश' होते हैं, इनको स्वोदय से गुणा करके ३० का भाग देने से लब्ध अंक 'भोग्यकाल' होगा, इसी प्रकार भुक्तांशो से भुक्तकाल होता है। इस भोग्यकाल को इष्टघटी की पल करके इन पलों में यह 'भोग्यकाल' घटावे (और घटाने के बाद सूर्य के राशि अंक में १ संख्या बढ़ा दे) बाद बची हुई पलराशि में जितने आगामी लग्नमान घटें उतने घटावे (और राशि अंक में उतनी संख्या बढ़ाता जाय) जो स्वोदय नहीं घटे, उसकी 'अशुद्ध' संज्ञा है, अब शेष अंक को ३० से गुणा कर अशुद्ध स्वोदयका भाग देकर लब्ध अंशादि सूर्य की बढ़ाई हुई राशि में युक्त करे और अयनांश घटा दे। यह लग्नस्पष्ट सिद्ध हुआ ॥३५–४०॥

नत तथा उन्नत साधन

१–सूर्योदय तथा सूर्यास्त से इष्ट यदि क्रम से दिनार्द्ध तथा रात्र्यर्द्ध से कम हो तो दिनार्द्ध तथा रात्र्यर्द्ध में इष्ट घटाने से 'पूर्व नत' होता है।

२–इसी प्रकार सूर्योदय तथा सूर्यास्त से इष्ट दिनार्द्ध तथा रात्र्यर्द्ध से अधिक हो तो इष्ट में दिनार्द्ध तथा रात्र्यर्द्ध घटाने से 'पर नत' होता है ॥४१–४३॥

अथ चतुर्थदशमसाधनमाह

एवं लंकोदयैर्भुक्तं भोग्यं शोध्यं पलीकृतात ॥ पूर्वपश्चान्नतादन्यत्प्राग्वत्तद्दशमं भवेत् ॥४४॥

अथ भावसंधिमाह

लग्नं सुखात्सुखं कामात्कामं खात्खं च लग्नतः ॥ अंशमेकं द्विगुणितं युञ्ज्याल्लग्नादिषु क्रमात् ॥४५॥
पूर्वापरयुतेरर्धं संधिः स्याद्भावयोर्द्वयोः ॥ एवं द्वादशभावाः स्युर्भवन्ति हि ससंधयः ॥४६॥

अथ भोग्यकालादल्पेष्टकाले सति लग्नसाधनम्

भोग्यतोऽल्पेष्टकालात्खरामाहतात्स्वोदयाप्तांशयुग्भास्करः स्यात्तनुः ॥

अथ लग्नपत्रभावपत्रमाह

सूर्यराश्यंशमानेन फलं ग्राह्यं च कोष्ठकम् ॥ इष्टघट्या समायुक्तं लग्नं तात्कालिकं भवेत् ॥४७॥

दशम–भाव साधनप्रकार

इस नत को इष्ट मानकर लग्नस्पष्टसाधन की प्रक्रियाऽनुसार गणित करने से 'दशम भाव स्पष्ट' होता है॥४४॥

द्वादश भाव साधन प्रकार

(दशमभाव में ६ राशि जोड़ने से चतुर्थ और लग्न में ६ राशि जोडने से 'सप्तमभावस्पष्ट' होता है)

लग्न को चतुर्थ में से, चतुर्थ को सप्तमभाव में से, सप्तम को दशमभाव में से और दशम को लग्न में से घटाना चाहिये। जो अंक आवे उसके तृतीयांश का (प्रथम पर्याय) लग्न में योग करने से द्वितीय और द्वितीय में जोड़ने से तृतीय भाव स्पष्ट होगा। इसी प्रकार द्वितीय, तृतीय तथा चतुर्थ पर्याय में भी करना। दो भावों का जो अन्तर हो उसका अर्द्धभाग सन्धि होगी। इसी तरह सन्धि रहित बारहों भाव स्पष्ट होंगे।।४५।।४६।।

इष्ट से भोग्यकाल कम होने पर लग्नसाधन

इष्ट से भोग्यकाल कम हो तो भोग्यकाल को ३० से गुणा करके स्वोदय का भाग देकर लब्ध अंशादि को सूर्य में योग करने से लग्नस्पष्ट होगा।

सारिणी से लग्नानयन

सूर्य की राशि, अंश से सारिणी के कोष्ठक के अंक को इष्ट में जोड़कर जो अंक प्राप्त हो, सारिणी में उसकी राशि और अंश ही लग्नस्पष्ट होगा।।४७।।

लग्नस्पष्ट उदाहरण

स्पष्ट सूर्य ४।२३।२८।१८ में अयनांश २३।५९ युक्त किया तो ५।१७।२७।१८ सायन सूर्य हुआ। इसके भोग्यांश १२।३२।४२ कन्या के कलकत्ता के उदय पल ३२९ से गुणा किया तो ४१२७।१८।१८ हुए। ३० का भाग दिया तो १३७।१७ यह 'भोग्यकाल' हुआ। घटचादि इष्ट १०।०० के पल ६०० में भोग्यकाल कम किया तो शेष ४६२।४३ और राशि के स्थान में (६) राशि रखा गया। अब तुला का उदय ३२९ घटाया तो शेष १३३।४३ रहा और राशि के स्थान में (७) रखा। वृश्चिक राशि के उदय पल ३३९ न घटने से वृश्चिक राशि अशुद्ध है। अतः शेष को ३० से गुणा किया तो ४०११।३० हुआ। वृश्चिक के उदय से भाग लिया तो १०।१६।१९ अंशादि प्राप्त हुए। इसमें ७ राशि युक्त किया और अयनांश २३।५९ घटाया तो ६।१६।१७।१९ यह स्पष्ट लग्न हुआ।

दशमभावसाधनोदाहरण

इष्ट १०।०० दिनार्द्ध १६।२० में कम किया तो ६।२० यह 'पूर्वनत' हुआ। अतः ऋणरीति से स्पष्ट करना चाहिये। इस ६।२० को इष्ट मान कर सायनसूर्य ५।१७।२७।१८ के भुक्तांश १७।२७।१८ हैं (दशमभाव साधन में राशियों के उदय मान लंका के लेने चाहिये) अतः लंकोदय लिखते हैं। **"लंकोदया विघटिका गजभानि, गोंकदस्रा, स्त्रिपक्षदहनाः क्रमगोत्क्रमस्थाः ।"** अर्थात् २७८।२९९।३२३ इन पलों को क्रम और उत्क्रम से लेने पर १२ राशियों के लंकोदय पल होते हैं। यथा–

मे० २७८ मी०, वृ० २९९ कु०, मि० ३२३ म०, क० ३२३ ध०, सिं० २९९ वृ०, क० २७८ तु०

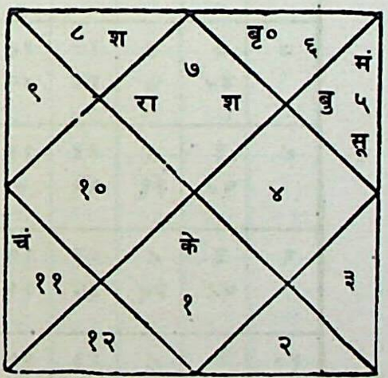
यहां सायन सूर्य के भुक्तांशो को कन्या के लंकोदय २७८ से गुणा किया तो ४७२६।७५०६।५००४ प्राप्त हुए। ३० का भाग दिया तो १६१।१२ भुक्तकाल हुआ। इसको पूर्वनत की पल ३८० में घटाया तो शेष २१८।४८ रहे और कन्या के उदयकाल घटने से राशि के स्थान में (५) रखा गया। अब सिंह का उदय २९९ नहीं घटा। अतः सिंह अशुद्ध है, अतःशेष२१८।४८ को ३० से गुणा किया तो ६५६४ हुआ, इसमें अशुद्ध २९९ का भाग दिया तो २१।५२।३३ अंशादि प्राप्त हुए। इस को सिंह में घटाया तो ४।८।७।२७ हुए। इसमें अयनांश घटाया तो ३।१४।८।२५ यह दशम भाव स्पष्ट हुआ।

अब लग्नस्पष्ट ६।१६।१७।१९ तथा दशमस्पष्ट ३।१४।८।२५ में ६–६ राशि युक्त की तो सप्तमभाव ००।१६।१७।१९ तथा दशमभाव ३।१४।८।२५ हुआ। ऊपर कहे अनुसार चतुर्थ में लग्न, सप्तम में चतुर्थ, दशम में सप्तम, कर्म=दशम को लग्न में घटा कर षष्ठांश लेकर लग्न में योग करके संधि, संधि में युक्त करने से द्वितीय और द्वितीय में युक्त करने से संधि इसी प्रकार तृतीय संधि और चतुर्थ भाव आदि प्राप्त होंगे। अथवा उपर्युक्त रीति से भी वही भाव प्राप्त होते हैं।

भावस्पष्टचक्र

त		ध		स		सु		पु		रि	
६	७	७	८	८	८	९	९	१०	११	११	००
१६	००	१५	००	१४	२९	१४	२९	१४	००	१५	००
१७	५५	३४	१२	५१	२९	८	२९	५१	१२	३४	५५
१९	५०	२१	५२	२३	५४	२५	५४	२३	५२	२१	५०
जा		मृ		भा		क		ला		व्य	
००	१	१	२	२	२	३	३	४	५		००
१६	००	१५	००	१४	२९	१४	२९	१४	००	१५	००
१७	५५	३४	१२	५१	२९	८	२९	५१	१२	३४	५५
१९	५०	२१	५२	२३	५४	२५	५४	२३	५२	२१	५०

जन्मकुण्डली



अथ लग्नपत्रमिदमाह

अंश	मे१	वृ२	मि३	क४	सिं५	क६	तु७	वृ८	ध९	म१०	कु११	मी१२
१	२ ५४	७ १४	१२ १२	१७ ४१	२३ १४	२८ ३५	३३ ५३	३९ ३१	४४ ५५	५० १२	५४ ५१	५८ ५७
२	३ २	७ २३	१२ २३	१७ ५३	२३ २५	२८ ४६	३४ ४	३९ ३२	४५ ६	५० २३	५५ ०	५९ ४
३	३ १०	७ ३२	१२ ३३	१८ ४	२३ ३४	२८ ५६	३४ १४	३९ ४३	४५ १८	५० ३३	५५ ९	५९ १२
४	३ १८	७ ४१	१२ ४३	१८ १५	२३ ४७	२९ ७	३४ २५	३९ ५४	४५ २९	५० ४३	५५ १८	५९ २०
५	३ २६	७ ४९	१२ ५४	१८ २६	२३ ५८	२९ १८	३४ ३६	४० ५	४५ ४०	५० ५४	५५ २६	५९ २८
६	३ ३४	७ ५८	१३ ४	१८ ३७	२४ ९	२९ २८	३४ ४६	४० १६	४५ ५१	५१ ४	५५ ३५	५९ ३६
७	३ ४२	८ ७	१३ १४	१८ ४९	२४ २०	२९ ३९	३४ ५७	४० २७	४६ ३	५१ १४	५५ ४४	५९ ४४
८	३ ५०	८ १६	१३ २५	१९ ०	२४ ३१	२९ ४९	३५ ७	४० ३८	४६ १४	५१ २४	५५ ५३	५९ ५२
९	३ ५८	८ २५	१३ ३५	१९ ११	२४ ४२	३० ०	३५ १८	४० ४९	४६ २५	५१ ३५	५६ २	६० ०
१०	४ ७	८ ३५	१३ ४६	१९ २२	२४ ५३	३० ११	३५ २९	४१ ०	४६ ३५	५१ ४४	५६ १०	० ८
११	४ १६	८ ४६	१३ ५७	१९ ३३	२५ ३	३० २१	३५ ४०	४१ ११	४६ ४५	५१ ५३	५६ १८	० १६
१२	४ २५	८ ५६	१४ ९	१९ ४४	२५ १९	३० ३२	३५ ५१	४१ २३	४६ ५६	५२ २	५६ २६	० २४

१३	४ ३४	९ ६	१४ २०	१९ ५५	२५ २९	३० ४३	३६ २	४१ ३४	४७ ६	५२ ११	५६ ३४	० ३२
१४	४ ४३	९ १७	१४ ३१	२० ६	२५ ३५	३० ५३	३६ १३	४१ ४५	४७ १७	५२ २०	५६ ४२	० ४०
१५	४ ५१	९ २७	१४ ४२	२० १७	२५ ४६	३१ ४	३६ २४	४१ ५६	४७ ५७	५२ २८	५६ ५०	० ४८
१६	५ ०	९ ३७	१४ ५३	२० २८	२५ ५६	३१ १४	३६ ३५	४२ ७	४७ ३७	५२ ३७	५६ ५८	० ५६
१७	५ ९	९ ४८	१५ ५	२० ३९	२६ ७	३१ २५	३६ ४६	४२ १९	४७ ४८	५२ ४६	५७ ५	१ ३
१८	५ १८	९ ५८	१५ १६	२० ५०	२६ १७	३१ ३५	३६ ५७	४२ ३०	४७ ५८	५२ ५५	५७ १३	१ ११
१९	५ २७	१० ८	१५ २७	२१ १	२६ २८	३१ ४६	३७ ८	४२ ४१	४८ ८	५३ ४	५७ २१	१ १९
२०	५ ३६	१० १९	१५ ३८	२१ १२	२६ ३९	३१ ५७	३७ १९	४२ ५२	४८ १९	५३ १३	५७ २९	१ २७
२१	५ ४५	१० २९	१५ ४९	२१ २३	२६ ४९	३२ ७	३७ ३०	४३ ३	४८ २९	५३ २२	५७ ३७	१ ३५
२२	५ ५४	१० ३९	१६ ५	२१ ३४	२७ ०	३२ १८	३७ ४१	४३ १५	४८ ३९	५३ ३१	५७ ४५	१ ४३
२३	६ ३	१० ५०	१६ १२	२१ ४६	२७ १०	३२ २८	३७ ५३	४३ २६	४८ ५०	५३ ४०	५७ ५३	१ ५१
२४	६ १२	११ ०	१६ २३	२१ ५७	२७ २१	३२ ३९	३८ ४	४३ ३७	४९ ०	५३ ४९	५८ १	१ ५९
२५	६ २०	११ १०	१६ ३४	२२ ८	२७ ३२	३२ ५०	३८ १५	४३ ४८	४९ १०	५३ ५७	५८ ९	२ ७
२६	६ २९	१६ २१	१६ ४५	२२ १९	२७ ४२	३३ ०	३८ २६	४३ ५९	४९ २१	५४ ६	५८ १७	२ १५

२७	६ ३८	११ ३१	१६ ५७	२२ ३०	२७ ५३	३३ ११	३८ ३७	४४ ११	४९ ३१	५४ १५	५८ २५	० २३
२८	६ ४७	११ ४१	१७ ८	२२ ४१	२८ ३	३३ २१	३८ ४८	४४ २२	४९ ४१	५४ २४	५८ ३३	२ ३१
२९	६ ५६	११ ५२	१७ १९	२२ ५२	२८ १४	३३ ३२	३८ ५९	४४ ३३	५९ ५२	५४ ३३	५८ ४१	२ ३९
३०	७ ५	१२ २	१७ ३०	२३ ३	२८ २५	३३ ४३	३९ १०	४४ ४४	५० २	५४ ४२	५८ ४९	२ ४७

अथ भावपत्रमिदमाह

अंश	मे०१	वृ०२	मि०३	क०४	सिं०५	क०६	तु०७	वृ०८	ध०९	मं०१०	कुं११	मी१२
१	३ २४	८ १७	१३ ३४	१८ ५७	२४ २	२८ ४६	३३ २४	३८ १७	४३ ३४	४८ ५७	५४ २	५८ ४६
२	३ ३३	८ २७	१३ ४५	१९ ८	२४ १२	२८ ५५	३३ ३३	३८ २७	४३ ४५	४९ ८	५४ १२	५८ ५५
३	३ ४२	८ ३७	१३ ५५	१९ १८	२४ २२	२९ ४	३३ ४२	३८ ३७	४३ ५५	४९ १८	५४ २२	५९ ४
४	३ ५२	८ ४७	१४ ६	१९ २९	२४ ३२	२९ १४	३३ ५२	३८ ४७	४४ ६	४९ २९	५४ ३२	५९ १४
५	४ १	८ ५७	१४ १७	१९ ४०	२४ ४२	२९ २३	३४ १	३८ ५७	४४ १७	४९ ४०	५४ ४२	५९ २३
६	४ १०	९ ७	१४ २८	१९ ५१	२४ ५२	२९ ३२	३४ १०	३९ ७	४४ २८	४९ ५०	५४ ५२	५९ ३२
७	४ १९	९ १७	१४ ३८	२० १	२५ २	२९ ४१	३४ १९	३९ १७	४४ ३८	५० १	५५ २	५९ ४१
८	४ २९	९ २७	१४ ४९	२० १२	२५ १२	२९ ५१	३४ २९	३९ २७	४४ ४९	५० १२	५५ १२	५९ ५१

९	४ ३८	९ ३७	१५ ०	२० २३	२५ २२	३० ०	३४ ३८	३९ ३७	४५ ०	५० २३	५२ २२	० २
१०	४ ४८	९ ४४	१५ ११	२० ३३	२५ ३१	३० ९	३४ ४८	३९ ४८	४५ ११	५० ३३	५२ ३१	० ९
११	४ ५८	९ ५९	१५ २२	२० ४३	२५ ४१	३० १९	३४ ५८	३९ ५९	४५ २२	५० ४३	५५ ४१	० १९
१२	५ ८	१० ९	१५ ३२	२० ५३	२५ ५०	३० २८	३५ ८	४० ९	४५ ३२	५० ५३	५५ ५०	० २८
१३	५ १८	१० २०	१५ ४३	२१ ३	२५ ५९	३० ३७	३५ १८	४० २०	४५ ४३	५१ ३	५५ ५९	० ३७
१४	५ २८	१० ३१	१५ ५४	२१ १३	२६ ८	३० ४६	३५ २८	४० ३१	४५ ५४	५१ १३	५६ ८	० ४६
१५	५ ३८	१० ४२	१६ ५	२१ २३	२६ १८	३० ५६	३५ ३८	४० ४२	४६ ५	५१ २३	५६ १८	० ५६
१६	५ ४८	१० ५२	१६ १५	२१ ३३	२६ २७	३१ ५	३५ ४८	४० ५२	४६ १५	५१ ३३	५६ २७	१ ५
१७	५ ५८	११ ३	१६ २६	२१ ४३	२६ ३६	३१ १४	३५ ५८	४१ ३	४६ २६	५१ ४३	५६ ३६	१ १४
१८	६ ८	११ १४	१६ ३७	२१ ५३	२६ ४५	३१ २३	३६ ८	४१ १४	४६ ३६	५१ ५३	५६ ४१	१ २३
१९	६ १८	११ २५	१६ ४८	२२ ३	२६ ५५	३१ २३	३६ १८	४१ २५	४६ ४८	५२ ३	५६ ५१	१ ३३
२०	६ २८	११ ३५	१६ ५८	२२ १३	२७ ४	३१ ४२	३६ २८	४१ ३५	४६ ५८	५२ १३	५७ ३	१ ४३
२१	६ ३८	११ ४६	१७ ९	२२ २३	२७ १२	३१ ५१	३६ ३८	४१ ४५	४७ ९	५२ २३	५७ १३	१ ५१
२२	६ ४६	११ ५७	१७ २०	२२ ३३	२७ २२	३२ ०	३६ ४८	४१ ५७	४७ २०	५२ ३३	५७ २२	२ ०
२३	६ ५८	१२ ८	१७ ३१	२२ ४३	२७ ३२	३२ १०	३६ ५८	४२ ८	४७ ३१	५२ ४३	५७ ३२	२ १०

२४	७ ८	१२ १२	१७ ४२	१२ ५३	२७ ४१	३२ १९	३७ ८	४२ १९	४७ ४२	५२ ५३	५७ ४१	२ १९
२५	७ १७	१२ २९	१७ ५२	२३ २	२७ ५०	३२ २८	३७ १७	४२ २९	४७ ५२	५३ २	५७ ५०	२ २८
२६	७ २७	१२ ४०	१८ ३	२३ १२	२८ ०	३२ ३८	३७ २७	४२ ४०	४८ ३	५३ १२	५८ ०	२ ३८
२७	७ ३७	१२ ५१	१८ १४	२३ २२	२८ ९	३२ ४७	३७ ३७	४३ ५१	४८ १४	५३ २२	५८ ९	२ ४७
२८	७ ४७	१३ २	१८ २५	२३ ३२	२८ १८	३२ ५६	३८ ४८	४२ २	४८ २५	५३ ३२	५८ १८	२ ५६
२९	७ ५७	१३ १२	१८ ३५	२३ ४२	२८ २७	३३ ५	३७ ५७	४३ १२	४८ ३५	५३ ४२	५८ २८	३ ५
३०	८ ८	१३ २३	१८ ४६	२३ ५२	२८ ३७	३३ १५	३८ ७	४३ २४	४८ ४७	५३ ५२	५८ ३७	३ १५

अथमेषादीनां संज्ञामाह

क्रियताबुरिजितुमकुलीरलेयपाथोनजूककौर्प्याख्याः ॥ तौक्षिक आकोकेरो हृद्रोगश्चांत्यभं चेत्थम् ॥४८॥

अथ मेषादिराशीनां स्वामिनः

मेषवृश्चिकयोर्भौमस्तुलावृषभयोर्भृगुः ॥ कन्यामिथुनयोर्ज्ञः स्याद्धनुर्मीनाधिपो गुरुः ॥४९॥
शनिर्मकरकुंभे च कुलीरस्य तु चन्द्रमाः ॥ सिंहस्याधिपतिः सूर्यो राशीनामधिपा मताः ॥५०॥

पुनः राशीशाः

चंद्रज्ञशुक्रधूमाकपरिवेषारकामुकाः॥ गुरुपातः शनिः केतुर्ग्रहाः स्युर्द्वादश क्रमात् ॥५१॥

मेषादि राशियों की संज्ञा

क्रिय, ताबुरि, जितुम, कुलीर, लेय, पाथोन, जूक, कौर्प्य, तौक्षिक, आकोकेरो, हृद्रोग तथा अन्त्य ये संज्ञा हैं॥४८॥

राशियों के स्वामी

मेष, वृश्चिक का मंगल, वृष, तुला का शुक्र, मिथुन, कन्या का बुध, धनु, मीन का गुरु तथा

मकर और कुंभ राशि का शनि, कर्क राशि का चन्द्रमा और सिंह का सूर्य स्वामी है।।४९।।५०।।

अप्रकाश ग्रह सहित स्वामी

चन्द्रमा, बुध, शुक्र, धूम, सूर्य, परिवेष, मंगल, इन्द्रचाप, गुरु, व्यतीपात, शनि और केतु (ध्वज) ये क्रमशः १२ राशियों के स्वामी हैं।।५१।।

अथाग्रे षोडशवर्गानाह

वर्गान् षोडशसंख्याकान् ब्रह्मा लोकपितामहः ।। तानहं संप्रवक्ष्यामि मैत्रेय श्रूयतामिति ।।५२।।
क्षेत्रं होरा च द्रेष्काणस्तुर्यांशः सप्तमांशकः ।। नवांशो दशमांशश्च सूर्यांशः षोडशांशकः ।।५३।।
विंशांशो वेदवान्हंसो भांशास्त्र्यशांशकस्ततः ।। खवेदांशोऽक्षवेदांशःषष्ठ्यंश्च ततः परम् ।।५४।।
तत्क्षेत्रं तस्य खेटस्य राशेर्यो यस्य नायकः ।। सूर्येन्द्वोर्विषमे राशौ समे तद्विपरीतकम् ।।५५।।
पितरश्चन्द्रहोरेशा देवाः सूर्यस्य कीर्तिताः ।। राशेरद्धम्भवेद्धोरा ताश्चतुर्विंशतिः स्मृताः ।। मेषादि तासां होराणां परिवृत्तिद्वय भवेत् ।।५६।।

षोडश वर्ग नाम

हे मैत्रेय! लोकपितामह ब्रह्मा के कहे हुए १६ वर्गों को कहता हूं, आप सुनें ।।५२।। स्वक्षेत्र १ होरा, २ द्रेष्काण ३ तुर्यांश ४ सप्तमांश ५ नवमांश ६ दशमांश ७ द्वादशांश ८ तथा षोडशांश ९ विंशांश १० चतुर्विंशांश ११ भांश १२ त्रिंशांश १३ खवेदांश १४ अक्षवेदांश १५ षष्ठ्यंश १६ ये १६ वर्ग हैं।।५२।।५३।।५४।।

स्वक्षेत्र और होरा

१–जिस राशि का जो स्वामी है वह 'स्वक्षेत्र वर्ग' है।

२–होरा–विषम राशि में 'प्रथम सूर्य' १५ अंश तक बाद 'चन्द्रमा ३० अंश तक' होरापति है।

समराशि में 'प्रथम चन्द्रमा की' बाद 'सूर्य' की होरा है। चन्द्र होरा के स्वामी 'पितर' और सूर्यहोरा के स्वामी देवता हैं। राशि के आधे भाग (१५ अंश) को होरा कहते हैं। वे २४ हैं। राशिचक्र में दो बार आवृत्ति होती है ।।५५।।५६।।

उदाहरण–जब लग्न में विषम राशि हो तब सूर्य से और समराशि हो तो चन्द्रमा से गिना जाता है। जैसे–लग्न ३।८ हो तो सम राशि होने से चन्द्रहोरा (४) है।
लग्न २।४ हो तो विषम राशि होने से सूर्य होरा (५) है।

होराचक्रमिदम्

स्वा०	राशि०	मे०	वृ०	मि०	क०	सिं०	क०	तु०	वृ०	ध०	म०	कुं०	मीन
दे०	१५	र०५	चं०४	सू०५	चं०४	सू०५	चं०४	सू०५	चं०४	सू०५	चं०४	सू०५	चं०४
पितरः	३०	चं०४	सू०५	चं०४	सू०५	चं०४	सू०५	चं०४	सू०५	चं०४	सू०५	चं०४	सू०५

अथ द्रेष्काणमाह

राशित्रिभागा द्रेष्काणास्तेच षट्त्रिंशदीरिताः ।। परिवृत्तित्रयंतेषां मेषादेः क्रमशो भवेत् ।।५७।।
स्वपंचनवमानां च विषमेषु समेषु च ।। नारदागस्तिदुर्वासा द्रेष्काणेशाश्चरादयः ।।५८।।

३–द्रेष्काण–प्रत्येक राशि के तीसरे भाग को 'द्रेष्काण' कहते हैं। सब द्रेष्काण १२X३=३६ हैं। मेषादि राशियों में तीन आवृत्ति होती हैं, प्रथम भाग का राशीश ही स्वामी है, दूसरे का पञ्चमेश और तीसरे का नवमेश स्वामी होता है। क्रम से नारद, अगस्ति, दुर्वासा देवता हैं।।५७।।५८।।

उदाहरण–राशि के ३० अंश है, उसके ३ भाग करने पर १०–१० अंश का १–१ भाग (द्रेष्काण) होता है। उसमें प्रथम भाग का राशिपति ही स्वामी है, दूसरे का पञ्चमाधिपति और तीसरे का नवम राशिपति स्वामी होता है। जैसे लग्न ३।८ है अतः प्रथम भाग में होने से चन्द्रमा की राशि ४ द्रेष्काण लग्न सिद्ध हुआ।

द्रेष्काणचक्रम्													
स्वा०	राशि	मे०	वृ०	मि०	क०	सिं०	क०	तु०	वृ०	ध०	म०	कुं०	मीन
नारदः	अंश १०	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२
अगस्तिः	२०	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४
दुर्वासाः	३०	९	१०	११	१२	१	२	३	४	५	६	७	८

अथ चतुर्थांशमाह

स्वक्षर्दिकेंद्रपतयस्तुर्यांशेशाः क्रियादयः ।। सनकश्च सनंदश्च कुमारश्च सनातनः ।।५९।।

चतुर्थांश वर्ग

राशि के ४ भाग में प्रथम भाग का स्वामी राशिपति है। द्वितीय भाग का चतुर्थ भावाधिपति एवं तृतीय का सप्तमेश और चतुर्थेश का दशमेश स्वामी होता है। और सनक, सनन्दन, सनत्कुमार, सनातन क्रम से देवता है।।५९।।

विवरण–राशि ३० के ४ भाग करने से ७।३० अंश का एक भाग होता है, इसका स्वामी राशिपति ही है, दूसरा भाग १५ अंश तक हुआ, इसका स्वामी चतुर्थेश और तीसरा भाग २२।३० तक हुआ इसका स्वामी सप्तमेश तथा चौथा भाग ३० अंश तक उसका स्वामी दशमेश होता है।

उदाहरण–लग्न ३।८ है । द्वितीय भाग में होने से शुक्र स्वामी है।

चतुर्थांशचक्रम्

स्वामी	अंश	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२
सनकः	७ ३०	१ मं०	२ शु०	३ बु०	४ चं	५ सू०	६ बु०	७ शु०	८ मं०	९ बृ०	१० श०	११ श०	१२ बृ०
सनंदनः	१५ ०	४ चं०	५ सू०	६ बु०	७ शु०	८ मं	९ बृ०	१० श०	११ श०	१२ बृ०	१ मं०	२ शु०	३ बु०
कुमारः	२२ ३०	७ शु०	८ मं०	९ बृ०	१० श०	११ श०	१२ बृ०	१ मं०	२ शु०	३ बु०	४ चं०	५ सू०	६ बु०
सनातनः	३० ०	१० श०	११ श०	१२ बृ०	१ मं०	२ शु०	३ बु०	४ चं०	५ सू०	६ बु०	७ शु०	८ मं०	९ बृ०

अथ सप्तमांशमाह

सप्तांशपास्त्वोजगृहे गणनीया निजेशतः ।। युग्मराशौ तु विज्ञेयाः सप्तमर्क्षादिनायकात् ।।६०।।
क्षारक्षीरौ च दध्याज्यौ तथेक्षुरससंभवः ।। मद्यशुद्धजलावोजे समे शुद्ध जलादिकाः ।।६१।।

सप्तमांश वर्ग

राशी के ७ भाग करने से एक भाग ४।१७।८ अंशात्मक होता है। वाद ४।१७ जोड़ते रहने से सातवें भाग में ३० अंश पूरे समझना। इसमें ओज (विषम) राशियों में राशिपति से ही गिनना। समराशियों में सातवीं राशि से गणना करना चाहिये। विषम राशि में देवता–क्षार, क्षीर, दधि, घृत, इक्षुरस, मद्य, जल क्रम से जानना।

समराशियों में–जल, मद्य, इक्षुरस, घृत, दधि, क्षीर, क्षार इस क्रम से जानना।।६०।।६१।।

उदाहरण–लग्न–३।८ समराशि का द्वितीय सप्तमांश है अतः कुंभ राशि तथा मद्य देवता है।

सप्तमांशचक्रम्

स्वामी	लग्न	मे०१	वृ०२	मि०३	क०४	सिं०५	क०६	तु०७	वृ०८	ध०९	म०१०	कुं११	मी१२
क्षार	४ १७	१	८	३	१०	५	१२	७	२	९	४	११	६
क्षीर	८ ३४	२	९	४	११	६	१	८	३	१०	५	१२	७

दधि	१२ ५१	३	१०	५	१२	७	२	९	४	११	६	१	८
आज्य	१७ ८	४	११	६	१	८	३	१०	५	१२	७	२	९
इक्षुरस	२१ २५	५	१२	७	२	९	४	११	६	१	८	३	१०
मद्य	२५ ४२	६	१	८	३	१०	५	१२	७	२	९	४	११
शुद्ध जलम्	३० ०	७	२	९	४	११	६	१	८	३	१०	५	१२

अव नवमांशम्

नवांशेशाच्चरस्तस्मात्स्थिरे तन्नवमादितः।। उभये तत्पंचमादेरिति चिंत्यं विचक्षणैः ।। देवा नृराक्षसाश्चैव चरादिषु ग्रहेषु च ।।६२।।

नवांश वर्ग

चरराशिमें राशिस्वामीसे स्थिरराशि में नवमराशि से तथा द्विस्वभाव राशि में पञ्चम राशि से गणना करनी चाहिए । चर में देवता, मनुष्य, राक्षस, स्थिर में मनुष्य, राक्षस, देव और द्विस्वभाव में राक्षस, देव, मनुष्य तीन बार आवृत्ति होती है।।६२।।

उदाहरण–जैसे लग्न ३।८।४।५ है। अतः कन्या नवमांश है।

टिप्पणी–नवांश वर्ग का व्यवहार में अधिक उपयोग होता है, यहां मूलकार ने संक्षेप तथा कुछ जटिल रीति से इसका विवरण किया है। इसकी सरल प्रक्रिया इस प्रकार है–

राशि के नव भाग करने से प्रत्येक भाग ३।२० का होता है और **"क्रियेण–तौलीन्दुभतो नवांशाः ।"** अर्थात् प्रत्येक राशि पर मेष, मकर, तुला, कर्क, मेष, मकर, तुला, कर्क ।। मेष, मकर, तुला, कर्क ये आदि राशि हैं। प्रत्येक राशि के नवांश में अपनी आदि राशि से नवें भाग तक गणना करना और प्रत्येक भाग ३।२० का होता है। अतः नौ भागों की संख्या क्रमशः ३।२०। – ६।४०–१०।००–१३।२० –१६।४० – २०।००–२३ । २०–२६।४०–३०।०० ये अंशादि भाग संख्या है। इसको याद रखने से व्यवहारकाल में चक्र में देखना आवश्यक नहीं होगा।

नवमांशचक्रम्

स्वामी	रा०	मे०	वृ०	मि०	क०	सि०	क०	तु०	वृ०	ध०	म०	कुं०	मी०	अंशाः
देव	१	मं०	श०	शु०	चं०	मं०	श०	शु०	चं०	मं०	श०	शु०	चं०	३।२०
नृ०	२	शु०	श०	मं०	र०	शु०	श०	मं०	र०	शु०	श०	मं०	र०	६।४०
राक्षस	३	बु०	बृ०	बृ०	बु०	बु०	बृ०	बृ०	बु०	बु०	बृ०	बृ०	बु०	१०।०
देव	४	चं०	मं०	श०	शु०	चं०	मं०	श०	शु०	चं०	मं०	श०	शु०	१३।२०
नृ	५	र०	शु०	श०	मं०	र०	शु०	श०	मं०	र०	शु०	श०	मं०	१६।४०
राक्षस	६	बु०	बु०	बृ०	बृ०	बु०	बु०	बृ०	बृ०	बु०	बु०	बृ०	बृ०	२०।०
देव	७	शु०	चं०	मं०	श०	शु०	चं०	मं०	श०	शु०	चं०	मं०	श०	२३।२०
नृ०	८	मं०	र०	शु०	श०	मं०	र०	शु०	श०	मं०	र०	शु०	श०	२६।४०
राक्षस	९	बृ०	बु०	बु०	बृ०	बृ०	बु०	बु०	बृ०	बृ०	बु०	बु०	बृ०	३०।०

अथ दशमांशमाह

दिगंशया ततश्चौजे युग्मे तन्नवमाद्वदेत् ।। पूर्वादिदशदिक्पाला इंद्राग्नियमराक्षसाः ।।६३।। वरुणो मारुतश्चैव कुबेरेशानपद्मजाः ।। अनन्तश्च क्रमादोजे समे वा व्युत्क्रमेण तु ।।६४।।

दशमांश वर्ग

राशि के ३० अंशों के १० भाग करने से प्रत्येक भाग ३ अंश का होता है। इनमें विषमराशियों में अपनी राशि से तथा सम राशियों में अपने से नौवीं राशि से गणना की जाती है। देवता विषम राशि में क्रम से–इन्द्र, अग्नि, यम, राक्षस, वरुण, मारुत, कुबेर, ईशान, पद्मज, अनन्त। सम राशियों में क्रमशः–अनन्त, पद्मज, ईशान, कुबेर, मारुत, वरुण, राक्षस, यम, अग्नि, इन्द्र जानना ।।६३।।६४।।

उदाहरण–लग्न–३।८।४।५ मीन राशि से गणना करने पर वृष राशि प्राप्त हुई।

अथ दशांशचक्रम्

विषमाः स्वामिनः		मे०	वृ०	मि०	क०	सिं०	क०	तु०	वृ०	ध०	म०	कु०	मी०	समाः स्वामि
इंद्रः	३	मं० १	श० १०	बु० ३	बृ० १२	र० ५	शु० २	शु० ७	चं० ४	बृ० ९	बु० ६	श० ११	मं० ८	अनंतः
अग्निः	६	शु० २	श० ११	चं० ४	मं० १	बु० ६	बु० ३	मं० ८	र० ५	श० १०	शु० ७	बृ० १२	बृ० ९	पद्मजः
यमः	९	बु० ३	बृ० १२	र० ५	शु० २	शु० ७	चं० ४	बृ० ९	बु० ६	श० ११	मं० ८	मं० १	श० १०	ईशानः
राक्षसः	१२	चं० ४	मं० १	बु० ६	बु० ३	मं० ८	र० ५	श० १०	शु० ७	बृ० १२	बृ० ९	शु० २	श० ११	कुबेरः
वरुणः	१५	र० ५	शु० २	शु० ७	चं० ४	बृ० ९	बु० ६	श० ११	मं० ८	मं० १	श० १०	बु० ३	बृ० १२	मारुतः
मारुतः	१८	बु० ६	बु० ३	मं० ८	र० ५	श० १०	शु० ७	बृ० १२	बृ० ९	शु० २	श० ११	चं० ४	मं० १	वरुणः
कुबेरः	२१	शु० ७	चं० ४	बृ० ९	बु० ६	श० ११	मं० ८	मं० १	श० १०	बु० ३	बृ० १२	सू० ५	शु० २	राक्षसः
ईशानः	२४	मं० ८	र० ५	श० १०	शु० ७	बृ० १२	बृ० ९	शु० २	श० ११	चं० ४	मं० १	बु० ६	बु० ३	यमः
पद्मजः	२७	बृ० ९	बु० ६	श० ११	मं० ८	मं० १	श० १०	बु० ३	बृ० १२	र० ५	शु० २	शु० ७	चं० ४	अग्निः
अनंतः	३०	श० १०	शु० ७	बृ० १२	बृ० ९	शु० २	श० ११	चं० ४	मं० १	बु० ६	बु० ३	मं० ८	र० ५	इंद्रः

अथ द्वादशांशमाह

द्वादशांशस्य गणना तत्तत्क्षेत्राद्विनिर्दिशेत् ।। तेषामधीशाः क्रमशो गणेशाऽश्वियमाहयः ।।६५।।

द्वादशांश वर्ग

एक राशि के ३० अंशों के १२ भाग करने पर २।३० एक भाग प्राप्त होता है। इसकी गणना अपनी राशि से ही होती है (यथा मेष के द्वादशांश की मेष से, वृष की वृष से, मिथुन की मिथुन से)।।६५।। देवता—गणेश, अश्विनीकुमार, यम, सर्प—ये तीन आवृत्ति करना।

उदाहरण—लग्न ३।८ कर्क से गुनने पर तुला राशि प्राप्त हुई।

अथ द्वादशांशचक्रमिदम्

स्वामिनः	अं०	मे०	वृ०	मि०	क०	सिं०	क०	तु०	वृ०	ध०	म०	कुं०	मी०
गणेशः	२ ३०	मं० १	शु० २	बु० ३	चं० ४	र० ५	बु० ६	शु० ७	मं० ८	गु० ९	श० १०	श० ११	गु० १२
अश्विनी कुमारौ	५ ०	शु० २	बु० ३	चं० ४	र० ५	बु० ६	शु० ७	मं० ८	गु० ९	श० १०	श० ११	गु० १२	मं० १
यमः	७ ३०	बु० ३	चं० ४	र० ५	बु० ६	शु० ७	मं० ८	गु० ९	श० १०	श० ११	गु० १२	मं० १	शु० २
अहिः	१० ०	चं० ४	र० ५	बु० ६	शु० ७	मं० ८	गु० ९	श० १०	श० ११	गु० १२	मं० १	शु० २	बु० ३
गणेशः	१२ ३०	र० ५	बु० ६	शु० ७	मं० ८	गु० ९	श० १०	श० ११	गु० १२	मं० १	शु० २	बु० ३	चं० ४
अश्विनी कुमारौ	१५ ०	बु० ६	श० ७	मं० ८	गु० ९	श० १०	श० ११	गु० १२	मं० १	शु० २	बु० ३	चं० ४	र० ५
यमः	१७ ३०	शु० ७	मं० ८	गु० ९	श० १०	श० ११	गु० १२	मं० १	शु० २	बु० ३	चं० ४	र० ५	बु० ६
अहिः	२० ०	मं० ८	गु० ९	श० १०	श० ११	गु० १२	मं० १	शु० २	बु० ३	चं० ४	र० ५	बु० ६	शु० ७
गणेशः	२२ ३०	गु० ९	श० १०	श० ११	गु० १२	मं० १	शु० २	बु० ३	चं० ४	र० ५	बु० ६	शु० ७	म० ८
अश्विनी कुमारौ	२५ ०	श० १०	श० ११	गु० १२	मं० १	शु० २	बु० ३	चं० ४	र० ५	बु० ६	शु० ७	मं० ८	गु० ९
यमः	२७ ३०	श० ११	गु० १२	मं० १	शु० २	बु० ३	चं० ४	र० ५	बु० ६	शु० ७	मं० ८	गु० ९	श० १०
अहिः	३० ०	गु० १२	मं० १	शु० २	बु० ३	चं० ४	र० ५	बु० ६	शु० ७	मं० ८	गु० ९	श० १०	श० ११

अथ षोडशांशमाह

अजसिंहाश्वितो ज्ञेया नृपांशाः क्रमशः सदा ॥ अजविष्णू रहः सूर्यो ह्योजे युग्मे प्रतीपकम् ॥६६॥

षोडशांश वर्ग (चर, स्थिर, द्विस्व०)

षोडशांश में-मेष, सिंह, धनु, राशि से अर्थात् (इनको नवांश की तरह आदि राशि मान कर

गणना करना।) इसका एक भाग १।५२।३० होता है। (चक्र में स्पष्ट है) देवता-विषम राशि में ब्रह्मा, विष्णु, हर, सूर्य तथा सम राशि में सूर्य, हर, विष्णु, ब्रह्मा। आगे पुनः इसी क्रम से गिन लेना।।६६।।

उदाहरण-लग्न-३।८।४।५। मेष से गणना की तो सिंह राशि प्राप्त हुई।

षोडशांशचक्रम्

संख्या	विषम स्वा०	मे०	वृ०	मि०	क०	सिं०	क०	तु०	वृ०	ध०	म०	कुं०	मी०	सम स्वा	अं०	क०	वि०
१	ब्र०	१	५	९	१	५	९	१	५	९	१	५	९	सू०	१	५२	३०
२	वि०	२	६	१०	२	६	१०	२	६	१०	२	६	१०	ह०	३	४५	०
३	ह०	३	७	११	३	७	११	३	७	११	३	७	११	वि०	५	३७	३०
४	सू०	४	८	१२	४	८	१२	४	८	१२	४	८	१२	ब्र०	७	३०	०
५	ब्र०	५	९	१	५	९	१	५	९	१	५	९	१	सू०	९	२२	३०
६	वि०	६	१०	२	६	१०	२	६	१०	२	६	१०	२	ह०	११	१५	०
७	ह०	७	११	३	७	११	३	७	११	३	७	११	३	वि०	१३	७	३०
८	सू०	८	१२	४	८	१२	४	८	१२	४	८	१२	४	ब्र०	१५	०	०
९	ब्र०	९	१	५	९	१	५	९	१	५	९	१	५	सू०	१६	५२	३०
१०	वि०	१०	२	६	१०	२	६	१०	२	६	१०	२	६	ह०	१८	४५	०
११	ह०	११	३	७	११	३	७	११	३	७	११	३	७	वि०	२०	३७	३०
१२	सू०	१२	४	८	१२	४	८	१२	४	८	१२	४	८	ब्र०	२२	३०	०
१३	ब्र०	१	५	९	१	५	९	१	५	९	१	५	९	सू०	२४	२२	३०
१४	वि०	२	६	१०	२	६	१०	२	६	१०	२	६	१०	ह०	२६	१५	०
१५	ह०	३	७	११	३	७	११	३	७	११	३	७	११	वि०	२८	७	३०
१६	सू०	४	८	१२	४	८	१२	४	८	१२	४	८	१२	ब्र०	३०	०	०

अथ विंशांशमाह

अथ बिंशतिभागानामधिपा ब्रह्मणोदिताः ।। क्रियाच्चरे स्थिरे चापान्मृगेन्द्राद्द्विस्वभावके ।।६७।। काली गौरी जया लक्ष्मीर्विजया विमला सती ।। तारा ज्वालामुखी श्वेता ललिता बगलामुखी।।६८।। प्रत्यंगिरा शची रौद्री भवानी वरदा जया ।। त्रिपुरा सुमुखी चेति विषमे परिचिंतयेत् ।।६९।। समराशौ दया मेधा छिन्नशीर्षा पिशाचिनी ।। धूमावती च मातंगी बाला भद्राऽरुणाऽनला ।।७०।। पिंगला छुछुका घोरा वाराही वैष्णवी सिता ।। भुवनेशी भैरवा च मङ्गला ह्यपराजिता ।।७१।।

विंशांश वर्ग

विंशांश वर्ग में चर (मेष, कर्क, तुला,मकर) राशियों में मेष से गणना करना, स्थिर राशियों में धनुराशि से और द्विस्वभाव राशियों में सिंह से गणना करना। इसका परिमाण १।३० है। देवता–विषम राशियों में क्रमशः–काली, गौरी, जया, लक्ष्मी, विजया, विमला सती, तारा, ज्वालामुखी, श्वेता, ललिता, बगलामुखी, प्रत्यगिरा, शची, रौद्री, भवानी, वरदा जया, त्रिपुरा और सुमुखी। समराशियों में–दया, मेधा, छिन्नशीर्षा, पिशाची, धूमावती मातंगी, बाला, भद्रा, अरुणा, अनला, पिंगला, छुछुका, घोरा, वाराही, वैष्णवी, सिता भुवनेश्वरी, भैरवी, मंगला और अपराजिता ये क्रमशः देवता हैं।।६७–७१।।

उदाहरण–लग्न ३।८।४।५'' कर्क चर राशि हैं अतः मेष से गणना करने पर कन्या राशि प्राप्त हुई।

विंशाशचक्रम्

सं	वि० स्वा०	मे० १	वृ० २	मि० ३	क० ४	सिं० ५	क० ६	तु० ७	वृ० ८	ध० ९	म० १०	कुं० ११	मी० १२	स० स्वा	अंशा	संख्या
१	काली	१	९	५	१	९	५	१	९	५	१	९	५	दया	१ ३०	१
२	गौरी	२	१०	६	२	१०	६	२	१०	६	२	१०	६	मेधा	३।०	२
३	जया	३	११	७	३	११	७	३	११	७	३	११	७	छिन्नशी	४।३०	३
४	लक्ष्मी	४	१२	८	४	१२	८	४	१२	८	४	१२	८	पिशाचि	६।०	४
५	विजया	५	१	९	५	१	९	५	१	९	५	१	९	धूमाव	७।३०	५
६	विमला	६	२	१०	६	२	१०	६	२	१०	६	२	१०	मातंगी	९।०	६

७	सती	७	३	११	७	३	११	७	३	११	७	३	११	बाला	१०।३०	७
८	तारा	८	४	१२	८	४	१२	८	४	१२	८	४	१२	भद्रा	१२।०	८
९	ज्वालामु०	९	५	१	९	५	१	९	५	१	९	५	१	अरुणा	१३।३०	९
१०	श्वेता	१०	६	२	१०	६	२	१०	६	२	१०	६	२	अनला	१५।०	१०
११	ललिता	११	७	३	११	७	३	११	७	३	११	७	३	पिंगला	१६।३०	११
१२	बगला	१२	८	४	१२	८	४	१२	८	४	१२	८	४	छुछुका	१८।०	१२
१३	प्रत्यंगिरा	१	९	५	१	९	५	१	९	५	१	९	५	घोरा	१९।३०	१३
१४	शची	२	१०	६	२	१०	६	२	१०	६	२	१०	६	वाराही	२१। ०	१४
१५	रौद्री	३	११	७	३	११	७	३	११	७	३	११	७	वैष्णवी	२२।३०	१५
१६	भवानी	४	१२	८	४	१२	८	४	१२	८	४	१२	८	सिता	२४।०	१६
१७	वरदा	५	१	९	५	१	९	५	१	९	५	१	९	भुवनेश्व०	२५।३०	१७
१८	जया	६	२	१०	६	२	१०	६	२	१०	६	२	१०	भैरवी	२७।०	१८
१९	त्रिपुरा	७	३	११	७	३	११	७	३	११	७	३	११	मंगला	२८।३०	१९
२०	सुमुखी	८	४	१२	८	४	१२	८	४	१२	८	४	१२	अपराजि०	३०।०	२०

अथ सिद्धांशकमाह

सिद्धांशकानामधिपाः सिंहादोजभगे गृहे ।। कर्काद्युग्मभगे खेट स्कंदः पर्शुधरोऽनलः ।।७२।।
विश्वकर्मा भगो मित्रो मयोंऽतक वृषध्वजाः ।। गोविंदो मदनो भीमः सिंहादौ विषमे क्रमात् ।।
कर्कादौ समभे भीमाद्विलोमेन विचिंतयेत् ।।७३।।

सिद्धां(२४)श वर्ग

चतुर्विंशांश वर्ग में विषमराशियों में सिंह से तथा सम राशियों में कर्क राशि से गणना करनी चाहिये। इसका एक भाग १।१५ अंश का होता है।

देवता–स्कन्द, पशुधर, अनल, विश्वक, भग, मित्र, मय, अन्तक, वृषध्वज, गोविन्द, मदन, भीम, स्कन्द, पशुधर, अनल, विश्वक, भग, मित्र, मय, अन्तक, वृषध्वज, गोविन्द, मदन, भीम ये देवता क्रमशः विषम राशि में जानना तथा सम राशियों में ये ही देवता विपरीत क्रम से समझना।।७२।।७३।।

उदाहरण–लग्न ३।८।४ कर्कादि गणना से मकर प्राप्त हुआ।

चतुर्विंशांशचक्रम्

सं०	वि०स्वा०	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	स०स्वा०	अं०क०	सं०
१	स्कंद	५	४	५	४	५	४	५	४	५	४	५	४	भीमः	१।१५	१
२	पशुधरः	६	५	६	५	६	५	६	५	६	५	६	५	मदनः	२।३०	२
३	अनलः	७	६	७	६	७	६	७	६	७	६	७	६	गोविन्दः	३।४५	३
४	विश्वकः	८	७	८	७	८	७	८	७	८	७	८	७	वृषध्वजः	५।०	४
५	भगः	९	८	९	८	९	८	९	८	९	८	९	८	अन्तकः	६।१५	५
६	मित्रः	१०	९	१०	९	१०	९	१०	९	१०	९	१०	९	मयः	७।३०	६
७	मयः	११	१०	११	१०	११	१०	११	१०	११	१०	११	१०	मित्रः	८।४५	[illegible]
८	अन्तकः	१२	११	१२	११	१२	११	१२	११	१२	११	१२	११	भगः	१०।०	
९	वृषध्वजः	१	१२	१	१२	१	१२	१	१२	१	१२	१	१२	विश्वकः	११।१५	९
१०	गोविंदः	२	१	२	१	२	१	२	१	२	१	२	१	अनलः	१२।३०	१०
११	मदनः	३	२	३	२	३	२	३	२	३	२	३	२	पशुधरः	१३।४५	११
१२	भीमः	४	३	४	३	४	३	४	३	४	३	४	३	स्कंदः	१५।०	१२
१३	स्कंदः	५	४	५	४	५	४	५	४	५	४	५	४	भीमः	१६।१५	१३
१४	पशुधरः	६	५	६	५	६	५	६	५	६	५	६	५	मदनः	१७।३०	१४
१५	अनलः	७	६	७	६	७	६	७	६	७	६	७	६	गोविंदः	१८।४५	१५
१६	व्रिश्चकः	८	७	८	७	८	७	८	७	८	७	८	७	वृषध्वजः	२०।०	१६
१७	भगः	९	८	९	८	९	८	९	८	९	८	९	८	अंतकः	२१।१५	१७
१८	मित्रः	१०	९	१०	९	१०	९	१०	९	१०	९	१०	९	मयः	२२।३०	१८
१९	मयः	११	१०	११	१०	११	१०	११	१०	११	१०	११	१०	मित्रः	२३।४५	१९
२०	अंतकः	१२	११	१२	११	१२	११	१२	११	१२	११	१२	११	भगः	२५।०	२०
२१	वृषध्वज०	१	१२	१	१२	१	१२	१	१२	१	१२	१	१२	विश्वकः	२६।१५	२१
२२	गोविंदः	२	१	२	१	२	१	२	१	२	१	२	१	अनलः	२७।३०	२२
२३	मदनः	३	२	३	२	३	२	३	२	३	२	३	२	पशुधरः	२८।४५	२३
२४	भीमः	४	३	४	३	४	३	४	३	४	३	४	३	स्कंदः	३०।०	२४

अथ भांशशानाह

नक्षत्रेशाः क्रमाद्दस्रयमवह्निपितामहाः ।। चंद्रेशादितिजीवा हि पितरो भगसंज्ञिताः ।।७४।।
अर्यमार्कस्त्वष्टमरुच्छक्राग्निमित्रवासवासवाः।।निर्ऋत्युदक विश्वेजगो बिन्दो वसबोंबुपः।।७५।।
ततोऽजपादहिर्बुध्न्यः पूषाचैव प्रकीर्तितः ।। नक्षत्रेशास्तु भांशेशा भांश संख्यस्वभात् क्रमात् ।।७६।।

भांश (सप्तविंशांश) वर्ग

भांश वर्ग में ३० अंश के २७ भाग होते हैं। एक भाग १।६।४ अंशादि होता है, राशियों के आदि गण्य क्रमशः मेष, कर्क, तुला, मकर ये तीन बार आवृत्तिरूप में आते हैं। और नक्षत्रों के देवता ही इनके देवता है। यथा—अश्विनीकुमार, यम, वह्नि, ब्रह्मा, चन्द्रमा, ईश, अदिति, जीव, अहि, पितर, भग, अर्यमा, सूर्य, त्वष्टा, मरुत्, शक्राग्नि, मित्र, वासव, राक्षस, वरुण, विश्वेदेव, गोविन्द, वसु, वरुण, अजपात्, अहिर्बुध्न्य, पूषा, क्रमशः ये देवता हैं।।७४।।७५।।७६।।

उदाहरण—लग्न ३।८।४।५ मकर से गणना करने पर सिंह लग्न आया।

भांशचक्रम्

सं०	स्वामिनः	मे०१	वृ०२	मि३	क०४	सिं५	क०६	तु०७	वृ०८	ध०९	मं०१०	कुं०११	मी०१२	अंशादि
१	अश्विनीकु०	१	४	७	१०	१	४	७	१०	१	४	७	१०	१।६।४०
२	यमः	२	५	८	११	२	५	८	११	२	५	८	११	२।१३।२०
३	वह्निः	३	६	९	१२	३	६	९	१२	३	६	९	१२	३।२०।०
४	ब्रह्मा	४	७	१०	१	४	७	१०	१	४	७	१०	१	४।२६।४०
५	चन्द्रमाः	५	८	११	२	५	८	११	२	५	८	११	२	५।३३।२०
६	ईशः	६	९	१२	३	६	९	१२	३	६	९	१२	३	६।४०।०
७	अदितिः	७	१०	१	४	७	१०	१	४	७	१०	१	४	७।४६।४०
८	जीवः	८	११	२	५	८	११	२	५	८	११	२	५	८।५३।२०
९	अहिः	९	१२	३	६	९	१२	३	६	९	१२	३	६	१०।०।०
१०	पितरः	१०	१	४	७	१०	१	४	७	१०	१	४	७	११।६।४०
११	भगः	११	२	५	८	११	२	५	८	११	२	५	८	१२।१३।२०
१२	अर्यमा	१२	३	६	९	१२	३	६	९	१२	३	६	९	१३।२०।०

१३	सूर्यः	१	४	७	१०	१	४	७	१०	१	४	७	१०	१४|२६|४०
१४	त्वष्टा	२	५	८	११	२	५	८	११	२	५	८	११	१५|३३|२०
१५	मरुत्	३	६	९	१२	३	६	९	१२	३	६	९	१२	१६|४०|०
१६	शक्राग्निः	४	७	१०	१	४	७	१०	१	४	७	१०	१	१७|४६|०
१७	मित्रः	५	८	११	२	५	८	११	२	५	८	११	२	१८|५३|२०
१८	वासवः	६	९	१२	३	६	९	१२	३	६	९	१२	३	२०|०|०
१९	राक्षसः	७	१०	१	४	७	१०	१	४	७	१०	१	४	२१|६|४०
२०	बरुणः	८	११	२	५	८	११	२	५	८	११	२	५	२२|२३|२०
२१	विश्वेदेवः	९	१२	३	६	९	१२	३	६	९	१२	३	६	२३|२०|०
२२	गोविंदः	१०	१	४	७	१०	१	४	७	१०	१	४	७	२४|२६|४०
२३	वसुः	११	२	५	८	११	२	५	८	११	२	५	८	२५|३३|२०
२४	बरुणः	१२	३	६	९	१२	३	६	९	१२	३	६	९	२६|४०|०
२५	अजपात्	१	४	७	१०	१	४	७	१०	१	४	७	१०	२७|४६|४०
२६	अहिर्बुध्न्य	२	५	८	११	२	५	८	११	२	५	८	११	२८|५३|२०
२७	पूषा	३	६	९	१२	३	६	९	१२	३	६	९	१२	३०|०|०

अथ त्रिंशांशमाह

त्रिंशांशेशाश्च विषमे कुजार्कीज्यज्ञभार्गवाः ।। पंचपंचाष्टसप्ताक्षभागा व्यत्ययतः समे ।।७७।।
वह्निः समीरशक्रौ च धनदो जलदस्तथा ।। विषमेषु क्रमाज्ज्ञेयाः समराशौ विपर्ययम् ।।७८।।

त्रिंशांश वर्ग

त्रिंशांश वर्ग में ५ भाग हैं। तथा ५।५।८।७।५ अंशों के हैं। और भागपति ग्रह क्रमशः विषम राशियोंमें मं०, श० गु० बु०, शु० हैं।और सम राशियों में शु० बु० गु० श० मं० हैं। देवता क्रमशः विषम राशियों में वह्नि, वायु, शक्र, धनद, जलद और सम राशियों में जलद, धनद, शक्र, वायु, वह्नि हैं।।७७।।७८।।

उदाहरण—लग्न ३।८ है शुक्र से गणना की तो बुध आया।

विषमत्रिंशांशचक्रम्

स्वामिनः	अंशाः	मेषः	मिथुनः	सिंहः	तुला	धनु	कुंभः
वह्निः	५ ०	मं०	मं०	मं०	मं०	मं०	मं०
वायुः	१० ०	श०	श०	श०	श०	श०	श०
शक्रः	१८ ०	गु०	गु०	गु०	गु०	गु०	गु०
धनदः	२५ ०	बु०	बु०	बु०	बु०	बु०	बु०
जलदः	३० ०	शु०	शु०	शु०	शु०	शु०	शु०

समत्रिंशांशचक्रम्

स्वामिनः	अंशाः	वृषभ	कर्क	कन्या	वृश्चिक	मकर	मीन
जलदः	५ ०	शु०	शु०	शु०	शु०	शु०	शु०
धनदः	१२ ०	बु०	बु०	बु०	बु०	बु०	बु०
शक्रः	२० ०	गु०	गु०	गु०	गु०	गु०	गु०
वायुः	२५ ०	श०	श०	श०	श०	श०	श०
वह्निः	३० ०	मं०	मं०	मं०	मं०	मं०	मं०

अथ खवेदांशमाह

चत्वारिंशतिभागानामधिपा विषमे क्रियात् ।। विष्णुश्चंद्रो मरीचिश्च त्वष्टा धाता शिवो रविः ।।७९।। यमो यक्षेशगंधर्वः कालो वरुण एव च ।। समभे तुलतो ज्ञेयाः स्वस्वाधिपसमन्विताः ।।८०।।

खवेदांश (४०) वर्ग

खवेदांश(४०) वर्ग में ४० भाग हैं। प्रत्येक भाग ००।४५ अंश घटि का है। विषम राशियों में मेष से तथा सम राशियों में तुला से गणना होती है। देवता–विष्णु, चन्द्र, मरीचि, त्वष्टा, धाता, शिव, रवि, यम, यक्षेश, गन्धर्व, काल, वरुण तथा विष्णु ये बारह देवता ही बार बार गिनने से ३ बार में ३६ भाग तक गिने जाकर बाकी चार भागों में पुनः इन्हीं में से विष्णु, चन्द्रमा, मरीचि और त्वष्टा आकर ४० की संख्या पूर्ण होती है।।७९।।८०।।

उदाहरण–लग्न–३।८।४।५ तुलादि गणना करने से सिंह राशि प्राप्त हुई।

खवेदांशचक्रमिदम्

सं०	स्वामिनः	मे०	वृ१	मि२	क३	सिं४	क५	तु६	वृ७	ध८	म९	कुं१०	मी११	अं०	क०
१	विष्णुः	१	७	१	७	१	७	१	७	१	७	१	७	०	४५
२	चन्द्रः	२	८	२	८	२	८	२	८	२	८	२	८	१	३०
३	मरीचिः	३	९	३	९	३	९	३	९	३	९	३	९	२	१५
४	त्वष्टा	४	१०	४	१०	४	१०	४	१०	४	१०	४	१०	३	०
५	धाता	५	११	५	११	५	११	५	११	५	११	५	११	३	४५
६	शिवः	६	१२	६	१२	६	१२	६	१२	६	१२	६	१२	४	३०
७	रविः	७	१	७	१	७	१	७	१	७	१	७	१	५	१५
८	यमः	८	२	८	२	८	२	८	२	८	२	८	२	६	०
९	यक्षेशः	९	३	९	३	९	३	९	३	९	३	९	३	६	४५
१०	गन्धर्वः	१०	४	१०	४	१०	४	१०	४	१०	४	१०	४	७	३०
११	कालः	११	५	११	५	११	५	११	५	११	५	११	५	८	१५
१२	वरुणः	१२	६	१२	६	१२	६	१२	६	१२	६	१२	६	९	०
१३	विष्णुः	१	७	१	७	१	७	१	७	१	७	१	७	९	४५
१४	चन्द्रः	२	८	२	८	२	८	२	८	२	८	२	८	१०	३०

१५	मरीचिः	३	९	३	९	३	९	३	९	३	९	३	९	११	१५
१६	त्वष्टा	४	१०	४	१०	४	१०	४	१०	४	१०	४	१०	१२	०
१७	धाता	५	११	५	११	५	११	५	११	५	११	५	११	१२	४५
१८	शिवः	६	१२	६	१२	६	१२	६	१२	६	१२	६	१२	१३	३०
१९	रविः	७	१	७	१	७	१	७	१	७	१	७	१	१४	१५
२०	यमः	८	२	८	२	८	२	८	२	८	२	८	२	१५	०
२१	यक्षेशः	९	३	९	३	९	३	९	३	९	३	९	३	१५	४५
२२	गन्धर्वः	१०	४	१०	४	१०	४	१०	४	१०	४	१०	४	१६	३०
२३	कालः	११	५	११	५	११	५	११	५	११	५	११	५	१७	१५
२४	वरुणः	१२	६	१२	६	१२	६	१२	६	१२	६	१२	६	१८	०
२५	विष्णुः	१	७	१	७	१	७	१	७	१	७	१	७	१८	४५
२६	चन्द्र	२	८	२	८	२	८	२	८	२	८	२	८	१९	३०
२७	मरीचिः	३	९	३	९	३	९	३	९	३	९	३	९	२०	१५
२८	त्वष्टा	४	१०	४	१०	४	१०	४	१०	४	१०	४	१०	२१	०
२९	धाता	५	११	५	११	५	११	५	११	५	११	५	११	२१	४५
३०	शिव	६	१२	६	१२	६	१२	६	१२	६	१२	६	१२	२२	३०
३१	रविः	७	१	७	१	७	१	७	१	७	१	७	१	२३	१५
३२	यमः	८	२	८	२	८	२	८	२	८	२	८	२	२४	०
३३	यक्षेशः	९	३	९	३	९	३	९	३	९	३	९	३	२४	४५
३४	गन्धर्वः	१०	४	१०	४	१०	४	१०	४	१०	४	१०	४	२५	३०
३५	कालः	११	५	११	५	११	५	११	५	११	५	११	५	२६	१५

३६	वरुणः	१२	६	१२	६	१२	६	१२	६	१२	६	१२	६	२७	०
३७	विष्णुः	१	७	१	७	१	७	१	७	१	७	१	७	२७	४५
३८	चन्द्रः	२	८	२	८	२	८	२	८	२	८	२	८	२८	३०
३९	मरीचिः	३	९	३	९	३	९	३	९	३	९	३	९	२९	१५
४०	त्वष्टा	४	१०	४	१०	४	१०	४	१०	४	१०	४	१०	३०	०

अथाक्षवेदांशमाह

तथाक्षवेदभागानामधिपाश्चरभे क्रियात् ।। स्थिरेसिंहाद्द्विस्वभावे चापाद्ब्रह्मेशकेशवाः ।। ईशाच्युतसुरज्येष्ठविष्णुकेशाश्चरादिषु ।।८१।।

अक्षवेदांश (४५) वर्ग

अक्षवेदांश वर्ग में ३० अंश के ४५ भाग हैं और एक भाग ४० घटिका का है। इनमें चरराशियों में मेष राशि से तथा स्थिर राशियों में सिंह एवं द्विस्वभाव राशियों में धनुराशि से गणना होती है। देवता—चरराशि में ब्रह्मा, शंकर, विष्णु इस क्रम से तथा स्थिरराशियों में शंकर, विष्णु, ब्रह्मा क्रम से एवं द्विस्वभाव राशि में विष्णु, ब्रह्मा, शंकर क्रम से बार २ आवृत्ति करके गणना होती है।।८१।।

उदाहरण—लग्न—३।८।४।५ मेष मे गणना करने पर वृष राशि आई।

अक्षवेदांशचक्रमिदम्														
सं०	स्वा० ब्रह्मा शंकर विष्णु मे०	स्वा० शंकर विष्णु ब्रह्मा वृ०१	स्वा० विष्णु ब्रह्मा शंकर मि०२	स्वा० ब्रह्मा शंकर विष्णु क०३	स्वा० शंकर विष्णु ब्रह्मा सिं०४	स्वा० विष्णु ब्रह्मा शंकर क०५	स्वा० ब्रह्मा शंकर विष्णु तु०६	स्वा० शंकर विष्णु ब्रह्मा वृ०७	स्वा० विष्णु ब्रह्मा शंकर ध०८	स्वा० ब्रह्मा शंकर विष्णु म०९	स्वा० शंकर विष्णु ब्रह्मा कुं१०	स्वा० विष्णु ब्रह्मा शंकर मी११	अं०	क०
१	१	५	९	१	५	९	१	५	९	१	५	९	०	४०
२	२	६	१०	२	६	१०	२	६	१०	२	६	१०	१	२०
३	३	७	११	३	७	११	३	७	११	३	७	११	२	०
४	४	८	१२	४	८	१२	४	८	१२	४	८	१२	२	४०
५	५	९	१	५	९	१	५	९	१	५	९	१	३	२०

६	६	१०	२	६	१०	२	६	१०	२	६	१०	२	४	०
७	७	११	३	७	११	३	७	११	३	७	११	३	४	४०
८	८	१२	४	८	१२	४	८	१२	४	८	१२	४	५	२०
९	९	१	५	९	१	५	९	१	५	९	१	५	६	०
१०	१०	२	६	१०	२	६	१०	२	६	१०	२	६	६	४०
११	११	३	७	११	३	७	११	३	७	११	३	७	७	२०
१२	१२	४	८	१२	४	८	१२	४	८	१२	४	८	८	०
१३	१	५	९	१	५	९	१	५	९	१	५	९	८	४०
१४	२	६	१०	२	६	१०	२	६	१०	२	६	१०	९	२०
१५	३	७	११	३	७	११	३	७	११	३	७	११	१०	०
१६	४	८	१२	४	८	१२	४	८	१२	४	८	१२	१०	४०
१७	५	९	१	५	९	१	५	९	१	५	९	१	११	२०
१८	६	१०	२	६	१०	२	६	१०	२	६	१०	२	१२	०
१९	७	११	३	७	११	३	७	११	३	७	११	३	१२	४०
२०	८	१२	४	८	१२	४	८	१२	४	८	१२	४	१३	२०
२१	९	१	५	९	१	५	९	१	५	९	१	५	१४	०
२२	१०	२	६	१०	२	६	१०	२	६	१०	२	६	१४	४०
२३	११	३	७	११	३	७	११	३	७	११	३	७	१५	२०
२४	१२	४	८	१२	४	८	१२	४	८	१२	४	८	१६	०
२५	१	५	९	१	५	९	१	५	९	१	५	९	१६	४०
२६	२	६	१०	२	६	१०	२	६	१०	२	६	१०	१७	२०
२७	३	७	११	३	७	११	३	७	११	३	७	११	१८	०

२८	४	८	१२	४	८	१२	४	८	१२	४	८	१२	१८	४०
२९	५	९	१	५	९	१	५	९	१	५	९	१	१९	२०
३०	६	१०	२	६	१०	२	६	१०	२	६	१०	२	२०	०
३१	७	११	३	७	११	३	७	११	३	७	११	३	२०	४०
३२	८	१२	४	८	१२	४	८	१२	४	८	१२	४	२१	२०
३३	९	१	५	९	१	५	९	१	५	९	१	५	२२	०
३४	१०	२	६	१०	२	६	१०	२	६	१०	२	६	२२	४०
३५	११	३	७	११	३	७	११	३	७	११	३	७	२३	२०
३६	१२	४	८	१२	४	८	१२	४	८	१२	४	८	२४	०
३७	१	५	९	१	५	९	१	५	९	१	५	९	२४	४०
३८	२	६	१०	२	६	१०	२	६	१०	२	६	१०	२५	२०
३९	३	७	११	३	७	११	३	७	११	३	७	११	२६	०
४०	४	८	१२	४	८	१२	४	८	१२	४	८	१२	२६	४०
४१	५	९	१	५	९	१	५	९	१	५	९	१	२७	२०
४२	६	१०	२	६	१०	२	६	१०	२	६	१०	२	२८	०
४३	७	११	३	७	११	३	७	११	३	७	११	३	२८	४०
४४	८	१२	४	८	१२	४	८	१२	४	८	१२	४	२९	२०
४५	९	१	५	९	१	५	९	१	५	९	१	५	३०	०

अथ षष्ट्यंशमाह

घोरश्चं राक्षसो देवः कुबेरो यक्षकिन्नरौ ।। भ्रष्टः कुलघ्नो गरलो वह्निर्माया पुरीषकः ।।८२।। अपांपतिर्मरुत्वांश्च कालः सर्पामृतेन्दुकाः ।। मृदुः कोमलहेरंबब्रह्मविष्णुमहेश्वराः ।।८३।। देवार्द्रौ कलिनाशश्च क्षितीशकमलाकरौ ।। गुलिको मृत्युकालश्च दावाग्निर्घोरसंज्ञकः ।।८४।। यमश्च कण्टकसुधाऽमृतौ पूर्णनिशाकरः ।। विषदग्धकुलांतश्च मुख्यो वंशक्षयस्तथा ।।८५।। उत्पातकालसौम्याख्याः कोमलः शीतलाभिधः ।। करालदंष्ट्रचंद्रास्यौ प्रवीणः कालपावकः ।।८६।। दण्डभृन्निर्मलः सौम्यः क्रूरोऽतिशीतलोमृतः ।।पयोधिं भ्रमणाख्यौ च चंद्ररेखा स्वयुग्मपौ

।।८७।। समेभे व्यत्ययाज्ज्ञेया षष्ट्यंशाश्च प्रकीर्तिताः ।। षष्ट्यंशस्वामिनस्त्वोजे तदीशाव्द्यत्ययः समे ।।८८।। शुभषष्ट्यंशसंयुक्ता ग्रहाः शुभफलप्रदाः ।। क्रूरषष्ट्यंशसंयुक्ता नाशयन्ति खचारिणः ।।८९।। राशीन् विहाय खेटस्य द्विघ्नमंशाद्यमर्कहृत् ।। शेषं सैकं च तद्राशिनाथषष्ट्यंशपाः स्मृताः ।।९०।।

षष्ठ्यंश वर्ग (६०)

षष्ठ्यंश वर्ग में प्रथम देवता कथन करते हैं। ये देवता विषम राशियों में लिखित क्रम से और सम राशियों में विपरीत क्रम से जानना। घोर। राक्षस। देव। कुबेर। यक्ष। किन्नर। भ्रष्ट। कुलघ्न। गरल। अग्नि। माया। पुरीष। अपां पति। मरुत्वत्। काल। अहिभाग। अमृत। चन्द्र। मृदु। कोमल। हेरम्ब। ब्रह्मा। विष्णु महेश्वर। देव। आर्द्र। कलिनाश। क्षितीश्वर। कमलाकर। गुलिक। मृत्यु। काल। दावाग्नि। यम। कण्टक। सुधा। अमृत। पूर्णचन्द्र। विषप्रदग्ध। कुलनाश। वंशक्षय। उत्पात। कालरूप। सौम्य। कोमल। शीतल। दृंष्ट्रा कराल। इन्दुमुख। प्रवीण। कालाग्नि। दण्डायुध। निर्मल। सौम्य। क्रूर। अतिशीतल। सुधांश। पयोधीश। भ्रमण। इन्दुरेखा ये ६० देवता कहे गये हैं।

वर्ग विवरण

जिस ग्रह या लग्न में षष्ठ्यंश की राशि देखना हो उसके स्पष्ट में से राशि अलग रखकर अंश, घटी, पल के अंक को द्विगुण करना, कला को ३० से शेष कर अंश में युक्त करना। और अंश में १२ का भाग देकर (लब्ध त्याग कर) शेष संख्या में १ मिलाना पश्चात् लग्न या ग्रह जिस राशि में हों उस राशि से गणना करने पर राशि अंक प्राप्त होगा। देवता के सम विषम के बारे में ऊपर लिख चुके हैं।।८२-९०।।

उदाहरण–लग्न–३।८।४५।०० इसके अंशादि ८।४५X२=१६।९० घटिका में ३० का भाग दिया लब्धि ३ अंश में योग किया तो १९ हुए, इसमें १ और योग किया २० हुए। १२ का भाग दिया शेष ८ अंश रहे। अतः सारिणी में १७ वां अंश १२ (मीन) राशि और 'कालरूप' अंश प्राप्त हुआ। ग्रह में उदारहण–सूर्य–अंशादि ४।२८।१X२=८।५६।२ घटी ५६ में ३० के भाग से लब्ध १ को ८ में योग किया ९ हुए १ और योग किया १० हुए मिथुन से गणना करने पर २१ 'हेरम्ब' अंश और १ राशि प्राप्त हुई।।

अथ षष्टचंशचक्रमिदम्

सं०	विषमषष्टचंशाः	मे० ०	वृ० १	मि० २	क० ३	सिं० ४	क० ५	तु० ६	वृ० ७	ध० ८	म० ९	कुं० १०	मी० ११	समषष्टचंशाः	अं० कला
१	घोरांशः	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	इन्दुरेखांशः	० | ३०
२	राक्षसांशः	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	भ्रमणांशः	१ | ०
३	देवांशः	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	पयोधीशांशः	१ | ३०
४	कुबेरांशः	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	सुधांशः	२ | ०
५	यक्षांशः	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	अतिशीतलांशः	२ | ३०
६	किन्नरांशः	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	क्रूरांशः	३ | ०
७	भ्रष्टांशः	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	सौम्यांशः	३ | ३०
८	कुलघ्नांशः	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	निर्मलांशः	४ | ०
९	गरलांशः	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४	दंडायुधांशः	४ | ३०
१०	अग्नचंशः	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४	कालाग्नचंशः	५ | ०
११	मायांशः	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४	५	प्रवीणांशः	५ | ३०
१२	पुरीषांशः	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४	५	इन्दुमुखांशः	६ | ०
१३	अपांपत्यंशः	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४	५	६	दंष्ट्राकरालांशः	६ | ३०
१४	मरुत्वदंशः	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४	५	६	शीतलांशः	७ | ०
१५	कालांशः	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४	५	६	७	कोमलांशः	७ | ३०
१६	अहिभागांशः	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४	५	६	७	सौम्यांशः	८ | ०
१७	अमृतांशः	९	१०	११	१२	१	२	३	४	५	६	७	८	कालरूपांशः	८ | ३०
१८	चन्द्रांशः	९	१०	११	१२	१	२	३	४	५	६	७	८	उत्पातांशः	९ | ०

१९	मृद्वंशकः	१०	११	१२	१	२	३	४	५	६	७	८	९	वंशक्षयांशः	९|३०
२०	कोमलांशः	१०	११	१२	१	२	३	४	५	६	७	८	९	कुलनाशांशः	१०|०
२१	हेरम्बांशः	११	१२	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	विषप्रदग्धांशः	१०|३०
२२	ब्रह्मांशः	११	१२	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	पूर्णचन्द्रांशः	११|०
२३	विष्णवंशः	१२	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	अमृतांशः	११|३०
२४	महेश्वरांशः	१२	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	सुधांशः	१२|०
२५	देवांशः	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	कपटकांशः	१२|३०
२६	आर्द्रांशः	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	यमांशः	१३|०
२७	कलिनाशांशः	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	घोरांशः	१३|३०
२८	क्षितीश्वरांशः	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	दावाग्न्यंशः	१४|०
२९	कमलाकरांशः	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	कालांशः	१४|३०
३०	गुलिकांशः	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	मृत्योरंशः	१५|०
३१	मृत्योरंशः	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	कुलिकांशः	१५|३०
३२	कालांशः	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	कमलाकरांशः	१६|०
३३	दावाग्न्यंशः	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४	क्षितीश्वरांशः	१६|३०
३४	घारांशः	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४	कलिनाशांशः	१७|०
३५	यमांशः	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४	५	आर्द्रांशः	१७|३०
३६	कण्टकांशः	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४	५	देवांशः	१८|०
३७	सुधांशः	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४	५	६	महेश्वरांशः	१८|३०
३८	अमृतांशः	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४	५	६	विष्णवंशः	१९|०
३९	पूर्णचन्द्रांशः	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४	५	६	७	ब्रह्मांशः	१९|३०

४०	विषप्रदग्धांशः	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४	५	६	७	हेरम्बांशः	२०| ०
४१	लग्नाशांशः	९	१०	११	१२	१	२	३	४	५	६	७	८	कोमलांशः	२०|३०
४२	वंशक्षयांशः	९	१०	११	१२	१	२	३	४	५	६	७	८	मृद्वंशकः	२१| ०
४३	उत्पातांशः	१०	११	१२	१	२	३	४	५	६	७	८	९	चंद्रांशः	२१|३०
४४	कालरूपांशः	१०	११	१२	१	२	३	४	५	६	७	८	९	अमृतांशः	२२| ०
४५	सौम्यांशः	११	१२	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	अहिभागांश	२२|३०
४६	कोमलांश	११	१२	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	कालांशः	२३| ०
४७	शीतलांशः	१२	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	मरुत्वदंशः	२३|३०
४८	दंष्ट्राकरालांशः	१२	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	अपांपत्यंशः	२४| ०
४९	इंदुमुखांशः	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	पुरीषांशः	२४|३०
५०	प्रवीणांशः	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	मायांशः	२५| ०
५१	कालाग्नचंशः	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	अग्नचंशः	२५|३०
५२	दंडायुधांशः	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	गरलांशः	२६| ०
५३	निर्मलांशः	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	कुलघ्नांशः	२६|३०
५४	सौम्यांशः	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	भ्रष्टांशः	२७|०
५५	क्रूरांशः	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	किन्नरांशः	२७|३०
५६	अतिशीतलांशः	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	यक्षांशः	२८| ०
५७	सुधांशः	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४	कुबेरांशः	२८|३०
५८	पयोधीशांशः	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४	देवांशः	२९| ०
५९	भ्रमणांशः	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४	५	राक्षसांशः	२९|३०
६०	इन्दुरेखांशः	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४	५	घोरांशः	३०| ०

फल–शुभ षष्ठचंश में ग्रह हो तो फल शुभ होता है, अशुभ षष्ठंचश में हो तो अनिष्टकारक होता है।

अथ वर्गभेदानाह

वर्गभेदानहं वक्ष्ये मैत्रेय त्वं विधारय ।। षड्वर्गाः सप्तवर्गाश्च दिग्वर्गा नृपवर्गकाः ।।९१।। भवंति वर्गसंयोगे षड्वर्गे किंशुकादयः ।। द्वाभ्यां किंशुकनामा च त्रिभिर्व्यंजनमुच्यते ।।९२।। चतुर्भिश्चामराख्यं च छंत्रं पंचभिरेव च ।। षड्भिः कुण्डलयोगः स्यान्मुकुटाख्यं च सप्तभिः ।।९३।। सप्तवर्गेऽथ दिग्वर्गे परिजाता दिसंज्ञकाः ।। पारिजातं भवेद्द्वाभ्यामुत्तमं त्रिभिरुच्यते ।।९४।। चतुर्भिर्गोपुराख्यं स्याच्छरैः सिंहासनं तथा ।। पारावतं भवेत्षड्भिर्देवलोकं च सप्तभिः ।।९५।। वसुभिर्ब्रह्मलोकाख्यं नवभिः शक्रवाहनम् ।। दिग्भिः श्रीधामयोगं स्यादथषोडशवर्गके ।।९६।। भेदकं च भवेद्द्वाभ्यां त्रिभिः स्यात्कुसुमाख्यकम् ।। चतुर्भिर्नागपुष्पं स्यात्पंचभिः कंदुकाह्वयम् ।।९७।। केरलाख्यं भवेत्षड्भिः सप्तभिः कल्पवृक्षकम् ।। अष्टभिश्चंदनवनं नवभिः पूर्णचंद्रकम् ।।९८।। दिग्भिरुच्चैः श्रवा नाम रुद्रैर्धन्वन्तरिर्भवेत् ।। सूर्यकान्तं भवेत्सूर्यैर्विश्वैः स्याद्विद्रुमाख्यकम् ।।९९।। शक्रसिंहासनं शक्रैर्गोलोकंतिथिभिर्भवेत् ।। भूपैः श्रीवल्लभाख्यं स्याद्वर्गा भेदैरुदाहृताः ।।१००।। स्वोच्चमूलत्रिकोणस्वभवनाधिपतिं तथा ।। स्वारूढात्केंद्रनाथानां वर्गा ग्राह्याः सुधीमताः ।।१०१।। अस्तङ्गता ग्रहजिता नीचगा दुर्बलास्तथा ।। शयनादि वयादुस्था उत्पन्ना योगनाशकाः ।।१०२।।

वर्गभेदप्रकार नाम

हे मैत्रेय! अब हम 'वर्गभेद' कहते हैं आप ध्यान से सुनिये। प्रायः ४ सूमह में इनका विचार किया जाता है। १–षड्वर्ग ।२–सप्तवर्ग। ३–दश वर्ग । ४–षोडशवर्ग । इन ४ समूहों में षड्वर्ग और सप्तवर्ग में एक ही संज्ञाएँ हैं। तथा दशवर्ग और षोडश वर्ग की संज्ञाएँ भिन्न २ हैं। इनमें पहिले २ की संयुक्त संज्ञाएँ कहते हैं। दो वर्गों से किंशुक । तीन से व्यंजन । चार से चामर । पांच से छत्र । छः से कुंडल और सात से मुकुट नाम होता है। अब दश वर्ग की सामुहिक संज्ञा कहते हैं–
दो वर्गों से पारिजात । तीन से उत्तम । चार से गोपुर । पांच से सिंहासन । छः से पारावत । सात से देवलोक । आठ से ब्रह्मलोक । नो से शक्रवाहन । और दश से श्रीधाम नाम होता है। अब षोडशवर्ग की सामुहिक संज्ञाएँ कहते हैं। दो से भेदक । तीन से कुसुम । चार से नागपुष्प । पाँच से कंदुक । छः से केरल । सात से कल्पवृक्ष आठसे चंदनवन । नौ से पूर्णचन्द्र । दश से उच्चैः श्रवा । ग्यारह से धन्वन्तरि । बारह से सूर्यकान्त । तेरह से विद्रुम । चौहद से शक्रसिंहासन । पन्द्रह से गोलोक । सोलह से श्रीवल्लभ । ये नाम समूहालम्बन परक हैं, अर्थात् नामके साथ की संख्या के वर्गसमुदाय का उल्लिखित नाम है।

केन्द्राधिपति ग्रहों की आरूढ राशि (राशि, अंश, कलादि से) इन वर्गों का विचार करना चाहिए । जो ग्रह स्वगृह, उच्च, मूल त्रिकोण में होते हैं उनके वर्ग भी यदि श्रेष्ठ हों तो अपने शुभकारक फल में बलवान् होते हैं। और अस्त, नीच, शत्रुराशिगत ग्रहों के वर्ग योगनाशक होते हैं।।९१-१०२।।

किंशुकादिसप्तकवर्गसंज्ञाचक्रमिदमाह					
२	३	४	५	६	७
किंशुकाख्यम्	व्यंजनाख्यम्	चामराख्यम्	छत्रम्	कुंडलाख्यम्	मुकुटाख्यम्

पारिजातादिदशवर्गसंज्ञाचक्रमिदम्								
२	३	४	५	६	७	८	९	१०
पारिजातं	उत्तमम्	गोपुराख्यं	सिंहासनं	पारावतं	देवलोकं	ब्रह्मलोकं	शक्रवाहनं	श्रीधाम

भेदादिषोडशवर्गसंज्ञाचक्रमिदम्														
२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३	१४	१५	१६
भेदकम्	कुसुमाख्यम्	नागपुष्पम्	कंदुकाह्वयम्	केरलाख्यम्	कल्पवृक्षकम्	चंदनवनम्	पूर्णचंद्रकम्	उच्चैःश्रवा	धन्वतरिः	सूर्यकान्तम्	विद्रुमाख्यम्	शक्रसिंहासनं	गोलोकम्	श्रीवल्लभाख्यं

अथ षोडशवर्गेषु चिंतालग्नं वदाम्यहम् ।। लग्नं देहस्य विज्ञानं होरायां संपदादिकम् ।।१०३।। द्रेष्काणे भ्रातृजं सौख्यं तुर्यांशे भाग्यचिंतनम् ।। पुत्रपौत्रादिकानां वै चिंतनं सप्तमांशके ।।१०४।। नवमांशे कलत्राणां दशमांशे महत्फलम् ।। द्वादशांशे तथा पित्रोश्चिंतनं षोडशांशके ।।१०५।। सुखाऽसुखस्य विज्ञानं वाहनानां तथैव च ।। उपासनाया विज्ञानं साध्यं विंशतिभागके ।।१०६।। विद्याया वेदबाह्वंशे भांशे चैव बलाऽबलम् ।। त्रिंशांशके रिष्टफलं खवेदांशे शुभाऽशुभम् ।।१०७।।

वर्ग से विचारणीय विषय

इन षोडश वर्गों में किस वर्ग के लग्न से किस विषय का विचार करना चाहिये यह कहा जाता है। लग्न (जन्म लग्न) से जातक के देह का विचार करना चाहिए । 'होरा लग्न' से सम्पत्ति = पृथ्वी, मकान, जमीन आदि अचल तथा सोना, चांदी, रुपया आदि चल सम्पत्ति का विचार करना चाहिए । 'द्रेष्काण' से भाई बन्धु का सुख दु:ख का विचार करना चाहिए ।

'चतुर्थांश' से भाग्य का विचार करना चाहिए। 'सप्तमांश' से पुत्र पौत्र आदि परिवार का विचार करना चाहिए। 'नवमांश' से विशेष करके भार्या सम्बन्धी विचार करना । 'दशमांश' से कोई बड़ी समस्या जिसका अपने जीवन से सम्बन्ध सम्भव हो उसका विचार करना । 'द्वादशांश' से माता पिता की स्थिति तथा सुख, दुःख का विचार करना चाहिए। 'षोडशांश' से सुख दुःख का तथा गाड़ी, मोटर आदि वाहन का विचार करना चाहिए। 'विंशांश' से उपासना की सिद्धि–असिद्धि का विचार करना। 'चतुर्विंशांश' से विद्या की प्राप्ति, अप्राप्ति का विचार करना। 'सप्तविंशांश' में अपना बलाबल का विचार तथा 'त्रिंशांश' में रिष्ट (कष्ट+रोग) आदि विचार एवं 'खवेदांश' में भले बुरे (शुभ अशुभ) का विचार करना चाहिए। 'अक्षवेदांश' तथा 'षष्ठचंश' में सम्पूर्ण समस्याओं का विचार करना चाहिये ।।१०३–१०७।।

अक्षवेदांशभागे च पष्टचंशेऽखिल मीक्षयेत् । यत्र कुत्रापि सम्प्राप्तः क्रूरषष्टचंशकाधिपः ।।१०८।। तत्र नाशो न संदेहो मैत्रेयस्य वचो यथा ।। यत्र कुत्रापि संप्राप्तः कलांशाधिपतिः शुभः ।।१०९।। यत्र वृद्धिश्च पुष्टिश्च मैत्रेयस्य वचो यथा ।। इति षोडशवर्गाणां भेदास्ते प्रतिपादिताः ।।११०।। उदयादिषु भावेषु खेटस्य भवनेषु वा ।। वर्गविश्वाबलं वीक्ष्य तेषां तेषां शुभाशुभम् ।।१११।।

विचार विवेचन

मैत्रेय जी का कहना है कि–'षष्ठचंश' का स्वामी यदि क्रूर हो तो वह जिस भाव में स्थित होगा उसी भाव की हानि करता है यह निःसंदिग्ध है। और इसी तरह शुभ षष्ठचंश का स्वामी भी शुभ होकर जिस भाव में स्थित होगा उस भाव की पुष्टि और वृद्धि निश्चय करता है। हे मैत्रेय! तुमको यह षोडश वर्ग का विचार कहा। तथा जन्म लग्न और उसके धन, सहज आदि अन्य भाव और सूर्यादि ग्रह जिन स्थानों में तथा वर्गों में हों उनका वर्ग विचार तथा विश्वा वल विचार करके शुभ या अशुभ फल कहना।।१०८–१११।।

अथातः संप्रवक्ष्यामि वर्गं विश्वाबलं द्विज । यस्य विज्ञानमात्रेण विपाकं दृष्टिगोचरम् ।।११२।। गृहविश्वाबलं वीक्ष्य सूर्यादीनां खचारिणाम् ।। स्वगृहोच्चे बलं पूर्णं शून्यं तत्सप्तमस्थिते ।।११३।। ग्रहस्थितिवशाज्ज्ञेयं द्विराश्यधिपतिस्तथा ।। मध्ये तु पाततो ज्ञेया ओजयुग्मर्क्षभेदतः ।।११४।।सूर्यहोराफलं दद्युर्जीवार्कवसुधात्मजाः चंद्रास्फूर्जिदर्कपुत्राश्चंद्रहोराफलप्रदाः।।११५।। फलद्वयं बुधो दद्यात्समे चांद्रतदन्यके ।। रवेः फलं स्वहोरादौ फलहीनं विरामके ।।११६।।

विश्वाबल विचार

हे मैत्रेय! अव हम विश्वावल कहते हैं, जिसके ज्ञान से शुभाशुभ कर्मफल का परिणाम रूप सुख दुःख का ज्ञान होता है। लग्न आदि भावों तथा सूर्य आदि ग्रहों का विश्वाबल देख कर (जानकर) फलाफल, आगे कही गई रीति से निश्चय करना।। सूर्यादि ग्रह स्वगृही अथवा उच्चपरमोच्च हों तो पूर्ण बली होते हैं, नीच राशिगत शत्रुक्षेत्री हों तो बलहीन होते हैं। ग्रहों

की स्थिति के आधार पर विचार करना। द्विराश्याधिपति ग्रहों का दो भावों पर प्रभाव होता है यह ध्यान रखना। वर्गवल देखने के समय सम विषम राशियों का ध्यान रखना। सूर्य होरा में सूर्य, मंगल, गुरु विशेष फलदायक हैं। चन्द्र होरा में चन्द्र शुक्र शनि विशेष फलदाता हैं। बुध, सूर्य तथा चन्द्र दोनों की होरा में फलदाता है। सूर्य–अपने होरा आदि में पूर्ण फल देता है। वर्ग–होरा आदि के अन्त में (समाप्ति के अंश में) फलहीन होता है। होरा, द्रेष्काण आदि में आदि, मध्य, अन्त की बलाबलता अनुपात से समझना। स्वगृह के समान ही नवमांश में तथा चतुर्थांश में ग्रह का फल होता है।

मध्येऽनुपातात्सर्वत्र द्रेष्काणेपि विचिंतयेत् । गृहवत्तुर्यभागेऽपि नवांशादावपि स्वयम् ॥११७॥ सूर्यः कुजफलं धत्ते भार्गवस्य निशापतिः ॥ त्रिंशांश के विचिंत्यैवमत्रापि गृहवत्स्मृतः ॥११८॥ लग्नहोरादृकाणांकभागसूर्यांयशका इति ॥ सर्वे त्रिंशांश सहिताः षड्वर्गा विश्वकाः क्रमात् ॥११९॥ रसनेत्राब्धिपंचाश्विभूमयः सप्तवर्गके ॥ स्थूलं फलं च संस्थाप्य तत्सूक्ष्मं च ततस्ततः ॥१२०॥ ससप्तमांशकं तत्र विश्वका पंचलोचनम् ॥ त्रयः सार्द्धं द्वयं सार्द्धवेदं द्वौ रात्रिनायकाः ॥१२१॥ दशवर्गादिरंशाढ्याः कलांशाः षष्टिभागकाः ॥ त्रयं क्षेत्रस्य विज्ञेयाः पंचषष्टचंशक-स्य च ॥१२२॥

त्रिशांश में इतना विशेष है कि–सूर्य, मंगल का और चन्द्रमा, शुक्र का फल देता है। फलाफल भावानुसार ही जानना। इस प्रकार लग्न, होरा, देष्काण, नवमांश, द्वादशांश और त्रिशांश के विश्वाबल क्रम से देखकर विचार करना। यह षड्वर्ग (नाम से प्रसिद्ध) हैं और षड्वर्ग में विश्वाबल क्रमशः ६,२,७,५,३,१, संख्या में प्राप्त होते हैं। प्रथम स्थूल रूप से लग्न भाव स्थित ग्रहों का विचार पुनः सूक्ष्मरूप से स्व, उच्चादिरूप से विचार करना फिर उससे भी सूक्ष्म सप्तकवर्ग से विचार करना। इस सप्तकवर्ग में विश्वाबल की संख्या क्रमशः ५,२,३,२॥,४॥,२,१ जानना तथा दशवर्ग बलसाधनमें स्वक्षेत्रका ३ विश्वाबल है, और षोडश षष्ठ्यंश का वर्ग बल में स्व के ३ षष्ठचंश के ५ विश्वाबल लेना चाहिए। और बाकी वर्गों में १॥ विश्वाबल लेना ॥११२–१२२॥

सार्द्धैकभागाः शेषाणां विश्वकाः परिकीर्तिताः ॥ अथ वक्ष्ये विशेषेण विश्वकां मम संमताम् ॥१२३॥ क्रमात् षोडशवर्गाणां क्षेत्रादीनांपृथक् पृथक्॥ होरांशाभागदृक्काणकुचंद्रशशिनः क्रमात्॥१२४॥ कलांशस्य द्वयं ज्ञेयं त्रयं नंदांशकस्य च । क्षेत्रे सार्द्धं च त्रितयं चतुःषष्टचंशकस्य हि ॥१२५॥ अर्द्धमर्धे तु शेषाणां ह्येतत्स्वीयमुदाहृतम् ॥ पूर्णं विश्वाबलं विंशे धृतिः स्यादधिमित्रके ॥१२६॥ मित्रे पंचदश प्रोक्तं समे दश प्रकीर्तितम्॥शत्रौ सप्ताधिशत्रौ च पंच विश्वाबलं भवेत् ॥१२७॥ वर्गविश्वाः स्वविश्वघ्नाः पुनर्विंशतिभाजिताः । विश्वाफलोपयोग्यं तत्पंचोनं फलदो न हि ॥१२८॥ तदूर्ध्वं स्वल्पफलदं दशोर्ध्वं मध्यमं मृतम् ॥ तिथ्यर्धं पूर्णफलदं बोध्यं सर्वं खचारिणाम् ॥१२९॥ अथान्यदपि वक्ष्येऽहं मैत्रेय त्वं विधारय ॥ खेटाः पूर्णफलं दद्युः सूर्यात्सप्तमके स्थिताः ॥१३०॥ फलाभावं विजानीयात्समे सूर्यंनभश्चरे ॥ मध्येऽनुपाता त्सर्वत्र ह्युदयास्तविशोपकाः ॥१३१॥ वर्गविश्वासमं ज्ञेयं फलमस्य द्विजर्षभ ॥ यच्च यत्र फलं

बुद्ध्वा तत्फलं परिकीर्त्तितम् ।।१३२।। वर्गविश्वाफलं चादावुदयास्तमतःपरम् ।। पूर्णं पूर्णेति पूर्णं स्यात्सर्वदैवं विचिंतयेत् ।।१३३।। हीनं हीनेति हीनं स्यात्स्वल्पाल्पेत्यल्पकं स्मृतम् ।। मध्यं मध्येति मध्यं स्याद्यावत्तस्य दशास्थितिः ।।१३४।।

पाराशर संमत विश्वाबल

अब हम अपने सम्मत विश्वाबल कहते हैं। स्वक्षेत्र से आरंभ करके अलग २ होरा, त्रिशांश द्रेष्काण का १–१ षोडशांश में दो और नवांश में तीन तथा स्वक्षेत्रबल साढे तीन एव षष्ठ्यंश में चार विश्वाबल लेना। बाकी नौ वर्गों में आधा आधा विश्वाबल लेना। पूरा विश्वाबल २० होता है। अधिमित्र में (१८) और मित्र क्षेत्र में (१५) समक्षेत्र में (१०), शत्रु क्षेत्र में (७) तथा अधिशत्रु क्षेत्र में (५) विश्वाबल होता है। वर्ग से प्राप्त हुए विश्वा अपनी विश्वा संख्या से गुण करके २० का भाग देकर लब्धि विश्वा प्राप्त होता है। यह विश्वाबल ५ से कम हो तो निष्फल जानना। ५ से १० तक स्वल्पफल दायक है और १० से ऊपर मध्यम फल तथा १५ से ऊपर विश्वाबल पूर्णफल दायक है। हे मैत्रेय! विशेष विचार भी कहता हूं। सभी ग्रह सूर्य से सप्तमभाव में स्थित हों तो पूर्णफल देते हैं। सूर्य के साथ होने से (अस्त होने के कारण) फल नहीं देते। साथ और सप्तम के बीच में अनुपात से विश्वाबल का विचार करना। इसका नाम उदयास्त बल है, वर्ग विश्वाबल के समान इसको भी मानना चाहिये। वर्ग विश्वाबल और उदयास्त दोनों अलग-अलग सब देखकर शुभाशुभ फल कहना चाहिये। वर्ग विश्वाबल और उदयास्तबल दोनों पूर्ण, पूर्ण (१५ से अधिक हों तो) पूर्ण बल जानना। मध्य, मध्य हो तो १० से १२।। तक मध्य जाने और दोनों हीन बल हों तो हीनबल जाने। दोनों अल्प हों तो २।। से ५ तक अल्प जाने। इस प्रकार जिस ग्रह का विश्वाबल निश्चय किया है उससे सूचित शुभाशुभ उस ग्रह की दशा भर में होगा, ऐसा निश्चय करे।। ।।१२२-१३४।।

अथान्यदपि वक्ष्यामि मैत्रेय शृणु सुव्रत ।। लग्नतुर्यास्तवियतां केंद्रसंज्ञा विशेषतः ।।१३५।।
द्विपंचरंध्रलाभाख्यं ज्ञेयं पणफरादिकम् ।। त्रिषड्भाग्यव्ययादीनामापोक्लिममिति द्विज ।।१३६।।
लग्नात्पंचमभाग्यस्य कोणसंज्ञा विधीयते ।। षष्ठाष्टव्ययभावानां दुःसंज्ञास्त्रिकसंज्ञकाः ।।१३७।।
चतुरस्रं तुर्यरंध्रं कथयन्ति द्विजोत्तम ।। स्वस्थादुपचयर्क्षाणि त्रिषडायांबराणि हि ।।१३८।।
तनुर्धनंचसहजोबंधुपुत्रारयस्तथा । युवतीरंध्रधर्माख्यंकर्मलाभव्ययाः क्रमात् ।।१३९।।
संक्षेपेणैतदुदितमन्यद्बुद्ध्यनुसारतः ।। किंचिद्विशेषं वक्ष्यामि यथा ब्रह्ममुखाच्छ्रुतम् ।।१४०।।

भाव संज्ञा

हे मैत्रेय ! अब और भी कुछ विशेष संज्ञा आदि कहते हैं। लग्न, चतुर्थ, सप्तम, दशम की 'केन्द्र' संज्ञा है। २।५।८।११ स्थानों की 'पणकर' संज्ञा है। इसी प्रकार ३।६।९।१२ स्थानों की 'आपोक्लिम' संज्ञा है। लग्न से ५।९ की 'कोण' तथा 'त्रिकोण' संज्ञा है। ६।८।१२ की दुष्ट स्थान तथा 'त्रिक' संज्ञा है। चतुरस्र 'तुर्य रंध्र' को ४।८ कहते हैं। ३।६।१०।११को 'उपचय' तथा वृद्धि कहते हैं। ये विशेष संज्ञा हैं। सामान्यतः १२ भावों के नाम ये हैं। तनु, धन, सहज, बन्धु,

पुत्र, शत्रु, जाया, रंध्र, धर्म, कर्म, लाभ और व्यय ये १२ भावों के नाम हैं। ये संज्ञाएं हमने संक्षेप से कही हैं। अब भगवान् ब्रह्मा से सुने हुए कुछ विशेष विचार कहते हैं ।।१३४–१४०।।

नवमेपि पितुर्ज्ञानं सूर्याच्च नवमेऽथवा ।। यत्किंचिद्दशमे लाभे तत्सूर्याद्दशमे शिवे ।।१४१।। तुर्ये तनौ धने लाभे भाग्ये यच्चिंतनं च तत् ।। चंद्रात्तुर्ये तनौ लाभे भाग्ये तच्चिंतयेद् ध्रुवम् ।।१४२।। लग्नाद्दुश्चिक्यभवने यत्कुजाद्विक मेऽखिलम् ।। विचार्यं षष्ठभावस्य बुधात्षष्ठे विलोकयेत् ।।१४३।। पञ्चमस्य गुरोः पुत्रे जायायाः सप्तमे भृगोः ।। अष्टमस्य व्ययस्यापि मन्दान्मृत्यौ व्यये तथा ।।१४४।।यद्भावाद्यत्फलं चिंत्यं तदीशात्तत्फलं विदुः । ज्ञेयं तस्य फलं तद्धि तत्र चिंत्यं शुभाशुभम् ।।१४५।।

इति श्रीबृहत्पाराशरहोरापूर्वखण्डशास्त्रे राशिस्वभावषोडशवर्गादिकथनं नाम तृतीयोऽध्यायः ।।३।।

फल विचार में कुछ विशेष नियम

जातक के पिता के लिये शास्त्र में जो मुख्यरूप से दशम भाव विचारणीय कहा है उस सम्बन्ध में विशेष यह है कि पिता के सम्बन्ध का फलाफल नवम भाव से भी जाना जाता है तथा सूर्य से और सूर्य के नवमभाव से भी विचारना होता है। इसी प्रकार जो विचार दशम और एकादश भाव से कहा गया है, वह सूर्य से तथा सूर्य के दशवें और ग्याहरवें भाव से भी करना चाहिये। तथा जो विचार लग्न, द्वितीय, चतुर्थ, नवम तथा एकादश से करना होता है, वह चन्द्रमा से भी लग्न, चतुर्थ, नवम और एकादश भाव से कर सकते हैं। (यहां चन्द्रमा से धनभाव नहीं कहा है)। लग्न से दुश्चिक्य=तृतीय भाव का विचार मंगल के विक्रम (तृतीय) भाव से भी करे। छठे भाव का विचार बुध के छठे भाव से भी करना। पञ्चम भाव का विचार गुरु के पञ्चम भाव से भी करना, इसी प्रकार सप्तमभाव का विचार शुक्र के सप्तमभाव से भी करना। आठवें और बारहवें भाव का विचार शनि के आठवें और बारहवें से भी करना और विशेष बात यह है कि–जिस भाव से जिस फल का विचार कहा है, वह उस भाव के स्वामी से भी उसी प्रकार जानना चांहिये।।१४१–१४५।।

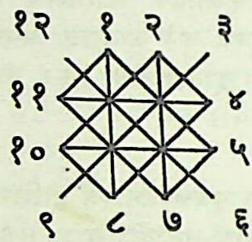
इति श्री बृ० पा० हो० शा० पूर्वखण्डे भावप्रकाशिकायां राशिस्वभाव-षोडशवर्गादिकथन नाम तृतीयोऽध्यायः ।।३।।

पराशर उवाच

मेषादीनां च राशीनां द्वादशानां पृथक्पृथक् ।। दृष्टिभेदं प्रवक्ष्यामि शृणु त्वं द्विजसत्तम ।।१।। राशयोभिमुखान्विप्र पश्यंति पार्श्वभं तथा ।। रंध्रे षष्ठे तथा द्यूनेऽभिमुखो राशिरुच्यते ।।२।। पार्श्वभं त्वामहं वक्ष्ये चरस्थिरद्विस्वभावकैः ।। पञ्चमैकादशौ विप्र चरः पश्येत् क्रमेण हि ।।३।।

**व्युत्क्रमेण स्थिरो विप्र पञ्चमैकादशौ पुनः ।। क्रमेण च तृतीयाङ्कौ पश्यति द्विजसत्तम ।।४।।
उभयोर्व्योमपातालौ पश्यंति सप्तमं तथा ।। एवं क्रमेण वै विप्र पार्श्वभं राशिरुच्यते ।।५।। चरः
स्थिरान्पश्यतिः स्म स्थिरः पश्यति वै चरान् ।। उभयानुभये विप्र पश्यंतीत्ययमागमः ।।६।।
समीपराशिं संत्यज्य राशींस्त्रीननु पश्यति ।। सर्वोदाहरणं वक्ष्ये श्रृणु त्वं द्विजनंदन।।७।।**

अथ दृष्टिचक्रमिदम्



चतुर्थ अध्याय

दृष्टि भेद

अव मेष आदि १२ राशियों की अलग अलग दृष्टि कही जाती है, हे द्विज सत्तम! सभी राशियां अपने सम्मुखीन राशि तथा पार्श्व राशि को देखती हैं।। ६, ७, ८ वीं राशि सम्मुख कही जाती हैं। अव पार्श्व राशि सुनिये। चर, स्थिर, तथा द्विस्वभाव राशियोंके माध्यम से पार्श्वराशि कहते हैं। चर राशि (१।४।७।१०) क्रम के अनुसार पांचवीं और ग्यारहवीं राशि को देखती है। स्थिर राशि, विपरीत क्रम से (चक्र में देखिये) पञ्चम और एकादश राशि को देखती है और क्रम के अनुसार तीसरी राशि को देखती है। द्विस्वभाव राशि, चतुर्थ, सप्तम तथा दशम राशि को दोनों तरफ से देखती हैं। हे मैत्रेय ! 'पार्श्व' राशि दृष्टि इस तरह जानना । मुख्य नियम यह है कि चर राशियां स्थिर राशियों को देखती है, एवं स्थिर राशियां चर राशियों को देखती है और द्विस्वभाव राशियां द्विस्वभाव राशियों को देखती हैं, यह शास्त्र का सिद्धान्त है। यह नियम है कि–समीप की राशि को छोड़कर बाकी तीन राशियों को देखती है। हे द्विजनन्दन ! मैं तुमको स्पष्ट समझने के लिये उदाहरणस्वरूप से कहता हूं।।१–७।।

**मेषो वृषं परित्यज्य सिंहवृश्चिकघटान्द्विज।। अनेनैव क्रमेणैव पश्यतिस्म द्विजोत्तम।।८।। कर्कः सिंह
परित्यज्य वृश्चिकं च घटं वृषम् ।। तुलापि वृश्चिकं त्यक्त्वा कुम्भं सिंह तथा वृषम् ।।९।। नक्रो घटं
परित्यज्य वृषसिंहौ च वृश्चिकम् ।। एवं चराणां दृष्टिश्च ज्ञायतेद्विजसत्तम ।।१०।। वृषो
मेषं परित्यज्य मृगं कर्कं तुलां द्विज ।। सिंहःकर्कं परित्यज्य नक्रं मेषं तुलां द्विज ।।११।।
वृश्चिकस्तु तुलां त्यक्त्वा कर्कं मेषं मृगं तथा ।। कुम्भश्च मकरं त्यक्त्वा मेषं कर्कं तुलां द्विज
।।१२।। युग्मः कन्याधनुर्मीनान् पश्यतीति द्विजोत्तम ।। कन्या धनुर्मीनयुग्मान् पश्यत्येवं न
संशयः ।।१३।। धनुर्झषयुग्मकन्याः पश्यति द्विजसत्तम ।। मीनो युग्मांगकोदंडान् पश्यंति सुमते**

द्विज ।।१४।। द्वितीये द्वादशे राशौ पार्श्वभत्वं न चिंतयेत् ।। श्लोकोक्तपूर्वरीत्या तु संग्राह्यं द्विजसत्तम ।।१५।।

दृष्टि का उदाहरण राशि की राशि पर दृष्टि मेष राशि वृष को छोड़कर सिंह, वृश्चिक और कुम्भ को देखती है। सब चर राशियां इसी क्रम से देखती हैं। कर्क राशि सिंह को छोड़कर वृष, वृश्चिक और कुम्भ को देखती है। तुला राशि वृश्चिक को छोड़कर वृष, वृश्चिक कुंभ को देखती है। मकर–कुंभ को छोड़कर वृष, सिंह, वृश्चिक को देखता है। चर राशियों की दृष्टि इस प्रकार है। अब स्थिर राशियों की दृष्टि वृष, मेष को छोड़कर कर्क, मकर, तुला को देखता है। सिंह–कर्क को छोड़कर मेष, तुला, मकर को देखता है। वृश्चिक–तुला को छोड़कर मेष, कर्क, मकर को देखता है। कुम्भ–मकर को छोड़कर मेष, कर्क, तुला को देखता है। अब स्थिर राशियों की दृष्टि मिथुन–कन्या, धनु और मीन को देखता है। कन्या–मिथुन, धनु, मीन को देखती है, धनु–मिथुन, कन्या मीन को देखती है। मीन–मिथुन, कन्या, धन को देखती है। अपने से दूसरी तथा बारहवीं राशि को 'पार्श्व' राशि नहीं माना जाता है। शास्त्र में कहे अनुसार ही पार्श्व राशि ग्रहण करना चाहिये।।८–१५।।

सूर्यादयः क्रमेणैव पश्यंति च परस्परम् ।। राशित्रयं त्रयं विप्र सर्वराशिगता ग्रहाः ।।१६।। चरेषु संस्थिताः खेटाः पश्यंति स्थिरसंभवान् ।। स्थिरेषु संस्थिताः खेटाः पश्यंति चरसंस्थितान् ।।१७।। उभयस्थस्तु भान्वादिः पश्यत्युभयसंस्थितान् ।। निकटस्थं विना खेटा निरीक्षंते द्विजोत्तम ।।१८।। चक्रन्यासमहं वक्ष्ये यथावद्ब्रह्मणोदितम् ।। यस्य विज्ञानमात्रेण दृष्टिभेदः प्रकाश्यते ।।१९।। पूर्वं मेषवृषौ लेख्यौ कर्कसिंहौ च दक्षिणे ।। तुलालिवारुणे विप्र नक्रकुंभे तथोत्तरे ।।२०।। अग्निकोणे तु मिथुनं नैर्ऋत्यामंगनां द्विजः ।। वायव्यां धनुषं लेख्यमीशान्यां च झषं लिखेत् ।।२१।। चतुरस्रं च विन्यासं ज्ञायते द्विजसत्तम ।। वृत्ताकारं विशेषेण ब्रह्मणा चोदितं पुरा ।।२२।। होराशास्त्रे भिन्नदृष्टिः खेटानां च परस्परम् ।। त्रिदशे च त्रिकोणे च चतुरस्रे च सप्तमे ।।२३।। शनिर्देवगुरुर्भौमःपरे च क्षमितेक्षिताः पदार्द्धं त्रिपदं पूर्णं वदंति गणका जनाः ।।२४।। शनिपादं त्रिकोणेषु चतुरस्रे द्विपादकम् ।। त्रिपादं सप्तमे विप्र त्रिदशे पूर्णमेवहि ।।२५।। चतुरस्रे गुरुः पादं सप्तमे च द्विपादकम् ।। त्रिपादं त्रिदशे विप्र पूर्णं पश्यति कोणभे ।।२६।। सप्तमे पादमेकं च द्विपादं त्रिदशे द्विज ।। त्रिपादं च त्रिकोणेषु भौमः पूर्णं चतुरस्रगे ।।२७।। अन्येषां त्रिदशे पादं द्विपादं च त्रिकोणगे ।। चतुरस्रे त्रिपादं च पूर्णं पश्यति सप्तमे ।।२८।। एवं रीत्या निरीक्ष्यन्ते ग्रहा रवादयो द्विज।। पूर्वं पंक्तिर्यथा ग्राह्या तथा ग्राह्यं च पूर्णकम् ।।२९।।

इति बृहत्पाराशरहोराशास्त्रेपूर्वखंडे दृष्टिभेदकथनं नाम चतुर्थोऽध्यायः ।।४।।

सूर्यादि ग्रहदृष्टि

उपर्युक्त प्रकार से ही सूर्यादि ग्रह भी अन्य ग्रहों तथा राशियों को परस्पर तीन तीन राशियों को देखते हैं। चरराशियों में स्थित ग्रह स्थिरराशि में स्थित ग्रहों को देखते हैं। स्थिर राशि में

स्थित ग्रह–चरराशिस्थित ग्रह को देखते हैं। द्विस्वभावराशि गत ग्रह–द्विस्वभाव राशिस्थित ग्रह को देखता है। अपने निकट की राशि पर स्थित ग्रह को छोड़ कर परस्पर अन्य को देखते हैं।। ।।१६-१८।।

ब्रह्मा का कहा हुआ दृष्टिचक्र कहता हूं जिसके जानने से दृष्टिभेद जाना जाय, पूर्व दिशा में मेष और वृष तथा दक्षिण दिशा में सिंह, कन्या, एवं पश्चिम में तुला, वृश्चिक तथा उत्तर में धनु और मकर लिखना। अग्नि कोण में मिथुन तथा नैर्ऋत्य में कन्या वायव्य में धनु, और ईशान में मीन लिखना। यह चौकोर चक्र के न्यास पर दृष्टिभेद हुआ। तथा ब्रह्मा ने गोलचक्र भिन्न प्रकार की दृष्टि कही है। यह दृष्टि इस प्रकार है–तीसरे और दशवें तथा पाचवें, नवें और चौथे, आठवें तथा सप्तम भाव पर ग्रहों की दृष्टि होती है। शनि, गुरु तथा मंगल ये तीन ग्रह विशेष प्रकार की दृष्टि से देखते हैं। अर्थात् दृष्टि में चार भेद हैं, पूर्ण दृष्टि २० विश्वा मानकर ५ विश्वा की एकपाद, १० की दो पाद, १५ की तीन पाद और २० विश्वा की पूर्ण दृष्टि होती है। शनि–त्रिकोण (५–९) को एक पाद चतुरस्र (४।८) को दो पाद और सप्तम में ३ पाद तथा त्रिदश (३–१०) को पूर्णदृष्टि से देखता है। गुरु–चतुरस्र को एकपाद, सप्तम को दो पाद और त्रिदश को तीन पाद तथा त्रिकोण (५–९) को पूर्ण दृष्टि से देखता है। मंगल–सप्तम में एक पाद, त्रिदश में दो पाद, त्रिकोण में तीन पाद दृष्टि से एवं चतुरस्र (४–८) में पूर्णदृष्टि से देखता है। और ग्रहों की ३-१० में एक पाद, ५–९ में दो पाद तथा ४–८ में तीन पाद और सप्तम में पूर्णदृष्टि होती है। हे मैत्रेय! ग्रहों की इस प्रकार दो रीति से यह दृष्टि कही है। प्रथम दृष्टि तो जैसे कही है, वैसे ही जानना और दूसरी में पाद अर्द्ध आदि देख कर पूर्णदृष्टि तक के भेद जानना चाहिये ।।११९–१२९।।

इति बृ० पा० हो० शा० पूर्वखण्डे भावप्रकाशिकायां दृष्टिभेदकथनं नाम
चतुर्थोऽध्यायः ।।४।।

अथ रिष्टारिष्टभंगाध्यायः

चतुर्विंशतिवर्षाणि यावद्गच्छंति जन्मनः ।। जन्मारिष्टं तु तावत्स्यादायुर्दायं न चिंतयेत् ।।१।। षष्ठाष्टरिष्टगश्चंद्रः क्रूरैश्च सह वीक्षितः ।। जातस्य मृत्युदः सद्यस्त्वष्टवर्षैः शुभेक्षितः ।।२।। शनिवन्मृत्युदः ६।८।१२ सौम्याश्चेद्वक्राः क्रूरवीक्षिताः ।। शिशोजातस्य मासेन लग्ने सौम्यविवर्जिते ।।३।। यस्य जन्मनि धीस्था स्युः सूर्यार्कीन्दुकुजाभिधाः ।। तस्य त्वाशु जनित्री च भ्राता च निधनं लभेत् ।।४।। पापेक्षितो युतो भौमो लग्नगो न शुभेक्षितः ।। मृत्युदस्त्वष्टमस्थोपि सौरेणार्केण वा पुनः ।।५।। चंद्रसूर्यग्रहे राहुश्चन्द्रसूर्ययुतो यदि ।। सौरिभौमेक्षितं लग्नं पक्षमेकं स जीवति ।।६।। कर्मस्थाने स्थितः सौरिः शत्रुस्थाने कलानिधिः ।। क्षितिजे सप्तमस्थाने समात्रा म्रियते शिशुः ।।७।। लग्ने भास्करपुत्रश्च निधने चन्द्रमा यदि।। तृतीयस्थो यदा जीवः स याति यममंदिरम् ।।८।।

अरिष्ट और अरिष्टभंगयोग

जातक के २४ वर्ष की आयु तक 'जन्मारिष्ट' कहना चाहिए। आयु का विचार नहीं करना

चाहिए। (ऐसे 'जन्मारिष्ट' योग कहते हैं) चन्द्रमा यदि पापग्रहों से युक्त होकर ६।८।१२ वें स्थान में हो तो सद्यः जल्दी ही मृत्यु करता है। यदि शुभग्रह देखते हों तो ८ वर्ष तक मृत्यु कारक है। सौम्यग्रह यदि वक्री होकर ६।८।१२ स्थान में पापदृष्ट हों और लग्न में सौम्यग्रह नहीं हो तो बालक की १ साल में मृत्यु होती है। जिसके लग्न तथा पञ्चम में सू० श० चं० मं० स्थित हों उसकी माता तथा भ्राता की मृत्यु होती है। जिस जातक के लग्न में मंगल हो, तथा शुभदृष्टि न हो और पापदृष्टि हो अथवा यह योग अष्टमस्थान में हो तो जातक की शीघ्र मृत्यु होती है। यह योग सूर्य तथा शनि से भी जानना। चन्द्रमा या सूर्य के घर में राहु, चन्द्र सूर्य के साथ में स्थित हो तथा लग्न को शनि, मंगल दोनों देखते हों तो जातक १५ दिन ही जीता है। जिस जातक के दशमस्थान में शनि तथा छठे चन्द्रमा और मंगल सातवें हो वह बालक माता सहित मृत्यु को प्राप्त होता है। जिस जातक के लग्न में शनि तथा अष्टभाव में चन्द्रमा तथा तीसरे में गुरु हो वह जल्दी ही मृत्यु पाता है। जन्म समय में लग्न, नवम स्थान में सूर्य और सप्तममें शनि तथा शुक्र,गुरु एकादश में हो वह एक महीने तक ही जी सकता है।

होरायां नवमे सूर्यः सप्तमस्थः शनैश्चरः ।। एकादशे गुरुः शुक्रो मासमेकं स जीवति ।।९।। व्यये सर्वे ग्रहा नेष्टाः सूर्यशुक्रेंदुराहवः ।। विशेषान्नाशकर्तारो दृष्टया वा भंगकारिणः ।।१०।। पापान्वितः शशी धर्मे द्यूनलग्नगतो यदि ।। शुभैरवेक्षितयुतस्तदा मृत्युप्रदः शिशोः।।११।। संध्यायां चन्द्रहोरायां गण्डांते निधनाय वै।। प्रत्येकं चन्द्रपापैश्च केन्द्रगैः स्याद्विनाशनम् ।।१२।। रवेस्तु मण्डलार्द्धास्तात्सायंसंध्या त्रिनाडिका ।। तथैवार्द्धोदयात्पूर्वम्प्रातः सन्ध्या त्रिनाडिका ।।१३।। चक्रपूर्वापरार्द्धेषु क्रूरसौम्येषु कीटभे ।। लग्नगे निधनं यांति नाऽत्रकार्या विचारणा ।।१४।। व्ययशत्रुगतैः क्रूरैर्मृत्युं द्रव्यगतैरपि ।। पापमध्यगते लग्ने सत्यमेव मृतिं वदेत् ।।१५।। लग्नसप्तमगौ पापौ चंद्रोऽपि क्रूरसंयुतः ।। यदा त्ववीक्षितः सौम्यैः शीघ्रान्मृत्युर्भवेत्तदाः ।।१६।।

बारहवें घर में सभी ग्रह नेष्ट हैं परन्तु सू, शु० चं० रा० हों अथवा इनकी दृष्टि हो (और शुभ दृष्टि नहीं हो तो विशेष करके हानि करने वाले होते हैं। पापग्रहयुक्त चन्द्रमा लग्न, सप्तम या नवम स्थान में हो तथा शुभ दृष्टि या योग न हो तो बालक की मृत्यु होती है। सन्ध्याकाल का अथवा चन्द्रमा की होरा या गंडान्त (मूल, आश्लेषा, ज्येष्ठा) में जन्म हो, चन्द्रमा और ग्रह केन्द्र में हों तो मृत्युकारक होते हैं। (सूर्यास्त के बाद तथा सूर्योदय के पहले ३ घड़ी 'संध्याकाल' कहा जाता है।) कर्क लग्न हो और लग्न से सातवें भाव तक पापग्रह और सातवें से बारहवें तक सौम्य ग्रह हों तो बालक की मृत्यु होती है। छठे तथा बारहवें और दूसरे स्थान में पाप ग्रह हों तो निश्चय मृत्यु होती है। लग्न तथा सप्तम में पाप ग्रह हों, चन्द्रमा को क्रूरग्रह देखते हों और सौम्यदृष्टि नहीं हो तो शीघ्र मृत्युकारक योग है।

जीर्णे शशिनि लग्नस्थे पापैः केन्द्राष्टसंस्थितैः ।। यो जातो मृत्युमाप्नोति स विप्रेश न संशयः ।।१७।। पापयोर्मध्यगश्चंद्रो लग्नाष्टांतसप्तमः ।। अचिरान्मृत्युमाप्नोति यो जातः स शिशुस्तदा ।।१८।। पापद्वयमध्यगते चन्द्रे लग्नसमाश्रिते ।। सप्ताष्टमेन पापेन मात्रा सह मृतः शिशुः ।।१९।। शनैश्चरार्कभौमेषु रिष्टधर्माष्टमेषु च ।। शुभैरवीक्ष्यमाणेषु यो जातो निधनं गतः

॥२०॥यद्द्रेष्कोणे च यामित्रे यस्य स्याद्दारुणो ग्रहः ॥ क्षीणचन्द्रो विलग्नस्थः सद्यो हरति जीवितम् ॥२१॥ आपोक्लिमस्थिताः सर्वे ग्रहा बलविवर्जिताः ॥ षण्मासं वा द्विमासं वा तस्यायुः समुदाहृतम् ॥२२॥

वृद्ध चन्द्रमा (कृष्ण पक्ष की १० से ३० तक चन्द्रमा की वृद्ध अवस्था है।) लग्न में हों, पापग्रह केन्द्र तथा अष्टम स्थान में हों तो हे मैत्रेय! ऐसे योग में हुआ बालक नहीं जीता है। चन्द्रमा पापमध्यगत होकर लग्न से सातवें, आठवें या बारहवें में हो ऐसे योग में जन्म होने वाले बालक की जल्दी मृत्यु होती है। चन्द्रमा दो पापग्रहों के मध्य होकर लग्न में स्थित हो तथा सप्तम अष्टमभाव में पापग्रह हो तो बालक की माता के साथ ही मृत्यु होती है। आठवें बारहवें तथा नौवें स्थान में सूर्य, मंगल, शनि हों और शुभग्रह की दृष्टि नहीं हो तो जातक की मृत्यु होती है। जिसके संप्तम स्थान में (द्रेष्काण और लग्न में) पापग्रह हो और लग्न में क्षीणचन्द्रमा हो तो जल्दी ही मृत्यु देनेवाला योग है। जिसके जन्मसमय में सारे ही ग्रह निर्बल होकर ३।६।९।१२ स्थान में हो वह बालक २ मास से ६ मास तक जी सकता है॥१–२२॥

अथ मातृकष्टम्

चन्द्रमा यदि पापानां त्रितये न प्रदृश्यते ॥ मातृनाशो भवेत्तस्य शुभदृष्टे शुभं वदेत् ॥२३॥ धने राहुर्बुधः शुक्रः सौरिः सूर्यो यदा स्थितः ॥ तस्य मातुर्भवेन्मृत्युमृते पितरि जायते ॥२४॥ पापात्सप्तमरंध्रस्थे चन्द्रे पापसमन्विते ॥ बलिभिः पापकैर्दृष्टे जाते भवति मातृहा ॥२५॥ उच्चस्थो वाऽथ नीचस्थः सप्तमस्थो यदा रविः ॥ पानहीनो भवेद्बालः अजाक्षीरेण जीवति ॥२६॥ चन्द्राच्चतुर्थगः पापो रिपुक्षेत्रे यदा भवेत् ॥ तदा मातृवधं कुर्यात्केन्द्रे यदि शुभो न चेत् ॥२७॥ द्वादशे रिपुभावे च यदा पापग्रहो भवेत् ॥ तदा मातुर्भयं विद्याच्चतुर्थे दशमे पितुः ॥२८॥ लग्ने क्रूरो व्यये क्रूरो धने सौम्यस्तथैव च । सप्तमे भवने क्रूरःपरिवारक्षयंकरः ॥२९॥ लग्नस्थे च गुरौ सौरौ धने राहौ तृतीयगे ॥ इति चेज्जन्मकाले स्यान्माता तस्य न जीवति ॥३०॥क्षीणचन्द्रात्त्रिकोणस्थैः पापैः सौम्यविवर्ज्जितैः ॥ माता परित्यजेद्बाल षण्मासाच्च न संशयः ॥३१॥ एकांशकस्थौ मंदारौ यत्र कुत्र स्थितौ यदा ॥ शशि केन्द्रगतौ तौ वा द्विमातृभ्यां न जीवति ॥३२॥

मातृ कष्टकारक योग

यदि चन्द्रमा पापत्रितय (सूर्य, मंगल, शनि) के साथ न हो तो माता को कष्ट सम्भव है। शुभदृष्टि होने से कष्ट नहीं हैं। जिसके धनस्थान (द्वितीय) में रा० बु० शु० श० सू० हों उस जातक को पिता की मृत्यु होने के बाद जन्म हो और माता की मृत्यु होती है पापग्रह से चन्द्रमा, ७।८ में पापयुक्त तथा बलवान् पापग्रहों से दृष्ट हो तो जातक माता का मारक होता है। जिस जातक के सप्तम स्थान में सूर्य उच्च अथवा नीच राशि का हो वह बालक माता का दूध न पाकर बकरी के दूध से जीता है। चन्द्रमा से चौथे पापग्रह छठे भाव में हों और केन्द्र में शुभग्रह न हों तो माता की मृत्यु होती है। छठे तथा बारहवें घर में यदि पापग्रह हो तो माता

को कष्ट और चतुर्थ दशम में पापग्रह हो तो पिता को कष्ट होता है। लग्न, सप्तम तथा व्यय में क्रूर ग्रह हो तथा द्वितीय में सौम्यग्रह हो तो परिवार के लिये हानिकर योग है। लग्न में गुरु, द्वितीय में शनि तथा तृतीय में राहु हो तो माता की मृत्यु होती है। क्षीण चन्द्र से सौम्यग्रहरहित पापग्रह त्रिकोण (५–९) स्थान में हो तो छः महीने भीतर ही माता की मृत्यु होती है। मंगल और शनि एक ही नवांश में होकर किसी भी भाव में हों अथवा चन्द्रमा से केन्द्र स्थान में हों तो माता या मौसी से पालित होने पर भी नहीं जीता है॥२३–३२॥

अथ पितृकष्टम्

लग्ने सौरिर्मदे भौमः षष्ठस्थाने च चंद्रमाः॥ इति चेज्जन्मकाले स्यात्पिता तस्य न जीवति॥३३॥ लग्ने जीवो धने मंदरविभौमबुधास्तथा॥ विवाहसमये तस्य बालस्य म्रियते पिता॥३४॥ सूर्यः पापेन संयुक्तः सूर्यो वा पापमध्यगः॥ सूर्यात्सप्तमगः पापस्तदापितृवधो भवेत्॥३५॥ सप्तमे भवने सूर्यः कर्मस्थो भूमिनंदनः॥ राहुर्व्यये न यस्यैव पिता कष्टेन जीवति॥३६॥ दशमस्थोयदाभौमः शत्रुक्षेत्रसमाश्रितः॥ म्रियते तस्य जातस्य पिता शीघ्रं न संशयः॥३७॥ रिपुस्थाने यदा चन्द्रो लग्नस्थाने शनैश्चरः॥ कुजश्च सप्तमे स्थाने पिता तस्य न जीवति॥३८॥ भौमांशकस्थिते भानौ स्वपुत्रेण निरीक्षिते॥ प्रागजन्मनो निवृत्तिः स्यान्मृत्युर्वापि शिशोः पितुः॥३९॥ पाताले चांबरे पापौ द्वादशे च यदा स्थितौ॥ पितरं मातरं हत्वा देशाद्देशांतरं व्रजेत्॥४०॥ राहुजीवौ रिपुक्षेत्रे लग्ने वाथ चतुर्थके॥ त्रयोविंशतिमे वर्षे पुत्रस्तातं न पश्यति॥४१॥ भानुः पिता च जंतूनां चन्द्रो माता तथैव च॥ पापदृष्टियुतो भानुः पापमध्यगतोऽपि वा॥४२॥ पित्ररिष्टं विजानीयाच्छिशोर्जातस्य निश्चितम्॥ भानोः षष्ठाष्टमर्क्षस्थैः पापैः सौम्यविवर्जितैः॥ चतुरस्रगतैर्वापि पित्ररिष्टं विनिर्दिशेत्॥४३॥

पितृकष्ट कारक योग

जिसके जन्मसमय में—लग्न में शनि, सातवें मंगल, तथा छठे चन्द्रमा हो तो पिता की मृत्यु होती है। लग्न में गुरु तथा द्वितीय में सू० श० मं० बु० हो तो जातक के विवाह में पिता की मृत्यु होती है॥ सूर्य के साथ पापग्रह हों अथवा सूर्य पापग्रह मध्यगत हो और सूर्य से सप्तम में भी पापग्रह हो तो पिता का वध होता है॥ सप्तमस्थान में सूर्य हो, दशम में मंगल हो और राहु बारहवाँ हो तो पिता रोगी रहता है॥ जबकि—मंगल शत्रुक्षेत्री होकर दशम में हो तो शीघ्र ही पिता की मृत्यु होती है॥ चन्द्रमा षष्ठस्थान में, लग्न में शनि, मंगल सातवें हो उसका पिता नहीं रहता॥ मंगल के नवमांश में सूर्य शनि से दृष्ट हो तो बालक के जन्म के पहिले ही पिता का घर छोड़ना या मृत्यु होती है॥ चौथे या दशवें अथवा व्यय में पापग्रह हों तो जातक मातृपितृ हीन होकर देश–विदेश में भटकता रहता है॥ राहु, गुरु छठे हों या लग्न में अथवा चौथे घर में हो तो तेईसवें वर्ष में पुत्र जन्म से पहले पिता की मृत्यु होती है॥ जातक का सूर्य ही पिता है और चन्द्रमा माता है, अतः सूर्य पापग्रहों से दृष्ट हो अथवा युक्त हो तो निश्चय ही

पिता को कष्ट जानना।। सूर्य से छठे आठवें स्थान में पापग्रह हों, सौम्यदृष्टि या योगरहित हों अथवा सूर्य से चौथे स्थान में इसी प्रकार हों तो पिता को अरिष्ट जानना चाहिए ।।३३–३४।।

अथारिष्टभंगमाह

एकोऽपि ज्ञार्यशुक्राणां लग्नात्केंद्रगतो यदि ।। अरिष्टं निखिलं हंति तिमिरं भास्करो यथा ।।४४।। एक एव बली जीवो लग्नस्थो रिष्टसंचयम् ।। हंति पापक्षयं भक्त्या प्रणाम इव शूलिनः ।।४५।। एक एव विलग्नेशः केन्द्रसंस्थो बलान्वितः ।। अरिष्टं निखिलं हंति पिनाको त्रिपुरं यथा ।।४६।। शुक्लपक्षे क्षपाजन्म लग्ने सौम्यनिरीक्षिते ।। विपरीतं कृष्णपक्षे तथारिष्टविनाशनम् ।।४७।। व्ययस्थाने यदा सूर्यस्तुलालग्ने तु जायते ।। जीवेत्स शतवर्षाणि दीर्घायुर्बालको भवेत् ।।४८।। गुरुभौमौ यदा युक्तौ गुरुदृष्टोऽथ वा कुजः ।। हत्वारिष्टमशेषं च जनन्याः शुभकृद्भवेत् ।।४९।। चतुर्थदशमे पापः सौम्यमध्ये यदा भवेत् ।। पितुः सौख्यकरो योगः शुभैः केंद्रत्रिकोणगैः ।।५०।। लग्नाच्चतुर्थे यदि पापखेटः केंद्रत्रिकोणे सुरराजमंत्री ।। कुलद्वयानंदकरे प्रसूतौ दीर्घायुरारोग्यसमन्वितश्च ।।५१।। सौम्यान्तरगतैः पापैः शुभैः केंद्रत्रिकोणगैः ।। सद्योनाशयतेऽरिष्टं तद्भावोत्थफलं न तत् ।।५२।।

इति श्रीबृहत्पाराशरहोराशास्त्रेपूर्वखंडे रिष्टारिष्टभंगाऽध्यायः ।।५।।

अरिष्ट भंग योग

बुध, गुरु, शुक्र में से एक भी ग्रह केन्द्र में हो तो सब अरिष्ट दूर करता है।। यदि बलवान् होकर गुरु लग्न में हो तो समस्त अरिष्ट योग को दूर करता है जैसे भगवान शंकर की शरणता समस्त पाप को भस्म कर देती है।। लग्न का स्वामी बलवान होकर केन्द्र स्थान में हो तो सब अरिष्ट दूर करता है।। शुक्लपक्ष की रात्रि का जन्म हो और लग्न को सौम्यग्रह देखते हों इसी प्रकार कृष्णपक्ष में दिन का जन्म हो, लग्न पाप दृष्टि युक्त हो तो अरिष्ट का नाश होता है।। तुला लग्न में जन्म लेने वाले के बारहवें स्थान में सूर्य हो तो सौ वर्ष जीनेवाला दीर्घायु होता है।। गुरु, मंगल, एक स्थान में हो या मंगल पर गुरुदृष्टि हो तो सब अरिष्ट दूर होते हैं और जातक की माता सुखी रहती है।। चौथे, दशवें स्थान में स्थित पाप ग्रह यदि सौम्य ग्रहों के मध्य में हों तथा केन्द्र में शुभग्रह हों तो जातक के पिता को सुखकारी हैं।। लग्न से चतुर्थ स्थान में पापग्रह होने पर भी केन्द्र या त्रिकोण में गुरु हो तो मातृ पितृ पक्ष के दोनों कुल को आनन्द देनेवाला नीरोगी दीर्घायु बालक होता है। पापग्रह सौम्यग्रहो के मध्य में हो, शुभग्रह केन्द्र, त्रिकोण में हों तो सब अरिष्ट को दूर करते हैं और पाप दूषित भाव का नेष्ट फल नहीं होता ।।४५–५२।।

इति श्री बृ० पा० हो० शा० पू० खं० भावप्रकाशिकायां रिष्टारिष्ठभंगाध्यायः पञ्चमः।।५।।

अथऽप्रकाशग्रहफलाध्यायः ६

शूरो विमलनेत्रांशः सुस्तब्धो निर्घृणः खलः ।। मूर्तिस्थे धूमसंप्राप्ते गाढरोषो नरः सदा ।।१।। रोगी धनी तु हीनांगो राज्यापहृतमानसः ।। द्वितीये धूमसंप्राप्ते मंदप्राज्ञो नपुंसकः ।।२।। मतिमान् शौर्यसंग्रामे इष्टचित्तः प्रियंवदः ।। धूमे सहजभावस्थे धनाढचो धनवान् भवेत् ।।३।। कलत्रांगपरित्यक्तो नित्यं मनसि दुःखितः ।। चतुर्थे धूमसंप्राप्ते सर्वशास्त्रार्थचिंतकः ।।४।। स्वल्पापत्यो धनैर्दीनो धूमे पंचमसंस्थिते ।। गुरुता सर्वभक्षं च सुहृन्मंत्रविवर्जितः ।।५।। बलवाञ्छत्रुवधको धूमे च रिपुभावगे। बहुतेजोयुतः ख्यातः सदा रोगविवर्जितः।।६।। निर्धनः सततं कामी परदारेषु कोविदः ।। धूमे सप्तमगे प्राप्तो निस्तेजाः सर्वदा भवेत् ।।७।। विक्रमेण परित्यक्तः सोत्साही सत्यसंगरः ।। अप्रियो निष्ठुरःस्वामी धूमे मृत्युगते सति ।।८।। सुतसौभाग्यसंपन्नो धनी मानी दयान्वितः ।। धर्मस्थाने स्थिते धूमे धनवान्बंधुवत्सलः ।।९।। सुतसौभाग्यसंयुक्तः संतोषी मतिमान् सुखी ।। कर्मस्थे मानवो नित्यं धूमे सत्यपदस्थितः ।।१०।। धनधान्यहिरण्याढचो रूपवांश्च कलान्वितः ।। धूमे लाभगते चैव विनीतो गीतकोविदः ।।११।। पतितः पापकर्मा च द्वादशे धूमसंगते ।। परदारेषु संसक्तो व्यसनी निर्घृणः शठः ।।१२।। इति धूमफलम्।।

अप्रकाशक ग्रह फल

धूमग्रहफल

यदि लग्न में धूम ग्रह हों तो शूरवीर निर्मल नेत्रवाला हठी घृणारहित दुष्टबुद्धि महाक्रोधी होता है।। द्वितीयभाव में धूमग्रह हो तो जातक धनी, रोगी, अंगहीन, राजपक्ष से चिन्ताशील, मूर्ख और नपुंसक होता है।। तृतीय स्थान में धूमग्रह हो तो बुद्धिमान्, संग्राम में धीर, मिष्टभाषी, शान्तचित्त तथा धनवान् होता है।। चतुर्थ भाव में हो तो स्त्रीरतिहीन, नित्य चिन्ताशील, शास्त्रव्यसनी होता है।। पञ्चम भाव में हो तो कम सन्तानवाला, धनहीन, स्थूलकाय, सर्वभक्षी तथा मित्र रहित होता है।। छठे भाव में होने से बलवान्, शत्रु को जीतनेवाला, तेजस्वी, नीरोग और विख्यात होता है।। सातवें भाव में हो तो दरिद्री, अतिकामी, लम्पट, कान्तिरहित होता है।। आठवें भाव में हो तो–हिम्मतहीन, उत्साही, सत्यवादी, निष्ठुर, कठोर वृत्तिवाला होता है।। नवमभाव में धूम हो तो धनी, मानी, प्रजावाला, बन्धुप्रेमी, ऐश्वर्यशाली होता है।। दशमभाव में हो तो सन्तान तथा ऐश्वर्य सम्पन्न, बुद्धिमान्, सुखी, सत्यवादी होता है।। एकादशभाव में धूम ग्रह हो तो धन सम्पत्तियुक्त, रूपवान् कलाप्रेमी, विनीत और गान वाद्यनिपुण होता है।। द्वादश भाव में धूमग्रह हो तो पतित, पापी, लम्पट, (परस्त्रीगामी) व्यसनी और निर्घृण, दुष्टप्रकृति होता है।। धूम फल समाप्त।।

अथ पातफलानि

मूर्तौ च पाते संप्राप्ते दुःखेनांगप्रपीडितः ।। क्रूरो घातकरो मूर्खो द्वेष्यो बंधुजनस्य च ।।१३।।

जिह्मोऽतिपित्तवान् भोगी धनस्थे पातसंज्ञके ।। निर्घृणश्च कृतज्ञश्च दुष्टात्मा पापकृत्तथा ।।१४।। स्थिरप्रज्ञो रणी दाता धनाढ्यो राजवल्लभः ।। सहजे पापसंप्राप्ते सेनाधीशो भवेन्नरः ।।१५।। बंधव्याधिसमायुक्तःसुतसौभाग्यवर्जितः ।। चतुर्थगो यदा पातस्तदा स्यान्मनुजश्च सः ।।१६।। दरिद्रो रूपसंयुक्त पाते पंचमगे यदि ।। कफपित्तानिलैर्युक्तो निष्ठुरो निरपत्रपः ।।१७।। शत्रुहन्ता सुपुष्टश्च सर्वास्त्राणां च ग्राहकः ।।' कलासु निपुणः शांतः पाते शत्रुगते सति ।।१८।। धनदारसुतैस्त्यक्तः स्त्रीजितः सप्तमस्थितः ।। पाते कलत्रगे कामी निर्लज्जः परसौहृद :।।१९।। विकलाक्षौ विरूपश्च दुर्भगो द्विजनिंदकः ।। मृत्युस्थाने स्थिते पाते रक्तपीडापरिप्लुतः ।।२०।। बहुव्यापारको नित्यं बहुमित्रो बहुश्रुतः ।। धर्मभे पापसंप्राप्तो स्त्रीप्रियज्ञः प्रियंवदः ।।२१।। सश्रीको धर्मकृच्छ्रान्तो धर्मकार्येषु कोविदः ।। कर्मस्थे पातसंप्राप्ते महाप्राज्ञो विचक्षणः ।।२२।। प्रभूतधनवान्मानी सत्यवादी दृढव्रतः ।। अश्वाढ्यो गीतसंसक्तः पाते लाभगते सति ।।२३।। कोपी च बहुकर्माढ्यो व्यंगो धर्मस्य दूषकः ।। व्ययस्थाने गते पाते विद्वेषी निजबंधुभिः ।।२४।। इति पातफलानि।।

पातग्रहफल

लग्न में यदि पातग्रह हो तो दुःखी, रोगी, क्रूर, घातकारी, मूर्ख और बन्धुद्वेषी होता है।। धनस्थान में पात हो तो कुटिल, पितप्रकृति, भोगी, घृणारहित, दुष्टात्मा, पापी और कृतघ्न होता है।। तृतीयभाव में 'पात' हो तो अपने विचार पर दृढ़ रहनेवाला, रणवीर, दानशील, धनाढ्य, राज में मानवाला, सेनाध्यक्ष होता है।। चतुर्थ भाव में 'पात' हो तो सुख, सौभाग्यहीन, रोगी, दरिद्री तथा कैदी होता है।। पाँचवें भाव में पात हो तो रूपवान्, दरिद्री, त्रिदोषयुक्त शरीर, निष्ठुर और निर्लज्ज होता है।। छठे भाव में पात हो तो शत्रुहन्ता, पुष्टशरीर, हथियार चलाने में प्रवीण, कलाचतुर तथा शान्तप्रकृति होता है।। सप्तम स्थान में पात हो तो धनऐश्वर्यहीन, स्त्री–पुत्र–रहित या स्त्री के आधीन रहनेवाला तथा निर्लज्ज और परप्रेमी होता है।। आठवें स्थान में पात हो तो नेत्ररोगी, विरूप, दुर्भागी, परनिन्दक, रक्तस्राव आदि रोगवाला होता है।। नवमभाव में पात हो तो अनेक व्यापार करनेवाला, अनेक मित्रोंवाला, बहुश्रुत, मिष्टभाषी, दारप्रेमी होता है।। दशमभाव में पात हो तो लक्ष्मीवान् धर्मात्मा, शान्तप्रकृति, महापण्डित और अतिचतुर होता है।। लाभस्थान में पात हो तो महाधनी, प्रतिष्ठिंत, सत्यवादी, दृढसंकल्पवाला, सवारीवाला, गायनप्रेमी होता है।। बारहवें स्थान में पात हो तो क्रोधी, अंगहीन, धर्मद्रोही, बन्धुद्वेषी तथा अनेक कामों में संसक्त रहता है।।१३–२४।।

अथ परिधिफलम्

विद्वान्सत्यरतः शांतो धनवान् पुत्रवाञ्छुचिः ।। दाता च परिधौ मूर्तौ जायते गुरुवत्सल ।।२५।। ईश्वरो रूपवान् भोगी सुखी धर्मपरायणः ।। धनस्थे परिधौ प्राप्ते प्रभुर्भवति मानवः ।।२६।। स्त्रीवल्लभः सुरूपांगो देवस्वजनसंगतः।।तृतीये परिधौ भृत्यो गुरुभक्तिसमन्वितः ।।२७।। परिधौ सुखभावस्थे विस्मितं त्वरिमङ्गलम् ।। अक्रूरं त्वथ सम्पूर्णं कुरुते गीतकोविदः ।।२८।। लक्ष्मीवान् शीलवान् कांतः प्रियवान् धर्मवत्सलः ।। पंचमे परिधौ जाते स्त्रीणां भवति वल्लभः ।।२९।।

व्यक्तोऽर्थपुत्रवान् भोगी सर्वसत्त्वहिते रतः ।। परिधौ रिपुभावस्थे शत्रुहा जायते नरः ।।३०।। स्वल्पापत्यसुखैर्दीनो मंदप्रज्ञः सुनिष्ठुरः ।। परिधौ द्यूनभावस्थे स्त्रीणां व्याधिश्च जायते ।।३१।। अध्यात्मचिंतकः शांतो दृढकायो दृढव्रतः ।। धर्मवांश्च ससत्त्वश्च परिधौ रंध्रसंज्ञिते ।।३२।। पुत्रान्वितः सुखी कांतो धनाढ्यो लौल्यवर्जितः ।। परिधौ धर्मगे मानी अल्पसंतुष्टमानसः ।।३३।। क्वचिदज्ञस्तथा भोगी दृढकायो ह्यमत्सरः।। परिधौ दशमे प्राप्ते सर्वशास्त्रार्थपारगः ।।३४।। स्त्रीभोगी गुणवांश्चैव मतिमान्स्वजनप्रियः ।। लाभपे परिधौ जाते मंदाग्नि रुपपद्यते ।।३५।। व्ययस्थे परिधौ जाते गुरुनिंदापरायणः ।।३६।। इति परिधिफलम् ।।

परिधि ग्रहफल

लग्न में परिधिग्रह हो तो विद्वान्, सत्यप्रेमी, शान्त,धनवान्, पुत्रवान्, पवित्रमति, दानी, तथा गुरुभक्त होता है।। धनस्थान में परिधि हो तो प्रभुतासम्पन्न, रूपवान्, भोगी, सुखी, धर्मपरायण तथा अधिकारवान् होता है।। तृतीयभावगत परिधियोग में जातक–स्त्रीप्रेमी, रूपवान्, इष्टस्वजनों में रहनेवाला, आस्तिक, गुरुभक्त तथा नौकरी करनेवाला होता है।। चतुर्थ भाव में परिधि हो तो शत्रु से भी प्रेमभाव रखकर उसकी सम्पूर्ण भलाई करके विस्मित करनेवाला होता है।। पञ्चमभाव में परिधि हो तो धनवान्, शीलवान्, सुन्दर, मित्रप्रेमी, धर्मात्मा, स्त्रियों का प्यारा होता है।। षष्ठभाव में परिधि हो तो प्रसिद्ध धन पुत्रवान्, भोगी, सबका हितेच्छु शत्रु का नाश करनेवाला होता है।। सप्तमभाव में परिधि हो तो मध्यम सन्तान सुखवाला, दीन, निर्बुद्धि, निष्ठुर, स्त्रीरोगिणी रहे।। अष्टमभाव में परिधि हो तो आत्मज्ञानसंपन्न, शान्त, दृढ़शरीर, दृढ़संकल्पवाला, धर्मात्मा, सबल होता है।। नवमभाव में परिधि हो तो पुत्रवान्, सुखी, सुन्दर, धनाढ्य, चंचलतारहित, मानवाला, संतोषी होता है।। दशमभाव में परिधि हो तो किसी किसी जगह गलती करनेवाला, भोगी, दृढ़शरीर, निर्मत्सर, बहुशास्त्रज्ञ होता है। लाभस्थान में परिधि हो तो स्त्रीभोगी, गुणवान्, बुद्धिमान्, स्वजनों का प्रिय, मंदाग्नि रोगवाला होता है। व्ययभाव में परिधि हो तो गुरुनिन्दक होता है ।।२४–३६।।

अथ चापफलानि

धनधान्यहिरण्याढ्यः कृतज्ञः संमतः सताम् ।। सर्वदोषपरित्यक्तश्चापे तनुगते नरः ।।३७।। प्रियंवदःप्रगल्भाढ्यौ विनीतो विद्ययाधिकः ।। धनस्थे चापसंप्राप्ते रूपवान् धर्मतत्परः ।।३८।। कृपणोऽतिकलाभिज्ञश्चौर्यकर्मरतः सदा ।। सहजे धनुषि प्राप्ते हीनांगो मत्तसौहृदः ।।३९।। सुखी गोधनधान्यादिराजसन्मानपूजितः ।। कार्मुके सुखसंस्थे तु नीरोगो ननु जायते ।।४०।। रुचिमान् दीर्घदर्शी च देवभक्तः प्रियंवदः ।। चापे पंचमभे जातो विवृद्धः सर्व कर्मणि ।।४१।। शत्रुहंताऽतिनिर्धूर्तः सुखी प्रीतिरुचिः शुचिः ।। अरिस्थानगते चापे सर्वकर्मसमृद्धिभाक् ।।४२।। ईश्वरो गुणसंपूर्णः शास्त्रविद्धार्मिकः प्रियः ।। चापे सप्तमभावस्थे भवतीति न संशयः ।।४३।। परकर्मरतः क्रूरः परदारपरायणः ।। अष्टमस्थानगे चापे करोति विकलांऽतिकः ।।४४।। तपस्वी व्रतचर्यासु निरतो विद्ययाऽधिकः ।। धर्मस्थे यदि चापे च मानज्ञो लोकविश्रुतः ।।४५।। बहुपुत्रधनैश्वर्यो गोमहिष्यादिमान् भवत् ।। कर्मस्थे चापसंयुक्ते जायते लोकविश्रुतः ।।४६।।

लाभगे चापसंपाते लाभयुक्तो भवेन्नरः ।। नीरोगो दृढकोपाग्निर्मंत्रस्त्रीपरमास्त्रवित् ।।४७।। खलेऽतिमानी दुर्बुद्धिर्निर्लज्जो व्ययसंस्थितः ।। चापे परस्त्रीसंयुक्तो जायते निर्धनः सदा ।।४८।। इति चापफलानि ।।

अप्रकाश चापग्रहफल

लग्न में चापग्रह हो तो धन ऐश्वर्य युक्त, सर्वदोषरहित कृतज्ञ और समाज में मान्य होता है।। धनभाव में चाप हो तो प्रिय वचन बोलने वाला, प्रगल्भ (ढीड) विनीत, विद्वान्, धर्मात्मा तथा रूपवान् होता है।। तीसरे भाव में चाप हो तो कलाप्रेमी परन्तु कृपण, चोरी करनेवाला, हीनांग मैत्री तत्पर रहता है।। चौथे भाव में चाप हो तो सुखी नीरोग धनादि ऐश्वर्यवान् राजमान्य होता है।। पंचम भाव में चाप हो तो रूपवान् गम्भीर विचारवाला, सुरुचि सम्पन्न, प्रियभाषी, देवभक्त, सब कामों में अनुभवी होता है।। छठे स्थान में चाप हो तो, शत्रु का नाश करने वाला धूर्तता रहित, सुखी, प्रीति में रुचिवाला, पवित्र विचार और सर्व कार्य में दक्ष होता है।। सप्तम भाव में चाप हो तो आज्ञाकारी, पूर्णगुणी, शास्त्रज्ञानवाला धार्मिक होता है।। अष्टमस्थान में चाप हो तो दूसरों की नौकरी करनेवाला, क्रूरस्वभाववाला, परस्त्रीगामी, चिन्ताशील होता है। नवमभाव में चाप हो तो आदर करनेवाला तपस्वी, व्रतादि में निष्ठावाला, विद्यावान्, समाज में विख्यात होता है।। दशमभाव में चाप हो तो धन, ऐश्वर्य, सन्तानवाला, गौ आदि का पालक लोक समाज में प्रसिद्ध होता है।। यदि लाभस्थान में चाप हो तो व्यापार से बहुत लाभ होता है।। नीरोगी, बहुक्रोधी, अस्त्रविद्यानिपुण, स्त्रीभोगी होता है।। बारहवें भाव में चाप हो तो अभिमानी, दुर्बुद्धि, निर्लज्ज, परस्त्रीगामी तथा दरिद्री होता है ।।३७–४८।।

अथ शिखिफलम्

कुशलः सर्वविद्यासु सुखी वाङ्निपुणः प्रियः ।। मूर्तिस्थे शिखिसंपाते सर्वकामान्वितो भवेत् ।।४९।। वक्ता प्रियंवदः कांतो धनस्थानगते शिखी ।। काव्यकृत्पण्डितो मानी विनीतो वाहनान्वितः ।।५०।। कंदर्पक्रूरकर्मा च कृशांगो धनवर्जितः ।। सहजस्थे तु शिखिनि तीव्ररोगी प्रजायते ।।५१।। रूपवान् गुणसंपन्नः सात्त्विको विश्रुतिप्रियः ।। सुखसंस्थे तु शिखिनि सदा भवति सौख्यभाक् ।।५२।। सुखी भोगी कलाविच्च पंचमस्थानगः शिखी ।। युक्तिज्ञो मतिमान् वाग्मी गुरुभक्तिसमन्वितः ।।५३।। मातृपक्षक्षयकरः पीठगो बहुबांधवः ।। रिपुस्थाने शिखिप्राप्ते शूरः कांतो विचक्षणः ।।५४।। रक्तपीडाविचरतः कामी भोगसमन्वितः ।। शिखी तु सप्तमस्थाने वेश्यासु कृतसौहृदः ।।५५।। नीचकर्मरतः पापो निर्लज्जो निंदकः सदा ।। मृत्युस्थाने शिखिप्राप्त गतस्त्र्यपरपक्षकः ।।५६।। लिंगधारी प्रसन्नात्मा सर्वभूतहिते रतः ।। धर्मभे शिखिनि प्राप्ते धर्मकार्येषु कोविदः ।।५७।। सुखसौभाग्यसंपन्न कामिनीनां च वल्लभः ।। दाता द्विजसमायुक्तः कर्मस्थे शिखिनि भवेत् ।।५८।। नित्यलाभसुधर्मी च लाभे शिखिनि पूज्यते ।। धनाढ्यः सुभगः शूरः सुयज्ञश्चातिकोविदः ।।५९।। पापकर्मरतः शूरः श्रद्धाहीनोऽघृणो नरः ।। परदाररतो रौद्रः शिखिनि व्ययगे सति ।।६०।। इति शिखिफलम् ।।

शिखीग्रह फल

प्रथमभाव में शिखी हो तो सर्वविद्या में कुशल, सुखी, प्रिय व्याख्यान में निपुण सर्व समृद्धिमान् होता है।। दूसरे भाव में शिखी हो तो व्याख्याता, मिष्टभाषी, सुन्दर, कवि, पंडित, मान सम्मानवाला, विनीत और सवारी वाला होता है।। तीसरे भाव में शिखी हो तो अतिकामी, दुर्बल, धनहीन तथा कठिन रोगवाला होता है।। चौथे भाव में शिखी हो तो रूपवान्, गुणी, सात्त्विक, विविध ज्ञान श्रवणप्रिय सुखी होता है।। पञ्चमभाव में शिखी हो तो सुखी भोगी, कलाज्ञानवाला गुरुभक्त, चतुर, बुद्धिमान् तथा वाचाल होता है।। छठे भाव में शिखी हो तो मातृपक्ष का नाशक, किसी पद पर रहनेवाला, बहुकुटुम्बी, बलवान्, सुन्दर और चतुर होता है।। सातवें भाव में शिखी हो तो रक्त विकारवाला, कामी, भोगी तथा वेश्यागामी होता है।। आठवें भाव में शिखी हो तो नीच कर्म करनेवाला, पापी, निर्लज्ज, निन्दक, स्त्रीहीन, परपक्ष में रहनेवाला होता है।। धर्म, आचार तथा जाति की संस्कृति धारण करनेवाला, सुखी, सबका हित चाहनेवाला, धर्मकार्यों में चतुर, ऐसे लक्षण–नवमभाव के शिखी वाले के होते हैं।। दशम भाव में शिखी होने से सुख और सौभाग्य से युक्त, कामिनियों का प्यारा, दानशील, ब्राह्मणभक्त होता है।। लाभभाव में शिखी होने से नित्य नये लाभ होते हैं। सब जगह आदर होता है, धनी, सुखी, शूरवीर, पंडित तथा धर्मतत्पर होता है।। बारहवें भाव में शिखी होने से बुरे कर्म करनेवाला, बलवान्, धर्म में श्रद्धाहीन, घृणारहित, परस्त्रीगामी, तथा क्रूर होता है।। शिखिफल समाप्त ।।४९–६०।।

अथ गुलिकफलम्

रोगार्त्तः सततं कामी पापात्माधिगतः शठः ।। मूर्त्तिस्थे गुलिके मंदे खलभावोऽतिदुःखितः।।६१।। विकृतो दुःखितःक्षुद्रो व्यसनी च गतपत्रः ।। धनस्थे गुलिके जातो निःस्वो भवति मानवः ।।६२।। चार्वंगो ग्रामपः पुण्यः संयुक्तः सज्जनप्रियः ।। मंदे तृतीयगे जातो जायते राजपूजितः ।।६३।। रोगी सुखपरित्यक्तः सदा भवति पापकृत् ।। यमात्मजे सुखस्थे तु वातपित्ताधिको भवेत् ।।६४।। विस्तुतिर्विधनोऽल्पायुर्द्वेषी क्षुद्रो नपुंसकः ।। सुतस्थानगते पापे स्त्रीजितो नास्तिको भवेत् ।।६५।। बीतशत्रुः सुपुष्टांगो रिपुस्थाने यमात्मजे ।। सुदीप्तः सम्मतः स्त्रीणां सोत्साहः सुदृढो हितः ।।६६।। स्त्रीजितः पापकृज्जारः कृशांगो गतसौहृद ।। जीवितः स्त्रीधनेनैव सप्तमस्थे रवेः सुते ।।६७।। क्षुधालुर्दुखितः क्रूरस्तीक्ष्णरोषोऽतिनिर्घृणः ।। रंध्रे प्राणहरो निःस्वो जायते गुणवर्जितः ।।६८।। बहुक्लेशी कृशतनुर्दुष्टकर्मातिनिर्घृणः ।। मंदे धर्मस्थिते मंदःपिशुनो बहिराकृतिः ।।६९।। पुत्रान्वितः सुखी भोक्ता देवाग्न्यर्चनवत्सलः ।। दशमे गुलिके जातो योगधर्माश्रितः सुखी ।।७०।। सुस्त्रीभोगी प्रजाध्यक्षो बंधूनां च हिते रतः ।। लाभे यमानुजे जातो नीचांगः सार्वभौमकः ।।७१।। नीचकर्माश्रितः पापो हीनांगो दुर्भगोऽलसः ।। व्ययगे गुलिके जातो नीचेषु कुरुते रतिम् ।।७२।। इति गुलिकफलम् ।।

गुलिकयोग फल

लग्न में गुलिक हो तो रोगी, कामी, पापी, शठ, खल तथा दुःखी होता है।। धनभाव में गुलिक हो तो विकृत (बदशकल) दुःखी, क्षुद्रप्रकृतिवाला, व्यसनी, निर्लज्ज तथा निर्धन होता

है।। तृतीयभाव में गुलिक हो तो सुन्दर, ग्रामाधिपति, पुण्यकर्ता, सज्जनप्रिय तथा राजपूजित होता है।। चतुर्थ भाव में गुलिक हो तो रोगी, दुःखी, सदा पापकर्म करनेवाला, वात्तपित्त रोगी होता है।। पंचमभाव में गुलिक होने से समाज में निन्दित, निर्धन, अल्पायु, द्वेषी, क्षुद्रप्रकृति, नपुंसक, स्त्री में अनुरक्त तथा नास्तिक होता है।। छठेभाव में गुलिक हो तो शत्रुहीन, पुष्टशरीर, कान्तिवाला, स्त्रियों को प्रिय, उत्साही, सुदृढ (गठीला) सबका प्रिय होता है।। सातवें भाव में गुलिक हो तो स्त्री का अनुचर, पापी, जार, दुर्बल, प्रेमरहित, स्त्री की कमाई पर जीनेवाला होता है।। आठवें स्थान में गुलिक हो तो निर्धन,दुःखी, क्रूरकर्मरत, क्रोधी, घृणारहित, हिंसक, गुणहीन दरिद्र होता है।। नौवें भाव में गुलिक हो तो बड़े कष्ट से उपार्जन करनेवाला, दुर्बल, बुरे कर्म करनेवाला, घृणारहित, पिशुन (चुगलखोर) बाहर से अच्छा दीखनेवाला होता हैं।। दशमभाव में गुलिक हो तो पुत्रसन्तानवाला सुखी, भोगी, देवपूजा तथा हवनादि करनेवाला, कर्मयोगी, सुखी होता है। लाभस्थान में गुलिक हो तो सुन्दर भार्यावाला, सन्तानवाला, बन्धुवर्ग का हित करनेवाला, हीनांग (छोटा कद) पर्यटनशील होता है। व्ययभाव में गुलिक हो तो नीच कर्म का आश्रय लेनेवाला, पापी, हीनांग, दुर्भागी, आलसी, नीच, संगति में रहनेवाला होता है।। गुलिक फल समाप्त।।६१–७२।।

अथ प्राणपदफलम्

मूकोन्मत्तो जडांगस्तु हीनांगो दुःखितःकृशः ।। लग्ने प्राणपदे क्षीणो रोगी भवति मानवः ।।७३।। बहुधान्यो बहुधनो बहुभृत्यो बहुप्रजः ।। धनस्थानस्थिते प्राणे सुभगो जायते नरः ।।७४।। हिंस्रो गर्वसमायुक्तो निष्ठुरोऽतिमलिम्लुचे ।। तृतीयगे प्राणपदे गुरुभक्तिविवर्जितः ।।७५।। सुखस्थे तु सुखी कांतः सुहृद्रामासु वल्लभः ।। गुरौ परायणः शीलः प्राणे वै सत्यतत्परः ।।७६।। सुखभाक् च क्रियोपेतस्त्वपचारदयान्वितः ।। पंचमस्थे प्राणपदेसर्वकामसमन्वितः ।।७७।। बंधुशत्रुवशस्तीक्ष्णो मंदाग्निर्निर्दयः खलः ।। षष्ठे प्राणोऽल्परोगश्च वित्तपोऽल्पायुरेव च ।।७८।। ईर्षालुः सततं कामी तीव्ररौद्रवपुर्नरः ।। सप्तमस्थे प्राणपदे दुराराध्यः कुबुद्धिमान् ।।७९।। रोगसंतापितांगश्च प्राणपादेऽष्टमे सति ।। पीडितः पार्थिवैर्दुःखैर्भृत्यबंधुसुतोद्भवैः ।।८०।। पुत्रवान् धनसंपन्नः सुभगः प्रियदर्शनः ।।प्राणे धर्मस्थिते भृत्यःसदाऽदुष्टो विचक्षणः ।।८१।। वीर्यवान् मतिमान् दक्षो नृपकार्येषु कोविदः ।। दशमे वै प्राणपदे देवार्चनपरायणः ।।८२।। विख्यातो गुणवान् प्राज्ञो भोगी धनसमन्वितः ।। लाभस्थानस्थिते प्राणे गौरांगो मानवत्सलः ।।८३।। क्षुद्रो दुष्टस्तु हीनांगो विद्वेषी द्विजबंधुषु ।। व्यये प्राणे नेत्ररोगी काणो वा जायते नरः ।।८४।।

इति श्रीबृहत्पाराशरहोराशास्त्रे पूर्वखंडे धूमादिगुलिकप्राणपदफलनिरूपणं नाम षष्ठोऽध्यायः ।।६।।

प्राणपद फल

लग्न में प्राणपद हो तो मूक (गूंगा) उन्मत्त (पागल) तथा हीनांग, जडांग (बेकार अंगवाला) दुःखी, दुर्बल, तथा रोगी होता है।। धनभाव में प्राणपद हो तो बहधनी, बड़े अन्नभंडारवाला, बहुत नौकरवाला, बहुत सन्तानवाला, सौभाग्यवाला होता है।। तृतीयभाव में प्राणपद हो तो हिंसकवृत्ति, अभिमानी, निष्ठुर, मलीन, मातृपितृभक्ति रहित होता है।। चौथे भाव में प्राणपद हो तो सुखी, सुन्दर, प्रेमी, स्त्रियों में प्यारा, गुरुभक्त, सुशील होता है।। पंचमभावमें प्राणपद हो तो सुखभोगी, धर्मक्रियातत्पर, दयावान्, सर्वतः सन्तोषी होता है।। छठे भाव में प्राणपद हो तो दूसरे के वश में रहनेवाला, क्रोधी, मन्दाग्नि रोगवाला, दयाहीन, दुष्ट, धनी तथा अल्पायु होता है। सातवें भाव में प्राणपद हो तो ईर्षालु, कामी, भयानक आकार, कुबुद्धिवाला, विरोधी स्वभाव वाला होता है। आठवें भाव में प्राणपद हो तो निरन्तर रोगी, नौकर चाकर, भाई बन्धु, तथा समाज से पीड़ित रहता है।। नौवें भाव में प्राणपद हो तो पुत्रवान्, धनवान्, सौभाग्यवान्, सुन्दर, विनीत तथा प्रेमी होता है।। दशमभाव में प्राणपद हो तो बलवान्, मतिमान, चतुर, राजकार्य में बुद्धिमान्, देवभक्ति परायण होता है।। लाभस्थान में प्राणपद हो तो विख्यात गुणवान्, पंडित, भोगी, धनी, गौरवर्ण, मानी होता है।। बारहवें भाव में प्राणपद हो तो क्षुद्रबुद्धि, दुष्ट, हीनाग, ब्राह्मण तथा बन्धुओं का द्वेषी, नेत्ररोगी अथवा काना होता है।। प्राणपद फल सम्पूर्ण ।।७३–८४।।

इति बृ० पा० हो० शा० पूर्वख० भावप्रकाशिकायां धूमादि गुलिक प्राणपद फल निरूपणं नाम षष्ठोऽध्यायः ।।६।।

अर्गलाफलाध्यायः ७

पाराशर उवाच–अथातः संप्रवक्ष्यामि अर्गलाफलमुत्तमम् ।। यस्य विज्ञानमात्रेण ग्रहाणां च फलं वदेत् ।।१।। तुर्ये द्वितीये लाभे च विद्यमानग्रहार्गला ।। तस्य दृष्ट्यात्मकं ज्ञेयं निर्विशंकं द्विजोत्तम ।।२।। एकग्रहार्गलाल्पं च द्विग्रहा मध्यमा भवेत् ।। त्रयेण ग्रहयोगेन अर्गला पूर्णमुच्यते ।।३।। राश्यर्गलापि सा ज्ञेया ग्रहयुक्ता विशेषतः ।। तुर्यवित्तैकादशेषु यस्य कस्यार्गला भवेत् ।।४।। द्विविधा साऽर्गला विप्र ब्राह्मणा चोदिता पुरा ।। शुभकृत् पापकृच्चैव तन्वादीनां विचिन्तयेत् ।।५।। भिन्नार्गलां पुनर्वक्ष्ये चतुर्थार्गलपापयुक् ।। तृतीये तु यदा विप्र बहुपापयुते यदि ।।६।। बहुपापा तृतीयस्था पापषड्वर्गयोगतः ।। पापार्जितः पापदृष्ट्या संयुक्तार्गलकारकः ।।७।। तृतीये शुभसंम्बन्धे शुभक्षेत्रे शुभेक्षिते ।। शुभवर्गे च षड्वर्गे विज्ञेयं तुर्यमर्गला ।।८।।

अर्गलाफलाध्याय

पराशरजी ने कहा–अब यहां से 'अर्गला' का फल कहते हैं, जिस उत्तम अर्गला ज्ञान से राशि (भाव) और ग्रहों का फल कहा जाय।। हे द्विजोत्तम ! (मैत्रेय) दूसरे, चौथे, और ग्यारहवें स्थान में रहनेवाले ग्रहों से 'अर्गला' योग होता है, उसका निःशंक रूप से

दृष्ट्यात्मक विचार करना चाहिये।। एक या दो ग्रह २।४।११ वें स्थान में होने से मध्यम 'अर्गला' होती है (किन्तु एक या दो ग्रहों से 'अर्गला' योग नहीं माना जाता, यह बात अगले ११ वें श्लोक से कही गई हैं। अतः यह मध्यम का तात्पर्य अमान्य में समझना चाहिये) तीन (या तीन से अधिक) ग्रहों के योग से अर्गला योग पूर्ण होता है।। (यही सिद्धान्त जैमिनीय सूत्र के अध्याय १ पाद १ सूत्र ५ **"दार—भाग्य—शूलस्थार्गला निधातुः। कामस्था भूयसा पायानाम्। रिःफ—नीच—कामस्था विरोधिनः। न न्यूना विबलाश्च।"** इन चारों सूत्रों में बहुवचन से स्पष्ट है।) राशि से भी अर्गला जानना किन्तु ग्रहयुक्ता का विशेष महत्व है। २।४।११ वें स्थान में जिस किसी भी ग्रह से अर्गला हो।। ब्रह्माजी ने हमें पहिले दो प्रकार की कही है, एक 'शुभार्गला', दूसरी 'अशुभार्गला' ये दोनों प्रकार की अर्गला तन्वादि बारहों भावों में देखना चाहिये।। अब इस 'अर्गला' से अर्थात् २।४।११ स्थानों की अर्गला से भिन्न (दूसरी) अर्गला कहता हूं। (अर्थात् पहिली अर्गला तीन भावों को लेकर होती है और यह दूसरी अर्गला उपर्युक्त तीन भाव २।४।११ से भिन्न तृतीय भाव मात्र को लेकर कही है, इसलिये इसको प्रथम अर्गला से भिन्न कहा। यह एकदेशी मत प्रतीत होता है क्योंकि 'जैमिनीय सूत्र' में अर्गला प्रकरण अध्याय १ पाद १ सूत्र 'प्राग्वत् त्रिकोणे' 'विपरीतं केतोः' कह कर इस प्रकरण को समाप्त कर दिया।)

हे मैत्रेय! तृतीय भाव में यदि अनेक पापग्रह हों तो, वे तृतीय भावस्थ पापग्रह षड्वर्ग में पापग्रहों के वर्ग में हों तथा पापग्रहों की दृष्टियुक्त हों तो 'अर्गला' योगकारण होते हैं।।७।। इसी प्रकार तृतीय भाव में शुभग्रह योग (स्थिति) शुभ सम्बन्ध शुभक्षेत्र (शुभग्रह की राशि) शुभदृष्टि तथा षड्वर्ग में शुभ वर्ग हो तो यह शुभार्गला है।।८।। (इस अर्गला का प्रकरण समाप्त)

तुर्यवित्तैकादशे च पापयुग्वा शुभोऽपि वा ।। उभयक्षेत्रसंबंधे अर्गलां कारयेद्द्विज ।।९।। तृतीये बहुपापस्थे बहुयुक्तार्गला भवेत् ।। निर्बाधिका तु सा ज्ञेया निर्विशंकं द्विजोत्तम ।।१०।। एकेन द्वितीयेनापि अर्गला याभवेद्द्विज ।। साऽर्गला नैव विज्ञेया बहुपापयुतिं विना ।।११।। चतुर्थे धनलाभस्था शुभपापकृतार्गला ।। तस्यापि बाधकाः खेटा व्योमरिष्फतृतीयगाः ।।१२।। क्रमेण ज्ञायते विप्र चतुर्थं व्योमबाधकम् ।। धने च व्ययभावे च भयं ज्ञेयं तृतीयकम् ।।१३।। निर्बाधका च फलदा च दातव्या सबाधका ।। चिंतनीयं प्रयत्नेन तत्फलं द्विजपुङ्गव ।।१४।। अर्गलाया बाधकानां बाधकान् कथयेऽधुना ।। नूनं सा विबला खेटा ज्ञायते गणकैस्तदा ।।१५।। वित्तलाभचतुर्थानां यः पश्यति शुभार्गलाम् ।। व्ययभ्रातृनभस्थाच्चेद्विपरीताऽर्गला द्विज ।।१६।। पुनर्योगार्गलं ज्ञेयं त्रिकोणे पूर्ववद्द्विज ।। पंचमे चार्गलास्थानं नवमस्तद्विरोधकः ।।१७।। विपरीतेन केतुश्च नवमेऽर्गलकारकः ।। पञ्चम स्थस्तद्विरोधो ज्ञायते गणकैर्द्विज ।।१८।। क्रमेण पंचमे केतुः प्रकरोत्यर्गलां द्विज ।। नवमस्थस्तद्विरोधो लग्नार्गलमिदं विदुः ।।१९।। राश्यर्गलं च खेटानां चिंतयेद्द्विविधार्गलम् ।। यस्या यस्या दशा प्राप्ता तस्यां तस्यां फलं भवेत् ।।२०।। यत्र राशिस्थितः खेटस्तस्य पाकांतरे दशा ।। तत्र कालं फलं वाच्यं निर्विशंकं द्विजोत्तम ।।२१।।

२।४।११ भावों में पापग्रह हों या शुभग्रह हों अथवा कोई ग्रह इन तीन स्थानों में एक में

स्थित होकर दूसरे स्थान से क्षेत्र या दृष्टि सम्बन्ध रखता हो तो भी अर्गलायोग होता है।। तीनों ही स्थानों में अनेक पापग्रह हों तो वह बाधरहित निश्चय ही अर्गला जानना।। हे मैत्रेय! एक या दो ग्रहों से जो अर्गला होती है उसको अर्गला ही नहीं मानना चाहिए क्योंकि तीन या अधिक पापयोग से ही अर्गला मानी गई है।।

अर्गलायोग–बाधक

दूसरे चौथे, ग्यारहवें स्थान में बहुग्रह योग से जो अर्गला कही गई है उस अर्गला योग के बाधक स्थान हैं बारहवां दशवां तथा तीसरा।। क्रम से प्रथम का द्वितीय बाधक हैं। जैसे दूसरे का बारहवां, चौथे का दशवां, तथा ग्यारहवें का तीसरा।। हे मैत्रेय! बाधरहित ही अर्गला फलदायक होती है इसलिए इसका अच्छी तरह विचार करना चाहिए।। अब अर्गला के बाधक योग कहते हैं जिससे बाधित होने से निर्बल अर्गला का भी भली प्रकार ज्ञान हो।। २।४।११ स्थान की 'शुभार्गला' को उपर्युक्त बाधक स्थानों में स्थित ग्रह देखता या देखतें हों तो वह 'विपरीतार्गला' या 'बाधतार्गला' कहाती है।। अब द्वितीय अर्गला योग समझना कि, त्रिकोण के ५।९ दो स्थानों में पूर्वोक्त प्रकार से पञ्चमभावस्थ ग्रह अर्गला कारक है और नवमस्थ ग्रह बाधक है।। तथा केतु के लिए इससे विपरीत अर्थात् केतु से नवमस्थ ग्रह अर्गला कारक और पञ्चमस्थ बाधक है।। (यही भाव जैमिनीय सूत्र के अध्याय १ पाद १ सूत्र ९–१० में कही है। परन्तु अगले श्लोक में जै० सू० से कुछ विरुद्ध कहा है सो हो सकता है, एकदेशी मत हो) इसी क्रम से केतु के पञ्चमस्थ ग्रह अर्गला कारक है और नवमस्थ ग्रह अर्गला बाधक है। इसका नाम 'लग्नार्गला' है।। इस प्रकार राशि से (भाव से) तथा ग्रह से अर्गला का विचार करके जिस २ राशि की दशा प्राप्त हो उस २ राशि में उस भाव का फल होगा यह निश्चय करे।। जिस राशि में ग्रह स्थित हो उसकी दशा या अंतर्दशा में उसका फल कहें।। अर्गला विवेचन समाप्त। ।।९–२१।।

अथाग्रेऽर्गलाफलमाह

पदे लग्ने सप्तमे वा निराभासार्गलां द्विज ।। निर्बन्धा चार्गला तत्र दिष्टचा भाग्यं भवेन्नरः ।।२२।। अर्गला प्रतिबंधं च प्रथमांग्रेर्विचिंतयेत् ।। धनधान्यपुत्रपशुदाराबंधुकुलैर्युतः ।।२३।। शरीरारौग्यमैश्वर्यभृत्यबाहनसंयुतः ।। हरभक्तः सुधर्मज्ञो दिष्टचाभाग्यस्य लक्षणम् ।।२४।। शुभग्रहार्गला विप्र बहुद्रव्यप्रदायका ।। पापेन स्वल्पवित्तः स्यान्निर्विशंकं द्विजोत्तम ।।२५।। उभयार्गला भवेत्तत्र कदांचिद्धनवान् भवेत् ।। कदाचिद्वित्तचितार्तिर्जायते द्विजसत्तम ।।२६।। यत्र जन्मनि सोऽपि स्याच्छुभदृष्टे शुभार्गला ।। तेन दृष्टेक्षिते लग्ने प्राबल्याद्योगकल्पने ।।२७।। यदि पश्येद्ग्रहस्तत्र विपरीतार्गलस्थितः ।। प्रथमां तु विजानीयाद्विपरीतार्गलां द्विज ।।२८।। लग्नसप्तमयोगेन भाग्ययोगं विचिंतयेत् ।। भाग्यप्रबलता ज्ञेया लग्नसप्तशुभार्गला ।।२९।। शुभार्गले स्ववृद्धिः स्यात्पापे स्वल्पधनं वदेत् ।। उभयार्गले तु तत्रैव क्वचिद्वृद्धिः क्वचित् क्षयम् ।।३०।।तत्तद्राशिदशायां तु अर्गला फलसिद्धये।।शुभो वाऽप्यशुभो वापि ह्यर्गलाफलदायकः।३१।।

इति श्रीबृहत्पाराशरहोराशास्त्रेपूर्वखंडे अर्गलाफलकथनंनामसप्तमोऽध्यायः ।।७।।

अर्गला फल

हे मैत्रेय! लग्न में या सप्तम में प्रतिबंधरहित शुभ अर्गला पूर्णरूप से मनुष्य बड़े भाग्य से पाता है।। अर्गला (शुभार्गला) में प्रतिबंध भी (फल प्रतिबंध भी) प्रथम के चतुर्थांश मात्र में ही होता है, बाद में धन, धान्य, पुत्र, पशु, भार्या, बन्धु, और कुल से युक्त होता है।। उपर्युक्त 'शुभार्गला' में भगवद्भक्त, आरोग्यता, ऐश्वर्य, नोकर, सवारी (मोटर आदि) तथा धर्मज्ञ आदि सुख होना ही भाग्य का लक्षण है।। हे मैत्रेय! शुभार्गला हो तो बहुत धन हो तथा पापग्रह से हो तो मामूली द्रव्य हो।। तथा शुभ-पाप मिश्रित अर्गला हो तो कभी धनवान् और कभी धनहीन होता है।। जहां पर जन्मलग्न में मिश्रित अर्गला हो तो भी शुभग्रह की दृष्टि होने से 'शुभार्गला' ही हो जाती है। इसी प्रकार लग्न को भी शुभग्रह देखते या युक्त हों तो योग की प्रबलता जानो।। यदि अर्गला का बाधक योग भी हो तो शुभदृष्टि होने से अनिष्टकारी नहीं है।। लग्न तथा सप्तम भाव में इस प्रकार अर्गला योग का विचार करके 'शुभार्गला' है या नहीं यह देखकर निश्चय करे। यदि 'शुभार्गला' हो तो भाग्य की प्रबलता जाने।। शुभार्गला में धन की वृद्धि होती है तथा पापार्गला में स्वल्पधन होता है एवं 'उभयार्गला' में कभी कभी धनवृद्धि कभी धनहानि होती है।। जिस २ भाव की अर्गला हो उसका फल उस २ राशि की दशा तथा अन्तर्दशा में (जो कि आगे 'राशि दशा' कहेंगे) अच्छा या नेष्ट होता है ।।२२-३१।। अर्गलाध्याय समाप्त।।

इति श्रीबृ० पा० हो० शा० पू० खं० भावप्रदीपिकायां अर्गलाफल क० नाम सप्तमोऽध्यायः

कारकाध्यायः ८

अथाग्रे संप्रवक्ष्यामि ग्रहाणां कारकान् द्विज ।। आत्मादिकारकान् सप्त यथावत् कथयामि ते ।।१।।रव्यादिशनिपर्यंता भवंति सप्तकारकाः।। अंशैः साम्यौ ग्रहौ द्वौ च राह्वंतान् गणयेद्द्विज ।।२।। रव्यादिपंगुपर्यंतमंशाधिकग्रहोऽपि चेत् ।। कारकेन्द्रोऽपि स ज्ञेय आत्मा कारक उच्यते ।।३।। अंशसाम्यग्रहो यत्र कलाधिक्यं च पश्यति ।। कलासाम्ये पलाधिक्यमात्मा कारक ईर्यते ।।४।। तत्र राशिकलाधिक्ये नैव ग्राह्यः प्रधानकः ।।अंशाधिक्ये कारकः स्यादल्पभागोंतकारकः ।।५।। मध्यांशो मध्यखेटः स्यादुपखेटः स एव हि ।। अधोऽधः कारका ज्ञेयाश्चराणि सप्त कारकाः ।।६।। तेषां मध्ये प्रधानं तु आत्मकारक उच्यते ।। जातकराट स विज्ञेयः सर्वेषां मुख्यकारकः ।।७।। यथा भूमौ प्रसिद्धोऽस्ति नराणां क्षितिपालकः ।। सर्ववार्त्ताधिकारी च बंधकृन्मोक्षकृत्तथा ।।८।। पुत्रामात्यप्रजानां तु तत्तद्दोषगुणैस्तथा ।। बंधकृन्मोक्षकृद्विप्र तथा सन्मानकारकः ।।९।। तथैव कारको राजन् ग्रहाणां फलकारकः ।। आत्मेत्यादिफलं तत्ते अन्यथा स्थापयेद्विज ।।१०।। यथा राजाज्ञया विप्र पुत्रामात्यादयोऽपि च ।। समर्था लोककार्येषु तथैवान्योपकारकः ।।११।। कारको राजवश्येन फलदातान्यकारकः ।। यथा राजनि क्रुद्धे च सर्वेऽमात्यादयो द्विज।।१२।। स्वजनानां कार्यकर्तुमसमर्था भवंति हि।। स्निग्धे भूपे ह्यमात्यादिः स्वशत्रूणां द्विजोत्तम।।१३।। अकार्यं कर्तुं नो शक्तस्तथैवान्योऽपकारकः ।। आत्मकारकवश्येन ह्यमात्यादिफलं ददुः ।।१४।। इत्यात्मकारकः ।।

आत्मकारकखेटेन न्यूनभागो हि तद्ग्रहः ।। अमात्यसंज्ञा तस्यैव ज्ञायते द्विजसत्तम ।।१५।।

अमात्यन्यूनो भ्राता च भ्रातृन्यूनं च मातृकम् ।। मातृकारकखेटेन न्यूनभागो हि यो ग्रहः ।।१६।। स पुत्रकारको ज्ञेयस्तद्धीनो ज्ञातिकारकः ।। ज्ञातिकारकखेटेन हीनभागो हि यो ग्रहः ।।१७।। दारकारकविज्ञेयो निर्विशंकं द्विजोत्तम ।। चराश्च कारकाः सप्त ब्रह्मणा चोदिताः पुरा ।।१८।। अंशसाम्यौ ग्रहौ द्वौ च जायेतां यस्य जन्मनि ।। स्वकारकं विना विप्र लुप्यति चांत्यकारकः ।।१९।। तत्कारको लुप्यति चेदन्यन्नैवास्ति कारकम् ।। कारकाणां स्थिराणां च मध्ये संचितयेद्द्विज ।।२०।। अधुना संप्रवक्ष्यामि खेटान् कारकसंज्ञकान् ।। यस्य जन्मनि भावानां यथास्थाने च वै द्विज ।।२१।। स्वर्क्षे तुंगे च मित्रर्क्षे कंटके संस्थिता ग्रहाः ।। अन्योन्यकारका विप्र कर्मगास्तु विशेषतः ।।२२।। लग्ने सुखे तथा लाभे ग्रहभाववशेन च ।। भवंति कारका विप्र विशेषेण च भैरवौ ।।२३।। स्वमित्रर्क्षोच्चगे हेतुरन्योऽस्य यदि कर्मगः ।। स सुहृद्गुणसंपन्नः सोऽपि कारक एव वै ।।२४।। नीचान्वये यस्य जन्मबभूव द्विजसत्तम ।। पतति कारका लग्ने प्रधानं च न वाप्नुयात् ।।२५।। राज्ञां कुले समुत्पन्नो राजा भवति निश्चितम् ।। एवं कुलानुसारेण कारकाणां फलं भवेत् ।।२६।। अधुना संप्रवक्ष्यामि कारकाणि स्थिराणि च ।। सूर्यादीनां ग्रहाणां च वीर्यवान् कारको भवेत् ।।२७।। वीर्यवान् जायते विप्र जन्मनि रविशुक्रयोः ।। स पितृकारको ज्ञेयो निर्विशंकं द्विजोत्तम ।।२८।। चंद्रारयोश्च बलवान् मातृकारक उच्यते ।। भौमद्वयं विशेषेण भगिनी दारभ्रातृकौ ।।२९।। बुधान्मातुलतो ज्ञेयो मातृतुल्यानपि द्विज ।। गुरुणाऽत्र च विज्ञेयाः पुत्रस्वामिपितामहाः ।।३०।। स्वभार्या मातृपितरौ तथा मातामही द्विज ।। भृगुद्वारा विजानीयादेतेषां शुक्र कारकः ।।३१।। अर्यम्णः पुण्यभे तात इन्दोर्माता च तुर्यतः ।। कुजात्तृतीयतो भ्राता मातुलो रिपुभाद्बुधात् ।।३२।। देवेज्यात्पंचमात्पुत्रो दैत्येज्याद्द्यूनभात्स्त्रियः ।। मंदादष्टमतो मृत्युस्ताताादीनां विचिन्तयेत् ।।३३।।

अथ कारकाध्यायः

अब आगे सूर्यादि ग्रहों के आत्मादि सात कारक यथावत् कहते हैं।। सूर्य से शनि तक सात कारक होते हैं, सूर्यादि ग्रहों में अंशादि साम्य होने पर राहु को भी गिनना चाहिये किन्तु राहु सदा वक्री रहता है, अतः उसके अंशों को ३० में घटा कर शेष अंशादि से कारक का निर्णय करे। अतः सूर्य से राहु पर्यन्त अंश, कला, विकला में जो सबसे अधिक होता है वह कारको में राजा 'आत्मकारक' होता है।। जहां पर दो ग्रहों में अंशों की समता हो तो कलाधिक ग्रहों और अंश, कला बराबर होने पर पलाधिक ग्रह 'आत्मा कारक' होता है।। इन अंशादि साम्य में राशि नहीं लेना, अंशाधिक्य से ही कारकता होती है। सबसे कम अंश वाला अंतिम कारक होता है।। इस प्रकार सर्वाधिक और सर्वन्यून अंशादि आदि और अंत कारक होते हैं।। बीच के अंशादि से मध्यकारक होते हैं। अतः मध्यांशों में उसके बाद तथा उसके बाद इस प्रकार न्यून अंशवाले से न्यून अंशादिवाला क्रमशः गिनने से सात चरकारक होते हैं।। इन सात कारकों का राजा 'आत्मा कारक' होता है। वह जातक शास्त्र में सब कारकों में मुख्य होने से कारकराज कहा गया है।। जैसे कि संसार में मनुष्यों में से सबसे प्रधान (बड़ा) राजा होता है और वही प्रधान न्याय कारक एवं बंध, मोक्ष का कर्ता है। राजपुत्र, मन्त्री, अन्य अधिकारी तथा प्रजा इन सबके दोष और गुणों से बंधन और सन्मान करता है।। इसी प्रकार यह आत्माकारक भी

सब कारकों में मुख्य होकर सब ग्रहों के फल का अधिष्ठाता है अत: अन्यथा नहीं स्थापन करना चाहिए।। जैसे राजा की आज्ञा से राजपुत्र, मन्त्री आदि लोक कार्य में समर्थ होते हैं और अन्य भी सहायक कार्यकर्ता होते हैं।। कारक भी राजा के वशीभूत रहकर कर्म तथा फलदाता हैं। और जैसे कि राजा के क्रुद्ध होने पर मन्त्री आदि सभी कोई अपने घर के स्वजनों का भी कोई उपकार करने में असमर्थ होते हैं एवं राजा के प्रसन्न होने पर भी (राजाज्ञा के बिना) शत्रु का भी अपकार करने में समर्थ नहीं है।। इसी प्रकार आत्मा कारक के वशीभूत ही अन्य सब कारक अपने २ अधिकार का फल देते हैं।।आत्मकारकप्रशंसा समाप्त।। आत्म कारक से कम अंशादि वाला "अमात्यकारक" होता है।। अमात्य कारक से कम अंशवाला "भ्रातृ कारक" और उससे न्यून "मातृ कारक" तथा "मातृ कारक" से न्यून "पुत्र कारक" होता है। उससे न्यून "ज्ञाति कारक" है। ज्ञाति कारक ग्रह से हीन अंशवाला "दारकारक" होता है। ये सात 'चरकारक' (अस्थायी होने से) पहिले ब्रह्माजी ने कहे।। यदि दो ग्रहों के सर्वाधिक अंश समान हों तो (पूर्वोक्त रीति से)कलाधिक आत्माकारक लेना क्योंकि आत्माकारक के अभाव में अंत्यकारक का भी अभाव होगा।। आद्यन्त लोप में फिर अन्य कारक भी नहीं हो सकते। अत: चरकारक और स्थिरकारकों का विचार करना चाहिए।। अब कारक–संज्ञक ग्रह बताते हैं। जन्मलग्न में यथास्थान ग्रह लिख कर विचार करना चाहिए।। जो ग्रह अपनी राशि या मित्रराशि में अथवा उच्चराशि में या केन्द्रस्थान में हो अथवा दशमभाव में हो वे परस्पर कारक होते हैं।। स्थान वश से कारकत्व– लग्न, चतुर्थ या लाभ स्थान में होने से तथा विशेष करके सूर्य राशि में होने से भी ग्रह 'कारक' होते हैं।। स्वगृही', मित्रराशिगत अथवा उच्च राशिगत तथा दशमभावस्थ हो तो सौम्यगुणसम्पन्न होने से वह भी कारक होता है।। जिस जातक का जन्म नीच कुल में हो, और जन्म लग्नकुण्डली बहुत ग्रह कारक भी हों तो भी वह जातक राजा आदि की प्रधान पदवी प्राप्त नहीं कर सकता।। किन्तु राजकुल में जिसका जन्म हो वह निश्चय कारक ग्रह के होने पर राजा होता है। इस प्रकार कुलानुसार भी कारकों का फल होता है।। अब स्थिर कारक कहते हैं। सूर्यादि ग्रहों में जो बलवान् होता है, वह कारक होता है।। हे मैत्रेय! लग्न में सूर्य शुक्र में से जो बलवान् होता है, वह नि:शंकरूप से 'पितृकारक' होता है।। चन्द्रमा और मंगल में से जो बलवान् हो वह 'मातृकारक' होता है। विशेष करके मंगल के अधिकार में दो कारक हैं। एक उपर्युक्त तथा दूसरा भाई और भार्या में से स्थिर कारकत्व है। बुध से मामापक्ष का कारकत्व विचार करना और गुरु से, पुत्र, स्वामी, पितामह के कारकत्व का विचार करना।। अपनी भार्या, माता, पिता, नानी का कारकात्वभाव शुक्रद्वारा जानना। अर्थात् इनका कारक शुक्र है।। सूर्य–पुण्यकारक, चन्द्रमा मातृ कारक तथा चतुर्थ भाव से भी माता का विचार करना इसी प्रकार मंगल से तथा तृतीयभाव से भ्राता का और बुध से तथा छठे भाव से मामा का विचार करना योग्य है।। बृहस्पति से तथा पंचमभाव से पुत्र का तथा शुक्र से तथा सप्तम से भार्या का शनि से तथा अष्टमभाव से निर्वाण (मृत्यु) का तथा पिता आदि का विचार करना।। (ग्रहों के कारकत्व का विचार समाप्त)।।१–३३।।

अथ भावकारकमाह

अधुना संप्रवक्ष्यामि विशेषं भावकारकान् । जनुर्लग्नं च विद्याद्वै आत्मा कारकमेव च ।।३४।। धनभावं विजानीयाद्दारकारकमेव च ।। एकादशे ज्येष्ठभ्रातुस्तृतीये तु कनिष्ठकः ।।३५।। सुते सुतं विजानीयात्तथा सप्तमभावतः ।। सुतस्थाने ग्रहस्तिष्ठेत्सोऽपि कारक उच्यते ।।३६।। सूर्यो १ गुरुः २ कुजः ३ सोमो ४ गुरु ५ भौमः ६ सितः ७ शनिः ८ ।। गुरु ९ श्चंद्रसुतो १० जीवो ११ मंदश्च १२ भावकारकाः ।।३७।। पुनस्तन्वादयो भावाः स्थाप्यास्तेषां शुभाऽशुभम् ।। लाभं तृतीयं रंध्रं च शत्रुस्वस्त्रीव्ययं तथा ।। एषां योगेन यो भावस्तन्नाशं प्राप्नुयाद् ध्रुवम् ।।३८।। चत्वारो राशयो भद्राः क्रेंद्रकोणशुभावहाः ।। तेषां संयोगमात्रेण ह्यशुभोऽपि शुभो भवेत् ।।३९।।

कारकवस्तुविचार

अब हम विशेष कर भावकारकों को कहते हैं। जातक के जन्म का लग्न ही आत्माकारक है।। और धनभाव भार्याकारक है। एकादशभाव बड़े भाई का तथा तृतीयभाव छोटे भाई का कारक है। पञ्चम तथा सप्तमभाव से और पञ्चमभावस्थ ग्रह से भी पुत्रसन्तान का विचार करना।। १२ भावों के कारक ग्रह कहते हैं। क्रम से सूर्य, गुरु, कुज, चन्द्र, गुरु, भौम, शुक्र, शनि, गुरु, बुध, गुरु, शनि ये कारक हैं।। तन्वादि १२ भाव लिखकर शुभाशुभ फल का विचार करे। भावों में २।३।६।७।८।११।१२ इन भावों के परस्पर दृष्टयादि सम्बन्ध से जो भाव सम्बद्ध हो उस भाव की निश्चय हानि होती है।। तथा केन्द्रभाव की चार राशि और त्रिकोण की दो राशि इनके सम्बन्ध से अशुभ राशि भी शुभफलकारक होती है।। स्थिरकारक विचार समाप्त।। ३४–३९।।

चरकारकग्रहाः स्युः

सर्वग्रहेभ्योधिकांशादिनात्मकारकस्तत्क्रमेण ज्ञेयः । आत्माऽमात्यभ्रातृमातृपुत्रज्ञातिदारा इत्यादिचरकारकग्रहाः स्युः ।

चरकारकग्रहाणां चक्रम्							
शुक्रः	बृहस्पतिः	शनिः	चंद्रमाः	मंगलः	बुधः	सूर्यः	ग्रहाः
आत्मकारक	अमात्यकारक	भ्रातृकारक	मातृकारक	पुत्रकारक	ज्ञातिकारक	दाराकारक	चरकारकग्रह

अथ सूर्यादिग्रहकारकमाह

राज्यविद्रुमरक्तवस्त्रमाणिक्यराजवनपर्वतक्षत्रपितृकारको रविः ।।४०।। मातृमनः पुष्टिगंधरसे क्षुगोधूमक्षारकद्विजशक्तिकार्यसस्यरजतादिकारकश्चंद्रः।।४१।।सत्त्वसद्मभूमिपुत्रशीलचौर्य–रोग ब्रह्मभ्रातृपराक्रमाग्निसाहसराजशत्रुकारकः कुजः ।।४२।। ज्योतिर्विद्यामातुलगणितकाय-

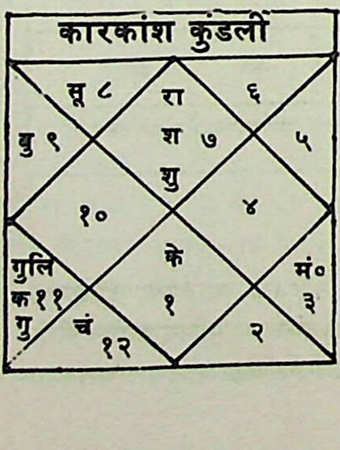
नर्तनवैद्यहासभीश्रीशिल्पविद्यादिकारको बुधः ।।४३।। स्वकर्मयजनदेवब्राह्मणधनगृहकांचनवस्त्रपत्रमित्रांदोलनादिकारको गुरुः ।।४४।। कलत्रकार्मुकसुखगीतशास्त्रकाव्यपुष्पसुकुमारयौवना भरणरजतयानगर्वलोकमौक्तिकविभवकवितारसादिकारकः शुक्रः।।४५।।महिषायोगजतैल वस्त्र श्रृङ्गारप्रयाणसर्वराज्यदार्वायुधगृहयुद्धसंचारशूद्रनीलमणिविघ्नकेशशल्यशूलरोगदासदासीजनायुष्यकारकः शनिः ।।४६।। प्रयाणसमयसर्परात्रिसकलसुप्तार्थद्यूतकारको राहुः ।।४७।। व्रणरोगचर्मातिशूलस्फुटक्षुधार्तिकारकः केतुः ।।४८।।

इति बृहत्पाराशरहोराशास्त्रे पूर्वखंडे कारकाध्यायकथनं नामाष्टमोऽध्यायः ।।८।।

कारक वस्तु विचार (गद्यभाग)

राज्य, विद्रुम (मूंगा) रक्त वस्त्र, माणिक, राजा, वन, पर्वत, क्षत्री, पिता इनका कारक सूर्य है। माता, मन, पुष्टि,गंध, रस ईख, गेहूं, नमक सोड़ा आदि, द्विज (ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य शक्ति, कार्य चांदी का कारक चन्द्रमा है।। बल, मकान, भूमि, पुत्र, शील, चोरी, रोग, ब्रह्म, भ्राता, पराक्रम, अग्नि, साहस, राज, शत्रु इनका कारक मंगल है।। ज्योतिर्विद्या, मामा, गणित, शरीर, नाचना, वैद्य, हास, भय, सजावट, शिल्पविद्या इनका कारक बुध है।। स्वकर्म यज्ञ, देवता, ब्राह्मण, धन, मकान, सुवर्ण, वस्त्र, पत्र (चिट्ठी) मित्र, आन्दोलन (प्रचार) इनका कारक बृहस्पति है।। भार्या, धनुष, सुख, गीतशास्त्र, काव्य, पुष्प, सुकुमार (अवस्था) यौवन, आभरण, (भूषण) चान्दी, सवारी, गर्व, (अभिमान) लोक (समाज) मोती, सम्पत्ति, कविता, रस इनका कारक शुक्र है।। महिष, अयसु (लौह) गज, तेल, वस्त्र, श्रृंगार, यात्रा, राजकीय वस्तु, काठ, हथियार, गृह, युद्ध, संचार, (यात्रा) शूद्र, नीलम, विघ्न, केश, शल्य, (सर्जरी) दास, दासीजन आयु इनका कारक शनि है।। यात्रा, समय, सर्प, रात्रि समस्त स्वप्न तथा द्यूत (जूआ) इनका कारक राहु है।। ब्रण, चमड़ा, रोग, अतिशूल, फुटकर, भूख, कष्ट इनका कारक केतु है।। कारक वस्तु विचार समाप्त ।।४०–४८।।

इति श्री बृ० पा० हो० शा० पू० भावप्रकाशिकायां कारकाध्याय
नामाऽष्टमोध्यायः ।।८।।



कारकग्रहाः

र०	चं०	मं०	बु०	बृ०	शु०	श०	रा०	के०	गु०
८	१२	३	९	११	७	७	७	१	११

अथ कारकांशग्रहफलमाह

अधुना संप्रवक्ष्यामि कारकस्याधिपान् ग्रहान् ।। योगसंबंधमात्रेण यथावद्‌गदतो मम ।।१।। स्वांशकारककुंडल्यां नवमांशाधिपोऽथवा ।। यस्मिन्राशौ स्थितो विप्र तद्राशिफलमुच्यते ।।२।। मेषादिमीनपर्यन्तं सर्वेषां फलमादिशेत् ।। यथावद्भाषितं शूलिप्रोक्तं यद्रुद्रयामले ।।३।। अजांशकारकांशेषु तिष्ठंति च यदा ग्रहाः ।। तथा मूषकमार्जारौ दुःखदौ भयकारकौ ।।४।। सुयोगे च यदा विप्र मार्जारादिप्रसिद्धिदौ ।। वृषे च कारकांशे च भयार्ती च चतुष्पदात् ।।५।। शुभे चतुष्पदात्सिद्धिरिति तत्त्वं द्विजोत्तम ।। युग्मकारांशके खेटे कंड्वादिरोगसंभवः ।।६।। काकशि च चलाद्दुःखं जलभीतिर्न संशयः ।। कुष्ठादिरोगसंभूतिः शुभे फलविपर्ययः ।।७।। सिंहांशे कारके खेटे तिष्ठत्येव द्विजोत्तम ।। शुनकादिभयं दद्याच्छुभे सिद्धिप्रदायकः ।।८।। कन्यायां कारकांशे च तिष्ठत्येव यदा ग्रहः ।। मृत्युवत्कंडुरोगार्तिर्वह्निदोषेण दुःखभाक् ।।९।। तुलाख्यकारकांशे च व्यापारेषु रतोऽधिकः ।। क्रयविक्रयकर्त्ता च यदि जातो नृपालये ।।१०।। वृश्चिके कारकांशे च सर्पादिभयकारकः ।। मातुः पयोधरे पीडा जायते द्विजसत्तम ।।११।। धनुर्धरकारकांशे वाहनाद्भयमादिशेत् ।। उच्चात्प्रपतनं वापि कोपि वस्तुसमन्वितः ।।१२।। नक्रकारकांशे विप्र सिद्धिर्जलचरादयः ।। शङ्खमुक्ताप्रवालादिमत्स्यखेचरदेवताः ।।१३।। कुम्भाख्यकारकांशे च तडागादीनि कारयेत् ।। कीर्तिमान्धर्मवान्सोऽपि जायते द्विजसत्तम ।।१४।। पश्यति कंडुरोगादि भवतीह न संशयः ।। मीने च कारकांशे वै सायुज्यमुक्तिभाग्भवेत् ।।१५।।

कारकांश राशि फल

अब पूर्वोक्त कारकाधिपति ग्रहों के नवमांश योग से होने वाले फल को कहते हैं।। कारकांश कुण्डली में नवमांशपति जिस राशि में हो उस राशि का फल कहते हैं।। रुद्रयामल में महादेवजी के कहे हुए १२ राशियों के फल को विचार कर कहना चाहिये।। कारक ग्रह मेष नवमांश में हो तो मूषक और बिलाव से भय तथा दुःख होता है।। यदि मेष राशि में शुभग्रहों का योग या दृष्टि हो तो मूषक मार्जार ही प्रसिद्धि के कारण होते हैं।। वृषराशि में कारकांश हो तो चौपाया पशु से भय और दुःख हो ।। शुभयोग होने से वही चतुष्पद सिद्धिकारक होते हैं।। कारकांश में मिथुन राशि होने से खुजली आदि रोग होते हैं।। इसी प्रकार कर्क राशि हो तो चलवस्तु सवारी आदि तथा जलभय और कुष्ठ आदि रोग होता है। शुभयोग होने से उक्त वस्तुओं से सिद्धि होती है।। सिंह राशि यदि कारकांश में हो तो कुत्ता आदि से भय होता है और शुभयोग होने से उन्हीं से सिद्धि होती है।। कन्या राशि के होने पर मृत्यु के समान कष्ट देनेवाले रोग, दुःख अथवा अग्निभय होता है।। तुलाराशि में स्थित कारकांश से जातक अधिकतर व्यापार में अनुरक्त क्रय–विक्रय का कर्ता होता है। राजवंश में होने पर भी प्रसिद्ध व्यापारी ही होता है।। कारकांश में वृश्चिक राशि हो तो सर्प आदि से भय तथा माता को स्तन पीड़ा होती है।। धनु के कारकांश में हो तो सवारी से भय तथा ऊँचे से गिरने का भय होता है।। मकर राशि के कारकांश में होने से जलचर जीव, शंख, मोती, मूंगा, मत्स्य तथा आकाशचारी भी लाभकारक होते हैं।। कुम्भ के कारकांश में जलाशय बनानेवाला, कीर्तिमान् तथा धर्मात्मा होता है तथा कंडू (खुजली) आदि रोग होते हैं।। मीन राशि के कारकांश में होने से जातक की सायुज्य मुक्ति होती है।। कारकांश राशिफल समाप्त ।।१–१५।।

अथ कारकांशग्रहाणां फलमाह

शुभराशौ शुभांशे वा कारके धनवान् भवेत् ।। तदंशकेंद्रे शुभो नूनं सत्यं राजा प्रजायते ।।१६।। कारके शुभराश्यंशे लग्नांशस्थे शुभग्रहे ।। उपग्रहस्य यश्चांत्ये स्वोच्चस्वर्क्षे शुभर्क्षगे ।।१७।। पापदृग्योगरहिते कैवल्यं तस्य निर्दिशेत् ।। मिश्रे मिश्रं विजानीयाद्विपरीते विपर्ययम् ।।१८।। चंद्रभृगुवारवर्गस्थे कारके पारदारिकः ।। वृषतौल्यंशकगते तस्मिन्वाणिज्यवान्भवेत् ।।१९।। मेषसिंहाशके तस्मिन्ब्रूयान्मूषकदंशकः ।। कारके कार्मुकांशस्थे वाहनात्पतनं भवेत् ।।२०।। अथैकः कारकांशेषु रव्यादिस्तिष्ठति ग्रहः ।। तेषां फलं प्रवक्ष्यामि शृणु त्वं द्विजसत्तम ।।२१।। कारकांशे यदा सूर्यस्तिष्ठति द्विज वीर्ययुक् ।। आदावंते पुमान्सोऽपि राजकार्य्येषु तत्परः ।।२२।। कारकांशे तु पूर्णेन्दुर्दैत्याचार्येण वीक्षितः ।। शतभोगी भवेत्सोऽथ विद्याजीवी भवेद्द्विज ।।२३।। कारकांशे यदा भौमे बलाढ्येन युतेक्षिते ।। रसवादी कुंतधारी बह्निकृज्जीवनं भवेत् ।।२४।। कारकांशे यदा सौम्ये तिष्ठत्येव बलाढ्यकः ।। शिल्पको व्यवहारी च वणिक्कृत्यपरो द्विज ।।२५।। कारकांशे गुरौ विप्र कर्मनिष्ठापरो भवेत् ।। सर्वशास्त्राधिकारी च विख्यातः क्षितिमंडले ।।२६।। कारकांशे यदा शुक्रे राजमानी सदा भवेत् ।। सदिंद्रियः शताब्दायुः कथनीयं द्विजोत्तम ।।२७।। कारकांशे यदा सौरिर्मृत्युलोके प्रसिद्धिवान् ।। महतां कर्मणां वृत्तिः क्षितिपालेन पूजितः ।।२८।। कारकांशे यदा राहुर्धनुर्धारी प्रजायते ।। जांगल्यलोहयंत्रादि-कारकश्चौरसंगमी ।।२९।। कारकांशे यदा केतुस्तिष्ठति द्विजसत्तम ।। व्यवहारी गजादीना-मुंशति परद्रव्यके ।।३०।।कारकांशे यदा विप्र संस्थितौ रविसैंहिकौ ।। सर्पाद्भीतिर्भवेन्मृत्युः शुभदृष्ट्या निवर्तते ।।३१।। कारकांशे भानुतमौ शुभषड्वर्गसंयुतौ ।। विषवैद्यो भवेन्नूनं विषहर्ता विचक्षणः ।।३२।। भौमेक्षिते कारकांशे भानुस्वर्भानुसंयुते ।। अन्यग्रहा न पश्यंति स्ववेश्मपरदाहकः ।।३३।। यदि सौम्येक्षिते विप्र ह्यग्निदो नैव जायते ।। पापर्क्षे च गुरौ दृष्टे समीपगृहदाहकः ।। ३४।। सगुलिके कारकांशे पूर्णेन्दुवीक्षिते द्विज ।। सति चौरैर्नीतधनः स्वयं चोरोऽथ वा भवेत् ।।३५।। सगुलिके कारकांशे अन्यग्रहयुतेक्षिते ।। बुधदृष्टियुते वापि अंडवृद्धिः प्रजायते ।।३६।। कारकांशे केतुयुक्ते पापग्रहनिरीक्षते ।। श्रोत्रच्छेदो भवेन्नूनं कर्णरोगार्तिना द्विज ।।३७।। कारकांशे स्थिते केतौ भृगुणा च समीक्षिते ।। युते वा जायते विप्र क्रियाकर्मसमन्वितः ।।३८।। कारकांशे स्थिते केतौ शनिसौम्यनिरीक्षिते ।। बलवीर्येण रहितो जायते सोऽपि मानवः ।।३९।। सकेतौ कारकांशे च बुधशुक्रनिरीक्षिते ।। जायते योनियुतिको दासीपुत्रोऽथ वा भवेत् ।।४०।। सकेतौ कारकांशे च अन्यग्रहनिरीक्षिते शनिदृष्टिविहीने च सत्याच्च रहितो भवेत् ।।४१।। कारकांशे यदा विप्र भृगुभास्करवीक्षिते ।। राजप्रेष्यो भवेद्बालो जायते नात्र संशयः ।।४२।।

कारकांश ग्रहफल

कारक ग्रह शुभराशि या शुभांश में हो तो जातक धनवान होता है। यदि कारकांश राशि तथा ग्रह केन्द्रस्थान में हो तो निश्चय ही राजा होता है।। कारकग्रह शुभराशि में हो, नवांश में लग्नराशि पर शुभग्रह हो और उपग्रह के अन्त्य भाग में तथा स्वगृह, उच्च, तथा शुभदृष्टि युक्त हो और पापग्रह की दृष्टि तथा योग से रहित हो तो निश्चय कैवल्य–मुक्ति होती है। दोनों प्रकार के योग (शुभाशुभयोग) हों तो मिश्रित फल और केवल पापयोग हो तो कथित फल से विपरीत फल होता है।। कारकांश ग्रह यदि चन्द्रमा, शुक्र के वर्ग में हो तो परस्त्रीगामी

होता है। वृष और तुला के अंश में हो तो व्यापारी होता है।। मेष तथा सिंह के अंश में हो तो मूषकभय तथा धनु के अंश में हो तो वाहन से गिरना होता है।। कोई एक ग्रह कारकांश में स्थित हो तो उसका भिन्न भिन्न फल कहते हैं।। कारकांश में जब सूर्य बलवान् होकर स्थित हो तो जातक सारी आयु राजकार्य में तत्पर रहता है।। चन्द्रमा यदि कारकांश शुक्रदृष्ट हो तो पूर्णायु तक भोगी और विद्याजीवी होता है।। कारकांश में मंगल बली ग्रह से दृष्ट होकर स्थित हो तो शस्त्रधारी, रसभस्मज्ञाता, अग्निजीवी होता है।। कारकांश में बलयुक्त होकर बुध हो तो शिल्प विद्या जाननेवाला, वणिकवृत्ति, व्यापारी होता है।। हे मैत्रेय! कारकांश में जब गुरु हो तो कर्मकाण्ड में निष्ठावाला विख्यात सर्वशास्त्रज्ञ होता है।। कारकांश में शुक्र हो तो राजमान्य इन्द्रियजित् तथा शतायु होता है।। कारकांश में शनि हो तो संसार प्रसिद्ध राजपूज्य महान् कार्यकर्ता होता है।। कारकांश में यदि राहु हो तो धनुर्विद्यावान, लोहयन्त्र (ताले) आदि बनानेवाला चोरसंगी होता है।। कारकांश में केतु हो तो पराश्रय से हाथी आदि का व्यापारी होता है।। कारकांश में जब सूर्य, राहु हों तो सर्प से मृत्यु होती है, शुभदृष्टि नहीं होती।। कारकांश में रविराहू शुभषड्वर्ग में हो तो विषवैद्य (गारडी) विचक्षण विषहर्ता होता है।। कारकांश में रविराहू मंगल से दृष्ट हों और अन्य दृष्टि न हो तो अपना तथा पराया घर का जलानेवाला होता है।। हे मैत्रेय! यदि शुभदृष्टियुक्त हो तो दाहक नहीं होता।। पापराशि में हो और गुरु दृष्टि हो तो समीप के घर का दाहक होता है।। कारकांश यदि गुलिक योगवाला हो तो स्वयं चोर या जातक का धन चोरी हो।। कारकांश सगुलिक हो तथा अन्य ग्रहसे युक्त या दृष्ट हो अथवा बुधदृष्टियुक्त हो तो 'अंडवृद्धि' रोग होता है।। कारकांश में केतु हो और पाग्रह दृष्ट हो तो कर्णरोग के कारण कर्णच्छेद हो।। कारकांश में केतु शुक्रदृष्ट हो अथवा युक्त हो तो क्रियाकर्म युक्त होता है।। कारकांश में केतु शनि और सौम्यग्रह दृष्ट हो तो बलवीर्य रहित होता है।। कारकांश में केतु बुध शुक्र दृष्ट हो तो वर्णसंकर या दासीपुत्र होता है।। कारकांश में केतु शनिदृष्टि रहित अन्यदृष्टि युक्त हो तो कृतप्रतिज्ञा से रहित होता है।। कारकांश में केतु सूर्य शुक्र दृष्ट हो तो राजा का नौकर होता है।।कारकांश ग्रहफल समाप्त।।१६–४२।।

अथ कारकांशदशमफलमाह

दशमे कारकांशे च बुधेन समवीक्षिते।। व्यापारे बहुलाभश्च महत्कर्मविचक्षणः।।४३।। कारकांशे च दशमे रविणा च युते यदि।। गुरुदृष्टे तथा विप्र जायते योगकारकः।।४४।। कारकांशे च दशमे शुभखेटनिरीक्षिते।। स्थिरचित्तो भवेद्बालो गंभीरो बहुवीर्यवान्।।४५।।

अथ कारकांशे चतुर्थस्थानफलम्

पाताले कारकांशे च शशिशुक्रयुतेक्षिते।। प्रासादवान् भवेद्बालो विचित्रहर्म्यवान्द्विज।।४६।। कारकांशे च पाताले तुंगर्क्षे कोऽपि संस्थितः।। हर्म्यमंदिरसंयुक्तो ह्यत्युच्चो बहुदीप्तिमान्।।४७।। कारकांशे च पाताले शनिराहुयुतेक्षिते।। विप्राच्छादनपट्टीयुग्जायते मंदिरं द्विज।।४८।। कारकांशे च पाताले कुजकेतुशनीक्षिते।। ऐष्टिकं मंदिरं तस्य जायते नात्र संशयः।।४९।। कारकांशे

च पातालेगुरुयुक्तनिरीक्षिते ।। ऐष्टिकं मंदिरं तस्य जायते नात्र संशयः ।।५०।। कारकांशे च पाताले गुरुयुक्तनिरीक्षिते ।। कणवेष्टितसंयुक्तं जायते तस्य मंदिरम् ।।५१।।

कारकांश विभिन्नभावफल

दशमभावफल

कारकांश में दशमभाव हो और बुधदृष्ट हो तो बड़े बड़े कार्य करनेवाला तथा व्यापार में बहुत धन प्राप्त करनेवाला होता है।। कारकांश दशम में रवियुक्त तथा गुरुदृष्ट हो तो राजयोग होता है।। दशमभाव में कारकांश हो तथा शुभग्रहदृष्ट हो तो जातक दृढ़विचारी, गंभीर और बलवान् होता है।। दशम कारकांशफल समाप्त ।।४३-४५।।

कारकांश में चतुर्थस्थानफल

चतुर्थ स्थान में कारकांश हो चन्द्र शुक्रदृष्टि युक्त हो तो अनेक प्रकार के मकानवाला होता है।। चतुर्थस्थान में कारकांश उच्चराशिगत ग्रहयुक्त हो तो लम्बे कदवाला, सुन्दर शरीर, बड़े बड़े मकानवाला होता है।। चतुर्थ कारकांश शनि राहु से युक्त या दृष्ट हो तो बड़े बगीचेवाला मकान होता है।। चतुर्थ कारकांश यदि मं० श० के० से दृष्ट हो तो ईंट से बना मकान होता है।। चतुर्थ कारकांश गुरुयुक्त या दृष्ट हो तो पक्की ईंट का मकान होता है तथा बजरी (पत्थर के छोटे टुकड़े) का पक्का मकान होता है ।। चतुर्थ फल सम्पूर्ण ।।४६-५१।।

अथ कारकांशे नवमभावफलमाह

कारकांशे च नवमे शुभखेटयुतेक्षिते ।। सत्यवादी गुरौ भक्तः स्वधर्मनिरतो भवेत् ।।५२।।
कारकांशे च नवमे पापग्रहयुतेक्षिते ।। स्वधर्मनिरतो बाल्ये मिथ्यावादी भवेद्द्विज ।।५३।।
कारकांशे च नवमे शनिराहुयुतेक्षिते ।। गुरुद्रोही भवेद्विप्र शास्त्रेषु विमुखो नरः ।।५४।।
कारकांशे च नवमे गुरुभानुयुतेक्षिते ।। तदाऽपि च गुरुद्रोही गुरुवाक्यं न मन्यते ।।५५।।
कारकांशे च नवमे भृगुभौमयुतेक्षिते ।। षड्वर्गाधिकयोगे च मरणं पारदारिकः ।।५६।।
कारकांशे च नवमे क्षतयुक्तेक्षिते द्विज ।। परस्त्रीसंगमाद्बालो बंधको भवति ध्रुवम् ।।५७।।
कारकांशे च नवमे गुरुयुक्तेक्षिते द्विज ।।स्त्रीलोलुपो भवेद्बालो विषयी चैव जायते।।५८।।

नवमभाव के कारकांश का फल

कारकांश नवमभाव में हो, शुभग्रहयुक्त या दृष्ट हो तो धर्मात्मा, गुरुभक्त और सत्यवादी होता है।। नवमभावगत कारकांश पापग्रहयुक्त या दृष्ट हो तो बाल्यावस्था में धार्मिक वृत्तिवाला, मिथ्यावादी होता है।। नवमभावगत कारकांश शनि राहुयुक्त या दृष्ट हो तो मूर्ख और गुरुद्रोही होता है।। नवमभावगत कारकांश यदि सूर्य गुरुयुक्त या दृष्ट हो तो भी गुरुद्रोही, आज्ञापालक नहीं होता।। नवमभावगत कारकांश शुक्रमंगलयुक्त या दृष्ट हो और षड्वर्ग में भी इन्हीं से युक्त या दृष्ट हो तो परस्त्री के कारण मरण होता है।। नवमभावगत कारकांश राहुयुक्त या दृष्ट हो तो परस्त्री के कारण बन्धन होता है।। नवमगत कारकांश गुरुयुक्त या दृष्ट हो तो कामी और विषयी होता है ।।५२-५८।।

अथ कारकांशसप्तमभावफलमाह

कारकांशे च द्यूनस्थे गुरुचंद्रयुते द्विज ।। सुंदरी गेहिनी तस्य पतिभक्तिपरायणा ।।५९।। राहुणा विह्वला बाला जायते चांगना द्विज ।। शनिना च वयोधिक्या रोगिणी वा तपस्विनी ।।६०।। भौमेन विकलांगी च तथा कांताद्यलक्षणा ।। रविणा स्वकुले गुप्ता आसक्ता परवेश्मनि ।।६१।। बुधे कलावती ज्ञेया कलाभिज्ञा प्रजायते ।। शुक्रेण तद्वज्ज्ञेया च निर्विशंकं द्विजोत्तम ।।६२।।

अथ कारकांशे तृतीयभावफलमाह

कारकांशे तृतीये च पापखेटयुतेक्षिते ।।स शूरो जायते बालो वीर्यवान्बहुविक्रमी।।६३।।कारकांशे तृतीयेऽपि शुभखेटयुतेक्षिते ।। जायते तत्त्वहृदयः कातरोऽपि विशेषतः ।।६४।। कारकांशे तृतीये च षष्ठे पापयुतेक्षिते ।। कृषिकर्मरतो नित्यं जायते च न संशयः ।।६५।।

सप्तमभावगत कारकांशफल

सप्तमस्थ कारकांश गुरुचन्द्रयुक्त हो तो पतिभक्त सुन्दरी स्त्री प्राप्त होती है।। इसी प्रकार राहुयुक्त हो तो अतिकामासक्त भार्या प्राप्त होती है और शनियुक्त होने से अपने से अधिक उमरवाली और रोगिणी और विरक्त होती है।। और इसी प्रकार मंगलयुक्त होने से विकलांगी और पुरुष समान होती है।। सूर्य के योग से अपने घर में सुरक्षित रखने पर भी अन्य घर में आसक्त रहती है।। बुध के योग से गायनवाद्य आदि कलाओं की जाननेवाली होती है। शुक्र के योग से भी बुध के ही समान फल होता है।।५९-६२।।

तृतीयभावगत कारकांशफल

तृतीयभावगत कारकांश हो और पापग्रह युक्त या दृष्ट हो तो जातक बलशाली और पराक्रमी होता है।। तृतीयभावगत कारकांश शुभग्रह युक्त या दृष्ट हो तो तत्त्वज्ञानी और डरपोक होता है।। कारकांश तृतीय या षष्ठभाव गत हो और पापग्रह युक्त या दृष्ट हो तो खेती से आजीवन करता है ।।६३-६५।।

अथ कारकांशे द्वादशभावफलमाह

**कारकांशे व्ययस्थाने उच्चस्थेऽपि शुभग्रहे ।। सद्गतिर्जायते तस्य शुभलोकमवाप्नुयात् ।।६६।।
कारकांशे व्यये केतौ शुभखेटैर्युतेक्षिते ।। तदापि जायते मुक्तिः सायुज्यपदमाप्नुयात् ।।६७।।
मेषेऽथ धनुषि वापि कारकांशे व्यये शिखी ।। शुभग्रहेण संदृष्टे कैवल्यपदमाप्नुयात् ।।६८।।
केवलेऽपि व्यये केतुः पापग्रहयुतेक्षितः ।। न मुक्तिर्जायते तस्य शुभलोकं न पश्यति ।।६९।।
रविणा संयुते केतौ कारकांशे व्ययस्थिते ।। गौर्यां भक्तिर्भवेत्तस्य शाक्तिको जायते नरः ।।७०।।
रविभक्तिर्भवेत्तस्य निर्विशंकं द्विजोत्तम ।। चंद्रेण संयुते केतौ कारकांशे व्ययस्थिते ।।७१।।
शुक्रेण संयुते केतौ कारकांशे व्यवस्थिते ।। समुद्रतनयाभक्तिर्जायतेऽसौसमृद्धिमान् ।।७२।।
कुजेन स्कंदभक्तो वा जायते द्विजसत्तम ।। वैष्णवो बुधशौरिभ्यां गुरुणा शिवभक्तिमान् ।।७३।।**

राहुणा तामसीं दुर्गां भूतप्रेतादिसेवकः ।। हेरंबभक्तः शिखिना स्कंदभक्तोऽथ वा भवेत् ।।७४।।
कारकांशे व्यये शौरिः पापराशौ यदा भवेत् ।। तदैव क्षुद्रदेवस्य भक्तिस्तस्य न संशयः ।।७५।।
पापर्क्षेपि व्यये शुक्रस्तदापि क्षुद्रसेवकः ।। कारकान्यूनभागो हि अमात्यो जायते ग्रहः ।।७६।।
कारके च फलं ब्रूयादमात्येऽनुचरो भवेत् ।। आदित्येंदुधरापुत्राद्गणनीयोऽष्टमो ग्रहः ।।७७।।
तस्मिन् ग्रहेऽप्येव फलं वक्तव्यं नात्र संशयः ।। अमात्याद्द्वादशे राशौ पापर्क्षे पापसंयुते ।।
तथापि क्षुद्रदेवस्य भक्तिर्भवति निश्चितम् ।।७८।। अमात्यो वर्तते यत्र तन्वादौ द्विजसत्तम ।।
सूर्यादिग्रहसंयुक्ते तत्फलं पूर्ववद्द्विज ।।७९।।

द्वादशभावगत कारकांशफल

बारहवें भाव में कारकांश हो और उच्चस्थ शुभग्रहयुक्त हो तो सद्गति होती है, अन्त में शुभलोक की प्राप्ति होती है।। व्ययभावगत कारकांश में केतु हो और शुभग्रह युक्त या दृष्ट हो तो भी सायुज्य मुक्ति प्राप्त होती है।। व्ययभाव में मेष या धनु राशि हो और उसमें केतु शुभग्रहदृष्ट हो तो भी सायुज्यमुक्ति प्राप्त होती है।। और वही केतु पापग्रहयुक्त या दृष्ट हो तो उसकी न तो मुक्ति होती है और न शुभ लोक ही प्राप्त होता है।। व्ययभावगत कारकांश में केतु सूर्ययुक्त हो तो जातक गौरीभक्त और शाक्त होता है।। व्ययभावास्थित कारकांश में चन्द्रयुक्त केतु हो तो सूर्य में भक्ति होती है।। व्यवभावगत कारकांश में केतु शुक्र से युक्त हो तो लक्ष्मीदेवी की आराधना से समृद्धिवाला होता है।। इसी प्रकार केतु मंगलयुक्त हो तो स्वामी कार्तिकेय का भक्त होता है। बुध तथा शनियुक्त होने से विष्णुभक्त और गुरु युक्त होने से शिवभक्त होता है।। कारकांश के व्ययभाव में राहु होने से काली पूजक तथा भूत प्रेतादि को सिद्ध करनेवाला होता है। तथा केवल केतु से गणेश या स्कन्द का भक्त होता है।। कारकांश के व्ययभाव में पाप राशि में शनैश्चर हो तो क्षुद्र देवता यक्ष आदि का उपासक होता है।। इसी प्रकार पापराशि में शुक्र हो तो भी क्षुद्र देवताओं का भक्त होता है। यह सम्पूर्ण फल आत्मकारक के नवमांश का जानना।। आत्मकारक से कम अंशवाला ग्रह 'आत्मकारक' होता है।। कारकांश में जो फल कहा है अमात्यकारक भी उसी का अनुगामी है। तथा सूर्य, चन्द्रमा, मंगल से अष्टम राशि गणना करना ।। उस राशि में भी इसी प्रकार फल जानना । अमात्यकारक से बारहवीं राशि यदि पापराशि हो या पाप ग्रहयुक्त हो तो भी क्षुद्रदेवता भक्त होता है।। हे मैत्रेय! अमात्यकारक राशि लग्न आदि भावों में सूर्यादि ग्रह के योग से भी पूर्ववत् फल जानना।। कारकांश ग्रहफल सम्पूर्ण ।।१६-७९।।

अथ कारकांशे त्रिकोणफलमाह

कारकांशे त्रिकोणस्थे खेटे च तांत्रिको भवेत् ।। पापेन क्षुद्रदेवस्य शुभेन शुभसेवकः ।।८०।।
कारकांशे त्रिकोणस्थे पापयुक् पापवीक्षिते ।। भूतानुग्रहकर्ता स्यान्निर्विशंकं द्विजोत्तम ।।८१।।
कारकांशे त्रिकोणस्थे पापयुक् छुभवीक्षिते ।। पुत्रैश्वर्यप्रदो नित्यं राजानुग्रहकारकः ।।८२।।
कारकांशे लये चंद्रे कुजराहुनिरीक्षिते ।। क्षयरोगो भवेत्तस्य श्वासकासादिरोगयुक् ।।८३।।
लग्नेवित्ते प्रबंधे च पापद्वययुते द्विज ।। तांत्रिको जायते विप्र निर्विशंकं कुले द्विज ।।८४।।

पापैर्निरीक्षितौ तत्र तंत्रनिग्राहको भवेत् ।। शुभैर्निरीक्षितौ वापि तंत्रानुग्रहकारकः ।।८५।।
कारकांशेंदुशुक्रौ च शुभदृष्टिनिरीक्षितौ ।। रसवादी भवेद्बालो धातूनां भस्मकारकः ।।८६।।
शुक्रेंदुबुधसंदृष्टौ सद्वैद्यो हि भवेन्नरः ।। पीयूषपाणिः कुशलःसर्वरोगहरो द्विज ।।८७।।
कारकांशेंदुतुर्यस्थो दैत्याचार्यनिरीक्षितः ।। श्वेतकुष्ठी भवेन्नूनं निर्विशंकं द्विजोत्तम ।।८८।।

कारकांश त्रिकोणफल

कारकांश राशि त्रिकोणमें हो तथा ग्रहयोग हो तो 'तान्त्रिक' होता हैं।। कारकांश त्रिकोणमें हो तथा ग्रहयुक्त और पापदृष्टि हो तो भूत प्रेतादिसे सिद्धि प्राप्त करता है।। कारकांश के त्रिकोण में होने और पापग्रहयुक्त तथा शुभग्रह की दृष्टि होने से पुत्र–सन्तान और ऐश्वर्य तथा राजा का अनुग्रह प्राप्त होता है।। कारकांश में चन्द्रयुक्त होकर अष्टमभाव में हो और मंगल राहु से दृष्ट हो तो जातक क्षय रोगी अथवा श्वास–खांसी वाला होता है।। लग्न में दूसरे या तीसरे स्थान में दो पापग्रहों से युक्त हो तो निश्चय ही 'तान्त्रिक' होता है।। पूर्वोक्त स्थान में अनेक पापग्रहों से दृष्ट हो तो तन्त्र का निग्रहकारक होता है, और शुभग्रह दृष्ट हो तो अनुग्रह कारक होता है।। कारकांश में चन्द्रमा और शुक्र शुभग्रहदृष्ट हों तो रसभस्म का जानने और करनेवाला होता है। और चन्द्र, बुध, शुक्र से दृष्ट हो तो चिकित्सा प्रणाली में कुशल, पीयूषपाणि (चिकित्सा में यश पानेवाला) रोगों को दूर करनेवाला सद्वैद्य होता है।। कारकांश में चन्द्रमा चतुर्थ में हो और शुक्रदृष्ट हो तो निश्चय ही श्वेत कुष्ठरोग वाला होता है ।।८०-८८।।

कारकांशेंदुचापस्थे यदि शुक्रयुतेक्षिते ।। पांडुश्वित्री भवेद्बालः श्वेतकुष्ठांगपीडितः ।।८९।।
कारकांशेंदुचापस्थे धरापुत्रेण वीक्षिते ।। राजरोगो भवेत्तस्य रक्तपित्तार्तिको द्विज ।।९०।।
कारके चंद्रधनुषि शिखिना वीक्षिते सति ।। नीलकुष्ठं भवेत्तस्य निर्विशंकं द्विजोत्तम ।।९१।।
चतुर्थे पंचमे रंध्रे धने राहुकुजौ यदि ।। क्षयरोगो भवेत्तस्य चंद्रदृष्टया विशेषतः ।।९२।।
कारकांशे लयस्थाने केवलः संस्थितः कुजः ।। पिटकादि भवेत्तस्य निर्विशंकं द्विजोत्तम ।।९३।।
कारकांशे लये केतौ ग्रहणीरोगपीडितः ।। स्वर्भानुतुलकौ रंध्रे विषवैद्यःप्रजायते ।।९४।।
कारकांशे धने तुर्ये केवले संस्थिते शनौ ।। धनुर्विद्याधरो बालो जायतेऽपि न संशयः ।।९५।।
कारकांशे सुखे वित्ते केवले संस्थिते शिखी ।। घटिकायंत्रवादी स्यादिष्टशोधनतत्परः ।।९६।।
उक्तस्थाने स्थिते सौम्ये तद्वत्परमहंसके ।। तथा संन्यस्तके ज्ञेयो निर्विशंकं द्विजोत्तम ।।९७।।

कारकांश चन्द्रमा धनु राशि में शुक्र से युक्त या दृष्ट हो तो पांडुरोगी तथा श्वेतकुष्ठी होता है।। कारकांश चन्द्रमा धनु राशि में मंगल से दृष्ट हो तो रक्तपित्त की बीमारी या क्षयरोगी हो ।। कारकांश चन्द्रमा धनुराशि में यदि केतुदृष्ट हो तो नील कुष्ठरोग निश्चय होता है।। कारकांश में दूसरे, चौथे, पांचवे, आठवें यदि मंगल राहु हों तो क्षयरोगी होता है, चन्द्रदृष्टि हो तो अवश्य ही होता है।। कारकांश में मंगल आठवें घर में हो तो फोड़ा–फुन्सी की व्याधि होती है।। कारकांश में छठे केतु हो तो संग्रहणी रोग होता है। राहु तथा शुक्र आठवें हो तो विषवैद्य (गारुड़ी) होता है।। कारकांश में चतुर्थ या द्वितीय में केवल शनि हो तो निश्चय धनुर्विद्याविशारद होता है।। कारकांश में द्वितीय, चतुर्थ स्थान में केतु हो तो घटिका मन्त्र

(प्राचीन काल की घड़ी) से इष्ट (समय) शोधन में प्रवीण होता है।। कारकांश में २।४ स्थान में बुध हो तो निश्चय ही परमहंस संन्यासी होता है ।।८९-९७।।

उक्तस्थाने स्थिते राहौ लोहयंत्रादिकारकः ।। शिखिना खड्गकारी च कुजेन कुंतधारकः ।।९८।। चंद्रेज्यौ कारकांशे च लग्ने वा नवपंचमे ।। ग्रंथकर्ता भवेन्नूनं सर्वविद्याविशारदः ।।९९।। उक्तस्थानगते शुक्रे स्वल्पग्रंथकरो द्विज ।। उक्तस्थानगते सौम्ये किंचिद्ग्रंथकरो ह्यसौ ।।१००।। शुक्रेण काव्यकर्ता च प्राकृतग्रंथतत्परः ।। गुरुणा सर्वग्रंथानां कारको द्विजसत्तम ।।१।। वाक्यहीनो भवेद्वालः सभाक्षोभो न जायते ।। वैयाकरणश्च वेदांती जायते तर्कशास्त्रकृत् ।।२।। उक्तस्थानगतःसौरिःसभाजाड्यो भवेन्नरः ।। मीमांसको भवेन्नूनमुक्तस्थानगते बुधे ।।३।। कारकांशे धरासूनुर्लग्ने वानवपंचमे ।। नैयायिको भवेन्नूनं सुष्ठुकाव्यकरो नरः ।।४।। कारकांशे निशानाथे त्रिकोणे चाथ लग्नगे ।। सांख्यशास्त्रज्ञनिपुणो जायते मतिमान्नरः ।।५।। भाग्ये लब्धे प्रबंधे वा कारकांशे शिखी तथा ।। गणितज्ञो भवेन्नूनं ज्योतिःशास्त्रविशारदः ।।६।। सुराचार्येण संबंधे सांप्रदायिकशस्त्रधृक् ।। ये योगा भाग्यभावे तु यथावद्भाषितं मया ।।७।।

कारकांश में २।४ स्थान में राहु हो तो मशीनरी बनाने या सुधारने में प्रवीण होता है। केतु होने से तलवार आदि हथियार बनाता और रखता है।। कारकांश में चन्द्र गुरु लग्न में या पंचम नवम में हो तो सर्वविद्याओं में पारंगत तथा ग्रन्थकर्ता होता है।। उक्तस्थान में शुक्र हो तो छोटी पुस्तकें लिखनेवाला तथा बुध होनेसे कभी कोई२ग्रन्थ करनेवाला होता है।। शुक्र के होने से कवि तथा प्राकृतभाषा का विद्वान् होता है। गुरु होने से सब विषयों का विद्वान् होता है।। गुरु होने से वैय्याकरण, नैयायिक और वेदान्ती होते हुए भी कम बोलनेवाला तथा सभा में भी शान्त रहनेवाला होता है।। उक्त स्थान में शनि हो तो पंडित होते हुए भी समाज में जड़ हो। बुध हो तो निश्चय ही मीमांसक होता है।। कारकांश के लग्न या पञ्चम अथवा नवम स्थान में मंगल हो तो कवि और न्यायशास्त्र का ज्ञाता होता है।। कारकांश के लग्न या त्रिकोण में चन्द्रमा हो तो सांख्यशास्त्र का ज्ञाता होता है।। कारकांश के ९।११।३ स्थान में केतु हो तो ज्यौतिप शास्त्र में पारंगत गणितज्ञ होता है।। गुरु के सम्बन्ध से धार्मिक शास्त्र का ज्ञाता होता है। जो योग भाग्यभाव में होते हैं वे यथावत् कहे गये।।९८-१००।। तथा ।।१-७।।

वित्तस्थानेऽपि ते ज्ञेयाः पूर्ववज्ज्ञायते फलम् ।। केऽपि तृतीयभागे तु कथयंति पुरा द्विज ।।८।। कारकांशे धने केतौ तथा भाग्यालये गते ।। पापग्रहेण संदृष्टे वाचालश्च भवेन्नरः ।।९।। कारकांशे तथारूढे धने रंध्रे स्थिते द्विजे ।। ग्रहसाम्येतिविज्ञेयो योगः केमद्रुमो भवेत् ।।१०।। उक्तस्थाने ग्रहो नास्ति तदा केमद्रुमो भवेत् ।। चंद्रदृष्टे विशेषेण दारिद्र्यार्तियुतो भवेत् ।।११।। आरूढाज्जन्मलग्नाद्वा पापाः स्त्रीहानिगा यदि ।। केवले संग्रहत्वेऽपि समसौख्यौ शुभाशुभौ ।।१२।। चंद्रदृष्टिविशेषेण योगः केमद्रुमो मलः ।। द्वितीयाष्टमभावाभ्यां योगोऽयं कथ्यते द्विज ।।१३।। कारकांशेषु ये योगाः पूर्वोक्ता गदिता मया ।। तत्तद्राशिदशापाके सर्वेषां फलमादिशेत् ।।१४।। एवं दशाप्रदो राशिर्द्वितीयाष्टमयोर्द्विज ।। ग्रहसाम्येति विज्ञेयः केमद्रुः शशिनेक्षिते ।।१५।।दशाप्रारंभसमये शोधयेज्जन्मलग्नवत् ।।सूर्यादिखेचरान्स्पष्टान् साधयेज्ज-

न्मवद्द्विज ।।१६।। तत्र वित्ताष्टमे भावे ग्रहसाम्ये तु यद्भवेत् ।। तदा केमद्रुमो ज्ञेयश्चंद्रदृष्टया विशेषतः ।।१७।। एवं तन्वादिभावानां दशारंभेषु योजयेत् ।। तत्तद्ग्रहानुसारेण फलं वाच्यं बुधैः सदा ।।१८।।

इति बृहत्पाराशरहोराशास्त्रे पूर्वखंडेकारकांशफलकथनं नाम नवमोऽध्यायः ।।९।।

ऊपर कहे गये सभी योग धनस्थान में भी इसी प्रकार मानें। कोई आचार्य तृतीय भाव में भी इन योगों को मानते हैं।। कारकांश में केतु द्वितीय स्थान में या नवमस्थान में पापदृष्ट हो तो बाचाल (वकवादी) होता है।। 'केमद्रुम' योग कहते हैं । कारकांश में अथवा आरूढ लग्न में दूसरे और आठवें स्थान में बराबर ग्रह हों तो 'केमद्रुम' (केम नामक जंगली बेकारफल होता है उसका वृक्ष यह सार्थक संज्ञा है) योग होता है।। उक्त स्थानों में कोई ग्रह नही हो तो भी 'केमद्रुम' योग होता है और चन्द्रमा की दृष्टि हो तो योग बलवान् होता है, यह योग दरिद्रता तथा पीड़ाकारक ही है।। आरुढलग्न या जन्मलग्न से पापग्रह सप्तम और द्वादश भाव में हो अथवा ये स्थान खाली हों तो समान सुख दुःख अर्थात् मिश्रित फल होता है।। 'केमद्रुम' योग द्वितीय और अष्टमभाव से ही होता है और विशेष करके चन्द्रमा की दृष्टि से बलवान् होता है।। कारकांश में जो योग कहे गये हैं उनका फल उन राशियों की दशा में होता है।। इस प्रकार दशाप्रद द्वितीय अष्टम राशि ग्रहसाम्य (दोनों स्थान में बराबर ग्रह होने अथवा न होने से) कहाती है और चन्द्रदृष्ट होने से 'केमद्रुम' योग कहा जाता है।। दशा के प्रारंभकाल में जन्म के समान १२ भावों को स्पष्ट करना चाहिये, और सूर्यादि ग्रहों को स्पष्ट करके देखना चाहिये।। इसके बाद द्वितीय तथा अष्टमभाव ग्रहसाम्य (उपर्युक्त प्रकार से) होने पर 'केमद्रुम' योग होता है, चन्द्रदृष्टि से बलवान् होता है।। इस प्रकार तनु, धन (प्रथम, द्वितीय) आदि १२ भावों का ग्रहों के अनुसार जो शुभाशुभ फल हो वह फल उस राशि के दशा काल में कहना।। कारकांश फल समाप्त ।।८०-११८ ।।

इति बृ० पा० हो० शा० पू० खं० भावप्रकाशिकायां कारकांशफलकथनं
नाम नवमोऽध्यायः ।।९।।

अथ भाव-होरा-घटीलग्नमाह

अथ वक्ष्याम्यहं विप्र ! कल्पनात्मकलग्नकान् ।। भावहोराघटीसंज्ञ-लग्नानीह यथाक्रमम् ।।१।। सूर्योदयात् समारभ्य घटिकानान्तु पञ्चकम् ।। इष्टपर्यन्तमेत्ततु भावलग्नं समुच्यते ।।२।। इष्टं घटयादिकं यत्तु पञ्चभिर्भाजितं फलम् ।। योज्य मौदयिके सूर्ये 'भावलग्नं' तदेव हि ।।३।। होरालग्नञ्च वक्ष्येऽहं श्रृणु त्वं द्विज पुंगव ! सार्द्धद्विघटिका तुल्यं विधिं तस्य वदाम्यहम् ।।४।। इष्टघटयादिकं द्विघ्नं पञ्चाप्तं भादिकं फलम् ।। योज्यमौदयिके सूर्ये 'होरालग्नं' तदेव हि ।।५।।

हे मैत्रेय ! अब मैं भावलग्न, होरालग्न तथा घटीलग्न जो कि वास्तविक नहीं है, काल्पनिक हैं, वे यथाक्रम से कहता हूं। सूर्योदय से ५-५ घटी में इष्टपर्यन्त १-१ राशि का भोग होता है, इसको भावलग्न कहते हैं। जो घटयादि इष्ट हो उसमें ५ का भाग देकर लब्ध राश्यादि अंक मानकर प्रातःकालिक सूर्य में युक्त करे तो 'भावलग्न' स्पष्ट होता है ।।१-३।।

उदाहरण–

इष्टघटी १०।०० में ५ का भाग दिया तो २।० लब्ध हुआ। सूर्य ४।२३।२८।१८ में युक्त किया तो ४।२३।२८।१८ यह भावलग्न स्पष्ट हुआ।।

हे द्विजश्रेष्ठ ! अब हम 'होरालग्न' कहते हैं, २।।–२।। घटी में १–१ लग्न का भोग होता है। इष्ट घटी को २ से गुणा करके ५ का भाग देकर लब्धांक को प्रातःसूर्य में युक्त करने से 'होरालग्न' स्पष्ट होता है।।४।।५।।

उदाहरण–

इष्टघटी १०।०० को द्विगुण किया तो २०।०० हुआ, ५ का भाग दिया तो लब्ध ४ राशि को प्रातः सूर्य में युक्त किया तो ६।२३।२८।१८ 'होरालग्न' स्पष्ट हुआ।

पुनरन्यद्व घटीलग्नं कल्पनीयं द्विजोत्तम ।। सूर्योदयात् समारभ्य जन्मकालावधि स्फुटम् ।।६।।
एकैकघटिकामानं लग्नं यद् भादिकं भवेत् ।। तदेव घटिकालग्नं कथितं नारदादिभिः ।।७।।
घटीतुल्यां राशयस्तु पलार्द्धप्रमितांशकाः ।। योज्याश्चौदयिके-सूर्ये 'घटीलग्नं' स्फुटं भवेत् ।।८।।
क्रमादेषां हि लग्नानां भावकुण्डलिकां लिखेत् ।। ये ग्रहा यत्र ते तत्र स्थाप्या वै गणितागत्ताः ।।९।।
वर्णदाख्यदशां भानां कथयामि तवाग्रतः ।। यस्या विज्ञानमात्रेण ज्ञेयमायुर्भवं फलम् ।।१०।।
ओजलग्नप्रसूतानां मेषादेर्गणयेत् क्रमात् ।। समलग्न प्रसूतानां मीनादेरपसव्यतः ।।११।।

हे द्विजोत्तम ! अब तुमको तीसरे 'घटीलग्न' की कल्पना करनी चाहिये। सूर्योदय से जन्मसमय का इष्टकाल जो घटीपल इष्ट है, वही राशि अंशरूप में 'घटीलग्न' है, ऐसा नारद आदि का मत है। इसमें घटी अंक 'राशि' है और पलांक का द्विगुण अंक 'अंश' होता है, प्राप्त राशि अंश को प्रातःकालीन सूर्यस्पष्ट में युक्त करने से घटी लग्न के राशि अंश आदि स्पष्ट होते हैं।।६–८।।

उदाहरण–

इष्ट १०।०० यहां १० यह राशि अंक है, पल नहीं होने से अंशादि वही रहा तो राशि में १२ से भाग देने पर २।२३।२८।१८ यह घटी लग्न स्पष्ट हुआ।।

इन (भाव, होरा, घटी) लग्नों से कुंडली बनाकर जो ग्रह जिस राशि में हो उसी राशि में लिखे। अब हम 'वर्णद' दशा कहते हैं, जिसके ज्ञान से आयुभर का शुभाशुभ फल जाना जाता है। विषम राशि में लग्न हो तो मेष आदि से क्रम से गिनना चाहिये और सम राशि में लग्न हो तो मीन राशि से उलटे क्रम से गिनना चाहिये।।११।।

एवं मेषादिमीनादि जन्मलग्नान्त मेव हि ।। तथैव होरालग्नान्तं गणनीयं द्विजोत्तम ।।१२।।
ओजत्वेन समत्वेन साजात्यमुभयं यदि ।। तर्हि संख्ये योजनीये वैजात्ये तु वियोजयेत् ।।१३।।
मेष मीनादितो ज्ञात्वा यो राशिः स तु वर्णदः ।। प्रयोजनं च वक्ष्येऽहं श्रृणु त्वं द्विजपुंगव ।।१४।।
होरा लग्नभयोर्नेया सबलाद् 'वर्णदा' दशा ।। यत् संख्यो वर्णदो राशि तत्तत् संख्या क्रमेण तु ।।१५।।
क्रम व्युत्क्रम भेदेन दशा स्यादोज–युग्मयोः ।। भावहोरादि लग्नानां सर्वत्रैव समानता ।।१६।।
जन्मलग्नन्तुस्वस्वीय देशोद्भवमितीरितम् ।। मीनाद्यपसव्यमार्गेण गणनीयं प्रयत्नतः ।।१७।।

**यल्लब्धंमतिमो राशिस्तद्राशिर्वर्णदो भवेत् ।। वर्षसंख्यां विजानीयाच्चरपर्याप्रमाणतः ।।१८।।
होरालग्नभयोर्नेया सबलाद्वर्णदा दशा ।। यत्संख्या वर्णदा ल्लग्नात्तत्र संख्या क्रमेण तु ।।१९।।
क्रमव्युत्क्रमभेदेन दशा स्यादोजयुग्मयोः ।। वर्णदा राशिमेषादि मीनादि गणयेत्क्रमात् ।।२०।।
वर्णदा स्यात्त्रिकोणे च पापयुक् पापराशिकः।। पापयोगकृते विप्र दशापर्यन्तजीवनम् ।।२१।।**

हे द्विजोत्तम ! इस प्रकार मेष आदि से (क्रम से) और मीन आदि से (उलटे क्रम से) जन्म लग्न तथा होरा लग्न तक गिनकर भिन्न भिन्न संख्या लेना । पश्चात् यदि होरा लग्न और जन्मलग्न दोनों ही सम या दोनों ही विषम हो तो इन संख्याओं का योग करे। और यदि एक संख्या सम और दूसरी विषम हो तो दोनों का अन्तर करे। इस प्रकार योग अथवा अन्तर करने पर जो संख्या प्राप्त हो वह यदि विषम हो तो मेष से क्रम से और सम हो तो मीन से व्युत्क्रम से गिनकर जो राशि प्राप्त होती है, वही 'वर्णद' राशि है। होरालग्न तथा जन्मलग्न में जो बलवान् हो उससे 'वर्णद' दशा ग्रहण करना। 'वर्णद' राशि की जो संख्या सम, विषम है, उसके अनुसार क्रम व्युत्क्रम भेद से दशा ग्रहण करना चाहिये। भाव, होरा तथा घटी लग्न सर्वत्र समानरूप से मानना (अर्थात् देशभेद से भेद नहीं होता) और जन्म लग्न अपने अपने देश (स्थान) के अनुसार विभेद होता है तो परस्पर घटाने से शेष संख्यात्मक अंक मीनादि अपसव्यमार्ग से गिनने पर वर्णद राशि होती है।। इस प्रकार जो अंतिम राशि प्राप्त होती है वह वर्णद राशि है। उस राशिकी दशाके वर्षों की संख्या 'चरपर्या' दशा के अनुसार लेना। जन्मलग्न तथा होरालग्नमें जो बलवान् हो उससे वर्णददशा लेना।वर्णददशाकी जो विषम या सम संख्या हो उसके अनुसार क्रम से तथा व्युत्क्रम से मेषादि और मीनादि क्रम से गणना करना।। यह वर्णद राशि त्रिकोण में पड़े और पापग्रह की ही राशि हो और पापग्रहयुक्त हो तो उस दशा तक ही जातक का जीवन जानना ।।१२–२१।।

उदाहरण–

जन्मलग्न–६।१६।१७।१९ । होरालग्न –६।२३।२८।१८, दोनों ही विषम राशि हैं, अतः मेष से क्रम से गणना किया तो ७–७ हुई, प्राप्त दोनों संख्या विषम (सजातीय) हैं, अतः योग किया तो १४ हुआ, १२ से भाग दिया तो '२' यह 'वृष' वर्णद राशि प्राप्त हुआ।

रुद्रशूले यथैवायुर्निर्विशंकं द्विजोत्तम ।। वर्णदा सप्तमाद्राशेः कलत्रायुर्विचिंतयेत् ।।२२।। पंचमे तनयस्यायुर्मातुः स्यात्तुर्यपंचके ।। तृतीये भ्रातुरायुः स्याज्ज्येष्ठभ्रातुर्भवेद्द्विज ।।२३।। पितुस्तु नवमान्मातुः पंचमाद्वर्णदस्य तु ।। शूलराशिदशायां वै प्रबलायामरिष्टकम् ।।२४।। एवं तन्वादिभावानां कारयेद्वर्णदा दशा ।। पूर्ववच्च फलं ज्ञेय द्विजोत्तम शुभाशुभम् ।।२५।। ग्रहाणां वर्णदा नैव राशीनां वर्णदा दशा ।। ग्रहारूढपदत्वेन चिंतयेद्ग्रहवर्णदा ।।२६।। दशाया अन्तरं कार्यं भानुभागं प्रदापयेत् ।। चरस्थिरदशायां वै वर्णदायास्तथैवच ।।२७।। यल्लब्ध्वा पूर्वमब्दानां भानुभागं च कारयेत् ।। क्रमव्युत्क्रमभेदेन संलिखेद्वै दशांतरम् ।।२८।। पूर्णायां कारकस्यैव केंद्रस्थानां दशा भवेत् ।। ततः पणफरस्थानामापोक्लिमदशां ततः ।। जन्मांगं जन्मलग्नं च कालं होरा प्रशस्यते ।।२९।।

इति श्रीबृहत्पाराशरहोराशास्त्रे पूर्वखण्डे भावलग्नादिकथनं नाम दशमोऽध्यायः ।।१०।।

रुद्र, शूल दशा के अनुसार ही कष्टकारी जानना। वर्णद के सप्तम भाव से जातक की स्त्री की आयु देखना ।। पञ्चम से पुत्र की, और चतुर्थ से माता की आयु देखना। तीसरे से छोटे भ्राता की आयु देखना, ग्यारहवें से बड़े भाई की।। माता से पंचम अथवा जातक के वर्णद से नवम से पिता की आयु का विचार करना। प्रबल शूल राशि की दशा में अरिष्ट होता है।। इस प्रकार तन्वादि १२ भावों की वर्णदा दशा देखनी चाहिये। और हे द्विजोत्तम! पहिले उक्त प्रकार ही शुभाशुभ फल जानना ।। यह वर्णदा दशा ग्रहों की नहीं होती, केवल राशियों की ही होती है। क्योंकि ग्रहों के स्थित होने के स्थान राशियाँ ही हैं, अत: ग्रहों का ही फल देनेवाली यह 'वर्णदा' दशा है।। इस दशा की अंतर्दशा बनाने के लिये प्रत्येक भाग की दशा के १२ भाग करना। चर, स्थिर, द्विस्वभाव राशियों में अन्तर्दशा निकालना।। पूर्वोक्त जो दशावर्ष आये हैं, उनके द्वादशांश अन्तर दशा होती है।। इसी प्रकार केन्द्रादि दशा का प्रकार जानना, प्रथम कारक होने से केन्द्रस्थ की दशा बाद पणफरस्थ की और बाद आपोक्लिमस्थ की दशा जानना। जन्मलग्न शरीर है, होरा समय है, यह तत्त्व है।। वर्णददशा समाप्त ।।२२–२९।।

इति श्रीबृहत्पाराशरहोराशास्त्रे पूर्वखंडे काल्पनिक होरालग्नादि कथनं
नाम दशमोऽध्याय: ।।१०।।

अथाऽऽरूढमाह

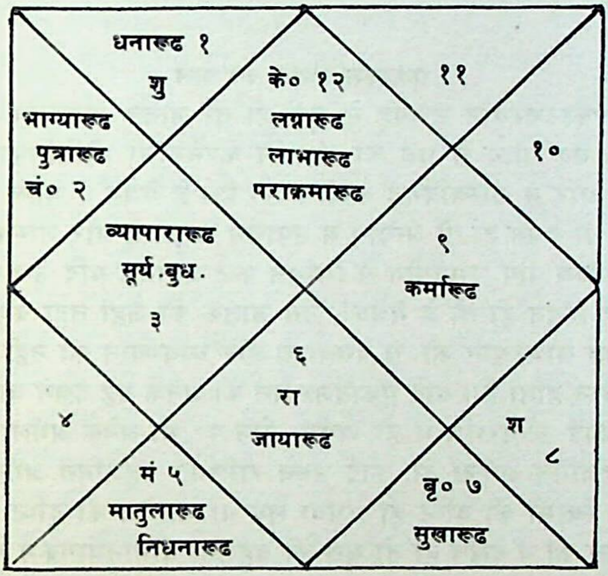
अधुना संप्रवक्ष्यामि राश्यारूढपदं द्विज ।। राशीनां द्वादशानां तु यावदीशाश्रयो भवेत् ।।१।। संख्या त्वीशोदयादग्रे समाप्ता तत्पदं वदेत् ।। राशिवद्ग्रह आरूढं ज्ञायते गणकैर्जनैः ।।२।। यावद्दूरं यस्य राशिस्तावत्संख्या क्रमेण वै ।। अग्रे खगारूढपदं ज्ञायते द्विजसत्तम ।।३।। जनुर्लग्नाल्लग्नस्वामी यावद्दूरं हि तिष्ठति ।। तावद्दूरं तदग्रे च लग्नारूढं च कथ्यते ।।४।। यदि लग्नेश्वरः स्वर्क्षे कलत्रे संस्थितोऽथवा ।। आरूढलग्नमित्याहुर्जन्मलग्नं द्विजोत्तम ।।५।। एवं तन्वादिभावानां भावारूढपदं भवेत् ।। यत्र यत्र ग्रहा लग्ने तत्र तत्र सुसंलिखेत् ।।६।।

आरूढपद

हे मैत्रेय ! अब मैं राश्यारूढपद कहता हूं। १२ राशियों का तो वही आरूढ स्थान होता है कि राशि का स्वामी राशि से जितनी राशि पर हो उतनी संख्या पर की अगली राशि उस राशि का आरूढपद होता है।। राशि के स्वामी से आगे की उतनी ही संख्या 'पद' जानना, इस प्रकार राशि के समान ही ग्रह का भी आरूढ पद होता है।। (ग्रह में) जिस ग्रह की राशि अपने से जितनी संख्या पर हो उससे आगे उतनी ही संख्या पर जो राशि होती है वह ग्रहारूढपद कही जाती है।। जातक के लग्न से लग्न का स्वामी जितनी दूर पर स्थित है, उससे उतनी संख्या पर आगे की राशि लग्नारूढ पद कहाती है।। हे मैत्रेय ! यदि लग्नेश्वर जन्मलग्न में अथवा सप्तम में हो तो जन्मलग्न ही आरूढपद कहाता है।। इसी प्रकार लग्न आदि बारहों भावों का पद (आरूढलग्न) जानना। लग्न में जिस जिस स्थान पर ग्रह हों वहां वहां पर

लिखे।। पश्चात् उपर्युक्त रीती से तत् तत् भावों का आरूढ पद तत्तत् स्थानों में लिखे ।।१–६।।

उदाहरणार्थमारूढकुंडलीमाह



पराशर उवाच

अधुना संप्रवक्ष्यामि तन्वारूढफलं द्विज ।। यस्य विज्ञानमात्रेण जायते कर्मसूचकः ।।७।। यावदीशात्त्वयं राशिरित्युक्तं मुनिभिः पुरा ।। पदमारूढसंज्ञं हि तदारब्धविधिं द्विज ।।८।।

अथैकादशस्थानमाश्रित्य फलमाह

पदादेकादशे स्थाने शुभग्रहयुतेक्षिते ।। लक्ष्मीवाञ्जायते बालः प्रजावाञ्छीलसंयुतः ।।९।। वित्तोपार्जनन्यायेन नीतिवाञ्जायते सदा ।। नरो न नास्तिको नूनं न तु शास्त्रविरुद्धकृत् ।।१०।। पदादेकादशे विप्र पापखेटयुतेक्षिते ।। अन्यायोपार्जितं वित्तं विरुद्धं शास्त्रमार्गतः ।।११।। मिश्रैर्मिश्रफलं ज्ञेयमुच्चमित्रादिक्षेत्रगः ।। बहुधा जायते लाभो यत्र यत्र द्विजोत्तम ।।१२।। आरूढाल्लाभभवनं ग्रहः पश्येत्तु न व्ययम् ।। यस्य जन्मनि सोऽपि स्यात्प्रबलो धनवानपि ।।१३।। दृष्टग्रहाणां बाहुल्ये तदा दृष्टचरितुंगगे ।। सार्गले चापि तत्रापि बह्वर्गलसमागमे ।।१४।। शुभग्रहार्गले तत्र तत्राप्युच्चग्रहार्गले ।। सुखानि स्वामिना दृष्टे लग्नभाग्याधिपेन वा ।।१५।। जातस्य पुंसः प्राबल्यं निर्दिशेदुत्तरोत्तरम् ।। उक्तयोगेषु ये खेटा द्वादशं तु न पश्यति ।।१६।।

लग्नारूढफल

हे मैत्रेय ! अब हम लग्नारूढ का फल कहते हैं। जिसके ज्ञान से कर्म का सूचित करनेवाला होता है।। यह राशि अपने स्वामी की संख्या तक होती है, ऐसा प्राचीन महर्षि लोग कहते हैं। इसीलिये उससे आरंभ करके उतने ही आगे और जाने पर वह स्थान होता है।।७।।८।।

एकादश स्थान का फल

आरूढपद से एकादशस्थान शुभग्रह से युक्त हो तो जातक प्रजावान्, लक्ष्मीवाला और सुशील होता है।। वह न्याय से धन का उपार्जन करनेवाला नीतिनिपुण होता है, न तो नास्तिक होता है और न शास्त्रविरुद्ध कार्य करता है।। हे मैत्रेय ! पहले एकादश स्थान में यदि पापग्रह युक्त या देखते हों तो अन्याय से उपार्जन करता है और शास्त्रविरुद्ध कर्म करता है।। इसी प्रकार सौम्य पाप उभययोग से मिश्रित फल जानना। यदि उस स्थान में उच्च या मित्र आदि में ग्रह स्थित हो तो हे मैत्रेय! उस जातक को जहां तहां बहुत प्रकार से लाभ होता है।। सौम्यग्रह लाभस्थान को तो देखता हो और व्ययस्थान को नहीं देखता हो तो भी जातक बहुत धनवान होता है।। यदि एकादशस्थान को अनेक ग्रह देखने वाले हों जिनमें कोई शत्रुराशि में हो, कोई उच्चराशि में हो, अर्गला होने पर भी अनेक अर्गला योग का समावेश हो, कोई शुभग्रहजनित अर्गला हो, कोई उच्च राशिगत ग्रहजनित अर्गला हो, ऐसे अनेक अर्गला हों, स्थान स्वामी की दृष्टि हो अथवा लग्न या भाग्येश की दृष्टि हो और इन उक्त योगों में द्वादशभाव को न देखते हों तो सुख की वहुलता योगानुयोगक्रम से उत्तरोत्तर भाग्य की प्रवलता कहनी चाहिये।। ९ – १६ ।।

अथ द्वादशराशिमाश्रित्य फलमाह

पदारूढे व्यये विप्र शुभपापयुतेक्षिते ।। बाहुल्यव्ययमित्येवं विशेषोपार्जनात्सदा ।।१७।। शुभग्रहे सुमार्गेषु कुमार्गात्पापखेचरैः ।। मिश्रैर्मिश्रफलं वाच्यं यथालाभेषु पूर्ववत् ।।१८।। पदारूढे व्यये शुक्रे भानुस्वर्भानुवीक्षिते ।। राजमूलाद्व्ययं वाच्यं चन्द्र दृष्ट्या विशेषतः ।।१९।। पदारूढे व्यये सौम्ये शुभखेटयुतेक्षिते ।। ज्ञातिमध्ये व्ययो नित्यं पापदृक्कलहाद्व्ययः ।।२०।। पदव्ययेऽसुराचार्ये वीक्षिते चान्यखेचरैः ।। करमूलाद्व्ययं वाच्यं करव्याजेन वै द्विज ।।२१।। आरूढे द्वादशे सौरो धरापुत्रेण संयुते ।। अन्यग्रहेक्षिते विप्र भ्रातृमूलाद्धनव्ययम् ।।२२।। पदेषु द्वादशे स्थाने ये योगास्तान्वदाम्यहम् ।। लाभभावेषु ये योगा लाभयोगकराः सदा ।।२३।। पदेषु सप्तमे राहुरथवा संस्थितः शिखी ।। कुक्षिव्यथायुतो बालः शिखिना पीडितेऽधिकम् ।।२४।। पदे च सप्तमे केतुः पापखेटयुतेक्षिते ।। साहसी श्वेतकेशी च दीर्घलिंगी भवेन्नरः ।।२५।। पदे च सप्तमे स्थाने गुरुशुक्रनिशाकराः ।। एको द्वयं त्रयं तत्र लक्ष्मीवान्कारयेद्ध्रुवम् ।।२६।। तुंगर्क्षे सप्तमे खेटे शुभो वाप्यशुभः पदे ।। श्रीमान्सोऽपि भवेन्नूनं सत्कीर्तिसहितो द्विज ।।२७।। ये योगाः सप्तमे भावे राह्वादिकथिता मया ।। ते योगा द्यूनवच्चिन्त्या वित्तभावे च सद्द्विज ।।२८।।

द्वादश राशि (बारहों भाव) का फल

शुभ तथा पापग्रह दोनों प्रकार के ग्रहों से व्ययारूढ पद युक्त तथा दृष्ट हो तो बहुत खर्च होता है और आय भी बहुत होती है।। शुभग्रह युक्त दृष्ट हो तो सुमार्ग में और पापग्रहों से कुमार्ग में व्यय होता है। दोनों प्रकार के ग्रहों से फल भी दोनों प्रकार का होता है।। लाभस्थान के समान ही यहां भी जानना।। पदारूढ के व्ययभाव में शुक्र हो, सूर्य, राहु देखते हों तो राजसम्बन्ध से खर्च हो, चन्द्र दृष्टि हो तो विशेष हो।। व्यय पदारूढ में सौम्यग्रह हो, अन्य शुभग्रह भी देखते हों तो अपने बन्धु वर्ग में व्यय हो पापग्रह की दृष्टि से क़लह (लड़ाई–झगड़ा) के कारण व्यय हो।। व्ययपद में (गुरु) शुक्र हो तथा अन्यग्रह भी देखते हों तो कर (टैक्स) के कारण खर्च होता है (कर के रूप में धन व्यय होता है।) द्वादश आरूढ में शनि हो तथा मंगल भी हो एवं और ग्रह भी देखते हों तो भ्राताओं के कारण धन व्यय होता है।। द्वादश आरूढपद के और जो योग हैं, उनका कथन करते हैं।। लाभभाव में जो लाभयोगकारी योग हैं।। सातवें आरूढपद में राहु अथवा केतु हो तो बाल्य अवस्था में कुक्षि (काँख) व्यथा से युक्त हो। केतु से अधिक कष्ट जानना।। तथा सप्तम पद में केतु हो और पापग्रहों से युक्त तथा दृष्ट हो तो असमय में बाल सफेद हो जावें तथा असम साहसी और दीर्घेन्द्रियवाला हो।। सप्तम पद में चन्द्र, गुरु, शुक्र इनमें से एक, दो या तीनों हों तो उत्तरोत्तर (योगानुसार) लक्ष्मीवान् निश्चय होता है।। हे मैत्रेय ! शुभग्रह उच्च राशि का होकर सप्तम आरूढ पद में हो, ग्रह शुभ हो अथवा अशुभ हो किन्तु जातक कीर्तियुक्त धनी होता है।। हे द्विजश्रेष्ठ ! हमने सप्तम भाव में राहु आदि ग्रहों के जो शुभाशुभ योग कहे हैं वे सब योग द्वितीयभाव में भी समझना।।१७–२८।।

उच्चो वाथ हिरण्यं वा जीवो वा शुभ एव वा ।। एको बली धनगतः श्रियंदिशति देहिनः ।।२९।। ये योगाश्च पदे लग्ने यथावद्गदतो मम ।। कारकांशस्य कुण्डल्यां निर्बाधका विचिंतयेत् ।।३०।। आरूढादष्टमे पापे सौरेः स्याच्छुभवर्जितः ।। तथा वित्तालये पापे पूर्ववज्ज्ञायते फलम् ।।३१।। आरूढाद्वित्तभे सौम्ये सर्वदेशाधिपो भवेत् ।। सर्वज्ञो यदि चेन्न स्यात्कविर्वादी च भार्गवः ।।३२।। आरूढात्केंद्रकोणेषु तथा लाभपदे द्विज ।। लग्नसप्तमराश्यंघ्रौ सबले खेट संयुते ।।३३।। श्रीमांश्च जायते नूनं देशे विख्यातिमान् भवेत् ।। षष्ठाष्टमे व्यये स्थाने श्रीमान्स न भवेत्कदा ।।३४।। पदाल्लग्ने सप्तमे वा केंद्रे त्रिकोणोपचये ।। सुवीर्यसंस्थिते खेटे भार्याभर्तृसुखप्रदः ।।३५।। एवं लग्नपदाद्विप्र पुत्रभावादि चिंतयेत् ।। मित्रामित्रे विजानीयाद्द्वयभावेषु वै द्विज ।।३६।। षष्ठाष्टमे व्यये खेटस्तत्तद्भावेषु तिष्ठति ।। यद्यद्भावेषु यद्वैरं लग्नारूढे विचिंतयेत् ।।३७।। लग्नारूढं दारपदं मिथः केंद्रगतं यदि।। लाभे वापि त्रिकोणे वा तथा राजधराधिपः ।।३८।। आरूढः पुत्रमित्रैस्तु त्रिलाभकेंद्रगो यदि ।। द्वयोर्मैत्री त्रिकोणेषु साम्यं द्वेषोऽन्यथा भवेत् ।।३९।। एव दारादि भावानामर्जयित्वारिमित्रता ।। जातकद्वयमालोक्य चिंतनीयं विचक्षणैः ।।४०।।

इति श्रीबृहत्पाराशरहोराशास्त्रे पूर्वखंडे आरूढफलकथनं नाम एकादशोऽध्यायः ।।११।।

उच्चग्रह होने से सुवर्ण की प्राप्ति तथा गुरु या शुभग्रह हो तथा एक भी ग्रह बलवान् होकर द्वितीय पद में होने से जातक को धन की प्राप्ति कराते हैं।। जो योग हमने आरूढ पद में कहे हैं वे योग पूर्वोक्त कारकांश कुण्डली में भी निर्बाधरूप से समझना।। आरूढ लग्न से अथवा शनिसे शुभयोगरहित पापग्रह हो,द्वितीयभाव में भी पापग्रह हो तो धन हानि होती है। आरूढ पद से द्वितीयभाव में सौम्यग्रह हो और शुक्र न हो तो सर्वदेशाधिपति तथा सर्वशास्त्रपारगामी होता है।। आरूढ से केन्द्र, त्रिकोण तथा लाभस्थानं में लग्न तथा सप्तम राशि नवांशमें बलवान् शुभग्रह हो तो जातक श्रीमान्, देश में विख्यात होता है। किन्तु ६।८।१२ स्थान में यह योग होने से धनी नहीं होता।। आरूढ पद से सप्तम स्थान या लग्न में, केन्द्र, त्रिकोण या उपचय स्थान में बलवान् ग्रह स्थित हो तो पुरुष को स्त्री का तथा स्त्री को सौभाग्य का अखण्ड सुख होता है।। हे मैत्रेय! इसी प्रकार लग्नारूढ पद से भी पुत्रभाव आदि स्थान में ग्रहस्थिति विचार करना।। बारहों भावों में मित्र, शत्रु आदि का भी विचार करना।। इसी तरह छठें, आठवें, बारहवें भाव में जो ग्रह हों उनका मित्र शत्रुभाव भी इस आरूढ लग्न में विचार करना।। सप्तम स्थान का लग्न ही आरूढपद कहा गया है, उनके स्वामी यदि केन्द्रस्थान में हों (चतुर्थ दशम में) अथवा लाभ या त्रिकोण स्थान में हों तो राजाधिराज होता है ।। लग्नारूढ यदि तीसरे,ग्यारहवें या केन्द्रमें हो तो पुत्र मित्र युक्त होता है।। त्रिकोण के दोनो भावों में परस्पर मैत्री साम्यभाव है अन्य भाव से शत्रुता है। इस प्रकार स्त्री आदि भावों की परस्पर शत्रुमित्रता जानकर ग्रह, भाव दोनों का विचार करके फल का निर्णय करना चाहिए ।।२९–४०।। भाव फल समाप्त ।।

इति श्री वृ० पा० हो० शा० पू० भावप्रकाशिकायां आरूढफलकथनं नाम एकादशोऽध्यायः

पराशर उवाच

अधुना संप्रवक्ष्याम्युपपदं च द्विजोत्तम ।। यस्य विज्ञानमात्रेण जायते फलसूचकः ।।१।। पदारूढाद्व्ययस्थानेपदं चोपपदं स्मृतम् ।। लग्नानुचरसंज्ञोपपदं च द्विजसत्तम ।।२।।

उपपदस्थोपपदद्वितीये वा गुणविशेषफलमाह

पापाक्रांते पापयुते पापर्क्षे पापवीक्षिते ।। पापसंबंधसंयोगे उपपदद्वितीयके ।।३।। प्रव्रज्यायोगो विज्ञेयः संन्यासो भवति ध्रुवम् ।। तथा भार्याविरोधी स्यादथवा स्त्रीविनाशकृत् ।।४।। रवि पापत्वंनास्यैव सिंहर्क्षे पापदे सति ।। पूर्वोक्तं नो फलं ज्ञेयं जायते गृहिणीसुखम् ।।५।। मेषादिपापराशौ च संस्थिते दिवसाधिपे ।। पूर्वोक्तं च फलं ज्ञेयं प्रव्रज्यादारनाशकः ।।६।। उपपदे द्वितीये वा शुभसंबंधदृष्टियुक् ।। शुभर्क्षे शुभसंयोगे पूर्वोक्तफलदो भवेत् ।।७।। उपपदे द्वितीये वा नीचांशे नीचखेटयुक् ।। नीचसंबंधयोगे वा प्रणीता दारनाशकृत् ।।८।। उच्चांशे उच्चसंस्थे वा उच्चसंबंधदृष्टियुक् ।। बहुदारा भवेयुश्च रूपलक्षणसंयुताः ।।९।। उपपदद्वितीयेपि युग्मर्क्षे मेषराशितः ।। मिथुनेऽपि स्थिते विप्र बहुदारयुतो भवेत् ।।१०।। उपपदे द्वितीयेपि स्वस्वामिखेटसंयुते ।। उत्तरायुषि निर्दारो भवत्येव न संशयः ।।११।। वृषस्थे वा तुले वापि दैत्येज्ये दारकारके ।। अन्यराशौ च वा विप्र निर्दार उत्तरायुषि ।।१२।। स्वराशौ

संस्थिते खेटे नित्याख्ये दारकारके ।। उत्तरायुषि निर्दारो भवत्येव न संशयः ।।१३।। उपपदेशोपि तुंगर्क्षे नित्याख्ये दारकारके ।। उत्तमकुलाद्दारलाभो नीचस्थेऽपि विपर्ययः ।।१४।। शुभसंबंधयुक् दृष्टे उपपदे दारकारके ।। सुंदरी लभ्यते भार्या भव्या रूपवती द्विज ।।१५।। संबंधे शनिराहुभ्यामुपपदे च शनिर्द्विज ।। निर्दारकारके वापि शनिराहुयुतेक्षिते ।।१६।। अथ वादयुतो विप्र भार्यया सहितो द्विज ।। स्त्रीविनाशो भवेन्नूनं तथा स्त्रीपरित्यागवान् ।।१७।। उपपदे च संयुक्तौ शिखिशुक्रौ द्विजोत्तम ।। रक्तप्रदररोगार्ता जायते तस्य भामिनी ।।१८।। उपपदादिषु संयोगे बुधकेत्वोर्द्विजोत्तम ।। अस्थिस्रावयुता बाला गृहे तस्य न संशयः ।।१९।। रवी राहुस्तथा पंगुरुपपदे योगकारकः ।। अस्थिज्वरवती बाला तप्तांगा च दिवानिशम् ।।२०।। उपपदे बुधकेतुभ्यां योगसंबंधके द्विज ।। स्थूलांगी गृहिणी तस्य जायते नात्र संशयः ।।२१।। उपपदे बुधक्षेत्रे भौमर्क्षे चाथवा द्विज ।। मंदारौ संस्थितौ तत्र प्राणरोगार्तिपित्तयुक् ।।२२।। सौम्यारौ चान्यक्षेत्रे वा उपदिश्ये शनिर्युते ।। कर्णरोगवती बाला नेत्ररोगयुता तथा ।।२३।। कुजसौम्यौ चान्यक्षेत्रे उपपदे द्विजोत्तम ।। योगे स्वर्भानुदेवेज्यौ दंतार्ता गृहिणी भवेत् ।।२४।। उपपदे तु कन्यास्थे अन्यर्क्षेऽपि तथा द्विज ।। शनिस्वर्भानुयोगश्च पंग्वंगी तस्य भामिनी ।।२५।। ये योगाः पूर्वकथिता मया ते विप्रसत्तम ।। शुभयुक् दृष्टिसंयोगे न भवेयुः फलप्रदाः ।।२६।। लग्नादुपपदाद्वापि यो राशिः सप्तमो द्विज ।। तन्नवांशा राशयोंशाः स्वसप्तमतदंशकाः ।।२७।। तत्र पापे स्थिते दृष्टे उक्तयोगफलं विदुः ।। शनिः शुक्रस्तथा चांद्रिः सप्तमांशग्रहेषु च ।। त्रिकयोगकृते विप्र अपत्यरहितो नरः ।।२८।। पदोपपदलग्नेषु पुत्रकारके द्विज ।। पंचमस्थे गुरौ भानौ तत्र स्वर्भानुयोगकृत् ।।२९।। बहुपुत्रो भवेन्नूनं प्रतापी बलवीर्ययुक् ।। प्रचंडविजयी विप्र रिपुनिग्रहकारकः ।।३०।। उक्तस्थाने निशानाथे एकपुत्रो भवेद्द्विज ।। उक्तस्थाने शुभे पापे पुत्रसौख्यं विलंबितम् ।।३१।।

उपपदफल विचार

हे मैत्रेय! अब उपपद का कथन करते हैं कि–जिसके ज्ञान से जातक के फल का ज्ञान होता है।। पदारूढ लग्न के १२ बारहवें स्थान के आरूढ की पद या 'उपपद' संज्ञा है। (पदारूढ शब्द से यहां लग्न समझना अर्थात पद व्यत्यय करके आरूढ पद अर्थात आरूढपद अर्थात का पद=कारण=जन्म लग्न) लग्न का अनुचर (पीछे वाला) संज्ञक होने से इसका नाम 'उपपद' है।। उपपदस्थ उपपद द्वितीय भाव का फल–उपपद के द्वितीय स्थान में पापराशि हो, पापग्रहयुक्त हो, पापग्रहों से (उभयतः) आक्रान्त हो, पापग्रहों से या ग्रह से दृष्ट हो, पापग्रहों से परम्परा संयोग हो तो ।। घर से विरक्तिभाव होकर निश्चय ही संन्यास होता है। भार्या से विरोध हो अथवा स्त्रीका मरण हो जावे।। यहां (इस प्रकरण में) सूर्य सिंह में पापराशि में होने पर भी क्रूरग्रह नहीं माना जाता। अतः सूर्य योग हो तो पूर्वोक्त फल नहीं होता, प्रत्युत भार्या का सुख रहे ।। (सिंहराशि से भिन्न) मेष आदि पापराशियों पंर सूर्य पूर्वोक्त फल संन्यास, भार्या की हानि है।। आरूढलग्न अथवा आरूढ से द्वितीय में शुभराशि, शुभग्रह का योग और शुभग्रह की दृष्टि आदि सम्बन्ध हो तो पूर्वोक्त फल (अनुपद में जो सूर्य के संबन्धमे कहा है) भार्या का सुख रहेगा।। (यहां पूर्वोक्त फल पद से प्रव्रज्या दारनाश अर्थ नहीं लेना क्योंकि आगे श्लोक २६ में स्पष्ट कहा है, उससे विरोध होगा) उपपद द्वितीय में नीचांश तथा

नीचग्रह युक्त हो तथा नीचग्रह से ही दृष्टयादि सम्बन्ध हो तो विवाहित स्त्री की मृत्यु होती है।। उच्चांश हो और उच्चराशिगत ग्रह हो, उच्चग्रह की दृष्टि हो तो रूपलावण्ययुक्त अनेक स्त्री प्राप्त हों।। उपपद द्वितीस्थान में युग्मराशि (मेषादि गणना से समराशि) हो तो भी अनेक भार्या होती हैं और यही फल मिथुन राशि में भी जानना।। (इस वचन से युग्मराशि तथा मिथुन अर्थात् वृष, मिथुन, कर्क, कन्या, वृश्चिक, मकर और मीन इतनी राशि समझनी चाहिये)।। उपपद द्वितीय में भाव की राशि का स्वामी ग्रह ही स्थित हो तो उत्तर आयु (प्रौढ अवस्था) में तो स्त्री की हानि होती ही है।। स्त्रीकारक होकर शुक्र यदि वृष या तुला राशि में हो अथवा अन्य (उच्च, मित्रराशि) में हो तो भी प्रौढ अवस्था में तो स्त्री की हानि होती है।। स्थिरकारकों में दारकारकग्रह स्वराशि में स्थित हो तो भी प्रौढ अवस्था में स्त्री की हानि होती है।। उपपद का स्वामी उच्चराशि में हो और वही स्थिर 'दारकारक' हो तो उत्तम कुल से स्त्री का लाभ होता है। और नीचस्थ हो तो नीच कुल की स्त्री प्राप्त होती है।। हे मैत्रेय! शुभ दृष्टियुक्त दारकारक उपपद में हो तो अति रूपवती श्रेष्ठ भार्या प्राप्त होती है।। उपपद में शनि हो या शनि राहु से सम्बन्ध हो या 'दारकारक' रहित होकर शनि राहु से युक्त अथवा दृष्ट हो तो भार्या से सदा विद्वेष रहे अथवा स्त्री की हानि हो या स्त्री का परित्याग करनेवाला हो।। हे मैत्रेय !. उपपद में केतु शनि हों तो उसकी स्त्री को रक्तप्रदर की बीमारी रहे।। यदि उपपद में बुध केतु हों तो उसकी भार्या को 'अस्थिस्राव' (हड्डी का क्षीण होना) की बीमारी हो।। उपपद में सूर्य, राहु तथा शनि का योग हो तो जातक की भार्या अस्थिगत ज्वर रोग वाली होती है, दिनरात शरीर गर्म रहता है।। उपपद में बुध, केतु का योग हो तो स्त्री स्थूल शरीरवाली होती है।। उपपद में बुध की राशि हो या मंगल की राशि हो और शनि मंगल स्थित हो तो प्राणांत कष्ट देनेवाली पित्त की बीमारी होती है।। शनि मंगल अन्यराशि में होकर सम्बन्ध करते हों अथवा शनि उपपद में हो तो कान तथा आंख के रोगवाली होती है।। मंगल, बुध, अन्यस्थान में सम्बन्धित हों, उपपद में गुरुराहु हों तो स्त्री दंतरोगवाली होती है।। उपपद में कन्या राशि हो या अन्य (मिथुन) राशि हो, शनि राहु का योग हो तो भार्या पंगु (एकपाद विकल) होती है।। हे विप्रवर! हमने जो योग (दुर्योग) कहे हैं, उनमें यदि शुभग्रह की दृष्टि अथवा योग हो तो पूर्वोक्त बुरा फल नहीं होता है।। आरूढ लग्न और उपपद से जो सप्तम राशि है, उसमें जो नवांश है, वह और उसमे सप्तम नवांश में यदि पापग्रह हो या पापदृष्ट हो तो भी उक्तयोग भार्या सम्बन्धी फल जानना। शनि, शुक्र तथा बुध ये यदि सप्तम राशि के नवांश में हो तो इन तीन ग्रहों के योग के फल से जातक सन्तान–रहित होता है।। जन्मलग्न, आरूढलग्न तथा उपपद में पुत्र कारक युक्त, गुरु, सूर्य, राहु ये पञ्चमभाव में हो या गुरु, सूर्य स्थित और राहु योग करता हो तो निश्चय ही बहुत पुत्र होते हैं, जातक प्रतापी बलवान तथा विजीय एवं शत्रुओं को जीतनेवाला होता है।। उक्त स्थान में चन्द्रमा हो तो एक पुत्र होता है और सौम्य–पाप दोनों प्रकार के ग्रह हों तो विलम्ब से पुत्र सुख होता है ।।१३-३१।।

उक्तस्थाने कुजश्चांद्रिर्जायते च ह्यपुत्रवान् ।। परपुत्रयुतो वापि सहोढसुतवान् भवेत् ।।३२।।
उक्तस्थाने चौजराशौ बहुपुत्रप्रदो भवेत् ।। मिथुने युग्मराशौ चेत्स्वल्पापत्यो भवेन्नरः ।।३३।।

ग्रहक्रमात्कुक्षिसंज्ञे तदीशं पंचमांशतः ।। सिंहाधीशे रवौ विप्र स्वल्पापत्यो भवेन्नरः ।।३४।।
उपपदे सिंहलग्ने निशानाथयुतेक्षितः ।। स्वल्पप्रजो भवेद्विप्र तथा कन्याप्रजो भवेत् ।।३५।।
सुतभावनवांशाच्च तथापि पुत्रकारकात् ।। यद्वा त्रिंशांशकुंडल्यां पंचमांशात्तदा द्विज ।।३६।।
तदीशाच्चिंतयेद्विप्र संततेर्योगमुत्तमम् ।। एवं सर्वप्रकारेण चिंतनीयं सदा बुधैः ।।३७।। उपपदे
शनी राहुर्भ्रातृस्थौ भ्रातृनाशदौ ।। एकादशे ज्येष्ठभ्रातुस्तृतीये च कनिष्ठकम् ।।३८।।
उपपदैकादश स्थाने तृतीये दानवेज्यके ।। व्यवहितार्थनाशः स्याद्यथा संभवति द्विज ।।३९।।
लग्ने वापि लये वापि दैत्याचार्ययुतेक्षिते ।। व्यवहितांगनाशः स्यान्निर्विशंकं द्विजोत्तम ।।४०।।
तृतीयैकादशे विप्र कुजेज्यबुधचंद्रमाः ।। भ्रातृबाहुल्यता वाच्या प्रतापी बलवत्तरः ।।४१।।
शनेरसंयुते दृष्टे तृतीयैकादशे द्विज ।। कनिष्ठज्येष्ठयोर्नाशं भिन्नस्थे भिन्नभावहृत् ।।४२।।
भ्रातृस्थाने युते सौरौ लाभस्थे वा तृतीयगे ।। स्वस्य माता स्वस्तिमती अन्यन्नश्यति वै द्विज
।।४३।। तृतीयैकादशे केतुर्बाहुल्यं भगिनीसुतम् ।। भ्रातृस्वल्पसुखं तस्य निर्विशंकं द्विजोत्तम
।।४४।। सप्तमे द्वादशे स्थाने सैंहिकेय युतेक्षिते ।। ज्ञानवांश्च भवेद्बालो बहुभाग्ययुतो द्विज
।।४५।। सप्तमेशाद्द्वितीयस्थे पुच्छनाथयुतेक्षिते ।। स्तब्धवाग्जायते बालस्तथा स्खलितवाग्
द्विजः ।।४६।। आरूढे शत्रुभावस्थे पापस्थे शुभवर्जिते ।। शुभसंबंधरहिते चोरो भवति
निश्चितम् ।।४७।। आरूढे वाऽपि सौम्ये तु सर्वदेशाधिपो भवेत् ।। सर्वज्ञस्तत्र जीवः स्यात्कवि-
र्वादी च भार्गवः ।।४८।। आरूढेऽपि पदे वापि धनस्थे शुभखेचरे ।। सर्वद्रव्याधिपो
धीमाञ्जायते द्विजसत्तम ।।४९।। उपपदाद्धनपो यत्र वर्तते तस्य वित्तभे ।। पापखेचरसंयुक्ते
चौरो भवति निश्चितम् ।।५०।।

उक्त स्थान में मंगल, बुध के होने से पुत्रहीन होता है। अथवा दत्तक पुत्र हो या सहोत्थ सुतवान् (भ्राता के पुत्र से पुत्रवाला) होता है।। उक्त स्थान में विषम राशि होने से बहुपुत्रवान् हो। मिथुन या युग्मराशि हो तो जातक कम सन्तानवाला होता है।। पूर्व बताये शरीर के अंगाधिपति ग्रहों में जो कुक्षिसंज्ञक ग्रह हो उसकी राशि के स्वामी के पंचमांश में यदि सिंहाधीश सूर्य हो तो कम सन्तान वाला जातक होता है।। उपपद में सिंहलग्न हो तथा चन्द्रमा युक्त अथवा दृष्ट हो तो केवल एक या दो कन्या होती है।। पंचमभाव के नवांश से तथा पुत्रकारक से तथा त्रिंशांश कुण्डली में पंचमांश के स्वामी से उत्तम संतान का योगायोग देखना चाहिये। इस प्रकार ऊपर कहे गये सर्वप्रकारों से विचार करना चाहिये।। उपपद में शनि, राहु, तृतीय स्थान में हों तो भ्राता की मृत्यु करते हैं। एकादश स्थान मे ज्येष्ठभ्राता की तथा तृतीयस्थान में कनिष्ठ भ्राता की हानि (मृत्यु) करते हैं।। उपपद के एकादश स्थान में या तृतीय में शुक्र हो तो दूर का तथा छिपे हुए (गुप्त) अर्थ भी जैसा सम्भव हो नष्ट होता है।। लग्न में या सप्तम में शुक्र युक्त हो या शुक्र की दृष्टि हो तो गुप्तांग की हानि होती है।। तृतीय तथा एकादश स्थान में मं०, बु० बृ० चन्द्र हों तो भाइयों की संख्या बहुत होती है और जातक प्रतापी और बलवान् होता है।। शनि ग्रह तृतीय तथा एकादश भाव को देखता हो, स्वयं स्थित न हो तो भी बड़े और छोटे भाई का नाश करता है। भिन्न राशि में हों तो भिन्न भाव की ही हानि करता है।। शनैश्चर तृतीय या एकादश भाव में स्थित हो अथवा (भ्रातृस्थान) में हो तो अपनी माता सुखी रहे (जननी स्वस्थ रहे), यदि अन्य माता हो

तो नष्ट हो जावे।। तृतीय एकादश में केतु हो तो भगिनी पुत्रों की बहुलता हो और भाइयों का सुख कम हो यह निश्चय है। सप्तम तथा द्वादश स्थान में राहु युक्त हो या दृष्ट हो तो जातक बड़ा भाग्यशाली और ज्ञानवान् होता है।। सप्तमभाव के स्वामी से द्वितीय भाव में केतु स्थित हो या देखता हो तो जातक गूंगा या तोतला होता है।। आरूढलग्न छठेभाव में पापग्रह युक्त हो और शुभ सम्बन्ध रहित हो तो जातक निश्चय चोर होता है।। आरूढलग्न में बुध हो तो महाराजा होता है। बृहस्पति हो तो सर्वज्ञकल्प और शुक्र हो तो कवि और व्याख्याता होता है।। आरूढलग्न में या धनस्थान में शुभग्रह हो तो बहु धनवान और बुद्धिमान होता है।। उपपद स्थान से द्वितीयस्थान का स्वामी जिस स्थान में स्थित हो उससे दूसरे स्थान में पापग्रह हो तो निश्चय चोर होता है।।३२-५०।।

सप्तमेशाद्द्वितीये च राहुस्थे मूक एव च ।। खलस्थितो यदा विप्र दंतानामधिकं भवेत् ।।५१।। शिखिगावातव्याधिः स्याद्वास्यादस्फुटोक्तिवान् ।। तत्र नानाग्रहैर्योगे सिद्धं फलमुदाहरेत् ।।५२।। सप्तमेशाद्द्वितीये च छायासूनुयुते द्विज ।। गौरः श्यामो नीलपीतो जायते बुद्धिमान्नरः ।।५३।। अमात्यानुचराद्विप्र देवभक्तिं विचिंतयेत् ।। नीचत्वादेव नीचत्वं शुभपापाच्छुभाशुभम् ।।५४।। कारकांशे पापखगैः पापांशे पापयोगकृत् ।। पापवर्गे शुभैर्हीने जायते परजातवान् ।।५५।। कारकांशे भवेत्पापो न ज्ञेयः परजातकः ।। अन्येषां पापखेटानां योगं घटत्वमाप्नुयात् ।।५६।। अथवा रंध्रभे पापे नायं योगो विचिंत्यते ।। शनिराहुयुतौ यत्र शनिराह्वोः क्षेत्रके द्विज ।।५७।। परजातः प्रसिद्धोस्ति ह्यन्येभ्यो गुप्त एव च ।। शुभवर्गे यदा खेटो वर्गोक्तानां यथा द्विज ।।५८।। जारजः कथनमात्रे न तु जारज इत्यपि ।। यत्र कुत्रापि स्वोच्चे द्वौ कुलमुख्यो भवेन्नरः ।।५९।।आदिषट्कं च पर्यन्ता ग्रहाः सौख्यं विचिंतयेत् ।। सारं सारमहं वक्ष्ये तवाग्रे द्विजसत्तम ।।६०।।

इति श्रीबृहत्पाराशरहोराशास्त्रेपूर्वखंडे कारकमारकादिविचारकथनं नाम द्वादशोऽध्यायः ।।१२।।

सप्तमेश से द्वितीयभाव में राहु हो तो गूंगा होता है।। पापग्रहस्थित हो तो दाँत अधिक होते हैं।। केतु स्थित हो तो वातव्याधि हो अथवा तोतली बोलीवाला हो और अनेक ग्रह हों तो उन उन ग्रहों का भी फल जानना।। सप्तमेश से द्वितीय स्थान में यदि राहु हो तो मिश्रित वर्ण और बुद्धिमान् होता है।। भातृकारक से देवभक्ति का विचार करे। नीच होने से भक्ति की हीनता और शुभपाप दोनों प्रकार के मिश्रित योग होने से मिश्रित शुभाशुभ फल होतां है।। कारकांश लग्न में पापग्रह हों, पापनवांश में पापग्रहों का ही योग हो तथा पापग्रहों के ही वर्ग हों तो जारज होता है।। कारकांश में केवल पापग्रह के योग से ही जारज नहीं होता, अन्य पाप ग्रहों का योग भी होना चाहिये।। अथवा अष्टमभाव में पापग्रह होने से भी इसका निश्चय नही किंतु शनि राहु के क्षेत्र (राशि) में शनि राहु भी हों तो जारजरूप से दूसरे लोगों में प्रसिद्ध रहता है।। शुभग्रहों के वर्ग में वर्गोक्त ग्रह हों तो कहने मात्र का जारज है, वास्तव में नहीं है, जहां कहीं किसी भी राशि आदि में दो ग्रह उच्च के हों तो जातक कुल में मुख्य होता है।। इस प्रकार आदि के छः भावों के फल कहे।। हे मैत्रेय ! हम तुमको सार सार ही कहते हैं।। उपपद फल समाप्त ।।५१-६०।।

इति बृ० पा० हो० शा० पूर्वखंडे भावप्रकाशिकायां उपपदफलकथनं नाम द्वादशोध्यायः ।।१२।।

अथ कारकमारकादिविचारमाह

पंचमं नवमं चैव विशेषधनमुच्यते ।। चतुर्थं दशमं चैव विशेषं सुखमुच्यते ।।१।। चंद्रभानू बिना सर्वे मारके मारकाधिपाः ।। षष्ठाष्टमव्ययेशास्तु राहुः केतुस्तथैव च ।।२।। केंद्राधिपतयः सौम्याः शुभं नैव दिशंति च ।। क्रूरा नैवाशुभं कुर्युः कोणपौ शुभदायकौ ।।३।। धनेशो हि व्यये शश्च संयोगात्फलदौ मतौ ।। लाभारि अधिपाः पापा रंध्रेशो न शुभप्रदः ।।४।। जायाकुटुंबका-धीशौ मारकौ परिकीर्त्तितौ।। क्रूराः केंद्राधिपा भूपात्क्षीणचंद्रो रविस्तथा ।।५।। शनिर्भौमश्च विज्ञेयाः प्रबला ह्युत्तरोत्तराः ।। लग्नांबुद्यूनकर्माणि प्रबलान्युत्तराणि हि ।।६।। सुतधर्मौ तथा स्थानौ प्रबलौ चोत्तरोत्तरौ ।। लाभारित्रितयस्थाने त्वधोधः प्रबलं भवेत् ।।७।। पुनर्मारकयोर्मध्ये ह्युत्तरं प्रबलं मतम् ।। भाग्यस्थानाद्व्ययं रंध्रं तस्माच्चैवाशुभं वदेत् ।।८।। एतत्स्थानानुसारेण ग्रहाणां मानमालिखेत् ।। चंद्रचांद्री गुरुसितौ केन्द्रदोषो यथोत्तरम् ।।९।। तथैव च ग्रहाः क्रूरा बलं चैवोत्तरोत्तरम् ।। भाग्येशः सर्वदा सौम्यो न क्रूर फलदायकः ।।१०।। पुत्राधिपोऽपि शुभदःक्रूरोपि सुखदःस्मृतः ।। त्रिलाभरिपुमृत्यूनां पतयो दुःखदायकाः ।।११।। शुभोपि शुभदो नैव दशायामशुभस्तथा ।। अष्टमाधिपतिर्दोषस्तुला मेषे न हि क्वचित्।।अलौ षष्ठाष्टदोषो न वृषभोपि न दोषभाक् ।।१२।। यद्यद्भावगतो राहुः केतुश्च जनने नृणाम् ।। यद्यद्भावेशसंयुक्तस्त त्फलं प्रदिशेदलम् ।।१३।।

कारक–मारक विचार

भावाधिपतित्व से कारक मारक के विशेष नियम

पंचम और नवमभाव विशेष धनभाव हैं। चतुर्थ और दशम विशेष सुखभाव हैं।। सूर्यचन्द्र को छोड़कर बाकी ग्रह मारकाधिपति होकर 'मारक' होते हैं। ६।८।१२ ये स्थान और राहु, केतु तथा केन्द्राधिपति सौम्यग्रह ये शुभफल नहीं करते और केन्द्राधिपति क्रूरग्रह पापफल नहीं देते ।। तथा ५।९ के स्वामी शुभफल दाता होते हैं।। द्वितीय और द्वादशेश अन्यग्रह के साथ होकर फलदाता होते हैं। लाभ, शत्रुभाव के स्वामी, पापग्रह और अष्टमेश ये शुभफल दायक नहीं होते।। द्वितीय, सप्तम के स्वामी मारक कहलाते हैं। केन्द्राधिपति पापग्रह, राज्येश, क्षीणचन्द्र, सूर्य शनि और मंगल ये उत्तरोत्तर प्रबल हैं। लग्न, चतुर्थ, सप्तम, दशम ये उत्तरोत्तर बलवान् हैं।। पंचम और नवम ये उत्तरोत्तर बलवान् हैं। लाभ शत्रु, तथा तृतीय प्रथम प्रथम बलवान् है। दो मारकों में दूसरा मारक द्वितीयेश बलवान् है। भाग्यस्थान बारहवां स्थान जो अष्टमभाव है उससे अशुभ फल का विचार करना।। इन स्थानों के अनुसार ग्रहों का बलाबल जानना। केन्द्राधिपतित्व दोष क्रमशः चन्द्र, बुध, गुरु, शुक्र में उत्तरोत्तर विशेष है।। इसी प्रकार क्रूर ग्रहों में भी उत्तरोत्तर अधिक बल है। भाग्येश सदा ही श्रेष्ठ है। कभी भी पाप फलदायक नहीं होता।। पञ्चमेश भी क्रूरग्रह होने पर भी शुभ फलदायक ही होता है। ३।११।६।८ इन स्थानों के स्वामी पाप फलदाता (दुःखदाता) होते हैं।। शुभग्रह भी शुभदाता नहीं होता, अपनी दशा में अशुभ फल देता है। अष्टमादिपतित्व दोष तुला और वृष राशि में नहीं होता। वृश्चिक में षष्ठाष्ट दोष नही होता। तथा वृष में भी षष्ठाष्ट दोष नहीं होता।। राहु, केतु, जिस जिस भाव में हों और जिस जिस भावेश से युक्त हों. वैसा ही उनका फल कहना चाहिये।। कारक मारक विचार समाप्त ।।१–१३।।

अथ मेषलग्नम्

मंदसौम्यसिताः पापाः शुभौ गुरुदिवाकरौ ।। न शुंभ योगमात्रेण प्रभवेच्छनिजीवयोः ।।१४।।
परतंत्रेण जीवस्य पापकर्मापि निश्चितम् ।। कविः साक्षान्निहंता स्यान्मारकत्वेन लक्षितः ।।१५।।
मंदादयो निहंतारो भवेयुः पापिनो ग्रहाः ।। शुभाशुभफलान्येवं ज्ञातव्यानि क्रियोद्भवैः ।।१६।।

द्वादशराशि कारक मारक निर्णय

मेष लग्न–शनि, बुध, शुक्र पापफलप्रद हैं। गुरु, सूर्य शुभ हैं। शनि और गुरु के कारक योग मात्र से शुभ फल नहीं हो सकता क्योंकि–(शनि के लाभेश होने) गुरु के व्ययेश होने से पाप भी हो गया है। शुक्र साक्षात् मारक है, २-७ स्वामीका होने से शनि आदि भी (मारक के सम्बन्ध से) मारनेवाले होते हैं। मेष जन्म वाले के ये शुभाशुभ ग्रह कहे ।।१४–१६।।

अथ वृषलग्नम्

जीवशुक्रेंदवः पापाः शुभौ शनिदिवाकरौ ।। राजयोगकरः साक्षादेक एव रवेः सुतः ।।१७।।
जीवादयो ग्रहाः पापा संति मारकलक्षणाः ।। बुधस्तत्र फलान्येवं ज्ञेयानि वृषजन्मनः ।।१८।।

वृष लग्न–गुरु, शुक्र, चन्द्रमा पापफलप्रद और शनि सूर्य शुभ हैं। एक शनि ही राजयोग कारक है।बुध,गुरु,पापी और मारक हैं। वृष लग्न में जन्मवाले के ये फल हैं।।१७।।१८।।

अथ मिथुनलग्नम्

भौमजीवारुणाः पापा एक एव कविः शुभः ।। शनैश्चरेण जीवस्य योगो मेषभवो यथा ।।१९।। नायं शशी निहंता स्याल्लक्षणं पापनिष्फलम् ।। ज्ञातव्यानि द्वंद्वजस्य फलान्येतानि सूरिभिः ।।२०।।

मिथुन लग्न–मंगल, गुरु, सूर्य पापफलप्रद हैं। केवल एक शुक्र ही शुभ है। गुरु, शनिका योग मेषलग्न के समान जानना। द्वितीयेश होने से चन्द्रमा मारक नहीं होता, इसका मारकत्व निष्फल है। मिथुन लग्न वाले के ये फल जानना।।१९।।२०।।

अथ कर्क लग्नम्

भार्गवेंदुसुतौ पापौ भूसुतांगिरसौ शुभौ ।। एक एव ग्रहः साक्षाद्भूसुतो योगकारकः ।।२१।। निहंता रविजोऽन्ये तु मानिनो मारकाह्वयाः ।। कुलीरसंभवस्यैव फलान्युक्तानि सूरिभिः ।।२२।।

अथ सिंहलग्नम्

बुध शुक्र यमाः पापाःकुजेज्यार्काः शुभावहाः ।। प्रभवेद्योगमात्रेण न शुभं गुरुशुक्रयोः ।।२३।। घ्नंति शन्यादयः पापा मारकत्वेन लक्षिताः ।। एवं फलानि वेद्यानि सिंहे यस्य जनुर्भवेत् ।।२४।।

अथ कन्यालग्नम्

कुजजीवेंदवः पापा एक एव भृगुः शुभः ।। भार्गवेंदुसुतावेव भवेतां योगकारकौ ।।२५।। निहंता कविरन्ये तु मारकास्तु कुजादयः ।। प्रतीक्षेत् फलान्युक्तान्येवं कन्याभवे बुधैः ।।२६।।

कर्क लग्न–शुक्र, चन्द्रमा पापफलप्रद हैं। मंगल, शनि शुभ हैं। एक मंगल ही योगकारक है। शनि मारक है। अन्य सूर्य, बुध, गुरु मध्यम हैं। कर्क लग्न वाले के ये फल मुनियों ने कहे हैं।।२१।।२२।।

सिंह लग्न–बुध शुक्र शनि पापफलदाता और मंगल, गुरु, सूर्य, शुभफलप्रद हैं। गुरु शुक्र का सम्बन्ध (केन्द्र त्रिकोण योग होने पर भी) शुभ नहीं है। मारकलक्षण युक्त शनि बुध मारक हैं। यह सिंह जन्म का फल है।।२३।।२४।।

कन्या लग्न–चन्द्रमा, मंगल, गुरु, पापफलप्रद हैं। केवल एक शुक्र शुभ है। शुक्र और बुध योगकारक हैं। शुक्र निहन्ता है, अन्य मंगल, शनि, मारक हैं। (सूर्य मध्यम है) कन्या लग्न वाले के ये फल हैं।।२५।।२६।।

अथ तुलालग्नम्

जीवार्कमहिजाःपापाः शनैश्चरबुधौ शुभौ ।। भवेतां राजयोगस्य कारकौ चंद्रतत्सुतौ ।।२७।। कुजो निहंति जीवाद्याः परेमारकलक्षणाः ।। निहंतारःफलान्येवं काव्यो न तु तुला भवः ।।२८।।

अथ वृश्चिक लग्नम्

सौम्यभौमाः सिताःपापाःशुभौ गुरुनिशाकरौ ।। सूर्यचंद्रमसावेवं भवेतां योगकारकौ ।।२९।। जीवो निहंता सौम्याद्या हंतारो मारकाह्वयाः ।। तत्तत्फलानि विज्ञेयान्येवं वृश्चिकजन्मनः ।।३०।।

अथ धनुर्लग्नम्

एक एव कविः पापः शुभौ सौम्यदिवाकरौ ।। योगो भास्करसौम्याभ्यां । निहंता भास्वतः सुतः ।।३१।। घ्नंति शुक्रादयः पापा मारकत्वेन लक्षिताः ।। ज्ञातव्यानि फलान्येवं चापजस्य मनीषिभिः ।।३२।।

तुलालग्न–सूर्य, मंगल, गुरु पापफलदाता हैं। शनैश्चर, बुध शुभ हैं। चन्द्रमा, बुध, राजयोग कारक हैं। मंगल निहन्ता (मृत्युकारक) है। बाकी गुरु, शुक्र भी मारक हैं। तुला लग्नवाले के ये फल कहे गये हैं।।२७।।२८।।

वृश्चिक लग्न–मंगल, बुध, शुक्र, पापफलदाता हैं। चन्द्रमा, गुरु शुभ हैं। सूर्य, चन्द्रमा, राजयोग कारक हैं। गुरु मृत्युकारक है। बुध, शनि मारक के समान हैं। वृश्चिक जन्मवाले के ये फल जानना।।२९।।३०।।

धनुलग्न–शुक्र यह एक ही पूर्ण फलदाता है। सूर्य, बुध शुभ हैं। सूर्य, बुध, राजयोग कारक हैं। शनि मृत्युकारक है। शुक्र आदि मारक के समान हैं। यह फल धनु लग्न का

जानना।।३१।।३२।।

अथ मकरलग्नम्

कुजजीवेंदवः पापाः शुभौ भार्गवचन्द्रजौ ।। स्वयं चैव निहन्ता स्यान्मंदो भौमादयः परे ।।३३।। तल्लक्षणानि हंतारः कविरेकः सुयोगकृत् ।। ज्ञातव्यानि फलान्येवं विबुधैर्मृगजन्मनः ।।३४।।

अथ कुंभलग्नम्

जीवचंद्रकुजाः पापा एको दैत्यगुरुःशुभः ।। राजयोगकरो भौमः कविश्चैव बृहस्पतिः ।।३५।। निहंता घ्नंति भौमाद्या मारकत्वेन लक्षिताः ।। एवमेव फलान्यूह्यान्येतानि घटजन्मनः ।।३६।।

अथ मीनलग्नम्

मंदशुक्रांशुमत्सौम्या पापा भौमविधू शुभौ ।। महीसुतगुर्वोर्योगे–कारकोनैव भूसुतः ।।३७।। मारकान्कारकान्वीक्ष्य मंदज्ञौ चैव मारकौ ।। इत्यूह्यानि फलान्येवं बुधैस्तु झषजन्मनः ।।३८।। एतच्छास्त्रानुसारेण मारकान्निर्दिशेद्बुधः ।। चंद्रसूर्यौ विना सर्वे मारकाः परिकीर्तिताः ।।३९।। स्वदशायां स्वभुक्तौ च नराणां निधनं नहि ।। क्वचिद्दशायामिच्छंति स्वभुक्तौ न कदाचन ।।४०।।

इति श्रीवृहत्पाराशरहोराशास्त्रेपूर्वखंडे कारकमारकादिविचारकथनं नाम त्रयोदशोऽध्यायः ।।१३।।

मकर लग्न–चन्द्रमा, मंगल, गुरु पापफल दाता हैं। बुध, शुक्र शुभ हैं। शनि स्वयं मृत्युकारक है। शुक्र एक ही राजयोगकारक है। मंगल आदि बाकी मारक के समान हैं। यह फल मकरलग्न वाले का कहा गया है।।३३।।३४।।

कुम्भ लग्न–चन्द्र, मंगल, गुरु, पापफलप्रद हैं। एक शुक्र शुभ हैं। मंगल, शुक्र राजयोगकारक हैं। बृहस्पति मृत्युयोग कारक है। मंगल और बाकी ग्रह मारक के समान हैं। यह फल कुंभ लग्नवाले के जानना।।३५।।३६।।

मीन लग्न–शनि, शुक्र, सूर्य और बुध पापफलदाता हैं। मंगल, चन्द्रमा, शुभ हैं। मंगल, गुरु राजयोगकारक हैं। मंगल, मृत्युकारक नहीं है। शनि, बुध, सम्वन्ध से मारक हैं। मीन लग्न वाले के ये फल कहे गये हैं।।३७।।३८।।

इस होराशास्त्र के अनुसार मारकों का विचार (तथा कारकों का भी विचार) करे। चन्द्रमा और सूर्य के बिना और ग्रह मृत्युकारक होते हैं।। किसी भी मारक की दशा तथा उसके ही अन्तर में 'मृत्यु' नहीं होती है। मारक की दशा में तो मृत्यु होती है, पर अन्तर में नहीं।।३९।।४०।।

इति श्रीवृहत्पाराशरहोराशास्त्रे पूर्वखंडे भावप्रकाशिकायां विचारकथनं नाम त्रयोदशोऽध्यायः ।।१३।।

अथ द्वादशभावनिरीक्षणमाह

तनो रूपं च ज्ञानं च वर्णं चैव बलाबलम् ।। शीलं वै प्रकृतिं चाथ तनुत्थानान्निरीक्षयेत् ।।१।। धनस्यापि कुटुंबस्य मृत्युजालममित्रकम् ।। धातुरत्नादिकं सर्वं धनस्थानान्निरीक्षयेत् ।।२।। विक्रमं भृत्यभ्रात्रादि चोपदेशप्रयाणकम् ।। पित्रोर्वै मरणं विद्याद्दुश्चिक्याच्च निरीक्षयेत् ।।३।। वाहनस्याथ बंधूनां मातृसौख्यादिकानपि ।। निधिक्षेत्रगृहं चापि हर्म्यारामादिकानपि ।।४।। धर्मस्य विमलस्थानं पातालाच्च निरीक्षयेत् ।। यंत्रमंत्रौ तथा विद्या बुद्धेश्चैव प्रबंधकाः पुत्रराज्यापभ्रंशादि पश्येत्पुत्रालयाद्बुधः ।।५।। मातुलांतकशंकानां शत्रूंश्चैव व्रणादिकन् ।। सपत्नीमातरश्चापि ह्यरिस्थानान्निरीक्षयेत् ।।६।। जाया मध्यप्रयाणं च व्ययभावं तथा निशि ।। मरणं च स्वदेहस्य जायाभावान्निरीक्षयेत् ।।७।। ऋणदानग्रहणयोर्गुदे चैवांकुरादयः ।। गत्यनुक्तादिकं सर्वं पश्येद्रंध्राद्विचक्षणः ।।८।। हर्म्यं धर्मं च श्यालं च भ्रातृपत्न्यादिकांस्तथा ।। तीर्थयात्रादिकं सर्वं धर्मस्थानान्निरीक्षयेत् ।।९।। राज्यं चाकाशवृत्तिं च मानं चैव पितुस्तथा ।। प्रवासस्य ऋणस्यापि व्योमस्थानान्निरीक्षणम् ।।१०।। नानावस्तुभवस्यापि पुत्रजायादिकस्य च ।। रिपूणां रिपवश्चैव भवस्थानान्निरीक्षणम् ।।११।। व्ययं च वैरिवृत्तांतं रिःफमंत्यादिकं तथा ।। एवं भावफलं सम्यक् तत्तत्संज्ञान पूर्वकम् ।।१२।। व्ययाच्चैव हि ज्ञातव्य वेत्ति सर्वत्र बुद्धिमान् ।। यो यो भावपतिर्नष्टस्त्रिकेशाद्यैश्च संयुतः ।। भावं न वीक्षते सम्यग्ग्रहो वापि मृतो यदा ।।१३।। स्थविरो वा भवेत्खेटः सुप्तो वापि प्रपीडितः ।। तदा तद्भावजं सौख्यं नष्टं ब्रूयाद्विशंकितः ।।१४।।यदा सौम्यग्रहैर्दृष्टो भावो भावेशसौम्ययुक् ।। युवा प्रबुद्धराजस्थः कुमारो वापि तद्भवेत् ।।१५।। ईशेक्षणवशात्तत्र भावसौख्यं वदेद् बुधः ।। शुक्रः शुक्रश्च नेत्रं च चंद्रमा मनसस्तथा ।।१६।। आत्मा वै दिनकृत्तत्र जीवो जीवितसौख्यकम् ।। क्रोधः पराक्रमो भौमो बुधो बालत्वधीमतः ।।१७।। शनिर्दुःखप्रदानाच्च प्रपदः पार्श्वकस्तथा ।।१८।।राहुरैश्वर्यकं विद्धि मुखनाभिपदस्तलः ।। शिरो नेत्रे तथा कर्णे नासा चापि कपोलकौ ।।१९।। हनू मुखं तथा वाच्यं कंठांसौ बाहुकौ तथा ।। पार्श्वे बाहुद्वये चैव क्रोडे नाभौ तथैव च ।।२०।। बस्तिलिंगगुदे वृष्णावूरू जानू च जंघके ।। पेदति चैव सर्वांगे संस्थां ब्रूयुर्विचक्षणाः ।।२१।। लग्ने तत्कालद्रेष्काणे शिरादिः परिकल्पयेत् ।। तस्माद्यस्मिन्स्थितः खेटस्तत्र चिह्नं स्फुटं वदेत् ।।२२।। एवं भेदानुभेदेन सर्वत्रैवोपलक्षयेत् ।। संक्षेपेणैतदुदितमन्यद्बुद्ध्यनुसारतः ।।२३।।

द्वादशभावनिरीक्षण

लग्न से विचारणीय– शरीर का रूप, ज्ञान, वर्ण, बलाबल, चरित्र और प्रकृति ये बातें लग्न से विचारना चाहिये।।

द्वितीय भाव से–द्रव्य कुटुम्ब (परिवार) मृत्यु, कष्ट, शत्रु, सोना, चांदी आदि धातु ये सब धनस्थान से विचारना चाहिये।।

तृतीयभाव से–बल, भ्राता, नौकर, परदेशयात्रा, माता पिता की मृत्यु ये तृतीय भाव से विचारना चाहिये।।

चतुर्थ भाव से–सवारी, बन्धुसुख, माता का सुख, खजाना, मकान, भूमि, खेत, बगीचा, मन्दिर, (देवस्थान) ये सब चतुर्थ से विचारना चाहिये।।

पंचम भाव से–यन्त्र, मन्त्र, विद्या, बुद्धि के सहायक, पुत्र, राज्य, हानि ये सब विचार पञ्चम भाव से करना चाहिये।।

छठे भाव से–मामा की मृत्यु तथा कष्ट आदि, शत्रु, व्रण, (फोड़ा, फुन्सी, दाद, खाज आदि) सपत्नी, सास आदि विचारना।।

सप्तमभाव से–भार्या, साधारण यात्रा, खर्च, अपना मरण, ये सब सप्तमभाव से विचारना चाहिये।।

अष्टमभाव से–कर्ज लेना या देना, गुदा का रोग (बवासीर आदि) गति (यात्रा) आदि आदि विचार अष्टमभाव से करना।।

नमवभाव से–मकान, धर्मकार्य, साले (पत्नीभ्राता) भाइयों की स्त्रियां, तीर्थयात्रा में यह सब नवमभाव से विचार करें।।

दशमभाव से–राज्य से सम्बन्ध, अस्थिर वृत्ति, सन्मान, पिता का सुख, परदेश का रहना, ऋण इनका विचार दशमभाव से करे।।

एकादश भाव से–अनेक प्रकार की वस्तुओं का विचार, पुत्र, स्त्री आदि परिवार का विचार, शत्रुओं का विचार एकादशस्थान से विचारे।।

द्वादशभाव से–अनेक प्रकार के खर्च, शत्रुओं के भेद विचार करे।

इस प्रकार ऊपर बताये गये विचार अपने भावों से करे।।

वारहवें भाव का जानने का विचार भी बुद्धिमान् को जान लेना चाहिये। जिस जिस भाव का स्वामी त्रिकस्थान ३।६।११ के स्वामी से संयुक्त हो तथा अपने स्थान को नहीं देखता हो और अवस्था विचार से मृत अवस्था में हो । अथवा वृद्ध, सुप्त या प्रपीड़ित (पापाक्रान्त) हो तो निःशंक भाव से उस भाव से प्राप्त होनेवाला सुख नहीं है, यह कहना।। तथा जो भाव अपने स्वामी से युक्त वा दृष्ट हो या सौम्यग्रहों से युक्त या दृष्ट हो, अवस्था में युवा या कुमार अवस्था में प्रबुद्ध हो, दशमभाव में स्थित (भावेश) हो तो उस भाव का सुख पूर्ण प्राप्त होता है। शुक्र वीर्य का स्वामी है और नेत्र इन्द्रिय का भी स्वामी है।। चन्द्रमा मन का स्वामी है।। सूर्य आत्मा है। बृहस्पति जीवन और सुख का स्वामी है। मंगल क्रोध और पराक्रम का तथा बुध वाल्य अवस्था तथा बुद्धि का स्वामी है।। शनि दुःखदाता और नौकर तथा पड़ोसी का और राहु ऐश्वर्य का स्वामी है।

ग्रहों के अंग (विभाग)—

सूर्य–मुख, शिर, नेत्र, कान, नाभि, पैर, तल ।। चन्द्रमा–नासिका और कपोल।। मंगल–हनू (ठोडी) मुख। बुध–कंठ, कंधे, बाहू। गुरु–पार्श्व (पसली) दोनों हाथ। शुक्र–क्रोड (गोदी) नाभि।। शनि–वस्ति (पेडू) लिंग, गुदा, वृषण (अंडकोश), राहु–ऊरू (ऊपर की आधी जंघा) जानू (घुटना) जंघा, पैर। इस प्रकार से ग्रहों की सिर से पैर तक के अंगों में स्थिति है।। इसी प्रकार से लग्न में तथा तात्कालिक द्रेष्काण में शिर आदि अंगों की कल्पना करे। और जिस भाव में शुभ या क्रूर जैसा ग्रह हो उसके अनुसार वैसा चिह्न उस अंग में कहे।। इस तरह **भेदप्रभेद से सभी स्थलों में अपनी बुद्धि से भी कल्पना करे। हमने यह संक्षेप से कहा है।। १-२३।।**

अथ प्रथमभावफलम्

देहाधिपः पापयुतोऽष्टमस्थो व्ययरिगो वांगसुखं निहन्ति ।। सर्वत्र भावेषु च योजनीयमेवं बुधैर्भावशात्फलं हि ।।२४।। एवं तृतीयेपि च सप्तमेपि फलं विमृश्यं कृतिभिः प्रयत्नात् ।। तथा व्यये मित्रगृहे रिपौ मृते स्थिते विलग्नाधिपतौ फलं स्यात् ।।२५।। पापो विलग्नाधिपतिर्विलग्ने चंद्रे विलग्ने यदि बालकः स्यात् ।। तदाऽतिरोगं स हि केंद्रसंस्थत्रिकोणलाभेषु गदं निहंति ।।२६।। बलोनतामेव तु पापवत्तामेतस्य वित्तं फलमानुरुप्यताम् ।। नीचारिसूर्यस्य गृहेषु तिष्ठन् स्वर्क्षादिकृक्षादिगृहत्रये च ।।२७।। देहाधिपश्चंद्रगृहाधिपो वा तृतीयरिः फारिगतोऽबलः स्यात् ।। नीचास्तगद्व्यष्टगृहे स्थितो वा कार्श्यं शरीरेऽतिगदं करोति ।।२८।। लग्नाधिपो वा जीवो वा शुक्रो वा यदि केंद्रगः। तस्य पुत्रस्य दीर्घायुर्धनवान्राजवल्लभः।।२९।। लग्नाधिपोन्नतबलैश्च शुभैर्नवकेन दृष्टस्य ।। केंद्रस्थिते शुभावलोक्ये मृत्युहीनेऽपि दीर्घायुः ।।३०।। केन्द्रत्रिकोणेषु न यस्य पापा लग्नाधिपो सुरगुरुश्चतुरष्टमस्थः ।। भुक्त्वा सुखानि विविधानि च पुण्यकर्मा जीवेत्तु वर्षशतमेव विमुक्तरोगः ।।३१।। लग्नेशे चरराशिस्थे शुभग्रहनिरीक्षिते ।। कीर्तिश्रीमान्महा–भोगी देहपुष्टिसमन्वितः ।।३२।। जीवः शुक्रो बुधश्चंद्रो लग्ने शशिसमन्वितः ।। लग्नात्केंद्रगतश्चैव राजलक्षणसंयुतः ।।३३।। लग्ने राहुसमायुक्ते तथा सोमनिरीक्षिते ।। लग्नांशे मंदसूरी चेज्जातश्च यमलो भवेत् ।।३४।। जातो नरो बालविवेष्टितांगो लग्ने फणिर्मन्दसमन्वितश्च ।। लग्ने च पार्श्वे द्वितये च पापै र्निरीक्षिते जीवबुधेंदुशुक्रैः ।।३५।। रविचंद्रौ च ह्येकस्थावेकांशकसमन्वितौ ।। त्रिमात्रा च त्रिभिर्मासैभ्रात्रा पित्रा च पोषितः ।।३६।।

प्रथम भावफल

देह (लग्न) का स्वामी ६।८।१२ भाव में हो देह की आरोग्यता का सुख नहीं। इस योग को (६।८।१२ भावस्थिति को) १२ भावों में समझ लेना, यह भाव से फलकथन है।। इसी तरह तृतीयभाव तथा सप्तमभाव में भी फल का विचार करना। और ६।८।१२ में यदि मित्र राशि में भावेश हो, तो भी यही फल कहना।। यदि लग्न का स्वामी पापग्रह हो और लग्न में ही चन्द्र तथा लग्नेश हो तो जातक अतिरोगी रहे। और यदि लग्नेश केन्द्र, त्रिकोण या लाभस्थान में हो तो निरोग रहे।। इस लग्नेश की बलहीनता एवं पाप शीलता देखकर अनुरूप फल का निर्देश करना। अथवा नीचराशि के या शत्रुक्षेत्री सूर्य के घर में हो या स्वराशि से तीन घरों में हो तो अनुरूप फल कहना।। लग्नेश या चन्द्रराशिपति तीसरे, छठे, बारहवें स्थान में हो तो निर्बल होता है।। नीचराशि में या अस्त का हो अथवा दूसरे, आठवें घर में हो तो जातक के शरीर में कृशता और बीमारी करता है।। जिसके जन्मलग्न में लग्नेश या, गुरु, शुक्र केन्द्रस्थान में हों उसके पुत्र की आयु बड़ी होती है और धनवान् तथा राजमान्य होता है।। लग्नेश यदि बलवान् शुभग्रहों से दृष्ट होकर केन्द्र में स्थित हो तो(**नवकेन दृष्टस्य अष्टमेशेन दृष्टस्य । कटपयादि अंकाः**)अष्टमेश से दृष्ट होने पर भी मृत्यु न होकर दीर्घायु होता है।। जिस जातक के केन्द्र और त्रिकोण में पापग्रह न हों तथा लग्नेश और गुरु चतुर्थ और अष्टमस्थान में हों तो वह जातक अनेक सुख भोगता हुआ नीरोगी होकर पुण्यकार्य करता है।। लग्न का स्वामी चरराशि में शुभग्रह से दृष्ट हो तो नीरोगी, भोगी, कीर्तिवान तथा धनवान होता है।। चन्द्रमा, बुध,

गुरु, शुक्र ये चारों शुभग्रह केन्द्र में हों तथा इनमें से किसी एक या दो के साथ चन्द्रमा लग्न में हो तो राजा के समान होता है।। लग्न में राहु हो, चन्द्रमा देखता हो, लग्ननवांश में शनि गुरु हो तो जातक यमल (जोड़ा) होता है।। लग्न में राहु, शनि हो और लग्न तथा पास की २ राशियों (२।१२) को पापग्रह तथा बु० गु० शु० देखते हों तो बालक नालवेष्टित होता है।। सूर्य, शुक्र एक घर में हो तथा एक ही नवांश में हों तो तीन महीने तक ३ माताओं द्वारा पालन हो या भाई, पिता पालन करे ।।२४–३६।। प्रथमभावफल समाप्त।।

अथ द्वितीयभावफलम्

शुक्रेण युक्तो यदि नेत्रनाथः शुक्रस्य वार्क्षादिग्रहत्रयस्य ।। संबंधवान्स्याद्यदि देहपेन नेत्रं विधत्ते विपरीतभावम् ।।३७।। तत्र स्थितौ चंद्ररवी निशांध्यं जात्यंधतां नेत्रपदेहपार्कौः ।। पैत्रर्क्षनाथेन युतास्तदांध्यं कुर्वन्ति मात्रग्दिफलं तथेदृक् ।।३८।। दोषकृन्न च सर्वत्र स्वोच्चस्वर्क्षगतो ग्रहः ।। षडादित्रयसंस्थैश्चेत्तद्विना दोषकृच्छुभः ।।३९।। वागीशवाग्गृहाधीशौ षडादित्रयसंस्थितौ ।। मूकतां कुरुतोऽप्येवं पितृमातृगृहाधिपाः ।।४०।। वागीशवाग्गृहाधीशा युतास्ते त्रयसंस्थिताः ।। कुर्वंति तेषां मूकत्वमेवमूह्यं मनीषिभिः ।।४१।। कुटुंबकारकाः केन्द्रत्रिकोणेषु गता ग्रहाः सकुटुंबकलत्रेशा कलत्रं वा कुटुम्बकम् ।।४२।। पश्यंति च द्वयस्था वा यावत्तावत्प्रमाणकम् ।। कलत्रं निर्दिशेत्प्राज्ञोऽथवा तेषां च नो वदेत् ।।४३।। विद्याधिपौ जीवबुधाववियामरित्रयस्थौ कुरुतोऽथ तौ चेत् ।। केंद्रत्रिकोणस्थगृहोच्चसंस्थौ प्रयच्छतां द्रागनवद्यविद्याम् ।।४४।। एवं बुधस्यांगिरसः षडादित्रय स्थितौ नीचग्रहोऽरिनाथः ।। केंद्रत्रिकोणस्थगृहोच्चसंस्थौ धनाभिवृद्धिं कुरुतस्तदैव ।।४५।। धनाधिपो गुरुर्यस्य धनराशिस्थितो यदि ।। भौमेन सहितो वापि धनवान् स नरो भवेत् ।।४६।। धनेशे लाभराशिस्थे लाभेशे वा धनं गते ।। तावुभौ केंद्रराशिस्थौ धनवान्स नरो भवेत् ।।४७।। धनेशे केंद्रराशिस्थे लाभेशे तत्त्रिकोणगे ।। गुरुशुक्रयुते दृष्टे धनलाभमुदीरयेत् ।।४८।। वित्तेशे रिपुभावस्थे लाभेशे तद्गते यदि ।। वित्तलाभौ पापयुक्तौ दृष्टे निर्धन एव सः ।।४९।। वित्तलाभाधिपौ द्विस्थैः पापखेचरसंयुतैः ।। जन्मप्रभृतिदारिद्र्यं भिक्षान्नं लभते नरः ।।५०।। षष्ठाष्टमव्ययस्थेषु धनलाभाधिपौ स्थितौ । लाभे कुजे धने राहौ राजदंडाद्धनक्षयः ।।५१।। लाभे जीवे धने शुक्रे तदीशे शुभसंयुते ।। व्यये शुभग्रहयुते धर्ममूलाद्धनव्ययः ।।५२।। कुटुंबराशेरधिपः स सौम्ये केंद्रेऽथ सौम्ये च सुहृद्गृही वा ।। सौम्यर्क्षयुक्तो यदि जातपुण्यः कुटुंबसंरक्षणवाग्विभूतः ।।५३।। कुटुम्बनाथे परमोच्चयुक्ते देवेंद्रपूज्ये च समीक्षिते वा ।। तथाविधे तद्भवनेऽभितातः सहस्ररक्षो भुवनप्रतापी ।।५४।। तन्नाथे भृगुणा बुधेन सहिते पारावतांशे तथा स्वोच्चे चाथ सुहृद्गृहे धनपतौ स्वस्थानकोलाहलः ।।५५।। कुटुंबराशिस्थपतौ यदि स्याद्भृगौ बुधे तादृशभावनाथे ।। स्वोच्चे सुहृत्क्षेत्रगतेऽथवा स्यात्परोपकारी जनरक्षकः स्यात् ।।५६।। नेत्रेशे बलसंयुक्ते शोभनाक्षो भवेन्नरः ।। षष्ठाष्टमव्यये युक्ते नेत्रे वैकल्यमादिशेत् ।।५७।। धनेशे पापसंयुक्ते धने पापसमन्विते ।। असत्यवादी पिशुनः पवनव्याधिसंयुतः ।।५८।।

द्वितीयाभावफल

यदि नेत्रनाथ=द्वितीयेश शुक्रयुक्त हो अथवा द्वितीय, लग्न या सूर्य से सम्बन्ध करता हो तो नेत्र विद्रूप करता है।। द्वितीय भाव में सूर्य, चन्द्र स्थित हों तो जातक रात्र्यंध (रात में न

दीखे) होता है।। लग्नेश, द्वितीयेश और सूर्य द्वितीयभाव में हों तो जन्मांध होता है। द्वितीयेश सूर्य और दशमेश से युक्त हो तो पिता को, एवं चतुर्थेशयुक्त हों तो माता को अंधा करता है।। स्वराशि या उच्च राशि में हो तो उपर्युक्त दोष नहीं होता। ६।७।८ इन स्थानों के स्वामी से सम्बन्ध हो तो शुभग्रह भी नेत्रदोष कारक होता है।। बृहस्पति तथा पञ्चमेश ६।७।८ स्थानों में हो तो मूक (गूंगा) करते हैं।। इसी प्रकार यह योग पिता (दशम) माता (चतुर्थ) स्थान के स्वामियों के साथ भी जानना।। गुरु और पंचमेश युक्त होकर ६।७।८ (पूर्वानुवृत्त) इन स्थानों में हों तो मूकता करते हैं।। कुटुम्बकारक ग्रह (द्वितीयकारक) द्वितीय और सप्तमेश के साथ केन्द्र या त्रिकोण स्थान में हों और द्वितीय सप्तमभाव को देखते हों या द्वितीय, सप्तम में हों तो ग्रहों की संख्यानुसार स्त्री हों। अथवा उतनी होकर भी एक भी न रहे।। पञ्चमेश गुरु या बुध ६।७।८ इन स्थानों में हो तो विद्याहीन होता है। और यदि केन्द्र, त्रिकोण या स्वराशि, उच्चराशि में हो तो सुन्दर श्रेष्ठ विद्या जल्दी प्राप्त होती है।। धनाधीश बृहस्पति हो और धनभाव में मंगलयुक्त हो तो जातक धनवान् होता है।। लाभेश धन में धनेश लाभ में अथवा दोनों केन्द्र में हों तो जातक धनवान् होता है।। धनेश केन्द्रराशि में हो, लाभेश अपने से त्रिकोण में हो, गुरु और शुक्र से युक्त अथवा दृष्ट हो तो धन का लाभ होता है।। धनेश शत्रुभाव में हो, लाभेश धनभाव में हो तो धन और श्रेष्ठ लाभ होता है। यदि ये पापग्रह से युक्त या दृष्ट हो तो निर्धन होता है।। वित्तेश (धनेश) और लाभेश दूसरे भाव में पापग्रह युक्त हों तो जन्म से उमर भर दरिद्र रहे भिक्षा से जीवन व्यतीत करे।। धन और लाभ स्थान के स्वामी ६।८।१२ स्थान में हों और लाभस्थान में मंगल तथा धनस्थान में राहु हो तो राजदण्ड से धन का क्षय होता है।। लाभस्थान में बृहस्पति और धनस्थान में शुक्र हो, इन स्थानों का स्वामी शुभग्रहयुक्त हो तथा व्यवभाव में शुभग्रह हो तो धर्मकार्यों में धन का खर्च हो।। कुटुम्ब राशि (धनभावराशि) का स्वामी यदि केन्द्र में हो और सौम्यग्रह युक्त हो और सौम्यग्रह तृतीयभाव में हो और सौम्यराशि से युक्त हो तो पुण्यप्रभाव से कुटुम्ब की रक्षा तथा भरण पोषण में रत रहे।। छितीयेश परमोच्च पद पर हो गुरु की दृष्टि हो ऐसे समय में उत्पन्न हुआ जातक हजारों आदमियों की रक्षा करनेवाला बड़ा प्रतापी होता है।। और उस (पंचम) भाव के स्वामी के शुक्र या बुध के साथ पारावतांश में होने और द्वितीयेश के उच्च में मित्रराशि में होने से बहुत बालकों के कारण घर में कोलाहल (शोर) होता रहे।। द्वितीयभाव में स्थित ग्रह की राशि का स्वामी यदि शुक्र या बुध हो और वह उच्च का या मित्रक्षेत्री हो तो जातक परोपकारी और जनरक्षक होता है।। द्वितीयेश बलवान् हो तो सुन्दर नेत्रवाला होता है।। ६।८।१२ स्थान में हो नेत्रों में सदा रोग या कोई खराबी होती है ।।३७–५८।।

अथ तृतीयभावफलम्

सभौमो भ्रातृभावेशः षडादिषु च न स्थितः ।। भ्रातृक्षेत्रगतो वापि भ्रातृभावं विनिर्दिशेत् ।।५९।। तौ पापयोगतः पापक्षेत्रयोगेन वा पुनः ।। उत्पाट्य सहजान्सद्यो निहन्ता शास्त्रनिश्चयात् ।।६०।। स्त्रीग्रहो भ्रातृभावेशः स्त्रीग्रहो भ्रातृगोऽपि वा ।। भगिनी स्यात्तदा भ्राता पुंगृहेपुङ्गृहो यदि ।। मिश्रे मिश्रफलं चात्र बलाबलबिनिर्णयः ।।६१।। नाशस्थितौ सोदरनाथभौमौ पापेक्षितौ सोदरनाशमाहुः ।। पापेक्षितौ पापसमन्वितौ वा त्रिसप्तविद्याप्रविनाशहेतू ।।६२।। भ्रातृभे कारके

वापि शुभयुक्तनिरीक्षिते ।। भावे वा बलसंपूर्णे भ्रातृणां वर्धनं भवेत् ।।६३।। केंद्रत्रिकोणगे वापि स्वोच्चमित्रस्ववर्गगे ।। नाथे वा कारके वापि भ्रातृलाभं वदेद्बुधः ।।६४।। भ्रातृभे बुधसंयुक्ते तदीशे चन्द्रसंयुते ।। कारके मंदसंयुक्ते भगिन्येकाग्रतो भवेत् ।।६५।। पश्चात्सहोदरेप्येतत्तृतीयस्तु मृतौ भवेत् ।। कारके राहुसंयुक्ते विक्रमेशस्तु नीचगः ।।६६।। पश्चात्सहोदराभावात्पूर्वस्तु त्रयकृद्भवेत् ।। भ्रातृस्थानाधिपे केन्द्रे कारके तत्त्रिकोणगे ।।६७।। जीवेन सहितश्चोच्चे संख्या द्वादश सोदराः ।।६८।। अयं तृतीयगर्भश्च प्रथमाच्च तृतीयके ।। सप्तमश्चैव नवमो द्वादशश्च मृतिप्रदः ।।६९।। शेषाः सहोदरा दीर्घाः षड्भार्या यमलो भवेत् ।। व्ययेशेन युते भौमे गुरुणा सहितोऽपि वा ।।७०।। भ्रातृस्थाने शशियुते सप्तसंख्यास्तु सोदराः ।। एतेषां द्विप्रजानाथः शुक्रयुक्तेक्षितेन हि अग्रे जातं रविर्हन्ति पृष्ठे जातं शनैश्चरः । अग्रजं पृष्ठजं हन्ति सहजस्थो धरासुतः ।।७१।।

तृतीय भावफल

तृतीयभाव का स्वामी भ्रातृ–स्थान को देखता हो, मंगल सहित हो या तीसरे भाव में ही हो ६।८।१२ में न हो तो भ्राता का सुख रहता है।। वे मंगल तथा तृतीयेश पापग्रह या पापराशि से युक्त हों तो बन्धुओं को हटाने या मारनेवाला होता है।। तृतीयभाव का स्वामी यदि स्त्री ग्रह हो और स्त्रीग्रह ही भ्रातृ स्थान में हो तो अधिक भगिनी होती हैं और यदि पुरुष राशि और पुरुष ग्रह हो तो अधिक भाई का सुख होता है। दोनों प्रकार का योग हो तो बलाबल देखकर भाई या बहन या दोनों कहे।। तृतीयेश और मंगल अष्टमस्थान में पापदृष्ट होकर स्थित हों तो भ्राताओं के नाश का कारण है।। तथा वे दोनों पापदृष्ट या पापयुक्त हों तो सब विद्या व्यर्थ होती है।। तृतीयराशि में कारकग्रह हो शुभग्रह से युक्त या दृष्ट हो अथवा भ्रातृभाव में बलवान् होकर स्थित हो तो भाइयों की वृद्धि होती है।। भ्रातृस्थान का स्वामी अथवा भ्रातृकारक केन्द्र या त्रिकोण में उच्च या मित्र अथवा अपने वर्ग में हो तो भाइयों का लाभ (वृद्धि) होता है।। भ्रातृस्थान में बुध हो और भ्रातृस्थान के स्वामी के साथ चन्द्रमा हो, भ्रातृकारक के साथ शनि हो तो अगली बार केवल एक भगिनी ही हो।। पश्चात् एक सहोदर हो और उसके नेष्ट योग हो तो तीसरे की मृत्यु होती है। भ्रातृ–कारक के साथ में राहु हो और भ्रातृस्थान स्वामी भी नीचराशि का हो तो उसके बाद सहोदर भ्राता न होने से वही तीसरा होता है।। भ्रातृस्थान स्वामी केन्द्र में हो और भ्रातृकारक अपने से त्रिकोण में हो गुरु सहित उच्च राशि में हो तो १२ भाई होते हैं।। इन १२ भाइयों में तीसरा, छठा, सातवां, नौवां और बारहवां गर्भ या बालक नष्ट होता है।। बाकी भाई दीर्घायु तथा बाकी कन्यायें होती हैं।। (अथवा ३ बार २–२ यमल कन्या होकर ६ कन्याएं होती हैं।) व्ययेश के साथ मंगल या गुरु हो और तीसरे स्थान में चन्द्रमा हो तथा चन्द्रमा शुक्र युक्त या दृष्ट हो तो सात भाई होते हैं। तृतीयभाव में सूर्य से बड़े भाई की, शनि से छोटे भाई की, मंगल से छोटे बड़े दोनों की मृत्यु होती है ।।५९–७१।।

अथ चतुर्थभावफलम्

गेहाधिनाथेन युते तु गेहे देहाधिपेनापि गृहाभिलब्धिः ।। युते षडादौ तु विपर्ययः स्याद्गृहाधिपे देहपतौ च तद्वत् ।।७२।। केंद्रत्रिकोणे च शुभग्रहेण युते समीचीनगृहाभिलब्धिः ।। क्षेत्रस्य चिंता

सदनाधिपेन जीवेन चिन्ता तु सुखस्य काया ।।७३।। दिव्यांगनावाहनवस्तुभूषाचिंता तु कार्या भृगुणा बुधेन्द्रैः ।। तमःशनिभ्यामभिचिंत्यमायुरर्केण तातः शशिनात्र माता ।।७४।। बुधेन बुद्धिः सदनर्क्षसंस्थां गतेन सप्तेशयुतेन च स्यात् ।। केंद्रत्रिकोणेषु गतेषु सप्त प्रपश्यता वापि स्वतुंगगेन ।।७५।। स्वकीयस्वांशगे स्वोच्चे सुतस्थानस्थितो यदि ।। सुखवाहनवृद्धिः स्याच्छंखभेर्यादिवाद्य युक् ।।७६।। विचित्रसौधप्राकारं मंडितं गृहमादिशेत् ।। कर्माधिपेन सहिते नाथे चन्द्रार्कसूनुना ।।७७।। बंधुस्थानेश्वरे सौम्यशुभग्रहनिरीक्षिते ।। शशिजे लग्नसंयुक्ते बुधपूज्यो भवेन्नरः ।।७८।। मातुः स्थाने शुभयुते तदीशे स्वोच्चराशिगे।। कारके बलसंयुक्ते मातृदीर्घायुरादिशेत् ।।७९।। स्वतुंगसंस्थे हिबुकाधिनाथे स्वर्क्षे त्रिभे मित्र गृहे स्थिते च ।। शुभेन दृष्टे शुभसंयुते च क्षेत्राभिवृद्धिं प्रवदेन्नराणाम् ।।८०।। सुखेशे केंद्रभावस्थे तथा केंद्रे स्थितो भृगुः ।। शशिजे स्वोच्चराशिस्थे विद्वान्पंडित एव सः ।।८१।। सुखे मंदे रवियुते चंद्रो भाग्यगतो यदि ।। लाभस्थानगते भौमे गोमहिष्यादिलाभकृत् ।।८२।। चरग्रहसमायुक्ते सुख तद्राशिनायके ।। षष्ठे भौमे व्ययगते मूकत्वं प्राप्नुते नरः ।।८३।। लग्नस्थानाधिपे सौम्ये सुखेशे नीचराशिगे ।। कारके व्ययराशिस्थे सुखेशे लाभसंयुते ।।८४।। द्वादशे वत्सरे प्राप्ते नरवाहनलाभकृत् वाहने रविसंयुक्ते स्वोच्चे तद्राशिनायके ।।८५।। युते शुक्रेण संयुक्ते द्वात्रिंशे वाहनं भवेत् ।। कर्मेशेन युते बंधुनाथे तुंगाशसंयुते ।।८६।। द्विचत्वारिंशके प्राप्ते नरो वाहनभाग्भवेत् ।। लाभेशे सुखराशिस्थे सुखेशे लाभसंयुते ।। द्वादशे वत्सरे प्राप्ते नरवाहनलाभकृत् ।।८७।।

चतुर्थ भावफल

लग्नेश तथा चतुर्थेश चतुर्थभाव में हों तो मकान का लाभ हो। दोनों ६।७।८ में हों तो अपना भी नष्ट हो जावे।। वही लग्न, चतुर्थेश केन्द्र या त्रिकोण में हों और शुभग्रह से युक्त हो तो सुन्दर मकान प्राप्त हो। भूमि की चिन्ता (विचार) चतुर्थेश से और भूमि से सुख का विचार गुरु से करना।। और शुक्र से सुन्दर स्त्री, वाहन, वस्तु, आभूषण, इनका विचार करना चाहिए। राहु, शनि से आयु का विचार करना। सूर्य से पिता और चन्द्रमा से माता का विचार करना चाहिए।। बुध से बुद्धि का विचार करना। बुध चतुर्थ भाव में सप्तमेश से युक्त हो तो श्रेष्ठ बुद्धिमान् हो। यह बुध केन्द्र या त्रिकोण स्थान में अपने उच्चराशि का होकर स्थित हो सातवें स्थान को देखता हो तो और श्रेष्ठ है।। चतुर्थ स्थानपति अपनी राशि का या अपने कारकांश में अथवा उच्च में होकर पञ्चम भाव में स्थित हो तो अनेक बाद्ययुक्त सुख और वाहन की वृद्धि होती है।। और विचित्र महल चारों तरफ से प्राकार युक्त होना चाहिये।। दशमेश से युक्त तथा चन्द्रमा और शनि युक्त चतुर्थेश हो तो पूर्वोक्त प्रकार का महल (भारी मकान) होता है।। तृतीयेश शुभग्रह तथा बुध की दृष्टियुक्त अथवा बुध लग्न में हो तो पंडितों से मान्य होता है।। चतुर्थ स्थान में शुभग्रह हो और चतुर्थेश उच्च का हो तथा मातृकारक वलवान् हो तो माता की आयु बड़ी होती है।। चतुर्थेश अपने उच्च में हो या स्वगृही हो अथवा मित्रराशि में होकर तीसरे घर में हो, शुभग्रह युक्त या दृष्ट हो तो मनुष्यों को भूमि की वृद्धि का सुख होता है।। चतुर्थेश केन्द्र में हो, केन्द्र में ही शुक्र हो तथा बुध उच्चराशि का हो तो जातक विद्वान् मेधावी होता है।। चतुर्थ स्थान में सूर्ययुक्त शनि हो चन्द्रमा नवमस्थान में हो तथा लाभस्थान में मंगल हो तो गौ, भैंस आदि का लाभ हो।। सुखभाव में चरराशि या चर

कारक (मातृकारक) हो और सुखेश षष्ठस्थान में हो, मंगल द्वादशस्थान में हो तो जातक मूक (गूंगा) होता है।। लग्नेश सौम्य बुध हो और सुखेश नीच राशि में हो, मातृकारक द्वादशभाव में हो, सुखेश लाभस्थान में हो तो जातक के १२ वें वर्ष में पालकी की सवारी का लाभ होता है।। चतुर्थभाव में सूर्य हो, चतुर्थेश उच्चराशि का हो और शुक्र युक्त हो तो ३२ वें वर्ष में सवारी का लाभ होता है।। चतुर्थेश दशमेश से युक्त उच्चांश (परमोच्च) में हो तो ४२ वें वर्ष में वाहन का लाभ होता है।। लाभेश चतुर्थभाव में हो तथा चतुर्थेश लाभ स्थान में हो तो १२ वें वर्ष में पालकी (या रिक्सा) का लाभ हो।।७२–८७।।

अथ पंचमभावफलम्

षडादित्रयसंस्थे तु सुताधीशे त्वपुत्रता ।। केंद्रत्रिकोणसंस्थे तु पुत्रलाभाभिसम्भवः ।।८८।। सत्पुत्रलाभः सुतपे सुरेज्ये शुभेषु गेहेषु गते च भानौ ।। एकः स्थिरः स्यात्सुत एक एव स्थितः शुभः केंद्रनवात्मजस्थे ।।८९।। पितापि चिंत्यो नवमे सुतर्क्षे एवंविधं चिंतनमूहनीयम् ।।९०।। क्षेत्रस्य कारको भौमः कर्मस्थानेऽप्ययं विधिः ।। अस्तंगते पंचमेशे पापक्रांते च दुर्बले ।।९१।। षष्ठे नीचे सुताधीशे काकवंध्या विशेषतः ।। षष्ठस्थाने सुताधीशे लग्नेशे कुजवेश्मनि ।। म्रियते प्रथमापत्यं काकवंध्यात्वमाप्नुयात् ।।९२।। सुताधीशो हि नीचस्थः षडादित्रयसंस्थितः ।। काकवंध्या भवेन्नारी सुते केतुबुधौ यदि ।।९३।। सुतेशो नीचगो यत्र सुतस्थानं न पश्यति ।। तत्र सौरिबुधौ स्यातां काकवंध्यात्वमाप्नुयात् ।।९४।। भाग्येशो मूर्तिवर्ती च सुतेशो नीचगो यदि ।। सुते केतुबुधौ स्यातां सुतं कष्टाद्विनिर्दिशेत् ।।९५।। षडादित्रयसंस्थोऽपि नीचो वाऽप्यरिसंस्थितः ।। पापाक्रांते सुतस्थाने पुत्रं कष्टाद्विनिर्दिशेत् ।।९६।। पुत्रस्थाने बुधक्षेत्रे मंदक्षेत्रेऽथवा पुनः ।। मंदे मांद्ययुते दृष्टे तदा दत्तादयः सुताः ।। रविचन्द्रौ यदैकस्थावेकांशकसमन्वितौ ।।९७।। त्रिमात्राभिरसौ भ्राता द्विपित्राऽपि च पोषकः ।। पंचमे षड्गृहे युक्ते तदीशे व्ययराशिगे ।।लग्नेशे दुर्बलो यस्य दत्तपुत्रभवोदयः ।।९८।। सुतभवने भृगुजीवसौम्यनाथे बलसहिते रविलोकिते युते वा ।। बहुसुतजननं वदंति संतः सुतभवनेशबलेन चिंत्यमेतत् ।।९९।। सुतेशे शशियुक्ते च त्रिराश्यंशगतेऽपि च।। तथैव कन्यकालाभं प्रवदेन्मतिमान्नरः ।।१००।। सुतेशे नरराशिस्थे राहुणा सहितः शशी ।। पुत्रस्थानं गते मंदे परजातं वदेच्छिशुम् ।।१०१।। सुतेशे राहुसंयुक्ते सुतस्थानं समाश्रितम् ।। न वीक्ष्यतेन्दुगुरुणा परजातो भवेन्नरः ।।१०२।।न लग्नमिंदुं च गुरुर्निरीक्षिते न वा शशांको रविणा समागतः ।। सपापकार्केण युते नवांशके परेण जातं प्रवदंति निश्चितम् ।।१०३।। लग्नाद्द्वादशगे चंद्रे लग्नादष्टमगो गुरुः ।। पापयुक्तेन संदृष्टे अन्यबीजं न संशयः ।।१०४।। पुत्रस्थानाधिपे स्वोच्चे लग्नाच्चेद्द्वित्रिकोणगे ।। गुरुणा संयुते दृष्टे पुत्रभाग्यमुपैति सः ।।१०५।। त्रिचतुः पापसंयुक्ते सुतेशेनाधिपे तु युक् ।। सुतेशे नाशराशिस्थे नीचसंस्थौ भवेच्छिशुः ।।१०६।। पुत्रस्थानं गते जीवे तदीशे भृगुसंयुते ।। द्वात्रिंशे च त्रयस्त्रिंशे वत्सरे पुत्रलाभकृत ।।१०७।। सुतेशे केंद्रभावस्थे कारकेण समन्विते ।। षट्त्रिंशे त्रिंशदब्दे च पुत्रोत्पतिं विनिर्दिशेत् ।।१०८।। लग्नाद्भाग्यगते जीवे जीवाद्भाग्यगते भृगौ।लग्नेशे भृगुसंयुक्ते चत्वारिंशे सुतं लभेत् ।।१०९।। पुत्रस्थानं गतो राहुस्तदीशे पापसंयुते ।। नीचराशिगते जीवे द्वात्रिंशे पुत्रमृत्युदः ।।११०।। जीवात्पंचमगे पापे लग्नात्पुत्रं गतेऽपि च ।। षड्विंशे च त्रयस्त्रिंशे चत्वारिंशे सुतक्षयः ।।१११।। लग्ने मांदिसमायुक्ते

लग्नेशे नीचराशिगे ।। षट्पंचाशद्दशाब्देषु पुत्रशोकसमाकुलः ।।११२।। चतुर्थे पापसंयुक्ते षष्ठे पापसमन्विते ।। सुतेशे परमोच्चस्थे लग्नेशेन समन्विते ।।११३।। कारके शुभसंयुक्ते दशसंख्यास्तु सूनवः ।। परमोच्चगते जीवे धनेशे राहुसंयुते ।।११४।। भाग्येशे भाग्यसंयुक्ते संख्याता नवसूनवः ।। पुत्रभाग्यगते जीवे सुतेशे बलसंयुते ।।११५।। धनेशे कर्मराशिस्थे वसुसंख्यास्तु सूनवः ।। पंचमात्पंचमे मंदे सुतस्थे च तदीश्वरे ।।११६।। सूनवः सप्तसंख्याश्च द्विगर्भे यमलं भवेत् ।। वित्तेशे पंचमस्थे च सुतस्थे पंचमाधिपे ।।११७।। षट्संख्या च सुतप्राप्तिस्तेषां च त्रिप्रजामृतिः ।। मंदात्पंचमगे जीवे जीवात्पंचमगे रवौ ।।११८।। सूर्यात्पंचमगे राहौ पुत्रमेकं विनिर्दिशेत् ।। पंचमे पापसंयुक्ते गुरोः पंचमगः शनिः ।।११९।। कलत्रान्तरे पुत्रलाभं कलत्रत्रयभाग भवेत् ।। पंचमे पापसंयुक्ते गुरोः पंचमगे शनौ ।।१२०।। पंचमे भौमसंयुक्ते लग्नेशे धनसंगते ।। जातं जातं विनाशं च दीर्घायुश्चैव मानवः ।।१२१।।

पंचम भावफल

पंचमेश ६।७।८ इन स्थानों में हो तो पुत्रहीन होता है। और पंचमेश केन्द्र या त्रिकोण में हो तो पुत्रलाभ की संभावना है।। पंचमेश यदि गुरु हो और सूर्य शुभस्थान मे हो तो एक पुत्र स्थिर रहता है पर यदि पंचमेश केन्द्र या नवमभाव में हो । नवमभाव में तथा पंचमभाव में इसी प्रकार के योग हों तो उन पर से पिता का विचार भी करे।। कारक मंगल दशमभाव में हो, पंचमेश अस्त हो या पापग्रहों के बीच में (पापाक्रान्त) तथा बलहीन हो और पुत्रस्थान पञ्चम का स्वामी नीचराशि का बलहीन हो तो स्त्री 'काकवंध्या' (एक सन्तान होने के बाद और सन्तान न हो) होती है।। पंचमेश षष्ठस्थान में हो और लग्नेश मंगल की राशि में हो तो प्रथम सन्तान के बाद स्त्री काकबन्ध्या होती है। सुताधीश नीचराशि का होकर ६।७।८ स्थानों में हो और पंचमस्थान में केतु या बुध हो तो स्त्री काकबन्ध्या होती है।। जिस जन्मकुण्डली में सुतेश नीच का होकर सुतस्थान को न देखता हो और सुतस्थान में शनि बुध हों तो स्त्री काकबन्ध्या होती है।। भाग्येश लग्न में हो, पञ्चमेश नीचराशि का हो और सुतस्थान में केतु, बुध हों तो बड़े कष्ट से पुत्रजन्म होता है।। सुतेश नीच का होकर छठेभाव में या सातवें आठवें स्थान में शत्रुराशि में हो और सुतस्थान में पापग्रह हो तो बड़े कष्ट से पुत्रजन्म होता है।। पुत्रस्थान में बुध की राशि ३।६ हों या शनि की राशि १०।११ हों और पञ्चमभाव को शनि या मांदीयुक्त या देखते हों तो दत्तक आदि पुत्र होते हैं।। सूर्य, चन्द्रमा यदि एक स्थान में एक ही नवमांश में हो तो बालक तीन माताओं से भाई और दो पिता से पोषित होता है।। पंचमेश छठे घर में हो षष्ठेश बारहवें स्थान में हो और लग्नेश दुर्बल हो तो दत्तक पुत्र होता है।। सुतस्थान में बुध, गुरु, या शुक्र हों और बलवान् हों, सूर्ययुक्त हो या देखता हो और सुतेश बलवान् हो तो बहुत पुत्र होते हैं।। सुतेश चन्द्रमा से युक्त हो और त्रिराशिपति भी चन्द्रमा हो तो कन्या होवें।। सुतेश पुरुष राशि में हो चन्द्रमा राहु के साथ हो और पंचमभाव में शनि हो तो सन्तान जारज है।। सुतेश राहु के साथ होकर सुतस्थान में ही स्थित हो और चन्द्रमा या गुरु की दृष्टि नहीं हो तो सन्तान जारज है।। लग्न और चन्द्रमा को गुरु नहीं देखता हो और चन्द्रमा सूर्ययुक्त नहीं हो तथा पापग्रह युक्त सूर्य पुत्र नवांश में हो तो जारज सन्तान

है। लग्न से द्वादशभाव में चन्द्रमा हो और आठवें गुरु हो और पापग्रह युक्त या दृष्ट हो तो सन्तान जारज है।।और पुत्रस्थानपति उच्च का हो लग्न से दूसरे तथा त्रिकोण में हो और बृहस्पति की दृष्टि हो या युक्त हो तो भाग्यशाली पुत्र होता है।। तीन चार पापग्रहों से युक्त पञ्चमेश अष्टमभाव में हो तो नीची श्रेणी में रहनेवाला बालक होता है।। गुरु पुत्रभाव में हो, सुतेश शुक्र के साथ हो तो ३२ या ३३ वें वर्ष में पुत्र प्राप्ति होती है।। सुतेश केन्द्र में हो और पुत्रकारक से युक्त हो तो ३०–३६ वे वर्ष में पुत्रप्राप्ति होती है। लग्न से नवमस्थान में बृहस्पति हो तथा गुरु से नवमभाव में शुक्र हो लग्नेश भी शुक्र के साथ हो तो ४० वें वर्ष में पुत्र होता है।।और पुत्रस्थान में राहु हो सुतेश पापग्रह हो एवं गुरु नीच में हो तो ३२ वें वर्ष में पुत्र की मृत्यु होती है।। बृहस्पति पंचम स्थान में पापग्रह युक्त हो, तथा पंचमस्थान में भी पापग्रह हो तो २६,३३,४० वें वर्षों में पुत्रक्षय होता है।। लग्न में मान्दी (शनिका गुलिक लग्न) लग्नेश नीचराशि में हो तो ५६ वें वर्ष में पुत्रशोक होता है।। चतुर्थ तथा षष्ठस्थानों में पापग्रह हो और सुतेश परमोच्च का होकर लग्नेश से युक्त हो पुत्रकारक भी शुभग्रह संयुक्त हो तो दस पुत्रसन्तान होती हैं। बृहस्पति परमोच्च में प्राप्त हो, धनेश राहुयुक्त हो, भाग्येश भाग्यस्थान में हो तो ९ पुत्रसन्तान होती हैं। बृहस्पति पुत्र या भाग्यस्थान में हो तथा पुत्रेश बलवान हो, धनेश दशम में हो तो ८ पुत्र होते हैं। पंचम के पञ्चम (नवम) में शनि हो तथा नवमेश पञ्चम में हो तो ७ पुत्र होते हैं एवं दो गर्भों में २-२ (जुड़वां) होते हैं। धनेश तथा पञ्चमेश पञ्चमभावमें हो तो छः पुत्र होते हैं और उनमें से तीन सन्तान नष्ट होती है।। शनि से पंचमस्थान में गुरु हो, गुरु से पंचम सूर्य हो सूर्य से पंचम राहु हो तो एक पुत्र होता है।। पंचमस्थान में पापग्रह हों, गुरु से पंचमभाव में शनि हो तो दूसरी या तीसरी स्त्री से पुत्र हो और वह जातक ३ स्त्रीवाला हो। पंचम स्थान में पापग्रह हों तथा गुरु से पंचम में शनि हो पंचम स्थान में मंगल भी हो तथा लग्नेश दूसरे भावों में हो तो अनेक पुत्र होकर भी न रहें तथा जातक दीर्घायु होता है।।८८–१२१।।

अथ षष्ठभावफलम्

षष्ठाधिपोऽपि पापश्चेद्देहे वाप्यष्टमे स्थितः तदा व्रणो भवेद्देहे कर्मस्थानेऽप्ययं विधिः ।।१२२।। एवं पित्रादिभावेशास्तत्तत्कारकसंयुताः ।। व्रणाधिपयुताश्चापि षष्ठाष्टमयुता यदि ।।१२३।। तेषामपि व्रणं वाच्यमादित्येन शिरोव्रणम्।।इन्दुना च मुखे कंठे भौमेन ज्ञेन नाभिषु ।।१२४।। गुरुणा नासिकायां च भृगुणा नयने पदे ।। शनिना राहुणा कुक्षौ केतुना च तथा भवेत् ।।१२५।। लग्नाधिपः कुजक्षेत्रे बुधस्य यदि संस्थितः ।। यत्र कुत्र स्थितो ज्ञेन वीक्षितो मुखरुक्प्रदः ।।१२६।। लग्नाधिपौ कुजबुधौ चंद्रेण यदि संस्थितौ ।। राहुर्वा शनिना सार्द्धं कुष्ठं तत्र विनिर्दिशेत् ।।१२७।। लग्नाधिपं विना लग्ने स्थितश्चेत्तमसा शशी ।। श्वेतकुष्ठं तदा कृष्ण कुष्ठं च शनिना सह ।।१२८।। कुजेन रक्तकुष्ठं स्यात्तत्तदेवं विचारयेत् ।। लग्ने षष्ठाष्टमाधीशौ रविणा यदि संस्थितौ ।।१२९।। ज्वरगंडुः कुजे ग्रंथिः शस्त्रव्रणमथापि वा ।। बुधेन पित्तं गुरुणां रोगाभावं विनिर्दिशेत् ।।१३०।। स्त्रीभिः शुक्रेण शनिना वायुना संयुतो यदि ।। गण्डश्चाण्डालतो नाभौ तमः केत्वोर्गृहे भगम् ।।१३१।। चंद्रेण गण्डसलिलैः कफश्लेष्मादिना भवेत् ।। एवं पित्रापि भावानां तत्तत्कारक योगतः ।।१३२।। गण्डे तेषां भवेदेवमूह्यमत्र मनीषिभिः ।।

हृतशत्रुग्रहादाप्तिगजवाजिधनाधिपाः ।।१३३।। श्रीपतिः स्वोच्चतेजस्वी गृहारामसुखी भवेत् ।। दीप्ते विरचितं पुसां प्रभावरिपुनीचयोः ।।१३४।। लक्ष्म्या संलिंगितो देहे गजभूमिसहस्त्रभृत् ।। रोगस्थानगते पापे तदीशे पापसंयुते ।।१३५।। राहुणा संयुते मंदे सर्वदा रोगसंयुतः ।। रोगस्थानगते भौमे तदीशे रंध्रसंयुते ।।१३६।। षड्वर्षेद्वादशे वर्षे ज्वररोगी भवेन्नरः ।। षष्ठस्थानगते जीवे तद्गृहे चन्द्रसंयुते ।।१३७।। द्वाविंशैकोनविंशेब्दे कुष्ठरोगं विनिर्दिशेत् ।। रोगस्थानं गतो राहुः केंद्रे मांदिसमन्वितः ।।१३८।। लग्नेशे नाशराशिस्थे षड्विंशे क्षयरोगता ।। व्ययेशे रोगराशिस्थे तदीशे व्ययराशिगे ।।१३९।। त्रिंशद्वर्षैकोनवर्षे गुल्मरोगं विनिर्दिशेत् ।। रिपुस्थानगते चन्द्रे शनिना संयुते यदि ।।१४०।। पंचपंचाशताब्देषु रक्तकुष्ठं विनिर्दिशेत् ।। लग्नेशे लग्नराशिस्थे मंदे शत्रुसमन्विते ।।१४१।। एकोनषष्टिवर्षे तु वातरोगार्दितो भवेत् ।। रंध्रेशे रिपुराशिस्थे व्ययेशे लग्नसंस्थिते ।।१४२।। चन्द्रे षष्ठांशसंयुक्ते वसुवर्षे मृगाद्भयम् ।। षष्ठाष्टमगतो राहुस्तस्मादष्टगते शनौ ।।१४३।। वत्सराग्निभयं तस्य त्रिवर्षे पक्षिदोषभाक् ।।१४४।। षष्ठाष्टमगते सूर्ये तद्द्वये चन्द्रसंयुते ।। पञ्चमे नवमेऽब्दे तु जलभीतिं विनिर्दिशेत् ।।१४५।। अष्टमे मंदसंयुक्तेरं ध्रांद्रौ द्वादशे कुजः ।। त्रिंशाब्दं च दशेऽष्टेतु स्फोटकादिविनिर्दिशेत् ।।१४६।। रंध्रेशे राहुसंयुक्ते तदंशेरंध्रकोणगे ।। द्वाविंशेऽष्टादशे वर्षे ग्रंथिमेहादिपीडनम् ।।१४७।। लाभेशे रिपुभावस्थे तदीशे लाभराशिगे ।। एकत्रिंशैकचत्वारि शत्रुमूलाद्धनव्ययः ।।१४८।। सुतेशे रिपुभावस्थे षष्ठेशे गुरुसंयुते ।। व्ययेशे लग्नभावस्थे तस्य पुत्रो रिपुर्भवेत् ।। १४९।। लग्नेशे षष्ठराशिस्थे तदंशे षष्ठराशिगे ।। दशमैकोनविंशेऽब्दे शुनकाद्भीतिरुच्यते ।।१५०।।

षष्ठभावफल

षष्ठस्थान का स्वामी पापग्रह हो और लग्न में या अष्टमभाव में हो तो देह में फोड़ा–फुन्सी होते हैं।। दशमस्थान से भी इसी तरह विचार करना।। इसी प्रकार पिता आदि भावों के स्वामी भी अपने २ कारक (पितृकारक) आदि से तथा षष्ठेश से युक्त हो ६।८ भावगत हों तो उनके भी व्रण (फोड़ा आदि) कहना चाहिये। विशेष षष्ठाधिपति यदि सूर्य हो तो शिर में घाव या फोड़ा, चन्द्रमा से मुख में या कंठ में, मंगल तथा बुध से नाभि में, गुरु से नासिकामें, शुक्र से आंख तथा पैर में, शनि, राहु, तथा केतु से काँख में फोड़ा या घाव अथवा नासूर होता है।। लग्न का स्वामी मंगल या बुध के स्थान में किसी भी स्थान में हो किन्तु बुध की दृष्टि हो तो मुख में रोग होता है।। लग्न के स्वामी मंगल या बुध में से कोई हो और चन्द्रमा की दृष्टि हो अथवा शनि के साथ राहु लग्न में हो तो कुष्ठ (कोढ़) होता है।। लग्नेश के बिना लग्न में राहु के साथ चन्द्रमा हो तो श्वेत कुष्ठ होता है और राहु के साथ शनि हो तो काला कोढ़ होता है।। ऐसे ही मंगल राहु के योग से रक्तकुष्ठ होता है।। इसी प्रकार तत्तद् भाव का विचार करना चाहिए। लग्न में ६।८ के स्वामी यदि सूर्य के साथ हों तो ज्वर, गलगण्ड रोग होते हैं। मंगल हो तो ग्रन्थि अथवा हथियार का घाव, बुध से पित्त सम्बन्धी बीमारी हो। यदि बृहस्पति से यह योग हो तो नीरोग रहे।। यह योग शुक्र के साथ हो तो स्त्रियों के द्वारा, शनि के साथ हो तो वायु द्वारा गण्डरोग व्रण या घाव होता है। राहु से चाण्डाल के द्वारा केतु से घर में भय चन्द्रमा से जल से या कफ श्लेष्म से गण्ड (घाव आदि) जानना। इसी प्रकार पिता, माता

आदि के कारकों के साथ उपर्युक्त योग हो तो उनको भी व्याधि, भय होता है। (यहां से २ श्लोक आत्मकारक के दीप्तादि अवस्था के फल निर्देशक हैं, प्रमाद से यहां प्रक्षिप्त हो गये हैं तथापि अर्थ लिखा जाता है शत्रुओं का नाश करने के बाद शत्रुओं के घर से प्राप्त हाथी, घोड़े, घर, महल आदिका स्वामी होता है। लक्ष्मीपति तथा प्रचण्ड तेजस्वी, मकान बगीचा आदि से सुखी होता है।। दीप्त अवस्थावाले प्रभौ = स्वामी (ग्रह का विशेषण) शत्रुराशि तथा नीचराशि का न हो तो हाथी आदि युक्त राज्यलक्ष्मी जातक को घेरे रहती है। षष्ठस्थान में पापग्रह हो, षष्ठेश पापग्रहयुक्त हो । राहु से शनि युक्त हो तो सर्वदा रोगी ही रहता है।। रोगस्थान (षष्ठ) में मंगल हो तथा रोगेश अष्टम भाव में हो तो ६।१२ वें वर्ष में ज्वर रोग होता है।। षष्ठस्थान में गुरु हो, छठे घर में चन्द्रमा हो तो १९ या २२ वें वर्ष में कुष्ठ रोग होता है। रोग स्थान में राहु हो, केन्द्रस्थान में मादी (शनि – गुलिक लग्न) हो लग्नेश अष्टमभाव मे हो तो २६ वें वर्ष में क्षय (तपेदिक) रोग होता है।। व्ययेश छठे भाव में हो, षष्ठेश व्ययभावमें हो तो २९।३० वर्ष में गुल्मरोग होता है। षष्ठस्थान में चन्द्रमा यदि शनि से युक्त हो तो ५५ वें वर्ष में रक्तकुष्ठ होता है।। लग्नेश लग्न में हो, शनि शत्रुग्रह के साथ हो।। तो ५९ वें वर्ष में वात व्याधि होती है। अष्टमेश शत्रुराशि में हो, व्ययेश लग्न में हो तथा चन्द्रमा षष्ठभाव के नवांश में हो तो ८ वें वर्ष में पशु से भय हो। षष्ठ तथा अष्टमभाव में राहु हो और राहु से आठवें शनि हो।। तो जातक को प्रथम वर्ष में अग्नि से भय और तीसरे वर्ष में पक्षी से खतरा हो।। छठे आठवें सूर्य हो और उन्हीं भावों में चन्द्रमा साथ हो तो पांचवें या नौवें वर्ष में जल से भय होता है।। मंगल और शनि ७।८।१०।१२ इन स्थानों में संयुक्त होकर स्थित हों तो ३० वर्ष की आयु तक स्फोटक (चेचक = शीतला) का भय होता है तथा। अष्टमेश राहु यक्त हो, अष्टमभाव की नवमांश राशि अष्टमभाव से त्रिकोण भाव में हो १८ या २२ वें वर्ष में ग्रन्थिवात या प्रमेह आदि रोग हो लाभेश छठे भाव में हो और षष्ठेश लाभ स्थान में हो तो ३१ या ४१ वें वर्ष में शत्रु के कारण (मुकदमा आदि में) धनव्यय होता है।। सुतेश षष्ठभाव में हो, षष्ठेश गुरु के साथ हो तथा व्ययेश लग्न में हो तो उस जातक का पुत्र ही शत्रु हो जाता है।। लग्नेशं छठे भाव में हो, लग्ननवमांश राशि भी छठे भाव में हो तो १० वें या १९ वें वर्ष में कुत्ते से भय हो ।।१२२–१५०।।

अथ सप्तमभावफलम्

कलत्रपो विना स्वर्क्षं षडादित्रयसंस्थितः ।। रोगिणीं कुरुते नारीं तथा तुंगादिकं विना ।।१५१।। स्त्रीपुत्रयात्राफलचिंतनानि कार्याण्यनेनापि सहाधिपेन ।। शुभेन कार्यं शुभदं तथैव पापेन पापं फलमूहनीयम् ।।१५२।। सप्तमे तु स्थिते शुक्रेऽतीवकामी भवेन्नरः ।। यत्रकुत्रस्थिते पापयुते स्त्रीमरणं भवेत् ।।१५३।। दाराधिपः पुण्यग्रहेण युक्तो दृष्टोऽपि वा पूर्णबलः प्रसन्नः ।। सौभाग्ययुक्तो गुणवान्प्रभुश्च दाता विभोग्यं बहुधान्यमाहुः ।।१५४।। कलत्रेशे बहुगुणे तुंगवक्रादिहेतुभि ।। बहुभार्यान्तरं विद्याच्छत्रुनीचास्तगेषु च ।।१५५।। परमोच्चगते मन्दाधिनाथे मन्दराशौ शुभखेचरेण दृष्टे ।। अथवा भृगुसदने तुंगे बहुभार्यं प्रवदंति बुद्धिमन्तः ।।१५६।। वंध्यासंगो मंदे भानौ चंद्रराशिसमः स्त्रियः ।। कुजे रजस्वलासंगो वंध्यासंगश्च कीर्तितः ।।१५७।। बुधे वेश्या च हीना च वणिक्स्त्री वा प्रकीर्तिता ।। गुरोर्ब्राह्मण

भार्या स्याद्गर्भिणी संग एव च ।।१५८।। हीना च पुष्पिणी वाच्या मन्दराहुफणीश्वरैः ।। कुजोक्ते सुस्तना मन्दा व्याधिर्दौर्बलिनस्तथा ।।१५९।। कठिनोर्ध्वकुजाचार्ये श्रेष्ठस्थूलोत्तमस्तना ।। पापे द्वादशकामस्थे क्षीणचंद्रस्तु पंचमे ।।१६०।। जातश्च भार्यावश्यः स्यादिति जातिविरोधकृत् ।। जामित्रे मंदभौमस्थे तदीशे मंदभूमिजे ।।१६१।। वेश्या वा जारिणी वापि तस्य भार्या न संशयः ।। दारेशे स्वोच्चराशिस्थे दारे शुभसमन्विते ।।१६२।। लग्नेशे बलसंयुक्ते स कलत्रसमन्वितः ।।१६३।। कलत्रनाथे रिपुनीचसंस्थे मूढेऽथवा पापनिरीक्षिते वा ।। कलत्रभे पापयुते च दृष्टे कलत्रहानिं प्रवदंति संतः ।।१६४।। षष्ठाष्टमव्ययस्थेषु मंदेशो दुर्बलो यदि ।। नीचराशिगते युक्ते दारनाशं विनिर्दिशेत् ।। कलत्रस्थानगे चंद्रे तदीशे व्ययराशिगे ।।१६५।। कारको बलहीनश्च दारसौख्यं न विद्यते ।। भार्याधिपे नीचगृहे च पापेपापर्क्षगे वा बहुपापयुक्ते ।। क्लीबे ग्रहे सप्तमराशिसंस्थे तस्योदयांशे द्विकलत्रसिद्धिः ।।१६६।। कलत्रस्थानगे भौमे शुक्रे जामित्रगे शनौ ।।१६७।। लग्नेशे रंध्रराशिस्थे कलत्रत्रयवान् भवेत् ।। द्विस्वभावगते शुक्रे स्वोच्चेतद्राशिनायके ।।१६८।। दारेशे वलसंयुक्ते बहुदारसमन्वितः ।। दारेशे शुभराशिस्थे स्वोच्चस्वर्क्षगतो भृगुः ।।१६९।। पंचमे नवमेऽब्दे तु विवाहः प्रायशो भवेत् ।। दारस्थानं गते सूर्ये तदीशे भृगुसंयुते ।।१७०।। सप्तमैकादशे वर्षे विवाहः प्रायशो भवेत् ।। कुटुंबस्थानगे शुक्रे दारेशे लाभराशिगे ।। दशमे षोडशाऽब्दे च विवाहः प्रायशो भवेत् ।।१७१।। लग्नकेन्द्रगते शुक्रलग्नेशे मंदराशिगे ।। वत्सरैकादशे प्राप्ते विवाहं लभते नरः ।।१७२।। लग्नात्केन्द्रगते शुक्रे तस्मात्कामगते शनौ ।। द्वादशैकोनविंशे च विवाहः प्रायशो भवेत् ।।१७३।। चन्द्राज्जामित्रगे शुक्रे शुक्राज्जामित्रगे शनौ ।। वत्सरेऽष्टादशे प्राप्ते विवाहं लभते नरः ।।१७४।। धनेशे लाभराशिस्थे लग्नेशे कर्मराशिगे ।। अब्दे पंचदशे वर्षे विवाहं लभते नरः ।।१७५।। धनेशे लाभराशिस्थे लाभेशे धनराशिगे ।। अब्दे त्रयोदशे प्राप्ते विवाहं लभते नरः ।।१७६।। रन्ध्राज्जामित्रगे शुक्रे तदीशे भौमसंयुते ।। द्वाविंशे सप्तविंशाब्दे विवाह लभते नरः ।।१७७।। दारांशकगते लग्ने नाथे दारेश्वरे व्यये ।। त्रयोविंशे च षड्विंशे विवाहं लभते नरः ।।१७८।। रन्ध्रांशे दारराशिस्थे लग्नांशे भृगुसंयुते ।। पंचविंशे त्रयस्त्रिंशे विवाहं लभते नरः ।।१७९।। भाग्याद्भाग्यगते शुक्रे तद्द्वये राहु संयुते ।। एकत्रिंशात्त्रयस्त्रिंशे दारलाभं विनिर्दिशेत् ।।१८०।। भाग्याज्जामित्रगे शुक्रे तद्द्वचूने दारनायके ।। त्रिंशे वा सप्तविंशाब्दे विवाहं लभते नरः ।।१८१।। दारे च नीचराशिस्थे शुक्रे रंध्रारिसंयुते ।। अष्टादशे त्रयस्त्रिंशे वत्सरे दारनाशनम् ।।१८२।। मंदेशे नाशराशिस्थे व्ययेशे मंदराशिगे ।। तस्य चैकोनविंशाब्दे दारनाशं विनिर्दिशेत् ।।१८३।। कुटुंबस्थानगो राहुः कलत्रे भौमसंयुते ।। पाणिग्रहे च त्रिदिने सर्पदष्टेवधूमृतिः।।१८४।। रंध्रस्थानगते शुक्रे तदीशे सौरिराशिगे ।। द्वादशैकोनविंशाब्दे दारनाशं विनिर्दिशेत्।।१८५।।लग्नेशे नीचराशिस्थे धनेशे निधनं गते ।। त्रयोदशे तु संप्राप्ते कलत्रस्य मृतिर्भवेत् ।।१८६।। शुक्राज्जामित्रगे चंद्रे चंद्राज्जामित्रगे बुधे ।। रंध्रेशे सुतभावस्थे प्रथमंदशमाब्दिकम् ।।१८७।। द्वाविंशे च द्वितीये च त्रयस्त्रिंशे तृतीयके ।। विवाहं लभते मर्त्यो नात्र कार्या विचारणा ।।१८८।।

सप्तम भाव फल

सप्तमभाव का स्वामी उच्चादि रहित होकर छठे या आठवें भाव में हो तो स्त्री सदा रोगिणी रहती है।। इस भाव से विचार योग्य कहते हैं—भार्या सम्बन्धी तथा पुत्रसम्बन्धी एवं

यात्रा का फलाफल ये सब विचार सप्तमभाव तथा सप्तमाधिपति से भी करना चाहिये। शुभयोग हो तो शुभफल होगा, और पापयोग हो तो अशुभ फल होगा।। सप्तमभाव में शुक्र हो तो जातक अतिकामी होता है। अन्यभाव में पापयुक्त हो तो स्त्री–मरण होता है।। भार्येश सौम्यग्रह युक्त अथवा दृष्ट हो तथा पूर्ण बलवान् हो और अस्तंगत नहीं हो तो भार्याका स्वामी भाग्यवान् गुणवान् दानी मानी तथा अनेक भोग का साधनवाला होता है।। भार्या भवन का स्वामी ग्रह स्वगृह, उच्च, वक्र आदि कारणों से बलवान् हो तो अनेक भार्या होती हैं। एवं शत्रुराशि, नीच तथा अस्त हो तो भी अनेक भार्या होने पर भी जीवित नहीं रहती।। शनि स्थित राशि का स्वामी शनि के साथ परमोच्च का हो तथा शुभग्रह से युक्त हो अथवा दृष्ट हो तो एक से अधिक स्त्रियां होती हैं। यह योग शुक्र से भी देखना।। उपर्युक्त योग शनि राशि में सूर्य से हो तो स्त्री बन्ध्या होती है, और स्त्रियों की संख्या चन्द्रमा की राशि के अनुसार जानना। इसी प्रकार मंगल के योग से भी बन्ध्या–संग होता है और ऐसा योग बुध से हो तो वेश्या से योग हो, अथवा हीन जाति की स्त्री से एवं वैश्य जाति की स्त्री से भी सम्बन्ध हो सकता है, विशेष क्या, वह पुरुष चरित्रहीनता में इतना गिर जाता है कि–गुरु की स्त्री तथा ब्राह्मणी या गर्भिणी–संग भी करता है और शनि, राहु, केतु से योग हो तो हीन जाति की प्रायः रजोवती से संग हो।। मंगल के योग से हीन जाति और सुस्तना से संयोग हो स्वयं जातक भी व्याधिग्रस्त होकर दुर्बल हो।। बृहस्पति से उपर्युक्त योग हो तो 'दीर्घ' लम्ब, अतिस्थूल, वृत्तपीन-घनस्तनी' नारी से संग हो। पापग्रह ७।१२ में हो और क्षीण चन्द्रमा पंचमभाव में हो ।। ऐसे योग में हुआ जातक स्त्री के वश में रहता है और स्वजाति से विरोध करता है। सप्तम भाव में शनि, मंगल और भावेश भी हो, तो जातक की स्त्री जारिणी हो अथवा वेश्या ही हो। सप्तमेश उच्चराशि में हो, सप्तम घर में शुभग्रह हो, लग्नेश बलवान् हो तो स्त्री का सुख स्थायी होता है।। सप्तमेश नीचराशि का शत्रु के घर में हो मूढ़ावस्था में वा पापदृष्ट हो सप्तमराशि पापग्रह युक्त या दृष्ट हो तो स्त्री का सुख नहीं होता।। सप्तमेश ६।८।१२ स्थान में दुर्बल होकर स्थित हो तथा नीच का हो तो स्त्री की हानि होती है। सप्तमस्थान में चन्द्रमा हो और सप्तमेश १२वें में हो भार्या कारक बलहीन हो तो स्त्री का सुख नहीं होता। स्त्रीभाव का स्वामी स्वयं पापग्रह हो पापग्रह की राशि में नीचराशि गत हो और पापग्रहों का संग हो, नपुसंक ग्रह भी सप्तम भाव में हो उसकी नवांश दशा में दो स्त्रियां हो सप्तमस्थानमें मंगल और शुक्र भी हो, शनि लग्नेश होकर अष्टमभाव में हो तो तीन स्त्रियां होती हैं। शुक्र द्विस्वभावराशि में हो और उस राशि का स्वामी उच्च का हो तथा स्त्रीभाव स्वामी बलवान् हो तो अनेक स्त्रियां होती हैं। दारेश (सप्तमेश) शुभ राशि में हो और शुक्र स्वगृही या उच्च का हो , तो प्रायः पाचवें या नौवें वर्ष में विवाह होता है। सप्तमभाव में सूर्य हो और सप्तमेश शुक्रयुक्त हो तो सातवें या ग्यारहवें वर्ष में प्रायः विवाह होता है। शुक्र द्वितीय भाव में हो, सप्तमेश लाभ (११) में हो तो दशवें या सोलहवें वर्ष में प्रायः विवाह होता है।। शुक्र लग्न (केन्द्र) में हो और लग्नेश शनि की राशि में हो तो जातक का ११ वें वर्ष में विवाह होता है। चन्द्रमा से सातवें शुक्र हो और शुक्र से सातवें शनि हो तो अठारहवें वर्ष में विवाह होता है।। द्वितीयेश लाभस्थान में हो तथा लग्नेश दशम में हो तो १५ वें वर्ष में विवाह होता है।। द्वितीयेश लाभस्थान में हो और लाभेश द्वितीय में हो तो

१३वें वर्ष में विवाह होता है।। आठवें स्थान से सातवें स्थान में शुक्र हो और उस स्थान की राशि के स्वामी के साथ मंगल हो तो २२ वें या २७ वें वर्ष में विवाह होता है।। सप्तमभाव की नवांश राशि लग्न में हो, लग्नेश तथा सप्तमेश १२वें स्थान में होतो २३या २६वें वर्षमें विवाह होता है।। आठवें भाव की नवांश राशि सप्तमभाव में हो और लग्न के नवांश में शुक्र हो तो २५ या ३३ वें वर्ष में विवाह होता है।। भाग्यस्थान से नौवें स्थान में शुक्र हो उससे दूसरे स्थान में राहु हो तो ३१ से ३३वें वर्ष में विवाह होता है।। भाग्यस्थान से सातवें स्थान में शुक्र हो और शुक्र से सातवें स्थान में सप्तमेश हो तो २७वें या ३०वें वर्ष में विवाह होता है।। सप्तमेश नीचराशि में हो और शुक्र ६।८ भाव के स्वामी से युक्त हो तो १८ वें या ३३ वें वर्ष में विवाह होता है।। शनिस्थान का स्वामी अष्टमभाव में हो और व्ययेश शनि की राशि में हो उसके १९ वें वर्ष में स्त्री की मृत्यु होती है।। द्वितीय स्थान में राहु और सप्तम में मंगल हो तो विवाह होने के तीसरे दिन सर्प से मृत्यु होती है।। आठवे स्थान में शुक्र हो और उसका स्वामीं शनि की राशि में हो तो १२ वें या १९वें वर्ष में स्त्री की मृत्यु होती है।। लग्नेश नीच राशि में हो तथा धनेश अष्टमभाव में हो तो १३ वें वर्ष में स्त्री की मृत्यु होती है।। शुक्र से सातवें स्थान में चन्द्रमा हो और चन्द्रमा से सातवें में बुध हो और अष्टमेश पंचमभाव में हो तो पहिला विवाह १०वें, दूसरा २२वें और तीसरा २३वें में होता है।।१५१–१८८।।

अथाष्टमभावफलम्

आयुःस्थानाधिपः पापैः सहैव यदि संस्थितः ।। करोत्यल्पायुषं जातं लग्नेशोऽप्यत्रसंस्थितः ।।१८९।। एवं हि शनिना चिंता कार्या तर्कैर्विचक्षणैः ।। कर्माधिपेन च तथा चिंतनं कार्यमायुषः ।।१९०।। षष्ठे व्ययेऽपि षष्ठेशो व्ययाधीशो रिपौ व्यये ।। लग्नेऽष्टमे स्थितो वापि दीर्घमायुः प्रयच्छति ।।१९१।। स्वस्थाने स्वांशकेनापि मित्रेशे मित्रमंदिरे ।। दीर्घायुषं करोत्येव लग्नेशोऽष्टमपः पुनः ।।१९२।। लग्नाष्टमपकर्मेशमंदाः केंद्रत्रिकोणयोः ।। लाभे वा संस्थितास्तद्वद्द्विशेयुर्दीर्घमायुषम् ।। येषु यो बलवांस्तस्यानुसारादायुरादिशेत् ।।१९३।। अष्टमाधिपतौ केंद्रे लग्नेशे बलवर्जिते ।। विंशद्वर्षाण्यसौ जीवेद्द्वात्रिंशत्परमायुषम् ।।१९४।। रंध्रेशे नीचराशिस्थे रंध्रे पापग्रहैर्युते ।। लग्नेशे दुर्बले यस्य अल्पायुर्भवति ध्रुवम् ।।१९५।। रन्ध्रेशे पापसंयुक्ते रंध्रे पापग्रहैर्युते ।। व्यये क्रूरग्रहैर्जाते जातमात्रं मृतिर्भवेत् ।।१९६।। केंद्रत्रिकोणपापस्थाः षष्ठाष्टशु भगा यदि ।। लग्ने रंध्रेश नीचस्थे जातः सद्योमृतो भवेत् ।।१९७।। पंचमे पापसंयुक्ते रंध्रेशे पापसंयुते ।। रंध्रे पापग्रहैर्युक्ते अल्पायुष्यः प्रजायते ।।१९८।। रंध्रेशे रंध्रराशिस्थे चन्द्रे पापसमन्विते ।। शुभदृष्टेन सफलं मासांते च मृतिर्भवेत् ।।१९९।। लग्नेशे स्वोच्चराशिस्थे चंद्रे लाभसमन्विते ।। रंध्रस्थानगते जीवे दीर्घायुष्यं न संशयः ।।२००।।

अष्टम भावफल

अष्टमेश पापग्रहों के तथा लग्नेश के साथ (अष्टमभाव में) हो तो जातक को अल्पायु करता है।। इसी प्रकार चन्द्रमा तथा दशमभाव के स्वामी से भी आयु का विचार करना चाहिये।। षष्ठभाव का स्वामी छठे या बारहवें में हो और व्ययाधीश ६।८।१२ वें या लग्न में

हो तो दीर्घायु होता है।। मित्रेश पंचमेश, पञ्चमभाव में अपने ही नवांश मे हो तथा लग्नेश और अष्टमेश भी हों तो दीर्घायु होता है।। लग्नेश, अष्टमेश तथा दशमेश और शनि केन्द्र, त्रिकोण या लाभस्थान में हों तो दीर्घायु होती है।। इनमें जो बलवान् हो उसके अनुसार आयु कहे।। अष्टमाधिपति केन्द्र में हो लग्नेश बलहीन हो तो ३० या ३२ वर्ष की परमायु होती है।। अष्टमेश नीच राशि में हो, अष्टम भाव में पापग्रह हों और लग्नेश बलहीन हो तो अल्पायु होती है।। अष्टमेश पापयुक्त हो, अष्टमभाव में पापग्रह हों तथा१२वें भी पापग्रह हों तो जन्मके बाद ही मृत्यु होती है।। केन्द्र त्रिकोण में पापग्रह हों तथा छठे, आठवें शुभग्रह हों और अष्टमेश नीच का होकर लग्न में हो तो जन्म के बाद ही मृत्यु होती है।। पंचमभाव पापग्रह युक्त हो और अष्टमेश पापग्रह युक्त हो तथा अष्टमभाव में पापग्रह युक्त हो तो अल्पायु होता है।। अष्टमेश अष्टम में हो, चन्द्रमा पापयुक्त हो और शुभग्रह नहीं देखते हों तो एक महीने बाद मृत्यु होती है।। और शुभग्रह देखते हों तो मृत्यु नहीं होती।। लग्नेश उच्चराशि में हो, चन्द्रमा लाभ में हो, आठवें स्थान में बृहस्पति हो तो दीर्घायु होती है ।।१८९–२००।।

अथ नवमभावफलम्

भाग्याधिनाथोऽपि च भाग्यकर्ता शुक्रोऽपि पापैः सह चेत्त्रिषु स्यात् ।। त्रिषडादिभावेषु च भाग्यहीनं केंद्रत्रिकोणोपगतोऽतिभाग्यम् ।।२०१।। अनेन धर्मः परिकल्पनीयः पिता तु चिंत्यो निजमातुलस्य ।। शुभे शुभस्थानगते शुभं स्याद्विपर्यये तत्र विपर्ययः स्यात ।।२०२।। भाग्यस्थिते वाहनराशिसंस्थे शुक्रे च जीवे शुभराशियुक्ते ।। भाग्याधिपे कोणचतुष्टये वा बहुत्वदेशाभरणं च यानम् ।।२०३।। भाग्यस्थानगते जीवे तदीशे केंद्रसंस्थिते ।। लग्नेशे बलसंयुक्ते बहुभाग्याधिपो भवेत् ।।२०४।। भाग्येशे बलसंयुक्ते भाग्ये भृगुसमन्विते ।। बलात्केंद्रगते जीवे पितृभाग्यसमन्वितः ।।२०५।। भाग्यस्थानाद्द्वितीये वा सुखे भौमसमन्विते ।। भाग्येशे नीचराशिस्थे पिता निर्धन एव सः ।।२०६।। भाग्येशे परमोच्चस्थे भाग्यांशे जीवसंयुते ।। लग्नाच्चतुष्टये शुक्रे पिता दीर्घायुरादिशेत् ।।२०७।। भाग्येशे केंद्रभावस्थे गुरुणाचनिरीक्षिते ।। तत्पिता वाहनैर्युक्तो राजा वा तत्समो भवेत् ।।२०८।। भाग्येशे कर्मभावस्थेकर्मेशे भाग्यराशिगे ।। कर्मेशाच्च धनाढ्यश्च कीर्तिमांस्तत्पिता भवेत् ।।२०९।। परमोच्चांशगे सूर्ये भाग्येशे लाभसंस्थिते ।। धर्मिष्ठो नृपवात्सल्यः पितृपुण्यो भवेन्नरः ।।२१०।।

नवमं भावफल

भाग्यस्थान (नवम) का स्वामी भाग्य को बनानेवाला है तथा ग्रहों में शुक्र भाग्यकर्ता है। यदि शुक्र पापग्रहों के साथ ३।६।११ अथवा अष्टम में हो तो मनुष्य को भाग्यहीन करता है। और यदि केन्द्र या त्रिकोण १।४।७।१०।।५।९ में हो तो भाग्यशाली बनाता है।। और इस नवमस्थान से धर्म का विचार करना और अपने मामा के पिता का विचार करना चाहिये।। नवमभाव में शुभग्रह हो अथवा शुक्र शुभस्थान में हो तो शुभ होता है। और इसके विपरीत अशुभ जानना।। शुक्र और बृहस्पति इन दोनों ग्रहों में से एक या दोनों ही नवमस्थान में या चतुर्थस्थान में शुभग्रह तथा शुभराशि से युक्त हो और नवमेश केन्द्र या त्रिकोण में हो तो जमीन जायदाद, सम्पत्ति, सवारी आदि का सुख होता है।। भाग्येश केन्द्र में हो और

भाग्यस्थान में बृहस्पति हो एवं लग्नेश बलवान हो तो जातक बड़ा भाग्यशाली होता है।। भाग्येश बलवान हो भाग्यस्थान में शुक्र हो, बलवान् गुरु केन्द्र में हो तो पिता भी और आप भी भाग्यशाली होता है।। भाग्यस्थान से द्वितीय या चतुर्थ स्थान मे मंगल हो तथा भाग्येश नीच राशि का हो तो पिता निर्धन ही होता है।। भाग्येश परमोच्च में हो तथा भाग्यराशि के नवांश में बृहस्पति हो तथा शुक्र केन्द्र में हो तो पिता दीर्घायु होता है।। भाग्येश केन्द्रस्थान में हो और बृहस्पति देखता हो तो जातक वाहनोंसे युक्त राजा या राजा के समान होता है।। भाग्येश दशम में हो और दशमेश भाग्यस्थान में हो तो कर्मेश के प्रभाव से जातक का पिता धनी और यशस्वी होता है।। सूर्य परमोच्च में हो तथा भाग्येश लाभस्थान में हो तो पिता पुण्यात्मा राजमान्य होता है।।२०१-२१०।।

लग्नात्त्रिकोणगे सूर्ये भाग्येशे सप्तमस्थिते ।। गुरुणा सहिते दृष्टे पितृभक्तिसमन्वितः ।।२११।। भाग्येशे धनभावस्थे धनेशे भाग्यराशिगे ।। द्वात्रिंशात्परतो भाग्यं वाहनं कीर्तिसंभवः ।।२१२।। लग्नेशे भाग्यराशिस्थे षष्ठेशे भाग्यराशिगे ।। अन्योन्यवैरं ब्रुवते जनकः कुत्सितो भवेत् ।।२१३।। कर्मज्ञे रिपुरंध्ररिःफभवने जीवे च भिक्षाशनः ।। भाग्येशे यदि जन्मकालसमये प्राप्नोति दीक्षां रविः ।।२१४।। कर्माधिपेन सहितो विक्रमेशो विधिबलः ।। नीचराशिविमूढस्थो योगो भिक्षाशनात्प्रभुः ।।२१५।। षष्ठाष्टमव्यये भानू रंध्रेशे भाग्यसंयुते ।। व्ययेशे लग्नराशिस्थे षष्ठांशपंचमे स्थिते ।।२१६।। जातस्य जननात्पूर्वं जनकस्य मृतिर्भवेत् ।। रंध्रस्थानगते सूर्ये रंध्रेशे भाग्यनायके ।।२१७।। जातस्य प्रथमाब्दे तु पितुर्मरणमादिशेत् ।। व्ययेशे भाग्यराशिस्थे नीचांशे भाग्यनायके ।।२१८।।

लग्न से त्रिकोण ५।९ में सूर्य हो तथा भाग्येश सप्तमभाव में हो और गुरुयुक्त या दृष्ट हो तो जातक पिता का भक्त होता है।। भाग्येश धनभाव में हो और धनेश भाग्यभाव में हो तो ३२ वर्ष की उम्र के बाद भाग्योदय होता है और वाहन तथा कीर्ति होती है।। लग्नेश तथा षष्ठेश भाग्यस्थान में हो तो पिता पुत्र का आपस में वैर होता है और पिता दुष्टबुद्धि होता है।। यदि दशम भाव में बुध हो और जन्मलग्न में भाग्येश सूर्य हो, ६।८।१२ स्थान में गुरु हो तो भिखारी होता है।। तृतीयभाव का स्वामी दशमेश के साथ नीचराशि और मूढ़ अवस्था में हो तो भिक्षाटन करता हुआ भगवान् के भरोसे पर जीता है।। सूर्य- ६।८।१२ में हो, अष्टमेश भाग्यस्थान में हो और व्ययेश लग्न के छठे पंचमांश में हो , तो जातक के जन्म के पहिले ही पिता की मृत्यु होती है। अष्टमभाव में सूर्य हो तथा अष्टमेश और नवमेश एक ही हो (जैसे मिथुन लग्न में शनि) तो जातक के पहिले वर्ष में ही पिता की मृत्यु होती है।। व्ययेश ही भाग्यस्थान में हो, भाग्येश परमनीच का हो।।२११-२१८।।

तृतीये षोडशे वर्षे जनकस्य मृतिर्भवेत् ।। लग्नेशे नाशराशिस्थे रन्ध्रेशे भानुसंयुते ।।२१९।। द्वितीये द्वादशे वर्षे पितुर्मरणमादिशेत् ।। भाग्याद्रन्ध्रगते राहौ भाग्याद्भाग्यगते रवौ ।।२२०।। षोडशेऽष्टादशे वर्षे जनकस्य मृतिर्भवेत् ।। भाग्याद्रंध्रगते राहौ भाग्याद्भाग्यगते रवौ ।।२२१।। राहुणा सहिते सूर्ये चंद्राद्भाग्यगते शनौ।।सप्तमैकोनविंशाब्दे तातस्य मरणं

ध्रुवम् ॥२२२॥ भाग्येशे व्ययराशिस्थे व्ययेशे भाग्यराशिगे ॥ चतुश्चत्वारिवर्षाच्च पितुर्मरणमादिशेत् ॥२२३॥ रव्यंशे च स्थिते चंद्रे लग्नेशे रंध्रसंयुते ॥ पंचत्रिंशैकचत्वारि-वत्सरे पितृनाशनम् ॥२२४॥ पितृस्थानाधिपे सूर्ये मंदभौमसमन्विते ॥ पंचाशद्वत्सरे प्राप्ते जनकस्य मृतिर्भवेत् ॥२२५॥ भाग्यात्सप्तमगे सूर्ये भ्रातृसप्तमगस्तमः ॥ षष्ठमे पंचविंशाब्दे पितुर्मरणमादिशेत् ॥२२६॥ रंध्रजामित्रगे मंदे मंदाज्जामित्रगे रवौ ॥ त्रिंशैकविंशे षड्विंशे जनकस्य मृतिर्भवेत् ॥२२७॥

तो तीसरे या सोलहवें वर्ष में पिता की मृत्यु होती है। लग्नेश अष्टमभाव में हो, अष्टमेश के साथ में सूर्य हो तो दूसरे या बारहवें वर्ष में पिता की मृत्यु होती है। नवमस्थान से आठवें राहु और नौवें सूर्य हो तो सोलहवें या अठारहवें वर्ष में पिता की मृत्यु हो। नवमभाव से आठवें राहु और नौवें सूर्य हो तथा राहु के साथ सूर्य हो और चन्द्रमा से नौवें शनि हो तों सातवें या १९ वें वर्ष में पिता की मृत्यु होती है॥ भाग्येश व्ययभाव में हो और व्ययेश भाग्यभाव में हो तो २४ वें वर्ष में पिता की मृत्यु होती है॥ चन्द्रमा सूर्यनवांश में हो तथा लग्नेश आठवें भाव में हो तो ३५ या ४१ वर्ष में पिता की मृत्यु होती है॥ सूर्य दशमेश हो और शनि, मंगलयुक्त हो तो पचासवें वर्ष में पिता की मृत्यु होती है॥ भाग्यभाव से सूर्य सप्तम में हो तथा तीसरे भाव से सातवें राहु हो तो छठे या २५वें वर्ष में पिता की मृत्यु होती है॥ आठवें भाव से सातवें शनि हो और शनि से सातवें सूर्य हो तो २१ या २६ अथवा ३० वें वर्ष में पिता की मृत्यु हो॥ ॥२१९–२२७॥

भाग्येशे नीचराशिस्थे तदीशे भाग्यराशिगे ॥ षड्विंशगे त्रयस्त्रिंशे पितुर्मरणमादिशेत् ॥२२८॥ रव्यंशकस्थिते चंद्रे लग्नेशे रन्ध्रसंयुते ॥ पंचत्रिंशैकचत्वारिवत्सरे पितृनाशनम् ॥२२९॥ पितृस्थानाधिपे सूर्ये चन्द्रभौमसमन्विते ॥ पंचाशद्वत्सरे प्राप्ते जनकस्य मृतिर्भवेत् ॥२३०॥ परमोच्चांशगे शुक्रे भाग्येशेन समन्विते ॥ भ्रातृस्थाने शनियुते बहुभाग्याधिपो भवेत् ॥२३१॥ गुरुणा संयुते भाग्ये तदीशे केंद्रराशिगे ॥ त्रिंशद्वर्षात्परं चैव बहुभाग्यं विनिर्दिशेत् ॥२३२॥ परमोच्चांशगे सौम्ये भाग्येशे भाग्यराशिगे ॥ षट्त्रिंशाच्च परं चैव बहुभाग्यं विनिर्दिशेत् ॥२३३॥ लग्नेशे भाग्यराशिस्थे भाग्येशे लग्नसंयुते ॥ गुरुणा संयुते द्यूने धनवाहनलाभकृत् ॥२३४॥ भाग्याद्भाग्यगतो राहुर्भाग्यशे निधनं गते ॥ भाग्येशे नरराशिस्थे भाग्यहीनो भवेन्नरः ॥२३५॥ भाग्यस्थानगते मंदे शशिना च समन्विते ॥ लग्नेशे नीचराशिस्थे भिक्षाशी च नरो भवेत् ॥२३६॥

भाग्येश नीचराशि में हो और उस राशि का स्वामी भाग्यराशि में हो तो २६ या ३३ वें वर्ष में पिता की मृत्यु हो॥ सूर्य के नवांश में चन्द्रमा हो तथा लग्नेश आठवें भाव में हो तो ३५ या ४१वें वर्ष में पिता की मृत्यु होती है॥ सूर्य दशमेश हो और चन्द्र मंगलयुक्त हो तो ५० वें वर्ष में पिता की मृत्यु होती है॥ शुक्र परमोच्च में हो, भाग्येश युक्त हो, तृतीयभाव में शनि हो तो बहुत भाग्यवान् होता है॥ भाग्यस्थान में गुरु हो, भाग्येश केन्द्र में हो तो २० वर्ष के बाद भाग्योदय होता है॥ बुध परमोच्च में हो, भाग्येश भाग्यराशि (स्वगृही) हो तो ३६ वें वर्ष में पूर्ण भाग्योदय होता है॥ लग्नेश भाग्यराशि में और भाग्येश लग्न में तथा गुरु सप्तम में हो तो

धन और सवारी का लाभ होता है।। भाग्यस्थान में नौवें राहु हो और भाग्यराशि स्वामी पुरुषराशि में अष्टमभाव में हो तथा लग्नेश नीच राशि में हो तो जातक का जीवन भिक्षा पर ही व्यतीत होता है।। २२८-२३६।।

अथ दशमभावफलम्

कर्माधिपो बलोनश्चेत्कर्मवैकल्यमादिशेत् ।। सैंहिः केंद्रत्रिकोणस्थो ज्योतिष्टोमादियागकृत् ।।२३७।। अत्रायुषश्चिंतनं च कार्यं स्यात्कर्मणस्तथा ।। शत्रुनीचगृहं त्यक्त्वा षष्ठाष्टमगृहं तथा।।२३८।। दशमे पापसंयुक्ते लाभे पापसमन्विते ।। दुष्कृतिं लभते मर्त्यः स्वजनानां विदूषकः ।।२३९।। कर्मेशे नाशराशिस्थे कर्मेशे राहुसंयुते ।। जनद्वेषी महामूर्खो दुष्कृतिं लभते नरः ।। कर्मेशेद्यूनराशिस्थे मंदभौमसमन्विते ।।२४०।। द्यूनेशे पापसंयुक्ते शिश्नोदरपरायणः ।। तुंगराशिं समाश्रित्य कर्मेशे गुरुसंयुते ।।२४१।। भाग्येशे कर्मराशिस्थे मानैश्वर्यप्रतापवान् ।। लाभेशे कर्मराशिस्थे कर्मेशे लग्नसंयुते ।। तावुभौ केंद्रगौ वापि सुखजीवनभाग् भवेत् ।।२४२।। कर्मेशे बलसंयुक्ते मीनेगुरुसमन्विते ।। वस्त्राभरणसौख्यादि लभते नात्र संशयः ।।२४३।। लाभस्थानगते सूर्ये राहुभौमसमन्विते ।। रविपुत्रेण संयुक्ते कर्मच्छेत्ता भवेन्नरः ।।२४४।। मीने च राहौ यदि चोच्चकांशे भागीरथीस्नानफलं लभेन्नरः ।।२४५।। माने च मीने यदि वार्कपुत्रे संन्यासयोगं प्रवदंति तस्य ।।२४६।। मीने जीवे भृगुयुते लग्नेशे बलसंयुते ।। स्वोच्चराशिगते चन्द्रे सम्यग्ज्ञानार्थवान् भवेत् ।।२४७।। कर्मेशे लाभराशिस्थे लाभेशे लग्नसंस्थिते ।। कर्मराशिस्थिते शुक्रे रत्नवान् स नरो भवेत् ।।२४८।। केंद्रत्रिकोणगे कर्मनाथे स्वोच्चसमाश्रिते ।। गुरुणा सहिते दृष्टे स कर्मसहितो भवेत् ।।२४९।। कर्मेशे लग्नभावस्थे लग्नेशेन समन्विते ।। केंद्रत्रिकोणगे चन्द्रे सत्कर्मनिरतो भवेत् ।।२५०।। कर्मस्थानगते मंदे नीचखेचरसंयुते ।। कर्मांशे पापसंयुक्ते कर्महीनो भवेन्नरः ।।२५१।। कर्मेशे वांशराशिस्थे रंध्रेशे कर्मसंस्थिते ।। पापग्रहेण संयुक्ते दुष्कर्मनिरतो भवेत् ।।२५२।। कर्मेशे नीचराशिस्थे कर्मस्थे पापखेचरे ।। कर्मभात्कर्मगे पापे कर्मवैकल्यमादिशेत् ।।२५३।। कर्मस्थानगते चंद्रे तदीशे तत्त्रिकोणगे ।। लग्नेशे केंद्रभावस्थे सत्कीर्तिसहितो भवेत् ।।२५४।। लाभेशे कर्मभावस्थे कर्मेशे बलसंयुते ।। देवेंद्रगुरुणा दृष्टे सत्कीर्तिसहितो भवेत् ।।२५५।। कर्मस्थानाधिपे भाग्ये लग्नेशे कर्मसंयुते ।। लग्नात्पंचमगे चंद्रे ख्यातिकीर्त्तो विनिर्दिशेत् ।।२५६।।

दशमभाव फल

दशमेश बलहीन हो तो कर्म (क्रियाशक्ति) में विकलता होती है। सूर्य केन्द्र या त्रिकोण में हो तो 'ज्योतिष्टोम' आदि यज्ञ करनेवाला होता है।। इस दशमस्थानसे आयुका विचार तथा भले बुरे कर्मों का विचार करना चाहिये। कर्मेश के लिये शत्रुराशि और नीचराशि का त्याग तथा ६।८ भाव का त्याग उत्तम होता है।। दशमभाव पापराशियुक्त हो और लाभस्थान में भी पापग्रह हो तो जातक कर्महीन होता है और स्वजनों का निन्दक होता है।। दशमेश अष्टमभाव्न में हो और राहु साथ में हो तो जनद्वेषी, महामूर्ख और दुर्गतियुक्त होता है।। दशमेश सातवें स्थान में हो, शनि, मंगल युक्त हो और सप्तमेश पापग्रह युक्त हो तो जातक केवल कामी, भोगासक्त और पेट भरना ही परम पुरुषार्थ जानता है। दशमेश उच्च में तथा

बृहस्पति युक्त हो और भाग्येश दशम में हो तो प्रतिष्ठा ऐश्वर्य और प्रतापवाला होता है। लाभेश दशमभाव में हो और दशमेश लग्न में हो अथवा ये दोनों केन्द्र में हों तो जीवन सुखमय होता है।। दशमेश बलवान् होकर मीनराशि में बृहस्पतियुक्त हो तो उत्तमवस्त्र, आभूषण आदि प्राप्त होता है।। लाभस्थान में सूर्य, मंगल, शनि, राहु हों तो जातक कर्मबन्धन का करनेवाला होता है।। राहु यदि मीन राशि में अपने उच्चांश पर हो तो मनुष्य को भागीरथी गंगास्नान का सुयोग प्राप्त होता है। शनि यदि मीनराशि का होकर दशमभाव में स्थित हो तो संन्यास ग्रहण करता है।। मीनराशि में स्थित गुरु, शुक्र से युक्त हो, लग्नेश बलवान् हो और चन्द्रमा उच्च राशि का हो तो ज्ञानी, धनी, मानी होता है।। दशमेश लाभराशि में हो, लाभेश लग्न में हो, दशमभाव में शुक्र हो तो जातक रत्नवाला (जौहरी) होता है और दशमेश केन्द्र या त्रिकोण स्थान में उच्च राशि में हो और गुरु से युक्त या दृष्ट हो तो मनुष्य कर्मयोगी होता है।। दशमेश लग्नेश के साथ लग्न में हो और चन्द्रमा केन्द्र या त्रिकोण में हो तो श्रेष्ठकर्मरत रहता है।। दशमभाव में शनि नीचराशिगत ग्रह युक्त हो और दशमराशि के नवांश में भी पापग्रह हो तो मनुष्य कर्महीन होता है।। दशमेश अपने नवांश में हो, अष्टमेश दशमभाव में हो और पापग्रह से युक्त हो तो जातक दुष्कर्म निरत रहता है। दशमेश नीचराशि में हो और दशमभाव में पापग्रह हों तथा दशमभाव से दशमभाव में (अर्थात् लग्न से सप्तम में) पापग्रह हों तो जातक का कोई काम पूरा नहीं होता।। दशमभाव में चन्द्रमा हो, दशमेश चन्द्रमा से त्रिकोण ९।५ में हो, लग्नेश दशम में हो तो श्रेष्ठ कीर्तिवाला होता है।। लाभेश दशमभाव में हो और दशमेश बलवान् हो गुरु की दृष्टि हो तो सुयशवाला होता है।। दशमेश नवम में हो, लग्नेश दशमभाव में हो, लग्न से पंचमभाव में चन्द्रमा हो तो जातक सत्कीर्ति से विख्यात होता है ।।२३७-२५६।।

अथैकादशभावफलम्

लाभाधिपो यदा लाभे तिष्ठेत्केंद्रत्रिकोणयोः ।। बहुलाभं तदा कुर्यादुच्चंसूर्यांशगोऽपि वा ।।२५७।। लाभेशे धनराशिस्थे धनेशे केंद्रसंस्थिते ।। गुरुणा सहिते भावे गुरुलाभं विनिर्दिशेत् ।।२५८।। षट्त्रिंशे वत्सरे प्राप्ते सहस्रद्वयनिष्कभाक् ।। केंद्रत्रिकोणगे भावेनाथे शुभसमन्विते ।। चत्वारिंशे तु संप्राप्ते सहस्रार्धं च निष्कभाक् ।।२५९।। लाभस्थाने गुरुयुते धने चंद्रसमन्विते ।। भाग्यस्थानगते शुक्रे षट्सहस्राधिपो भवेत् ।।२६०।। लाभाच्च लाभगे जीवे गुरुचंद्रेण संयुते ।। धनधान्याधिपः श्रीमान्रत्नाद्याभरणैर्युतः ।।२६१।। लाभेशे लग्नभावस्थे लग्नेशे लाभसंयुते ।। त्रयस्त्रिंशे तु संप्राप्ते सहस्रनिष्कभाग्भवेत् ।।२६२।। धनेशे लाभराशिस्थे तदीशे धनराशिगे ।। विवाहात्परतश्चैव बहुभाग्यं समादिशेत् ।।२६३।। धैर्येशे लाभराशिस्थे लाभेशे भ्रातृसंस्थिते ।। भ्रातृभावाद्धनप्राप्तिर्दिव्याभरणसंयुतः ।।२६४।। लाभे पापे च व्यये पापयुक्ते दृष्टे पापे क्षेत्रयुक्तेन युक्ते ।। लाभात्कामे लाभविघ्ने निरर्थं सौम्यार्थं यो वीक्षणं विघ्ननाशः ।।२६५।।

एकादशभाव फल

लाभेश लाभ में हो अथवा केन्द्र या त्रिकोण में हो तो बहुत लाभ कारक होता है। उच्चराशि का और सिंह नवांश में और भी श्रेष्ठ है।। लाभेश द्वितीय में हो तथा द्वितीयेश

केन्द्र में हो और गुरु से युक्त हो तो अच्छा बड़ा लाभ होता है।। और छत्तीसवें वर्ष में दो हजार निष्कमुद्रा (प्राचीन मुद्रा सुवर्ण की के हिसाब से तो बहुत होता है) का लाभ होता है। लाभेश केन्द्र या त्रिकोण में शुभग्रह युक्त हो तो चालीसवें वर्ष में ५०० निष्क प्राप्त होता है।। लाभस्थान में गुरु हो, द्वितीय में चन्द्रमा हो, भाग्यस्थान में शुक्र हो तो छः हजार निष्कमुद्रा का धनी होता है।। लाभस्थानमें गुरु हो, बलवान् चन्द्रमासे युक्त हो तो जातक धनधान्ययुक्त रत्न–भूषणवाला होता है।। लाभेश लग्न में और लग्नेश लाभ में हो तो ३३ वें वर्ष में एक हजार निष्क की प्राप्ति होती है।। धनेश लाभ में और लाभेश धन में हो तो विवाह के बाद ही भाग्यशाली होता है।। तीसरे भाव का स्वामी लाभस्थान में हो और लाभेश तृतीय में हो तो भ्राता से श्रेष्ठ वस्त्राभरणादि प्राप्त होते हैं।। लाभस्थान में और व्ययभाव में पापग्रह हो या दृष्टि हो तथा ग्रह स्वगृही होकर युक्त या द्रष्टा हों और लाभ से सप्तमभाव पर भी पापदृष्टि या युक्त हो तो लाभ में विघ्न होता है और सौम्य दृष्टि हो तो विघ्नोंका नाश होता है।।२५७-२६५।।

अथ व्ययभावफलम्

चंद्रो व्ययाधिपो धर्मलाभमंत्रेषु संस्थितः ।। स्वोच्चस्वर्क्षनिजांशे वा लाभधर्मात्मजांशके ।। दिव्यागारादिपर्यंको दिव्यगंधैकभोगवान् ।।२६६।। परार्ध्यरमणो दिव्यवस्त्रमाल्यादिभूषणः ।। परार्ध्यसंयुतो वित्तो दिनानि नयति प्रभुः ।। २६७।। एवं स्वशत्रुनीचांशे अष्टांशे वाष्टमे रिपौ ।। संस्थितः कुरुते जातं कांतासुख विवर्जितम् ।।२६८।। व्ययाधिक्यपरिक्लांतं दिव्यभोगनिराकृतम् ।। स हि केंद्रत्रिकोणस्थः स्वस्त्रियालंकृतः स्वयम् ।।२६९।। एवं भ्रात्रादिभावेषु तत्तत्सर्वं विचारयेत् ।। लग्नस्य पूर्वार्द्धे १०।११।१२।१।२।३। गता नभोगाः फलं प्रदद्युस्त्वपरोक्षकं ते ।। परार्द्धे ४।५।६।७।८।९। षट्कोपगताः परोक्षं फलं वंदतीति बुधाः पुराणाः ।।२७०।। व्ययस्थानगतो राहुर्भौमार्करविसंयुतः ।। तदीशेनार्कसंयुक्ते नरके पतनं भवेत् ।।२७१।। व्ययस्थानगते सौम्ये तदीशे स्वोच्चराशिगे ।। शुभयुक्ते शुभैर्दृष्टे परोक्षः स्यान्न संशयः ।।२७२।। व्ययेशे पापसंयुक्ते व्यये पापसमन्विते ।। पापग्रहेण संदृष्टे देशाद्देशांतरं गतः ।।२७३।। व्ययेशे शुभराशिस्थे व्ययर्क्षे शुभसंयुते ।। शुभग्रहेण संदृष्टे स्वदेशात्संचरो भवेत् ।।२७४।। व्यये मंदादिसंयुक्ते भूमिजेन समन्विते ।। शुभदृष्टैश्च संप्राप्तिः पापमूलाद्धनार्जनम् ।।२७५।। लग्नेशे व्ययराशिस्थे व्ययेशे लग्नसंयुते ।। भृगुपुत्रेण संयुक्ते धर्ममूलाद्धनव्ययम् ।।२७६।। अग्रे जातं रविर्हन्ति पृष्ठे जातं शनैश्चरः ।। अग्रजं पृष्ठजं हंति सहजस्थो धरासुतः ।।२७७।। पत्नीस्थाने यदा राहुः पापयुग्मेन वीक्षितः ।। पत्नी योगस्थिता तस्य भूतापि म्रियतेऽचिरात् ।।२७८।। षष्ठे च भवने भौमः सप्तमे राहुसम्भवः ।। अष्टमे च यदा सौरिस्तस्य भार्या न जीवति ।।२७९।।

इति श्रीबृहत्पाराशरहोराशास्त्रे पूर्वखण्डे द्वादशभावविचारकथनं नाम चतुर्दशोऽध्यायः ।।१४।।

व्ययभावफल

व्ययभाव का स्वामी होकर चन्द्रमा ५।९।११ में स्थित हो और अपनी राशि या नवांश या उच्च का हो अथवा ५।९।११ वें नवांश में हो तो अति सुन्दर मकान तथा अति सुन्दर भोग

विभूति वाला होता है। उम्र भर उत्तम भोग भोगता है। और यदि वही चन्द्रमा शत्रुराशि में नीच अंश वाला होकर ६।८ भाव में हो तो स्त्रीसुख से रहित करता है और अधिक खर्च से दुःखी तथा अच्छे पदार्थों से रहित रहता है।। और वह चन्द्रमा निर्बल होकर भी केन्द्र या त्रिकोण भावों में हो तो अपनी स्त्री का सुख रहता है।। इसी प्रकार भ्राता, आदि के लिए उनके भाव से व्ययेश या चन्द्रमा से उपर्युक्त योगानुसार विचार करना चाहिये।। लग्न के पूर्वार्द्ध भाग (१।२।३।१०।११।१२) में स्थित ग्रह प्रत्यक्ष फल देते हैं। और लग्न के परार्द्ध भाग में स्थित ग्रह परोक्ष फल देते हैं (परार्द्धभाग की 'षट्कोष' संज्ञा है) यह प्राचीन आचार्यों का कथन है।। व्ययस्थान में स्थित राहु सूर्य, मंगल, शनि युक्त हो अथवा व्ययेश सूर्य युक्त हो तो (कुकर्म के फल से) नरक में वास होता है।। व्ययस्थान में बुध हो और उसका स्वामी उच्च राशि में हो शुभग्रह युक्त और शुभदृष्ट हो तो यज्ञ, दान, धर्म आदि परोक्ष फलप्रद कर्म में व्यय होता है।। व्यय स्थान और स्वामी पाप ग्रहों से युक्त अथवा दृष्ट हों तो देश देशान्तरों में भ्रमण करता है। (एक स्थान पर जम कर नहीं रह सकता) व्ययेश शुभ राशि में हो, व्ययभाव में शुभ ग्रह युक्त हों या शुभग्रह देखते हों तो अपने देश में ही संचरण (यातायात) करता रहता है।। व्ययभाव में शनि मंगल आदि हों परन्तु शुभग्रहों की दृष्टि हो तो पापजनक कार्यों से धनार्जन होता है।। लग्नेश ग्रह व्ययभाव में हो और व्ययेश लग्न में हो और शुक्र युक्त हो तो धर्म कार्यों में धन का खर्च होता है।। (यह अगला श्लोक तीसरे भावफल में होना चाहिये) तीसरे भाव में रवि हो तो अपने जन्म के बाद जन्म लेनेवाले भाइयों को मारता है। और शनैश्चर अपने से पहिले जन्म लेनेवालों को मारता है। और मंगल यदि तीसरे भाव में स्थित हो तो बड़े छोटे सभी भाइयों को मारता है।। भार्यास्थान में जब राहु हो और दो पापग्रहों से दृष्ट हो तो उस जातक के प्रथम तो पत्नी हो नहीं, और हो भी तो जल्दी ही मृत्यु को प्राप्त होती है।। छठे भाव में मंगल, सप्तम में राहु और अष्टम भाव में शनि हो तो उसकी स्त्री जीवनलाभ नहीं कर सकती। (इन २ श्लोकोंका सम्बन्ध सप्तम भावफलसे हैं) बारहों भावों का फल समाप्त ।। २६६-२७९।।

इति श्री बृ०पा०हो०शा०पू०भा०प्र० द्वादशभावविचारकथनं नामचतुर्दशोऽध्यायः।।१४।।

मैत्रेय उवाच–

परजातः कथं ज्ञेयः कथं ज्ञेयः शुभाशुभम् ।। एतत्सर्वं समाचक्ष्व ग्रहराशिफलं शुभम् ।।१।। पराशर उवाच–तुर्यचन्द्रेक्षितः खेटः शत्रुभिर्वा युतेक्षितः ।। परेण जायते बालो निश्चितं च यथा पशुः ।।२।। त्रिषष्ठद्विसुताधीशो यदा लग्ने स्थितस्तदा ।। तथापि परजातः स्याद्भृत्याद्यन्यसुतादिभिः।।३।। लग्ने क्रूरोऽस्तगः सौम्यः कर्मस्थो रविनन्दनः ।। अस्मिन्योगे च यो जातो जायते वर्णसंकरः ।।४।। मूर्तौ चेन्दुश्च दुश्चिक्ये भूमिनंदनभार्गवौ ।। यदा पंचदशावर्णे तदापि परबालकः ।।५।। ग्रहराजे स्थिते लग्ने चतुर्थे सिंहिकासुतः ।। स्वदेवरात्सुतोत्पत्तिर्जाता तस्या न संशयः ।।६।। लग्ने राहुधरापुत्रौ सप्तमे चंद्रभास्करौ ।। नीचेन जायते बालो यदि राज्ञी भवेदपि ।।७।। सूर्ययुक्तेंदुलग्नस्थे सप्तमे भौमभास्करौ ।। अस्मिन्योगे यदा जन्म परेणैव हि जायते ।। केंद्रं शून्यं भवेद्यस्य सोऽपि जातः परेणहि ।।८।। द्विषष्ठाष्टमरिः फेषु ग्रहास्तिष्ठंति यस्य सः ।। परजातो भवेत्सत्यमन्यत्रापि च संस्थितः ।।९।। एकस्थाने यदाऽस्तेशलग्नेशौ सोऽपि जारजः

।।१०।। जीवो निशाकरं लग्नं नेक्षेतापि स जारजः ।। जीववर्गविहीनांशे तदा योगः पराज्जने ।।११।। द्विशत्रू चैककेन्द्रस्थावन्यग्रहविवर्जितौ ।। तदापि परजातः स्यात्स्थिरलग्ने विशेषतः ।।१२।। चतुर्थे दशमे लग्ने पापयुग् विधुसंस्थितः ।। लग्नेशेनेक्षितं लग्नं तदापि परबालकः ।।१३।। लग्नेशे संस्थिते लग्ने परजातः कदाचन ।। भंगोऽयं सर्वयोगानामिति ते कथितं मया ।।१४।।

परजातयोगफल

मैत्रेय बोले—परजात (दूसरे के संयोग से जन्म होना) को किन योगों से जाने? और उसका शुभाशुभ फल कैसे जाने? ग्रह और भाव के फल सब कथन करिये।

पराशरजी ने कहा—चतुर्थ भावस्थ चन्द्र से दृष्ट और शत्रुग्रह से युक्त या दृष्ट तो बालक निश्चय परजात है। ३।६।२।५ इन स्थानों का कोई भी स्वामी लग्न में हो तो भी उपर्युक्त योग में परजात है और यह गर्भाधान नौकर आदि से हुआ है।। लग्न में पापग्रह, सातवें भाव में अस्त बुध, दशम में शनि इस योग में हुआ बालक वर्णसंकर है।। लग्न में चन्द्रमा, तीसरे मंगल, शुक्र हो तो पन्द्रह आवरण में भी परबालक है।। लग्न में शनि या सूर्य चतुर्थ भाव में राहु हो तो अपने देवर से सन्तान की उत्पत्ति हुई है।। लग्न में राहु, मंगल हों, सप्तम में सूर्य चन्द्रमा हों तो रानी होने पर भी नीच जाति से बालक हुआ है।। लग्न में सूर्य, चन्द्रमा हों, सप्तम में मंगल सूर्य हो इस योग में जन्म लेने वाला दूसरे से ही होता है।। केन्द्रस्थान शून्य हों तो भी पर से ही जन्म है।। २।६।८।१२ इन स्थानों में अधिक तर ग्रह हों तो परजात है। अन्य स्थान में १–२ ग्रह हों तो भी परजात है।। लग्नेश और सप्तमेश दोनों एक स्थान में हों तो परजात होता है।। बृहस्पति यदि चन्द्रमा या लग्न को नहीं देखता हो तो भी जारज है। षड् वर्ग में बृहस्पति का अंश न हो तो जारज है।। दो शत्रुग्रह किसी एक केंद्र स्थान में हो और अन्य ग्रह न हो तो भी परजात है, स्थिर लग्न में विशेष करके योग बलवान् है।। चतुर्थ, दशम तथा लग्न में पापग्रह सहित चन्द्रमा हो और लग्नेश से लग्न दृष्ट हो तो भी परजात है।। लग्नेश लग्न में हो तो परजात कभी ही होता है। यह परजातभंग सब कथित योगों का भंजक है। सो सब तुमको कहा गया है ।।१–१४।।

अथ लग्नेशद्वादशभावस्थितफलमाह

लग्नेशे लग्नगे पुन्सः स्वदेहस्वभुजाक्रमी ।। मनस्वी चातिचांचल्यो द्विभार्यः परगोपि वा ।।१५।। लग्नेशे धनगे लाभे सलाभः पीडितो नरः ।। सुशीलो धर्मविन्मानी बहुदारगुणैर्युतः ।।१६।। लग्नेशे सहजे षष्ठे सिंहतुल्यपराक्रमी ।। सर्वसम्पद्युतो मानी द्विभार्यो मतिमान्सुखी ।।१७।। लग्नेशे दशमें तुर्ये पितृमातृसुखान्वितः ।। बहुभ्रातृयुतः कामी गुणसौंदर्यसंयुतः ।।१८।। लग्नेशे पंचमे मानी सुतसौख्यं च मध्यमम्।। प्रथमापत्यनाशः स्यात्क्रोधी राजप्रवेशकः ।।१९।। लग्नेशः सप्तमे यस्य भार्या तस्य न जीवति ।। विरक्तो वा प्रवासी वा दरिद्रो वा नृपोपि वा ।।२०।। लग्नेशे व्ययगेऽष्टस्थे सिद्धविद्याविशारदः ।। द्यूती चौरो महाक्रोधी परनार्यतिभोगकृत् ।।२१।। लग्नेशे नवमे पुन्सो भाग्यवान् जनवल्लभः ।। विष्णुभक्तः पटुर्वाग्मी पुत्रदारधनैर्युतः ।।२२।।

लग्नेशद्वादशभावफल

लग्नेश जिसके लग्न में हो वह अपनी कमाई करनेवाला, मनस्वी, चंचल, दो स्त्री वाला होता है।। लग्नेश दूसरेभाव में हो तो लाभ करनेवाला, पीड़ा भोगनेवाला, सुशील, धर्मात्मा, मानी तथा स्त्रीभावप्रधान होता है।। लग्नेश के तीसरे भाव में होने से तथा छठे भाव में होने से सिंह के समान पराक्रमी, सर्वगुणसम्पन्न, मतिमान्, सुखी, मानी, दो स्त्रियोंवाला होता है।। लग्नेश जिसकें चौथे या दशम भाव में हो–वह माता पिता का सुखवाला, भाइयों में युक्त, कामी, सुन्दर, गुणी होता है।। लग्नेश पञ्चम में हो तो मानी तथा कम सन्तानवाला, दूसरी स्त्री तथा क्रोधी और राजकार्य में निपुण होता है।। लग्नेश सप्तम भाव में हो तो स्त्री सुख से वंचित, विरक्त, प्रवासी, दरिद्र या राजा होता है।। लग्नेश बारहवें या आठवें हों तो अनेक विद्यायुक्त, जुवारी, चोर, क्रोधी, परदारगामी होता है।। लग्नेश नौवें हो तो भाग्यवान्, सबका प्रेमी, विष्णुभक्त, चतुर, वाचाल, स्त्री–पुत्र–धनयुक्त होता है ।।१५–२२।।

अथ धनेशद्वादशभावस्थितफलमाह

धनेशे धनगे सोऽथ धनवान् गर्वसंयुतः ।। भार्याद्वयं त्रयं चापि सुतहीनः प्रजायते ।।२३।। धनेशे सहजे तुर्ये विक्रमी मतिमान् गुणी ।। परदाराभिगामी च लोभी वा देवनिंदकः ।।२४।। धनेशे रिपुगे शत्रोर्धनं प्राप्नोति निश्चितम् ।। शत्रुतो वित्तनाशः स्याद्गुदे चोर्वोर्भवेच्च रुक् ।।२५।। धनेशे सप्तमे वैद्यः परजायाभिगामिकः ।। जाया तस्य भवेद्वेश्या मातापि व्यभिचारिणी ।।२६।। धनेशे मृत्युगेहस्थे भूमिद्रव्यं लभेद् ध्रुवम् ।। जायासौख्यं भवेत्स्वल्पं ज्येष्ठभ्रातृसुखं न हि ।।२७।। धनेशे नवमे लाभे धनवानुद्यमी पटुः ।। बाल्यरोगी सुखी पश्चाद्यावदायुः समाप्यते ।।२८।। धनेशो दशमे यस्य कामी मानी च पंडितः ।। बहुदारधनैर्युक्तः सुतहीनोपि जायते ।।२९।। धनेशे व्ययगे मानी साहसी धनवर्जितः ।। जीविका नृपगेहाच्च ज्येष्ठपुत्रसुखं न हि ।।३०।। धनेशे च तनौ पुत्री स्वकुटुंबस्य कंटकः ।। धनवान्निष्ठुरः कामी परकार्येषु तत्परः ।।३१।।

धनेश द्वादशभाव फल

धनेश (द्वितीयेश) द्वितीय में हो तो धनवान्, अभिमानी हो,स्त्री दो या तीन तथा पुत्रहीन होता है।। धनेश तीसरे या चौथे भाव में हो तो विक्रमी, बुद्धिमान, गुणी, परस्त्रीगामी, लोभी, देवनिन्दक होता है।। धनेश छठे भाव में हो तो शत्रु का धन प्राप्त होता है तथा बाद में शत्रु के कारण ही नष्ट होता है तथा जांघ की बीमारी होती है।। धनेश सप्तम में हो वैद्य, परस्त्रीसेवी तथा स्त्री और माता व्यभिचारिणी होती है।। धनेश अष्टम में हो तो भूमि में गड़ा हुआ धन प्राप्त होता है, स्त्रीसुख कम तथा बड़े भाई का सुख नहीं होता।। धनेश नौवें या लाभ में हो धनवान्, उद्यमी, चतुर, भोगी, बाल्य अवस्था का रोगी बाद में सदा सुखी रहता है।। धनेश दशवें हो तो कामी, मानी, पंडित, अनेक स्त्रीवाला, धनी तथा सन्तान हीन होता है।। धनेश व्ययभाव में हों तो मानी, साहसी, दरिद्र तथा राजसेवी होता है और ज्येष्ठ पुत्र नहीं रहता।। धनेश लग्न में हो तो पुत्रवाला, अपने कुटुम्ब का द्रोही, धनवान् निष्ठुर, कामी तथा औरों के काम में सहायक होता है ।।२३–३१।।

अथ तृतीयेशद्वादशभावस्थितफलमाह

तृतीयेशे तृतीयस्थे विक्रमी सुतसंयुतः ।। धनयुक्तो महाहृष्टो भुनक्ति सुखमद्भुतम्।।३२।। तृतीयेशे सुखे कर्मे पंचमे वा सुखी सदा ।। अतिक्रूरा भवेद्भार्या धनाढ्यो मतिमान्भवेत् ।।३३।। तृतीयेशो रिपौ यस्य भ्राता शत्रुर्महाधनी ।। मातुलानां सुखं न स्यान्मातुल्या भोगमिच्छति ।।३४।। तृतीयेशे व्यये भाग्ये स्त्रीभिर्भाग्योदयो भवेत् ।। पिता तस्य महाचोरः सुखेपि दुःखदर्शकः ।।३५।। तृतीयेशेऽष्टमे द्यूने राजद्वारे मृतिर्भवेत् ।। चौरो वा परिगामी वा बाल्ये कष्टं दिने दिने ।।३६।। तृतीयेशे तनौ लाभे स्वभुजार्जितवित्तवान् ।। मूर्खः कृशो महारोगी साहसी परसेवकः ।।३७।। गुदाभंजनिकः स्थूलः परभार्याधने रुचिः ।। स्वल्पारंभी सुखी न स्यात्तृतीयेशे धने गते ।।३८।।

तृतीयेश द्वादशभावफल

तृतीयेश तृतीय में हो तो विक्रमी सन्तान, सुखवाला, धनी और सुखी, सदा प्रसन्न रहनेवाला होता है।। तृतीयेश चौथे भाव में दशवें या पंचम में हो तो सदा सुखी, मतिमान्, धनी किन्तु स्त्री क्रूर स्वभाववाली होती है।। तृतीयेश छठे भाव में हो तो महाधनी पर उसका भ्राता द्रोही तथा मामा न रहे पर मामी से आसक्त रहे।। तृतीये नवम तथा व्यय में हो तो स्त्री से भाग्योदय हो और पिता महाचोर हो, सुख में भी कलह करे।। तृतीयेश सातवें आठवें में हो तो राजकार्य में मृत्यु हो, चोर और परगामी तथा सदारोगी रहता है।। तृतीयेश लग्न में या लाभ में हो तो स्वयं कमाई करनेवाला, दुर्बल, मूर्ख, रोगी, साहसी, परसेवी होता है।। तृतीयेश धनस्थान में हो तो गुदगामी, स्थूलशरीर, अन्य स्त्री के धन का लालची, कम काम करनेवाला तथा दुःखी होता है ।।३२–३८।।

अथ चतुर्थेशद्वादशभावस्थितफलमाह

तुर्येशे तुर्यगे मंत्री भवेत्सर्वधनाधिपः ।। चतुरः शीलवान् मानी धनाढ्यः स्त्रीप्रियः सुखी ।।३९।। तुर्येशे पंचमे भाग्ये सुखी सर्वजनप्रियः ।। विष्णुभक्तिरतो मानी स्वभुजार्जितवित्तवान् ।।४०।। सुखेशे शत्रुगेहस्ते तदा स्याद्बहुयातृकः ।। क्रोधी चौरोऽभिचारी च दुष्टचित्तो मनस्व्यपि ।।४१।। सुखेशे सप्तमे लग्ने बहुविद्यासमन्वितः ।। पित्रार्जितधनत्यागी सभायां मूकवद्भवेत् ।।४२।। सुखेशे व्ययरंध्रस्थे सुखहीनो भवेन्नरः ।। पितृसौख्यं भवेदल्पं क्लीबो वा जारजोपि वा ।।४३।। सुखेशे कर्मगेहस्थे राजमान्यो भवेन्नरः ।। रसायनी महाहृष्टो भुनक्ति सुखमद्भुतम्।।४४।। सुखेशे सहजे लाभे नित्यरोगी भवेन्नरः ।। उदारो गुणवान्दाता स्वभुजार्जितवित्तवान् ।।४५।। सर्वसंपद्युतो मानी साहसी कुहकान्वितः ।। कुटुंबसंयुतो भोगी सुखेशे च धने गते ।।४६।।

चतुर्थेश द्वादशभावफल

चतुर्थेश अपने अंश में होकर चतुर्थभाव में स्थित हो तो सब प्रकार की धन सम्पत्तिवाला, चतुर, शीलवान्, मानी एवं स्त्रीप्रिय, सुखी होता है।। चतुर्थेश पंचम तथा भाग्य में हो तो

सबका प्रेमी, सुखी, विष्णुभक्त, मानी और अपने उद्योग से धनी होता है।। सुखेश यदि छठे भाव में हो तो यात्रारत, क्रोधी, चोर, दुष्ट, अपकारी और मनस्वी होता है।। सुखेश सप्तमभाव में या लग्न में हो तो अनेक विद्यायुक्त, पिताकी सम्पत्ति का त्यागी और सभाचातुर्यहीन होता हैं।। सुखेश ८।१२ में हो तो जातक सुखरहित, पितृसुखवंचित, नपुसंक या जारज होता है।। सुखेश दशम में हो तो राजमान्य, अद्‌भुत सुखभोगी, सदासुखी तथा रसायन जाननेवाला होता है।। सुखेश तृतीयभाव में या लाभ में हो तो सदा रोगी, उदार, गुणवान् तथा निजोपार्जित धनी होता है।। सुखेश धनभाव में हो तो सर्वसम्पत्ति युक्त, मानी, साहसी, भोगी, कुटुम्बी, छली एव कपटी होता है ।।३९–४६।।

अथ सुतेशद्वादशभावस्थितफलमाह

सुतेशः पंचमे यस्य तस्य पुत्रो न जीवति ।। क्षणिकः क्रूरभाषी च धार्मिको मतिमान् भवेत् ।।४७।। सुतेशे षष्ठरिःफस्थे पुत्रः शत्रुत्वमाप्नुयात् ।। मृतापत्यो ग्राह्यपुत्रो धनपुत्रोऽथवा भवेत् ।।४८।। सुतेशे कामगे मानी सर्वधर्मसमन्वितः ।। तुंगयष्टिस्तनुस्वामी भक्तियुक्तैकतेजसा ।।४९।। सुतेशे चायुषि धने बहुपुत्री न संशयः ।। कासश्वासी सुखी न स्यात् क्रोधयुक्तो धनान्वितः ।।५०।। सुतेशे नवमे कर्मे पुत्रो भूपसमोभवेत् । अथवा ग्रंथकर्ता च विख्यातः कुलदीपकः ।।५१।। सुतेशे लाभभवने पंडितो जनवल्लभः ।। ग्रंथकर्ता महादक्षो बहुपुत्रधनान्वितः ।।५२।। सुतेशे लग्नसहजे मायावी पिशुनो महान् ।। लोष्टं तु दत्तवान्नैव कच्चिद्द्रव्यस्य का कथा ।।५३।। सुतेशे मातृभवने चिरं मातृसुखं भवेत ।। लक्ष्मीयुक्तः सुबुद्धिश्च सचिवोऽप्यथवा गुरुः ।।५४।।

सुतेश द्वादशभावफल

पंचमेश पंचमभाव में शुभग्रहयुक्त हो तो पुत्रवान्, क्षणिक मिष्टभाषी, धर्मात्मा तथा बुद्धिमान् होता है।। सुतेश ६।१२ में हो तो अपना पुत्र ही शत्रु होता है और जीता भी नहीं है। अतः दत्तक या धन से खरीदा हुआ पुत्र होता है।। सुतेश सप्तमभाव में हो तो अभिमानी, धार्मिक, लम्बा कद, गठीला शरीर, भक्त और तेजस्वी होता है।। सुतेश अष्टम भाव तथा धनभाव में हो तो अनेक सन्तानवाला, श्वासखांसी रोग होने से दुःखी, क्रोधी और धनी होता है।। सुतेश नवम या दशमभाव में हो तो उसका पुत्र राजा के समान हो अथवा ग्रन्थकर्ता विख्यात और अपने कुल का नामी होता है।। सुतेश लाभस्थान में हो तो पण्डित और समाजसेवी, ग्रन्थकर्ता, अत्यन्त चतुर, अनेक पुत्र, धन से मुक्त होता है।। सुतेश लग्न या तृतीयभाव में हो तो मायावी (कपटी) पिशुन (चुगलखोर) जीवन में किसी को कुछ भी न देनेवाला होता है। सुतेश चौथे भाव में हो तो माता पिताका सुख पूरा हो, लक्ष्मीयुक्त,बुद्धिमान् या तो सचिव (मन्त्री) या गुरु होता है ।।४७–५४।।

अथ षष्ठेशद्वादशभावस्थितफलमाह

षष्ठेशे रिपुभावस्थे स्वज्ञातिः शत्रुवद्भवेत् ।। परजातिर्भवेन्मित्रं भूमौ न चलति ध्रुवम् ।।५५।। षष्ठेशे सप्तमे लाभे लग्ने वा कीर्तिमान् भवेत् ।। धनवान् गुणवान् मानी साहसी पुत्रवर्जितः ।।५६।।

षष्ठेशेऽष्टमरिःफस्थे रोगी शत्रुर्मनीषिणाम् ।। परजायाभिगामी च जीवहिंसासु तत्परः ।।५७।। षष्ठेशो नवमे यस्य काष्ठपाषाणविक्रयी ।। व्यवहारे क्वचिद्धानिः क्वचिद्वृद्धिर्भवेत्किल।।५८।। षष्ठेशे कर्मवित्तस्थे साहसी कुलविश्रुतः ।। परदेशसुखी वक्ता स्वकर्मैचैकनिष्ठिकः ।।५९।। षष्ठेशे सहजे तुर्ये क्रोधेनारक्तलोचनः ।। मनस्वी पिशुनो द्वेषी चलचित्तोऽतिवित्तवान् ।।६०।। षष्ठेशे पंचमे यस्य चलमित्रधनादिकम् ।। दयायुक्तः सुखी सौम्यः स्वीकार्ये चतुरो महान् ।।६१।।

षष्ठेशद्वादशभावफल

षष्ठेश छठे घर में हो तो अपने बन्धु शत्रु हो जाते हैं और पराये मित्र होते हैं और घमण्ड में रहता है। षष्ठेश लग्न या लाभ स्थान में हो तो कीर्तिवाला धनवान्, गुणवान्, साहसी, मानी, तथा पुत्रहीन होता है।। षष्ठेश ६।८ वें स्थान में हो तो रोगी और सज्जनद्वेषी, जीवहिंसक और परदारगामी होता है।। षष्ठेश नौवें स्थान में हो तो काष्ठ पाषाण का व्यापार करता है और व्यवहार में कभी लाभ, कभी हानि उठाता है।। षष्ठेश दूसरे दशवें में हो तो विख्यात,साहसी, वक्ता, प्रयासी अपने कर्म में निष्ठावाला होता है।। षष्ठेश तीसरे तथा चौथे स्थान में हो तो सदा क्रोधी, मनस्वी, चुगलखोर, द्वेषी, चंचल, धनी होता है।। षष्ठेश पंचमभाव में हो तो मित्र और धन अस्थायी होते हैं। दयावान्, सुखी, सौम्यस्वभाववाला, अपने कार्य में चतुर होता है।।५५–६१।।

अथ सप्तमेशद्वादशभावस्थितफलमाह

सप्तमेशे तनौ चास्ते परजायासु लंपटः ।। दुष्टो विचक्षणो धीरो वातरुक् स्थीयते हृदि ।।६२।। जायेशे चाष्टमे षष्ठे रोगिणीं कामिनीं लभेत् ।। क्रोधयुक्तो भवेद्वापि न सुखं लभते क्वचित् ।।६३।। द्यूनेशे नवमे वित्ते नानास्त्रीभिः समागमः ।। आरंभी दीर्घसूत्री च स्त्रीषु चित्तं हि केवलम् ।।६४।। द्यूनेशे दशमे तुर्ये नास्य जाया पतिव्रता ।। धर्मात्मा सत्यसंयुक्तः केवलं दंतरोगवान् ।।६५।। द्यूनेशे सहजे लाभे मृतपुत्रः प्रजायते। कदाचिज्जीवति सुता यत्नात्पुत्रोपि जायते ।।६६।। द्वादशस्थे सप्तमेशे दरिद्रः कृपणो महान् ।। चारुकन्या भवेद्भार्या वस्त्राजीवी च नीर्धनी ।।६७।। सर्वगुणयुतो मानी भवेत्सर्वधनाधिपः ।। सदैव हर्षसंयुक्तः सप्तमेशे सुते स्थिते ।।६८।।

सप्तमेशद्वादशभावफल

सप्तमेश लग्न में या सप्तम में हो तो परस्त्रीगामी, दुष्टमति, चतुर, धीर, वातरोगी, हृदयरोगी होता है।सप्तमेश ६।८ में होतो स्त्री रोगिणी मिलती है, आप क्रोधी और दुःखी रहता है।। सप्तमेश २।९ में हो तो अनेक स्त्री भोगी, कोई भी काम पूरा न करनेवाला, उसका मन सदा स्त्रियों में रहता है।। सप्तमेश ४।१० में हो तो उसकी स्त्री पुंश्चली होती है किन्तु धर्मात्मा, सत्यवादी तथा दन्तरोगी होता है।। सप्तमेश ३।११ में हो तो सन्तान नहीं रहती। कन्या रहे, यत्न से पुत्र भी जीवेगा।। सप्तमेश १२ में हो तो अतिलोभी, दरिद्र, सुन्दर स्त्री तथा वस्त्र का व्यापार करता है।। सप्तमेश पंचम में हो तो सर्वगुणसम्पन्न, महाधनी, सदा सुखी होता है ।।६६–६८।।

अथाष्टमेशद्वादशभावस्थितफलमाह

द्यूती चौरोऽन्यथावादी गुरुनिंदासु तत्परः ।। अष्टमे ह्यष्टमस्थाने भार्या पररता भवेत् ।।६९।। अष्टमेशे तपःस्थाने महापापी च नास्तिकः ।। सुतहा ह्यथवा वंध्या परभार्याधने रुचिः ।।७०।। अष्टमेशे सुखे कर्मपिशुनो बंधुवर्जितः ।। मातापित्रोर्भवेन्मृत्युः स्वल्पकालेन भीतियुक् ।।७१।। अष्टमेशे सुते लाभे तस्य वृद्धिर्न जायते ।। द्रव्यं न स्थीयते गेहे स्थिरबुद्धिर्भवेज्जनः ।।७२।। अष्टमेशे व्यये षष्ठे नित्यं रोगी प्रजायते ।। जलसर्पादिकाद्घातो भवेत्तस्य च शैशवे ।।७३।। अष्टमेशे तनौ कामे भार्यायुग्मं समादिशेत् ।। विष्णुद्रोहरतो नित्यं व्रणरोगी प्रजायते ।।७४।। धनं तस्य भवत्स्वल्पं गतं वित्तं न लभ्यते ।। अष्टमेशे धने बाहुबलहीनः प्रजायते ।।७५।।

अष्टमेशद्वादशभावफल

अष्टमेश अष्टम में हो तो जुवारी, चोर, झूठा, गुरुनिन्दक हो और उसकी स्त्री व्यभिचारिणी होती है।। अष्टमेश यदि ११ में हो तो पापी, नास्तिक, उसकी स्त्री बन्ध्या हो तथा आपका मन सदा दूसरे के धन और स्त्री में रहता है।। अष्टमेश ४।१० में हो तो चुगलखोर, बन्धुहीन, माता तथा पिता का सुख कम रहे, और डरपोक होता है।। अष्टमेश ५।११ में हो तो परिवार में वृद्धि नहीं हो और घर में धन स्थिर नहीं रहे, जातक स्थिरमति हो।। अष्टमेश ६।१२ में हो तो सदारोगी रहे, बाल्य अवस्था में जल या सर्प से घात हो।। अष्टमेश लग्न या सप्तम में हो तो दो भार्या हों, सदा ईश्वर द्रोही और व्रणरोगी होता है।। अष्टमेश धनस्थान में हो तो दरिद्री, साहस तथा बलहीन होता है ।।६९–७५।।
(यहां फल कथन में ३।९ भाव का फलादेश का श्लोक अनुपलब्ध है)

अथ भाग्येशद्वादशभावस्थितफलमाह

धनधान्ययुतो नित्यं गुणसौंदर्यसंयुतः ।। बहुभ्रातृसुखं युक्तं भाग्येशे नवमे स्थिते ।।७६।। भाग्येशे दशमे तुर्ये मंत्री सेनापतिर्भवेत् ।। पुण्यवान्सुयशा वाग्मी साहसी क्रोधवर्जितः ।।७७।। भाग्येशे पंचमे लाभे भाग्यवान् जनवल्लभः ।। गुरुभक्तिरतो मानी धीरो धीरगुणैर्युतः ।।७८।। भाग्येशे तु तुले रिःफे भाग्यहीनो भवेद्ध्रुवम् ।। मातुलस्य सुखं न स्याज्ज्येष्ठभ्रातृसुखं तथा ।।७९।। भाग्येशे च मदे कल्पे गुणवान्कीर्तिमान् भवेत् ।। कदाचिन्न भवेत्सिद्धं यत्कार्यं कर्तुमिच्छति ।।८०।। भाग्येशे सहजे वित्ते सदा भाग्यानुचिंतकः ।। धनवान् गुणवान्कामी पंडितो जनवल्लभः ।।८१।।

भाग्येशद्वादशभावफल

भाग्येश नवमभाव में हो तो धनधान्ययुक्त और गुणी, सुन्दर तथा अनेक भ्राता हों।। भाग्येश १०।४ में हो तो मन्त्री या सेनापति हो, पुण्यात्मा, सुयशवाला, वाग्मी (अच्छा बोलनेवाला) साहसी और क्रोधरहित हो।। भाग्येश ५।११ में हो तो भाग्यवान्, बन्धुप्रेमी, गुरुभक्त,धीर, मानी होता है।। भाग्येश—तुलाराशि में या बारहवें स्थान में हो तो

भाग्यहीन मामा का सुख तथा बड़े भाई के सुख से हीन होता है।। भाग्येश लग्न या सप्तम में हो तो गुणवान्, कीर्तिवाला, किन्तु कभी कभी इच्छित कार्य सिद्ध नहीं हो।। भाग्येश २।३ में हो तो भविष्य चिन्तक, गुणी, धनी तथा कामी पंडित एवं जनप्रिय होता है।।७६–८१।।

अथ दशमेशद्वादशभावस्थितफलमाह

दशमेशे सुखे कर्मे ज्ञानवान्सुखविक्रमी ।। गुरुदेवार्चनरतो धर्मात्मा सत्यसंयुतः ।।८२।। दशमेशे सुते लाभे धनवान्पुत्रवान् भवेत् ।। सर्वदा हर्षसंयुक्तः सत्यवादी सुखी नरः ।।८३।। कर्मेशोऽरिव्ययं यस्य शत्रुभिः परिपीडितः ।। चातुर्यगुणसंपन्नः क्वचिच्च न सुखी नरः ।।८४।। दशमाधिपतौ लग्ने कवितागुणसंयुतः ।। बाल्ये रोगी सुखी पश्चादर्थवृद्धिर्दिने दिने ।।८५।। धने मदे च सहजे कर्मेशो यदि संस्थितः ।। मनस्वी गुणवान्वाग्मी सत्यधर्मसमन्वितः ।।८६।।

दशमेशद्वादशभावफल

दशमेश ४।१० में हो तो ज्ञानी सुखी पराक्रमी, देवगुरुभक्त, धर्मात्मा तथा सत्यवादी होता है।। दशमेश ५।११ में हो तो धनवान् और पुत्रवान्, सदा प्रसन्नचित्त, सुखी और सत्यवादी होता है।। दशमेश ६।१२ में हो तो जातक शत्रुओं से पीड़ित, चतुर तथा कभी–कभी दुःखी रहता है।। दशमेश लग्न में हो तो कविता करनेवाला तथा बाल्यावस्था में रोगी पश्चात् नीरोग और दिनानुदिन धनवृद्धि होती है।। दशमेश २।७।३ में हो तो मनस्वी, गुणी, वक्ता तथा सत्यवादी होता है ।।८२–८६।।

अथ लाभेशद्वादशभावस्थितफलमाह

लाभेशे संस्थिते लाभे स वाग्मी जायते ध्रुवम् ।। पांडित्यं कविता चैव वर्द्धते च दिने दिने ।।८७।। प्राप्तिस्थानाधिपे रिःफे म्लेच्छसंसर्गकारकः ।। कामुको बहुकांतश्च क्षणिको लम्पटः सदा ।।८८।। लाभेशे संस्थिते लग्ने धनवान्सात्त्विको महान् ।। समदृष्टिर्महान्वक्ता कौतुकी च भवेत्सदा ।।८९।। लाभेशे च धने पुत्रे नानासुखसमन्वितः ।। पुत्रवान्धार्मिकश्चैव सर्वसिद्धिप्रदायकः ।।९०।। लाभेशे सहजे वित्ते तीर्थेषु तत्परो महान् ।। कुशलः सर्वकार्येषु केवलं शूलरोगवान् ।।९१।। लाभेशे षष्ठभवने नानारोगसमन्वितः ।। सर्वं सुखं भवेत्तस्य प्रवासी परसेवकः ।।९२।। लाभेशे सप्तमे रंध्रे भार्या तस्य न जीवति ।। उदारो गुणवान्कर्मी मूर्खो भवति निश्चितम् ।।९३।। लाभेशे गगने धर्मे राजपूज्यो धनाधिपः ।। चतुरः सत्यवादी च निजधर्मसमन्वितः ।।९४।।

लाभेश द्वादशभावफल

लाभेश स्वगृही हो तो वाग्मी, पण्डित और दिनानुदिन उत्तम कविता करनेवाला होता है।। लाभेश १२ भाव में हो तो म्लेच्छ संसर्गी, कामी अनेक स्त्रीसंसर्गी, क्षणिकमति और लम्पट होता है।। लाभेश लग्न में हो तो धनवान्, सात्विक भाववाला, समदर्शी श्रेष्ठवक्ता तथा कौतुकी होता है।। लाभेश २।५ में हो तो नानासुखभोगी, पुत्रवान्, धार्मिक तथा सर्वसिद्धिसम्पन्न होता है।। लाभेश २।३ में हो तो तीर्थसेवी, सर्वकार्यकुशल होता है केवल शूल रोग रहता है।। लाभेश छठे भाव में हो तो नाना व्याधिग्रस्त, सर्वसुखसम्पन्न तथा परदेशवासी

एवं नौकरी करनेवाला होता है।। लाभेश ७।८ में हो तो उसकी भार्या नहीं जीवे। उदार गुणी तथा कर्मी हो एवं मूर्ख हो।। लाभेश ९।१० में हो तो धनी, राजपूज्य, चतुर, सत्यवादी तथा धर्मात्मा होता है ।।८७—९४।।

अथ व्ययेशद्वादशभावस्थितफलमाह

व्ययेशेऽरिव्यये पापी मातृमृत्युविचिंतकः ।। क्रोधी सन्तानदुःखी च परजायासु लंपटः।।९५।। व्ययेशे मदने लग्ने जायासौख्यं भवेन्नहि ।। दुर्बलः कफरोगी च धनविद्याविवर्जितः ।।९६।। व्ययेशे द्वितीये रंध्रे विष्णुभक्तिसमन्वितः ।। धार्मिकः प्रियवादी च सम्पूर्ण गुणसंयुतः ।।९७।। भार्याद्वेषी प्रियद्वेषी गुरुद्वेषी भवेन्नरः ।। व्ययेशे सहजे धर्मे स्वशरीरस्य पोषकः ।।९८।। व्ययेशे दशमे लाभे पुत्रसौख्यं भवेन्नहि ।। मणिमाणिक्यमुक्तादि धत्ते किंचित्समालभेत् ।।९९।। एतत्ते कथितं विप्र भावानां च फलाफलम् ।। बलाबलविवेकेन सर्वेषां फलमादिशेत् ।।१००।।

व्ययेश द्वादशभावफल

व्ययेश ६।१२ में हो तो पापी तथा माता को मारने के संकल्प वाला, क्रोधी, सन्तान से दुःखी, परस्त्री–रत रहता है।। व्ययेश लग्न या सप्तम में हो तो स्त्री सुखरहित, दुर्बल, कफरोगी, धन और विद्यारहित होता है।। व्ययेश २।८ में हो तो विष्णुभक्त, धार्मिक, प्रियभाषी, सम्पूर्ण–गुणयुक्त होता है।। व्ययेश ३।९ में हो तो भार्याद्वेषी, तथा प्रियद्वेषी, गुरुद्वेषी एवं स्वयंपोषक होता है।। व्ययेश १०।११ में हो तो पुत्र सुख नहीं होता, मणिमाणिक आदि का लाभ होता है।। हे मैत्रेय! १२ भावों का यह फलाफल हमने कहा, ग्रहों के बल जानकर इनका फल कहना चाहिए।।

वक्री चेत्स्वच तुर्थः स्यात्फलं भौमो ददाति च ।। बुधतुर्येऽथ देवेज्ये पञ्चमे शशिभार्गवौ ।।१०१।। सप्तमस्य तमध्वंसी पुत्रस्य नवमस्य च ।। वित्तस्य विषुवत्यर्के ददाति स्वफलं विधुः ।।१०२।। ग्रहे पूर्णफले प्राप्ते फलं पूर्वं समादिशेत् ।। अर्द्धमर्द्धं पादहीने तत्रेदं पादमंघ्रिणा ।।१०३।। भावानां द्वादशानां च सर्वेषां फलमादिशेत् ।। भावस्थानां ग्रहाणां च फलं ते कथितं मया ।।१०४।।

इति श्रीबृहत्पाराशरहोराशास्त्रेपूर्वखण्डे भावस्थग्रहाणां फलकथनं नाम पञ्चदशोऽध्यायः ।।१५।।

उद्दिष्ट ग्रह से वक्री मंगल यदि चतुर्थभाव में स्थित हो तो पूर्णफल प्राप्त होता है। इसी प्रकार उद्दिष्ट ग्रह से चतुर्थ बुध हो, पञ्चम गुरु हो।। चन्द्र–शुक्र सप्तम हो, शनि नवम हो, कर्क के सूर्य में चन्द्रमा दूसरे हो तो पूर्वोक्त भावफल होता है।। और ग्रह पूर्णबली हो तो पूरा फल होता है।। आधे बल में आधा और हीनबल में चौथाई फल होता है।। इस कथित ग्रह फल से १२ भावों का फल कहना चाहिये ।।९५–१०४।।

इति बृ० पा० हो० शा० पू० भावप्रकाशिकायां भावस्थग्रहफलकथनंनाम पंचदशोऽध्यायः ।।१५।।

अथ प्राणिनां पूर्वजन्मशापद्योतकम्

पार्वत्युवाच

देवदेव जगन्नाथ शूलपाणे वृषध्वज ।। केन योगेन मर्त्यानां जायते शिशुनाशनम् ।।१।। तत्सर्वमत्र योगेन ब्रूहि मे शशिशेखर ।। शापमोक्षं च कृपया प्राणिनामल्पमेधसाम् ।।२।।

पूर्वजन्म शापकथन

पार्वतीजी ने कहा, हे शूलपाणि वृषद्धवज! भगवन् महादेव! जगत् के स्वामी !! किस योग से मनुष्यों के सन्तान की हानि होती है? आप सिद्धयोगी हैं अतः यह सब कहिये और हे शशि शेखर! उन अज्ञानी पुरुषों के शाप को दूर करने का उपाय भी कहियेगा।।१।।२।।

शङ्कर उवाच

साधु पुष्टं त्वया देवि कथयामि सविस्तरात् ।। श्रृणुष्वैकमना भूत्वा बलाबलवशादपि ।।३।। ज्ञेयं सुनिश्चितं सर्वैराशिचक्रे विशेषतः ।। मेषादिमीनपर्यंतं मूर्त्यादिद्वादशक्रमात् ।।४।। भावं च भावजं ज्ञात्वा फलं ब्रूयाद्विचक्षणः ।। तनुर्वित्तं बंधुमातृपुत्रशत्रुस्मरोमृतिः ।।५।। पितृकर्म च लाभं च व्ययांता भावसंज्ञकाः ।। गुरुर्लग्ने शदारेशपुत्रस्थानाधिपेषु च ।।६।। सर्वेषुबलहीनेषु वक्तव्या त्वनपत्यता ।। रव्याररराहुशनयः पुत्रस्था बलसंयुताः ।।७।। कारकाद्यात्क्षीणबलादनपत्यत्वमादिशेत् ।। पुत्रस्थानगते राहौ कुजेनापि निरीक्षिते ।। कुजक्षेत्रगते वापि सर्पशापात्सुतक्षयः ।।८।। पुत्रेशे राहुसंयुक्ते पुत्रस्थे भानुनन्दने ।। चंद्रदृष्टे युते वापि सर्पशापात्सुतक्षयः ।।९।।

शंकरजी ने कहा–हे देवि ! तुमने बहुत अच्छा प्रश्न किया, ध्यान देकर सुनो। हम विस्तार मे सबका उत्तर कहते हैं।। ग्रहों के बलावल से बारह राशियों कें भावों का सुनिश्चित फल जाना जाता है। मेष से मीन पर्यन्त बारह राशियों का स्वरूप जानकर भाव और भाव का फल जानकर कहना चाहिये।। १२ भावों के नाम कहते हैं तनु, वित्त, बन्धु, माता, पुत्र, शत्रु, भार्या, मृत्यु, धर्म, कर्म, लाभ और व्यय ये बारह भाव हैं। बृहस्पति, सप्तेश,पुत्रेश इन सब भावों के और भावेशों के बलहीन होने पर पुत्रहीनता कहनी चाहिये। सूर्य, मंगल, राहु और शनि ये बलवान होकर पंचम भाव में हो, पुत्रकारक हीनबल हो तो पुत्रहीनता कहनी चाहिये। पंचम भाव में राहु हो, मंगल देखता हो अथवा मंगल की राशि हो तो पूर्वजन्म के सर्प के शाप से इस जन्म में पुत्र की मृत्यु होती है।। पंचमेश राहुयुक्त हो, पंचम भाव में शनि हो। चन्द्रमा युक्त अथवा देखता हो, तो सर्प के शाप से पुत्र नाश होता है।।३–९।।

कारके राहुसंयुक्ते पुत्रेशे बलवर्जिते ।। विलग्नेशे भौमयुते सर्पशापात्सुतक्षयः ।।१०।। कारके भौमसंयुक्ते लग्ने च राहुसंयुते ।। पुत्रस्थानेश्वरे दुःस्थे सर्पशापात्सुतक्षयः ।।११।। भौमांशे भौमसंयुक्ते पुत्रेशे सोमनन्दने ।। राहुमांदियुते लग्ने सर्पशापात्सुतक्षयः ।।१२।। पुत्रस्थाने कुजक्षेत्रे पुत्रे राहुसमन्विते ।। सौम्यदृष्टे युते वापि सर्पशापात्सुतक्षयः ।।१३।। पुत्रस्था

भानुमंदाराः स्वर्भानुः शशिजोगिराः ।। निर्बलो पुत्रलग्नेशौ सर्पशापात्सुतक्षयः ।।१४।। लग्नेशे राहुसंयुक्ते पुत्रेशे भौमसंयुते ।। कारके राहुसंदृष्टे सर्पशापात्सुतक्षयः ।।१५।। तद्दोषपरिहारार्थं नागपूजां समारभेत् ।।१६।। स्वगृह्योक्तविधानेन प्रतिष्ठां कारयेत्सुधीः ।। नागमूर्तिं सुवर्णेन कृत्वा पूजां समाचरेत् ।।१७।। गोभूतिलहिरण्यादि दद्याद्वित्तानुसारतः ।। एवं कृते तु नागेंद्रप्रसादाद्वर्धतेकुलम् ।।१८।। पुत्रस्थानं गते भानौ नीचे मंदांशकस्थिते ।। पार्श्वयोः क्रूरसम्बन्धे पितृशापात्सुतक्षयः।।१९।। पुत्रस्थानाधिपे भानौ त्रिकोणे पापसंयुते ।। क्रूरेन्तरे पापदृष्टे पितृशापात्सुतक्षयः ।।२०।।

पुत्रकारक राहु के साथ हो, पुत्रेश बलहीन हो, लग्नेश मंगलयुक्त हो तो सर्प शाप से सुतक्षय होता है।। पुत्रकारक मंगलयुक्त हो, लग्न में राहु, पुत्रेश तीसरे हो तो सर्प शाप से सुत–क्षय होता है।। मंगल अपने नवमांश में हो, पुत्रेश बुध हो, लग्न में राहु और मान्दी हो तो सर्प शाप से सुत–क्षय होता है।। पुत्रस्थान में मंगल की राशि और राहु हो बुध युक्त या देखता हो, तो सर्प शाप से सुत–क्षय होता है।। पुत्रस्थान में सूर्य मंगल शनि, राहु, बुध और शुक्र हो, पुत्रेश और लग्नेश निर्बल हों, तो सर्प शाप से सुत–क्षय होता है।। लग्नेश के साथ राहु हो, पुत्रेश के साथ मंगल हो, पुत्रकारक को राहु देखता हो तो सर्प शाप से सुत–क्षय होता है।। (इतने योग कहे गये और इनका उपाय कहते हैं) इस दोष के दूर करने के लिये, नागपूजा करनी चाहिये। सुवर्ण की नागमूर्ति बनाकर, विधान से प्रतिष्ठा करे और फिर पूजा करे।। तिल, गौ , सुवर्ण इनका शक्ति के अनुसार दान करे और मूर्ति का भी दान करे, तो ऐसा करने पर नागेन्द्र की कृपा से कुल में वृद्धि होती है।। (यह उपाय किसी महान पर्व में गंगा आदि तीर्थ पर किया जाता है) अब पितृशाप के योग कहते हैं। पुत्रस्थान में सूर्य हो और नीच का होकर शनि के अंश में हो, १२ वें तथा दूसरे स्थान में पापग्रह हों तो पितृशाप से सुत–क्षय होता है।। पुत्रस्थान का स्वामी सूर्य त्रिकोण स्थानों में पापग्रह से युक्त होकर स्थित हो और सूर्य के दोनों तरफ क्रूर ग्रह हों, पापग्रह की दृष्टि हो तो पितृशाप से सुत–क्षय होता है ।।१०–२०।।

भानुराशिस्थिते जीवे पुत्रेशे भानुसंयुते ।। पुत्रे लग्ने पापयुते पितृशापात्सुतक्षयः ।।२१।। लग्नेशे दुर्बले पुत्रे पुत्रेशे भानुसंस्थिते ।। पुत्रे लग्ने पापयुते पितृशापात्सुतक्षयः ।।२२।। पितृस्थानाधिपे पुत्रे पुत्रेशे वा तथा स्थिते ।। लग्ने पुत्रे पापयुते पितृशापात्सुतक्षयः ।।२३।। पितुः स्थानाधिपो भौमःपुत्रेशेन समन्वितः ।। लग्ने पुत्रे पितृस्थाने शापात्संततिनाशनम् ।।२४।। पितृस्थानाधिपे दुःस्थे कारके पापराशिगे ।। पुत्रे लग्नेश्वरे पापे पितृशापात्सुतक्षयः ।।२५।। लग्नपंचमभावस्था भानुभौमशनैश्चराः ।। रन्ध्रे रिःफे राहुजीवौ पितृशापात्सुतक्षयः ।।२६।। लग्नादष्टमगे भानौ पुत्रस्थे भानुनंदने ।। पुत्रेशे राहुसंयुक्ते लग्ने पापे सुतक्षयः ।।२७।। व्ययेशे लग्नभावस्थे रन्ध्रेशे पुत्रराशिगे ।। पितृस्थानाधिपे रं ध्रे पितृशापात्सुतक्षयः ।।२८।। रोगेशे पुत्रभावस्थे पितृस्थानाधिपे तथा।।कारके राहुसंयुक्ते पितृशापात्सुतक्षयः।।२९।।तद्दोषपरिहारार्थं गयाश्राद्धं च कारयेत् ।। ब्राह्मणान् भोजयेदत्र अयुतं वा सहस्रकम् ।।३०।। कन्यादानं ततः कृत्वा गां च दद्यात्सवत्सकाम् ।। एवं कृते पितुः शापान्मुच्यते नात्र संशयः ।।३१।। वर्द्धते च कुलं तस्य पुत्रपौत्रादिभिस्तथा ।। दृष्टियोगपदैः सर्वं फलं ब्रूयाद्विचक्षणः ।।३२।।

सूर्य की राशि में बृहस्पति हो, पुत्रेश सूर्य युक्त हो, पुत्रभाव और लग्न में पापग्रह हो तो पितृ शाप से सुत–क्षय होता है।। लग्नेश दुर्बल हो, पुत्रभाव में सूर्य और पुत्रेश हो, पुत्रभाव तथा लग्न भाव में पापग्रह हों तो पितृशाप से पुत्र–क्षय होता है।। पितृस्थान का स्वामी दशमेश दोनों पुत्र भाव में हो, लग्न और पुत्र भाव में पापग्रह हों तो पितृशाप से सुत–क्षय होता है। दशमेश मंगल पंचमेश से युक्त होकर लग्न में या पञ्चम में अथवा दशम् भाव में हो तो पितृशाप से पुत्र–क्षय होता है। दशमेश तीसरे भाव में हो, पुत्रकारक पापराशि में हो, पुत्रस्थान में लग्नेश पापी होकर स्थित हो, तो पितृ शाप से सुत–क्षय होता है।। लग्न और पंचमभाव में सूर्य, मंगल और शनि हो, आठवें एवं बारहवें भाव में राहु, बृहस्पति हों तो पितृ–शाप से सुत–क्षय होता है।। लग्न से आठवें भाव में सूर्य हो, पांचवे में शनि हो, पंचमेश राहु के साथ हो तो पितृ शाप से सुत–क्षय होता है।। व्ययेश लग्न में हो,अष्टमेश पंचमभाव में हो, दशमेश आठवें भाव में हो, तो पितृशाप से सुतक्षय होता है।। षष्ठेश पुत्रभाव में हो तथा दशमेश भी हो, पुत्रकारक के साथ राहु हो तो पितृ शाप से सुत–क्षय होता है।। (इसका उपाय) इस दोष को दूर करने के लिये प्रथम गयाश्राद्ध करे, फिर ब्राह्मण भोजन करावे, शक्ति हो तो गोदान और कन्यादान करे। ऐसा करने से मनुष्य को पितृशाप से मुक्ति मिलती है एवं कुल की वृद्धि होती है। पुत्र, पौत्र परम्परा चलती है। इस प्रकार ग्रहों की दृष्टि और योग से पंडित को खूब विचारकर फल कहना चाहिये ।।२१–३२।।

पुत्रस्थानाधिपे चंद्रे नीचे वा पापमध्यगे ।। हिबुके पंचमे पापे मातृशापात्सुतक्षयः ।।३३।। लाभे मंदसमायोगे मातृस्थाने शुभेतरे ।। नीचे पंचमगे चन्द्रे मातृशापात्सुतक्षयः ।।३४।। पुत्रस्थानाधिपे दुस्थे लग्नेशे नीचराशिगे ।। चंद्रपापसमायोगे मातृशापात्सुतक्षयः ।।३५।। पुत्रस्थानाधिपे दुस्स्थे चंद्रे पापांशसंयुते ।। लग्ने पुत्रे पापयुतें मातृ शापात्सुतक्षयः ।।३६।। पुत्रस्थानाधिपे चंद्रे मंदराह्वारसंयुते ।। भाग्ये वा पुत्रराशो वा कारके पुत्रनाशनम् ।३७।। मातृस्थानाधिपे भौमे शनिराहुसमन्विते ।। भानुचंद्रयुते पुत्रे लग्ने संततिनाशनम् ।।३८।। लग्नात्मजेशौ शत्रुस्थौ रंध्रे मात्राधिपे स्थितौ ।। पितृनाशाधिपौलग्ने मातृशापात्सुतक्षयः ।।३९।।षष्ठाष्टमेशौ लग्नस्थौ व्यये मात्राधिपे सुते ।। चन्द्रे जीवे पापयुते मातृशापात्सुतक्षयः ।।४०।। पापमध्यगते लग्ने क्षीणे चंद्रे च सप्तमे ।। मातृपुत्रे राहुमंदौ मातृशापात्सुतक्षयः ।।४१।। नाशस्थानाधिपे पुत्रे पुत्रेशे नाशराशिगे ।। चंद्रमातृपतौ दुःखैर्मातृशापात्सुतक्षयः ।।४२।। चंद्रक्षेत्रे यदा लग्ने कुजराहुसमन्विते ।। चंद्रमंदौ पुत्रसंस्थौ मातृशापात्सुतक्षयः ।।४३।। लग्ने पुत्रे रंध्ररिःफौ आरराहुरविः शनिः ।। मातृलग्नाधिपौ दुस्थौ मातृशापात्सुतक्षयः ।।४४।। नाशस्थानं गते जीवे कुजराहुसमन्विते ।। पुत्रस्थाने मन्दचंद्रौ मातृशापात्सुतक्षयः ।।४५।। ग्रहयोगपदैः सर्वं फलं ब्रूयाद्विचक्षणः ।। शुभे सौख्यं विनिर्दिष्टं मिश्रे मिश्रं प्रकीर्तितम् ।।४६।। सेतुस्नानं प्रकुर्वीत गायत्रीलक्षसंज्ञके ।। ग्रहदानं च कर्तव्यं रौप्यपात्रं पयःस्थितिः ।।४७।। ब्राह्मणान् भोजयेत्तद्वदश्वत्थस्य प्रदक्षिणम् ।। कर्तव्यं भक्तियुक्तेन चाष्टविंशत्सहस्रकम् ।।४८।। एवं कृते यदा देवि शापान्मोक्षो भविष्यति ।। सत्पुत्रं लभते पश्चाद्वृद्धिःस्यात्तस्य संततेः ।।४९।।

अब मातृशाप के योग एवं उपाय कहते हैं

पुत्रेश चन्द्रमा नीच का हो और पापग्रहों के बीच में हो अर्थात् चतुर्थ और षष्ठभाव में पापग्रह हो तो मातृशाप से सुत–क्षय होता है। पुत्रेश तृतीय में हो, लग्न में नीच राशि हो, चन्द्र और पापग्रहों का योग हो तो मातृशाप से सुतःक्षय होता है। पुत्रेश तृतीय में, चन्द्रमा पाप नवमांश में, लग्न में तथा पुत्रभाव में पापग्रह हो तो मातृ शाप से सुत–क्षय होता है।। पुत्रेश चन्द्रमा, शनि, राहु, मंगल से युक्त होकर नवम या पंचम भाव में स्थित हो, अथवा यही योग पुत्र कारक के साथ हो तो मातृशाप से सुतक्षय होता है। चतुर्थेश मंगल, शनि, राहु, युक्त हो, पुत्र भाव में चन्द्रमा एवं सूर्य हो या लग्न में हो तो मातृ शाप से सुत–क्षय होता है।। लग्नेश एवं पुत्रेश शत्रुस्थान में हो, चतुर्थेश अष्टमभाव में हो, अष्टम और दशम के स्वामी लग्न में हो तो मातृ शाप से सुतःक्षय होता है।। षष्ठेश और अष्टमेश लग्न में हो या व्यय में हो चतुर्थेश पंचम में हो या व्यय में हो, पंचम भाव में चन्द्रमा और बृहस्पति पापयुक्त हों तो मातृ–शाप से सुत–क्षय होता है।। लग्न की दोनों पार्श्व राशि में पापग्रह हों, क्षीण चन्द्रमा सप्तम भाव में हो, चौथे भाव में और पांचवे भाव में राहु, शनि हो तो मातृशाप से सुत–क्षय होता है।। अष्टमेश पंचम में हो, पंचमेश अष्टम में हो, चन्द्रमा और चतुर्थेश तृतीय भाव में हो, तो मातृशाप से सुत–क्षय होता है।। चन्द्रमा की राशि में लग्न हो, मंगल राहु युक्त हो, चन्द्रमा और शनि पंचम भाव में हो तो मातृशाप से सुत–क्षय होता है।। लग्न, पञ्चम, अष्टम और द्वादश भाव में क्रमशः मंगल, राहु, शुक्र, एवं शनि हो, चतुर्थ एवं लग्नेश तृतीय भाव में हो तो मातृ शाप से सुत–क्षय होता है।। अष्टम भाव में बृहस्पति हो, मंगल राहु से युक्त हो, पंचम भाव में शनि चन्द्रमा हो तो मातृ शाप से सुत–क्षय होता है।। पण्डित को विचारकर इस प्रकार उपर्युक्त योग से फल कहना चाहिये। शुभयोग से सुख और मिश्र योग से मध्यम फल होता है (उपाय) सेतुबन्ध रामेश्वर में स्नान करे, एक लाख गायत्री मंत्र का जाप करे; जिस ग्रह का दुर्योग हो उस ग्रह का दान करे, चांदी के पात्र में दूध भर कर दान दे। यथाशक्ति ब्राह्मण भोजन कराये, पीपल की प्रदक्षिणा करे, भक्तियुक्त होकर ये कर्म करे। ऐसा करने से शंकर कहते हैं हे देवी ! शाप से मुक्ति मिलती है एवं श्रेष्ठ पुत्र की प्राप्ति होती है और उस पुत्र से परिवार चलता ।।३३-४९।।

अतः परं प्रवक्ष्यामि भ्रात्रादौ शापकारणम् ।। पापयोगेन भावेन कारकेण बलाबले ।।५०।। भ्रातृस्थानाधिपे पुत्रे कुजराहुसमन्विते ।। पुत्रलग्नेश्वरौ रंध्रे भ्रातृशापात्सुतक्षयः ।।५१।। लग्ने सुते कुजे मंदे भ्रातृपे भाग्यराशिगे ।। कारके नाशराशिस्थे भ्रातृशापात्सुतक्षयः ।।५२।। भ्रातृस्थाने गुरौ नीचे मंदः पंचमगो यदि ।। नाशस्थौ न तु मन्दारौ भ्रातृशापात्सुतक्षयः ।।५३।। मूर्तिस्थानाधिपे रिःफे भौंमः पंचमगो यदि ।। पुत्रेशे रंध्रपापस्थे भ्रातृशापात्सुतक्षयः ।।५४।। पाप मध्यगते लग्ने सुतभे पापमध्यगे ।। नाथौ न कारकौ दुःस्थे भ्रातृशापात्सुतक्षयः ।।५५।। कर्मेशे भ्रातृ भावस्थे पापयुक्ते सुते शुभे ।। पुत्रे च कुजसंयुक्ते भ्रातृशापात्सुतक्षयः ।।५६।। पुत्रस्थाने बुधक्षेत्रे शनिराहुसमन्विते ।। रिःफे विदारौ शापत्वाद् भ्रातृशापात्सुतक्षयः ।५७।। लग्नेशे भातृराशिस्थे भ्रातृस्थानाधिपे सुते ।। लग्ने भ्रातृसुते पापे भ्रातृशापात्सुतक्षयः ।।५८।। भ्रात्रीशे नाशराशिस्थे पुत्रस्थे कारके तथा ।। राहुमांदियुते दृष्टे भ्रातृशापात्सुतक्षयः ।।५९।। नाशस्थानाधिपे पुत्रे

भ्रातृनाथेन संयुते ।। रंध्रे आरार्किसंयुक्ते भ्रातृशापात्सुतक्षयः ।।६०।। भ्रातृशापविमोक्षार्थं श्रवणं विष्णुकीर्तनम् ।। चांद्रायणं चरेत्पश्चात्कावेर्यां विष्णुसन्निधौ ।।६१।। अश्वत्थस्थापनं कार्यं दश धेनूः प्रदापयेत् ।। प्राजापत्यं चरेत्तत्र भूमिं दद्यात्फलान्विताम् ।।६२।। एवं यः कुरुते भक्त्या पुत्रवृद्धिः प्रजायते ।।६३।। पुत्रस्थाने बुधे जीवे कुजराहुसमन्विते ।। लग्ने मंदसमायोगे मातुलात्सुतनाशनम् ।।६४।। लग्नपुत्रेश्वरौ पुत्रे बुधभौमसमन्विते ।। मंदे मातुलशापत्वात्पुत्रसंततिनाशनम् ।।६५।।

भ्रातृशाप के योग तथा उपाय

अब यहां से भ्रातृशाप का कारण कहते हैं।। भाव में पापग्रह के योग से तथा पुत्र एवं भ्रातृकारक के बलाबल से शापयोग कहते हैं। तृतीयेश पंचमभाव में मंगल, राहुयुक्त हो, पुत्रेश तथा लग्नेश अष्टमभाव में हों तो भ्रातृशाप से सुतक्षय होता है।। लग्न में मंगल, पंचम में शनि, तृतीयेश नवमभाव में तथा पुत्रकारक अष्टमभावमें स्थित हों तो भ्रातृशाप से सुतक्षय है।। तृतीयभाव में नीचराशि का गुरु हो, शनि पंचमभाव में हो तथा अष्टमभाव में भौम, शनि न हो तो भ्रातृशाप से सुतक्षय होता है।। लग्नेश १२में मंगल पंचमभाव में हो, पुत्रेश अष्टमभाव में पापग्रह युक्त हो तो भ्रातृशाप से सुतक्षय होता है।। लग्न तथा पंचमभाव दोनों पापग्रह के मध्य में हों और इन भावों के स्वामी तृतीयाभाव में हों एवं कारकग्रह भी तृतीयभाव में हों तो भ्रातृशाप से सुतक्षय होता है।। दशमेश तृतीयभाव में हो, पंचमभाव में पापग्रह युक्त शुभग्रह हो, पंचमभाव में मंगल हो तो भ्रातृशाप से सुतक्षय होता है।। पंचमभाव में बुध राशि शनि राहुयुक्त हो, १२वें भाव में मंगल और बुध हो तो भ्रातृशाप से सुतक्षय होता है।। लग्नेश तृतीय भाव में हो और तृतीयेश पंचमभाव में हो लग्न, तृतीय, पंचम में पापग्रह हो तो भ्रातृशाप से सुतक्षय होता है।। तृतीयेश अष्टम में हो और पुत्रकारक पुत्रभाव में राहु और मान्दी से युक्त या दृष्ट हो तो भ्रातृशाप से सुतक्षय होता है।। अष्टमेश पंचम में हो और तृतीयेशयुत्त हो तथा अष्टमभाव में मंगल शनि हो तो भ्रातृशाप से सुतक्षय होता है।। (उपाय) भ्रातृशाप को दूर करने के लिए 'विष्णु पुराण' का श्रवण तथा विष्णुनाम जप कीर्तन करे, बाद में चान्द्रायण व्रंत करे, पश्चात् कावेरी नदी के तट या विष्णु मंदिर में पीपल का वृक्ष लगावे तथा दश गोदान करे, प्राजापत्यव्रत करे, सकलभूमि प्रदान करे।। इस प्रकार भक्ति से जो करता है उसके पुत्र की वृद्धि होती है ।।५०–६३।।

मामा के शाप का वर्णन और उपाय

पंचमभाव में बुध गुरु मंगल राहु हों, लग्न में शनि हो तो मामा के शाप से सुतक्षय होता है।। लग्नेश और पंचमेश पुत्र भाव में हों, बुध मंगल शनि के साथ हों तो मामा के शाप से सुतक्षय होता है।।६४-६५।।

लुप्ते पुत्राधिपे लग्ने सप्तमे भानुनन्दने ।। लग्नेशे बुधसंयुक्ते तस्य संततिनाशनम् ।।६६।। ज्ञातिस्थानाधिपे लग्ने व्ययेशेन समन्विते ।। शशिसौम्यकुजे पुत्रे तस्य संततिनाशनम् ।।६७।। पुत्रलग्नाधिपौ युक्तावन्योन्यं वाथ वीक्षितौ ।। पुत्रे परस्परस्थौ वा पुत्रयोगा इमे स्मृताः ।।६८।। तद्दोषपरिहारार्थं विष्णुस्थापनमुच्यते ।। वापिकूपतडागादिबंधनंसेतुदर्शनम् ।।६९।। पुत्रवृद्धिर्भ-

वेत्तस्य संपद्वृद्धिः प्रजायते ।। इदं योगग्रहेणैव फलं ब्रूयाद्विचक्षणः ।।७०।। गुरुक्षेत्रे यदा राहुः पुत्रे जीवारभानुजाः ।। धर्मस्थानाधिपे नाशे ब्रह्मशापात्सुतक्षयः ।।७१।। विद्यांगर्वेण यो मर्त्यो ब्राह्मणानवमन्यते ।। तद्दोषाद् ब्रह्मशापत्वात्संततेस्तस्य नाशनम् ।।७२।। धर्मेशे पुत्रभावस्थे पुत्रेशे नाशराशिगे ।। जीवाररराहुमृत्युस्थे ब्रह्मशापात्सुतक्षयः ।।७३।। धर्माधिपे नीचगते व्ययेशे पुत्रराशिगे ।। राहुयुक्तेक्षिते वापि ब्रह्मशापात्सुतक्षयः ।।७४।। जीवे नीचगते राहुर्लग्ने वा पुत्रराशिगे ।। पुत्रस्थानाधिपे दुःखे ब्रह्मशापात्सुतक्षयः ।।७५।। पुत्रस्थानाधिपे जीवे रंध्रे पापसमन्विते ।। पुत्रेशावर्कचंद्रौ वा ब्रह्मशापात्सुतक्षयः ।।७६।। मंदांशे मंदसंयुक्ते जीवे भौमसमन्विते ।। पुत्रेशे व्ययराशिस्थे ब्रह्मशापात्सुतक्षयः ।।७७।। लग्ने गुरुयुते मंदे भाग्ये राहुसमन्विते ।। व्यये गुरुसमायोगे ब्रह्मशापात्सुतक्षयः ।।७८।। तस्य दोषस्य शांत्यर्थं कुर्याच्चांद्रायणं नरः ।। ब्रह्मकूर्चत्रयं कृत्वा धेनुं दद्यात्सदक्षिणाम् ।।७९।। पंचरत्नानि देयानि सुवर्णेन समन्वितम् ।। अन्नदानं ततः कुर्यादयुतं वा सहस्रकम् ।।८०।। एवं कृते तु सत्पुत्रं लभते नात्र संशयः ।। मुक्तशापो विशुद्धात्मा स पुमान्सुखमेधते ।।८१।। दारेशे पुत्रभावस्ते दारेशस्थांशपे शनौ ।। पुत्रेशे नाशराशिस्थे पत्नीशापात्सुतक्षयः ।।८२।। कलत्रेशे नाशसंस्थे रिःफेशे पुत्रराशिगे ।। कारके पापसंयुक्ते पत्नीशापात्सुतक्षयः ।।८३।। पुत्रस्थानगते शुक्रे कामपे रंध्रमाश्रिते ।। कारके पापसंयुक्ते पत्नीशापात्सुतक्षयः ।।८४।। कुटुंबे पापसंबधे कामेशे नाशराशिगे ।। पुत्रे पापग्रहैर्युक्ते पत्नीशापात्सुतक्षयः ।।८५।। भाग्यस्थानगते शुक्रे दारेशे नाशराशिगे ।। लग्ने पापे सुते पापे पत्नीशापात्सुतक्षयः ।।८६।। भाग्यस्थानाधिपे शुक्रे पुत्रेशे शत्रुराशिगे ।। गुरुलग्नेशदारेशा दुस्थाः संततिनाशनम् ।।८७।। पुत्रस्थाने भृगुक्षेत्रे राहुचंद्रसमन्विते।। व्यये लग्ने धने पापे स्त्रीशापात्सुतनाशनम् ।।८८।। सप्तमे मंदशुक्रौ च रंध्रेशे पुत्रभेरवौ ।। लग्ने राहुसमायोगे पत्नीशापात्सुतक्षयः ।।८९।।

पुत्रेश लग्न में अस्त होकर स्थित हो, सप्तमभाव में शनि हो, लग्नेश के साथ बुध हो तो सन्तति नष्ट होती है। पुत्र भावेश लग्न में हो, व्ययेश के साथ चं०, मं०, बु० पंचम में हों तो सन्तति नष्ट होती है । पुत्रेश और लग्नेश परस्पर दृष्ट या परस्पर स्थान सम्बन्ध हो तो पुत्र सुख होता है । पूर्वोक्त दोष दूर करने के लिए कुंआ, बावड़ी, तालाब बनाना, सेतुबन्ध रोमेश्वर का दर्शन करना।। इनके करने से पुत्रसुख होता है तथा सम्पत्ति की वृद्धि होती है।। इन ग्रहयोगों से पण्डित को फल कहना चाहिये।। गुरु के घर में राहु हो, पंचम में सू० मं बृ० हो, नवमेश अष्टम में हो तो ब्रह्मशाप से सुतक्षय होता है।। विद्वत्ता के घमण्ड से जो मनुष्य ब्राह्मण का अपमान करता है उस पाप से ब्रह्मशाप होता है और उससे सन्तति नाश होती है।। नवमेश पुत्रभाव में हो पुत्रेश अष्टम में हो बृ० मं० रा० अष्टम में हो तो ब्रह्म शाप से सुतक्षय होता है।। नवमेश नीच का हो, व्ययेश पुत्रभाव में हो, राहुदृष्ट हो तो ब्रह्मशाप से सुतक्षय होता है।। गुरु नीचराशि का हो, राहु लग्न में हो या पुत्रभाव में हो, पुत्रेश छठे भाव में हो तो ब्रह्म शाप से सुतक्षय होता है।। गुरु सुतेश होकर तथा पापग्रहयुक्त अष्टमभाव में हो तथा पुत्रेश सूर्य या चन्द्रमा हो तो ब्रह्मशाप से सुतक्षय होता है।। शनि अपने नवांश में हो, गुरु मंगल के साथ हो, पुत्रेश व्ययभाव में हो तो ब्रह्मशाप से सुतक्षय होता है।। लग्न में गुरु, शनि भाग्यस्थान में राहुयुक्त हो या गुरु व्ययभाव में हो तो ब्रह्मशाप से सुतक्षय होता है।। इस दोष की शान्ति के लिए चान्द्रायण व्रत करे, बाद ब्रह्मकूर्च व्रत ३ करे

पश्चात् गोदान, सुवर्ण, पञ्चरत्नदान, अन्नदान करे, ब्राह्मण भोजन कराये।। ऐसा करने से सत्पुत्र अवश्य होता है इसमें संशय नहीं। उसका शाप दूर होकर आत्मा शुद्ध हो जाती है और सुख की वृद्धि होती है।। सप्तमेश पुत्रभाव में हो सप्तमभाव के नवांश का स्वामी शनि हो पुत्रेश अष्टमभाव में हो तो पत्नी के शाप से सुतक्षय होता है।। सप्तमेश अष्टम में हो, व्ययेश पुत्रभाव में हो, पुत्रकारक पापयुक्त हो तो पत्नीशाप से सुतक्षय होता है।। शुक्र पंचम में हो, सप्तमेश अष्टम में हो, पुत्रकारक पापग्रहयुक्त हो तो पत्नीशाप से सुतक्षय होता है।। तृतीयभाव का पापग्रह से सम्बन्ध हो, सप्तमेश अष्टम में हो, पुत्रभाव में पापग्रह हों तो पत्नीशाप से सुतक्षय होता है।। शुक्र भाग्यस्थान में हो, सप्तमेश अष्टम में हो, लग्न में तथा पंचम में पापग्रह हों तो पत्नी शाप से सुतक्षय होता है।। भाग्येश शुक्र हो, पुत्रेश छठे भाव में हो, गुरु, लग्नेश और सप्तमेश तृतीयभाव में हों तो पत्नीशाप से सुतक्षय होता है।। पुत्रभाव में शुक्रराशि हो, चन्द्रमा और राहुयुक्त हो, लग्न, व्यय, धन भाव में पापग्रह हो तो स्त्री के शाप से सुतक्षय होता है।। सप्तमभाव में शनि शुक्र हो, अष्टमभाव में पुत्रेश की राशि हो, राहुसहित सूर्य लग्न में हो तो पत्नी शाप से सुतक्षय होता है ।।६६-८९।।

धने कुजे व्यये जीवे पुत्रस्थे भृगुनन्दने ।। राहुयुक्तेक्षिते वापि पत्नीशापात्सुतक्षयः ।।९०।। नाशस्थौ वित्तदारेशौ पुत्रे लग्ने कुजे शनौ ।। कारके पापसंयुक्ते पत्नीशापात्सुतक्षयः ।।९१।। लग्नपंचमभाग्यस्था राहुमन्दकुजाः क्रमात् ।। रंध्रस्थौ पुत्रदारेशौ पत्नीशापात्सुतक्षयः।।९२।। तस्य दोषस्य शांत्यर्थं कन्यादानं समाचरेत् ।। लक्ष्मीनारायणं देवं सर्वाभरणभूषितम् ।।९३।। मूर्त्तिदानं च कर्तव्यं दशधेनूः प्रदापयेत् ।। शय्यां च भूषणं चैव दंपत्योर्दापयेत्सुधीः ।।९४।। पुत्रं प्रसूयते तस्य भाग्यवृद्धिश्च जायते ।। मंत्रशापमिदं मर्त्यः पिशाचं बाध्यते सदा ।।९५।। कर्मलोपं पितृभ्यश्च तच्छापाद्वंशनाशनम् ।। पुत्रस्थितौ मंदसूर्यौ क्षीणचंद्रस्तु सप्तमे ।। लग्ने व्यये राहुजीवौ प्रेतशापात्सुतक्षयः ।।९६।। पुत्रस्थानाधिपे मंदे नाशस्थे लग्नगे कुजे ।। कारके नाशराशिस्थेप्रेतशापात्सुतक्षयः ।।९७।। लग्ने पापे व्यये भानौ सुते चारार्किसोमजाः। पुत्रेशे रंध्रभावस्ते प्रेतशापात्सुतक्षयः ।।९८।। लग्ने पापा व्यये भानौ सुते चारार्किसोमजाः ।। पुत्रेशे रंध्रभावस्थे प्रेतशापात्सुतक्षयः ।।९९।। लग्ने राहुसमायोगे पुत्रस्थे भानुनंदने ।। कारके नाशराशिस्थे प्रेतशापात्सुतक्षयः ।।१००।।

धनभाव में मंगल, व्ययभाव में गुरु, पंचमभाव में शुक्र हो, राहु से युक्त या दृष्ट हो तो पत्नीशाप से सुतक्षय होता है।। द्वितीयेश तथा सप्तमेश अष्टम में हो पुत्रभाव में मंगल, लग्न में शनि हो और पुत्रकारक पापग्रहयुक्त हो तो पत्नी शाप से सुतक्षय होता है।। लग्न में राहु, पंचम में शनि, नवम में मंगल हो, पुत्रेश तथा सप्तमेश अष्टमभाव में हो तो पत्नीशाप से सुतक्षय होता है इस दोष की शान्ति के लिए 'कन्यादान' करे लक्ष्मीनारायण की मूर्ति आभरण (गहनों से) युक्त करके दान करे तथा दस गोदान करे। शय्या और भूषण दान करे। यह दान दम्पत्ति को दे तो पुत्र प्राप्त होता है, भाग्यवृद्धि होती है। यह शाप पिशाचरूप है और दुःखदायी है इससे कर्मलोप होकर पितरों के शाप से वंश का नाश होता है।। पंचमभाव में शनि और सूर्य हों, क्षीण चन्द्रमा सप्तम में हों, लग्न में राहु तथा व्यय में गुरु हो तो प्रेतशाप से

सुतक्षय होता है।। शनि, पुत्रेश, ये अष्टम में, लग्न में मंगल हो, पुत्रकारक अष्टमभाव में हो तो प्रेतशाप से सुतक्षय होता है।। लग्न में पापग्रह तथा व्यय में सूर्य हो सुतभाव में मंगल, शनि और बुध हो तथा पुत्रेश अष्टमभाव में हो तो प्रेतशाप से सुतक्षय होता है।। लग्न में पापग्रह तथा व्ययभाव में सूर्य हो, पंचमभाव में मंगल, शनि, बुध हो तथा पुत्रेश अष्टमभाव में हो तो प्रेतशाप से सुतक्षय होता है।। लग्न में राहु पुत्रभाव में शनि हो पुत्रकारक अष्टमभाव में हो तो प्रेतशाप से सुतक्षय होता है।। (९८-९९ इन दोनों श्लोकोंमें एकरूपता है)।।९०-१००।।

लग्ने राहौ च शुक्रेज्ये चन्द्रे मंदयुते तथा ।। लग्नेशे मंदराशिस्थे प्रेतशापात्सुतक्षयः ।।१०१।। लग्ने राहुसमायोगे पुत्रस्थे भानुनंदने ।। कुजदृष्टे युते वापि प्रेतशापात्सुतक्षयः ।।१०२।। कारके नीचराशिस्थे पुत्रस्थानाधिपे स्थिते ।। नीचदृष्टे नीचयुते प्रेतशापात्सुतक्षयः ।।१०३।। लग्ने मंदे सुते राहौ रंध्रे भानुसमन्विते ।। व्यये भौमसमायोगे प्रेतशापात्सुतक्षयः ।।१०४।। कामस्थानाधिपे दुःस्थे पुत्रे चन्द्रसमन्विते ।। मंदमांदियुते लग्ने प्रेतशापात्सुतक्षयः ।।१०५।। बाधस्थानाधिपे पुत्रे शनिशुक्रसमन्विते ।। कारके नाशराशिस्थे प्रेतशापात्सुतक्षयः ।।१०६।। तद्दोषस्य प्रशांत्यर्थं विष्णुश्राद्धं च कारयेत् ।। रुद्रस्नानं प्रकुर्वीत ब्रह्ममूर्तिं प्रदापयेत् ।।१०७।। धेनू रजतपात्रं च नीलं चैव प्रदापयेत् ।। एतत्कर्म कृते तत्र शापमोक्षः प्रजायते ।।१०८।। पुत्रप्राप्तिर्भवेत्तस्य विप्रेभ्यो दक्षिणां दिशेत् ।। पुत्रे राहुरविसौम्याः कारके शुभसंयुते ।। शुभेन वीक्षिते वापि बहुपुत्रं समादिशेत् ।।१०९।। पुत्रेशे शुभराशिस्थे शुभदृष्टिसमन्विते ।। कारके केन्द्रभावस्थे बहुपुत्रं समादिशेत् ।।११०।। लग्नेशे पुत्रराशिस्थे पुत्रेशे लग्नमाश्रिते ।। केन्द्रत्रिकोणगे जीवे बहुपुत्रं समादिशेत् ।।१११।। पुत्रस्थानगते राहौ मंदांशकविवर्जिते ।। बहुपुत्र नरं विद्याच्छुभग्रहनिरीक्षिते ।।११२।। पुत्रस्थानाधिपे स्वोच्चे लग्नेशे शुभसंयुते ।। कारके शुभसंयुक्ते बहुपुत्रं समादिशेत् ।।११३।। पुत्रस्थाने तदीशे वा गुरौ वा शुभवीक्षिते ।। शुभेन सहिते वापि बहुपुत्रं समादिशेत् ।।११४।। परिपूर्णबले जीवे लग्नेशे पुत्रराशिगे ।। पुत्रेशे बलसंयुक्ते बहुपुत्रं समादिशेत् ।।११५।। पुत्रस्थानगते जीवे परिपूर्णबलान्विते ।। लग्नेशे बलसंयुक्ते पुत्रयोगा इमे स्मृताः ।।११६।। वर्गोत्तमांशगे जीवे लग्नेशस्यांशपे शुभे ।। पुत्रेशेन युते दृष्टे पुत्रयोगा इमे स्मृताः ।।११७।। वित्तेशे पुत्रभावस्थे परिपूर्णबलान्विते ।। वैशेषिकांशके जीवे पुत्रयोगा इमे स्मृताः ।।११८।। लग्नात्पुत्राधिपे स्वोच्चे अन्योन्यत्वादिवीक्षिते ।। परस्परस्थानगते पुत्रयोगा इमे स्मृताः ।।११९।। पुत्रस्थानाधिपस्यांशराशीशे शुभसंयुते ।। शुभेन वीक्षिते वापि पुत्रयोगा इमे स्मृताः ।।१२०।। लग्नपुत्राधिपौ केंद्रे शुभग्रहसमन्विते ।। कुटुंबेशे बलाढ्ये तु पुत्रयोगा इमे स्मृताः ।।१२१।। लग्नेशे दारभावस्थे दारेशे लग्नमाश्रिते ।। द्वितीयेशे विलग्नस्थे पुत्रयोगा इमे स्मृताः ।।१२२।। दारेशे ग्रहसंयुक्ते नवांशभवनाधिपे ।। पुत्रवित्तविलग्नेशे पुत्रयोगा इमे स्मृताः ।।१२३।। इति बहुपुत्रयोगाः ।। पुत्रवित्तकलत्रेशाः संयुक्ता नवभागपाः पापांशकाः पापयुता अनपत्यत्वमादिशेत् ।।१२४।। गुरुर्लग्नेशदारेशपुत्रस्थानाधिपेषु वा ।। सर्वेषु बलहीनेषु वक्तव्या त्वनपत्यता ।।१२५।। व्ययेशसंयुतांशेशे मृत्युराशौ स्थिते यदि ।। पुत्रेशे क्रूरषष्ठ्यंशे अनपत्यत्वमादिशेत् ।।१२६।। लग्नपुत्रेश्वरौ दुःस्थे कारके नीचराशिगे ।। अनपत्यग्रहे पुत्रे अनपत्यत्वमादिशेत् ।।१२७।। क्रूरषष्ट्यंशके जीवे पुत्रस्थे नाशराशिके ।। पुत्रेशे नाशराशिस्थे अनपत्यत्वमादिशेत् ।।१२८।। लग्नाधिपे कुजे स्वोच्चे रंध्रे

मंदयुते रवौ ।। शुभदृष्टि समायोगे चिरात्पुत्रमुपैति सः ।।१२९।। लग्ने मंदे गुरौ रंध्रे व्यये भौमसमन्विते ।। शुभदृष्टे स्वतुंगे वा चिरात्पुत्रमुपैति सः ।। १३०।। पुत्रस्था मंदजीवज्ञा लग्ने पुत्राधिपे शुभे ।। पुत्रेशे शुभराशिस्थे चिरात्पुत्रमुपैति सः ।।१३१।। सुते राह्वर्कशुक्रेज्याः शुभर्क्षे शुभवीक्षिते ।। पुत्रेशे शुभराशिस्थे चिरात्पुत्रमुपैति सः ।।१३२।। लग्ने सौम्ये धने पापे तृतीये पापखेचरे ।। पुत्रेशे शुभराशिस्थे चिरात्पुत्रमुपैति सः ।।१३३।। इति पुत्रयोगाः ।। पुत्रस्थाने कुजे मंदे बुधक्षेत्रे विलग्नपे ।। बुधदृष्टे युते वापि तदा दत्ताः सुतादयः ।।१३४।।

लग्न में राहु, शुक्र, गुरु, चन्द्र, शनि हो, लग्नेश शनि के भाव में हो तो प्रेतशाप से सुतक्षय होता है।। लग्न में राहु हो, पुत्रस्थान में शनि हो, मंगल से दृष्ट या युक्त हो तो प्रेतशाप से सुतक्षय होता है।। पुत्रकारक बीचराशि में हो तथा पुत्रेश भी स्थित हो, नीचग्रह से दृष्ट या युक्त हो तो प्रेतशाप से सुतक्षय होता है।। लग्न में शनि, पंचम में राहु तथा अष्टम में सूर्य हो तथा व्ययभाव में मंगल हो तो प्रेतशाप से सुतक्षय होता है।। सप्तमेश तृतीयभाव में हो, पुत्रभाव में चन्द्रमा हो, लग्न में शनि और मान्दी हो तो प्रेतशाप से सुतक्षय होता है।। बाध (६) स्थान का स्वामी पुत्रस्थान में हो और शुक्र शनि युक्त हो पुत्रकारक अष्टम भाव में हो तो प्रेतशाप से सुतक्षय होता है।। इस दोष की शान्ति के लिए 'विष्णुश्राद्ध' करे, रुद्रस्नान करे, ब्रह्मा की मूर्ति का दान करे।। गौ तथा चान्दी का पात्र और नील वृषभ (बैल) का दान करे। यह उपाय करने से शाप की शान्ति होती है।। पुत्र की प्राप्ति होती है, पुत्र प्राप्त होने पर ब्राह्मणों को दक्षिणा दे। पुत्र स्थान में राहु, सूर्य, बुध हो, पुत्र कारक शुभराशि में हो, शुभग्रहों की दृष्टि हो तो बहुत पुत्र होते हैं।। पुत्रेश शुभराशि में हो, शुभदृष्टि युक्त हो, पुत्रकारक केन्द्रभाव में हो तो बहुत पुत्र होते हैं।। लग्नेश पुत्रभाव में हो, पुत्रेश लग्न में हो, गुरु केन्द्र त्रिकोण में हो तो बहुत पुत्र होते हैं।। पुत्रस्थान में राहु हो परन्तु शनि के नवांश में नहीं हो तो बहुत पुत्र होते हैं।। पुत्रेश उच्च का हो, लग्नेश शुभयुक्त हो, पुत्रकारक शुभग्रहयुक्त हो तो बहुत पुत्र होते हैं।। पुत्रभाव या भावेश अथवा गुरु शुभग्रह दृष्ट या युक्त हो तो बहुत पुत्र होते हैं।। बृहस्पति पूर्ण बलवान हो, लग्नेशं पुत्रभाव में हो, पुत्रेश भी बलयुक्त हो तो बहुत पुत्र होते हैं।। पुत्रस्थान में गुरु हो, पूर्णबलवान् हो तथा लग्नेश भी बलवान् हो तो पुत्रप्राप्ति का योग है।। बृहस्पति वर्गोत्तमांश में हो, लग्नेश के नवांश का स्वामी शुभग्रह हो तथा पुत्रेश से युक्त या दृष्ट हो तो पुत्रसुख होने के योग हैं।। धनेश पुत्रभाव में हो और पूर्णबली हो, गुरु अपने विशेष अंश में हो, ऐसे योग पुत्रप्रद होते हैं।। लग्न से पंचमेश उच्चराशि में हो, लग्नेश पुत्रेश परस्पर दृष्टियोग या स्थान योगकर्ता हो तो पुत्रयोग होता है।। पुत्रेश की नवामांश राशि का स्वामी शुभग्रह हो और शुभयुक्त या दृष्ट हो तो पुत्रयोग होता है।। लग्नेश पुत्रेश केन्द्र में शुभग्रहयुक्त हों, तृतीयेश बलवान् हो तो पुत्रयोग है।। लग्नेश सप्तमेश परस्पर एक दूसरे के स्थान में हों और द्वितीयेश लग्न में हो तो पुत्रयोग होता है।। सप्तमेश ग्रहयुक्त हो, लग्न, द्वितीय, पंचम के स्वामी नवांश के स्वामी हों तो पुत्रयोग होता है।। (ये 'बहुपुत्र' योग कहे गये। अब 'पुत्रहीन' योग कहते हैं।) २।५।७ भावों के स्वामी अपने नवांश में हों, और पाप नवमांश पापग्रह युक्त हो तो 'पुत्रहीन' योग कहना चाहिये।। बृहस्पति, लग्नेश, पञ्चमेश, सप्तमेश ये सब ग्रह वर्ग आदि बलहीन हों तो 'पुत्रहीन' योग होता है।। नवांश पति व्ययेश

युक्त होकर अष्टमभाव में हो, पुत्रेश पापग्रह के षष्ठ्यंश में हो तो 'पुत्रहीन' योग होता है।। लग्नेश तथा पुत्रेश तृतीय भाव में हों, पुत्रकारक नीचराशि में हो, पुत्रस्थान में पुत्रनाशक पापग्रह हो तो अनपत्य (पुत्रहीन) योग होता है।। बृहस्पति पापग्रह के षष्ठ्यंश में हो, अष्टमेश पुत्रभाव में हो, पुत्रेश अष्टमभाव में हो तो अनपत्य योग होता है।।
यहां से देरी से पुत्र होने के योग कहते हैं ।
(१) लग्नेश मंगल उच्चराशि का हो, अष्टमभाव में शनियुक्त सूर्य हो, शुभदृष्टि हो तो बहुत देर से पुत्र होता है।। लग्न में शनि, गुरु अष्टम में, व्यय में मंगल हो, शुभदृष्ट या उच्चराशि में हो तो देरी से पुत्र होता है।। पुत्रभाव में शनि, गुरु, बुध हों, पुत्रेश शुभग्रह हो और लग्न में अथवा शुभभाव में हो तो देर से पुत्र होता है।। पुत्रस्थान में राहु, सूर्य, शुक्र, गुरु हों तथा पंचमभाव में शुभ राशि, शुभदृष्ट हो और पुत्रेश शुभराशि में हो तो देरी से पुत्र होता है।। लग्न में सौम्यग्रह तथा धनभाव में पापग्रह एवं तृतीयभाव में भी पापग्रह हो और पुत्रेश शुभराशि में हो तो देरी से पुत्र होता है।। (पुत्रयोग समाप्त) (अब दत्तपुत्रयोग कहते हैं) पुत्रस्थान में मंगल तथा शनि बुध राशि में हो और लग्नेश को बुध देखता हो अथवा युक्त हो तो 'दत्तपुत्र' होता है।।१०१-१३४।।

पुत्रस्थाने बुधक्षेत्रे मंदक्षेत्रेऽथवा भवेत् ।। मंदमांदियुते दृष्टे तदा दत्ताः सुतादयः ।।१३५।। पुत्रस्थाने बुधे क्षेत्रे बुधसंस्थेक्षितेऽपि वा ।। लग्नाधिपे शनौ वापि दत्तपुत्रा भवंति हि ।।१३६।। पुत्रेशे मंदसंयुक्ते कुजे सौम्यनिरीक्षिते ।। लग्नाधिपे बुधांशे वा दत्तपुत्रा भवंति हि ।।१३७।। कामेशे लाभभावस्थे पुत्रेशे शुभसंयुते ।। पुत्रे मंदे बुधे वापि दत्तपुत्रा भवंति हि ।।१३८।। पुत्रेशे भाग्यभावस्थे भाग्येशे कर्मराशिगे ।। पुत्रे मंदजदृष्टे तु दत्तपुत्रेणः संततिः ।।१३९।। लग्नाधिपे भृगोश्चोच्चे पुत्रे मंदसमन्विते ।। कारके बलसंयुक्ते दत्तपुत्रात्तु संततिः ।।१४०।। पुत्रस्थानाधिपे चंद्रे लग्ने पुत्रे शनैश्चरे ।। परिपूर्णबले जीवे दत्तपुत्रात्सुती भवेत् ।।१४१।। पुत्राधिपे रवौ लग्ने पुत्रस्थौ शनिसोमजौ ।। पुत्राधिपे बलयुते दत्तपुत्रात्सुती भवेत् ।।१४२।। लग्नाधिपे बुधे पुत्रे कुजदृष्टिसमन्विते ।। कारके लाभराशिस्थे दत्तपुत्रात्सुती भवेत् ।।१४३।। लग्नाधिपे गुरौ पुत्रे शनिदृष्टिसमन्विते ।। पुत्रेशे भौमराशिस्थे दत्तपुत्रा भवंति हि ।।१४४।। वंशान्तो हरिरुष्णगौ त्रिपुरहाब्जे भूसुते रुद्रियं सौम्ये संपुटकांस्यपात्रविधिवज्जीवे च पैत्र्यातिथिः ।। शुक्रेः गोप्रतिपालनं च क़थितं मंदे च मृत्युंजयः ।। कन्यादानभुजंगकेतुकपिलाः संतानसौख्यप्रदाः ।।१४५।। यावत्संख्या भवेद्राशिस्तावद्वारं विनिर्दिशेत् ।। शिवविष्णुस्थापनाद्वालक्षयोगात्सुखं भवेत् ।।१४६।।

इति श्रीबृहत्पाराशरहोराशास्त्रेपूर्वखंडे संतानभावफलादेशवर्णनं नाम षोडशोऽध्यायः ।।१६।।

पुत्रभाव में बुधराशि या शनिराशि हो, शनि या मान्दी से युक्त या दृष्ट हो तो दत्तपुत्र (गोद का पुत्र) होता है।। पुत्रस्थान में बुधराशि, बुधयुक्त या दृष्ट हो और लग्नपति शनि हो तो दत्तपुत्र होता है।। पुत्रेश शनि से युक्त हो, मंगल को बुध देखता हो और लग्नेश बुध के

नवांश में हो तो दत्तपुत्र होता है।। सप्तमेश लाभस्थान में हो पुत्रेश शुभग्रहयुक्त हो पुत्रभाव में शनि या बुध हो तो दत्तपुत्र होता है।। पुत्रेश भाग्यभाव में हो, भाग्येश दशमभाव में और पंचम शनि से दृष्ट हो तो दत्तपुत्र होता है।। उच्चराशिस्थित शुक्र लग्नेश हो, पुत्रभाव में शनि हो और पुत्रकारक बलवान हो तो 'दत्तपुत्र' होता है।। पंचमेश चन्द्रमा हो लग्न या पुत्रभाव में शनिश्चर हो, गुरु पूर्ण बली हो तो दत्तपुत्र होता है।। पुत्रेशं सूर्य लग्न में हो, पुत्रस्थान में शनि, बुध हो, पुत्रस्थान स्वामी बलवान् हो तो दत्तपुत्र होता है।। लग्नस्वामी बुध हो, पञ्चम भाव पर मंगल की दृष्टि हो, पुत्रकारक बलवान् हो और लाभस्थान में हो तो दत्तपुत्र से सुख होता है।।१४४।। लग्नेश गुरु पुत्रभाव में हो, पुत्रभाव पर शनि की दृष्टि हो और पुत्रेश मंगल की राशि में हो तो दत्तपुत्र होता है।।

(अब पुत्रोत्पत्ति के लिये उपाय कहते हैं)

सूर्य के दोष में 'हरिवंश पुराण' श्रवण करना, चन्द्रदोष में महादेवजी का प्रदोष व्रत तथा उद्यापन, मंगलदोष में 'रुद्राभिषेक' बुधदोष में 'सम्पुट कांसीपात्र में घृत सुवर्ण दान, गुरुदोष में पितृपूजा, शुक्रदोषमे 'गोपालन' (या गोदान) शनिदोष में मृत्युंजय मन्त्र–पुरश्चरण और राहु–केतु के दोष अथवा शापजनित दोष में पूर्वोक्त कन्यादान, सुवर्ण भुजंगदान, कपिला, गोदान आदि उपाय सन्तान सुख देनेवाले हैं।। राशि की संख्या के अनुरूप उपाय की आवृत्ति कहना अथवा शिव विष्णु की स्थापना करना या सन्तान गोपाल आदि के पुरश्चरण आदि से सुख कहना ।।१३५-१४६।।

इति श्री बृ० पा० हो० शा० पू० भा० प्र० संतानभावकफलादेश वर्णनं नाम षोडशोऽध्यायः ।।१६।।

अथ नाभसयोगमाह

अधुना वै विस्तरतः कथिता योगास्तु नाभसा नाम्ना ।। अष्टादशशतगुणितास्तेषां संक्षेपतो वक्ष्ये ।।१।। आश्रयाख्यास्त्रयो योगा दलयोगद्वयं ततः ।। आकृतिर्विंशतिः संख्या योगानां सप्तकं स्मृतम् ।।२।। रज्जुयोगो मूशलश्च नलो मालाभुजंगमौ ।।३।। गदायोगश्च शकटः श्रृंगाटकविहंगमौ ।। हलवज्रयवाश्चैव कमलो वापियूपकौ ।।४।। शरशक्तिदं डनौकाकूटच्छत्रधनूंषि च ।। अर्द्धेन्दुयोगश्चक्राख्यः समुद्रश्चेति विंशतिः ।।५।। वीणादामनिकायोगः पाशकेदारशूलकाः ।। युगगोलौ ततः प्रोक्तौ योगा द्वात्रिंशका इमे ।।६।।

अथाश्रययोगत्रयमाह

सर्वे चरस्था अपि वा स्थिरस्था द्विदेहसंस्था यदि वा भवंति ।। क्रमेण रज्जुर्मुशलं नलश्च योगत्रयं स्यादिदमाश्रयाख्यम् ।।७।।

नाभस योग

अब हम विस्तार से 'नाभस' नाम के जो योग पूर्व आचार्यों ने कहे हैं जो कि–सब मिलाकर १८०० हैं उनमें से मुख्य मुख्य योग–संक्षेप से कहेंगे ।। तीन आश्रय नाम के योग हैं।

दल योग २ हैं। आकृति नाम के योग २० हैं, योग नाम के ७ हैं, जिनके विशेष नाम रज्जू, मूसल, नल, माला, भुजङ्गम्, गदा, शकट, शृङ्गाटक, विहङ्गम, हल, वज्र, यव, कमल, वापी, यूपक, शर, शक्ति, दण्ड, नौका, कूट, छत्र, धनुष, अर्धेन्दु, चक्र और समुद्र ये २० हैं। बीणा, दामनिका, पाश, केदार, शूलक, यूग, गोल ये ७ हैं।। सब मिलकर ३२ योग होते हैं।।१-६।।

तीन आश्रययोग

सब ग्रह यदि चर राशि में हो तो 'रज्जू' योग और स्थिर राशि में 'मूसल' तथा द्विस्वभाव राशि में हो तो 'नल' योग होता है। ये आश्रय नाम के ३ योग हुए।।७।।

अथ दलाख्ययोगद्वयमाह

केंद्रत्रये सौम्यखगैस्तु माला खलग्रहैर्व्यालसमाह्वयः स्यात् ।। इदं तु योगद्वितयं दलाख्यं मुनीश्वरेण प्रतिपादितं हि ।।८।।

अथाकृतियोगविंशतिमाह

आसन्नकेंद्रद्वयगैर्गदाख्यो लग्नास्तसंस्थैः शकटः समस्तैः ।। खबंधुयातैर्विहगः प्रदिष्टः श्रृंगाटकं लग्ननवात्मजस्थैः ।।९।। धनारिखस्थैस्त्रिमदायगैर्वा चतुर्थरन्ध्रव्ययसंस्थितैर्वा ।। नभस्तलस्थैर्हलनामयोगः किलोदितोयं निखिलागमज्ञैः ।।१०।। लग्नस्मरस्थानगतैः शुभाख्यैः पापैश्च मेषूरणबंधुयातैः ।। वज्राभिधस्तैर्विपरीतसंस्थैर्यवश्च मिश्रैः कलमाभिधानः ।।११।। त्यक्त्वा केंद्राणि चेत्खेटाः शेषस्थानेषु संस्थिताः ।। वापीयोगो भवेदेवं गदितः पूर्वसूरिभिः ।।१२।। लग्नाच्चतुर्थात्स्मरतः खमध्याच्चतुर्गृहस्थैर्गगनेचरेंद्रैः क्रमेण यूपश्च शरश्च शक्तिर्दण्डः प्रदिष्टः खलु जातकज्ञैः ।।१३।। लग्नाच्चतुर्थात्स्मरतः खमाद्यात्सप्तर्क्षगैर्नौरथकूटसंज्ञः ।। छत्रं धनुश्चान्यगृहप्रवृत्तैर्नौपूर्वकैर्योग इहार्द्धचंद्रः ।।१४।। तनोर्धनाद्येकगृहांतरेण स्युः स्थानषट्के गगनेचरेंद्राः ।। चक्राभिधानश्च समुद्रनामा योगा इतीहाकृतिजाश्च विंशत् ।।१५।।

दो दल योग

तीन केन्द्र स्थानों में सौम्य ग्रह हों तो 'माला' योग होता है और पापग्रह हों तो 'ब्याल' योग होता है। इस प्रकार ये दो दल योग मुनीश्वरों ने कहे हैं।।८।।

बीस आकृति योग

समीप के दो केन्द्र स्थानों में यदि सब ग्रह हों तो गद योग। लग्न और सप्तम में सब ग्रह हों तो 'शकट' योग।दसवें और तीसरे स्थान में 'बिहग' योग। लग्न,पंचम,नवममें सब ग्रह हों तो 'श्रृङ्गाटक' योग। दूसरे, छठे, दसवें अथवा तीसरे, सातवें, ग्यारहवें एवं चौथे, आठवें, बारहवें में सब ग्रह हों तो 'हल' नाम का योग शास्त्राचार्यों ने कहा है। लग्न सप्तम स्थान में शुभग्रह हों, तीसरे, दसवें स्थान में पापग्रह हों तो 'बज्र' योग होता है। इसके विपरीत हों तो 'यव' नाम का योग होता है । और मिले जुले ग्रह हों तो 'कमल' नाम का योग होता है । केन्द्र स्थान को छोड़कर बाकी स्थानों में सब ग्रह हों तो 'वापी' नाम

का योग होता है। सम्पूर्ण ग्रह लग्न से ४ स्थानों में या चतुर्थ से ४ स्थानों में या सप्तम से ४ स्थानों में अथवा दशम से ४ स्थानों में हों तो क्रम से 'यूप', 'शर्', 'शक्ति', और 'दण्ड' योग होता है। सम्पूर्ण ग्रह लग्न से ७ स्थानों में अथवा चौथे स्थान से ७ स्थानों में या सातवें से ७ स्थानों में अथवा दसवें से ७ स्थानों में हो तो क्रम से 'नौका', 'कूप', 'छत्र' और 'धनुष' योग होता है। इनसे विपरीत किन्तु लगातार ७ स्थानों में ग्रह हों तो 'अर्ध चन्द्र' योग होता है। लग्न से या दूसरे से एक एक घर के अन्तर से ६ घरों में समस्त ग्रह हों तो क्रम से 'चक्र' और 'समुद्र' नाम का योग होता है। ये २० 'आकृति' योग कहे गये हैं ।।९–१५।।

अथ सप्तसंख्यायोगनामान्याह

ये योगाः कथिताः पुरा बहुतरास्तेषामभावे भवेद्गोलश्चैकगतैर्युगं द्विगृहगैः शूलस्त्रिगेहोपगैः ।। केदारश्च चतुर्थसर्वखचरैः पाशस्तु पंचस्थितैः षट्स्थैर्दामनिका च सप्तगृहगैर्वीणेति संख्या इमे ।।१६।।

अथैतेषां फलानि क्रमेणाह

अटनप्रयासरूपाः परदेशस्वास्थ्यभागिनो मनुजाः ।। क्रूराः खलस्वभावा रज्जुप्रभवाः सदा कथिताः ।।१७।। मानज्ञानयुतांकस्थैर्युक्ता नृपप्रियाः ख्याताः ।। बहुपुत्राः स्थिरचित्ता मुसलसमुत्था भवंति नराः ।।१८।। न्यूनातिरिक्तदेहा धनसंचयभागिनोऽतिनिपुणाश्च ।। बंधुहिताश्च सरूपा नलयोगे संप्रसूयंते ।।१९।। नित्यं सुखप्रधाना वाहनवस्त्रान्नभोगसंपन्नाः ।। कांताः सुबहुस्त्रीका मालायां संप्रसूताः स्युः ।।२०।। विषमाः क्रूरा निःस्वा नित्यं दुःखार्दिताः सुदीनाश्च ।। परभक्षपाननिरताः सर्पप्रभवा भवन्ति नराः ।।२१।। सततोद्युक्तार्थवशा यज्वानः शास्त्रगेयकुशलाश्च ।। धनकनकरत्नसंपत्संयुक्ता मानवा गदायां तु ।।२२।। रोगार्ताः कुनखा मूर्खाः शकटानुजीविनो निःस्वाः मित्रस्वजनविहीनाः शकटे जाता भवंति नराः ।।२३।। भ्रमणरुचयो विकृष्टाः दूताः सुरतानुजीविनो धृष्टाः ।। कलहप्रियाश्च नित्यं विहगे योगे सदा जाताः ।।२४।। प्रियकलहाः समरसहाः सुखिनो नृपतेः प्रियाः शुभकलत्राः ।। आढ्या युवतिद्वेष्याः श्रृंगाटकसंभवा मनुजाः ।।२५।।

सप्त योग

जो अनेक प्रकार के योग पूर्वाचार्यों ने कहे हैं, उनमें से संक्षेप से ये ७ योग कहे जाते हैं। एक घर में बहुत ग्रह हों तो 'गोल' योग होता है। दो भावों में सब ग्रह हों तो 'युग' योग। तीन भावों में 'त्रिशूल' योग, चार भावों में 'केदार'। पांच भावों में 'पाश'। छः भावों में 'दामनिका'। सात भावों में सब ग्रह हों तो 'बीणा' योग होता है। किन्तु ये भाव लगातार होने चाहिये।। १६।।

योगों के फल

'रज्जू' योग मे जन्म होने से देशाटनशील और हीन स्वास्थ्य वाले, क्रूर तथा दुष्ट स्वभाव वाले होते हैं। 'मुसल' योग में होनेवाले मान, ज्ञान से युक्त राजा के प्रिय, विख्यात, बहुपुत्र

और स्थिर–चित्त होते हैं। 'नल' योग में होनेवाले जातक कम या अधिक अङ्ग वाले, कंजूस, व्यापार में निपुण, सुडौल और बन्धु से हित चाहनेवाले होते हैं। 'माला' योग में जन्म लेनेवाले जातक सदा सुखी, अन्न, वस्त्र, भोग, वाहन, सम्पन्न, बहुस्त्रीभोगी होते हैं। 'सर्प' योग में होनेवाले क्रूर स्वभाव, दरिद्र, नित्य दुःखी,दीन और सर्वभक्षी होते हैं। 'गदा' योग में पैदा हुए जातक सदा उद्योंगशील, यज्ञ आदि धार्मिक कार्य करनेवाले, शास्त्रज्ञान में कुशल, सुवर्ण आदि सम्पत्ति से युक्त होते हैं। 'शकट' योग में होनेवाले मनुष्य रोगी, कुनखी, मूर्ख, सवारी से जीविका चलानेवाले, मित्र–स्वजन हीन, और दरिद्री होते हैं। 'विहग' योग में होनेवाले मनुष्य भ्रमण रुचि, नौकर, कामी, धृष्ट और कलह प्रिय होते हैं। 'शृङ्गाटक' योग में होनेवाले मनुष्य कलह प्रिय, युद्ध प्रेमी, सुखी, राजा के प्यारे, अच्छी स्त्रीवाले और धनी होते हैं।। ।।१७-२५।।

बह्वाशिनो दरिद्राः कृषीवला दुःखिताश्च सोद्वेगाः ।। बंधुसुहृद्भिः सक्ताः प्रेष्या हलसंज्ञके सदा पुरुषाः ।।२६।। आद्यंतवयःसुखिनः शूराः सुभगा निरीहाश्च ।। भाग्यविहीना वज्रे जाताः खला विरुद्धाश्च ।।२७।। व्रतनियममंगलपरा वयसो मध्ये सुखार्थपुत्रयुताः ।। दातारः स्थिरचित्ता यवयोगभवाः सदा पुरुषाः ।।२८।। विभवगुणाढ्याः पुरुषाः स्थिरायुषो विपुलकीर्तयः शुद्धाः ।। शुभशतकाः पृथ्वीशाः कमलभवा मानवा नित्यम् ।।२९।। निधिकरणे निपुणधियः स्थिरार्थसुख संयुताः सुतयुताश्च ।। नयनसुखसंप्रहृष्टा वापीयोगेन राजानः।।३०।। आत्मविदिज्यानिरतः स्त्रिया युतः सत्त्वसंपन्नः ।। व्रतनियमनिरतो यूपे जातो विशिष्टश्च ।।३१।। इष्टं करणे दस्युबंधनमृगयाधनसेविताश्च मांसादाः ।। हिंस्राः कुशिल्पकाराः शरयोगे मानवाः प्रसूयंते ।।३२।। धनरहित विफलदुःखितनीचालसाश्चिरायुषः पुरुषाः ।। संग्रामबुद्धिनिपुणाः शतचां जाताः स्थिराः शुभगाः ।।३३।। हतपुत्रदारनिःस्वाः सर्वत्र च निर्घृणाः स्वजनबाह्याः ।। दुःखितनीचप्रेष्याः दंडप्रभवा भवंति नराः ।।३४।। सलिलोपजीविविभवाः बह्वाशाः ख्यातकीर्त यो दुष्टाः ।। कृपणा मलिना लुब्धा नौसंजाताः खलाः पुरुषाः ।।३५।।

'हल' योग में होने वाले मनुष्य बहुभोजी, दरिद्री, खेतिहर, दुःखी, चिन्ताशील, इष्टमित्रों में रात दिन रहनेवाले होते हैं। 'बज्र' योग में पैदा होनेवाले मनुष्य बचपन और बुढ़ापा के सुखी, शूरवीर, सौभाग्ययुक्त और निष्कामी होते हैं। यव योग में पैदा हुए मनुष्य व्रत, नियम, संयमशील तथा जवानी में सुखी, धन–पुत्रयुक्त, दानी और स्थिर चित्त होते हैं। 'कमल' योग में होनेवाले वैभवशाली, दीर्घायु, कीर्तिमान्, शुद्धाचरणी, राजा होते हैं। 'वापी' योग में होनेवाले धन संचयकारी, स्थिर सुख सम्पन्न, सुख संतान से युक्त, स्थिर इन्द्रियोंवाले राजा के समान होते हैं। 'यूप' नामक योग में पैदा हुए जातक आत्मज्ञानी, कर्मयोगी, विद्वान, साहसी, गृहस्थ–धर्म–सम्पन्न, समाज में विशिष्ट व्यक्ति होता है। 'शर' योग में हुआ जातक अपना मतलब सिद्ध करने में निपुण, शिकारी, चोर, ठग, मांसाहारी, हिंसक और नीच कार्य करनेवाला होता है। 'शक्ति' योग में पैदा हुए मनुष्य निर्धन, विफल मनोरथ, दुःखी, नीच, आलसी, दीर्घायु, झगडालू और दृढ़प्रतिज्ञ होते हैं। 'दण्ड' योग में होने वाले निर्धन, स्त्रीपुत्रहीन, सर्वभक्षी, समाज बहिस्कृत, दुःखी, नीच, नौकर होते हैं। 'नौका' योग में पैदा हुए मनुष्य नदीवासी, बहुभोजी, विख्यात, दुष्ट, कृपण, मलिन, लोभी और चुगलखोर होते हैं।।२६-३५।।

अनतकथनवधपापा निष्किंचनाः शठाः क्रूराः।। कूटसमुत्था नित्यं भवंति गिरिदुर्गवासिनो मनुजाः ।।३६।। स्वजनाश्रयो दयावान्नानानृपवल्लभः प्रकृष्टमतिः ।। प्रथमेंऽत्ये वयसि नरः सुखवान्दीर्घायुरातपत्री स्यात् ।।३७।। आनृतिकगुप्तपापाश्चौराः कितवाश्च कानने निरताः ।। कार्मुकयोगे जाता भाग्यविहीनाः शुभा वयोमध्ये ।।३८।। सेनापतयः सर्वे कांतशरीरा नृपप्रिया बलिनः ।। मणिकनकभूषणयुता भवंति योगे वार्धचंद्राख्ये ।।३९।। प्रणताशेषनराधिपकिरीटरत्नप्रभास्फुरितपादः ।। भवति नरेंद्रो मनुजश्चक्रे यो जायते योगे ।।४०।। बहुरत्नधनसमृद्धा भोगयुता धनजनप्रियाः ससुताः ।। उदधिसमुत्थाः पुरुषाःस्थिरविभवाःसाधुशीलाश्च ।।४१।। प्रियगीतनृत्यवाद्यनिपुणाः सुखिनश्च धनवन्तः ।। नेतारो बहुभृत्या वीणायां कीर्तिताः पुरुषाः ।।४२।। दामिन्यामुपकारी नयधनयुक्तो महेश्वरः ख्यातः ।। बहुसुतरत्नसमृद्धो धीरो जायेत विद्वांश्च ।।४३।। पाशे बंधनभाजः कार्ये दक्षाः प्रपंचकाराश्च ।। बहुभाषिणो विशीला बहुभृत्याः संप्रतानाश्च ।।४४।। सुबहूनामुपयोज्याः कृषीवलाः सत्यवादिनः सुखिनः ।। केदारे संभूताश्चलस्वभावा धनैर्युक्ताः ।।४५।।

'कूट' योग में पैदा हुए मनुष्य झूठे, पापी और हिंसक, दरिद्र, शठ, क्रूर और वनवासी होते हैं। 'छत्र' योग में होने वाले आश्रय दाता, दयावान, राजबल्लभ, श्रेष्ठ बुद्धिवाले, सुखी, दीर्घायु, बाल्य और वृद्ध अवस्था के सुखी होते हैं। 'धनुष' योग में होनेवाले झूठे, चोर गुप्त पापी, धूर्त, जंगलवासी, भाग्यहीन, जवानी में सुखी होते हैं। 'अर्द्धचन्द्रयोग' में होने वाले जातक सेनापति, सुन्दर शरीर, राजप्रिय, बलवान् धनी होते हैं। जो महाभाग 'चक्र' योग में जन्म लेते हैं वे राजाधिराज होते हैं और राजा लोग उनके चरणों में सदा प्रणाम करते हैं।। 'समुद्र' योग में जन्म लेनेवाले सदा ऐश्वर्यशाली, श्रेष्ठ आचारवाले, धनीजनों के मान्य भोगी, वैभवयुक्त, बहु पुत्रवाले होते हैं।। 'वीणा' योग में होनेवाले जातक गान–वाद्य, नृत्य में निपुण और धनवान्, सुखी, नेता तथा बहुत कर्मचारीवाले होते हैं। 'दामिनी' योग में जन्म लेनेवाले उपकारी, नीतिमान्, धनी, ऐश्वर्यशाली, विख्यात, बहुत परिवारवाले और धीर होते हैं। 'पाश' योग में पैदा हुए मनुष्य कभी कभी कैद भोगनेवाले, छल छिद्रकारी, चतुर, बहु भाषी (बकवादी), शीलरहित, डपोरशंख होते हैं। 'केदार' योग में पैदा होनेवाले सत्यवादी, सुखी, चञ्चल स्वभाववाले, धनी और उपकारी होते हैं।।३६-४५।।

तीक्ष्णालसधनहीना हिंस्राः सुबहिष्कृता महाशूराः ।। संग्रामे लब्धशब्दाः शूले योगे भवंति नराः ।।४६।। पाखंडवादिनो वा धनरहिता वा बहिष्कृता लोके ।। सुतमातृधर्मरहिता युगयोगे ये नरा जाताः ।।४७।। बलसंयुक्ता विधना विद्याविज्ञानवर्जिता मलिनाः ।। नित्यं दुःखितदीना गोले योगे भवंति नराः ।।४८।। सर्वास्वपि दशास्वेते भवेयुः फलदायिनः ।। प्राणिनामिति विज्ञेयाः प्रवदंति तवाग्रजाः ।।४९।।

इति श्रीबृहत्पाराशरहोराशास्त्रेपूर्वखंडे नाभसयोगादि फलकथनं नाम सप्तदशोऽध्यायः ।।१७।।

'शूल' योग में पैदा हुए मनुष्य तीखे स्वभाववाले, आलसी, धनहीन, हिंसक, बलवान् किन्तु समाज से निन्दित होते हैं। 'युग' योग में होने वाले मनुष्य पाखण्डी, झूठे, दरिद्र, समाज सें निन्दित, धर्ममर्यादा रहित होते हैं।। 'गोल'' योग में होनेवाले मनुष्य बलवान्, निर्धन, ज्ञान और विद्यारहित, मलिन और सदा दुःखी होते हैं। हे मैत्रेय! ये योग अपना पूरा फल विशेष करके सभी दशा में दिखाते हैं।।४६-४९।।

इति श्रीबृहत्पाराशरहोराशास्त्रेपूर्वखण्डे भा० प्र० नाम सयोगादिफलकथनं
नाम सप्तदशोऽध्यायः ।।१७।।

अथ गजकेसरियोगमाह

केंद्रस्थिते देवगुरौ मृगांकाद्योगस्तदाहुर्गजकेसरीति ।। दृष्टे युते वेंदसुते शशांके नीचास्तहीनैर्गजकेसरी स्यात् ।।१।। गजकेसरिसंजातस्तेजस्वी धनवान् भवेत् ।। मेधावी गुणसंपन्नो राजप्रियकरो भवेत् ।।२।।

अथाऽमलायोगमाह

यस्य जन्मसमये शशिलग्नात्सद्ग्रहे यदि च जन्मनि संस्थः ।। तस्य कीर्तिरमला भुवि तिष्ठेदायुषोन्तमविनाशनसंपत् ।।३।। लग्नाद्वा चन्द्रलग्नाद्वा दशमे शुभसंयुते ।। योगोयममला नाम कीर्तिराचन्द्रतारकी ।।४।। राजपूज्यो महाभोगी दाता बन्धुजनप्रियः ।। परोपकारी गुणवानमलायोगसम्भवः ।।५।।

गज केसरी योग

चन्द्रमा से बृहस्पति केन्द्र में हो तो 'गजकेसरी' नाम का योग होता है। और नीच और अस्तरहित ग्रहों से दृष्ट अथवा युक्त बुध या चन्द्रमा हो तो भी 'गजकेसरी' योग होता है। गजकेसरी में उत्पन्न हुआ मनुष्य तेजस्वी, धनवान, बुद्धिमान्, गुणी और राजप्रिय होता है।।१।।२।।

"अमला" योग

जिस जातक के जन्म समय में चन्द्रमा यदि शुभग्रह के साथ लग्न में हो अथवा लग्न में शुभग्रह हो या चन्द्रमा के साथ शुभग्रह हो तो उस जातक की निर्मल कीर्ति होती है और जीवन पर्यन्त सम्पत्तिशाली रहता है। लग्न से या चन्द्र लग्न से दशमभाव में शुभग्रह हो तो 'अमला' नाम का योग होता है। इस योग में होनेवाले जातक का यश संसार में अनन्तकाल तक रहता है और वह जातक महाभोगी, राजपूज्य, दाता, समाजप्रिय, परोपकारी एवं गुणवान् होता है।।३–५।।

अथ शुभाशुभयोगमाह

शुभाशुभाढचे यदिजन्मलग्ने शुभाशुभाख्यौ भवतस्तदानीम् ।। व्ययस्वगैः पापशुभैर्विलग्नात्पापाख्यसौम्यग्रहकर्तरी च ।।६।। शुभयोगभवो वाग्मी रूपशीलगुणान्वितः ।। पापयोगोद्भवःकामी पापकर्मपरार्थयुक् ।।७।।

अथ पर्वतयोगमाह

सौम्येषु केन्द्रगृहगेषु सपत्नरंध्रे शुद्धेऽथवा शुभयुते यदि पर्वतः स्यात् ।। लग्नांत्यपौ यदि परस्परकेन्द्रयातौ मित्रेक्षितौ भवति पर्वतनामयोगः ।।८।। भाग्यान्वितः पर्वतयोगजातो विद्याविनोदाभिरतः प्रदाता ।। कामी परस्त्रीजनकेलिलोलस्तेजोयशस्वी पुरनायकः स्यात् ।।९।।

शुभ तथा अशुभ योग

यदि जन्मलग्न में शुभग्रह हों तो 'शुभ' योग और अशुभग्रह हों तो 'अशुभ' योग होता है। तथा २।१२ स्थानों में शुभग्रह हों तो 'शुभकर्तरी' और अशुभ ग्रह हों तो 'अशुभ कर्तरी' योग होता है।। शुभयोग में जन्म हो तो वाक्पटु, रूप, शील और गुणों से युक्त होता है। और पापयोग में जन्म हो तो कामी पापकर्मरत और परधनभोगी होता है।।६।।७।।

पर्वतयोग

सौम्यग्रह केन्द्रस्थानों में हो और छठा, आठवां स्थान शुद्ध हो अथवा इन स्थानों में भी शुभग्रह हों तो 'पर्वत' योग होता है। तथा लग्नेश और व्ययेश परस्पर केन्द्रस्थान में हो और मित्र दृष्टियुक्त हों तो भी 'पर्वत' योग होता है। 'पर्वत' योग में जन्म लेनेवाला जातक भाग्यशाली, विद्वान्, विनोदप्रिय, दानी, कामी, परस्त्रीप्रिय , यशस्वी तथा पुरनायक होता है।।८।।९।।

अथ काहलयोगमाह

अन्योन्यकेंद्रगृहगौ गुरुबंधुनाथौ लग्नाधिपे बलयुते यदि काहलः स्यात् ।। केर्मेश्वरेण सहिते तु विलोकिते वा स्वोच्चे स्वके सुखपतौ यदि तादृशः स्यात् ।।१०।। ओजस्वी साहसी मूर्खश्चतुरङ्गबलैर्युतः ।। यत्किंचिद्ग्रामनाथस्तु जातः स्यात्काहले नरः ।।११।।

काहलयोग

बृहस्पति और तृतीयेश परस्पर केन्द्र में हों तथा लग्नेश बलवान् हो तो 'काहल' योग होता है। तथा चतुर्वेश स्वोच्च या स्वगृही हो और दशमेश से दृष्ट हो तो भी 'काहल' योग होता है।। 'काहल' योग में जन्म लेनेवाला बलवान्, साहसी, जनबलयुक्त, भूमिपति किंतु मूर्ख होता है।।१०।।११।।

अथ मालिकायोगमाह

लग्नादिसप्तगृहगा यदि सप्तखेटा जातो महीपतिरनेकगजाश्वनाथः ।। वित्तादिगे निधिपतिः पितृभक्तियुक्तो धीरोग्ररूपधनवान्नरचक्रवर्ती ।।१२।। जातो यदा विक्रममालिकायां भूपः स शूरो धनिकश्च रोगी ।। सुखादिका चेद्बहुदेशभाग्यभोगी महादानपरो महीपः।।१३।। पुत्राद्या यदि मालिका नरपतिर्यज्वाथ वा कीर्तिमान् जातः षष्ठगृहाद्वनं च सुखभृत्प्रातो दरिद्रो भवेत् ।। कामाद्या गृहमालिका यदि बहुस्त्रीवल्लभो भूपतिर्दीर्घायुर्धनवर्जितो नरवरः स्त्रीनिर्जितश्चाष्टमात् ।।१४।। धर्मादिग्रहमालिकागुणनिधिर्यज्वा तपस्वी विभुः कर्माद्यो यदि धर्मकर्मनिरतः संपूजितः सज्जनैः ।। लाभाद्राजवरांगनामणिपतिः सर्वक्रियादक्षको जातो रिःफगृहाद्बहुव्ययकरः सर्वत्र पूज्यो भवेत् ।।१५।।

मालिका योग

लग्न से सप्तमभाव तक सात भावों में सूर्यादि सात ग्रह प्रत्येक घर में १–१ ग्रहरूप से स्थित हों तो यह 'मालिका' या 'माला' योग होता है। इस योगमें होनेवाला हाथी घोड़े युक्त राजा होता है।। यही योग यदि धनभाव से हो तो वहुधनी, पितृभक्त, धीर, प्रतापी रूपवान्, उग्रस्वभाववाला राजाधिराज होता है और यही योग तृतीय भाव से हो तो शूरवीर, धनिक तथा राजा और रोगी होता है।। और चतुर्थ स्थान से हो तो महादानी,महाभाग्यशाली महाराजा होता है।। पञ्चमभाव से यदि 'माला' योग हो तो जातक यशस्वी, धार्मिक राजा होता है।। छठेभाव से यह योग हो तो वनवासी, दरिद्र होता है।। सप्तमभाव से 'माला' योग हो तो बहुस्त्रीभोगी, दीर्घायु राजा होता है।। अष्टमभाव से यह योग हो तो धनहीन और स्त्री के आधीन रहनेवाला होता है।। नवमभाव से यह योग हो तो गुणी, यज्ञ करनेवाला तथा तपस्वी होता है। दशमभाव से यह योग हो तो धर्मकर्मज्ञाता तथा सज्जन वंदनीय होता है।। लाभस्थान से यह योग हो तो महासुन्दरी भार्या होती है तथा सब कामों में चतुर होता है।। यही योग बारहवें भाव से हो तो बहुत खर्च करनेवाला तथा सर्वपूज्य होता है।।१२–१५।।

अथ चामरयोगमाह

लग्नेश्वरे केन्द्रगते स्वतुंगे जीवेक्षिते चामरनामयोगः ।। सौम्यद्वये लग्नगृहे कलत्रे नवास्पदे वा यदि चामरः स्यात् ।।१६।। योगे जातश्चामरे राजपूज्यो विद्वान्वाग्मी पंडितो वा महीपः ।। सर्वज्ञः स्याद्वेदशास्त्राधिकारी जीवेद्वर्षं सप्ततिर्वत्सराणाम् ।।१७।।

चामर योग

लग्नेश उच्चराशि का होकर केन्द्र में हो और गुरुदृष्टि हो तो 'चामर' योग होता है। अथवा दो शुभग्रहों में से १–१ लग्न और सप्तम में इसी प्रकार नवम और आस्पद(१०)में हो तो भी 'चामर' योग होता है। इस चामर योग में होनेवाला राजपूज्य, विद्वान्, वाक्पटु, ज्ञानी, वेद और शास्त्र का अधिकारी ७० वर्ष आयु वाला राजा होता है।।१६।।१७।।

अथ शङ्खयोगमाह

अन्योन्यकेंद्रगृहगौ सुतशत्रुनाथौ लग्नाधिपे बलयुते यदि शंखयोगः ।। लग्नाधिपे च गगनाधिपतौ चरस्थे भाग्याधिपे बलयुते तु तथा वदंति ।।१८।। शंखे जातो भोगशीलो दयालुः स्त्रीपुत्रार्थः क्षेत्रवान्पुण्यकर्मा।। शास्त्रज्ञानाचारसाधुक्रियावान् जीवेद्वर्षं वत्सराणामशीतिम् ।।१९।।

शंखयोग

पंचम तथा षष्ठभावस्वामी परस्पर केन्द्र में हों और लग्नेश बलवान् हो तो 'शंख' योग होता है। इसी प्रकार लग्न, दशम के स्वामी चरराशि में हों और भाग्येश बलवान् हो तो भी 'शंख' योग होता है।। 'शंख' योग में होनेवाला भोगी, दयालु, धन, स्त्री पुत्र वाला, भूमिपति, पुण्यात्मा, शास्त्रज्ञानी, श्रेष्ठकर्म करनेवाला और प्रायः ८० वर्ष का दीर्घायु होता है।।१८।।१९।।

अथ भेरीयोगमाह

स्वांत्योदयास्तभवनेषु वियच्चरेषु कर्माधिपे बलयुते यदि भेरियोगः केन्द्रे गते सुरगुरौ सितलग्ननाथौ भाग्येश्वरे वलयुते तु तथैव वाच्यम् ।।२०।। दीर्घायुषो विगतरोगभया नरेंद्रा बह्वर्थभूमिसुतदारयुताः प्रसिद्धाः ।। आचारभूरिसुखशौर्य्यमहानुभावा भेरीप्रजातमनुजा निपुणाः कुलीनाः ।।२१।।

भेरी योग

लग्न, द्वितीय, द्वादश और सप्तमस्थान में सब ग्रह हों और दशमेश बलवान् हो तो 'भेरी' योग होता है। तथा लग्नेश, शुक्र, गुरु केन्द्र में हों तथा भाग्येश बलवान् हो तो भी 'भेरी' योग होता है।।२०।। इस योग में होनेवाला जातक रोगभयरहित, धनभूमिसम्पन्न, स्त्री पुत्र युक्त, दीर्घायु, प्रसिद्ध, आचारवान् सुखी तथा शूरवीर कुलीन राजा चतुर होता है।।२०-२१।।

अथ मृदंगयोगमाह

उच्चग्रहांशकपतौ यदि केंद्रकोणे तुंगस्वकीयभवनोपगते बलाढ्ये ।। लग्नाधिपे बलयुते तु मृदंगयोगः कल्याणरूपनृपतुल्ययशः प्रदः स्यात् ।।२२।।

मृदंग योग

उच्चराशिस्थित नवांशस्वामी यदि केन्द्र या त्रिकोण स्थान में हो और लग्नेश बलवान होकर उच्च या स्वगृही हो तो 'मृदंग' योग होता है। इस योग में होनेवाला सुन्दर रूप, गुणों से युक्त राजा के समान यश प्रतापवाला होता है।।२२।।

अथ श्रीनाथयोगमाह

कामेश्वरे कर्मगते स्वतुंगे कर्माधिपे भाग्यपसंयुते च ।। श्रीनाथयोगः शुभदस्तदानीं जातो नरः शक्रसमो नृपालः ।।२३।।

श्रीनाथ योग

सप्तमेश दशमभाव में उच्चराशि में हो और दशमेश भाग्यस्थान में हो तो 'श्रीनाथ' योग होता है।। इस योग में संजात मनुष्य महाप्रतापी राजा होता है।।२३।।

अथ शारदायोगमाह

योगः शारदसंज्ञकः सुतगते कर्माधिपे चंद्रजे केन्द्रस्थे दिननायके निजगृहप्राप्तेतिवीर्य्यान्विते।। चंद्रात्कोणगते पुरंदरगुरौ सौम्यत्रिकोणे कुजे लाभे वा यदि देवमंत्रिणि बुधास्तच्छारदासंज्ञकः ।।२४।। स्त्रीपुत्रबंधुसुखरूपगुणानुरक्ता भूपप्रियागुरुमहीसुरदेवभक्ताः ।। विद्याविनोदरतिशील तपोबलाढ्या जाताः स्वधर्मनिरता भूवि शारदाख्ये ।।२५।।

शारदा योग

पञ्चमेश दशमभाव में हो और बुध केन्द्र में तथा सूर्य पूर्ण बलयुक्त स्वगृही हो तो 'शारदा' योग होता है।। तथा चन्द्रमा से गुरु त्रिकोण स्थान में हो, सौम्यग्रह त्रिकोण में, मंगल लाभस्थान में या गुरु लाभ में हो तो 'शारदा' योग होता है। इस योग में होनेवाला स्त्री पुत्र–युक्त, सुखी, रूपवान्, गुणी, राजप्रिय, गुरु देवता का भक्त, धर्मशील, विद्यावान्, कामक्रीड़ा रत तपोबल संपन्न होता हैं।।२४।।२५।।

अथ मत्स्ययोगमाह

लग्नधर्मगते पापे पंचमे सदसद्युते ।। चतुरस्रं गते पापे योगोऽयं मत्स्यसंज्ञकः ।।२६।। कालज्ञः करुणासिंधुर्गुणधीर्बलरूपवान् ।। यशोविद्यातपस्वी च मत्स्ययोगसमुद्भवः ।।२७।।

मत्स्य योग

लग्न तथा नवमभाव में पापग्रह, पंचमभाव में शुभपाप मिश्रितग्रह हों और केन्द्र में भी पापग्रह हों तो 'मत्स्य' योग होता है।। इस योग में होने से दैवज्ञ, दयावान्, बल बुद्धि गुण रूपवाला, यशस्वी विद्वान् तपस्वी होता है ।।२६-२७।।

अथ कूर्मयोगमाह

कलत्रपुत्रारिगृहेषु सौम्याः स्वतुंगमित्रांशकराशियाताः ।। तृतीयलाभोदयगास्त्वसौम्या मित्रोच्चसंस्थो यदि कूर्मयोगः ।।२८।। विख्यातकीर्तिर्भुवि राज्यभोगी धर्माधिकः सत्त्वगुणप्रधानः ।। धीरः सुखी वागुपकारकर्ता कूर्मोद्भवो मानवनायको वा ।।२९।।

कूर्म योग

५।६।७ स्थानों में सौम्यग्रह, उच्च स्वगृही या मित्रनवांश में हो और लग्न, तृतीय तथा लाभस्थान में उच्च या मित्रराशि में पापग्रह हो तो 'कूर्मयोग' होता है।।२८।। इस योग में होनेवाला विख्यात् कीर्ति, राजसमान ऐश्वर्यसम्पन्न, धर्मात्मा सात्विक, धीर, सुखी, व्याख्याता जननायक होता है ।।२८-२९।।

अथ खड्गयोगमाह

भाग्येशे धनभावस्थे धनेशे भाग्यराशिगे ।। लग्नेशे केंद्रकोणस्थे खड्गयोग इतीरितः ।।३०।। वेदार्थशास्त्रनिखिलागमतत्त्वयुक्तिबुद्धिप्रतापबलवीर्यसुखानुरक्ताः ।। निर्मत्सराश्च निजवीर्य-महानुभावाः खड्गे भवंति पुरुषाः कुशलाः कृतज्ञाः ।।३१।।

खड्ग योग

भाग्येश धनभाव में एवं धनेश भाग्यस्थान में हो और लग्नेश केन्द्र या त्रिकोण में हो तो 'खड्गयोग' होता है। इस योगमें होनेवाला वेदादि शास्त्र का ज्ञाता, बुद्धिमान्, प्रतापी, सुखी, द्वेषरहित, अपने उद्योग से उन्नति करनेवाला कृतज्ञ और कुशल होता है।।३०।।३१।।

अथ लक्ष्मीयोगमाह

केंद्रमूलत्रिकोणस्थे भाग्येशे परमोच्चगे ।। लग्नाधिपे बलाढ्ये च लक्ष्मीयोग इतीरितः ।।३२।। गुणाभिरामो बहुदेशनाथो विद्यामहाकीर्तिरनंगरूपः ।। दिगंतविश्रांतनृपालवंद्यो राजाधिराजो बहुदारपुत्रः ।।३३।।

लक्ष्मी योग

परमोच्चराशि स्थित भाग्येश केन्द्र या त्रिकोण में हो और लग्नेश बलवान् हो तो 'लक्ष्मी' नामक योग होता है।। इस योग में सञ्जात व्यक्ति विद्वान्, सुन्दर राजा तथा महाराजाधिपति एवं अनेक स्त्री पुत्र वाला होता है।।३२।।३३।।

अथ कुसुमयोगमाह

स्थिरलग्ने भृगौ केंद्रे त्रिकोणेंदौ शुभेतरे ।। मानस्थानगते सौरे योगोयं कुसुमो भवेत् ।।३४।। दाता मही-मंडलनाथवंद्यो भोगी महावंशजराजमुख्यः ।। लोके महाकीर्तियुतः प्रतापी नाथो नराणां कुसुमोद्भवः स्यात् ।।३५।।

कुसुम योग

स्थिर राशि का लग्न हो, शुक्र केन्द्र में तथा चन्द्रमा त्रिकोण में एवं पापग्रह और शनि मानस्थान (दशम) में हो तो 'कुसुम' योग होता है।।३४।। इस योग में होने से दानशील राज वैद्य भोगी, राजाधिराज, यशप्रताप युक्त होता है।।३५।।

अथ पारिजातयोगमाह

विलग्ननाथस्थितराशिनाथस्थानेशराशीशतदंशनाथाः ।। केन्द्रत्रिकोणोपगता यदि स्युः स्वतुंगगा वा यदि पारिजातः ।।३६।। मध्यांतसौख्यः क्षितिपालवंद्यो युद्धप्रियो वारणवाजियुक्तः ।। स्वकर्मधर्माभिरतो दयालुर्योगो नृपः स्याद्यदि पारिजातः ।।३७।।

पारिजात योग

लग्नेश, तथा लग्नेश जिस राशि में हो उस राशि का स्वामी तथा वह जिस राशि में हो, एवं उस राशि का स्वामी तथा वह भी जिस राशि में हो, उस राशि का स्वामी, और उनके नवमांश के स्वामी ये यदि उच्च राशि के हों अथवा केन्द्र या त्रिकोण में हों तो 'पारिजात' योग होता है।।३६।। इस योग में जवानी तथा वृद्धावस्था में सुखी, राजवंद्य, युद्धप्रिय, हाथी घोड़ेयुक्त, स्वकर्म धर्मरहित, दयालु तथा राजा होता है।।३६-३७।।

अथ कलानिधियोगमाह

द्वितीय पंचमे जीवे बुधशुक्रयुतेक्षिते ।। क्षेत्रे तयोर्वा संप्राप्ते योगः स्यात्स कलानिधिः ।।३८।। कामी कलानिधिभवः सुगुणाभिरामः संस्तूयमानचरणो नरपालमुख्यैः ।। सेनातुरंगमदवारण-शंखभेरीवाद्यान्वितो विगतरोगभयारिसंघः ।।३९।।

कलानिधियोग

द्वितीय या पंचमभाव में गुरु हो तथा बुध, शुक्र से युक्त या दृष्ट हो अथवा इनकी राशि में हो तो 'कलानिधि' योग होता है।।३८।। 'कलानिधि' योग में जन्म लेनेवाला कामी, गुणी, सुन्दर तथा राजपूज्य, सेना आदि से युक्त, नीरोग, निर्भय तथा शत्रुजेता होता है।।३८।।३९।।

अथ पारिजातादियोगमाह

स पारिजातद्युचरः सुखानि नीरोगतामुत्तमवर्गयातः ।। सगोपुरांशे यदि गोधनानि सिंहासनस्थः कुरुते विभूतिम् ।।४०।। करोति पारावतभागयुक्तो विद्या यशः श्रीविपुलं नराणाम् ।। स देवलोके बहुयानसेनामैरावतस्थो यदि भूपतित्वम् ।।४१।।

पारिजात योग में विशेष

पारिजात योगकारक ग्रह षोड़शवर्ग में—श्रेष्ठवर्ग में हो तो जातक को नीरोग, और पूर्वोक्त 'गोपुरांश' में हो तो गोधन, और सिंहासन में हो तो राजसिंहासन के योग्य विभूति होती है।।४०।। और पारावतांश में हो तो विद्या, यश, धन ऐश्वर्यशाली होता है।। और 'ऐरावतांश में' हो तो इन्द्र के समान राजा होता है।।४१।।

अथ लग्नाधियोगमाह

लग्नाच्च दाराष्टमगेहसंस्थैः शुभैर्न पापग्रहयोगदृष्टैः ।। लग्नाधियोगो भवति प्रसिद्धः पापैः सुखस्थानविवर्जितैश्च ।।४२।। लग्नाधियोगे बहुशास्त्रकर्ता विद्याविनीतश्च बलाधिकारी ।। मुख्यस्तु निष्कापटिको महात्मा लोके यशोवित्तगुणाधिकः स्यात् ।।४३।।

लग्नाधियोग

लग्न से सप्तम तथा अष्टमभाव में शुभग्रह हो और पापग्रहों से युक्त या दृष्ट न हो तो

'लग्नाधियोग' होता है किन्तु चतुर्थभाव में पापग्रह न होना चाहिए।।४२।। लग्नाधियोग में होनेवाला बहुशास्त्रज्ञाता, विद्वान्, विनीत, सेनापति, जनमान्य, निष्कपट, यश–धन–गुण–सम्पन्न महात्मा होता है।।४३।।

अथ चन्द्रयोगादीनाह

सहस्त्ररश्मितश्चंद्रे कंटकादिगते सति ।। न्यूनमध्यवरिष्ठानि धनीधीनैपुणानि च ।।४४।। स्वांशेधिमित्रस्यांशे वा स्थिते वा दिवसे शशी ।। गुरुणा दृश्यते तत्र जातो वित्तसुखान्वितः ।।४५।। स्वाधिमित्रांशगश्चंद्रो दृष्टो दानवमंत्रिणा ।। निशासु कुरुते लक्ष्मीं छत्रध्वजसमाकुलाम् ।। विपर्ययस्थे शीतांशौ जायंतेऽल्पधना नराः ।।४६।।

चन्द्र योग

सूर्य से चन्द्रमा केन्द्र या त्रिकोणस्थान में हो तो योग बलानुसार उत्तम, मध्यम और कनिष्ठरूप में बुद्धि, धन और वैभव होते हैं।। चन्द्रमा अपने नवांश या अतिमित्र के नवांश में हो तथा दिन का जन्म लग्न हो तथा गुरु की दृष्टि हो तो धनी और सुखी होता है।। अधिमित्रांश में स्थित चन्द्र शुक्र से दृष्ट तथा रात्रि का जन्म हो तो ध्वजा, छत्र–युक्त राजा होता है।। इससे विपरीत होने से सामान्य धनवाला होता है ।।४४–४६।।

अथाऽधियोगमाह

शशिनः सौम्याः षष्ठे द्यूने वा निधनसंस्थिता वा स्युः ।। स्यादधियोगे जातः सौम्यैः सबलैर्धराधीशः ।।मध्यबलैर्मंत्री स्यादधमबलैः सैन्यनायकः सः स्यात् ।।४७।। चंद्राद्वृद्धिगतैः सौम्यो धर्मशीलो महाधनी ।। द्वाभ्यां समोल्पवसुमानेकेन परिकीर्तितः ।।चंद्राल्लग्नाद्ग्रहाभावे दरिद्रो दुःखितो भवेत् ।।४८।।

अधियोग

चन्द्रमा से ६।७।८। स्थान में सौम्यग्रह हों और बलवान् हों तो राजा, तथा मध्यबली हों तो मन्त्री, और हीनबली हों तो सेनानायक होता है।। चन्द्रमा से वृद्धिस्थान (३।६।१०।११) में सौम्यग्रह हों तो धर्मात्मा तथा श्रेष्ठ आचारवाला होता है। दो सौम्यग्रहों से फल समान, और एक ग्रह से अल्पधनवाला होता है।। चन्द्र या लग्न से उपर्युक्त स्थान में कोई भी ग्रह नहीं हो तो दरिद्र और दुःखी होता है।।४७।।४८।।

अथ सुनफाऽनफादुरधराकेमद्रुमयोगानाह

शीतांशोर्द्रविणस्थितैश्च सुनफायोगोऽनफांत्यस्थितैः स्वांत्यस्थैः खचरैर्भवेद्दुरधरा पंकेरुहेशोज्झितैः ।। चेद्वित्तव्ययगा न चेद्दिविचराः केमद्रुमः स्यात्तदा प्राचीनैर्मुनिभिः स्मृताः श्रुतिमिता योगाः शशांकोद्भवाः ।।४९।।

सुनफा, अनफा, दुरधरा, केमद्रुम योग

चन्द्रमा से दूसरे स्थान में ग्रह हों तो 'सुनफा' योग होता है। (ग्रह ३ या तीन से अधिक होने चाहिए) और द्वादशभाव में यदि तीन या तीन से अधिक ग्रह हों तो 'अनफा' योग होता है।। और सूर्य छोड़कर दूसरे तथा द्वादश भाव में ग्रह हों तो 'दुरधरा' योग और दूसरे बारहवें स्थान में कोई भी ग्रह नहीं हो तो 'केमद्रुम' योग होता है।।४९।।

अथ सुनफायोगफलमाह

भूमीपतेश्च सचिवः सुकृती कृती च नूनं भवेन्निजभुजार्जितवित्तयुक्तः ।। ख्यातः सदाखिलजनेषु विशालकीर्त्या बुद्ध्याधिकश्च मनुजः सुनफाभिधानेः ।।५०।।

सुनका योग फल

राजमन्त्री, पुण्यकर्ता, कर्मवीर, स्वोपार्जित धन से धनी, समाज में विख्यात, कीर्तिमान् तथा बुद्धिमान् होता है।।५०।।

अथाऽनफायोगफलमाह

प्रभुर्विनीतः शुभवाग्विलासः सच्छीलशाली गुणपूर्तियुक्तः ।। उदारकीर्तिः स्मरतुष्टचित्तो नित्यं नरः स्यादनफाभिधाने ।।५१।।

अनफा योग फल

विनीत, मान्य, मिष्टभाषी, सुशील, गुणी, यशस्वी तथा विरक्त होता है।।५१।।

अथ दुरधरायोगफलमाह

सद्वित्तसद्वारणवाहधात्रीसौख्याभियुक्तः सततं हतारिः ।। कांतासुनेत्रांचललालसः स्याद्योगे सदा दौरधरे मनुष्यः ।।५२।।

दुरधरा योग फल

इस योग में होनेवाला, धनी वाहनयुक्त, सुखी, शत्रुहीन, तथा कामी होता है।।५२।।

अथ केमद्रुमफलमाह

सद्वित्तसूनुवनितात्मजनैर्विहीनः प्रेष्यो भवेत्तु मनुजो हि विदेशवासी ।। नित्यं विरुद्धधिषणो मलिनः कुवेषः केमद्रुमे च मनुजाधिपतेः सुतोऽपि ।।५३।।

केमद्रुम योग फल

स्त्री, पुत्र, धनहीन, भृत्यवृत्ति (नौकरी) विदेशवासी, विरुद्धबुद्धि, मलीन तथा कुवेशवाला होता है।।५३।।

अथ केमद्रुमभंगमाह

चंद्रचतुर्थैः सुनफा दशमस्थितैः कीर्तितोऽनफा विहगैः उभयस्थितैर्दुरधरा केमद्रुमसंज्ञितोन्यथा योगः ॥५४॥ यद्राशिसंज्ञे शीतांशुर्नवांशे जन्मनि स्थितः ॥तद्द्वितीयस्थितैर्योगःसुनफाख्यः प्रकीर्तितः ॥५५॥ द्वादशैरनफा ज्ञेयो ग्रहैर्द्विर्द्वादशस्थितैः ॥ प्रोक्तो दुरधरायोगोऽन्यथा केमद्रुमो मतः ॥५६॥ प्रालेयांशुः सूतिकाले यदा वा सर्वैः खेटैर्वीक्ष्यमाणः करोति ॥ दीर्घायुष्यं राजयोगं मनुष्यं सत्कोशाढ्यं हंति केमद्रुमं च ॥५७॥ सर्वे खेटाः केन्द्रतुर्येषु संस्था दुष्टो योगश्चापि केमद्रुमोऽयम् ॥ दुष्टं सर्वं स्वं फलं संविहाय कुर्युः पुंसां सत्फलं वै विचित्रम् ॥५८॥ सर्वेषु चंद्रयोगेषु चेदं यत्नाद्विचिंतयेत् ॥ केमद्रुमादिका योगाः संभवेऽस्य लयं ययुः ॥५९॥

केमद्रुमभंग योग

चन्द्रमा से चतुर्थ स्थान ग्रहों के होने से 'सुनफा' योग और दशमभाव में होने से 'अनफा' योग होता है॥ दोनों ४।१० स्थानों में ग्रहों के होने से 'दुरधरा' योग अन्यथा होने से 'केमद्रुम' योग होता है॥५४॥ जन्मलग्न में चन्द्रमा जिस नवांश में हो उससे द्वितीय नवांश में ग्रह हों तो 'सुनफा' और द्वादश नवमांश में ग्रह हों तो 'अनफा' योग होता है॥५५॥ तथा २।१२ नवांश में ग्रहों के होने से 'दुरधरा' योग अन्यथा 'केमद्रुम' योग होता है॥५६॥ जन्मलग्न में चन्द्रमा पर सब ग्रहों की दृष्टि हो तो 'केमद्रुम' योग का बाधक होकर श्रेष्ठ धन युक्त दीर्घायु और राजयोग कारक होता है॥५७॥ सारे ग्रह चारों केन्द्र स्थानों में हो तो यह भी 'केमद्रुम' योग होता है परन्तु यह योग अपना सब दुष्ट फल छोड़कर सब प्रकार शुभफल करता है॥५८॥ सब प्रकार के चन्द्रयोगों के इनका अवश्य ही विचार करना चाहिए। योगायोग विचार से 'केमद्रुम' योग के भंग होने की अधिक संभावना रहती है॥५९॥

अथ रवियोगमाह

वेसिश्चांत्यगतैर्ग्रहैर्द्रविणगैर्वेशिः शशांकोज्झितैर्भानोस्तूभयगैस्तदोभयचरीयोगः स्मृतः प्राक्तनैः ॥ किंचित्तद्वचनेषु नैव नियमोऽवश्यं नरश्चानृतोऽत्यंतं कष्टकरो नरश्च मृदुदृक् स्याद्वेसियोगोद्भवः ॥६०॥

रवियोग

चन्द्रमा रहित तीन या तीन से अधिक ग्रह सूर्य से बारहवें हों तो 'वेसि' योग होता है। और सूर्य से द्वितीयभाव में हों तो 'वेशि' योग होता है॥ तथा सूर्य से २।१२ स्थानों में (चन्द्ररहित) ग्रह हों तो 'उभयचरी' योग होता है॥

वेसियोगफल–'वेसि' योग में होनेवाले के वचन का कोई सिद्धान्त नहीं (कभी कुछ २ कहता है) अतः झूठा, कष्टकारी किन्तु दर्शन का मीठा होता है॥६०॥ (देखने का मीठा करनी का कड़ा–छिपी छुरी होती है।)

अथ वेशियोगफलम्

तिर्यग्दृष्टिः सत्त्वसत्यानुकंपी मर्त्योऽत्यर्थं दीर्घकायोऽलसश्च ॥ सूतौ यस्य स्याद्यदा वेशियोगस्त्वल्पद्रव्योवाग्विलासाधिशाली ॥६१॥

वेशियोग फल

जिसका जन्म 'वेशि' योग में होता है, वह सत्वगुणी, सत्यभावी, तिरछी नजरवाला, लम्बा कद, आलसी, दरिद्र तथा वाचाल होता है।।६१।।

अथोभयचरीफलमाह

यस्य स्याज्जनने किलोभयचरीयोगस्य चेत्संभवः सोत्यतं समवायवानपि तदा मर्त्यो भवेत्सद्यशाः ।। नात्युच्चः प्रबलामलाब्धितनयायुक्तः समृद्धः सदा ह्यत्यर्थं स्थिरमानसः सरलदृक सर्वंसहः सन्मतिः ।।६२।।

उभयचरी योगफल

जिसके जन्मलग्न में उभयचरी योग होता है, वह कंजूस (अत:संग्रही) यशस्वी, मझोला कदवाला, लक्ष्मीवान्, सरल, स्थिर बुद्धि और धीर होता है।।६२।।

अथ पुरुषस्त्रीनपुंसकजन्मज्ञानमाह

बलाबलं विलोक्यैषां ग्रहाणां योगकारिणाम् ।।६३।। स्त्रीपुंसनिर्णयः क्लीबयोगास्तु तदसंभवाः ।।६४।। ओजभे च विषमांशकोपगैर्लग्नचंद्रगुरुभास्करैर्नरः।। स्यात्तथापि समभे समांशगैः स्त्रीनिषेकसमये प्रसूतिषु ।।६५।। लग्नं त्वक्त्वा च विषमे पुत्रदो भास्करात्मजः ।। समे कन्याप्रदः प्रोक्तो नान्यग्रहनिरीक्षितः ।।६६।।

पुरुष, स्त्री, नपुंसक ज्ञान

योगकारक ग्रहों का बलाबल विचार करके पुरुष, स्त्री का जन्म जानना और उन पुरुषयोग तथा स्त्रीयोग के अभाव में नपुंसक का जन्म जानना।। लग्न में विषमराशि तथा विषम नवांश हो और चन्द्र, सूर्य, गुरु विषम नवांश में हो तो 'नर' का जन्म हो। एवं समराशि और चन्द्र, सूर्य, गुरु सम नवांश में हों तो 'कन्या' जन्म होता है।। लग्न को छोड़कर शनि विषमराशि (या विषम नवांश) में हो तो पुत्र और समराशि (या सम नवांश) में हो तो कन्या होती है ।।६३–६६।।

अथ षट्क्लीबयोगानाह

अन्योन्यं रविशशिनौ विषमाविषमर्क्षगौ निरीक्ष्येते ।। इंदुजरविपुत्रौ वा तथैव हि नपुंसकं कुरुतः ।।६७।। वक्रो विषमे सूर्यः समगश्चैवं परस्परालोकात् ।। विषमर्क्षे लग्नेंदुसमराशिगः कुजोऽवलोकयति ।।६८।। बुधचंद्रौ कुजदृष्टौ विषमर्क्षसमर्क्षगौ तथैवोक्तौ ।। ओजनवांशकसंस्था लग्नेन्दुसितास्तथैवोक्ताः ।।६९।।

नपुंसक छह योग

सूर्य चन्द्रमा विषम सम राशियों में होकर परस्पर देखते हों अथवा चन्द्रमा और शनि इसी प्रकार हो तो जातक 'नपुंसक' होता है।। मंगल विषम राशि में सूर्य सम राशि में होकर

परस्पर देखते हों अथवा लग्न विषम राशि में चन्द्रमा सम राशि में दोनों को मंगल देखता हो।। अथवा बुध विषम राशि में चन्द्रमा सम राशि में दोनों को मंगल देखता हो अथवा विषम नवमांशक में लग्न, चन्द्रमा और शुक्र हो तो नपुंसक होता है।। ये ६ योग नपुंसक के कहे गये।।६७।।६८।।६९।।

अथ प्राणिनां वृत्तिनिर्णयमाह

अर्थाप्तिं कथयेद्विलग्नशशिनौ प्राबल्यतः खेचरैर्मानस्थैः पितृमातृशत्रुसुहृद्भ्रात्रादिभिः स्याद्धनम् ।। भृत्याद्वा दिननाथलग्नशशिनां मध्ये बली यस्ततः कर्मेशस्थनवांशराशिपवशाद्–वृत्तिं जगुस्तद्विदः ।।७०।। भैषज्यचामीकरतोयपानपण्येन मुक्तामणिविप्रलंभात् ।। अन्योऽन्यदूतागमवृत्तिमार्गाज्जीवत्यसौ वासरनायकांशे ।।७१।। मंत्रोपदेशरसवादविनोदमार्गै–र्वृत्तिं जगुः सकलशास्त्रपुराणमार्गैः ।। ज्ञानोपदेशपथिभिः क्षितिपालपूज्यो जीवत्यसौ खलु पुमान्दिननायकांशे ।।७२।। जलोद्भवानां क्रयविक्रयेण कृषेश्च मृद्वादविनोदमार्गात् ।। राजांगनासंशयवृत्तिरूपान्निशाकरांशे वसनक्रयाद्वा ।।७३।। धातोर्विवादेन रणप्रहारात्स्तब्धा–ग्निवादात्कलहप्रवृत्त्या ।। जीवत्यसौ साहसमार्गरूपया धरासुतांशे यदि चौरवृत्त्या ।।७४।। शिल्पादिकाव्यागमशास्त्रमार्गाज्ज्योतिर्गणज्ञानवशाद्बुधांशे ।। वेदार्थवेदाध्ययनाज्जपाच्च पुरोहितव्याजवशात्प्रवृत्तिः ।।७५।। जीवांशके भूसुरदेवतानामुपासकाध्यापकमार्गरूपात् ।। पुराणशास्त्रागमनीतिमार्गाद्धर्मोपदेशेन कुसीदमाहुः ।।७६।। सुवर्णमाणिक्यगजाश्वमूलाद्गवां क्रयाज्जीवनमाहुरार्याः ।। गुडौदनक्षीरदधिक्रयेण स्त्रीणां प्रलोभेन भृगोः सुतांशे ।।७७।। शन्यंशके कुत्सितमार्गवृत्त्या शिल्पादिभिर्दारुमयैर्वधाद्यैः ।। विन्यस्तभाराज्जनविप्रलंभादन्यो–न्यवैरोद्भवमूलमार्गात् ।।७८।। स्वक्षेत्रे स्वनवांशके सुहृदि वा स्वात्युच्चभागे यदा स्वद्रेष्काणचतुष्टयेषु सहिता मूलत्रिकोणेषु वा ।। तत्तत्कालबलान्वितास्तु खचरा वर्गोत्तमांशेऽपि वा ते सर्वे शुभदा भवंति हि तदा स्वांतर्दशादावपि ।।७९।।

इति श्रीबृहत्पाराशरहोराशास्त्रेपूर्वखण्डे बहुयोगफलकथनं नाम अष्टादशोऽध्यायः ।।१८।।

मनुष्यों की वृत्ति निर्णय

लग्न और चन्द्रमा का बलाबल विचार करके दशम भाव में स्थित ग्रह के अनुसार पिता, माता, शत्रु, मित्र, भ्राता आदि के द्वारा धन की प्राप्ति होती है।। अथवा सूर्य, लग्न और चन्द्रमा में जो बलवान् हो तथा दशम भाव में स्थित जो राशि का नवमांश उसके स्वामी के अनुसार वृत्ति का निर्णय करे।।७०।। दशमेश राशि नवमांश पति यदि सूर्य हो तो औषधि–विक्रय, सुवर्ण–व्रिक्रय, शर्बत आदि विक्रय, मोती–माणिक आदि जवाहरात से आजीविका हो अथवा ठगी से अथवा दलाली से आजीविका हो।। सूर्य के नवमांश में हो तो मन्त्रोपदेश, रसधातु व्यापार, खेल, बाजीगरी आदि शास्त्रपुराण उपदेश से, या ज्ञानोपदेश से प्रसिद्ध और राजपूज्य होता है। चन्द्रमा के नवांश में जन्म हो तो जलजीव मछली आदि के व्यापार से या कृषि (खेती) से या मिट्टी के बने हुए पदार्थों से या राजाङ्गना सम्पर्क से अथवा वस्त्र व्यापार से जीवनयापन होता है।। उसी प्रकार मंगल के नवमांश में धातु का व्यापार, मुकदमाबाजी, मारपीट, आग लगाना, लड़ाई झगड़ा, असम साहस के कार्यों से

अथवा चोर वृत्ति से आजीविका होती है।। बुध के नवमांश के शिल्प व्यापार, काव्य–कविता शास्त्रों द्वारा, ज्योतिष से, वेदपाठ आदि से, पुरोहिति या ब्याज से आजीवन होता है। बृहस्पति के नवमांश होने पर देवोपासना अथवा अध्यापन कार्य, पुराण शास्त्र आदि का उपदेश, व्याख्यान वृत्ति या ब्याज आदि से आजीवन होता है। शुक्र के नवमांश में सुवर्ण, मणि–माणिक, हाथी घोड़े, गाय, आदि से अथवा अन्न, गुड़, दूध, दही आदि के व्यांपार से जीवनयापन होता है। शनि के नवमांश में निन्दित वृत्ति से अथवा लकड़ी के खेल खिलौने से, अथवा हिसक वृत्ति से, भाड़े से, ठगी से, परस्पर बैर कराने से तथा वकालत से आमदनी होती है।। किसी भी ग्रह के शुभफल देने में ये निमित्त होते हैं–स्वक्षेत्री होना, स्व नवांश में होना, मित्र राशि या मित्र नवांश में होना, अपने उच्च राशि का या उच्च नवांश में होना, केन्द्र या त्रिकोण में होना, अपने द्रेष्कोण में होना, मूल त्रिकोण या वर्गोत्तम होना, जन्मकाल में पूर्ण बली होना, इस कथित स्वरूप में ग्रह अपनी दशा और अन्तर्दशा में अपना पूर्ण फल करते हैं। अर्थात् इन कथित योगों में भी ग्रह का स्वरूप कथित रीति सें देखना चाहिए।।७०-७९।।

इति श्रीबृहत्पाराशरहोराशास्त्रेपूर्वखण्डे भावप्रका० बहुयोगफलकथनं नाम
अष्टादशोऽध्याय: ।।१८।।

अथ मारकभेदाध्याय:

त्रिविधाश्चायुषो योगाः स्वल्पायुर्मध्यमोत्तमाः ।। द्वात्रिंशात्पूर्वमल्पायुर्मध्यमायुस्ततो भवेत् ।।
चतुःषष्टयाः पुरस्तात्तु ततो दीर्घमुदाहृतम् ।।१।। उत्तमायुः शतादूर्ध्वं ज्ञातव्यं मुनिसत्तम ।।
चतुर्विंशतिवर्षाणामायुर्ज्ञातुं न शक्यते ।।२।। जपहोमचिकित्साद्यैर्बालरक्षां तु कारयेत् ।।
पित्रोर्दोषैर्मृताः केचित्केचिन्मातृग्रहैरपि ।।३।। अपरेऽरिष्टयोगाच्च त्रिविधा बालमृत्यवः ।।
अल्पायुर्योगजातस्य विपत्तारां मृतिं वदेत् ।।४।। जातस्य मध्यमे योगे प्रत्यरिस्तु मृतिर्भवेत् ।।
दीर्घायुर्योगजातानां बधभे तु मृतिर्भवेत् ।।५।। त्रिषु योगेषु सर्वेषु प्रत्येकं त्रिविधं भवेत् ।।६।।
अल्पायुरल्पमध्यं तु पूर्णायुस्त्रिविधं भवेत् ।। मध्यमादल्पमध्यं तु पूर्णायुस्त्रिविधं भवेत् ।।७।।
दीर्घायुषोऽल्पमध्यं तु पूर्णायुस्त्रिविधं भवेत् ।। एवं बहुविधः प्रोक्त आयुषस्तु विनिर्णयः ।।८।।
अष्टमर्क्षं तृतीयं च लग्नादायुरुदाहृतम् ।। द्वितीयं सप्तमस्थानं मारकस्थानमुच्यते ।।९।।
लग्नेशरंध्रपत्योश्च लग्नेन्द्वोर्लग्नहोरयोः ।। पूर्वाण्येवं प्रयुंजीयात्संवादादायुषां त्रये ।।१०।। चरे
चरस्थिरद्वंद्वाः स्थिरे द्वंद्वचरस्थिराः ।। द्वंद्वे स्थिरोभयचरा दीर्घमध्याल्पकायुषः ।।११।।

मारकभेदाध्याय

आयु योग तीन प्रकार के हैं। नाम–स्वल्पायु, मध्यायु और दीर्घायु। ३२ वर्ष तक स्वल्पायु। ६४ तक मध्यायु। इसके बाद दीर्घायु होती है।। १०० वर्ष तक बाद उत्तमायु कही जाती है। २४ वर्ष की अवस्था तक निश्चित आयु का ज्ञान नहीं होता।। यदि कष्ट हो तो जप, होम, दान तथा चिकित्सा आदि से बालको के जीवन की रक्षा करनी चाहिए। क्योंकि कुछ बालकों की मृत्यु पितृ दोष से और कुछ की मातृबाधा विस्फोटक आदि सें ।। एवं कुछ की बालारिष्ट से होती है। अल्पायुयोग मे उत्पन्न बालक की 'विपत्' नाम के तारा में भी मृत्यु होती है।।

मध्यायु योग में जन्म वाले की भी 'प्रत्यरि' तारा में मृत्यु संभव है। दीर्घायु योगोत्पन्न शिशु की भी 'बध' तारा में मृत्यु संभव है।। अल्प, मध्यम, दीर्घ इन तीन भेदों में प्रत्येक के ३–३ भेद हैं। यथा–अल्पायु में अति अल्प, मध्यम अल्प, पूर्णाल्प। इसी प्रकार मध्यायु के तीन भेद हैं–मध्याल्प, मध्यम, पूर्णमध्यमायु। इसी प्रकार पूर्णायु के ३ भेद हैं। पूर्णाल्प, पूर्णमध्यम, पूर्णायु। इस प्रकार पूर्वाचार्यों ने आयु के अनेक भेद कहे हैं।। लग्न से अष्टम तथा तृतीयभाव आयु के स्थान हैं। और द्वितीय तथा सप्तमभाव मारकस्थान हैं।। लग्नेश–अष्टमेश से, तथा लग्न–चन्द्रमा से और लग्न–होरा से आयु का निर्णय होता है। परस्पर विभिन्न योग प्राप्त होने पर अधिक फल से आयु योग स्थिर करना।। चर में (क्रम से) चर, स्थिर, द्विस्वभाव में क्रमशः दीर्घायु, मध्यायु, अल्पायु होती है। स्थिर में द्विस्वभाव, चर, स्थिर हों तो दीर्घ, मध्य, अल्प आयु। तथा द्विस्वभाव में–स्थिर, द्विस्वभाव, चर हों तो दीर्घ, मध्य, अल्प आयु होती है।।१–११।।

अल्पमध्यमपूर्णायुः प्रमाणमिह योगजम् ।। विज्ञाय प्रथमं पुंसां ततो मारकचिन्तनम् ।।१२।। वृश्चिके मकरे जन्म नृणां राहुर्मृतिप्रदः ।। ग्रहस्थितावंशभेदे शनिः स्यान्मारको ध्रुवम् ।।१३।। महामारकसंज्ञौ तौ मांदिकेतू इति स्मृतौ ।। जायाकुटुम्बकाधीशौ मारकावष्टमेश्वरौ ।।१४।। प्रायेण मारका राशिदशास्वत्राविशेषतः ।। षष्ठभे पापभूयिष्ठे षष्ठेशो मुख्यमारकः ।।१५।। षष्ठत्रिकोणगो वापि मुख्यमारक इष्यते ।। मध्यायुषि मृतिः षष्ठदशायामष्टमस्य वा ।।१६।। षष्ठात्त्रिकोणस्य पुनर्दीर्घाल्पविषयो भवेत् ।। षष्ठे बलयुते तस्य त्रिकोणे मृतिमादिशेत् ।।१७।। षष्ठेशश्चेद्बलाढ्यः स्यात्तत्त्रिकोणे मृतिं वदेत् ।। व्यवस्थेयं समस्तापि कारकादिदशास्वनु ।।१८।। चरे चरस्थिरद्वंद्वा इति यो राशिरागतः ।। स एव मारको राशिर्भवतीति विनिर्णयः ।।१९।। मारकेशदशाकाले मारकस्थस्य पापिनः ।। पाके पाकयुजां पाके संभवे निधनं दिशेत् ।।२०।। असंभवे व्ययाधीशदशायां मरणं नृणाम् ।। अभावेव्ययभावेशसंबंधिग्रहभुक्तिषु।।२१।। तदभावेऽष्टमेशस्य दशायां निधनं पुनः।।मंदश्चेत्पाप संयुक्तो मारकग्रहयोगतः ।।२२।। तिरस्कृत्य ग्रहान्सर्वान्निहंता पापकृच्छ्रदः ।।२३।। मारकग्रहसंबन्धी पापकर्ता शनिस्तदा ।। तिरस्कृत्य ग्रहान्सर्वान्निहंता भवति ध्रुवम् ।।२४।।

पूर्वोक्त प्रकार से अल्प, मध्य, पूर्ण आयु का योग जान कर आगे कहे योगानुसार मारक का विचार करना चाहिए।। वृश्चिक और मकर राशि में जिनका जन्म होता है, उनका राहु मारक होता है।। ग्रहों में नवांश भेद हो तो शनि निश्चय ही मारक होता है।। मान्दी और केतु तो महामारक ही है। द्वितीय और सप्तमभाव के स्वामी तथा षष्ठेश,अष्टमेश मारक हैं।। इस शास्त्र में प्रायः मारकराशि की दशा में उपर्युक्त ग्रह मारक होते हैं। षष्ठभाव में पापग्रह योग अधिक हो तो षष्ठेश ही मुख्य मारक होता है।। षष्ठभाव का त्रिकोण स्थान भी मुख्य मारक होता है। मध्यायु योग वाले की षष्ठ या अष्टमभाव की दशा में मृत्यु होती है।। छठे भाव से त्रिकोण स्थान दशम और द्वितीय ये दोनों भावदशाः क्रमशः दीर्घायु और अल्पायु वाले के विषय में जानना। षष्ठभाव बलीग्रहयुक्त हो तो षष्ठभावकी त्रिकोण राशि मारक होती है।। अर्थात् षष्ठेश यदि बलयुक्त हो तो उसकी त्रिकोण राशि की दशा में मृत्यु कहना।। कारक ग्रह

की दशा के भोग के पश्चात् ही मारक विचार की व्यवस्था जानना (क्योंकि मारक का फल यदि प्रथम हो तो कारक का फल किसको प्राप्त होगा)

प्रथम 'चरे चरस्थिरद्वंद्वा' इस कथन के अनुसार जो मारक राशि प्राप्त हुई है, 'वही मारक राशि है' यह निश्चय है।। मारकेश ग्रह की महादशा में मारक स्थान स्थित पापी ग्रह की अन्तर्दशा हो या पापसम्बन्धी ग्रहों का अन्तर हो तो (यदि सम्भव प्रतीत हो तो) मृत्यु होती है।।२०।। यदि संभव न हो तो व्ययाधीश की दशा में भी मरण हो सकता है। और व्ययाधीश की बहुत दूर पड़ती हो तो व्ययाधीश से सम्बन्ध रखनेवाले ग्रह के अन्तर में मरण हो।। वह भी न प्राप्त हो तो अष्टमेश की दशा में मरण कहना।। शनि यदि पापग्रह युक्त हो तथा मारक ग्रह से भी सम्बन्ध रखता हो तो सब मारकों को हटाकर आप मारक होता है।। क्योंकि शनि स्वयं पापकर्मकर्ता है, अत: यदि मारकग्रह से सम्बन्ध हो तो सबको हटाकर निश्चय मारक होता है।।१२–२४।।

एतद्दशांतभुक्त्यादौ विचार्यैव मृतिं वदेत् ।। षष्ठद्रेष्काणपश्चैव: तथा वै नाशकाधिप: ।।२५।। विपत्ताराप्रत्यरीशौ बधभेशस्त्तथैव च ।। आद्यंतपौ च विज्ञेयौ चंद्रक्रांतग्रहाधिप: ।।२६।। दशाक्षिप्तेषु कालेषु मारको मरणप्रद: ।। दुष्टतारापते: पाके निर्याणं कथितं बुधै: ।।२७।। चेदंगपो यदि गृहे ह्यरिरेव हीनं पूर्णं सुहृद्यतिसम: सममायुराहु: ।। वा लग्नपो हितसमारिपदेऽपि पूर्णं मध्यं च हीनमिहजातकतत्त्वविज्ञा: ।।२८।। अधुना संप्रवक्ष्यामि मारकाख्यं ग्रहं द्विज ।। तस्मात्फलप्रभेदेन कथयामि तवाग्रत: ।।२९।।स्वात्मकारकलग्नाच्च चिंतयेद्द्विजसत्तम ।। भ्रातृषष्ठाष्टमं रिष्फं धनं द्यूनांतरेष्वपि ।।३०।। सर्वेषां बलवान्खेटो मारको ग्रह उच्यते ।। सर्वबलसमानत्वे मारक: संज्ञको ग्रह: ।।३१।। षष्ठाधिपस्तु प्रायेण बहुधा मारक: स्मृत: ।। तेषां मध्येऽधिकारी च षष्ठेशो मुख्यमारक: ।।३२।। मारकग्रहाश्रितो राशिर्मारकस्वामिनोऽथवा ।। ताभ्यां महादशाकाले विंशोत्तर्या: स्थिरादिक:।।३३।।पापे मृत्युर्विजानीयान्निर्विशंकं द्विजोत्तम ।। मारका बहव: खेटा यदि वीर्यसमन्विता: ।।३४।। तत्तद्दशांतरे विप्ररोगकष्टादिसंभव: ।। षष्ठाधिपदशायां च निधनं भवति ध्रुवम् ।।३५।। न्यूनातिरिक्तभेदेन बहुखेटास्तु मारका: ।। दुर्बलाश्रयराशीशदशा स्वल्पार्तिदा भवेत् ।।३६।। प्रबलस्य दशायां च महारोगार्तिमृत्युवत् ।। भयशोकमृताद्भीतिस्तस्कराग्निभयं भवेत् ।।३७।। मारकस्य दशायां च महत्या निधनाश्रयी ।। भूतामंतर्दशामाह तवाग्रे कथयामि भो:।।३८।।मारकग्रहाश्रयीभूतमहापाके विंचितयेत्।।कारकाच्च विलग्नाद्वा सप्तमाद्वा द्वितीयकम् ।।३९।। षष्ठाष्टरि: फनाथानामपहराष्टके मृति: ।। तेषामंतर्दशाधीशास्तेषां मध्ये बलाढचक: ।।४०।।

इन मारकेश की दशा का अन्त तक विचार करके मारक की अन्तर्दशा में मरण कहना चाहिए। षष्ठभाव के द्रेष्काण का स्वामी तथा अष्टमेश, और 'विपद्' नामक तारा और 'प्रत्यरि' तारा के स्वामी एवं 'बध' तारा का स्वामी ये आदि मारक और अन्तिम मारक हैं। और चन्द्रयुक्तग्रह राशिपति ये इतने मारक जानना ।। मारकदशा से प्राप्त समय में मारकग्रह मृत्यु देनेवाला है।। विपद् प्रत्यरि, बध इन तारापति के अन्तर में भी मरण सम्भव है।। अङ्गप अर्थात् षष्ठेश यदि लग्न में शत्रु के घर में हो तो हीनायु, मित्र के घर में हो तो दीर्घायु तथा सम के घर में हो तो मध्यायु होती है।।२८।। यदि लग्न का स्वामी शत्रु के घर में हो तो हीन

आयु, मित्र के घर में हो तो पूर्ण आयु, सम के घर में हो तो मध्य आयु जानना।।

हे मैत्रेय! अब हम 'मारक ग्रह' कहते हैं और उस मारक ग्रह के फल के भेद भी तुम्हारे सामने कहते हैं । द्वितीयेश और आत्मकारक और लग्न से विचार करना चाहिए। तीसरे, छठे, आठवें, बारहवें, दूसरे और सातवें घर से भी मारक का विचार करना चाहिए। इन सब स्थानों के स्वामी ग्रहों में जो सबसे बलवान् हो वह 'मारक' ग्रह होता है। सब का बल समान हो तो पहले कहा हुआ मारक ही मारक होता है। षष्ठेश प्रायः अधिकतर मारक होता है।। पहले कहे हुए भावों में बलवान् हों तो षष्ठेश मुख्य मारक है। मारक ग्रह स्थित राशि या मारक ग्रह की राशि इन दोनों राशि की दशा में मरण कहना।। या विंशोत्तरी दशा के अनुसार मारक की दशा में मरण कहना।। इस प्रकार पापी ग्रह की दशा में निसन्देह मृत्यु जानना।। हे मैत्रेय! बहुत से मारक यदि बलवान् हों तो उन २ की दशा अथवा अन्तर में रोग कष्ट आदि होना संभव है।। किन्तु षष्ठेश की दशा में निश्चय मरण होता है। इस प्रकार न्यूनाधिक भेद से अनेक ग्रह मारक हैं।। बलहीन ग्रह स्थित राशि के स्वामी की दशा साधारण कष्ट देनेवाली होती है। बलवान् ग्रह की दशा में महान् रोग, दुःख या मृत्यु के समान कष्ट, चिन्ता, भय, चोरी, अग्नि आदि से भय होता है।।३७।। हे मैत्रेय! मारक ग्रह की महादशा में बलवती होने से अष्टमभाव स्थित ग्रह की अन्तर्दशा में मृत्यु होती है यह (महादेवजी) ने कहा है, (यह गोप्य तत्व) तुम्हारे सामने कहते हैं।।३८।। मारक ग्रह की आश्रयीभूत जो राशि है (अर्थात् जिस भाव में मारक ग्रह स्थित है वही राशि उसकी आश्रयी भूत है) उसकी महादशा में किस अन्तर्दशा में मृत्यु होगी, यह विचार करे। (यही बात अब आगे कहते हैं) आत्मकारक से, लग्न से और सप्तम से जो द्वितीयभाव है (उस राशि की अन्तर्दशा में या तदीश की अन्तर्दशा में मृत्यु होती है) ।।३९।। षष्ठ, अष्टम, द्वादश भावों में अपहर=हरण–मारण में बलवान् अष्टम भावराशि की अन्तर्दशा या भावेश की अन्तर्दशा में निधन होता है। उन (अर्थात् कथित भावों के स्वामी ही उन अन्तर्दशा के स्वामी हैं कि –जिस अन्तर्दशा में निधन हो) अन्तर्दशा के स्वामी (जो अभी कहे गये हैं) हैं, इनमें जो ग्रह बल में अधिक बलवान् है।।४०।।

तदीयांतर्दशाकाले निधनं भवति ध्रुवम् ।। अपरा पापकाले तु रोगदुःखार्तिवान्द्विज ।।४१।। बलिशुक्रस्य च शनेर्ग्राह्यं षष्ठाष्टमादिकम् ।। द्वितीयद्यूननाथेन ज्ञेयं चैवोत्तरोत्तरम् ।।४२।। लग्नसप्तमयोर्मध्ये बलवांस्तद्विधीयते ।। षष्ठाष्टमेशौ द्वौ मुख्यौ व्ययेशमुपलक्षणम् ।।४३।। द्वाभ्यां मध्ये ह्यभिप्रायः अष्टमेशो हि मारकः ।। षष्ठस्थे पापबाहुल्ये षष्ठेशो मुख्यमारकः ।।४४।। मध्यायुषि समायोगे चिंतयेद्द्विजसत्तम ।। षष्ठेशाश्रयराशीशदशायां निधनं भवेत् ।।४५।। षष्ठात्षष्ठेतराद्वापि त्रिकोणगोपि मारकः ।। दीर्घायुषोहि योगेन चिंतनीयं द्विजोत्तम ।।४६।। षष्ठस्य वा तदीशस्य त्रिकोणे संस्थितो ग्रहः ।। तस्याश्रितस्वामिराशेर्दशायां निधनं ध्रुवम् ।।४७।। षष्ठे बलवति विप्र तत्त्रिकोणे विचिंतयेत् ।। तदीशे वा त्रिकोणेषु प्रायेणापि मृतिं वदेत् ।।४८।। राहुराशिस्तमोवेशाद्बलवान्मारकः स्मृतः ।। लग्नरंध्रद्वयं मध्ये नाश्रयीभूत-मस्ति चेत् ।।४९।। स राशिर्मारको ज्ञेयो ग्रहरीत्या विचिंतयेत् ।। तत्तद्राशिदशायां तु तदीशाश्रयराशि च ।।५०।। दशायां निधनं वाच्यं पुरा शुंभप्रणोदितम् ।। अपरे तु चरेत्यादि

पूर्ववत्तत्समाप्य च ।।५१।। यो राशिः स तु विज्ञेयो मारकश्चेति संमतः ।। तद्दशायां च निधनं निर्विशंकं द्विजोत्तम ।।५२।। अत्राध्याये च सर्वेषु ये योगा गदिता मया ।। तेषां सर्वं समालोच्य जातस्य च मृतिं वदेत् ।।५३।।

इति श्रीबृहत्पाराशरहोराशास्त्रेपूर्वखंडे मारकभेदकथनं नाम ऊनविंशोऽध्यायः ।।१९।।

उसकी अर्न्तदशा में निश्चय मृत्यु होती है। हे मैत्रेय! दूसरी जो पापी ग्रहों की अन्तर्दशाएं हैं वे रोग, दुःख, कष्ट देनेवाली हैं।।४१।। बलवान् शुक्र और शनि के (मारकत्व में हेतु) षष्ठ, अष्टम आदि भाव–(स्थितित्व या तदीशत्व ही मारकत्व में हेतु) ग्रहण करना। और (ये शुक्र तथा शनि) द्वितीयेश तथा सप्तमेश होने से उत्तरोत्तर प्रबल मारक होते हैं।।४२।। लग्न और सप्तमभाव में जो बलवान् हो उससे (मारक का) विधान करना चाहिए। षष्ठेश तथा अष्टमेश भी मुख्य मारक हैं, और व्ययेश उपलक्षक (६–८ के स्वामी की प्राप्ति के अभाव में मारक है) है।।४३।। षष्ठेश और अष्टमेश इन दोनों में अष्टमेश मारक है इसमें अभिप्राय यह है कि षष्ठभाव में पापग्रह अधिक हों तो षष्ठेश ही मुख्य मारक है।।४४।। मध्यायु योग हों तो हे द्विजोतम! षष्ठभावस्थित राशि के स्वामी की दशा में निधन होता है।।४५।। (अर्थात् मारकेश दशा दूर हो तो षष्ठाश्रयराशीश दशा में मृत्यु कहना) षष्ठभाव या षष्ठभाव से त्रिकोण भाव में स्थित ग्रह भी मारक होता है (यदि दीर्घायु योग हो तो) ।।४६।। षष्ठभाव या षष्ठेश से त्रिकोण स्थान में जो ग्रह है। उसकी आश्रित राशि के स्वामी की दशा में निश्चय मृत्यु होती है।।४७।। हे विप्र! षष्ठभाव में बलवान् (रक्षक) ग्रह हो तो उससे त्रिकोण भावस्थ की दशा मारक जानना। अथवा त्रिकोणेश की दशा ही मारक कल्पना करना।।४८।। राहु ग्रहाश्रित राशि (यद्यपि राहु पिण्डरूप ग्रह नहीं है तथापि) अंधकाराच्छन्न होने से बलवान् मारक है। लग्न और अष्टम इनमें यदि ग्रह न हो तो (अर्थात् आश्रय = आधार = स्थान। और आश्रयी तदाधारस्थित ग्रह) वह राशि ही (चरपर्या दशा में) मारक होती है, ऐसा ग्रह मारक की रीति से विचार करे। इस प्रकार वह २ पाप राशि की दशा तथा उस राशि के स्वामी की आश्रित राशि की दशा।।५०।। इन दशाओं में मृत्यु कहना, यह भगवान् महादेवजी का कथन है। और जो'चरे चरास्थिरद्वंद्वाः' इत्यादि से आयु का विचार किया गया है।।५१।। उसमें जो राशि पूर्वनिर्देशानुसार मारक कही गई है, उसकी दशा में निःसन्देह मारक कहना।।५२।। इस अध्याय में हमने जो मारक योग कहे हैं। उन सबके लक्षण का विचार करके जातक की मृत्यु का निर्णय करना चाहिए।।५३।।

इति श्रीबृहत्पाराशरहोराशास्त्रे पूर्वखण्डे मारकभेदकथनं नाम ऊनविंशोऽध्यायः।।१९।।

अथायुर्दायाध्यायप्रारंभः

मैत्रेय उवाच–कर्मवेत्ता महाभाग आयुर्दागहने गतिः ।। निर्विशंकं ममाग्रे च कथयस्व कृपानिधे ।।१।।

पराशर उवाच–अधुना संप्रवक्ष्यामि आयुर्दायां गतिं तव ।। यस्या विज्ञानमात्रेण कालज्ञो

भवित ध्रुवम् ॥२॥ लग्नेशाष्टमनाथाभ्यामायुर्दायं विचिंतयेत् ॥ दीर्घमध्याल्पयोगत्वं यथावद्गदतो मम ॥३॥ चरेऽचरे स्थिते द्वौ च लग्नरंध्राधिपौ यदि ॥ पूर्णायुर्योगो विज्ञेयो निर्विशंकं द्विजोत्तम ॥४॥ स्थिरर्क्षे लग्ननाथो हि लयेशे द्वंद्वभे स्थिते ॥ तदायुः पूर्णयोगश्च स भवेद्गणिताग्रणीः ॥५॥ तन्वधीशे स्थिते द्वंद्वे स्थिरे स्थिते लयाधिपे ॥ पूर्णायुर्योगो विज्ञेयो निर्विशंकं द्विजोत्तम ॥६॥ अथातः संप्रवक्ष्यामि मध्यायुर्योगमुत्तमम् ॥ चरे लग्नाधिपे विप्र स्थिरे रंध्रपतिर्यदि ॥७॥ तदा मध्यायुषं विंद्याद् द्वौ द्वंद्वे मध्यमायुषः ॥ अधुनाल्पायुर्योगं च तवाग्रे कथयाम्यहम् ॥८॥ अंगाधीशश्चरे यस्य द्वंद्वभे रंध्रनायके ॥ तस्याल्पायुर्महाप्राज्ञ निर्विशकं द्विजोत्तम॥९॥स्थिरेऽस्थिरे स्थिते द्वौ च लग्नरंध्रादिपौ द्विज ॥ स्वल्पायुस्तत्र विज्ञेयं सृष्टिकर्ता प्रणोदितम् ॥१०॥ पूर्ववत्तनुचद्राभ्यामायुर्योगं विचिंतयेत् ॥ जन्मेन्दौवास्थिते द्यूनेचान्यस्थे मंदचंद्रयोः ॥११॥ त्रिधा योगः समः प्रोक्तश्चिंतयेद् गणिताग्रणीः ॥ एकरूपास्त्रयो योगा आयुषि सुविचिंतयेत् ॥१२॥ एकरूपत्वयोगौ द्वौ तृतीयो भिन्नरूपकः ॥ द्वयोर्योगेन संग्राह्यं न ग्राह्यं चैक रूपतः ॥१३॥

आयुर्दायाध्याय

मैत्रेय बोले—हे कृपासागर महाभाग! आप कर्मवेत्ता हैं, अब मुझको आयुर्दाय का गहन विचार शंकारहित रूप से कहिये॥१॥ श्रीपाराशरजी ने कहा—अब हम तुमको आयु के विषय का विज्ञान कहते हैं, जिसके ज्ञान से मनुष्य काल की गति का ज्ञाता होता है॥२॥ लग्नेश और अष्टमेश से प्रथम दीर्घ, मध्य, अल्प रूप से आयु का योग जानना चाहिए॥ लग्नेश और अष्टमेश दोनों चरराशि में हों तो निश्चितरूप से पूर्णायु जानना॥ लग्नेश स्थिर में हो और अष्टमेश द्विस्वभाव में हो तो गणितज्ञ को पूर्णायु योग जानना चाहिए॥ लग्नेश द्विस्वभाव राशि में हो और अष्टमेश स्थिर राशि में हो तो दीर्घायु योग जानना॥ अब हम मध्यायु योग कहते हैं। चरराशि में लग्नेश हो और स्थिर में अष्टमेश हो तो मध्यायु होती है। लग्नेश, अष्टमेश दोनों द्विस्वभाव में हों तो मध्यमायु होती है। अब अल्पायु योग कहते हैं। लग्नेश चरराशि में, अष्टमेश द्विस्वभाव में हो तो अल्पायु होती है॥९॥ दोनों ही स्थिर राशि में हों तो अल्पायु होती है, यह ब्रह्मा का कथन है॥१०॥ इसी प्रकार लग्न और चन्द्रमा से भी आयुयोग का विचार करना चाहिए॥ लग्न और सप्तम में चन्द्रमा हो तो लग्न, चन्द्र से अन्यथा शनि, चन्द्र से आयु का विचार करना चाहिए॥११॥ यह तीन प्रकार (दीर्घ, मध्य, अल्परूप से) उपर्युक्त (लग्नेश, अष्टमेश और लग्न, चन्द्र या शनि, चन्द्र से) आयु के विषय में गणितज्ञ को विचार करना चाहिए॥ दो प्रकार से एकरूप आयु हो और तीसरे प्रकार से भिन्नरूप से हो तो दो प्रकार से प्राप्त आयु का ग्रहण करे और भिन्न प्रकार से प्राप्त आयु का परित्याग करे॥१३॥

योगत्रयं त्रयं रूपं भिन्नं भिन्नं भवेद्द्विज ॥ होरालग्नविलग्नाभ्यां प्राप्तायुर्योगनिश्चितम् ॥१४॥ लग्नेशादष्टमेशाच्च योगैकः कथितो द्विज ॥ होरालग्नाभ्यां द्वितीयं योगमेवं विचिन्तयेत् ॥१५॥ तृतीयं शनिचंद्राभ्यां चिंतनीयं सदा द्विज ॥ लग्नेन्दुमदने वापि चिन्तयेल्लग्नचंद्रतः ॥१६॥ यंत्रोद्धारमहं वक्ष्ये भृणु त्वं तं द्विजोत्तम।चतूरेखा लिखेत्तिर्यक् चतुरूर्ध्वं लिखेत्पुनः॥१७॥नव कोष्ठे त्रयो योगा दीर्घमध्याल्पमायुषि ॥ आद्यत्रये चरं लेख्यं तदधस्थे क्रमेण च ॥१८॥ चरं स्थिर द्विः

स्वभावं संलिखेद्द्विजसत्तम ।। मध्ये स्थिरत्रयं कोष्ठे तदधो द्विस्वभावतः ।।१९।। द्वंद्वं चरं स्थिरं लेख्यं निर्विशंकं द्विजोत्तम ।। अंतत्रये द्विःस्वभावं तदधः स्थिरमादिशेत् ।।२०।। स्थिरं द्वंद्वं चरं विप्र क्रमेण संलिखेत्सुधीः ।। तिर्यक्कोष्ठानुसारेण दीर्घमध्याल्पमायुषि ।।२१।। एवं पंक्तित्रये विप्र आदौ पंक्तित्रयेण च ।। धराधः स्थिरपंक्तिश्च स्थिरपंक्तिरथोभयम् ।।२२।। चतुरस्त्रं लिखेद्यंत्रं नवकोष्ठान्तरे द्विज ।। प्रथमांकेन संलेख्यमूर्ध्वकोष्ठत्रयात्मके ।।२३।। तिर्यक्पंक्तौ च द्वित्रीणी तिर्यक्पंक्तित्रयेष्वपि ।। तदधोप्यूर्ध्वपंक्तौ च लिखेदेकं त्रयं द्वयम् ।।२४।। मध्यपंक्त्यूर्ध्वं संलेख्यं द्वयं चैकं त्रयं पुनः ।। अंतपंक्त्यूर्ध्वके लेख्यं त्रयं द्वैकं द्विजोत्तम ।।२५।। एवं क्रमेण वै विप्र प्रतिकोष्ठत्रिपंक्तिषु ।। दीर्घमध्याल्पआयुष्याद्विज्ञेयानि भवंति हि ।।२६।। अधरोत्तरक्रमेणैव वामभागत्रिकोष्ठके ।। दीर्घायुश्च विजानीयान्निर्विशंकं द्विजोत्तम ।।२७।। मध्यकोष्ठत्रयंमध्यं दक्षिणकोष्ठत्रयेल्पकम् ।। सप्तविंशतिका भेदा भाषिता द्विजसप्तम ।।२८।। लग्नाष्टमेशयोर्विप्र दीर्घादौ च त्रयं त्रयम् ।। नवकोष्ठं विजानीयादायुः साधनहेतवे ।।२९।। तदैव संविजानीयात्कोष्ठांकलग्नचंद्रयोः ।। नव कोष्ठा महाप्राज्ञ विज्ञेया लग्नहोरयोः ।।३०।। एवं चरादिराशीनां भेदेनापि पृथक्पृथक् ।। नानाभेदादिसंयुक्ते तवाग्रे कथयाम्यहम् ।।३१।।

यदि तीनों प्रकार से प्राप्त हुई आयु का भिन्न २ रूप हो तो होरा और लग्न से प्राप्त आयु का ग्रहण करे।।१४।। लग्नेश, अष्टमेश से प्रथम आयु देखे। यह प्रथम योग है। होरा तथा लग्न से देखना द्वितीय योग है।।१५।। शनि और चन्द्र से देखना तृतीय योग है। चन्द्रमा लग्न सप्तम में होतो लग्न चन्द्रमासे देखना भी तृतीय योग है ।। अब हम इसका चक्र (सरलता से समझने के लिए) कहते हैं। चार तिरछी रेखा और चार खड़ी रेखा (आपस में मिलाकर) लिखे, तो ९ कोष्ट (३–३ कोष्टक के) होते हैं। पहिले तीनों में चर नाम लिखे और उसके नीचे क्रमशः चर, स्थिर, द्विस्वभाव लिखे।। मध्य के तीन कोष्टकों में प्रथम सबमें स्थिर नाम लिखे और उसके नीचे द्विस्वभाव, चर, स्थिर लिखे। अन्त्य के तीन कोष्टकों में प्रथम द्विस्वभाव लिखे, पश्चात् उसके नीचे स्थिर, द्विस्वभाव और चर लिखे इस प्रकार लिखकर तिरछे क्रम से प्रथम पंक्ति में दीर्घ, मध्य, अल्प आयु लिखे।। हे विप्र! तीनों पंक्तियोंमें क्रमसे लिखना।। मध्य पंक्ति में स्थिर पंक्ति तीनों हैं।। (और नीचे की तीनों कोष्टकों की पंक्ति द्विस्वभाव की है) इस प्रकार से लिखे हुए चक्र में नौ कोष्ठों में ऊपर के कोठों में प्रथम १–१ अंक लिखकर पश्चात् तिरछी पंक्ति में १–२–३ अंक लिखे। और खड़ी पंक्ति में १–३–२ के अंक लिखे उसके नीचे मध्यपंक्ति में २–१–३ लिखे (खड़ी पक्ति में) और तिरछी पंक्ति में ३–१–२ लिखे।। नीचे की पंक्ति में ऊपर ३–३–३ लिखे और नीचे २–३–१ लिखे।। इस प्रकार प्रति कोष्टत्रिक में अंक निवेश करना। प्रथम पंक्ति में (ऊपर की पंक्ति में दीर्घ, मध्य, अल्प आयु होंगी। ऊपर नीचे के बाईं तरफ के तीनों कोष्टों में 'दीर्घायु' नाम होगा और इसी तरह मध्य के कोठों में 'मध्यायु' और अन्त्य कोष्टों में 'अल्पायु' शब्द होंगे। इस प्रकार ९X३=२७ भेद कहे। लग्नेश और अष्टमेश के विचार में दीर्घ आदि ९ भेदों में आयु का साधन करे। और आगे भी इसी तरह नौ कोष्टों में लग्न, चन्द्र से तथा लग्न होरा से आयु निर्णय करे। इस प्रकार चरादि राशियों के अलग अलग भेद से नाना प्रकार के आयु के भेद होते हैं। सो स्पष्टरूप से अब तुम्हारे सामने कहते हैं।। १४–३१।।

अथ दीर्घाद्यनेकभेदानामायुश्चक्रम्		
दीर्घायुः चरः १ लग्नेशः चरः १ अष्टमेशः	मध्यायुः चरः १ लग्नेशः स्थिरः २ अष्टमेशः	अल्पायुः चरः १ लग्नेशः द्विःस्वभावः ३ अष्टमेशः
दीर्घायुः स्थिरः २ लग्नेशः द्विःस्वभावः ३ अष्टमेशः	मध्यायुः स्थिरः २ लग्नेशः चरः १ अष्टमेशः	अल्पायुः स्थिरः २ लग्नेशः स्थिरः २ अष्टमेशः
दीर्घायुः द्विस्वभावः ३ लग्नेशः स्थिरः २ अष्टमेशः	मध्यायुः द्विःस्वभावः ३ लग्नेशः द्विःस्वभावः ३ अष्टमेशः	अल्पायुः द्विःस्वभावः ३ लग्नेशः चरः १ अष्टमेशः

स्पष्टायु चक्र			
दीर्घायु	त्रियोगे १२०	द्वियोगे १०८	एकयोगे ९६
मध्यायु	त्रियोगे ८०	द्वियोगे ७२	एकयोगे ६४
अल्पायु	त्रियोगे ४०	द्वियोगे ३६	एकयोगे ३२
खण्ड	४०	३६	३२

कदाचित्कश्चिद्भवति इत्युक्तं द्विजसत्तम ।। लग्नाष्टमेशयोरेकं त्वपरं लग्नचंद्रयोः ।।३२।।
विलग्नहोरयोरन्यदितिपक्षत्रयं द्विज ।। तदेभिः प्रेत्य संवादादित्यादियोगसंकथम् ।।३३।।
दीर्घमध्याल्पभेदेषु चरेत्यादि निरूप्यते ।। द्वात्रिंशच्च चतुः षष्टिं षण्णवति स्वरूपके ।।३४।।
षट्त्रिंशद्वा द्विसप्ताब्दे अष्टोत्तरशताब्दके ।। चत्वारिंशत्तथाशीतेर्विंशोत्तरशतात्मके ।।३५।।
योगान्यग्रहमायुष्यं वा शेषेषु समानतः ।। समागतेषु आयुर्दास्पष्टीकरणसंकथाम् ।।३६।।
पूर्णमादौ हानिरंतेऽनुपाते मध्यमो भवेत् ।। राशिद्वयस्य योगार्द्धं वर्षाणां स्पष्टमुच्यते ।।३७।।
एवं द्विकानां संचिंत्य त्रयाणां योगविन्मते ।। यत्रास्यायुर्यन्निर्णीतं योगजालेन यत्कृतम् ।।३८।।

तत्रायुर्दीर्घसंलब्धा सिद्धिर्मध्यावधिर्भवेत् ।। निर्विशंकं महाप्राज्ञ स्फुटीपातानुपाततः ।।३९।। लब्धाब्दमनुपातेन मध्यमध्येपि योजयेत् ।। दीर्घायुषा विजानीयात्संस्फुटी चपलात्मका ।।४०।।

कभी कोई आयु और कभी कोई आयु होती है, यह हम कह चुके हैं। (उनमें निर्णय करने के लिए) लग्नेश और अष्टमेश से (१) तथा लग्न और चन्द्रमा से (२) ।। लग्न और होरा से (३) आयु निर्णय करे। इस प्रकार तीन पक्ष हैं। इन तीन पक्षों में से अधिक पक्ष से जो आयु प्राप्त हो सो ग्रहण करना यह हम कह चुके हैं।। दीर्घ, मध्य, अल्प आयु के विषय में विचार दशा तथा वर्ष परिमाण का है वह अब कहते हैं। वर्षसंख्या के परिमाण भी तीन प्रकार के हैं, उनमें प्रथम ३२ वर्ष, ६४ वर्ष और ९६ वर्ष क्रमशः अल्प, मध्य, दीर्घ के वर्ष परिमाण हैं। और दूसरा परिमाण ३६, ७२, १०८ वर्ष का है। तीसरा परिमाण ४०, ८०, १२० वर्ष का है।। अन्य योगों से प्राप्त आयु प्रायः इनके समान है। योग से आयु का दीर्घ, मध्य आदि निर्णय होने पर ठीक स्पष्ट करने का विचार होता है।। पहले नियम से पूर्ण आयु प्राप्त हो और तीसरे से अल्पायु प्राप्त हो तो अनुपात से मध्यायु होती है।। आई हुई २ आयु के वर्ष जोड़कर उनका आधा करने से स्पष्ट वर्ष संख्या होती है। इस प्रकार इन तीन आयु के निर्णय में जो प्रधानतः दो आयु प्राप्त हो उनको जोड़ कर आधा करने से स्पष्ट होती है। पूर्वोक्त नियमों से जो आयु निर्णीत हुई और योग समूह से जो स्पष्ट हुई उसमें यदि दीर्घायु है तो उसका आरम्भ मध्यायु की अवधि से होता है। और इसके बीच में अनुपात से स्पष्ट करना चाहिए।।३९।। अनुपातसे प्राप्त हुई वर्ष संख्या मध्यायु के भी मध्यमें जानना। और दीर्घायु की अवधि पर्यन्त जो स्पष्ट प्राप्त हो सो गणित से पल पर्यन्त आयु जानी जा सकती है।।३२–४०।।

मध्यमायुर्लभेत्तत्र अल्पायुः सिद्धिसंभवम् ।। पूर्ववदनुपातेन यत्र युङ्मध्यमायुषि ।।४१।। कदाचित्सर्वयोगेन अल्पायुः सममागते ।। यत्र भावानुपातस्य तत्रैकः खंडः सिद्ध्यति ।।४२।। खंडत्रयप्रयोगेण आयुर्दा कथिता मया।। द्वात्रिंशत्षष्ठत्रिंशाब्दा चत्वारिंशत्तमै द्विज ।।४३।। किं ग्राह्यं कियतो ग्राह्यं कदाचिद् ग्राह्यमाणकः ।। इति संशयनिवृत्यर्थं कथयामि पृथक् पृथक् ।।४४।। लग्नेशाष्टमनाथाभ्यां तदायुर्योगसंभवः ।। चत्वारिंशात्मकं खण्डं संग्राह्यं द्विजसत्तम ।।४५।। योगत्रयेषु चागत्य अल्पायुर्द्विजसत्तम ।। द्वात्रिंशाब्दकखण्डं च संज्ञेयं ब्रह्मणोदितम् ।।४६।। कदाचिदनुपातेन युक्ते सिद्धिः प्रजायते ।। दंताब्देन तु संदेहो रुद्रशूलं विचिंतयेत् ।।४७।। अधुना संप्रवक्ष्यामि ह्यनुपातविधिं द्विज ।। पृथक् स्पष्टं च संस्थाप्य विलग्नेशाष्टमेशयोः ।।४८।। गतराशींस्त्यजेद्विप्र विद्यमानेन संगुणेत् ।। त्रैराशिकैकखंडस्य यदाप्तं वर्षमादिशेत् ।।४९।। लग्नेशस्याष्टमेशस्य आयुरागतयोर्द्विज ।। वर्षादिपिंडयोर्योगं तदर्धं स्पष्टकारितम् ।।५०।। दीर्घमायुर्लभेद्विप्र द्विसप्ताब्देषु योजयेत् ।। तदा चाशीतिमे योज्यं दीर्घसंज्ञा स्फुटा भवेत् ।।५१।। मध्यमायुषि यत्रैवं षट्त्रिंशन्नभवेदयोः ।। अनुपातेन चागत्य युक्तेब्दे मध्यमायुषि ।।५२।। त्रैराशिकमहं वक्ष्ये तवाग्रे द्विजसत्तम ।। प्रमाणमिच्छातुल्यं च स्थाप्यमाद्यंतयोर्द्वयोः ।।५३।। मध्ये फलेन्यजाती च संगुणेदिच्छया द्विज ।। प्रमाणासंस्फुटफलं तस्याख्यमनुपातकम् ।।५४।।

जहां मध्यायु प्राप्त हो, वहां अल्पायु तो सिद्ध ही है अल्पायु की वर्ष संख्याकी अवधि से और पूर्णायु की अवधि तक बीच की संख्या अनुपात से स्पष्ट करना।। और जहां सब प्रकार से अल्पायु ही आती हो वहां लग्न, चन्द्र आदि के वलावल के विचार से आयु के वर्षों का निर्णय करे।। इस प्रकार आयु विचार में आयु के वर्षों के हमने ३ खण्ड कहे, जिसमें पहला खण्ड ३२, ६४, ९६ दूसरा खण्ड ३६, ७२, १०८ तीसरा खण्ड ४०, ८०, १२० कहा है। इन ३ खण्डों में कहां क्या और कितने वर्ष की आयु ग्रहण करना इस संशय की निवृत्ति के लिए भिन्न २ प्रकार से स्पष्ट निर्देश करते हैं।। जहां लग्नेश, अष्टमेश से आयु का निर्णय हुआ है, वहां ४० खण्डवाली आयु का ग्रहण करना चाहिए।। तीनों प्रकार से यदि 'अल्पायु' प्राप्त हुई हो तो, ३२ वर्ष खण्ड वाली आयु का ग्रहण करना चाहिए।। कभी २ अनुपात से गणितागत आयु सिद्ध की जाती है।किन्तु ३२ वर्ष की अल्पायु में जहां सन्देह हो, वहां रुद्र, शूल दशा से विचार करना।। हे मैत्रेय! अब हम अनुपात की विधि स्पष्ट कहते हैं। लग्नेश और अष्टमेश का राशि, अंश अलग २ रख कर गत राशि (राशि–अंक) को छोड़ देना। और आई हुई आयु की संख्या (आयु वर्ष खण्ड) को ग्रह की वर्तमान राशि के अंक से अलग २ गुणा करना, और आगामी राशि अंक से भाग देना, जो लब्ध हो वह स्पष्ट वर्ष हैं।। इस प्रकार लग्नेश तथा अष्टमेश से लाई हुई वर्ष संख्या को जोड़कर आधा करने से स्पष्ट वर्षायु होती है।।

उदाहरण–

लग्नेश स्पष्ट २।२४ अष्टमेश स्पष्ट ६।८ है। इनसे प्राप्त अल्पायु वर्ष ४० है। इनको भिन्न २ जगह गुणा किया। ४० X ३ = १२० हुआ तथा ४० X ७ = २८० हुआ। प्रथम में ४ का भाग दिया तो लब्ध वर्ष ३० हुआ। द्वितीय में ८ का भाग दिया तो लब्ध वर्ष ३५ हुआ। दोनों का योग ६५ हुआ, इसका आधा किया तो ३२।६ स्पष्ट वर्षायु प्राप्त हुई।।

हे मैत्रेय! अगर दीर्घायु प्राप्त हो तो ७२ और ८० में इस गणित का प्रयोग करना, जिससे वर्ष संख्या स्पष्ट होगी। मध्यायु प्राप्त हो तो ३६ और ४० की संख्या से प्रयोग करना। हम तुमको त्रैराशिक की विधि कहते हैं। त्रैराशिक में ३ अंक होते हैं। प्रमाण, इच्छा और समान। इनमें प्रमाण और इच्छा को आदि और अन्त में रखना चाहिए। और मध्य में समान अर्थात् फल को रखना चाहिए। फिर इच्छा से गुणा करके प्रमाण का भाग देने से प्राप्त संख्या स्पष्ट वर्षादि होगी। इसीका दूसरा नाम अनुपात है।।४१–५४।।

दीर्घमध्यायुषोर्विप्र अनुपातान्नियोजयेत् अल्पायुषि यदा लब्धमभावमनुपातकम् ।।५५।।
प्रवर्तमानमायुः स्याज्जन्मप्रभृति चैव हि ।। विलग्नहोरयोरेवं तदेवं लग्नचंद्रयोः ।।५६।।
समागतायुषस्तस्याश्चांतखंडे स्फुटीकृतम् ।। सर्वयोगेपु वै विप्र संस्कारमनुपाततः ।।५७।।
होरालग्नादिमांशे तु पूर्णमंते च किंचन ।। स्पष्टीकरणमेतत्स्याद्दीर्घमध्याल्पकायुषि ।।५८।।
होरालग्नं स्फुटीकृत्य विकलादि द्विजोत्तम ।। तस्य त्रैराशिकं स्पष्टं पूर्ववद्योजयेत्पुनः ।।५९।।
अंतखंडेषु संयोज्यमायुषो निर्णयो भवेत् ।। द्विसार्धघटिकामध्ये त्रिंशदंशस्फुटी द्विज ।।६०।।
आनीय पूर्वरीत्याब्दात्सूर्यराशेश्च लग्नभात् ।। पूर्वाध्यायेमयाप्रोक्तं तवाग्रे द्विजसत्तम ।।६१।।
अधुना संप्रवक्ष्यामि आयुः साधनहेतवे ।। कक्षाह्रासं तथा वृद्धि शनियोगेन वै द्विज ।।६२।।
लग्नाधीशः शनियुतो होराधीशो यथा द्विज ।।६३।। कक्षाह्रासो भवेत्तत्र यत्र सौरिश्च निर्बलः

।।६४।। आयुर्दायसमापन्ने कक्षात्रयमिहोच्यते ।। दीर्घमध्याल्परूपं चेत्तत्प्रमाणं वदाम्यहम्
।।६५।। षट्त्रिंशेऽब्देन कक्षै का तस्या हानिः प्रजायते ।। मध्यममायुर्भवेत्तत्र निर्विशंकं द्विजोत्तम
।।६६।। मध्यमायुः समागत्य स्वल्पायुर्जायते ध्रुवम् ।। योगेल्पायुः समायातः शनिर्योगं
करोत्यपि ।।६७।। षट्त्रिंशाब्दश्च रूपेण कक्षाह्लासो भवेद्द्विज ।। अत्यल्पायुर्विजानीयाद्बाल्ये च
निधनं भवेत् ।।६८।। अथ योगत्रये विप्र शनिर्योगं करोति च ।। एकएकादशाह्लासः
कक्षाह्लासस्त्वयं क्रमात् ।।६९।। ततः फलविशेषार्थं गुणदोषौ वदाम्यहम् ।। गुणैः प्रपूरितः
सौरिः कक्षावृद्धिं करोति च ।।७०।। दोषयुक्ता भवेद्धानिस्ताभ्यां निर्णय उच्यते ।।
स्वर्क्षतुंगादिगुणिभिर्युक्तो मार्तंडवंशजः ।।७१।। कक्षावृद्धिकरो विप्र विभागेनायुवृद्धिकृत् ।।
अत्यल्पायुर्भवेदल्पमल्पान्मध्यं प्रजायते ।।७२।। मध्यमाज्जायते दीर्घं कक्षावृद्धेश्च लक्षणम् ।।
एवं नीचारिगः सौरिः पापदृष्टिसमन्वितः ।।७३।। कक्षाह्लासकृते विप्र त्रिभागेनायुहानिकृत् ।।
वृद्धाद्भवति मध्यायुर्मध्यादल्पायुरेव च ।।७४।। अल्पादत्यल्पकं याति बाल्ये निधनसंभवः ।।
लयेशे वापि होरेशे केवले शनिसंयुते ।।७५।।

अनुपात दीर्घायु और मध्यायु में नियुक्त करना चाहिए। जबकि अल्पायु प्राप्त हो तो अनुपात व्यर्थ है। इस प्रकार से जन्म से लेकर आयु का विचार करना चाहिए।। इसी प्रकार लग्न होरा से और लग्न चन्द्रमा से विचार करना चाहिए। तीन प्रकार से आई हुई आयु के खण्डों को जोड़कर ३ का भाग देने से स्पष्ट आयु जानना। होरा लग्न से आई हुई खण्ड संख्या आदि की हो और अन्य प्रकार से आई हुई खण्ड संख्या अन्तिम हो तो इसी प्रकार स्पष्टीकरण होगा। ऐसे ही दीर्घायु, मध्यायु तथा अल्पायु में स्पष्टीकरण करना चाहिए।। होरा और लग्न का स्पष्ट राशि, अंश, कला विकला पर्यन्त स्पष्ट करके पहले कही हुई रीति के अनुसार त्रैराशिक के गणित के वर्षादि आयु स्पष्ट करना चाहिए। आई हुई आयु के अन्तिम खण्ड पर्यन्त इन वर्षों की संख्या हो सकती है। और इस प्रकार आयु का निर्णय होता है। होरा लग्न प्रायः २।। घटी का होता है। उसका सूर्य राशि से स्पष्ट करके और पूर्व रीति के अनुसार आयु निकालना, होरा–लग्न का स्पष्ट करना, हम पूर्व के अध्यायों में कह चुके हैं। अब हम तुमको आयु सिद्ध करने के लिये आयु में कक्षा ह्लास और वृद्धि जो कि शनि के योग से होती है, वह कहते हैं। (अर्थात् शनि के योग से आयु में वर्षों की कमी व अधिकता होना कहा जाता है।) लग्नेश अथवा होरेश शनि युक्त हो तो कक्षा ह्लास (आयु में कमी) होती है। किन्तु जहां शनि निर्बल हो वहां कक्षा ह्लास कहना चाहिए। दीर्घ, मध्य व अल्प आयु का जो प्रमाण आया है उसमें विचार करना चाहिए। जहां मध्यायु आई है वहां यदि कक्षा ह्लास हो तो ३६ वर्ष की अल्पायु जानना। इस प्रकार मध्यायु कक्षा ह्लास से स्वल्पायु हो जाती है। योग से यदि अल्पायु आई है और शनि योग करता है तो ३६ वर्ष की अल्पायु में कक्षा ह्लास होकर अत्यल्प आयु जानना और बाल्यावस्था में ही निधन कहना। मैत्रेय! यदि तीनों योगों में शनि, योग करता हो तो प्रत्येक दशा में कक्षा का ह्लास करता है। इसलिये अब विशेष फल जानने के लिये आयु विचार के लिए शनि के गुण और दोष दोनों बताते हैं। गुणों से युक्त शनैश्चर कक्षा में वृद्धि करता है। दोष युक्त शनि कक्षा में हानि करता है। इस हानि वृद्धि का निर्णय कहते हैं। शनि अपनी राशि या उच्च का हो तो कक्षा वृद्धि करता है। अर्थात् अल्पायु से मध्यायु, मध्यायु से दीर्घायु करता है।। शनि, दोषयुक्त हो तो

कक्षाह्रास करता है। (अर्थात् दीर्घायु से मध्यायु और मध्यायु से अल्पायु) कक्षा वृद्धि में अत्यल्पायु से अल्पायु तथा अल्पायु से मध्यायु तथा मध्यायु से दीर्घायु होना कक्षा वृद्धि का लक्षण है।। इसी प्रकार नीच राशि का या शत्रु राशि का शनि पापग्रह की दृष्टियुक्त हो तो कक्षा ह्रासकारी है और आयु का तीसरा भाग कम करता है। अर्थात् दीर्घायु से मध्यायु और मध्यायु से अल्पायु तथा अल्पायु से अत्यल्पायु कारक है, बाल्यावस्था में मृत्युकारक होता है।। अष्टमेश अथवा होरेश यदि केवल शनियुक्त हो।।५५–७५।।

पापर्क्षे पापयुक्ते वा पापदृष्टिसमन्विते ।। कक्षाह्रासं न कुर्वीत विना नीचारिगे द्विज ।।७६।। एवं तुंगादिरहितः कक्षावृद्धिं न कारयेत् ।। शुभर्क्षे शुभसंयुक्ते शुभदृष्टौ च तुंगगे ।।७७।। पापयोगेन रहिते कक्षावृद्धिकरः शनिः ।। एवं नीचादिदोषेण कक्षाह्रासः प्रजायते ।।७८।। साधारण्ये स्थिते युक्ते कष्टं चातितरां भवेत् ।। अधुना संप्रवक्ष्यामि कक्षावृद्धिद्वितीयकम् ।।७९।। गुरुणा स्थानसंबन्धे भविष्यति द्विजोत्तम ।। लग्ने वा सप्तमे वापि तुंगादिगुणसंयुते ।।८०।। शुभर्क्षे शुभदृग्युक्ते कक्षावृद्धिकरे गुरौ ।। जीवने संशयो यस्य अल्पायुर्वृद्धिकारकम् ।।८१।। अल्पायुषि च मध्यायुर्मध्याप्ते दीर्घमायुषि ।। एवं भेदानुभेदेन कथयामि तवाग्रतः ।।८२।। अथायुर्बाधकं विप्र दर्शयामि तवाग्रतः ।। दीर्घायुर्योगे संप्राप्ते प्रकारसकलेष्वपि ।।८३।।

पापराशि में पापदृष्टि या पापयुक्त हो तो कक्षाह्रास नहीं करना। क्योंकि–शनि के नीचराशि या शत्रुराशि में होने पर ही कक्षा ह्रास होता है।।७६।। इसी प्रकार शनि के उच्चराशि या मित्रक्षेत्री के बिना कक्षावृद्धि भी नहीं करना।। शनि यदि शुभराशि में सौम्ययुक्त तथा शुभदृष्टियुक्त अथवा उच्चराशि में हो और पापग्रह योग रहित हो तो कक्षा वृद्धिकारक है और नीचादि दोष से कक्षा ह्रास कारक होता है।।७८।। साधारणरूप में शनियुक्त हो तो विशेष कष्टकारक होता है।। अब हम कक्षावृद्धि का दूसरा योग कहते हैं।।७९।। गुरु से स्थान सम्बन्ध होने पर जैसे लग्न में या सप्तमभाव में उच्च आदि गुणयुक्त शुभराशि में शुभ दृष्टियुक्त हो तो कक्षावृद्धिकारक होता है। अर्थात् अत्यल्पायु (जीवन में संशय) हो तो अल्पायु और अल्पायु से मध्यायु और मध्यायु से दीर्घायु होती है। इन योगों के भेद तथा अनुभेद तुमको कहते हैं।।८२।। और आयु के बाधक योग भी कहते हैं। सब प्रकार से दीर्घायु योग प्राप्त होने पर।।८३।।

किं दशायां च निधनमिति कर्तुमपेक्षया ।। निर्णयं तस्य कुर्वीत तवाग्रे कथयाम्यहम् ।।८४।। यस्य दीघार्युषं लब्ध्वा पर्यंत मध्यमायुषि ।। निरपवादता ज्ञेया तदग्रे निधनमुच्यते ।।८५।। मध्यायुषः समायोगं लब्ध्वा पूर्वप्रकारतः ।। निर्विशंकाल्पपर्यंत तदग्रे मृतिचिंतनम् ।।८६।। योगेऽल्पायुः समागत्य स्वयं खण्डे विचिंतयेत् ।। किंस्विद्दशायां निधनं भविष्यतिद्विजोत्तम ।।८७।। दीर्घे द्विसप्ततिवर्षे तदूर्ध्वं चिंतयेन्मृतिम् ।। षट्त्रिंशदब्दादूर्ध्वं च चिंतयेन्मध्यमायुषि ।।८८।। अथ स्पष्टं प्रवक्ष्यामि मलिने द्वारबाह्ययोः ।। नवांशे निधनं तस्य त्रिशूलिभाषितं पुरा ।।८९।। द्वारद्वारेशयोर्विप्र मालिन्यं तन्नवांशके ।। जातस्य हि भवेन्मृत्युः सत्यमेव न संशयः ।।९०।। पाकलग्नद्वये विप्र चिंतनीयं प्रयत्नतः ।। स्वयं पापः पापदृष्टे पापखेटसमन्विते ।। तन्नवांशदशाकाले निधनं च भवेद्ध्रुवम् ।।९१।।

अब हम तुमको यह बताते हैं कि, जातक का मरण किस दशा में होगा इसका निर्णय करने के लिए कहते हैं।।८४।। (प्रथम स्थूलरूप से कहते हैं) जिस जातक की दीर्घायु प्राप्त हुई है, उसके लिये मध्यायु तक तो बाधरहित जीवन है, उसके बाद ही मृत्यु कहना।। पूर्वोक्त प्रकारों से जिसका मध्यायु योग प्राप्त है, उसका जीवन अल्पायु की अवधि तक तो है ही, पश्चात् मृत्यु के विषय में विचार करना चाहिए।।८६।। योग में यदि अल्पायु आई हो तो उसके खण्ड में ही विचार करना चाहिए। किस दशा में मृत्यु होगी यह विचार करना।। दीर्घायु हो तो ७२ वर्ष के बाद मृत्यु समझना, और मध्यायु में ३६ वर्ष के बाद मृत्यु विचारना।।८८।। अब यह स्पष्ट कहा जाता है कि–द्वारराशि या बाह्य राशी के मलिन पापदृग्योग होने पर उसकी नवांश दशा में या अन्तर्दशा में मृत्यु होती है जो कि भगवान् शंकर ने पहिले कहा था।।८९।। हे मैत्रेय! जिस जातक के द्वारराशि या द्वारराशीश की मलिनता हो तो उसके नवांशदशा या अन्तर्दशा में निःसन्देह मृत्यु होती है।।९०।। यह विचार पाक – दशा और भोग – अन्तर्दशा दोनों में करना। जो द्वारराशि या द्वारराशीश स्वयं पाप या पापदृष्ट या युक्त हो उसकी नवांशदशा काल में निश्चय मृत्यु होती है।।९१।।

निर्विशकं महाप्राज्ञ तदंतरगते मृतिः ।।९२।। द्वारे च बाह्यराशेर्वा नवांशे निधनं भवेत् ।। पापयोगे नवांशेशात्तदनंतर्गते द्विज ।।९३।। यदा दशाप्रदो राशिः पापसंज्ञः प्रजायते ।। लग्नाद्यावति यो दूरं तावद्दूरं विभोगकाः ।।९४।। अधुना संप्रवक्ष्यामि नवांशकपदेन च ।। प्रतिराशिनवांशेन नवाब्देन दशास्थिरम् ।।९५।। विशेषरूपं मे प्रोक्तं नवाब्दाद् द्वारबाह्ययोः ।। राशिसंबंधिनो ग्राह्याश्चरदशायां विचिंतयेत् ।।९६।। भावानां स्पष्टकृत्यैवं द्वारबाह्यं विचिंतयेत् ।। यद्भावस्पष्टता सग्रहनवांशेषु भो द्विज ।।९७।। रीत्याब्दे च समानीते मरणं भवति ध्रुवम् ।। एवं तन्वादयो भावाः स्पष्टीकार्या यथार्थतः ।।९८।। ग्रहनवांशवैपरीत्याद्द्वादशानां नवांशके ।। नवांशायुःसमानेन विशेषं च समादिशेत् ।।९९।। एवं विचिन्तयेद्विप्र द्वारबाह्यद्वयोर पि ।। मलिनत्वमथैवेदं निधनं न तु कथ्यते ।।१००।।

अथवा हे महाप्राज्ञ मैत्रेय ! उसकी अन्तरदशा में मृत्यु होती है।।९२।। जिस द्वारराशि या बाह्यराशि के नवांश में पापग्रहदृष्टि या योग हो तो उसी नवांश दशा में निधन (मृत्यु) होता है।।९३।। स्वयं पाप या पापदृग्योग युक्त राशि दशाप्रदरूप में (चर-पर्यायदशा में) भोगरूप से आरंभ होती है तो वह लग्न से जितनी संख्या पर हो उतनी संख्या पर का भोग=अन्तरदशा मारक होगी अर्थात् द्वारराशि के द्वारनवांश से या संभव हो तो लग्न से उतनी संख्या परे की राशि दशा या नवांश दशा में मृत्यु होती है ।।९४।। अब नवांश राशि के आरूढ (राशि) से यह विचार कहते हैं। हर एक राशि की दशा ९–९ वर्ष की होती है और उसमें अन्तर एक अंश के १–१ वर्ष जानना। यह 'नवांशस्थिरदशा' कहाती है।। जो कि, आगे दशाप्रकरण में कही जायगी।।९५।। और द्वार तथा बाह्य राशि के राशिसम्बन्धी विशेषरूप चरदशा या चरपर्यादशा में विचार करना।। द्वादशभावों को स्पष्ट करके द्वार तथा बाह्य राशि का विचार करना। जिस भाव या नवांश में द्वार राशि हो और जिस भाव में या नवांश में बाह्यराशि हो उसको देखकर पूर्वोक्त ग्रहयोगानुसार जिस राशि में मरणयोग प्राप्त हो उसमें

मरण कहना। इसके लिये लग्न आदि १२ भाव यथार्थ शुद्ध गणित द्वारा स्पष्ट करना॥९८॥ द्वादश राशियों के नवांश में जिस राशि और नवांश का ग्रहयोग विपरीत अर्थात् पूर्वोक्त रीति से अशुभ हो उसके अनुसार नवांशायुके समान वर्षो से विशेष वर्ष (मृत्युकारक वर्ष) का निर्देश करना॥९९॥ हे मैत्रेय ! इस पूर्वोक्त प्रकार से द्वार तथा बाह्य राशि से मलिन (कष्टकारी) वर्ष का विचार करना। 'उस वर्ष में ही मृत्यु हो' यह नहीं कहा जा सकता, केवल कष्टमात्र ही होना सम्भव है॥१००॥

अन्ये नरस्य मलिने सर्वत्रेति विचिंतयेत् ॥ पापराश्याक्रांतराशौ पाकांशे निधनं द्विज ॥१०१॥ एवं चरदशाकाले द्वारेशस्य मलिम्लुचे ॥ तदीशाश्रयराशेरप्यंशपाके भवेन्मृतिः ॥१०२॥ एवं चरदशामध्ये चिंत्यते द्वारबाह्ययोः ॥ त्रिकोणोत्तरदशाप्राप्ते निधनं जातकस्य च। ॥१०३॥ अथ वा योगायुर्दायसमाप्तिसमयेष्वपि ॥ प्रोक्ते मृत्व्याश्रयीभूते चिंतनीयं द्विजोत्तम ॥१०४॥ खंडे वा यदि पाकस्य बाह्यस्य मलिने यदि ॥ दशा न हि समाप्येत तत्त्रिकोणाब्दके मृतिः ॥१०५॥ अधुना संप्रवक्ष्यामि मृत्युयोगापवादकम् ॥ शुभदृष्टचा शुभे योगे शुभखेचरसंयुते ॥१०६॥ न च द्वारे न बाह्ये च द्वारेशे चोपलक्षिते ॥ द्वारेशाश्रयनवांशे दशायां निधनं भवेत् ॥१०७॥ अथैव शुभदृग्योगाभावेष्वपि द्विजोत्तम ॥ नवांशकालेषु दशा ह्यपवादं वदाम्यहम् ॥१०८॥ लग्नेशे तुंगगे विप्र यस्य जन्मनि जायते ॥ द्वारे द्वारेषबाह्यानां मालिन्येपि यदा भवेत् ॥ शुभदृग्योगभावे च नवांशे निधनं भवेत् ॥१०९॥ न तु मृत्युर्भवेत्तस्य नवाब्दाद्वृद्धिमादिशेत् ॥११०॥

और आचार्य तो यह कहते हैं कि अनेक पापग्रहों के योग दृष्टि आदि से आक्रांत = युक्त राशि की दशा के नवांश वर्ष में मनुष्य की मृत्यु होती है॥१०१॥ (पूर्व में नवांश दशा के लिये कहा, अब चरपर्यादिशा के सम्बन्ध में कहते हैं) इसी प्रकार चरदशा में पापयोगयुक्त द्वारेश की राशिदशा के अंशान्तरदशा में मृत्यु होती है॥१०२॥ चरदशा में द्वारराशि तथा बाह्यराशि में विचार करना। और इसी प्रकार 'त्रिकोणदशा' में तथा 'उत्तरदशा' में भी विचार करके निधनयोग कहना॥१०३॥ अथवा 'दीर्घ, मध्य, अल्प' आदि योगों की आयु के वर्षो की समाप्ति में मृत्यु आश्रयीभूत बाह्यराशि के पापादियोग से बलवान् होने पर वहीं निधन कहना॥१०४॥ दीर्घ आयु आदि के वर्ष खंड में पापयोगयुक्त बाह्य राशि की दशा का कुछ भाग ही खंडान्तर्गत हो, पूरी दशा खंड में समाप्त न होती हो तो, बाह्य राशि की त्रिकोण ५।९ वीं राशि की दशा में मृत्यु कहना॥१०५॥ अब हम मृत्युयोग के अपवाद (बाधक योग) कहते हैं। द्वारेश ग्रह शुभयुक्त, शुभदृष्ट तथा शुभयोग कारक हो, वह द्वारेश न द्वारराशि में हो और न बाह्य राशि में हो तो द्वारेशग्रहस्थित राशि के द्वारेश दृष्ट नवांश में जातक का निधन होता है॥ अब हम नवांश में शुभग्रहयोग न होने पर भी 'अपवाद' कहते हैं॥१०८॥ जिस जातक का लग्नेश उच्च का स्थित हो उसके द्वारराशि द्वादेश तथा बाह्य राशि में पाप योग हो और शुभदृष्टि या योग न हो तो भी 'नवांश' में ही मृत्यु हो॥ यह प्राप्त होता है, किन्तु मृत्यु नहीं होती, प्रत्युत आयु में ९ वर्ष की वृद्धि होती है॥११०॥

द्वारबाह्यनवांशे च दशान्तमपि च द्विज ॥ पुनर्नवाब्दपर्यन्तं द्वारबाह्यं करोत्यपि ॥१११॥ द्वितीयराशिसंबधे नवाब्दे ग्रहरीतितः ॥ समागते तदाप्यायुर्वृद्धिर्भवति निश्चितम् ॥११२॥

वृद्धानंतर्यदा मृत्युस्तस्य विश्वात्मकोऽच्युतः ।। सर्वात्मना मृत्युयोगः शुभदृग्योगसंभवः ।।११३।। लयेशे तुंगराशिस्थे इत्याकांक्षा द्विजोत्तम ।। तस्या विनिर्णयं कर्तुं स्पष्टमुक्तेन भाषितम् ।।११४।। यस्य वृद्धिकरे विप्र पदेशस्य दशांतरे ।। निधनं च भवेत्तस्य निर्विशंकं वदाम्यहम् ।।११५।। पदेशस्य नवांशे वा लग्नाष्टपत्रिकोणगे ।। दशायां निधनं तस्य यस्य वृद्धिपदं भवेत् ।।११६।। यदि वृद्धाब्दमादाय निधनं न भवेत्कदा ।। दशात्रयाणामंते तु मृत्युर्भवति निश्चितम् ।।११७।। पदेशस्य दशा तत्र लग्नारूढे पदस्य च ।। रंध्रारूढे तदा ग्राह्यं तदीयस्य यदा द्विज ।।११८।। तदाश्रये राशिदशा ग्राह्यमाणा द्विजोत्तम ।। अत्र केवलखेटानां दशायां चिंतयेत्सुधीः ।।११९।। यद्वा पदेशस्य दशा निसर्गबललक्षणा ।। विंशोत्तरी दशा रीत्या दशा चाष्टोत्तरी मता ।।१२०।।

द्वारराशि की दशा, द्वारनवांश की दशा एवं बाह्यराशि की दशा को लाघ कर बाह्य राशिदशा से भी आगे ९ वर्ष तक और आयुवृद्धि होती है।।१११।। द्वारबालराशिदशा से आगे दूसरी राशि की दशा में भी पापसम्वन्ध होने पर भी आयु की निश्चय वृद्धि होती है।।११२।। आयुवृद्धि के पश्चात् शुभदृष्टि तथा योग से कष्टरहित अवस्था में मृत्यु होती है।। अष्टमेश यदि उच्चराशि में हो तो क्या होना चाहिये, इस आकांक्षा के विषय पहिले कहे जा चुके हैं, उसी से समझना चाहिये।। जिस जातक के आयुवृद्धि का योग हो, उसकी आरूढ लग्न के स्वामी की दशा या अन्तर में मृत्यु निश्चित्तरूपसे जाने। अथवा जिस जातक के वृद्धियोग हो उसकी मृत्यु आरूढ लग्नाधीश के नवांश में या लग्न से अष्टमेश की त्रिकोण राशि के स्वामी की दशा में मृत्यु होती है।। यदि कदाचित् बढ़े हुए ९ वर्ष के बाद भी मृत्यु न हो तो, आरूढेश, उपपदेश और अष्टमभावारूढ इन तीनों का ग्रहण करना।।११७।। (अर्थात् आयुवृद्धि योग बलवान् हो तो द्वारराशिदशा तथा बाह्यराशिदशा, अष्टमेश दशा, इनके बाद आनेवाली दशाओं में मृत्यु हो और समय निर्देश के लिये आरूढ़ेश की दशा, या उपपदेश की दशा या अन्तरदशा का निर्देश करना) यही बातें कहते हैं कि—लग्न से आरूढ स्थान के स्वामी की या उपपद राशि की स्वामी की या अष्टमभाव के आरूढ के स्वामी की दशा मारक निर्देश में ग्रहण करना चाहिये।।११८।। आयुवृद्धि योग में ग्रहण की हुई राशि के (बाध्य होने पर) केवल ग्रहों की दशा का उपयोग करना।।११९।। अथवा केवल आरूढ लग्नाधीश की दशा से मारक निश्चय करे। ग्रह दशा ग्रहण करने में यद्यपि अनेक दशा हैं किन्तु विंशोत्तरी दशा अथवा अष्टोतरी दशा ग्रहण करना चाहिये।।१२०।।

तदा पददशायां च निधनं गणिताग्रणीः ।। अक्षपदं तदीशस्य पदशौचं तयोर्दशा ।।१२१।। नाथांतेन समारीत्या राशिखेटद्वयोर्दशा । निवर्तिता दशा विप्र तदैतेषु विचिंतयेत् ।।१२२।। चरपर्यादशारीत्या पदेशस्य दशांतरे ।। अवश्यं निधनं तस्य निर्विशंकं द्विजोत्तम ।।१२३।। तथापदेशस्य च तत्त्रिकोणं चाथ भोद्विज ।। नवांशकदशारीत्या समानीय दशांतरे ।।१२४।। पुनः पदत्रिकोणाभ्यामनंतरगते द्विज ।। दशायां निधनं वाच्यं जातकस्य न संशयः ।।१२५।। नवांशकदशा प्रोक्ता द्विधा ग्राह्या द्विजोत्तम ।। ताभ्यां लग्नाष्टमाधीशा अथ वा राशिकोणपाः

॥ १२६॥ दशायां निधनं वाच्यं त्रिशूलिभाषितं पुरा ॥ इत्येषां निधनं योगादवश्यं चिंतयेद्द्विज ॥१२७॥

इति श्रीबृहत्पाराशरहोराशास्त्रे पूर्वखंडे आयुर्दायकथनं नाम विंशोऽध्यायः ॥२०॥

गणितज्ञ को चाहिये कि–आरूढ की दशा में या आरूढ राशि के स्वामी के 'अक्षपद' त्रिकोणेश की दशा में अथवा 'पदशौच' अष्टमेश (पद=आरूढ का शौच=शुद्धि=शोधन का स्थान=अष्टमभाव) की दशा में निधन कहना॥१२१॥ "नाथान्तेन समा ज्ञेया०' आदि रीति से जो चरदशा कहीं जायेगी, उस रीति से दशास्पष्ट करके बाद उसमें मरण का विचार करे॥ चरपर्यादशा की रीति से स्पष्ट की हुई दशा में आरूढ़ेश की अन्तरदशा में निश्चय मरण कहना ॥१२३॥ अथवा नवांशदशा स्पष्ट करके आरूढ की दशा या उससे त्रिकोण ५।९ की दशा या अंतर में अथवा आरूढ के त्रिकोण की दशा में ही निःसंशय मरण कहना ॥ नवांश दशा दोनों रीति से (कही जायेगी) ग्रहण करना। उन दशाओं लग्नेश और अष्टमेश से या त्रिकोणाधीश की दशा मे निधन (मृत्यु) कहना, ऐसा भगवान् शंकर का कहना है। इन मारकों का हे मैत्रेय ! अवश्य विचार करना चाहिये ॥ श्लोक १ से १२७ ॥

इति श्रीबृहत्पाराशरहोराशास्त्रे पूर्वखंडे भावप्रकाशिकायां आयुर्दायकथनं
नाम विंशोऽध्यायः ॥२०॥

पराशर उवाच–अथातः संप्रवक्ष्यामि प्रकारं वै द्वितीयकम् ॥ यस्य विज्ञानमात्रेण आयुर्दासूचको भवेत् ॥१॥ विलग्नात्मदशा विप्र अष्टमेशात्तयोर्द्वयोः ॥ मध्ये चैको बली चिंत्यः सोपि ह्यायुः प्रदो ग्रहः ॥२॥ केंद्रादित्रिकयोगेन दीर्घमध्याल्पतायुषि॥ सा विज्ञेया महाप्राज्ञ तवाग्रे प्रवदाम्यहम् ॥३॥ केंद्रे स्थितेऽपि दीर्घायुर्मध्यायुः पणफरे स्थिते ॥ आपोक्लिमे स्थिते स्वल्पमायुर्भवति निश्चितम् ॥४॥

पराशरजी ने कहा–अब हम दूसरा प्रकार कहते हैं, जिसके ज्ञान से आयु की सूचना होती है॥१॥ हे मैत्रेय! लग्नेश तथा अष्टमेश से आयु का विचार करे, इन दोनों में जो ग्रह बलवान् होता है, वह आयु का देनेवाला है॥ उस ग्रह के केन्द्रादि स्थान में होने से दीर्घ, मध्य, अल्प आयु समझना॥ सो हम स्पष्ट (खुलासा) कहते हैं। उस बली ग्रह के केन्द्र स्थान १।४।७।१०में होने से 'दीर्घायु' पणकर २।५।८।११ में होने से 'मध्यायु' और आपोक्लिम ३।६।९।१२ में होने से 'अल्पायु होती है॥१-४॥

कर्कलग्ने तु कुंडल्यां तदैवं चिंतयेद्द्विज ॥ लग्ने वा मदने वापि वाष्टमेशे तयोर्द्वयोः ॥५॥ ताभ्यां मध्ये बली चैकः स्थितः केंद्रादिपूर्ववत् ॥ दीर्घमध्याल्पभेदेन आयुर्निश्चित्य पूर्ववत् ॥६॥ पूर्ववद्द्वंद्वखंडस्य त्रैराशिकक्रमेण च ॥ आयुर्दाये कृते स्पष्टं प्रवक्ष्यामि इदं वचः ॥७॥ स्वस्मिन्समबले खेटेऽनधिके च बले द्विज ॥ न वीर्यतायां दीर्घादि विपरीतायुषी भवेत् ॥८॥

दीर्घमध्ये च वाल्पं च ह्यल्पं वा किंचिदेव च ।। विपरीतं योगभंगे सत्यमेव न संशयः ।।९।। सप्तमात्सप्तमे विप्र नवमे कारके स्थिते ।। विपरीतं च दीर्घादि योगायुर्न तु संशयः ।।१०।। अथाग्रेऽनेकभेदानामायुषो निर्णयः कृतः ।। दीर्घादित्रयरूपेण इत्युक्तं ब्रह्मणोदितम् ।।११।। जन्मलग्नाष्टमेशौ द्वौ चिंतयेज्जन्मपत्रके ।। पंचमैकादशे विप्र दीर्घायुश्च प्रजायते ।।१२।। लाभे तृतीयगे मध्य आयुर्दायं विचिन्तयेत् ।। लाभे वित्ते त्रिकोणे वा ह्यायुरल्पं भवेद्द्विज ।।१३।। गतायुर्लाभगौ द्वौ च जातकोपि न जीवति ।। एवं समस्तजन्तूनामीदृग्योग विचिंतयेत् ।।१४।।

कर्क लग्न की कुंडली में भिन्नता है, सो यह है—लग्नेश, सप्तमेश में से जो बलवान् हो वह और अष्टमेश इनमें से जो एक ग्रह बली हो उसके केन्द्र, पणपर, आपोक्लिम स्थानों में होने से क्रमशः दीर्घ, मध्य और अल्प आयु होती है।। और दीर्घादि आयु प्राप्त होने पर पूर्वके हीन खण्ड को छोड़कर प्राप्त खंड को ग्रह की वर्तमान राशि से गुणा करके आगामी खण्ड का भाग देने से जो वर्षादि अंक प्राप्त हों, उनको पूर्व त्यक्त खण्ड में योग करने से स्पष्ट आयु के वर्षादि जानना ।। इस स्पष्ट गणित में इतना विशेष है कि—ग्रह यदि अपनी राशि में समबली हो और दूसरा ग्रह अधिक बली न हो तो ग्रह का बल समान होने के कारण दीर्घ आदि जो आयु प्राप्त हो वही रहेगी, विपरीत (भिन्न) आयु नहीं होगी।। और यदि लग्नेशाष्टमेश हीन बल हों तो दीर्घादि आयु में कक्षा ह्रास होता है, इसमें सन्देह नहीं है।।९।। और आत्म कारक सप्तम से सप्तम (लग्न) या नवमभाव में हो तो प्राप्त योगायु विपरीत जाने, इसमें संशय नहीं है।।१०।। अब आगे आयु के अनेक भेदों का निर्णय किया जाता है। जिसमें दीर्घ, मध्य, अल्परूप से विचार किया गया है।।११।। लग्नेश और अष्टमेश का विचार करना, यदि ये दोनों पंचम और एकादश भाव में हो तो दीर्घायु होती है।।१२।। और वही लग्नेशाष्टमेश लाभ (११) स्थान या तृतीय भाव में हों तो मध्यायु जानना। तथा दूसरे या लाभ ११ अथवा त्रिकोण ५।९ में हो तो अल्पायु होती है।।१३।। और दोनों ग्रह यदि लाभभाव में हो तो जातक गतायु (आयुहीन) होता है, और वह बालक अधिक दिन नहीं जी सकता है। इस प्रकार से सबके लिए आयु योग का विचार करना चाहिए।।१४।।

अथैवं भिन्नमार्गेण आयुर्दायं निरूपितम् ।। तनुतन्वीशतद्राशिपत्युर्भानां त्रिकोणके ।।१५।। अल्पमध्यचिरायुष्ये रूपवर्षप्रमाणतः ।। अष्टमेशादियोगेन निर्याणं कारयेद् ग्रहः ।।१६।। लग्नेत्रिकोणगेल्पायुर्लग्नेशस्य त्रिकोणगे ।। मध्यमायुर्विजानीयान्निर्विशंकं द्विजोत्तम ।।१७।। लग्नेशात्स्वीयराशीशे त्रिकोणे रंध्रनायके ।। दीर्घायुषि प्रदातव्यं पुरा शंभुप्रणोदितम् ।।१८।।

अब और एक रीति से आयु का निरूपण है। लग्न की राशि, लग्नेश की राशि, लग्नेशस्थित राशि के स्वामी की राशि इन तीन राशियों के त्रिकोण में अष्टमेश के होने से अल्प, मध्य, दीर्घ आयु अपने वर्षों के प्रमाणानुसार जाने। और अष्टमेश आदि (षष्ठेश, द्वादशेश) के योग से प्राप्त आयु वर्ष में ह्रास होता है।। लग्न से त्रिकोण में अष्टमेश हो तो अल्प आयु और लग्नेश

से त्रिकोण में अष्टमेश हो तो मध्यायु और लग्नेशराशीश से त्रिकोण में अष्टमेश हो तो दीर्घायु जानो, ऐसा महादेवजी का वचन है।।१८।।

तेषां मध्ये त्रिकोणानां विभागे च नवं कथम् ।। स्वल्पमध्य चिरायुष्यं द्वादशाब्दाधिकेन च ।।१९।। अल्पायुषस्त्रयो भेदास्त्रयस्थाने पृथक् पृथक् ।। विलग्नेशाष्टमेशादि लग्नस्थेपि द्विजोत्तम ।।२०।। द्वादशाष्ट भवेदायुश्चतुर्विंशतिपंचमे ।। नवमे च षट्त्रिंशाब्दमित्येवं न तु संशयः ।।२१।। लग्नेशराशिकोणेषु लग्नरंध्राधिपादि चेत् ।। तत्र स्थितेष्टवेदाब्दे षष्टचब्दं पंचमे स्थिते ।।२२।। नवमस्थे द्विसप्ताब्दं तन्नवकमिदं मतम् ।। लग्नेशाश्रितराशीशे त्रिकोणेषु स्थिते द्विज ।।२३।। लग्नेशादष्टमेशादि त्रिभागं दीर्घमायुषि ।। लग्नस्थे चतुरशीतिः पंचमे षट्नवांशके ।।२४।। नवमेष्टोत्तरशतं वर्णेष्वायुर्विनिर्णयः।। द्वादशाब्दानुपाते च ह्येतच्छंभुप्रणोदितम् ।।२५।। तुला मेषविलग्नेषु प्रायः शुक्रो भवेद्बली ।। स दशादौ स्वरूपं स्यादंते च स्यात्स्वभावतः ।।२६।।

इन त्रिकोणभावों में प्रत्येक भाव के फलांक में क्या नवीनता है, सो कहते हैं। अल्पायु में १२ वर्ष की इसी प्रकार मध्यायु और दीर्घायु में ग्रहयोग बल से १२–१२ वर्षों की न्यूनाधिकता होती है, सो दिखाते हैं। अल्पायु के ३ भेद हैं, वे तीन स्थानों में अलग अलग समझना ।। लग्नेश और अष्टमेश ये दोनों लग्न में हों तो १२ या ८ वर्ष की आयु जानना। और पंचम में हों तो २४ वर्ष और नवमभाव में हों तो ३६ वर्ष की आयु जानना।।२१।। मध्यायु के तीन भेद–लग्नेशराशि से त्रिकोण में, लग्नेश और रंध्रेश हों तो ४८ वर्ष, और पंचमभाव में हों तो ६० वर्ष और नवमभाव में हो तो ७२ वर्ष की आयु होती है।। इसी प्रकार दीर्घायु में लग्नेशस्थितराशीश यदि लग्नमें हो तो ८४ वर्ष और पंचमभाव में हो तो ९६ वे वर्ष, और नवमभाव में हो तो १०८ वर्ष की आयु होती है।। इस प्रकार १२–१२ वर्ष के अनुपात से भगवान् शंकर ने कहा है।।२५।। अब आठ श्लोकों में मेष, तुला लग्न के विषय में कुछ विशेष कथन करते हैं।। तुला–मेष लग्नों में (शुक्र लग्नेश तथा केन्द्रेश होने से प्रायः शुक्र बलवान् होता है। वह शुक्र दशारंभ अपने शुक्रग्रह रूप से और दशा के अन्त में भावरूप से बलवान् है।।२६।।

पूर्वार्द्धं चस्पष्टदशा मेषस्यापि तुलस्य च ।। चरपर्यासमानीते अब्दे चैकाब्दयोजिते ।।२७।। द्वादशाब्दाधिके कृत्वा पूर्वमायुः समागते ।। नाथांताब्दसमूहे च मेलनीयं द्विजोत्तम ।।२८।। तत्र चायं विभागश्च तवाग्रे कथितो द्विज ।। लग्नेशादौ समारंभे प्रथमांशादिसंख्यया ।।२९।। योजयेद्द्वादशाब्दं च ह्यायुः साधनहेतवे ।। अंते त्रिंशत्तमांशांते लग्ने स्पष्टे सति द्विज ।।३०।। स्वभावतद्भवाच्छून्ये द्वादशाब्दं तु योजयेत् ।। मध्ये तथानुपाते च विधाय च यदागतम् ।।३१।। तद्योजनं तु कर्तव्यं निर्विशंकं स्वभावतः ।। इत्येवं नाथांताब्दा ये स्वभावजा भवंति च ।।३२।। नाधिके चैव नाब्देन शुक्रो लयस्थितो यदि ।। भानुतष्टे च शून्याप्ते न युक्तं द्वादशात्मकः ।।३३।। एकोष्टमेशः स्वोच्चस्थे पर्यायार्धं प्रयच्छति ।। नात्रस्थो नाशयेत्पर्यायार्धमायुषिनिश्चितम् ।।३४।। नीचरन्ध्रेशसंयुक्ताः पर्यायार्द्धं पृथक्पृथक् ।। ग्रहा विनाशयंत्येव निर्णीते परमायुषि ।।३५।। उच्चरंध्रेशसंयुक्ते ग्रहैः प्रत्येकमुन्नयेत् ।। एकं हि मध्यपर्यायं परमायुर्विनिश्चितम् ।।३६।। रविः कुजः शनी राहुर्मरणे बलिनः क्रमात् ।। विशेषदुर्बलं हित्वा

गृह्णीयाद्बलिनं सुधीः ॥३७॥

मेषराशि या तुला राशि की दशा के पूर्वार्द्ध में (चरपर्यादशाके मान में) १ वर्ष योग करना।। और इसी प्रकार गणितागत उत्तरार्द्ध में १२ वर्ष योग करना। इस प्रकार नाथान्त वर्ष संख्या में १२ वर्ष मिलाना।। इस रीति से यह विभाग तुम्हारे सामने कहा। लग्नेश राशि की दशा में प्रथम अंश में १२ वर्ष योग करना और स्पष्ट लग्न की दशा में ३० वें अंश में १२ वर्ष का योग करना तब मध्य के अंश जितने वर्तमान हों उतने अंशों पर अनुपात (त्रैराशिक गणितद्वारा, अर्थात् यदि लग्नेशराशि की दशा के आदि में १२ वर्ष मिलते हैं और आगे प्रति अंश ४ मास २४ दिन कम होते जाते हैं तो इष्ट अंश में कितने वर्ष मास दिनादि मिलेंगे। और इसी प्रकार लग्न की दशा में प्रति अंश ४।२४ आरंभ से बढ़ते जाँयगे। और शून्य अंश होगा तो उपर्युक्त शास्त्र से १ वर्ष तो बढ़ेगा ही।) से स्पष्ट करके जितने वर्ष मास दिनादि प्राप्त हों उतने भावराशि की दशा में युक्त करना (जोड़ना) इस प्रकार से युक्त करने पर भावराशि का दशावर्ष–परिमाण स्पष्ट होगा (यह विशेष नियम मेष, तुला के विषय में ही है) और शुक्र यदि अष्टमभाव में स्थित हो तो न कम होगें, न अधिक होगें। और गणितागत वर्ष संख्या योग करने पर यदि १२ से भाग देने पर शून्य प्राप्त हो तो भी १२ वर्ष नहीं जोड़े जाते हैं।। (अब अन्य भेद कहते हैं) केवल एक अष्टमेश उच्चराशि में हो तो राशि दशा में दशामान का आधा और बढ़ाता है और उच्चस्थ न हो तो आई हुई आयु में से आधा कम करता है।।३४।। तथा अन्य ग्रह भी यदि नीच राशिस्थ अष्टमेश से युक्त हों तो अपनी २ भावराशि दशाओं में आधा २ भाग घटाते हैं।। उच्चराशि स्थित अष्टमेश से युक्त हों तो अपने २ भाव की दशा में आधा २ भाग बढ़ाते हैं।। उपर्युक्त कारण रहित भाव की समागत निर्णीत आयु एकरूप ही रहती है।।३६।। सूर्य, मंगल, शनि, राहु ये चार ग्रह मृत्यु के विषय में क्रमशः उत्तरोत्तर अधिक बलवान् हैं। इनमें विशेष दुर्वल ग्रह को छोड़कर बाकी ग्रहों को लेना।।३७।।

केतुश्च शनिवन्मृत्युनाथनेमित्वमादिशेत् ॥ शनिना राहुणा वापि युक्ते सौम्ये रवीक्षिते ॥ पर्यायमेकं तन्मध्यएकराशौ मृतिं वदेत् ॥३८॥ तयोस्तु शुभयोगेन तद्राशौ मृतिमादिशेत् ॥३९॥ भोगराशौ दुर्बले वा प्रबले वा ग्रहे स्थिते ॥ तथापि निर्दिशेत्काले मरणं तन्न संशयः ॥४०॥ केतौ चैवावसानस्ते नाथे वाऽशुभवीक्षिते ॥ केतोर्दशान्ते मृत्युः स्याच्छुभदृष्टेन किं च न ॥४१॥ तन्वधीशाष्टमेशाभ्यां योगेनायुः कृते द्विज ॥ अष्टमेशात्तदुच्चस्थे चर्पर्याब्दप्रमाणके ॥४२॥ अर्धाधिकाब्दं दत्त्वैव योजयेत्पूर्वमायुषि ॥ एवं नाथांतरीत्या च चरपर्यातिरिक्तकः ॥४३॥ मर्यादयापि यद्यायुरष्टमेशेन दीयते ॥ तत्सर्वमर्धाधिक्यं च विधेयं द्विजसत्तम ॥४४॥ एवं रंध्रपतिर्विप्र नीचराशिगतोपि च ॥ दीयमानायुरर्द्धं चेन्नाशयेत्तु न संशयः ॥४५॥

और केतु भी शनि के समान ही अष्टमेश का फल देने में समान है। सौम्यग्रह यदि शनि या राहु से युक्त और सूर्य से दृष्ट हो तो एक ही पर्याय की आयु में मृत्यु होती है।।३८।। शनि राहु से शुभग्रह का योग हो तो उसी राशि की दशा में मृत्यु होती है।।३९।। दशाप्रदराशि में दुर्बल या सबल कैसा भी ग्रह हो (किन्तु पूर्वोक्त ग्रहों का योग हो तो) तो भी उस समय (पापयुक्त

दशाकाल में मरण में संशय नहीं है।) केतु की दशा यदि अन्त में (योग समागत, दीर्घ, मध्य, अल्प आदि आयु में) और राशिस्वामी अशुभ ग्रह से दृष्ट हो तो केतु की दशा में ही दशा के अन्तभाग में मृत्यु होती है। यदि शुभग्रह की दृष्टि हो तो नहीं होती।।४०।। लग्नेश और अष्टमेश से पूर्वोक्त योगानुसार आयु स्पष्ट होने पर भी अष्टमेश के उच्चस्थ होने पर पूर्व आई हुई आयु में अर्द्ध भाग देकर ही सिद्ध समझना। यहां इस प्रकरण में 'नाथान्त' रीति से आई हुई चरपर्या दशा का ही ग्रहण है।।४३।। अष्टमेश अपनी मर्यादा (उच्च राशिस्थिति) से जो अर्द्धभाग आयु का देता है, वह सब समागत आयु में ही अधिक कर देना चाहिये।।४४।। इसी प्रकार अष्टमेश नीच राशिगत हो तो अन्यग्रहों से दी हुई संयुक्त आयु का अर्द्धभाग निश्चय कम कर देता है।।४५।।

एवं रंध्रपतिर्विप्र नीचखेटेन संयुतः ।। तद्ग्रहेण दीयमानमायुरर्द्धं विनश्यति ।।४६।। एवं रंध्रपतिर्विप्र तुंगखेटेन संयुतः ।। तद्ग्रहेण दीयमानमायुरर्द्धं च वर्द्धति ।।४७।। एवमुक्तं च विप्रेन्द्र परमायुर्विनिश्चितम् ।। लग्नेश्वराष्टमेशाभ्यां योगायुर्दायमागते ।।४८।। तेषु संस्कारमाज्ञेयमिदं पूर्वोक्तसंकथाम् ।। लग्नेशादायुरित्येवं तत्तद्योगकलात्मकम् ।।४९।। संयुक्ताश्च ग्रहा उच्चनीचादिगुणदोषतः ।। वृद्धिर्ह्रासावुक्तरीत्या कार्या वै संप्रदायतः ।।५०।। द्वित्र्यादिमृत्युयोगश्च प्रबलः पूर्वभाषितः ।। नैसर्गिकोपि वीर्याय तस्य पाके मृतिर्भवेत् ।।५१।। ख्याररराहुपंगूनां चतुःखेटांतरे बली ।। तस्य योगानुसारेण जातकस्य मृतिं वदेत् ।।५२।। अष्टमेशेन संयुक्ताःशनी राहुःकुजो रविः ।। न वीक्ष्यंते ग्रहैर्वाथ तस्य मृत्युं विनिर्दिशेत्।।५३।। एषां मध्येषु प्रबला सा तत्स्वामिकराशिगे ।। पाके मृत्युं विजानीयान्निर्विशंकं द्विजोत्तम ।।५४।।

अर्थात् नीचग्रह से युक्त अष्टमेश अन्यग्रह से प्राप्त आयु का भी अर्द्धभाग नष्ट कर देता है।।४७।। इसी प्रकार अष्टमेश यदि उच्चग्रह से युक्त हो तो उस ग्रह से दी हुई आयु में और अर्द्धभाग बढ़ाता है।।४८।। हे विप्रेन्द्र ! निश्चित परमायु लग्नेश और अष्टमेश के गुण दोष से जो संस्कार युक्त होती है उसका निर्णय कहा।। लग्नेश, अष्टमेश से ज़ो आयु स्पष्ट होती है, उसमें ह्रास वृद्धि के नियम कहे गये।।४९।। उच्च नीच आदि गुणदोष से युक्त ग्रह आयु में वृद्धि तथा ह्रास करते हैं। यह संप्रदायरीति है।।५०।। (लग्नेश तथा अष्टमेश का विचार समाप्त) दो तीन प्रकार के तथा एक एवं दो आदि ग्रहों से होनेवाले प्रबल मृत्युयोग अब तक कहे गये इन योगों में नैसर्गिक बल से युक्त भी योग अपनी दशा में मृत्यु के लिये पर्याप्ति है।।५१।। सूर्य, मंगल, शनि, राहु, इन चार ग्रहों में जो ग्रह बलवान् हो उसके योगानुसार जातक की मृत्यु कहना।।५२।। जिस जातक के जन्म लग्न में उपर्युक्त ग्रह अष्टमेश से युक्त हों और कोई शुभग्रह नहीं देखता हो तो उसकी मृत्यु कहना।।५३।। इन ग्रहों में जो ग्रह बलवान् हो उसकी राशि की दशा में जातक की मृत्यु निःशंक रूप से जानना ।।५४।।

एतेषां चतुःखेटानां मध्ये चैको बलीक्वचित् ।। तस्य राशिदशाकाले मृतिस्थानं विनिर्दिशेत् ।।५५।। मृत्युस्थानाभिभूताग्यां सिद्धायां च महादशा ।। तत्तस्यापि क्रमेणैव तदनन्तर्दशाप्रदा

।।५६।। राशिषु मारकत्वेन बलवदागमेपि च ।। शूलाद्यधिष्ठातृगृहदशांतरगते मृतिः ।।५७।। शुभग्रहेण संबंधे शनिराह्वोस्तयोरपि ।। तत्तत्स्वामिदशाकाले मरणं च विनिर्दिशेत् ।।५८।। तदाश्रयाद्राशिपाके मृत्युर्भवति निश्चितम् ।। निर्विशंकं महाप्राज्ञ पुरा शंभुप्रणोदितम् ।।५९।। सुखदुःखादि संब्रूयात्पाकराशौ विचिंतयेत् ।। भोगांतरागता तत्तु तत्तद्वीर्यानुसारतः ।।६०।। सबलायां सुखं ब्रूयाद्दुर्बला दुःखदायिका ।। वैषम्येन फलं वाच्यं तथा मरणमेव च ।।६१।। द्वादशे दशमे वापि संस्थिते पुच्छनायके ।। पापदृष्टे दशाप्राप्ते तदंतरगते मृतिः ।।६२।। द्वादशे दशमे केतुःशुभग्रहनिरीक्षितः ।। नायं योगो महाप्राज्ञ न कष्टं न तु मृत्युकृत् ।।६३।।

इन चार ग्रहों में से एक भी बलवान् हो तो उसकी दशा में मृत्यु स्थान का निर्देश करना।। जो महादशा मृत्युस्थान नाम से निर्दिष्ट हो वह भी क्रम से ही अपने अन्तर में मारक होती है।।५६।। राशिदशा में बलवान् मारक के सम्बन्ध होने पर भी रुद्र, शूल, संज्ञक दशा के अन्तर्दशा में ही मृत्यु होती है।। शनि, राहु का शुभग्रह से सम्बन्ध होने पर उस ग्रह की राशि के दशाकाल में ही मृत्यु का निर्देश करे।। उस ग्रह के सम्बन्ध से उसकी राशि की दशा में निश्चित् मृत्यु होती है।। ऐसा प्रथम भगवान् ने कहा है।।५९।। राशि के बलाबल के अनुसार राशि की महादशा के अन्तर में सुख, दुःख आदि कहना चाहिये।। यदि राशि बलवान् हो तो सुख और दुर्बल हो तो दुःख कहना। और अति पापयोग आदि वैषम्य हो तो मृत्यु कहना। द्वादश या दशमभाव में केतु हो और पापग्रहदृष्ट हो तो उसके अन्तर में मृत्यु होती है।। तथा १२।१० भाव में केतु शुभग्रह दृष्ट हो तो यह मारक नहीं होता। न रोग न मृत्यु होती है।।

प्राणिनीत्युक्तं विप्रेन्द्र प्राणानयनमुच्यते ।। राश्यधीनं बलं ज्ञेयं तदुक्तं कथ्यतेऽधुना ।।६४।। अग्रहात्सग्रहो ज्यायान्सग्रहे त्वधिकग्रहः ।। साम्ये चरस्थिरद्वंद्वाः क्रमात्स्युर्बलशालिनः ।।६५।। अधुना संप्रवक्ष्यामि मध्यायुर्योगनिश्चितम् ।। मारकांतरतो विप्र तवाग्रे कथयाम्यहम् ।।६६।। विलग्नात्मदशा वा चेदुभयोरष्टमेशयोः ।। संस्थितेऽन्यतरे विप्र मध्यायुर्योग उच्यते ।।६७।। अस्मिन्योगे स्थिते सैव दीर्घस्य मध्यपादके ।। बालस्य मध्यता पादे केचिदिति विवेचनम् ।।६८।। अथ दीर्घादियोगेषु त्रिषु च द्विजसत्तम ।। कक्षाह्रासकृते योगान्दर्शयामि तवाग्रतः ।।६९।। लग्नसप्तमयोर्विप्र द्विद्वादशकयोरपि ।। षष्ठरंध्राधिपस्यापि जनुर्लग्ने विचिन्तयेत् ।।७०।। पापक्रांते पापयोगे पापमध्यत्वमागते ।। कक्षाह्रासौ विजानीयान्निर्विशंकं द्विजोत्तम ।।७१।।

पहिले जो हमने बलवती दशाका कथन किया था, वह बलवत्ता कहते हैं। राशिके ही आधीन बल है, सो कहते हैं।। ग्रहरहित राशि से ग्रहसहितराशि बलवान् है और सग्रह राशि से अधिक ग्रहवाली बलवती है। बल समान होने पर चर, स्थिर, द्विस्वभाव ये राशि उत्तरोत्तर बलशाली हैं।।६५।। लग्नेश अष्टमेश दोनों लग्न या अष्टमभाव में से किसी एक स्थान में हों तो मध्यायु योग कहा जाता है।। केचित्– कोई आचार्य ऐसा कहते हैं कि–दीर्घायु मध्यभाग तक बालक की आयु जानना।। दीर्घ, मध्यादि आयु के कक्षाह्रासकारी योग तुम्हारे सामने कहते हैं।।६९।। जन्म लग्न में लग्न, सप्तमभाव का तथा द्वितीय द्वादशभाव और षष्ठ अष्टमभाव का विचार करे।। ये भाव पापग्रहयुक्त दृष्ट या पापमध्यगत हों तो निश्चय ही कक्षा ह्रासकारी हैं।।७१।।

दीर्घस्य मध्यमा याता भवेदायूषि मध्यमे ।। अल्पादल्पं च विज्ञेयं कक्षाह्रासस्य लक्षणम् ।।७२।। कक्षाह्रासे यदाऽर्थोऽपि पूर्ववज्जायते ध्रुवम्।। अथैवं लग्नकुण्डल्यां पापयोगत्रिकोणगे ।।७३।। लग्नपंचमभाग्येषु पापयोगकृते द्विज ।। कक्षाह्रासो भवेद्विप्र निर्विशंकं विधेः सुत ।।७४।। अत्राऽस्मिन्कारके लग्ने चिन्तयेज्जनिलग्नवत् ।। कारकांशे द्यूनराशेः पापमध्यत्वमेव हि ।।७५।। एको योगः स विज्ञेय कक्षाह्रासं च पूर्ववत् ।। अथैककक्षाह्रासस्य चापवादं वदाम्यहम् ।।७६।। एकस्यकक्षाह्रासं च वित्तपे चान्यथा भवेत् ।। पूर्ववच्छुभयोगेन कक्षावृद्धिर्भविष्यति ।।७७।। जनुर्लग्ने कारके च चिन्तयेत्पूर्ववद्द्विज । लग्ने द्यूने धने रिष्फे षष्ठे रंध्रे स्थलत्रये ।।७८।। शुभखेटकृते योगे कक्षावृद्धिर्भवत्यपि ।। चिन्तयेत्पूर्ववद्विप्र त्रिकोणेषु स्थलद्वये ।।७९।। जनुर्लग्ने कारके च शुभयोगं करोति च ।। कक्षावृद्धिर्न संदेहो भविष्यति द्विजोत्तम ।।८०।। कारके च त्रिकोणस्थे नीचस्थाः पापखेचराः ।। कक्षाह्रासो महाप्राज्ञ द्वितयेन भविष्यति ।।८१।।

दीर्घायु का मध्यायु होना और मध्यायु का अल्पायु होना तथा अल्पायु का अत्यल्पायु होना कक्षाह्रास का लक्षण है।।७२।। कक्षाह्रास होने पर वर्ष प्रमाण भी पूर्व कहे अनुसार घट जाते हैं। अब कुण्डली में त्रिकोणस्थान में पापयोग का विचार करते हैं।। हे मैत्रेय! लग्न, पंचम और नवमभाव में पापग्रह योग होने पर कक्षाह्रास होता है।। इसी प्रकार से 'कारकलग्न' में भी जन्मलग्न के समान विचार करना होता है। कारकाश में सप्तमराशि यदि पापमध्य हो ।।७५।। तो यह एक योग हुआ और पूर्ववत् कक्षाह्रास होगा।। इस कक्षा ह्रास का अपवाद कहते हैं। एक योग द्वादशभाव कक्षा ह्रास का हो और धनेश शुभयोगी हो तो कक्षा वृद्धि होती है।।७७।। जन्मलग्न तथा कारक में प्रथम कथनानुसार विचार करे।। ऊपर तो १२।१।२ में तथा नीचे ६।७।८ भावों में दोनों जगह ३-३ स्थल में।।७८।। शुभग्रह युक्त दृष्ट या आक्रान्ता हों तो कक्षावृद्धि होगी। इसी प्रकार इन दोनों के त्रिकोण स्थल में भी देखना।।७९।। तथा ये दोनों शुभग्रह से योग करें तो निःसन्देह कक्षावृद्धि होती है।। कारक यदि नीच राशि के पापग्रहों से युक्त होकर त्रिकोणमें हो तो कक्षा ह्रास होता है।दो ग्रहोंसे यह योग जाने।।८१।।

कारकांशे त्रिकोणेषु शुभखेटे शुभस्थले ।। कक्षावृद्धिर्भवेत्तत्र न संदेहो द्विजोत्तम ।।८२।। कारके पापखेटाच्च चांतगे पापसंयुते ।। कक्षाह्रासो भवेत्तत्र प्रणीते द्विजसत्तम ।।८३।। कारके शुभसंयुक्ते स्वतुंगे शुभखेचराः ।। कक्षावृद्धिर्भवेत्तत्र निर्विशंकं द्विजोत्तम ।।८४।। पापकारक-गैर्ह्रासो वृद्धिर्वा कथिता द्विज ।। अथैव गुरुणा कक्षा ह्रासवृद्धिं वदाम्यहम् ।।८५।। वित्ते व्यये लग्नषष्ठे त्रिकोणे पापयोर्द्विज ।। कक्षाह्रासो भवेत्तत्र पूर्ववद्द्विजसत्तम ।।८६।। गुरौ नीचे ह्युतुंगे च संयुक्तेऽशुभखेचरैः ।। कक्षाह्रासो भवत्येव निर्विशंकं द्विजोत्तम ।।८७।। वित्तगे च गुरौ ज्ञेयं पूर्वद्योजनं द्विज ।।प्रागुक्तार्थकृतेयं च कक्षा सर्वा प्रकथ्यते ।।८८।। तथैव शुभयोगेषु चापवादंवदाम्यहम् ।। उक्तस्थाने शुभैर्योगे पूर्णेन्दुशुक्रयोर्द्विज ।।८९।।

कारकांश शुभग्रह का हो और शुभस्थान में हो या त्रिकोण में हो तो निःसन्देह कक्षावृद्धि होती है।।८४।। पापग्रह कारक हो और पापग्रह युक्त १२ भाव में हो तो कक्षा ह्रास होता है।। कारक शुभयुक्त हो, शुभग्रह उच्च का हो तो कक्षा वृद्धि होती है।।

पापकारक से ह्रास और शुभयोगों से कक्षा वृद्धि कही। अब बृहस्पति से होनेवाली कक्षा की ह्रास वृद्धि कही जाती है।।८५।। दो पापग्रह धन, व्यय तथा षष्ठ और त्रिकोण भाव में हो तो कक्षाह्रास होता है।।८६।। बृहस्पति नीचराशि में हो तथा पापग्रहों से युक्त हो तो कक्षाह्रास होता है।। गुरु धनस्थान में हो तो पूर्ववत् (प्रथम कथनानुसार) समझना। प्रागुक्त कक्षाविषयक आलोचना पुनः स्पष्ट करते हैं।। और शुभयोग तथा अपवाद भी कहेंगे। प्रथम कहे गये स्थानों में चन्द्रमा और शुक्र के साथ शुभग्रह का योग हो तो।।८९।।

योगप्रकरणे कक्षाह्रासाय न तु वृद्धये ।। तत्रैकराशिवृद्धिश्च भवत्येव न संशयः ।।९०।। पूर्ववच्चोक्तपापेषु शनिना योगकारकः ।। कक्षाह्रासश्च तत्रैव यत्रैको राशिह्रासकृत् ।।९१।। अधुनासंप्रवक्ष्यामि विशेषेण द्विजोत्तम ।। आलंब्य स्थिरदशायां योगान्निधनमेव च ।।९२।। शशिनन्दपावकाश्चेदित्युक्ता च दशा स्थिरा ।। चरे स्थिरं द्विः स्वभावेभानुनाराशिषु द्विज ।।९३।। त्रिभिस्त्रिभीराशिरेकं खण्डाश्चत्वार एव च ।। कस्मिन्खंडे च निधनं तस्य योगं विचिन्तयेत् ।।९४।। यस्मिन्खण्डे मृत्युयोगस्तस्मिन्खंडे विचिंतितम् ।। मरणं भवतीत्यर्थं निर्विशंकं वदाम्यहम् ।।९५।। योगत्रयमहं वक्ष्ये दीर्घमध्याल्पभेदतः ।। चतुःखंडेषु यत्रायुरागतं त्रि चिंतयेत् ।।९६।। दीर्घायुर्योगवत्तत्तु यस्मिन्खंडे समागतेः ।। तस्मिन्खंडे च निधनं भवत्यपि न संशयः ।।९७।। वक्ष्यमाणप्रकारेण मध्यमाल्पायुषि द्विज ।। निधनाश्रयखण्डेषु लक्षणाक्रांतया दशा ।।९८।।

योग प्रकरण में कहे अनुसार कक्षाह्रास होती है। और ऐसे स्थल में एकराशि की वृद्धि होती है।।९०।। पूर्व कहे अनुसार उक्त पापग्रहों में शनि से यदि योग कारक सम्बन्ध हो तो कक्षा ह्रास तथा एक राशि का ह्रास होता है।। हे मैत्रेय! अब हम स्थिरदशा में होनेवाले विशेष योग से मृत्यु का कथन करते हैं।।९२।। चर, स्थिर, द्विस्वभाव राशियों में जो स्थिर दशा नामक सूर्यदेवद्वारा कही गई है।। उसमें तीन २ राशियों के चार विभाग हैं।। उनमें किस विभाग में मृत्यु होगी, उसके योग का विचार कहता हूँ।।९४।। जिस खण्ड में मृत्यु योग है, उसका विचार किया गया है उससे मरण समय का ज्ञान होने के लिए पूर्णरूप से कहते हैं।। दीर्घ, मध्य, अल्प भेद से तीन योग कहेंगे, उसका प्रयोग चार विभाग में आई हुई दशा में विचार करना चाहिए।।९६।। दीर्घायु योग जिस खंड में समाप्त में प्राप्त हो, उस खंड में मृत्यु होती है, यह निश्चित है।।९७।। इस कहे जानेवाले प्रकार से जिस खण्ड में मध्य या अल्प आयु के लक्षण से युक्त जो खण्ड हो, उस खण्ड में उसकी मृत्यु होती है।।९८।।

तद्दशायां च निधनं भवत्येव द्विजोत्तम ।। कदाचिन्न मृतिस्तत्र क्लेशदुःखभयानि च।।९९।। भवंति तत्र संस्कार्यं पुनरित्थं वदाम्यहम् ।। पापद्वयमध्यगते राशिपाके मृतिर्भवेत्।।१००।। लग्नाद्वा कारकाद्विप्र पापाक्रांते त्रिकोणगे ।। द्वादशाष्टमराश्येवं पापाक्रांतं भवेदपि ।।१०१।। तद्दशायां च निधनं जातकस्य न संशयः ।। खण्डे स्थिरदशायां च चिंतनीयं प्रयत्नतः ।।१०२।। पापराशेस्त्रिकोणेषु द्वादशाष्टमराशिषु । पापाक्रांते तद्दशायां निधनं भवति ध्रुवम् ।।१०३।। शुभमध्ये मृतिर्नैव पापमध्ये मृतिर्भवेत् ।। भूयोपि निधनार्थाय राशिदोषं वदाम्यहम् ।।१०४।।

द्वादशाष्टमयोः पत्योर्दृष्टौ क्षीणेन्दुशुक्रयोः ॥ तद्दशायां च निधनं सत्यमेव न सशयः ॥१०५॥ क्षीणेंदोः केवलं दृष्टिः शुक्रदृष्टिश्च केवलम् ॥ दृष्टिमात्रेण निधनं स्थिरदशायां विचिन्तयेत् ॥१०६॥

उस दशा में मृत्यु होती है, पर यदि मृत्यु नहीं हो तो क्लेश, दुःख, भय आदि होगें।। अतः उस दशा के आगे कहे जानेवाला विचार करना। जो राशि दो पापग्रहों के मध्य में हो उसकी दशा में निधन होता है।। लग्न या कारक से त्रिकोण स्थान के पापाक्रान्त हो अथवा अष्टम द्वादश राशि पापाक्रान्त हो।। तो उस दशा में जातक का निधन होता है। इसमें कोई संशय नहीं है।।१००।। उन भावों में यदि शुभग्रहयोग हो तो मृत्यु नहीं होती। पापग्रह का योग होने पर ही मृत्यु होती है। मृत्युज्ञान के लिए और भी राशि में होनेवाले दोष कहते हैं।। अष्टमद्वादशभाव में जो राशि है उसके स्वामी को क्षीण चन्द्रमा और शुक्र देखते हों तो उस राशि की दशा में निधन होता है, इसमें कोई संशय नहीं है।।१०५।। केवल एक क्षीण चन्द्रमा की या केवल शुक्र की ही दृष्टि हो तो दृष्टिमात्र से ही मृत्यु होती है। स्थिरदशा में यह विचार करना चाहिए।।१०६।।

मृत्युस्थानेन या दृष्टिः पापध्यर्क्षं च पश्यति ॥ दशां तस्य समालोक्य व्योमषष्ठाधिपाद्द्विज ॥१०७॥ निरीक्षिते नवांशेषु द्वयोः स्थाने द्विजोत्तम ॥ तत्रैव निधनं ज्ञेयं भाषितं च तवाग्रके ॥१०८॥ पूर्वोक्तनिधनस्थाने महापाकं नरेष्वपि ॥ व्योमषष्ठाधिपो विप्र तयोरंशे निरीक्षिते ॥१०९॥ राशेरंतर्दशाकाले निधनं भवति ध्रुवम् ॥ अंतर्दशायां रूपे द्वे निधनस्थानमेव च ॥११०॥

इति श्रीबृहत्पाराशरहोराशास्त्रे पूर्वखण्डे आयुर्दायकथनं नाम एकविंशोऽध्यायः ॥२१॥

अष्टमभावेश द्वारा पापयोगयुक्त भाव पर दृष्टि हो तो उस राशि की दशा में, इसी प्रकार छठा तथा दशमभाव के स्वामी द्वारा भी दृष्टि होने से, केवल राशि ही नहीं, जिस नवांश पर दृष्टि हो उस राशि की दशा तथा दृष्टियुक्त नवांश वर्ष में मृत्यु होती है।।१११।। इसी प्रकार पूर्वोक्त अष्टमस्थान में षष्ठेश तथा दशमेश देखते हों या युक्त हों और अपने नवांश पर दृष्टि हो तो उस राशि की महादशा में और नवांशराशि के अन्तर वर्ष में निश्चय मृत्यु होती है।। अन्तरदशा के दो भाव हैं, एक षष्ठ तथा दूसरा अष्टम।। इनका विचार करके निधन का निर्देश करना चाहिए।।१-११३।।

इति श्री बृ० पा० हो० शा० पू० खं० भा० प्र० आयुदीपकथनं नाम
एकविंशोऽध्यायः ॥२१॥

ग्रहलक्षणम्

पराशर उवाच—अथातः संप्रवक्ष्यामि निधनार्थे विशेषतः ॥ प्रकारांतर्दशायास्तच्च रुद्राद्द्विजसत्तम ॥१॥ लग्नद्यूनाष्टमे शौचे तयोर्मध्ये च यो बली ॥ प्राणी रुद्रः स विज्ञेयः सूर्यादिखेचरोऽपि च ॥२॥ तयोर्मध्ये बली चिंत्यः शुभदृष्टेन संयुते ॥ दुर्बलः सोपि गौणाख्यो रुद्रग्रह इतीर्यते ॥३॥ तत्रैव प्राणिरुद्रस्य विशेषं गणयेत्फलम् ॥ प्रवक्ष्यामि तवाग्रे च भृणुष्व त्वं महामते ॥४॥ शुभैर्युक्ते शुभैर्दृष्टे शुभसंबंधकारकः : ॥ प्राणी रुद्रः स विज्ञेयस्तस्याधीनायुरेव च ॥५॥ रुद्रशूलान्तमायुः स्यात्त्रिकोणांते तथा पुनः ॥ लग्नांते पञ्चमान्ते च नवमांते त्रयस्थले ॥६॥ चिंतनीयं महाप्राज्ञ तत्तद्राशिदशांतरे ॥ अल्पमध्यं च दीर्घायुर्योगभेदा न संशयः ॥७॥ यत्राल्पायुः समायोगे त्रिकोणमध्यमान्तरे ॥ आयुस्तत्रैव विज्ञेयं तदग्रे च क्रमेण च ॥८॥ योगे मध्यायुषं प्राप्ते त्रिकोणे मध्यमातंगे ॥ आयुर्दायसमाप्तिश्च निर्विशंकं द्विजोत्तम ॥९॥ दीर्घायुर्योगसंलब्धे त्रिकोणे नवमातंगे ॥ दशांतरे महाप्राज्ञ आयुर्दायसमाप्तये ॥१०॥ अथैव लग्नद्यूनादि आरभ्य च दशाक्रमः ॥ प्रवृत्तिर्जन्मतो ज्ञेया निर्विशंकं द्विजोत्तम ॥११॥ यत्ररुद्रग्रहस्यापि शुभदत्वं न भाव्यते ॥ तत्र जीवस्य नष्टत्वान्नेदं फलमिति स्थितिः ॥१२॥

रुद्रमहेश्वरबल—ग्रहलक्षण

अब हम मृत्युकाल ज्ञान के लिए विशेष प्रकार से अन्तर्दशा का ज्ञान कहते हैं।। लग्नेश तथा सप्तमादि ७।८।९ भावेश इन दो भावेशों में जो ग्रह बलवान् हो वह बली 'रुद्र' (या प्रधान रुद्रसंज्ञक ग्रह) ग्रह है। इस 'रुद्र' संज्ञक ग्रह में सूर्यादि सभी ग्रहों का ग्रहण है।। (जो ग्रह न्यूनबली है, वह 'गौण रुद्र' है।) इन दोनों रुद्रग्रहों में बली रुद्र ग्रह का विचार करना चाहिए। वह रुद्रग्रह यदि शुभदृष्टग्रह युक्त हो, या शुभग्रहयुक्त हो तो न्यूनबली होने पर भी मुख्य 'बली रुद्र' के समान ही है।।३।। इस बली रुद्र का फलसम्बन्धी विशेष विचार करना चाहिए सो वह तुमको कहते हैं।।४।। वही प्राणी (बलवान्) रुद्र गह शुभग्रहों से युक्त या दृष्ट अथवा अन्य सम्बन्ध हो तो वह पूर्ण बलवान् रुद्र है, और उसीके आधीन आयु है।।५।। जातक की आयु रुद्रशूल तक या उसके त्रिकोण (राशि की दशा) तक है (शूल दशा जो आगे कही जायगी उसी को रुद्रशूल दशा जानना) लग्न तक या पञ्चम अथवा नवम भाव की दशा तक आयु है, ऐसा समझना।।६।। (अब और स्पष्ट करते हैं) अर्थात् हे महाप्राज्ञ मैत्रेय! अल्पायु, मध्यायु और दीर्घायु को पूर्व कथित लग्न आदि राशि की दशा से विचार करे।।७।। जहां अल्पायु योग है वहां त्रिकोण के पञ्चम भाव तक (अर्थात् लग्न पञ्चम के मध्य के भाव तक की राशि से विचारे) उस अल्पायु वाले जातक की आयु वहीं तक है।।८।। उससे आगे यदि मध्यायु प्राप्त हो तो पञ्चमभाव से नवमभाव तक विचार करे। क्योंकि—उसकी आयु यहीं तक है, इसमें कोई शंका नहीं है।।९।। दीर्घायु योग प्राप्त होने पर त्रिकोण नवम भाव से अंत तक विचार करना। (अर्थात् जैसे आयु के तीन भाग कल्पना किये वैसे ही कुण्डली में भी ३ भाग कल्पित हैं। यथा लग्न से चतुर्थ तक अल्पायु विचार, पंचम से अष्टम तक मध्यायु विचार और नवम से द्वादश तक दीर्घायु का विचार करना चाहिए) अब लग्न से ६ भाव तथा सप्तम आदि ६ भाव इस प्रकार १२ भावों की दशाक्रम स्पष्ट करके जन्म लग्न से विचार आरंभ करे।।११।। जिस

जन्मकुंडली में रुद्रसंज्ञक ग्रह की शुभफलरूपता नहीं मालूम हो वहां तो जातक के जीवहीन होने से यह विचार ही निष्फल है॥१२॥

अथैवरुद्रशूलांतमायुदर्यितिकारणे ॥ योगेस्मिंश्च समुत्कर्षोत्किंचिद्दर्शयति द्विज ॥१३॥ प्राणीरुद्रशुभे दृष्टे पूर्वोक्तफलदायकः ॥ शुभयोगे न संदेहो रुद्रे शूलांतमायुषि ॥१४॥ स्थित एव फलं जन्म कथितं कारणांतरे ॥ निरुक्ते शुभसंयोगे किं कीर्तयति भो द्विज ॥१५॥ पूर्वमेव फलं सादो समुत्कृष्टे तदेव चेत् ॥ सुतरां तदेव वक्तव्यं निर्विशंकं द्विजोत्तम ॥१६॥ अनेन पूर्वयोगेन फलं किंचिद्धि न्यूनता ॥ अद्योतितादुक्तकालात्पूर्वंपश्चान्मृतिर्यदि ॥१७॥ निरुक्तयोगश्च तदा ह्यपवादं वदाम्यहम् ॥ रविं विहाय नितरां पापयोगो भवेद्‌द्विज ॥१८॥ योगोऽयं निष्फलो वाच्यः पुरा ब्रह्मप्रणोदितः ॥ इदं फलं न भवति योगेस्मिन्द्विजसत्तम ॥१९॥ नाशयोगस्य वक्तव्यं फलं वापि भयंकरम् ॥ अधुना संप्रवक्ष्यामि गौणरुद्रस्य वै द्विज ॥२०॥

रुद्रशूल दशा पर्यन्त जीवन हो ऐसे जीवनस्थापन के उत्कृष्ट योग दिखाते (कहते) हैं॥१३॥ प्राणी रुद्रग्रह–शुभग्रह से दृष्ट होने मात्र से ही जातक का जीवन रुद्रशूलदशा पर्यन्त रहेगा। और प्राणी रुद्र ग्रह यदि शुभग्रह युक्त हो तो जातक के रुद्रशूल दशा के भोग पर्यन्त जीते रहने में कोई सन्देह ही नहीं है॥१४॥ जातक का जीवन कारणान्तर से भी स्थित रह सकता है फिर शुभ संयोग रहने पर तो कहना ही क्या है॥१५॥ हे मैत्रेय! प्रथम निश्चित, दीर्घ, मध्य आयु आदि फल यदि उत्कृष्टयोग युक्त हो तो निःशंकरूप से वही कहना॥१६॥ पहिले कहे हुए आयु के सहायक योगों में कुछ न्यूनता है। क्योंकि– पूर्वयोगानुसार उक्त अर्थात् ज्ञात हुए काल जिसका कि द्योतन (ज्ञापन = ज्ञान) नहीं हुआ उससे पहिले या पीछे यदि मृत्यु संभव हो तो पूर्वोक्त योग सापवाद (निन्दित) होते हैं। (अथवा पूर्वोक्त योग की निष्फलता में 'अपवाद' बाधक योग कहते हैं यह तात्पर्य है) सूर्य के बिना अन्य पापग्रहों से योग हो तो यह योग निष्फल होता है और इसका फल नहीं होता॥१९॥ और इसके विपरीत दुर्योग का फल भयंकर होता है। अब हम मुख्य रुद्रग्रह का फल बताकर गौण रुद्र का फल कहते हैं॥२०॥

गुणप्रकर्षेण फलं विशेषेण तवाग्रतः ॥ गौणरुद्रे महाप्राज्ञ मंदारेन्दुनिरीक्षिते ॥२१॥ अभावे शुभयोगस्य पापयोगांतरे तथा ॥ फलं विप्रेंद्र शूलान्तादायुर्दायं भवत्यपि ॥२२॥ शुभदृष्टे वा शूलांतात्परश्चायुर्भवेदपि ॥ योगद्वय परत्वेन योजनीयं न संशयः ॥२३॥ एतद्योगद्वयं किंचिन्न्यूनतायामपि द्विज ॥ नेदं फलं प्रवक्तव्यं मैत्रेयाभाषितं पुरा ॥२४॥ शुभदृष्टिभवे चैव योगे च परपूर्ववत् ॥ शुभदृष्टावसंत्या च पापयोगाद्यभावतः ॥२५॥ कृत एको हि योगश्च पूर्वयोजनमेव च ॥ अशुभयोगे शुभौ दृष्टौ योगोऽयमपरो द्विज ॥२६॥ पापयोगैरभावे च शुभदृष्टौ च संयुते ॥ कैमुतिकाख्यन्यायेन सिद्धो योगस्तृतीयकः ॥२७॥ पुरा प्रोवाच यच्छंभुस्तवाग्रे कथयाम्यहम् ॥ द्वितीययोजनायां तु शुभदृष्टिसमन्विते ॥२८॥ पापयोगस्य चाभावे योगः प्रथम उच्यते ॥ पापयोगे महाप्राज्ञ शुभदृष्टे प्रभावके ॥२९॥

'गौण रुद्रग्रह' गौण होने पर भी योगरूप गुण के बल से विशेष कथन योग्य है। हे मैत्रेय! गौणंरुद्रग्रह शनि, मंगल, चन्द्रमा से दृष्ट हो और शुभ ग्रह के योग का अभाव हो एवं पापग्रहों के मध्य में हो तो भी वह जातक की आयु शूलदशा तक करता है (अतः जातक के लिए तो वही श्रेष्ठ है) और यदि इसके विपरीत शुभयोग हो तो 'शूल'–दशा के बाद भी उसकी आयु हो सकती है। इस उपर्युक्त आयु के साधक, बाधक दोनों प्रकार के योग से आयु का विचार करे।।२३।। (यहां गौणरुद्रग्रह के शुभाशुभ दृष्टि तथा योग के ३ भेद कहते हैं)
१– शुभग्रहकी दृष्टि हो और ग्रहयोग पूर्वोक्तके समान हो। तथा शुभ दृष्टि नहीं हो और पापग्रह योग भी नहीं हो। यह एक योगका कथन हुआ, इसमें पूर्व के कहे योग भी युक्त हैं।
२– अशुभग्रह का योग और शुभ दृष्टि हो यह दूसरा योग है।
३– पापयोग न हो और शुभदृष्टि हो। यह तीसरा योग है। (इसके फल की श्रेष्ठता का तो कहना ही क्या है) इस योग का फल कैमुतिक न्याय से ही सिद्ध है। अर्थात् अतिश्रेष्ठ है।।२७।। पहिले जो शंभु ने कहा सो सुनाते हैं। इस दूसरी योजना में पापग्रह योगाभाव और शुभदृष्टि युक्त होना यह प्रथम योग है। पापयोग और शुभदृष्टि यह द्वितीय योग है।।२९।।

द्वितीययोगपक्षेऽहं पूर्वस्मिन् द्विजसत्तम ।। पापयोगस्य चाभावे चाशुभदृष्टिविवर्जितः ।।३०।। कैमुतिकाख्यन्यायेन तृतीयो योग उच्यते ।। अथैव प्राणिरुद्रस्य ह्युक्ता पक्षांतरे कथा ।।३१।। तत्रैव प्रथमे योगे शुभदृष्टिविवर्जिते ।। शुभयोगादियोगश्च द्वितीयोक्तेन योगकृत् ।।३२।। तृतीयेन द्वयस्यापि योगभंगं करोत्यपि ।। अधुनोक्तत्रयाभावे मंदादिदृष्टिमात्रतः ।।३३।। एवं स्थिते सुयोगश्च निःशंकं प्रतिपद्यते ।। अशुभैः खेचरैर्दृष्टे पापयोग इति स्थितिः ।।३४।। शुभयोगविहीने च मन्दारेन्दुनिरीक्षिते ।। तदायुः परतो विप्र समानादिति योजयेत् ।।३५।। प्रथमद्वितीये संतः पापयोगैरभावतः ।। योगो भंगमपेक्षा च तृतीयोक्तमिदं वदेत् ।।३६।। पापदृष्टिमात्रमेवं योगनिर्वाहकारणे ।। अपवादविहीनेन इत्येवोक्तं तृतीयके ।।३७।। रुद्राभ्यां प्राणिगौणाभ्यां ताभ्यामाश्रितमेव च ।। गुणविशेष आयुरंतं वक्ष्यामीह महामते ।।३८।।

इस द्वितीय योग में तो प्रथम योजनावाले योग से समानता है, और पापयोग न हो और अशुभदृष्टि भी नहीं हो तो अतिश्रेष्ठ। अब प्राणी (बली) रुद्र के योग के विषय में भिन्न विचार है। पूर्व ही कह चुके हैं कि–प्रथम योग में शुभदृष्टिरहित हो। और द्वितीययोग में शुभयोग दृष्टि हो।।३२।। और तीसरे योग में शुभ दृष्टि और शुभयोग दोनों का अभाव कहा है, तथा योगभंग का प्रकार कहा है। अब यह कहते हैं कि–उक्त तीनों प्रकार के योगों के अभाव में शनि, राहु की दृष्टिमात्र से ही योग होता है।।३३।। इस केवल एक की दृष्टिमात्र से भी सुयोग होता है। और अनेक पापग्रहों की दृष्टि से तो पापयोग होगा, ऐसा समझना।।३४।। प्राणी रुद्रग्रह शुभदृष्टिहीन हो, चन्द्र, मंगल, शनि से दृष्ट हो तो अपने मान से भी परे आयु जाने। यह पहिले कहा हुआ जानना चाहिए।।३५।। प्रथम, द्वितीय योग में शुभयोग हो और पापयोग न हो। और तीसरे योग में योगभंग की अपेक्षा आदि कहा है। तृतीययोग में एक ग्रह पापग्रह का होने से योग का निर्वाह होता है और अपवाद नहीं होना चाहिए।।३७।। बली तथा निर्बल, अतएव मुख्य और गौण रुद्रग्रह के योगविशेष के आश्रित ही आयु है, यह अब कहते हैं।।३८।।

गौणरुद्रेशुभैर्योगे शुभदृष्टिसमन्विते ।। रुद्रशूलांतमायुश्च योजनीयं द्विजोत्तम ।।३९।। पूर्वोक्तप्राणिरुद्रेण द्वियोगप्राणकेन च ।। द्वाभ्यां शूलांतमायुश्च तवाग्रे कथितं मया ।।४०।। अधुना संप्रवक्ष्यामि द्वयोर्निर्वाहकारणे ।। तयो रूपं भिन्नभिन्नं श्रृणुष्व मुनिपुंगव ।।४१।। प्राणिरुद्रे शुभैर्दृष्टे योगोऽयं द्विजसत्तम ।। शुभयोगेति का वार्ता शूलांतायुर्विनिश्चितम् ।।४२।। गौणरुद्रे शुभैर्दृष्टे योगोऽयं क्लेशदायकः ।। रोगशोकभयं कर्ता मृत्युं नैव करोति च।।४३।। शुभयोगे महाप्राज्ञ योगोऽयं बलवत्तरः ।। तस्य शूलांतमायुश्च निर्विशंकं न संशयः ।।४४।। उभौ रुद्रौ शुभग्रहैर्योगदृष्टौ द्वयोरपि ।। शुभग्रहेण क्लेशच्च रुद्रशूलांतमायुषि ।।४५।। प्राणी चाप्राणिरुद्राभ्यां कृतयोगद्वयेन च ।। तयोर्वा संप्रवक्ष्यामि तवाग्रे द्विजसत्तम ।।४६।। मार्तंडरहिते चान्यः पापयोगकृते द्विज ।। योगद्वयं न भवति पापयुक्तं द्वयोरपि ।।४७।।

यदि गौण रुद्रग्रह शुभयुक्त, शुभदृष्ट हो तो रुद्रशूल दशा तक जातक की आयु है। यह समझना चाहिए।।३९।। पूर्वोक्त प्राणीरुद्रग्रह के सम्बन्ध में प्रथम निश्चित कर दिया है कि–प्रथम कहे हुए दो योगों में भी आयु शूलदशापर्यन्त जानना।।४०।। अब प्राणिरुद्र में आयु के निर्वाह के कारण आदि के दो योगों में कहते हैं, सो अलग २ सुनिये।।४१।। प्राणिरुद्रग्रह शुभदृष्टि युक्त हो, यह एक योग है। इस शुभ योग में शुभपन यही है कि–जातक की आयु शूल दशा तक निर्बाध है।।४२।। गौण रुद्र यदि केवल शुभदृष्ट हो तो क्लेशदायक होता है, रोग, शोक, भयमात्र करता है, मृत्यु नहीं होती।।४३।। हे महाभाग! शुभग्रह का योग हो तो यह योग अतिबली होता है। उस जातक की आयु के शूल दशा तक होने में कोई सन्देह नहीं रहता।।४४।। दोनों रुद्रग्रह यदि शुभग्रहों से युक्त हों तो आयु तो शूल पर्यन्त है, परन्तु कष्ट सहित हो।।४५।। हे द्विजश्रेष्ठ! प्राणी रुद्र और गौण रुद्र इन दोनों से प्रभावकारी योग होते हैं, सो कहते हैं।।४६।। दोनों ही रुद्रग्रहों से सूर्ययोगरहित अन्य पापग्रहों से योग हो तो वे योग विशेष प्रभावकारी नहीं होते।।४७।।

शुभयोगः शुभर्दृष्टैरुभयेऽपि विना रविम् ।। पापयोगकृते विप्रभययोगो विनश्यति ।।४८।। शुभयोगः शुभैर्दृष्टिरभावे न भवत्यपि ।। यत्रायुः कथयांचक्रुर्वक्तव्यं द्विजसत्तम ।।४९।। उभयोः पापयोगे च कश्चिद्रोगार्तिको भवेत् ।। क्लेशः शोको नृपाद्भीतिर्देशपर्यटनं द्विज ।।५०।। शुभदृष्टेरभावे च शुभयोगविवर्जिते ।। पापयोगप्रभावेण मरणं सारणं दृशा ।।५१।। शुभयोगदृष्टचभावे पापयोगे द्विजोत्तम ।। पुष्टदशाचलेनैव सप्रासादो न संशयः ।।५२।। अस्मिन्प्रकरणे चैवमुपपत्तौ द्विजोत्तम ।। शुभवर्गौ पापवर्गौ तवाग्रे कथयाम्यहम् ।।५३।। अर्कारमंदफणिनः क्रमात्क्रूरा अथाश्रयम् ।। चन्द्रोपि क्रूर एवात्र क्वचिदंगारकाश्रयात् ।।५४।। गुरु शिखि कविज्ञाश्च यथापूर्वं शुभग्रहाः ।। क्रूरखेटा महाप्राज्ञ चार्काद्या उत्तरोत्तरम् ।।५५।। क्रूराः क्रूरखेटगाश्च क्रूराणि ह्यपवादकम् ।। शुभक्षेत्रगतैः क्रूरैः क्रूरता ह्युपशाम्यति ।।५६।।

दोनों ही रुद्रों में शुभदृष्टि और शुभयोग हो पर सूर्य से न हो तो पाप (नेष्ट) योग का भय नहीं रहता।४८।। शुभग्रह का योग तो हो, पर शुभदृष्टि न हो तो जो दीर्घादि आयु प्राप्त हुई हैं, वही आयु कहना चाहिए।।४९।। दोनों रुद्रग्रहों से यदि पापयोग हो तो शोक, क्लेश,

राजभय तथा पर्यटन (मुसाफरी) होता है।।५०।। शुभदृष्टि और शुभयोग न हो तो पापयोग और दृष्टि के प्रभाव से मरण निश्चित है ।।५१।। शुभयोग और दृष्टि न हो तथा पापयोग दृष्टि हो तो बलवान् शुभदशा रहेगी तब तक ही सुख जानना।।५२।। हे द्विजोत्तम! इस रुद्रप्रकरण में शुभाशुभफल की उत्पत्ति कर्ता जो योग हैं, उनके सहायक शुभवर्ग और पापवर्ग (वर्ग–समूह) कहते हैं।।५३।। प्रथम पापग्रहों का वर्ग (समूह) कहते हैं। सूर्य, मंगल, शनि, राहु, अपने आश्रयानुसार क्रूर हैं और चन्द्रमा भी मंगल के योग से क्रूर है।।५४।। (शुभवर्ग) गुरु, शुक्र, बुध तथा केतु पूर्वोक्तानुसार शुभ हैं। और पापग्रह जो अभी कहे हैं वे सूर्य से उत्तरोत्तर बलहीन हैं।।५५।। क्रूरग्रह तथा क्रूरराशि में जो ग्रह हों वे भी क्रूर हैं। किन्तु यही क्रूरग्रह जब शुभराशि तथा भाव में हो तो इनकी क्रूरता दूर हो जाती है। यह अपवाद है।।५६।।

गुर्वादयः शुभग्रहा यथापूर्वं बुधः कविः ।। कवितः केतुर्विज्ञेयः केतुतो वाक्पतिर्द्विज ।।५७।। क्रमेणैव विजानीयाच्छुभखेटोत्तरोत्तरम् ।। यथापूर्वं क्रूरग्रहाः क्रूराश्रयसमागते ।५८।। एवं क्रौर्यं समापन्नं क्रौर्यं तु शोभनाश्रयः ।। एवं गुर्वादिसौम्याश्च शुभाः श्रेयातिशोभनाः ।।५९।। क्रूराश्रये सौम्यखेटाः सौम्यता नश्यते क्वचित् ।। एवमेवापरामुक्तिं कथयामि द्विजोत्तम ।।६०।। प्रत्येकं शुभराशिस्थः उच्चस्थो वा बुधः शुभः ।। गुरुशुक्रौ च सौम्यस्थौ ततोऽन्ये च शुभाः स्मृताः ।।६१।। पूर्वस्मिन्पापयोगेन योगभंगद्वये द्विज ।। निरूपितं तवाग्रे च निर्विशंकं न संशयः ।।६२।। योगद्वयेपि भंगार्थे पापदृष्टौ विशेषकम् ।। न दर्शयति कदापि स्यात्तवाग्रे कथायामि वै ।।६३।। शुभग्रहाणां चाभावे मंदारेन्दुनिरीक्षिते ।। पापयोगे शुभैर्दृष्टे परतश्चायुषि द्विज ।।६४।। प्राणिरुद्रेप्यगौणेन शुभयोगविवर्जिते ।। पापयोगेऽथवा दृष्टे तथा शुभनिरीक्षिते ।।६५।।

बुध, शुक्र, केतु, गुरु ये चार ग्रह भी उत्तरोत्तर बलवान् शुभ हैं।।५७।। पूर्वोक्त शुभग्रह उत्तरोत्तर बलवान् हैं। और क्रूर ग्रह सब यथापूर्व बलवान् हैं। शुभग्रह भी पापराशि में हो तो क्रूर है।।५८।। इस प्रकार क्रूरता जाने, यदि सौम्यराशि और शुभभाव में क्रूरग्रह हों तो शुभ होते हैं। और गुरु आदि सौम्यग्रह शुभ हैं, तथा शुभाश्रयी हों तो अति शुभ हैं।।५९।। सौम्य ग्रह यदि कूराश्रयी हों तो कहीं २ इनकी सौम्यता नष्ट हो जाती है। इसी प्रकार और नियम कहते हैं।।६०।। अब प्रत्येक ग्रह के लिए कहते हैं। बुध शुभराशि में या उच्च का हो तो शुभ है। तथा गुरु और शुक्र भी सौम्यराशि में शुभ हैं। इसी प्रकार अन्य ग्रह भी उच्च या शुभराशि में शुभ होते हैं।।६१।। और पहिले जो हमने पापग्रह के योग से योगभंग के दो योग कहे हैं, उनमें कोई शंका नहीं है।।६२।। योगभंगकारी दो योग में पापदृष्टि रहते भी जो योगभंग का फल नहीं होता, उसका कारण कहते हैं।।६३।। शुभग्रहों के योग का अभाव हो, चन्द्र, मंगल, शनि की दृष्टि हो तथा शुभग्रह की भी दृष्टि हो तो प्राप्त आयु अल्प, मध्य, दीर्घ, योग कुछ और आगे तक जानना।।६४।। केवल प्राणीरुद्रग्रह शुभयोगरहित हो और पापग्रह का योग अथवा दृष्टि हो एवं शुभदृष्टि भी हो।।६५।।

व्यापारतानुविज्ञेया पूर्ववद्द्विजसत्तम ।। अत्रोपपदपापाच्च राहोरप्युपलक्षणम् ।।६६।। एवं सूर्यातिरिक्तोपि पापयोगस्तथैव च ।। तस्यै वेहानुवादाच्च राहोश्चिदुपबृंहणात् ।।६७।।

परिग्रहदर्शनाच्च परतो रुद्रपाश्रयात् ।। शुभस्थाने आयुरंतः शूलत्रयमलंघनात् ।।६८।। न तु शूलदशायां च आयुरंतं द्विजोत्तम ।। एवं शूले चेत्तदंतशूलरीत्येति वार्धके ।।६९।। पूर्वोक्तपापयोगेन शुभयोगेन दृष्टितः ।। कृतयोगद्वयस्यापि भङ्गार्धे च वदाम्यहम् ।।७०।। शुभयोगेन वे विप्र पापयोगोऽतिदुर्बलः ।। शुभदृष्टिकृतो योगः पापदृष्टेः कथं क्षमः ।।७१।। न भंजनसमर्थश्च कोटियत्ने कृते द्विज ।। शुभकृद्योगभंगार्थे पापयोगमपेक्षितम् ।।७२।। शुभयोगे दृष्टिकृते पापयोगेपि भञ्जकः ।। शुभदृष्टिकृते योगः पापयोगो विनश्यति ।।७३।। यदायुर्दायमध्यस्थं वेदितव्यं द्विजोत्तम ।। पापमात्रस्य शूलत्वे प्रथमर्क्षे मृतिं वदेत् ।।७४।। द्वौ रुद्रौ पूर्वं वक्ष्येऽहं यदि चैकत्र संस्थिते ।। मित्रमध्यमशूलर्क्षे शुभमात्रेऽन्तिमे मृतिः ।।७५।।

तो इसका विचार पूर्व कहे अनुसार जानना।। और पहिले जो उपदेश से फल कहा गया है, उस विचार में और ग्रहों के समान ही राहु को भी समझना चाहिए।।६६।। राहु यद्यपि सूर्यातिरिक्त ग्रह है, तथापि अन्य ग्रहों के साथ होकर सूर्य के समान ही योग कारक है और स्व-रूप में शिरोभाग होने से चिन्मिश्रित (चित् शक्तियुक्त) है। और ग्रहण में सूर्य का भी आच्छादक है।।६७।। अतः रुद्रग्रह की राशि के स्वामी से यदि सम्बन्ध हो तो अति बलवान होता है। अतः राहु शुभस्थान में हो तो अंतरदशा तक आयु जाने। क्योंकि—राहुयोग होने पर तीनों शूलदशाओं का लंघन नहीं हो सकता।।६८।। इसी प्रकार राहुयोग होने पर शूलदशा के अन्त तक आयु नहीं जाती है। शूलदशा में ही तत्-तत् शूलदशा के अन्तर में ही निधन जानना।।६९।। पूर्वोक्त जो शुभ तथा पाप दोनों की दृष्टि अथवा योग में जो 'भंगयोग' होता है, इसके लिए अब हम कहते हैं।।७०।। हे मैत्रेय ! शुभयोग से पापयोग दुर्बल हो जाता है। क्योंकि-शुभदृष्टि की सामर्थ्य भंग करने में पापदृष्टि की क्षमता नहीं है।।७१।। शुभदृष्टि के योग को पापदृष्टि यदि कोटि (करोड़ों) यत्न करे तो भी शुभ दृष्टि का नाश नहीं कर सकती।।७२।। शुभयोग और दृष्टि दोनों हों तो शुभदृष्टि से ही पापयोग का नाश हो जाता है।।७३।। जब मध्यायु योग हो और पापग्रह मात्र का योग हो तो शूलदशा के प्रथम चरण में ही मृत्यु होती है।।७४।। और प्रथम जो दो रुद्र गौण मुख्य भेद से कहे हैं, उनके विषय में अब यह कहना है कि—वे दोनों यदि एक स्थान में हों, या मित्रराशि में हों तो मध्य या अन्तिम शूलराशि की दशा में मृत्यु होती है।।७५।।

द्वयोः पापी च प्रथमे शूले मृत्युर्भवत्यपि ।। यद्येकरुद्रः पापी च द्वितीयः शुभखेचरः ।।७६।। मध्ये शूले मृतिर्विप्र निर्विशंकं भविष्यति ।। शुभग्रहद्वयं विप्र एकत्र यदि तिष्ठति ।।७७।। अंतःशूले मृतिर्ज्ञेया शूलिना भाषितं पुरा ।। एवं भेदानुभेदेन विद्यात् सर्वत्र बुद्धिमान् ।।७८।। शूलक्षेत्रे च रुद्रौ द्वौ यदि पापोऽथवा शुभः ।। मिश्रग्रहोथ वा विप्र चिंतयेद्बलवत्तरः ।।७९।।दीर्घायुरायुर्योगेन भङ्गाभावे द्विजोत्तम ।। मृत्युशूलदशायां च पापयोगं विना रविः ।।८०।। क्रूराश्च येषु क्षेत्रेषु शुभनामाश्रयेषु च ।। निर्याणमितरेषां तु शूलर्क्षे निर्दिशेदयम् ।।८१।। शुभानामत्र पक्षे तु तथा क्रूराश्रयेषु च ।। तस्मिञ्जातकशूलर्क्षे मृतिं ब्रूयान्न संशयः ।।८२।। यद्यप्राणी रुद्रयोगे यत्किंचिन्न्यूनता द्विज ।। तर्हि रुद्राश्रयं तच्च त्रिधा न परतोऽपि च ।।८३।। रुद्राश्रयेपि चायुर्दा समाप्तिर्भवति ध्रुवम् ।। प्रायेण चिन्तयेद्विप्र पूर्वापरप्रयत्नतः ।।८४।। यद्वाद्यप्राणिरुद्रस्य

योगे पूर्णे भवत्यपि ॥ रुद्रशूले परत्वेन आयुर्दायसमाप्तये ॥८५॥ रुद्राश्रयेण प्रायेण शूलमेकद्वयंत्रयम् ॥ उल्लंघनं कृतं विप्र यदि योगविशेषतः ॥८६॥

और दोनों रुद्रग्रह पापी हों तो प्रथम शूलदशा में मृत्यु होती है। और दो रुद्रों में एक पापी और एक शुभ हो तो निश्चयरूप से मध्य शूलदशा में मृत्यु होती है॥७६॥ और दोनों रुद्रग्रह शुभ हों और एक ही स्थान में हों तो अन्तिम शूलदशा में मृत्यु जानना ॥७७॥ ऐसे इसके भेद और अनुभेद जानना॥७८॥ शूलदशा के मारक विचार में दोनों रुद्रग्रहों का योग हो तो देखना चाहिये कि वे दोनों पाप हैं या शुभ हैं, अथवा एक पाप एक शुभ है, तो इन दोनों में बलवान् रुद्र को (प्राणी रुद्र) लेना चाहिये॥७९॥ आयुयोग में दीर्घायु प्राप्त हो और योगभंगकारी योग नहीं हो, और पापयोग सूर्य के बिना हो तो शूलदशा में मृत्यु होती है॥८०॥पापग्रह शुभ राशियोंमें हो और शुभग्रह पाप राशियोंमें हो तो भी शूलराशिदशा में मृत्यु होती है॥८१॥ पापग्रह पापराशियों में हों तो भी जातक की मृत्यु शूलदशा में होती है॥८२॥ यदि गौणरुद्रग्रह के साथ पूर्वोक्त योग हो तो भी रुद्राश्रयफल पूर्वोक्त ही है, उस फल के तीन प्रकार नहीं होकर एक प्रकार ही है॥८३॥ अतः हे मैत्रेय ! रुद्राश्रयी विचार में पूर्वापर का ध्यान से विचार करके आयु समाप्ति का निर्णय करे॥८४॥ और यदि बाल राशि में प्राणी रुद्र का पूर्ण योग हो तो शेष की शूल दशा में आयु समाप्ति (मृत्यु) होती है॥८५॥ हे विप्र! यदि योग के विशेष बलाबल के विचार से शूल दशा पहिली, दूसरी और तीसरी में निर्याण (मृत्यु) कहे। और विशेष बलवान् योग में तीनो का भी उल्लघन हो सकता है॥८६॥

तर्हि रुद्राक्षयेप्येवं प्रायेणायुर्भवेद् ध्रुवम् ॥ तावद्वर्षेण कथनं जीवनं जातकस्य च ॥८७॥ इत्युक्ते च प्रयाणे च पूर्वे रुद्राश्रयाद्द्विज ॥ आयुर्दायसमाप्तिश्च कष्टयोगादिकारके ॥८८॥ रुद्राश्रयात्तु ह्येवं हि निरुक्ते चायुषि द्विज ॥ भवेद्विशेषरूपं किं तवाग्रे दर्शयामि च ॥८९॥ मेषलग्ने विशेषेण आयूरुद्राश्रयांतके ॥ कुष्ठरोगादि कुर्वीत पूर्णायुर्न समाप्यते ॥९०॥ द्वंद्वराशौ स्थितौ रुद्रौ प्राणी गौणद्वयेऽपि वा ॥ रुद्राश्रयं तदन्ते वा आयुर्दायं भवत्यपि ॥९१॥ आयुर्दा योगभेदेन प्रथमे मध्यमोत्तमे ॥ दर्शयामि तवाग्रे च कथां शंभुप्रणोदिताम् ॥९२॥ स्वल्पमध्यमदीर्घायुर्योगादिकं वदेद्द्विज ॥ तदायुर्दायमल्पादि यथोक्तं कथितं मया ॥९३॥ स्वल्पायुः प्रथमे शूले मध्यमायुर्द्वितीयके ॥ दीर्घायुश्च तृतीयांते शूलांते निधनं भवेत् ॥९४॥ अधुना संप्रवक्ष्यामि तवाग्रे द्विजनंदन ॥ मृत्युर्मुख्याश्रयीभूतदशायां तद्दशास्वपि ॥९५॥ ततः फलविशेषार्थं माहेश्वरग्रहं द्विज ॥ लक्षयंति तदाग्रे च तस्मादायुर्विनिश्चितम् ॥९६॥ चिन्तयेत्कारके लग्ने ह्यष्टमेशो महेश्वरः।अथैवाऽन्यप्रकारेण माहेश्वरं वदाम्यहम् ॥९७॥ कारके तुङ्गराशिस्थे सग्रहो बलवत्तरः ॥ रिःफरंध्राधिपौ मध्ये सोऽपि माहेश्वरो ग्रहः ॥९८॥ कारकाच्च ग्रहाभावे नाथो माहेश्वरो भवेत् ॥ रिष्फरंध्राधिपौ विप्र बले सामान्यतां यदि ॥९९॥ द्वयं माहेश्वरं यातो यथा रुद्रग्रहौ द्वयम् ॥ ताभ्यां च निर्णयार्थाय प्रकारान्यं वदाम्यहम् ॥१००॥

इसलिये रुद्राश्रय योग में भी बल से आयु का निर्णय करे बलाबल के अनुसार जितने वर्ष प्राप्त हों उतनी आयु कहे॥८७॥ इस प्रकार अब हमने रुद्र ग्रह के योग से प्रयाण (मृत्यु) का

विचार किया। और इसके साथ ही कष्ट रोग आदि का विचार किया।।८८।। इस प्रकार रुद्राश्रय विचार है। इसमें जो विशेष विचार है, वह अब कहते हैं।।८९।। मेषलग्न में विशेष करके रुद्रग्राश्रित राशि के अन्तिम शूल दशा में मृत्यु होती है और 'पूर्णायु' योग हो भी तो पूरी आयु जीवित नहीं रहता। और कुष्ठादि रोग भी हो सकता है।।९०।। प्राणी और गौणरुद्र दोनों ग्रह यदि द्विस्वभाव राशि में हों तो रुद्राश्रयी शूलदशा में या उसके अन्त में मृत्यु होती है।।९१।। अब महेश्वर के कहे हुए आयुर्दाय सम्बन्धी प्रथम, मध्यम, उत्तम, शूल दशा निर्वाण के योग कहते हैं।।९२।। योगानुसार अल्प, मध्य, दीर्घ, आयु का योग निर्देश करे। इसके अल्पादि भेद के योग कह चुके हैं।।९३।। स्वल्पायु हो तो प्रथम शूल दशा में, मध्यायु हो तो द्वितीय और दीर्घायु हो तो तृतीय शूलदशा में मृत्यु होती है।।९४।। (अब आगे माहेश्वर ग्रह का निरूपण करते हैं) हे द्विजनन्दन ! अब आपको माहेश्वरग्रह का विचार कहते हैं, जो कि मृत्यु की आश्रयीभूत मुख्य दशा और अन्तर्दशा विचार में उपयोगी है।। उसके पश्चात् उसके लक्षण कहेंगे, जिनसे आयु का विचार या निर्णय कहेंगे।।९६।। कारक कुण्डली में अष्टमाधीश ग्रह महेश्वर संज्ञक होता है।। अथवा दूसरी रीति से 'माहेश्वर' कहते हैं।।९७।। कारक यदि उच्च राशि का हो तो द्वादश तथा अष्टमाधीश में जो ग्रह अधिक बली हो वह 'महेश्वर' होता है।।९८।। और कारक से यदि बली ग्रह नहीं मिले तो, अर्थात् १२।८ भावेश बलहीन या समबली हों तो कारकेश ही 'माहेश्वर' होता है।।९९।। तथा ८।१२ द्वादशेश के समबली होने पर दोनों की ही माहेश्वर संज्ञा मानकर दो माहेश्वर हो जाते हैं।।१००।।

स्वकारकस्य योगश्चेद्राहुकेतुरवीन्विना ।। माहेश्वरो भवत्येव विकल्पेन द्विजोत्तम ।।१।। कारकस्याष्टमे पापग्रहो माहेश्वरो भवेत् ।। रविचंद्रौ च चांद्रिश्च गुरुः शुक्रः शनिस्तमः।।२।। शिखिना गणनायां च यः षष्ठः कारकग्रहात् ।। सोऽपि माहेश्वरो ज्ञेयो नवभागसमुच्चयात् ।।३।। एवं चार्कविभागश्च राशिव्यवहारोच्चता ।। तदयं तृतीयः खेटो रव्यादीनां महेश्वरः ।।४।। यद्वा कारकस्थानाच्च षष्ठाधिपतये स्थिते ।। सोऽपि माहेश्वरो ज्ञेयो निर्विशंकं द्विजोत्तम ।।५।। माहेश्वरग्रहस्यापि ब्रह्मसाहित्यकेन च ।। ततो ब्रह्मग्रहं वक्ष्ये विशेषेण फलाय वै ।।६।। लग्नाद्वा सप्तमाद्वापि रिपुरंध्रव्ययाधिपाः ।। एतेषु बलवान्विप्र मेषादिविषमस्थिते ।।७।। लग्नसप्तमयोर्मध्ये राश्योश्च बलवान्भवेत् ।। उच्चैरपृष्टभागाद्यसंयोगो विद्यमानतः ।।८।। एतद्गुणत्रयाद् युक्तः सोपि ब्रह्मा ग्रहः स्मृतः ।। लग्नस्य पृष्ठभागं च षट्कं च द्यूनवादिकम् ।।९।। सप्तमस्य पृष्ठभागं षट्कलग्नादिकं द्विज ।। बलवान्विषमस्थोपि ब्रह्मा खेटः स उच्यते ।।११०।।

ऐसी स्थिति में उनके निर्णय के लिये अन्य प्रकार कहते हैं।। आत्मकारक का योग, राहु, केतु, सूर्य को छोड़कर किसी भी ग्रह से हो तो वह भी माहेश्वर होता है।।१०१।। (इस प्रकार कितने ही माहेश्वर हो सकते हैं) इनमें से कुछ की गणना तथा लक्षण कहते हैं। प्रथम–कारक से अष्टमभावस्थित ग्रह माहेश्वर होता है। दूसरा–सूर्य, चन्द्र, बुध, गुरु, शुक्र, शनि, राहु और केतु इस क्रम से आत्मकारक ग्रह से गणना करने पर जो छठा ग्रह है, वह भी माहेश्वर है। यह द्वितीय है।। और इसी प्रकार नवमांश तथा द्वादशांश में भी गणना करना। अर्थात् आत्मकारक के नवांश या द्वादशांश से जो छठा हो और बली हो या उच्चादि बलयुक्त हो वह

तीसरा माहेश्वर संज्ञक ग्रह है और सूर्यादि बाकी सभी ग्रहों का स्वामी है।।४।। अथवा कारकस्थान (भाव) से छठे घर के स्वामी की राशि में हो,वह भी (चौथा) माहेश्वर होता है।।५।। यह माहेश्वर ग्रह बताये गये। अब माहेश्वर के समान होने से 'ब्रह्म' नामक ग्रह भी बताया जाता है। विशेष करके फलविचार के लिये भी 'ब्रह्म' ग्रह कथन करते हैं।।६।। (ब्रह्मग्रहलक्षण) लग्न से या सप्तमभाव से ६।८।१२ स्थानों के स्वामियों में जो बलवान् होता है। वह 'ब्रह्मा' ग्रह है। यह नियम विषम राशि के लग्न के लिये है।।७।। लग्न, सप्तम भाव तथा इनके स्वामी में जो बलवान् हो और उच्चादि राशि में स्थित ग्रह से संयोग रहित हो। इन तीन गुणों से युक्त ग्रह भी 'ब्रह्मा' ग्रह है।।८।। लग्न से पीछे की छः राशि, और सप्तम से पीछे की छ राशि (अर्थात् लग्न से छठे भाव तक और सप्तम से १२ भाव तक), इन दोनों भागों में जो ग्रह विषम राशि में हो और बलवान् हो वह भी 'ब्रह्मा' होता है।।९।।११०।।

ब्रह्मणा लक्षणाक्रांते बलवान्वापि पातयोः ।। शनिराहुरथो केतुर्यदि षष्ठो ग्रहो द्विज ।।११।। रवादिगणनायां च शन्यादौ तृतीयो ग्रहः ।। स्थानात्षष्ठराशिगे च षष्ठराश्यधिपोऽथवा ।।१२।। सोऽपि ब्रह्मा ग्रहो ज्ञेयो निर्विशंकं द्विजोत्तम ।। बहुना ब्रह्मणाक्रांते को ग्रहो ग्राह्यमाणकः ।।१३।। संदेहे निर्णयं चात्र तवाग्रे कथयामि च ।। द्वित्र्यादिको ग्रहाणां च योगो ब्रह्मेति लक्षितः ।।१४।। योगःस्वजातिर्यो ग्राह्यः कारकं याति यो ग्रहः ।। बहूनामधिको भागः सोऽपि ब्रह्मा ग्रहउच्यते ।।१५।। राहोर्ब्रह्मत्वयोगेन अधिकारी यदा भवेत् ।। विपरीतं विजानीयात्सर्वेषु न्यूनभागकम् ।।१६।। इत्येकपापे पूर्वोक्तं ब्रह्मणा ग्रहकारकात् ।। रन्ध्राधीशो ष्टमस्थो वा जात्यप्राणैक्यवाक्यतः ।।१७।। द्वौ ब्रह्मा विपरीतार्थे ह्यथवा बहुब्रह्मणा ।। सामान्यभागांतरे हि कतमो ग्राह्यमाणकः ।।१८।। सर्वे भागसमानास्तु अग्रहात्सग्रहो बली ।। इति न्यायेन विज्ञेयं बलवान् ब्रह्मणोच्यते ।।१९।। ब्रह्मत्वेन प्रधानेन ब्रह्मकार्यं करोत्यपि ।। स च ब्रह्मा ग्रहो ग्राह्यः पुरा शंभुप्रणोदितः ।।१२०।।

तथा ब्रह्मा के लक्षण से युक्त और अनुपात से जो बली हो। शनि, राहु अथवा केतु को भी गणना करके जो छठा हो या छठे का स्वामी हो वह भी 'ब्रह्मा' होता है। अनेक ग्रह 'ब्रह्म लक्षण युक्त हों तो कौनसा ग्रह लेना चाहिये।।११३।। इस संदेह में निर्णय कहते हैं। २–३ ग्रह ब्रह्म लक्षण से युक्त हों तो जो आत्मकारक समान जातीय हो अथवा सब ब्रह्मलक्षण ग्रहों में अधिक अंशवाला हो।।११५।। राहु के ब्रह्मत्व लक्षण–सम्पन्न होने पर (अनेकों में अंशाधिक्य निर्णय स्थल में, वक्री होने से कम अंश ही अधिक जानना) सब ग्रहों (ब्रह्मलक्षणसम्पन्न ग्रहों) से यदि कम अंश हों तो राहु भी ब्रह्मा होता है।।११६।। इस प्रकार ग्रहों में तो आत्मकारक से तथा अष्टमाधीश या अष्टमभावस्थ, अथवा पूर्वोक्त सजातीयता या बलाधिक्य से 'ब्रह्मा' का निर्णय करना।।११७।। दो अथवा अनेक ब्रह्मा प्राप्त हों तो जो अधिक अंशवाला हो वह ब्रह्मा।।११८।। और अंश भी समान हों तो "अग्रहात् सग्रहो ज्यायान् सग्रहादधिकग्रहः ।" इस नियम से 'ब्रह्मा' का निर्णय करना चाहिये।। ब्रह्मस्वरूप होने से प्रधान है और ब्रह्मशक्ति के समान कार्यकारी होने से इस ग्रह को ब्रह्मा कहा गया है।।१२०।।

अधुना संप्रवक्ष्यामि ब्रह्ममाहेश्वरौ ग्रहौ ।। विशेषेण फलं ब्रूयात्तवाग्रे द्विजनंदन ।।२१।।
ब्रह्मग्रहाश्रितेशस्य दशादि परिचिंतयेत ।। माहेश्वरर्क्षपर्यन्तं जातकस्यायुषि द्विज ।।२२।।
तत्तद्राशित्रिकोणेषु राशिरंतर्गते मृतिः ।। चरश्च स्थिरपर्यन्तं दशायां चिंतयेद्द्विज ।।२३।। तथा
महादशयां च आयुर्दायं विलोकयेत् ।। विंशोत्तर्यादिकं चैव यथान्यायेषु योजयेत् ।।२४।।
माहेश्वरश्च यो राशिरष्टमेशाश्रयी द्विज ।। तत्तद्राशित्रिकोणेषु राशावंतर्गते मृतिः ।।२५।।
अत्राब्द इति निर्देशात्तत्तद्राशिदशाक्रमः ।। अब्दो द्वादशधा भागे अंतरैकैकराशि च ।।२६।।
एकैकाब्दांतरदशा विज्ञेया गणितागमे ।। द्वादशाल्पे तथाधिक्ये भागं सूर्येण दापयेत् ।।२७।।
प्राप्तेंतरदशा ज्ञेया न्यूनाधिक्यं न जायते ।। अब्दानां द्वादशाधिक्ये भानुराश्यंतरं दशा ।।२८।।
दशाब्दे द्वादशं न्यूनं यस्मिन् राशौ दशा द्विज ।। भागद्वादशमध्ये च समासं तदनंतरम् ।।२९।।
महादशाक्रमेणैव चालनीयेति ज्ञापितम् ।। अर्कभागेंतरदशानयनं द्विजसत्तम ।।१३०।।

इति श्रीबृहत्पाराशरहोराशास्त्रेपूर्वखण्डे रुद्रमाहेश्वरब्रह्मग्रहलक्षणकथनं
नाम द्वाविंशोऽध्यायः ।।२२।।

हे द्विजनन्दन ! हमने ये 'ब्रह्मा' और 'महेश्वर' नामक ग्रह कहे। अब इनका फल कहते हैं।।१२१।। ब्रह्म ग्रह जिस राशि में हो उसके स्वामी की दशा का विचार करे। माहेश्वर राशि की दशा तक जातक का जीवन जानना ।।१२२।। राशिदशा में तत्तत् राशि के त्रिकोण राशि की अन्तर्दशा में मृत्यु कहना। चरराशि का जन्म हो तो स्थिर राशि तक जीवन है।।१२३।। ग्रहदशाओं में, महादशा में आयु के विचार करने के लिये विंशोत्तरी आदि दशाओं में विचार करना चाहिये।।१२४।। अष्टमेशस्थित राशि की दशा में–माहेश्वर के अन्तर में या उससे त्रिकोण राशि दशा के अन्तर में 'मृत्यु' कहना।।१२५।। इस ब्रह्मा का वर्ष देखने के लिये "अत्राब्द०" इस वचन के अनुसार जो राशि दशा है, उसमें १२ का भाग देने से अर्थात् बारह भाग करने से १–१ भाग की १–१ राशि जानना ।।१२६।। और एक एक राशि का १–१ वर्ष जानना। इस प्रकार १–१ वर्ष की अन्तरदशा प्राप्त होगी। १२ से अधिक या कम होने पर १२ का भाग देना।।१२७।। जो वर्ष प्राप्त हो उसमें मृत्यु जानना, उसमें न्यूनाधिक्य नहीं होता। यदि वर्ष १२ से अधिक हों तो सूर्य राशि के अन्तर में मृत्यु कहना।।१२८।। अथवा दशावर्षों में १२ कम कर देना। जो शेष रहे उस राशि की दशा जाने। १२ भाग के भीतर ही दशा होती है।।१२९।। महादशा के क्रम से ही आगे भी विचार करना।। और १२ भाग के अनुसार अन्तरदशा का विचार करना। (सम्भवतः यहां ग्रन्थ का कुछ भाग छूट गया है) ।।१–१३०।। ग्रहलक्षण समाप्त ।।

इति श्रीबृहत्पाराशर हो० शा० पूर्वखंडे भावप्रकाशिकायां रुद्र, माहेश्वर,
ब्रह्मग्रहलक्षणं नाम द्वाविंशोऽध्यायः ।।२२।।

अथ पित्रादिनिर्याणमाह

अधुना संप्रवक्ष्यामि पित्रादेश्च द्विजोत्तम ।। योगं निर्याणका ख्यातं तथा शंभुप्रणोदितम् ।।१।।
लग्नसप्तमयोर्मध्ये यो राशिर्बलवान्द्विज ।। तस्य राशेः समारभ्य क्रमेण पूर्ववद्द्विज ।।२।।
प्रवर्तकदशारीत्या रुद्रशूलदशांतरे ।। भविष्यति पितुर्मृत्युर्निर्विशंकंद्विजोत्तम ।।३।।

पित्रादिनिर्याण

हे द्विजोत्तम! अब हम पित्रादिनिर्याण सुने अनुसार कहते हैं।।१।। लग्न तथा सप्तम से जो राशि बलवान् हो, उस राशि से विचार करके पितृ स्थान दशम के प्रवर्तक ग्रह से रुद्रशूल दशा में पितृमृत्यु होती है।।२।।३।।

अथमातुर्निर्याणम्–लग्नाद्वा सप्तमाद्वाऽपि बली राशि चतुर्थकः ।। तस्याः शूलदशायां च मातुर्मृत्युर्न संशयः ।।४।।

मातृनिर्याण–लग्न या सप्तमभाव में जो इन भावों की बलवान् राशि हो उससे चतुर्थ भाव की रुद्रशूल दशा में माता की मृत्यु होती है।।४।।

भ्रातृनिर्याणम्–लग्नाद्वा सप्तमाद्वापि बली वीक्षेत्तृतीयकम् ।। तस्याः शूलदशायां च भ्रातृनिर्याणमेव च ।।५।।

भ्रातृ निर्याण–लग्न से या सप्तम से देखना, इनमें जो बली हो और तीसरे भाव को देखता हो। उसकी शूल दशा में छोटे भ्राता का निर्याण होता है।।५।।

भगिनीभगिनीपुत्रनिर्याणमाह–लग्नाद्वा सप्तमाद्वापि राशिपंचमके बली ।। तस्याःशूलदशायां च भगिनीपुत्रयोर्मृतिः ।।६।।

भगिनी तथा भागिनेय निर्याण–लग्न से या सप्तम से पंचमभाव में से जो बलवान् हो उसकी शूलदशा में भगिनी तथा भागिनेय की मृत्यु होती है।।६।।

ज्येष्ठभ्रातुर्निर्याणम्–लग्नाद्वा सप्तमाद्वापि एकादशे बली द्विज ।। तस्याः शूलदशायां च निर्याणं ह्यग्रजस्य च ।।७।। लग्नाद्वा सप्तमाद्वापि नवराशिर्बली द्विज ।। निर्विशङ्कं भवेत्तस्य शंभुनां कथितं पुरा ।।८।।

ज्येष्ठभ्रातृनिर्याण–लग्न से या सप्तम से एकादश स्थान में जो बलवान् हो, उसकी शूलदशा में ज्येष्ठ भ्रातां का निर्याण होता है।।७।। लग्न से या सप्तम से नवमभाव में जो बली हो उसकी शूलदशा में ज्येष्ठभ्राता की मृत्यु होती है।।८।।

मातापित्रोः कारकाभ्यां चिंतयेत्पूर्ववद्द्विज ।। तदायुर्निधनं चापि दीर्घादीनां प्रभेदतः ।।९।।
भानुभार्गवयोर्मध्ये सद्वीर्याधिक्यतो द्विज ।। ग्रहादित्यादिरीत्या च स खेटः पितृकारकः ।।१०।।
चंद्रमंगलयोर्मध्ये तथैव रविशुक्रयोः ।। बलेन रहितः सोऽपि पापग्रहनिरीक्षितः ।।११।।

पित्रादिकानां भजते यथाक्रमं द्विजोत्तम ।। उभयोर्बलसाम्ये च उभौ पित्रादिकारकौ।।१२।। द्विविधं चिंतयेत्तत्र प्राण्यप्राणिविभेदतः ।। पित्रादिकारकस्यैवं प्राणिफलं वदाम्यहम् ।।१३।। पित्रादिकारके विप्र शुभग्रहनिरीक्षिते ।। मातृकारकाश्रयीभूतराशिरेतत्त्रिकोणगे ।।१४।। दशायां निधनं वाच्यं मातापित्रोरथ त्रयम् ।। इति प्राणिकारकस्य तवाग्रे कथितं फलम् ।।१५।। अप्राणिकारकस्यैवमष्टमेशो बलान्वितः ।। तस्याश्रयीभूतराशित्रिकोणे निधनं भवेत् ।।१६।।

मातृकारक से माता की, पितृकारक से पिता की योगानुसार प्रथम दीर्घ, मध्य, अल्प आयु का विचार करके पूर्वोक्त चतुर्थ और दशम भाव से इनकी आयु तथा मृत्यु का विचार करें।।९।। सूर्य और शुक्र में से जो बली हो और अंशों में अधिक हो वह पितृकारक है।।१०।। मंगल और चन्द्रमामें से तथा सूर्य,शुक्रमें से जो बलवान् न हो,पापग्रहदृष्ट हो,वह भी पितृ, मातृकारक होता है।।११।। और दोनों का समान बल हो तो दोनों ही कारक होते हैं ।।१२।। और इससे प्राणी अप्राणी भेद से दोनों विचार करे। इन पित्रादि कारक का फल कहते हैं।।१३।। पित्रादि कारक के शुभग्रहदृष्ट होने से मातृकारक की आश्रयी राशि तथा उसकी त्रिकोण राशि की दशा में माता, पिता, भ्राता की मृत्यु कहना। इस प्रकार बलवान् कारक का फल कहा गया।।१५।। तथा निर्बल कारक का अष्टमेश यदि बली हो तो तत् स्थित राशि के त्रिकोण में निधन होता है।।१६।।

यदा रंध्रेश वीर्याढ्यं तच्छूले निधनं द्विज ।। पितृमातृकारके च शूले निधनमेव च ।।१७।। यद्वा प्राणिकारकस्य ह्येवं ऋक्षांतरेपि च ।। फलं वै निर्दिशेद्विप्र परं तद्भावनायके ।। अप्राणिकारकफलं निर्दिशेद्व्ययगे द्विज ।।१८।। सर्वान् प्रकारानित्येवं चिंतयेद्रुद्रशूलवत् ।।१९।। अल्पाद्यायुर्योगके चेदायुर्दानयनं द्विज ।। दशासंचारभेदेन ह्यायुर्दायं च पूर्ववत् ।।२०।। राश्यादौ निर्णयं चादौ तद्विशेषफलाय वै ।। तन्वादिव्ययभावेषु भावं तत्तत्समुच्चितम् ।।२१।। तत्तकारकमाश्रित्य राश्यारूढं विचिंतयेत् ।।द्वारबाह्यादिकं सर्वं राश्याद्यं द्विजसत्तम ।।२२।। अधुना संप्रवक्ष्यामि पितुर्निधनहेतवे ।। विशेषकं दर्शयंति पुनरुक्तं च वै द्विज ।।२३।। रविर्ज्ञेयः क्रियायोगे लग्नाद्विष्फर्क्षगे स्थितौ ।। बुधसूर्याश्रयीभूतलग्नमेषे दशान्तरे ।।२४।।

और यदि अष्टमेश बली हो तो उसकी शूलदशा में निधन होता है।। अथवा पितृ, मातृ कारक की दशा में (शूलदशा में) निधन होता है।।१७।। अथवा बलवान् कारक की शूलदशा में मृत्यु होती है।।१८।। इसी रीति से रुद्र ग्रह के समान पूर्वोक्त सभी प्रकारों से इसमें भी विचार करना चाहिए।।१९।। अल्प, मध्यादि आयु के विचार में भी पूर्व के समान आयुयोग से आयु निश्चय करना। पश्चात् दशा की कथितरीति से दशा देखना।।२०।। तत्तत् भावों के विचार करने के लिए राशि आदि का निर्णय उनके स्वामी आदि का विचार जैसा प्रथम कहा है उनका विषयविशेष का विचार करना, इसी प्रकार १२ भावों का विचार करना।।२१।। तथा कारक विचार एवं आरूढ लग्न विचार तथा द्वार, बाह्य राशि विचार आदि पूर्ववत् इसमें भी करना।।२२।। अब पिता की मृत्यु का ज्ञान प्राप्त करने के लिए कुछ विशेष विचार कहते हैं।।२३।। इस कार्य का कर्ता सूर्य है, वह सूर्य, लग्न से त्रिकोण स्थान में स्थित हो (यह

विचार मेष लग्न में करना) तो बुध या सूर्य स्थित राशि की दशा में मृत्यु होती है।।२४।।

लग्नभूतस्य मेषस्य सिंहस्यापि दशांतरे ।। वक्तव्यं पितृनिधनं निर्विशंकं द्विजोत्तम ।।२५।। यदि लग्ने पापखेटा मेषराशौ रविस्तथा ।। योगे मेषमहापाके वाप्यामंतर्गते मृतिः ।।२६।। अधुना संप्रवक्ष्यामि तवाग्रे द्विजनंदन ।। बाल्ये च पित्रोर्मरणं मयोक्तं च विशेषतः ।।२७।। पित्रोः कारकयोर्विप्र प्राण्यप्राणिहीनोऽपि वा ।। व्यर्कांते पापयोगे च शुभयोगविवर्जिते ।।२८।। दशाब्दान्यूनमित्येवं पित्रोर्मृत्युर्यथा क्रमम् ।। रविदृष्टाशुभं दृष्टौ नायं योगो द्विजोत्तम ।।२९।। रव्यारूढविलग्नेऽस्मिन्पित्रोर्भावं विचारयेत् ।। तद्दशायां फलं वाच्यं पित्रोर्दुःख-सुखादिकम् ।।३०।।

तथा लग्न मेष में लग्न की राशि मेष की सिंह की दशा में पिता की मृत्यु कहनी चाहिए।।२५।। यदि लग्न में पापग्रह और मेषराशि में सूर्य हो, इस योग में मेषराशि की महादशा में और केन्द्रराशि के अन्तर में पिता की मृत्यु कहना।।२६।। अब हम बाल्यावस्था में जिन योगों से पितृमरण होता है, वे योग कहते हैं।। मातृकारक तथा पितृकारक का निर्णय करके 'प्राणीरुद्र' तथा 'अप्राणी–रुद्र का' निर्णय करे और योगों का विचार करे, यदि सूर्यरहित पापग्रहों का योग हो और शुभग्रहों से योग नहीं हो तो प्रथम शूल दशा में ही माता तथा पिता की मृत्यु जानना।।२८।। सूर्य दृष्टि युक्त अशुभ दृष्टि हो तो यह योग नहीं समझना ।।२९।। इसी प्रकार सूर्य के आरूढ लग्न से भी माता-पिता की मृत्यु का विचार करे।। और आरूढ लग्न की दशा तथा आरूढ लग्न से तत्तत् भावों से माता पिता के सुख दुःख आदि का भी विचार करे।।३०।।

अथ कलत्रनिधनमाह–कलत्रकारकः खेटस्तदा स्त्रीराशिचिंतनम् ।। तत्त्रिकोणदशायां च कलत्रनिधनं भवेत् ।।३१।।

भार्यानिधन विचार–प्रथम भार्याकारक ग्रह का निर्णय करे। पश्चात् उससे सप्तमभाव का विचार करे। उस सप्तमभाव या सप्तमभाव से त्रिकोण राशि की दशा में मृत्यु का विचार करना।।३१।।

अथान्यनिधनमाह–तत्तत्कारकाश्रये च त्रिकोणर्क्षदशांतरे ।। तेषां च मातुलादीनां निधनं भवति ध्रुवम् ।।३२।। एवं भावकलत्रादितद्दशारुढयंत्रके ।। चिंतयेदायुः सामर्थ्यं सर्वं फलसमानकम् ।।३३।। लग्नाच्च कारकाद्वापि तृतीये पापखेचरे ।। युते दृष्टेऽथवा विप्र दुष्टं मरणमुच्यते।।३४।। तत्तत्कारकतदीशात्तृतीये पापयोगकृत्।।तेषां तेषां प्रवक्तव्यं दुष्टं मरणमेव च।।३५।। तत्तद्भावात्कारकेशात्तृतीये शुभदृष्टियुक्।।तेषां तेषां शुभैर्योगैर्मरणं भवति द्विज।।३६।। शुभाशुभद्वये योगे दृष्टो नापि तृतीयगे ।। शुभाशुभात्मकं विप्र मरणं भवति ध्रुवम् ।।३७।।

मातुल आदि की मृत्यु का विचार–जिसके निधन का विचार करना हो उसके कारक की

राशि अथवा त्रिकोण राशि की दशा या अन्तरमें उनके निधन का निर्देश करे।।३२।। इसी प्रकार भार्या आदि के भाव से तथा उन भावों के आरूढ लग्न से प्रथम आयु अल्पादि का निर्णय करे। पश्चात् फलाफल तथा निधन का विचार करे।। लग्न से या कारक (आत्मकारक) से तीसरे भाव में पापग्रह हो तो कष्ट मे मृत्यु होती है।।३४।। उस २ सम्बन्धी कारक से या कारकेश से तृतीयभाव में यदि पापयोग हो तो उन २ सम्बन्धी का कष्टकारी निधन कहे।।३५।। तथा यदि उस भाव के कारकेश से तृतीय भाव पर यदि शुभदृष्टि हो तो उन २ सम्बन्धियों का मरण शुभयोग से होता है।।३६।। यदि शुभ या अशुभ कोई भी दृष्टि नहीं हो तो साधारण रूप से मृत्यु जाने।।३७।।

अथ मरणनिमित्तान्याह

तृतीये भानुना दृष्टे तथा युक्ते बलाढ्यके ।। राजहेतोश्च मरणं निर्विशंकं द्विजोत्तम ।।३८।। तृतीयचंद्रेण युते षष्ठे वा पश्यतो मृतिः ।। तृतीयशनिराहुभ्यां दृष्टे वापि युतेथ वा ।।३९।। विषार्तिमरणं वाच्यं जलाद्वा वह्निपीडनात् ।। गर्तादुच्चात्प्रपतनं बंधनाद् वा मृतिर्भवेत् ।।४०।। तृतीये चंद्रमांदी च षष्ठे वापि युते द्विज ।। कृमिकुष्ठादिना सत्त्वमरणं च विनिर्दिशेत् ।।४१।। तृतीये गुरुणा दृष्टे युक्ते शोकादिना मृतिः ।। तृतीये भृगुयुग्दृष्टे मेहरोगेण वै मृतिः ।।४२।। बहुयुक्ते तृतीये च बहुरोगयुता मृतिः ।। तृतीयके तु सत्खेटैर्योगे दृष्टियुतेथ वा ।।४३।। तथैव चन्द्रयोगे च तत्तद्रोगेण वै मृतिः ।। अनेन योगभावेन तस्य मृत्युः सुनिश्चितः ।।४४।।

मरण निमित्त

तृतीयभाव यदि बलवान् सूर्य से दृष्ट हो तो मृत्यु में कारण राजसम्बन्धी होता है।।३८।। इसी प्रकार तीसराभाव चन्द्रमा से युत या दृष्ट अथवा षष्ठभाव में चन्द्रमा हो तो राजनिमित्त ही मृत्यु जानना।।३९।। तृतीयभाव शनि राहु से युक्त अथवा दृष्ट हो तो विष से या अग्नि, जल से मृत्यु होती है।। अथवा ऊंचे से गिरकर या गढ़े में गिरकर या फांसी से मृत्यु होती है।।४०।। तृतीय भाव में चन्द्रमा तथा मान्दी हो अथवा षष्ठभाव में हो तो गलितकुष्ठ आदि या व्याघ्र आदि से मृत्यु हो।।४१।। तृतीयभाव गुरु से युक्त अथवा दृष्ट हो तो चिन्ता आदि से तथा शुक्रयुक्त हो तो प्रमेह रोग से मृत्यु होती है।।४२।। यदि अनेक ग्रह युक्त दृष्ट हो तो अनेक रोगों से मृत्यु होती है।।४३।।तृतीय भाव सौम्यग्रहोंसे युक्त दृष्ट हो अथवा चन्द्रमा से युत दृष्ट हो तो उक्त तत् २ रोगों से मृत्यु होती है।।४४।।

अथ निधनदेशभेदमाह

तृतीये शुभयोगेन शुभदेशे मृतिर्भवेत् ।। पापेन कीकटे देशे मिश्रे मिश्रस्थले मृतिः ।।४५।। तृतीये गुरुशुक्राभ्यां योगे ज्ञानेन वै मृतिः ।। गुरुशुक्रातिरिक्तान्ययोगे शिथिलता मृतौ ।।४६।। मिश्रे मिश्रा मृतिरिति एवं कर्माणि विप्र भोः ।। कर्मभावे विशेषेण फलदाता द्विजोत्तम ।।४७।। लग्नद्वादशमध्ये च शन्यादित्रितयंयदि ।।. स्थित पित्रोर्न संस्कार कुर्वीत निजहस्ततः ।।४८।। लग्नादीनां च भावानां पूर्वार्द्धे द्वादशादिकम् ।। परार्द्धे स्थितमन्यादि वीक्षितेपि न संशयः ।।४९।।

लग्नादि यस्य मध्ये तु शुभग्रहनिरीक्षितम् ।। नामयोगं विजानीयात्पुरा शंभुप्रणोदितम् ।।५०।।

इति श्रीबृहत्पाराशरहोराशास्त्रेपूर्वखंडे निधनकथनं नाम त्रयोविंशतितमोऽध्यायः ।।२३।।

निधन देशभेद

तृतीयभाव शुभग्रह युक्त हो तो शुभदेश में मृत्य होती है। पापग्रह युक्त हो तो दुष्ट देश में। तथा दोनों प्रकार के ग्रह हों तो मिश्र देश (अच्छे बुरे मिश्रित देश) में मृत्यु होती है।।४५।। तृतीयभाव में गुरु या शुक्र का योग हो तो ज्ञानावस्था में, इनसे अन्य शुभग्रह योग हो तो शरीर धीरे २ क्षीण होकर मृत्यु होती है।।४६।। तथा तृतीयभाव में शुभपाप मिश्र योग हो तो मिश्रितभाव से। हे विप्र! इस प्रकार कर्मानुसार मृत्यु होती है।। कर्म के ही फलदाता से सूर्यादि ग्रह हैं।।४७।। लग्न से बारहवें स्थान में यदि शनि, राहु, केतु हो तो जातक को अपने माता पिता का कर्मकाण्ड करने का सुयोग नहीं प्राप्त होता।।४८।। लग्नादि बारह भावों में पूर्वार्द्ध और परार्द्ध की छः२ राशियाँ हैं। पूर्वार्द्ध में शन्यादि का दृष्टियोग हो तो पूर्वोक्त फल होता है। परार्द्ध में अन्य दृष्टियोग हो तो पूर्वार्द्ध का शन्यादि योग व्यर्थ होता है।।४९।। लग्न आदि भावों में शुभग्रह की दृष्टि जिस भाव पर हो उसका नाम मृत्यु के बाद प्रसिद्ध होता है।।५०।।

इति श्री० बृ० पा० हो० शा० पू० ख०सा० निधनयोगकथनं
नाम त्रयोविंशतितमोऽध्यायः ।।२३।।

अथ राजयोगाध्यायः

पराशर उवाच–अथातः संप्रक्ष्यामि राजयोगादिकं परम् ।। ग्रहाणां स्थानभेदेन राशिदृष्टिवशात्फलम्।।१। तपः स्थानाधिपो मंत्री मंत्राधीशो विशेषतः ।। उभावन्योन्यसंदृष्टौ जातश्चेदिह राज्यभाक् ।।२।। यत्र कुत्रापि संयुक्तौ तौ वापि समसप्तमौ ।। राजवंशोद्भवो बालो राजा भवति निश्चितम् ।।३।। वाहनेशस्तथा माने मानेशो वाहने स्थितः ।। बुद्धिधर्माधिपाभ्यां तु दृष्टश्चेदिह राज्यभाक् ।।४।।

राजयोगाध्याय

अब श्रेष्ठ राजयोग आदि कहते हैं। उन योगों में ग्रहों के स्थान भेद से राशि और दृष्टि द्वारा फल कहा जायगा।।१।। सूर्यादिग्रहों में स्थान बल से एकादश स्थान का स्वामी मंत्री होता है। और विशेष करके मंत्राधीश (पंचमाधीश) मन्त्री पद से कहा जाता है। ये दोनों परस्पर दृष्टियुक्त हों तो जातक राजा होता है।।२।। वे दोनों किसी भी श्रेष्ठस्थान में एक साथ हों, अथवा आपस में सप्तमस्थान में हों तो जातक (राजवंशी हो तो) निश्चय राजा होता है।।३।। चतुर्थस्थान का स्वामी दशमभाव में, और दशमेश चतुर्थभाव में हो तथा पंचम नवम के स्वामी से दृष्ट हो तो राज्यभोगी होता है।।४।।

सतेशकर्मेशसखेशलग्ननाथा यदा धर्मपसंयुताश्चेत् ।। नृपोन्तरश्चेदिह वारणाढ्यः स्वतेजसा

व्याप्तदिगंतरालः ॥५॥ सुखकर्माधिपौ चैव मंत्रिनाथेन संयुतौ ॥ धर्मेशिनाथ वा युक्तौ जातश्चेदिह राज्यभाक् ॥६॥ सुतेश्वरौ धर्मपसंयुतश्चेल्लग्नेश्वरेणापि युतो विलग्ने ॥ सुखेऽथ वा मानगृहेऽथ वा स्वाद्राज्याभिषिक्तो यदि राजवंश्यः ॥७॥ धर्मस्थाने गुरुक्षेत्रे स्वगृहे भृगुसंयुते ॥ पंचमाधिपसंयुक्ते जातश्चेदिहराज्यभाक् ॥८॥ निशार्द्धाच्च दिनार्द्धाच्च परं सार्द्धद्वि नाडिका ॥ शुभा तदुद्भवो राजा धनी वा तत्समोपि वा ॥९॥ चंद्रःकविं कविश्चन्द्रं पश्यत्यपि तृतीयगः ॥ शुक्राच्चंद्रे ततः शुक्रे तृतीये वाहनार्थवान् ॥१०॥

पञ्चमेश, दशमेश, तृतीयेश और लग्नेश ये सब यदि नवमेश से युक्त हों तो जातक यदि राज्यवंश में हो तो तेजस्वी, यशस्वी तथा हाथी आदि युक्त राजा होता है।॥५॥ सुख (४) कर्म (१०) के स्वामी यदि पंचमेश से युक्त हों अथवा नवमेश से युक्त हों तो जातक राज्यभोगी होता है।॥६॥ पञ्चमेश यदि लग्नेश और नवमेश से युक्त हो और लग्न में स्थित हो या चतुर्थ अथवा दशम में हो तो राजा होता है।॥७॥ नवमभाव में गुरु की राशि हो और गुरु स्वगृही तथा शुक्रयुक्त हो एवं पंचमेश से युक्त हो तो राजा होता है।॥८॥ दिनार्द्ध और रात्र्यर्द्ध से २॥ घड़ी (१ घण्टा) के भीतर जिसका जन्म हो वह राजा या धनी होता है।॥९॥ तृतीयभाव में स्थित चन्द्रमा या शुक्र परस्पर देखते हों। अथवा शुक्र से चन्द्रमा तीसरे या चन्द्रमास से शुक्र तीसरे हो तो जातक धन वाहन युक्त होता है।॥१०॥

अथ द्वादशयोगमाह

लग्नवितौ स्वदुश्चिक्यौ त्रितुर्यौ तुर्यपंचमौ ॥ द्विषात्मजौ षष्ठमारौ स्त्रीरन्ध्रौ मृतिभाग्यकौ ॥११॥ धर्मकर्मौ खलाभौ च रिष्फलाभौ तनुव्ययौ ॥ पुष्पकला लाभयोगाद्यं राजभृत्यं चमूपकम् ॥१२॥ आमात्यं दारुणं कर्म राजयोगं प्रियामृतिम् ॥ भाग्यव्ययं राजयोगं भूमिद्रव्यमृणव्ययम् ॥१३॥ वित्तहानिर्द्वादशैते योगा वै सर्वदा स्मृताः ॥१४॥

अथ चतुर्विधसंबंधमाह

प्रथमः स्थानसंबंधो दृष्टिजस्तु द्वितीयकः ॥ तृतीयस्त्वेकतो दृष्टिः स्थित्येकत्र चतुर्थकः ॥१५॥ अन्योन्यगौ तथा स्वे स्वे संयुतावन्यभे स्थितौ पूर्णेक्षितौ मिथो वापि चैकवर्गगतौ यदा ॥१६॥

अथाग्रे राजाऽमात्ययोगादिबाधकमाह

तदा योगो भवेत्तत्र विबलो नैव योऽसकृत् ॥ शत्रुयुक्तेक्षितो पापवीक्षितो नैव योगकृत् ॥ व्ययमृत्युषडायस्थावथवा समसंयुतौ ॥१७॥ यदाऽधीशौ तदाप्यत्र भवतो नैव योगदौ ॥ राजामात्यादियोगानां वक्रगौ नाशकारकौ ॥१८॥

द्वादश योग

१२ योग–अंको में लिखे हुए भावों के स्वामी का परस्पर स्थान या दृष्टि सम्बन्ध होने से पुष्कल नाम के १२ योग होते हैं। १।२–२।३–३।४–४।५–५।६–६।७–७।८–८।९–९।१०–

१०।११-११।१२-१२।१ क्रम से इनका फल यह है–
लाभयोग, राजा की नौकरी, फौज में बड़ा पद, राजा का मंत्री या मंत्री तुल्य, कठिन कर्म करनेवाला, राजा या धनी, स्त्री की मृत्यु, धनहीन, राजयोग, भूमि और द्रव्य, खर्चा और कर्जा और धन हानि ।। ये १२ योग हैं।।११।।१२।।१३।।१४।।

ग्रहों के चार प्रकार के सम्बन्ध

(१) स्थान सम्बन्ध (२) दृष्टि सम्बन्ध (३) एकत्र दृष्टि सम्बन्ध (४) एकत्र स्थिति सम्बन्ध ।। इनमें विशेष स्थान-सम्बन्ध में परस्पर एक दूसरे के स्थान में होना अथवा अपनी राशियों में किसी राशि का दोनों में होना अथवा मित्र की राशि में एक साथ दोनों का होना अथवा नवमांश आदिक वर्ग में एक वर्ग में होना। इसी प्रकार दृष्टि सम्बन्ध के भी भेद जानना ।।१५।।१६।।

राजा मन्त्री योग के बाधक योग–जहां राजयोग हो किन्तु ग्रह बलहीन हो या शत्रुग्रह से दृष्ट या युक्त हो अथवा पापग्रह देखते हों तो राजयोग का फल नहीं होता।। अथवा ६।८।११।१२ इन स्थानों में हो तो राजयोग का फल नहीं होता।।१७।। अथवा राजयोग कारक ग्रह वक्री हों तो नाशकारक होते हैं।।१८।।

अथ पारिजातादिशुभाशुभविचारमाह

त्रिषडायाष्टरिष्फेशाः पारिजाते व्यवस्थिताः ।। दायिकान्यभवे भावे यत्र ये ये विचारिताः ।।१९।। द्वितीये चोत्तमास्ते ते तृतीये चान्यदा मताः ।। चतुर्थे ते च राजानः पंचमे गुरवो मताः ।।२०।। भूदेवाश्च तथा षष्ठे देवा ज्ञेयाश्च सप्तमे ।। अष्टमे पशवो ज्ञेया दुःखदाश्चात्र जन्मनि ।।२१।। दुःस्था ६।८।१२ श्चैव भवंत्येते तदातेनैव बाधकाः ।। केंद्रकोणस्थिताश्चैव बाधकाश्चात्र जन्मनि ।।२२।। विषमे च भवेत्स्त्रीणां समे वै पुरुषो मतः ।। षष्ठे वै चोरितं द्रव्यं ह्यष्टमे हननं कृतम् ।।२३।। हननं हरणं रिष्फे तृतीये कैतवं कृतम् ।। पौंश्चल्यं बंधने प्रोक्तंकृतघ्नत्वंभवेत्कृतम् ।।२४।।

पारिजात आदि योग

३।६।११।८।१२ इन स्थानों के स्वामी पारिजात योग में पहलै जैसा कहा है वैसे स्थित हों तो पारिजात योग होता है तथा पूर्वोक्त स्थानों के स्वामी द्वितीय स्थान में हों तो उत्तम हो, तृतीय स्थान में हों तो मध्यम, चौथे में हों तो राजा के समान, पंचम भाव में हों तो गुरु, षष्ठ भाव में हों तो भूदेव, सप्तम में हों तो देव, आठवें में पशु, छठे–बारहवें में हो तो बाधक दुःखदायी, जन्म में हो तो दुःखद, केन्द्र और त्रिकोण में हो तो बाधक। यह योग स्त्रियों के लिये विषम राशि में और पुरुषों के लिये सम राशि में देखना चाहिये। इन योगों का फल–स्त्रीजातक के लिये उपर्युक्त ग्रह छठे घर में हो तो चोरी करनेवाली, आठवें में हो तो हत्यारिणी, बारहवें हो तो हत्या और चोरी करनेवाली, तीसरे हों तो धूर्त, सप्तम हो तो व्यभिचारिणी और कृतघ्न होती है।।१९।२०।।२१।।२२।।२३।।२४।।

अथ पारिजातादिफलमाह

तन्वीशः परिजातस्थस्तदा दाता भवेन्न हि ॥ उत्तमे चोत्तमो दाता गोपुरे पुरुषत्वयुक् ॥२५॥ सिंहासने भवेन्मान्यः शूरः पारावतांशके ॥ सभासदो देवलोके द्वितीये च मुनिर्मतः ॥२६॥ ऐरावते गजे दुष्टो दिग्योगो न भवेद्ध्रुवम् ॥ रथेशो वापि जायेशो राज्येशोप्येवमेव हि ॥२७॥ पारिजाते सुताधीशो विद्या चैव कुलोचिता ॥ उत्तमे चोत्तमा विद्या गोपुंरे भवनांकिता ॥२८॥ सिंहासने तथा वाच्या साचिव्येन युता तथा ॥ पारावते तथा वाच्यं ब्रह्मविद्यासमन्वितम् ॥२९॥ सुतेशे देवलोकस्थे कर्मयोगान्वितो भवेत्॥उपासना द्वितीये स्याद्भक्तिस्त्वैरावते भवेत् ॥३०॥ धर्मेशे पारिजातस्थे तीर्थकृत्त्वत्र जन्मनि ॥ पूर्वेपि मनुजो वाच्यो ह्युत्तमे चोत्तमो भवेत् ॥३१॥ गोपुरे मखकर्ता च परे चैवात्र जन्मनि सिंहासने भवेद्वीरः सत्यवादी जितेन्द्रियः ॥३२॥ सर्वधर्मपरित्यागी धर्मैकपदमाश्रितः ॥ पारावते परे चैव हंसश्चैवात्र जन्मनि ॥३३॥ लगुडी पितृदण्डी स्याद्देवलोके न संशयः ॥ द्वितीये चेंद्रपदं गच्छेत्कृत्वा वै हयमेधकम् ॥३४॥ ऐरावते तु धर्मात्मा स्वयं धर्मो भविष्यति ॥ श्रीरामः कुंतिपुत्रो वा द्वितीयो न भविष्यति ॥३५॥ पारिजातादिकानां च फलमेवैकसंस्थितम् ॥

पुरुषों के लिये

लग्नेश से पारिजात योग होता हो तो जातक कंजूस होता है। उत्तम नाम के पारिजात में उत्तम दानी होता है। गोपुरांश में पुरुषार्थी सिंहासनांश में माननीय, पारावतांश नाम के अंश में शूरवीर, देवलोकांश में सभासद, द्वितीय अंश में मुनि, ऐरावत अंश और गज अंश में दुष्ट, दिगंश में स्त्री, धन, सम्पत्ति भोगी और शुभ अंश में राजभोगी होता है। पारिजात योग में पंचमेश योग करता हो तो कुलोचित विद्या प्राप्त हो। शुभग्रह हो तो उत्तम विद्या, नहीं तो मध्यम होती है। गोपुर अंश में भवन (मकानयुक्त) युक्त हो। सिंहासनांश में मंत्रीपद युक्त हो और ब्रह्म विद्या जाननेवाला हो। सुतेश यदि देवलोक अंश में हो तो जातक कर्मयोगी, उपासक तथा भक्त होता है। नवमेश यदि पारिजात योग कर्ता हो तो जातक तीर्थयात्रा करनेवाला होता है। पूर्वजन्म में भी वह मनुष्य धार्मिक था, ऐसा कहना चाहिये। गोपुर अंश में यज्ञ कर्ता तथा धार्मिक सिंहासनांशमें शूरवीर, सत्यवादी और जितेन्द्रिय होता है। नवमेश यदि पारावतांशयोग में कम अंश पर हो तो सर्वधर्म परित्यागी होता है। देवलोकांश में हो तो दण्डी संन्यासी होता है। नवमेश यदि पारावत योग में एवं ऐरावत अंश में हो तो जातक इस जन्म में अश्वमेध यज्ञ करके और मृत्यु के बाद स्वर्ग में इन्द्र पदवी को प्राप्त होता है। और यदि इस लोक में जन्म ले तो स्वयं धर्म स्वरूप श्रीरामचन्द्रजी के समान या अर्जुन के समान होता है कि जिसके बराबर संसार में दूसरा कोई नहीं होता ॥२५.से ३५॥

अथ विशेषयोगफलमाह

अथ योगफलं ब्रूमो ज्ञातव्यं च विशेषतः ॥३६॥ लक्ष्मीस्थानं त्रिकोणं च विष्णुस्थानं च केंद्रकम् ॥ तयोः संबंधमात्रेण राजयोगादिकं भवेत् ॥३७॥ केंद्रपुत्रेशयोर्योगे योगोऽमात्याभिधो भवेत् ॥ पारिजातादिके तौ च तदा स प्रबलो भवेत् ॥३८॥ लग्नेशेन धनेशाद्या न्नैव योगः

सुखाधिपात् ।। मंत्रेशोऽमात्यतां याति सप्तमाधीशयोगतः ।।३९।। कर्मेशस्य तु योगेन राजा साचिव्यतामियात् ।। केंद्रधर्मेशयोर्योगे राजा वै राजवंदितः ।।४०।। धर्मकर्माधिपौ चैव व्यत्यये तावुभौ स्थितौ ।। युक्तश्चेद्वै तदा वाच्यः सर्वसौख्यसमन्वितः ।।४१।। पारिजाते स्थितौ तौ तु नृपो लोकानुशिक्षकः ।। उत्तमो चोत्तमो भूपो गजवाजिरथादिमान् ।।४२।। गोपुरे नृपशार्दूलो पूजितांघ्रिर्नृपैर्भवेत् ।। सिंहासने चक्रवर्ती सर्वक्षोणीप्रपालकः ।।४३।। अस्मिन्योगे हरिश्चन्द्रो मानवश्चोत्तमस्तथा ।। बलिर्वैश्वानरो राजा अन्ये चैव तु चक्रपाः ।।४४।। कलौयुगे च भविता तथा राजा युधिष्ठिरः ।। भविता शालिवाहश्च तथा विजयाभिनंदनः ।।४५।। नागार्जुनस्तथा भूपस्तदन्ये चैव गोपुरे ।। पारावतांशकेन्ये च जाता मन्वादयस्तथा ।।४६।। देवलोके तु प्रथमे हरेश्चैवावतारणम् ।। मत्स्यादिकल्किपर्यन्ताःसर्वे वर्गोद्भवा मताः ।।४७।। द्वितीये देवलोके तु ज्ञेयाश्चेंद्रादयः परे ।। ऐरावते च प्रथमे जातः स्वायंभुवो मनुः ।।४८।। एवं सर्वप्रकारेण ज्ञात्वा चैवविचक्षणः ।। कोणकेन्द्रादिनाथानां योगः सर्वविधायकः ।।४९।। चतुःकेन्द्राधिपौ द्वौ च कौणपौ च धनाधिपः ।। ऐरावतादिसंस्थास्तेऽकुर्वंल्लोकोत्तरोत्तरम् ।। अनेनैव प्रकारेण वेत्ति सर्वत्र बुद्धिमान् ।।५०।।

इति श्रीबृहत्पाराशरहोराशास्त्रेपूर्वखण्डसारांशे राजयोगादिविचारकथनं नाम चतुर्विंशोऽध्यायः ।।२४।।

विशेष योग

अब राजयोग में विशेष योग कहते हैं उन्हें यथार्थ रूप से जानना चाहिये। त्रिकोण स्थान लक्ष्मी का स्थान है और केन्द्र विष्णु का स्थान है। इनके सम्बन्ध से ही राजयोग होता है। केन्द्रेश और पंचमेश के योग से मंत्री योग होता है और यह योग पारिजात योग के नियमानुसार हो तो प्रबल राजयोग और प्रबलमंत्री योग होता है। लग्नेश का धनेश से योग हो तो राजयोग नहीं होता है। लग्नेश का सुखेश से सम्बन्ध हो तो एक योग, सुखेश का पंचमेश से अथवा सप्तमेश से योग हो तो यह अमात्य योग है अर्थात् मंत्री योग है। लग्नेश का दशमेश से योग हो तो राजा अथवा मंत्री होता है। नवमेश का केन्द्रेश से योग हो तो राजा होता है। नवम और दशम के स्वामी परस्पर एक दूसरे के स्थान में अथवा दोनों नवम में या दशम में हों तो सम्पूर्ण सम्पत्तिशाली होता है। यदि पारिजात योग भी होता हो तो निश्चय राजा होता है। हाथी, घोड़े, आदि युक्त उत्तम राज्य मान्य होता है। गोपुर अंश में हो तो राजाधिराज होता है। सिंहासनांश में हो तो चक्रवर्ती, सम्पूर्ण पृथ्वी का शासक राजा होता है। इस सिंहासनांश योग में जन्म लेने वाला जातक मानवश्रेष्ठ हरिश्चन्द्र अथवा राजा बलि के समान होता है। कलियुग में जन्म हो तो युधिष्ठिर शालिवाहन के समान होता है। गोपुर अंश में होने से नागार्जुन के समान राजा होता है। पारावतांश में ऋषि मनु के समान होता है। तथा देवलोक में ईश्वररूप तथा इस लोक में ईश्वरांश अवताररूप मत्स्यावतार से कल्कि अवतार पर्यन्त के अवतारों का आविर्भाव पारावतांश में होता है। देवलोक में इन्द्र होता है, ऐरावतांश में स्वायंभुव मनु के समान होता है।। इस प्रकार सूक्ष्म विचार करके देखने से प्रतीत होगा कि केन्द्र और कोण स्थान के योग ही सब महान् पुरुषों के जनक हैं। चार स्थान केन्द्र के तथा २

स्थान त्रिकोण के और धनस्थान ये ही सात स्थान संसार में उत्तरोत्तर महान् विभूतियों के जन्म देनेवाले हैं ।। श्लोक ३६ से ५० ।।

इति श्री बृ० पा० हो० शा० पू० खं० सा० राजयोगादिविचारकथनं नाम चतुर्विंशोऽध्यायः ।।२४।।

पराशर उवाच

अथातः संप्रवक्ष्यामि राजयोगान्द्विजोत्तम ।। येषां विज्ञानमात्रेण नृपपूज्यो जनो भवेत् ।।१।। ये ये योगाः पुरा शंभुभाषिताः शैलजाग्रतः ।। तेषां सारमहं वक्ष्ये तवाग्रे द्विजनन्दन ।।२।। चिंतयेत्कारके लग्ने जनुर्लग्नेथ वा द्विज ।। राजयोगप्रदातारौ लग्नौ द्वौ प्रणतोदितौ ।।३।। आत्मकारकपुत्राभ्यां राजयोगं प्रकल्पयेत् ।। तनुपंचमनाथाभ्यां तथैव द्विजसत्तम ।।४।। विलग्नात्पंचमाधीशः पुत्रात्माकारको द्वयोः।। विप्र संबंधयोगेन ज्ञेया वीर्यबलान्विताः ।।५।। लग्नेऽथ सप्तमे वापि लग्नेशे सप्तमाधिपे ।। पुत्रात्मकारकौ विप्र लग्ने वा सप्तमेपि च ।।६।। संबंधे वीक्षिते तत्र दृष्टैवं पंचमाधिपे ।। उच्चता च नवांशस्थे शुभग्रहनिरीक्षिते ।।७।। महाराजेति योगोयं सोत्र जातः सुखी नरः ।। गजवाजिरथैर्युक्तः सेनासंगमनेतथा ।।८।। भाग्येशत्कारके लग्ने पंचमे सप्तमेऽपि वा ।। राजयोगप्रदातारौ गजवाजिधनैरपि ।।९।। कारकाद्द्विचतुर्थे च पंचमे भावगे द्विज ।। शुभखेटो न संदेहो राजयोगं ददाति च ।।१०।।

हे द्विजोत्तम ! अब और राजयोग कहते हैं, जिनके ज्ञान से मनुष्य राजपूज्य होता है।।१।। जो योग भगवान् शंकर ने पार्वती के सामने कहे थे, उन योगो में से कुछ सारभूत योग तुमको सुनाते हैं।।२।। भगवान् ने दो लग्नों से राजयोग का विचार कहा है, अतः उनके कथनानुसार जन्मलग्न तथा कारकलग्न से राजयोग का विचार करना चाहिये।।३।। आत्मकारक और पंचमेश से राजयोग होता है। इसी प्रकार लग्नेश और पंचमेश से राजयोग का विचार करे।।४।। लग्न, पञ्चमभाव का सम्बन्ध यदि आत्मकारक और पुत्रकारक से हो और लग्न, पंचम तथा कारक बलवान् हों तो राजयोग होता है।।५।। लग्न अथवा सप्तमभाव में—लग्नेश या सप्तमेश अथवा आत्मकारक और पुत्र कारक (अपने अपने भाव में या परस्पर भाव में) हों।।६।। या परस्पर सम्बन्ध हो अथवा दृष्टि हो और इसी प्रकार पूर्वोक्त सम्बन्ध पंचमभाव या भावेश से हो, तथा उच्चराशि में अथवा उच्चांश तथा नवांश में हो एवं शुभग्रहों की दृष्टि हो तो यह 'महाराज' नामक राजयोग होता है। इसमें जन्म लेनेवाला मनुष्य सुखी तथा हाथी, घोड़े युक्त, चतुरंग सेनायुक्त महाराजा होता है।।८।। भाग्येश तथा आत्मकारक लग्न, पंचम, सप्तम भाव में हो तो भी पूर्ववत् राजा होता है।।९।। आत्मकारक से २।४।५ इन भावों में शुभग्रह हो तो राजयोग होता है।।१०।।

कारकात्त्रितये षष्ठे राश्योरुभयपापयुक् ।। राजवंशोद्भवो विप्र राजयोगस्तथा भवेत् ।।११।। लग्नाधीशद्यूननाथाद्धने तुर्ये च पंचमे ।। शुभखेटयुते विप्र राजा च भवति ध्रुवम् ।।१२।। तृतीये

षष्ठभे पापे राजा च भवति ध्रुवम् ।। योगद्वये शुभे पापे कथं स्यात्फलनिश्चयः ।।१३।। न दरिद्रो भवेज्जीवो न राजा जायते द्विज ।। समानकुलजः प्राज्ञ प्रतिष्ठा गौरवान्विता ।।१४।। कारके पंचमे शुक्रः सितेन्दुयुतवीक्षितः ।। तन्वारूढपदे लग्ने राजवर्गो भवेन्नरः ।।१५।। जन्मांगे वापि कालांगे लिप्तांगे खेचरेक्षिते । रव्यादयस्त्रयस्थाने राजयोगप्रदायकाः ।।१६।। जन्मांगे च हि होरांगे कुलांगे येन केन चित् ।। रव्यादिदृष्टिमात्रेण स राजा भवति ध्रुवम् ।।१७।। स्वक्षेत्रे तु नवांशे वा द्रेष्काणे भानुजादयः ।। लग्नं च सप्तमं विप्र पश्यंति राजयोगदाः ।।१८।। पूर्णदृष्टे पूर्णयोगमर्द्धे चार्द्धं विधीयते ।। पादेन पादयोगं च राजयोगमिदं क्रमात् ।।१९।। षट्कुंडल्यंतरे विप्र पश्यंति भास्करादयः ।। राजयोगप्रदातारौ निर्विशंकं द्विजोत्तम ।।२०।। लग्नस्थाने पूर्णदृष्टचा सप्तमे स्वल्पवीक्षिते ।। स्वल्पराज्यप्रदो विप्र षड्लग्नेषु विचिंतयेत् ।।२१।।

आत्मकारक से तीसरे तथा छठे भाव में पापग्रह हों तो राजवंशी के लिये राजयोग होता है।।११।। लग्नेश और सप्तमेश से २।४।५ वें स्थान में शुभग्रह हो तो निश्चय राजा होता है।।१२।। तीसरे, छठे, भाव में पापग्रह हों तो राजा होता है। यह कह चुके हैं। अब कहते हैं कि यदि ३।६ में पाप और २।४।५ में शुभग्रह हों तो फल का निश्चय क्या हो ?।।१३।। तो उसका निर्णय कहते हैं कि जातक न तो राजा ही होगा न दरिद्र ही रहेगा। प्रतिष्ठायुक्त गौरवशाली होकर मध्यम श्रेणी का होगा।।१४।। पुत्रकारक शुक्र हो और शुक्लपक्ष के पूर्णचन्द्र से युक्त या दृष्ट हो। ऐसा शुक्र लग्न के आरूढ राशि में (भाव) या लग्न में हो तो जातक राजा श्रेणी मे होता है।।१५।। जन्मलग्न में या कालांग=होरालग्न में एवं लिप्तांग=घटीलग्न में शुभग्रह स्थित हो तथा सूर्यादि क्रूरग्रह तीसरे भाव में हो तो राजयोग कारक होते हैं।।१६।। जन्मलग्न, होरालग्न, घटी लग्न में स्थित ग्रह से सूर्यादि ग्रह की दृष्टिमात्र से 'राजयोग' होता है।।१७।। शनि, राहु, केतु, स्वक्षेत्र में, स्वनवांश में या स्वद्रेष्काण में स्थित होकर लग्न और सप्तमभाव को देखते हों तो 'राजयोग' कारक होते हैं।।१८।। यह राजयोग पूर्णदृष्टि से पूर्ण तथा अर्द्धदृष्टि से आधा और पाददृष्टि से चौथाई जानना।।१९।। इसी प्रकार षड्वर्ग की कुण्डली में सूर्यादि ग्रहों की दृष्टि हो तो राजयोग कारक होते हैं।। (यहां 'षट् कुण्डल्यां' मात्र का ही निर्देश है किन्तु वे छः कुण्डली कौनसी ली जाय यह नहीं बताया गया । अभी तक जिन कुण्डलियों से 'राजयोग' का विचार हो रहा है वे ये हैं। जन्मलग्न, आरूढलग्न, कारकलग्न, होरालग्न, उपपदलग्न, घटीलग्न। क्या यही छः लेनी अथवा षड्वर्ग कुण्डली लेना। यह विज्ञजन विचार करे) लग्न में पूर्णदृष्टि हो और सप्तमभाव में पाददृष्टि हो तो साधारण धनीयोग जानना।।२१।।

एवं नवांशकुंडल्यां द्रेष्काणेपि विचिन्तयेत् ।। लग्नसप्तमयोः खेटो राजयोगप्रदायकः ।।२२।। उच्चग्रहे राजयोगो लग्नद्वयमथापि चेत् ।। राशेर्द्रेष्काणतोंऽशाच्च राशेरंशादथापि वा ।।२३।। यद्वा राशिदृकाणाभ्यां लग्ने दृष्टे तु योगतः ।। प्रायेणेदं जातकं तु प्रभूणामेवदृश्यते ।।२४।। जन्मकालघटीलग्न एकेनैव निरीक्षिते । तच्चारूढे तु संप्राप्ते चंद्राक्रांते विशेषतः ।।२५।। क्रांते वा गुरुशुक्राभ्यां केनाप्युच्चग्रहेण वा ।। दुष्टार्गलाग्रहाभावे राजयोगो न संशयः ।।२६।। शुभारूढे तत्र चंद्रे धने देवगुरुस्तथा ।। उच्चदृष्टे ग्रहे वाथ ह्युच्चखेटे तथा ग्रहे ।।२७।। राजयोगप्रदाता च निर्विशंकं द्विजोत्तम ।। यत्रयेपि शुभारूढे चंद्रे सति समानकम् ।।२८।। उच्चग्रहे

राजयोगो लग्नद्वयमथापि वा।। आरूढमवलंबाश्च योगा वाहनदाः स्मृताः ।।२९।। शुक्राच्चंद्रे ततः शुक्रे तृतीये वाहनार्थवान् ।। अन्योन्यं पश्यतो विप्र दैत्याचार्यनिशाधिपौ ।।३०।।

इसी प्रकार नवांश लग्न और द्रेष्काण में भी विचार करे। लग्न तथा सप्तमभावस्थित ग्रह राजयोग कारक होता है।।२२।। जन्मलग्न तथा होरालग्न में (द्रेष्काण और नवांश के सहयोग से यहां दूसरा होरालग्न जानना) ग्रह उच्च राशि में हो, राशि के द्रेष्काण में अथवा राशि नवांश में या ग्रह अपने नवांश में उच्चका हो।।२३।। अथवा जन्म लग्न और द्रेष्काण में लग्न को देखते हों तो ऐसा श्रेष्ठ योग प्रायः बड़े आदमियों के ही होता है।।२४।। जन्मलग्न, होरालग्न तथा घटीलग्न को एक ही ग्रह देखता हो तथा वही ग्रह आरूढलग्न में हो और विशेष करके चन्द्रमा से युक्त हो अथवा गुरु शुक्र से युक्त हो, अथवा किसी उच्चग्रह से युक्त हो तथा अर्गलायोगकारक पापग्रह न हो तो 'राजयोग' होता है।।२५।।२६।। चन्द्रमा आरूढ लग्न में, दूसरे भाव में गुरु हो, उच्च ग्रह की दृष्टि हो। चन्द्र तथा गुरु भी उच्च के हों तो राजयोगकारक है।।२७।।२८।। जन्म लग्न और आरूढ लग्न इनमें उच्च का ग्रह होने से तो राजयोग कारक होता है, आरूढ के अवलम्बन से वाहन (सवारी) होता है।।२९।। शुक्र से चन्द्रमा तीसरे अथवा चन्द्रमा से शुक्र तीसरे भाव में हो। अथवा चन्द्र, शुक्र परस्पर देखते हों तो वाहन तथा सम्पत्तिशाली होता है।।३०।।

आरूढेपि तृतीयस्थे तथा संबंधकारकः ।। जन्मलग्नेपि संयोगे जायते वाहनार्थवान् ।।३१।। शुभे लग्ने शुभे त्वर्थे तृतीये पापखेचरैः ।। चतुर्थे तु शुभे प्राप्ते राजा वा तत्समोपि वा।।३२।।उच्चो वा हरिणांको वा जीवो वा शुक्र एव वा ।। एको बली धनगतः श्रियं दिशति देहिनः ।।३३।। लग्नं पश्यंति ये खेटास्ते सर्वे शुभदायिनः ।। नीचखेटोपि लग्ने चेत्पश्येद्राजा प्रकीर्तितः ।।३४।। षष्ठाष्टमे तृतीये च लाभे संबंधनीचकृत् ।। यो ग्रहः पश्यते लग्नं राजयोगप्रदायकः ।।३५।। राजयोगो जन्मलग्नं पश्येदुच्चग्रहो यदि ।। षष्ठाष्टमगते नीचे लग्ने पश्यति योगकृत् ।।३६।। षष्ठाष्टमाधिपे नीचे लग्नं पश्यति वाथ वा ।। तृतीये लाभगे नीचे लग्नं पश्यति राज्यदः ।।३७।। षष्ठाष्टमाधिपौ खेटौशुभौयौ कौ च नाश्रितौ ।। पश्यतो जन्मलग्नं च राजयोग उदाहृतः ।।३८।। चरे तु पंचमे षष्ठे स्थिरे तु नवमे द्विज ।। उभये केंद्रसंदृष्टे राजयोगप्रदायकः ।।३९।।

इसी प्रकार चन्द्र, शुक्र आरूढ से तृतीयभाव में हों और स्थान सम्बन्ध हो, और यदि यह योग न होकर अन्य राशि में स्थित होकर भी सम्बन्ध करते हों तो पूर्वोक्त योग करते हैं।।३१।। लग्न, द्वितीय, चतुर्थ भाव में शुभ तथा तृतीयभाव में पापग्रह हों तो राजा या राजा के समान होता है।।३२।। चन्द्रमा, गुरु या शुक्र अथवा उच्चस्थ ग्रह द्वितीय भाव में हो तो जातक लक्ष्मीवान् होता है।।३३।। जो कोई भी ग्रह लग्न को देखते हैं, वे सब शुभसंज्ञक हैं। (शुभफल दाता हैं) नीचराशिगत ग्रह भी लग्न में हो या लग्न को देखे तो राजा होता है।।३४।। ६।८।३।११ स्थानों से नीचस्थ ग्रह भी सम्बन्ध कारक हो और लग्न को देखता हो तो राजयोग कारक होता है।।३५।। यदि उच्चराशिगत ग्रह जन्म लग्न को देखता हो और ६।८

स्थान में नीचराशिगत ग्रह लग्न को देखता हो तो राजयोग कारक है।।३६।। ६।८ का स्वामी नीच में हो लग्न को देखता हो तो अथवा ३।११ स्थान में नीच का ग्रह लग्न को देखता हो तो राज योग कारक होता है।।३७।। ६।८ के स्वामी शुभ या पाप कोई भी हो किन्तु आश्रित = बलहीन, आक्रान्त न हों और जन्मलग्न को देखते हों तो भी राजयोग होता है।।३८।। चर राशि पञ्चम भाव में तथा षष्ठभाव में स्थिर राशि हो और नवम भाव में द्विस्वभाव राशि हो और इनके स्वामी केन्द्रेश से दृष्टि सम्बन्ध करते हों तो राजयोग होता है।।३९।।

चतुर्थे शुभखेटश्चेद्राजयोगः प्रकीर्तितः ।। बलयुक्तचतुर्थोपि राजादिषु यथोत्तरम् ।।४०।। चरे तुर्ये स्वल्पफलं स्थिरे तुर्ये च मध्यमम् ।। द्विःस्वभावे पूर्णफलं राजयोगप्रदायकः ।।४१।। अग्रहात्सग्रहो ज्यायानिति रीत्या विचिन्तयेत् ।। उच्चयुक्तो ग्रहः कश्चिल्लाभगो वा चतुर्थगः ।।४२।। धनस्थितो वा लग्नं चेत्पश्येद्वाहनकारकः ।। राजयोगाद्यभावे तु धनधान्यविनिर्णयः ।।४३।। शुभपापदृशा लग्ने ततः केन्द्रादियोगतः ।। यस्य लग्नांशके सौम्याः प्राबल्यं तस्य निश्चितम् ।।४४।। कुबेरश्च पतंगश्च हालांशश्च किरीटकः ।।विह्वलांशसमायांशमोहनः किन्नरांशकः ।।४५।। भुजंगेन्द्रांशकौ लीलाकोकिलांशोत्तमः स्मृतः ।। राशीनां द्वादशांशेषु ग्रहस्थित्या फलं वदेत् ।।४६।। केन्द्रांशाश्चैषु शुभदा राजयोगफलप्रदाः ।। द्विषडष्टैकादशांशा मध्यमाः परिकीर्तिताः ।।४७।।

चतुर्थ भाव में शुभग्रह हो तो राजयोग होता है। चतुर्थ भाव भी बलयुक्त हो और ग्रह भी हो तो राजयोग होता है।।४०।। किन्तु चतुर्थभाव में चर राशि हो तो स्वल्प फल, और स्थिर राशि हो तो मध्यम फल तथा द्विस्वभावराशि हो तो पूर्ण फल होता है।।४१।। 'अग्रहात् सग्रहो ज्यायान्०' इसी नियम से विचार करना चाहिए। उच्चराशि स्थित ग्रह यदि धन (२) लाभ (११) चतुर्थ भाव में हो और लग्न पर दृष्टि हो तो (यहां द्वितीय भावस्थ ग्रह लग्न को किस दृष्टि से देखेगा यह तो भगवान् ही जाने) वाहन कारक योग है। राजयोग न होने पर धनधान्य युक्त होता है।।४३।। लग्न में शुभ या पापग्रह की दृष्टि हो तथा केन्द्रस्थानों से भी संयोग हो तथा लग्न के नवांश में सौम्यग्रह हो तो योग की प्रबलता जानना।।४४।। भावराशियों के द्वादशांश में क्रमशः ये नाम निर्देश करना। कुबेर, पतंग, (सूर्य) हालांश, किरीटक, विह्वलांश, समयांश, उत्तमांश, मोहन, किन्नर, भुजंग, इन्द्र, कोकिल, ये द्वादश नाम हैं। इनमें ग्रहस्थित होने पर फलदायक होते हैं। इनमें केन्द्रस्थ अंश शुभ और राजयोग कारक होते हैं। २।६।८।११ मध्यम और बाकी अंश अधम हैं।।४०—४७।।

अन्यांशास्त्वधमा ज्ञेया एवमंशविनिर्णयः ।। ग्रहाणां चैव लग्नानामंशगत्या फलं वदेत् ।।४८।। लग्नगेष्वंशगेष्वेषु जायते यदि मानवः ।। यस्य जन्मनि चंद्रो वा युक्तः स्वांशेषु संस्थितः ।।४९।। तस्यैते कथिता योगाः सफलाः परिकीर्तिताः ।। पूर्णं न्यूनफलं विप्र ग्रहयुक्तानुसारतः ।।५०।। अथ राजचिह्नयोगानाह—कारकात्तुर्यभावस्थौ सितेन्दू द्विजसत्तम ।। आदावंते विशेषश्च राजचिह्नेन संयुतः ।।५१।। ध्वजा वा दुंदुभेर्नादास्तिष्ठंति च दिवानिशम् ।। सर्वेषां चैव योगानामविरुद्धान् विचिंतयेत् ।।५२।।

ग्रहों तथा लग्नों का अंश के नामानुसार ही फल कहना।।४८।। इन अंश युक्त लग्न में जिसका जन्म होता है अथवा जिसके जन्म में चन्द्रमा अपने अंश में हो उसी जातक के लिए ये योग सफल हैं।। हे विप्र! पूर्ण फल या न्यून फल ग्रह के बलाबल के अनुसार जानना ४८–५०।।

राजचिह्नयोग–हे द्विजोत्तम! आत्मकारक से शुक्र और चन्द्रमा चौथे भाव में हो ,वह जातक राजचिह्न युक्त होगा।।५१।। उसके महल पर ध्वजा अथवा दुंदभी (नगाड़ा आदि) वाद्य आदि रहते हैं। उपर्युक्त सभी योगों का फल देश, काल, परिस्थिति, पात्र आदि का विचार करके जो और जैसा फल सम्भव हो वैसा ही फल का निर्देश करना चाहिए।।५२।।

अथ धीयोगानाह–कारके वा तथारूढे त्रिषष्ठे चागता ग्रहाः ।। वीक्षंते कारकाल्लग्न मातृनाथेन दृष्टियुक् ।।५३।। बुद्धिमाञ्जायते बालस्तीव्रबुद्धिर्विचक्षणः ।। तथा तृतीयेखेटेशः कारकलग्नौ वीक्षते ।।५४।। तथापि पूर्ववद्योगात्सुधीमाञ्जायते नरः ।। शास्त्रवेत्ता कविर्दक्षो भवत्यत्र न संशयः ।।५५।।

बुद्धियोग–कारक लग्न तथा आरूढ लग्न ३।६ ग्रह हों और कारक लग्न को देखते हों, तथा चतुर्थेश भी देखता हो तो बालक तीव्रबुद्धि और चतुर होता है।। तथा तृतीयेश भी कारक लग्न तथा आरूढ लग्न को देखते हों तो भी बालक बुद्धिमान्, शास्त्रवेत्ता, कवि और हर काम में चतुर होता है। यह निश्चय है।।५३ – ५५।।

अथ सुखयोगमाह–लग्नाच्च कारकाद्वापि चतुर्थे यस्य वै द्विज ।। लग्नकारकयोर्दृष्ट्या भवंति सुखिनो नराः ।।५६।।

सुखयोग–जन्मलग्न तथा कारकलग्न से चतुर्थ भाव में ग्रह हों, और लग्न तथा कारक को देखते हों जो जातक सुखी होता है।।५६।।

अथ सेनाधीशयोगमाह–कारके वा तथा रूढे लग्नाद्वा सप्तमाद्द्विज ।। तृतीये षष्ठभे पापाः सेनाधीशो भवेन्नरः ।।५७।।

सेनाधीश योग–कारकलग्न या आरूढलग्न से तथा जन्मलग्न या सप्तमभाव से ३।६ भाव में पापग्रह हों तो जातक सेनापति होता है।।५७।।

अथ प्रधानयोगानाह–राज्येशोपि जनुर्लग्नादमात्येशयुतेक्षिते ।। अमात्यकारकेणापि प्रधानत्वं नृपालये ।।५८।। लाभे च वीक्षिते लाभे पापदृष्टिविवर्जिते ।। तथा राज्यालये विप्र प्रधानत्वं कुलेपि च ।।५९।।

प्रधानमन्त्रीयोग–लग्न (जन्मलग्न) से दशमेश को अमात्यकारक स्थितराशि देखता हो या युक्त हो तथा अमात्य कारक से भी युत दृष्ट हो तो प्रधान मन्त्री होता है।।५८।। अमात्य कारक दशमभाव में या लाभ में हो या देखता हो किन्तु पापदृष्टि रहित हो तो प्रधानमंत्री होता है और कुल में भी प्रधान होता है।।५९।।

अमात्य कारकेणापि कारकेन्द्रेशसंयुते ।। तीव्रबुद्धियुतो बालः सेनाधीशोऽपि जायते ।।६०।। स्वक्षेत्रेऽथ च मध्ये वा वार्द्धके द्विजसप्तम ।।६१।। क्रमेण भाग्यवृद्धिः स्यान्नृपवेशोथ वा भवेत् ।।६२।। पंचमात्कारके लग्ने सप्तमे नवमेपि वा ।। राजयोग इति प्रोक्तो विख्यातो विजयी भवेत् ।।६३।। कारकात्केंद्रकोणेषु तुंगर्क्षे चापि संस्थिते ।। भाग्यपेन युतो दृष्टो राजमंत्री प्रजायते ।।६४।। कारके यस्य राशीशे लग्नगे संयुतेक्षिते ।। मंत्रित्वमुख्ययोगोऽयं वार्द्धके नात्र संशयः ।।६५।। कारके शुभसंयुक्ते पंचमे सप्तमेपि वा ।। यत्कारके यदा प्राप्ते तत्कारकधनं लभेत् ।।६६।। नीचेखेटबलैर्युक्ते उक्तस्थानगतैर्द्विज ।। तदा शुभफलं वाच्यं कारकेशेन दृष्टियुक् ।।६७।।

अमात्य कारक से कारकेन्द्र (आत्मकारक) राशिनाथ (राशिस्वामी) युत हो तो बाल अवस्था से ही तीव्र बुद्धि सम्पन्न तथा सेनापति होता है।।६०।। अमात्यकारक स्वगृही हो या दशमभाव में हो तो वृद्धावस्था में प्रधानमन्त्री होता है।।६१।। इस योग में या तो क्रम से भाग्यवृद्धि हो या केवल नाममात्र का राजा हो।।६२।। पंचमभाव से कारकलग्न सप्तमभाव में या नवमभाव में हो तो राजयोग होता है। इस योग में उत्पन्न हुआ विख्यात और विजयी होता है।।६३।। आत्मकारक से भाग्येश केन्द्र या त्रिकोण स्थान में हो अथवा उच्चराशि में हो भाग्येशसे युत अथवा दृष्ट हो तो प्रधानमंत्री होता है।।६४।। कारकभाव कुण्डली में अमात्यकारकराशि का स्वामी लग्न में अथवा अमात्यकारक से युक्त या दृष्ट हो तो वृद्धावस्था में प्रधानमंत्री होता है।।६५।। अमात्यकारक शुभग्रह युक्त होकर पंचमभाव या सप्तमभाव में हो तो मंत्री होता है। यह योग जिस कारक के साथ हो उस जातक को वही पद प्राप्त होता है।।६६।। बलवान् पापीग्रह पंचम या सप्तमभाव में हो और अमात्यकारक से युत या दृष्ट हो तो भी मंत्री समान होता है।।६७।।

भाग्यारूढपदे लग्ने कारकान्नवमेपि वा ।। राज्ययोगप्रदातारौ निर्विशंकं द्विजोत्तम ।।६८।। लाभेशो लाभभवने पापदृष्टिविवर्जितः ।। कारके शुभसंयुक्ते लाभं तस्य नृपालये ।।६९।। शुभर्क्षे शुभसंयुक्ते शुभदृष्टेथ राज्यभाक् ।। धनुलग्ने तथा रूढे एतस्मिन्राज्यभाग्भवेत् ।।७०।।

भाग्यस्थान का आरूढ पद लग्नगत हो अथवा अमात्यकारक से नवमभाव में हो तो राजयोग कारक है।।६८।। लाभेश लाभस्थान में हो, पापदृष्टिरहित हो तथा आत्मकारक शुभग्रह युक्त हो तो राजा से लाभ होता है।।६९।। आत्मकारक शुभराशि में या शुभग्रह अथवा शुभदृष्टि हो और यह योग धनु लग्न में अथवा धनुलग्न के आरूढ़ स्थान में हो तो राजभोगी होता है।।७०।।

अथ रसायनसिद्धियोगाः-स्वांशे वर्गोत्तमे केंद्रे पुण्येश कारकोऽथवा ।। राज्यारूढपदे वापि तदा सिध्येद्रसायनम् ।।७१।। कारके कारकारूढे धने स्वर्क्षोच्चगे खगे ।। ऋद्धिर्वा सिद्धिसंयुक्ते तथा तंत्ररसायनम् ।।७२।। धर्मकर्माधिपौ स्वोच्चे तथा वर्गोत्तमे यदि ।। नवमे पंचमे लाभे राज्याप्तिर्वा रसायनम् ।।७३।। मूलत्रिकोणगे लग्ने कारकेशो द्विजोत्तम ।। मंत्रनाथेन संयुक्तः कीर्तियुक्तरसायनम् ।।७४।। धर्मेशो धर्मलाभस्थः पंचमेशोपि पंचमे ।। कारकेंद्रयुते दृष्टे स्वेच्छापूर्णधनानि च ।।७५।।

रसायन सिद्धियोग–आत्मकारक अथवा नवमेश अपने नवांश में हो या वर्गोत्तमी हो तथा ऐसा होकर केन्द्रस्थानों में हो या दशमभाव के आरूढपद में हो तो रसायन सिद्धि प्राप्त होती है।।७१।। आत्मकारक कारकलग्न में हो, धनेश स्वगृही या उच्च का हो तो रसायनी होता है।।७२।। नवमेश तथा दशमेश उच्च के होकर या वर्गोत्तमी होकर नवम, पंचम या लाभस्थान में हों तो राज्यप्राप्ति या रसायन सिद्धि होती है।।७३।। आत्मकारक का स्वामी मूलत्रिकोणी होकर लग्न में हो तथा पंचमेश से युक्त हो तो कीर्ति भी होती है और रसायन भी सिद्ध होती है।।७४।। नवमेश नवम या लाभस्थ हो तथा पंचमेश भी पंचमभाव में हो और आत्मकारक से युक्त या दृष्ट हो तो इच्छानुसार धन की प्राप्ति होती है।।७५।।

स्वोच्चादि पदसंयुक्ते कारकेशः शुभालये ।। सततं सुखमाप्नोति धातुभस्मरसायनात् ।।७६।। सुखेशे मानभावस्थे मानेशे सुखसंयुते ।। लग्नकारकयोर्दृष्टे भिषयोगोतिसंमतः ।।७७।। कर्मेशौ नवमे यस्य सुखेशः पंचमेपि वा ।। परस्परं तदीशो वा स्वर्णाप्तिस्तत्र कर्मतः ।।७८।। वागीशः कारके लग्ने स्वोच्चादिपदुसंयुते ।। भौमांशो मृत्युरादित्यः सौख्येशः कालसंज्ञकः ।।७९।। सौम्यांशेर्द्धप्रहरकः स्पष्टकर्म स्वदेशतः ।। एवं प्राणपदस्पष्टे पूर्वाध्याये मया कृतम् ।।८०।। गुलिके कारकांशे च पूर्णेन्दुवीक्षिते द्विज ।। सत्यं चौर्याद्यनीतिश्च स चौरो जायतेऽथवा ।।८१।। सगुलिके कारकांशे ह्यन्यग्रहयुतेक्षिते ।। बुधदृष्टियुते वापि अंडवृद्धिः प्रजायते ।।८२।। कारकांशे स्थिते केतौ रविसोमनिरीक्षिते ।। बलवीर्येण रहितो जायते सोपि मानवः।।८३।। सकेतो कारकांशे तु बुधशुक्रनिरीक्षिते।।राजयोनौ जन्म चेत्स्याद्दासीपुत्रोथ वा भवेत् ।।८४।।

आत्मकारक का स्वामी स्वोच्च, मूलत्रिकोणी हो और शुभस्थान में स्थित हो तो निरंतर सुखी और पारे की भस्म से रसायन का ज्ञाता हो।।७६।। सुखेश दशमस्थान में हो एवं दशमेश सुखभाव में हो लग्न और कारक को देखते हों तो राजवैद्य और सन्मानी होता है।।७७।। जिसके दशमेश नवमभाव में हो और सुखेश पंचमभाव में हो अथवा नवमेश दशम में और पंचमेश चतुर्थ में हो तो उद्योग करने से सुवर्ण सिद्धि होती है।।७८।। बृहस्पति कारक में या लग्न में उच्चादि राशि का होकर स्थित हो, और मंगल का नवांश अष्टमभाव में हो, सूर्य तथा सुखेश कालांशक में हों।।७९।। बुध के नवांश 'अर्द्धयाम' हो तो अपने देश से ही सिद्धि प्राप्त होती है। यह हमने पूर्वाध्याय 'प्राणपद' साधन के विषय में स्पष्ट कहा है।।८०।। गुलिक लग्न में या कारकांश में आत्मकारक स्थित हो और पूर्ण चन्द्र दृष्ट हो तो चोरी आदिक् नीतिमान अथवा चोर होता है।।८१।। आत्मकारक का नवांश –गुलिक (शन्यंश) में हो और किसी से युक्त अथवा दृष्ट हो या बुध की दृष्टि हो तो अंडवृद्धि होती है।।८२।। कारकांश में केतु हो सूर्य, चन्द्र से दृष्ट हो तथा बलहीन हो तो अंडवृद्धि होती है।।८३।। कारकांश में केतु बुध तथा शुक्रदृष्ट हो तो राजकुल में दासी का पुत्र होता है।।८४।।

सकेतौ कारकांशे वा भृगुभास्करवीक्षिते ।। सिद्धं शास्त्रांतरे ग्राह्यं विशेषं राजयोगकम् ।।८५।। रुद्रेण यत्पुरा प्रोक्तं तन्मया गदितं द्विज ।। देयं स्वशिष्यपुत्रेभ्यो न देयं यस्य कस्यचित् ।।८६।। कुपुत्राय कुशिष्याय प्राणांते न प्रकाशयेत् ।। गुह्याद्गुह्यमिदं शास्त्रं प्राप्तं शंभुप्रसादतः ।।८७।।

इति श्रीबृहत्पाराशरहोराशास्त्रेपूर्वखंडे राजयोगादिकथनं पञ्चविंशतितमोऽध्यायः ।।२५।।

कारकांश में केतु,शुक्र, सूर्य दृष्ट हो तो भी दासीपुत्र होता है। (इन योगों की प्रशंसा) विशेष राजयोग अन्यशास्त्रों से भी ग्रहण करना।।८५।। प्राचीन काल में जो महादेवजी ने कहा था, हमने तुमको सुनाया है। यह शास्त्र अपने शिष्य या पुत्र को देना चाहिए। जिस किसी को तथा कुपुत्र और कुशिष्य को भी नही देना चाहिए। यह अतिगुप्त शास्त्र भगवान् शंकर की कृपा से प्राप्त हुआ है।।८६।।८७।।

इति श्रीबृ० पा० हो० शा० पू० खं० भा० प्र० राजयोगादि कथनं नाम पञ्चविंशोऽध्यायः ।।२५।।

अथ धनयोगाध्यायमाह

पराशर उवाच–अथातः संप्रवक्ष्यामि धनयोगं विशेषतः ।। पंचमे तु भृगुक्षेत्रे तस्मिन् शुक्रेण संयुते ।।१।। लाभे शनैश्चरयुते बहुद्रव्यस्य नायकः ।। पंचमे सौम्यकक्षेत्रे तस्मिन्सौम्ययुते यदि ।।२।। लाभे च चंद्रभौमौ तु बहुद्रव्यस्य नायकः ।। पंचमे तु शनिक्षेत्रे तस्मिन्सूर्यसुतो यदिः ।।३।। लाभे सोमात्मजस्थे वा बहुद्रव्यस्य नायकः।पंचमे तु रविक्षेत्रे तस्मिन्रवियुते यदि।।४।। लाभे रवींदुपूज्यस्थे बहुद्रव्यस्य नायकः ।। पंचमे तु शनिक्षेत्रे तस्मिन् शनियुते यदि ।। लाभे भौमेन संयुक्ते बहुद्रव्यस्य नायकः ।।५।। पंचमे तु गुरुक्षेत्रे तस्मिन् गुरुयुते यदि ।। लाभे तु चंद्रभौमौ चेद्बहुद्रव्यस्य नायकः ।।६।। भानुक्षेत्रगते तस्मिल्लग्ने भानौ स्थिते यदि ।। भौमेन गुरुणा युक्ते दृष्टौ वास्याद्युतो धनैः ।।७।। चंद्रक्षेत्रगते लग्ने तस्मिंश्चंद्रयुते यदि ।। जीवभौमयुते यस्तु दृष्टे जातो धनी भवेत् ।।८।। भौमक्षेत्रगते लग्ने तस्मिन्भौमयुते यदि ।। सोमशुक्रार्कजैर्युक्ते दृष्टे श्रीमान्नरो भवेत् ।।९।। गुरुक्षेत्रगते लग्ने तस्मिन्गुरुयुते यदि ।। सौम्यभौमयुते दृष्टे जातो यस्तु धनीश्वरः ।।१०।। बुधक्षेत्रयुते तस्मिन् दृष्टे सौम्ययुते यदि ।। शनिशुक्रयुते दृष्टे जातो यस्तु धनी नरः ।।११।।

धनयोग विचार

अब विशेष धनयोग कहते हैं। पंचमभाव में शुक्र की राशि हो और शुक्र युक्त हो। लाभस्थान में शनि हो तो विशेष धनी होता है।।१।। पंचमभाव में बुध स्वगृही हो। लाभस्थान में चन्द्र, मंगल हो तो विशेष धनी होता है।।२।। पंचमभाव में शनि की राशि में सूर्य स्थित हो। लाभस्थान में बुध हो तो महाधनी होता है।।३।। पंचमभाव में सूर्य स्वगृही हो। लाभ स्थान में सूर्य, चन्द्र, गुरु हो तो विशेष धनी होता है।।४।। पंचमभाव में शनि स्वगृही हो। लाभस्थान में मंगल हो तो विशेष धनी होता है।।५।। पंचमभाव में गुरु स्वगृही हो। लाभस्थान में चन्द्रमंगल हो तो विशेष धनी होता है।।६।। पंचमभाव में सूर्य स्वगृही हो मंगल अथवा गुरु से दृष्ट या युक्त हो तो विशेष धनी होता है।।७।। पंचमभाव में सूर्य राशि हो और सूर्य लग्न में हो। मंगल गुरु से युक्त या दृष्ट हो तो धनी होता है।। पंचमभाव में शनि स्वगृही हो। लाभस्थान में मंगल हो तो विशेष धनी होता है।।८।। लग्न में चन्द्रमा स्वगृही हो तथा मंगल गुरु युक्त या दृष्ट हो तो धनी होता है।। मंगल स्वगृही लग्न में हो चन्द्र, शुक्र, शनि से युक्त या दृष्ट हो तो धनी होता है।।९।। लग्न में गुरु स्वगृही हो, बुध, मंगल से युक्त या दृष्ट हो तो धनी होता है।।१०।। लग्न में बुध स्वगृही हो तथा शुक्र शनि से युक्त या दृष्ट हो तो धनी होता है।।११।।

भृगुक्षेत्रे गते लग्ने तस्मिन् भृगुयुते यदि ॥ शनिसौम्ययुते दृष्टे जातो यस्तु धनी नरः ॥१२॥ ये ये ग्रहा धर्मप बुद्धिपाभ्यांयुक्ताश्च दृष्टाश्च सुखप्रदास्ते ॥ रंध्रेश्वरादिव्ययपैर्युताः स्युः शोकप्रदा मारकनायकैश्च ॥१३॥ क्रूरसौम्यविभागेन स्वस्थानाद्दिवसास्तथा ॥ ग्रहाणां स्थानभेदेन राशिदृष्टिवशात्फलम् ॥१४॥

श्रीबृहत्पाराशरहोराशास्त्रेपूर्वखंडसारांशे धनयोगविचारकथनं नाम षड्विंशोऽध्यायः ॥२६॥

लग्न में शुक्र स्वगृही हो। बुध शनि युक्त हो तो जातक धनी होता है॥१२॥ जो २ ग्रह ५।९ के स्वामी से युक्त अथवा दृष्ट हों वे सुखदायक होते हैं। तथा ८।१२ के स्वामी से युक्त हो तथा २।७ के स्वामी से युक्त हों तो शोक चिन्ताकारक होते हैं॥१३॥ अन्य ग्रहों का क्रूर तथा सौम्यभाव तथा राशि एवं भाव का विचार करके फल कहना चाहिए। और अपने स्थान से समय का निर्देश करना चाहिए॥१४॥

इति बृ० पा० हो० शा० पू० खं० भा० प्र० धनयोगविचारकथनं नाम षड्विंशोऽध्यायः ॥२६॥

अथ दरिद्रयोगाध्यायमाह

लग्नेशे वै रिष्फगते रिष्फेशे लग्नमागते ॥ मारकेशयुते दृष्टे जातः स्यान्निर्धनो नरः ॥१॥ लग्नाधिपे शत्रुगृहं गते वा षष्ठेश्वरे लग्नगतेपि वा चेत् ॥ विलग्नपे मारकनाथदृष्टे जातो भवेन्निर्धनकोपि मुख्यः ॥२॥ लग्नेंदू केतुयुक्तौ वा लग्नेशे निधनं गते ॥ मारकेशयुते दृष्टे जातो वै निर्धनो भवेत् ॥३॥ षष्ठाष्टमव्ययगते लग्नेशे पापसंयुते ॥ मारकेशयुते दृष्टे राजवंश्योऽपि निर्धनः ॥४॥ विलग्ननाथेरिविनाशरिष्फनाथेन युक्ते यदि पापदृष्टे ॥ मित्रात्मजे नाथयुतेऽपि दृष्टे शुभैर्न दृष्टे स भवेद्दरिद्रः ॥५॥ मित्रेशो धर्मनाथश्च षष्ठकर्मस्थितौ क्रमात् ॥ दृष्टौ चेन्मारकेशेन जातः स्यान्निर्धनो नरः ॥६॥ पापग्रहे लग्नगते राज्यधर्माधिपौ विना ॥ मारकेशयुते दृष्टे जातः स्यानिर्धनो नरः ॥७॥ यद्भावेशो रंध्ररिष्फारिसंस्थो यद्भावस्था रंध्ररिष्फारिभेशाः॥पापैदृष्टो मंददृष्टोऽथ वा चेद्दुःखाक्रांतश्चंचलो निर्धनः स्यात् ॥८॥ चंद्राक्रांतनवांशेशो मारकेशयुतो यदि ॥ मारकस्थानगो वापि जातोऽसौ निधनो नरः ॥९॥ विलग्नेशनवांशेशौ रिष्फषष्ठाष्टगौ यदि ॥ मारकेशयुतौ दृष्टौ जातोऽसौ निर्धनो नरः ॥१०॥

दरिद्रयोग—लग्नेश द्वादशभाव में हो, द्वादशेश लग्न में हो, मारकेश से युक्त या दृष्ट हो तो जातक निर्धन होता है॥१॥ लग्नेश षष्ठभाव में हो और षष्ठेश लग्न में हो तथा लग्नेश को मारकेश देखता हो तो जातक नामी दरिद्री होता है॥२॥ लग्न या चन्द्रमा केतु युक्त हो और लग्नेश अष्टमभाव में हो तथा लग्नेश को मारकेश देखता हो या युक्त हो तो जातक निधर्न होता है॥३॥ लग्नेश पापग्रहयुक्त होकर ६।८।१२ भाव में हो, मारकेश से युत वा दृष्ट हो तो जातक निर्धन होता है॥४॥ लग्नेश यदि ६।८।१२ भाव के स्वामी से युक्त हो और पापदृष्ट हो तथा शनि अपने भावेश से युक्त हो तथा शुभग्रह की दृष्टि नहीं हो तो जातक दरिद्री होता है॥५॥

पंचमेश षष्ठभाव में और नवमेश दशमभाव में हो तथा मारकेश से दृष्ट हो तो जातक निर्धन होता है॥६॥ लग्न में पापग्रह हों, उनमें ९/१० के स्वामी नहीं हो तथा मारकेश से युत या दृष्ट हो तो जातक निर्धन होता है॥७॥ जिस भाव का स्वामी ६।८।१२ भाव में हो अथवा जिस भाव का स्वामी ६।८।१२ भाव का भी स्वामी हो और पापग्रह तथा शनिदृष्ट हो तो जातक दुःखी चंचल तथा दरिद्री होता है॥८॥ चन्द्रमा जिस नवांश में हो उस नवांश का स्वामी मारकेश से युक्त हो या मारक स्थान में हो तो जातक निर्धन होता है॥९॥ लग्नेश और नवांशपति ६।८।१२ स्थान में हो तथा मारकेश से युक्त या दृष्ट हो तो जातक निर्धन होता है॥१०॥

धनसंस्थौ च भौमेंदू कथितौ धननाशकौ ॥ बुधेक्षितौ महावित्तं कुरुतस्तत्रगः शनिः ॥११॥
निःस्वतां कुरुते तत्र रविर्नित्यं यमेक्षितः ॥ महाधनयुतं ख्यातं शन्यदृष्टः करोत्यसौ ॥१२॥
धनभावगताः सौम्याः कुर्वत्येव धनं बहु ॥ बुधदृष्टो गुरुस्तत्र निर्धनं कुरुते नरम् ॥१३॥
बुधश्चंद्रे क्षितस्तत्र सर्वस्वं हंति निश्चितम् ॥ क्रूरखेटादियोगैश्च दारिद्रचं संभवेन्नृणाम् ॥१४॥
ये ये ग्रहा धर्मपबुद्धिपाभ्यां युक्ता न दृष्टा बहुदुःखदास्ते ॥ रंध्रे चरादिव्ययपैर्युतास्ते व्ययप्रदा मारकनायकेन ॥१५॥ प्रोक्तयोगे यदा भावे दरिद्रो जायते ध्रुवम् ॥ शुभस्थानगताः पापाः पापस्थाने गताः शुभाः ॥१६॥ धनार्तिर्जायते बालो भोजनेन प्रपीडितः ॥ कदापि लभतेऽन्नं च वस्त्रार्थचिंतयान्वितः ॥१७॥ कारकाद्वा विलग्नाद्वा रंध्रे रिष्फे द्विजोत्तम ॥ लग्नकारकयोर्दृष्टचा दरिद्रार्तियुतो नरः ॥१८॥

चन्द्र, मंगल दूसरे घर में हो तो धननाशक होते हैं॥ और बुधदृष्टि हो तो धनी होता है, यदि शनि धनस्थान में हो॥११॥ यदि धनस्थान में सूर्य शनि दृष्ट हो तो द्ररिद्री और शनि से दृष्ट नहीं हो तो धनी करता है॥१२॥ धनभाव में सौम्यग्रह धनवान करते हैं। किन्तु बुधदृष्ट गुरु निर्धन करते हैं॥१३॥ बुध, चन्द्र से दृष्ट गुरु तो जातक को सर्वस्वहीन करते हैं। पापग्रहों के योग से मनुष्य दरिद्री होता है॥१४॥ जो २ ग्रह ५/९ भाव के स्वामी से युक्त अथवा दृष्ट नहीं होते वे दुःखदायी होते हैं। तथा अष्टमभाव में तथा व्ययभावेशयुक्त चरराशि में स्थित तथा मारकेश दृष्ट हों तो बहुत खर्चकारी होते हैं॥१५॥ उक्त योग अष्टमभाव में होने से निश्चय दरिद्री होता है। शुभस्थानों में पापग्रह और अशुभ स्थानों में सौम्य ग्रह हों तो जातक दरिद्री होता है। भोजन मिले तो वस्त्र की चिन्ता रहे। यह हालत रहती है॥१७॥ आत्मकारक से या लग्न से ८।१२ स्थान में ग्रह हों, लग्न तथा कारकभाव को देखते हों तो जातक दरिद्री होता है॥१८॥

लग्नाद्वा कारकाद्वापि द्वादशे यस्य वै द्विज ॥ लग्नकारकयोर्दृष्टचा व्ययशीलो भवेन्नरः ॥१९॥
लग्नेशो वीक्षते लग्नं कारकेशोपि कारकम् ॥ प्राबल्यव्ययशीलोऽपि जायते द्विजसत्तम ॥२०॥

अथ बंधनयोगमाह

पश्चाल्लग्नात्कारकाद्वा यदा वा वित्तद्वादशे ॥ पंचमे नवमे वापि तथा षष्ठेपि द्वादशे ॥२१॥

तृतीयैकादशे विप्र चतुर्थे दशमेपि वा ।। ग्रहसाम्ये तथा विप्र एकमेकं द्वयं द्वयम् ।।२२।। तथा त्रयं त्रयं तिष्ठेदिति रीत्या नभश्चराः ।। वित्ते द्वौ द्वादशे द्वौ च तथा स्याच्च त्रये त्रयम् ।।२३।। इति क्रमेण साम्येन बंधकारक उच्यते ।। श्रृंखलाबंधयोगोऽपि जायते द्विजसत्तम ।।२४।। राशिनां राशिना थानां शुभसंबंधके द्विज ।। तदा निरोधः संजातस्तनुपीडा विधीयते ।।२५।। द्वादशे द्वितये वापि त्रिकोणे रिष्फषष्ठगे ।। लाभे त्रये व्योमतुर्ये पापा वै बंधकारकाः ।।२६।।

लग्न से या कारक से १२ भाव में ग्रह हो लग्नकारक को देखते हों तो व्ययशील होता है।।१९।। लग्नेश लग्न को और कारकेश कारक को देखता हो तो जातक बहुत खर्चीला होता है।२०।।

बंधन योग

लग्न से या कारक लग्न से २।१२ में ५।९ में ६।१२ में ३।११ में ४।१० में बराबर २ ग्रह हों। अर्थात् १–१ या २–२ अथवा ३।३ ग्रह हों। अथवा २।१२ में २–२ और स्थानों में ३–३ ग्रह हों तो बन्धन (कैद) होने का योग है।।२१ से २४।। भाव तथा भावेशों का शुभसम्बन्ध हो तो कैद तो नहीं हो परन्तु शरीरपीड़ा अवश्य हो।।२५।। तथा २।१२ में ५।९ में ६।१२ में और ३।११ तथा ४।१० में पापग्रह हों तो बन्धन कारक होते हैं।।२६।।

तथा तत्तद्दशानां च संबंधं खलखेटतः ।। प्रहारश्रृंखलाद्विप्र बंधयोगो न संशयः ।।२७।। भार्गवात्कारकाद्वापि लग्नारूढपदाद्द्विज।। त्रिकोणस्थो यदा राहुः सूर्यदृष्टोपि नेत्ररुक् ।।२८।।

इति श्रीबृहत्पाराशरहोराशास्त्रेपूर्वखंडसारांशे दरिद्रयोगकथनं सप्तविंशोऽध्यायः ।।२७।।

तथा इन उपर्युक्त भावराशियों की दशा का सम्बन्ध पापग्रह से हो तो मार तथा कैद दोनों निःसंशय होती हैं।।२७।। शुक्र से या कारक से अथवा लग्नारूढपद से त्रिकोण स्थान में राहु यदि सूर्य दृष्ट हो तो नेत्ररोगी होता है।।२८।।

इति श्री बृ० पा० हो० शा० पू०खं० भा० प्र० दरिद्रबंधनयोग कथनं
नामसप्तविंशोऽध्यायः ।।२७।।

अथ पूर्वजन्मवर्णनाध्यायः

अथ वक्ष्ये विशेषेण पूर्वपापस्य निश्चयम् ।। नवांशान्मेषमारभ्य मेषादौ हि क्रमाद्वदेत् ।।१।। निशाकरनवांशाधिपापं निश्चित्य सर्वशः ।।२।। मेषे मेषनवांशकेषु च क्रमान्मेषस्य भूयाद्वध उक्ष्ण्येवमपराधकं च सुधियो निश्चित्य गोसंज्ञकम् ।। द्वंद्वे चांशवधस्तथा सुनियतं गर्भेण वदेत्कर्के सर्पवधस्तथा सुनियतं सिंहे चतुष्पाद्वधः ।।३।। वन्यानां मृगजातीनां वधो दावा नलेन हि ।। सिंहे निश्चित्य मतिमान्वदेच्चांशोपरि द्विज ।।४।।

पूर्वजन्मवर्णन

अब विशेषरूप से पूर्वजन्म मे पाप के निश्चय की रीति कहते हैं। इसका विचार पूर्व कहे

अनुसार १–१ राशि के ९–९ नवांश हैं। मेष से आरंभ होते हैं। क्रम से गणना करना चाहिए।।१।। जन्मलग्न के नवांश से तथा चन्द्रमा के नवांश से एवं चन्द्रनवांशंश से पूर्व जन्म तथा वर्तमान जन्म एवं पर जन्म का विचार करना चाहिए।।२।। मेष राशि में मेष के नवांश में जन्म हो तो जातक ने पूर्वजन्म में भेड़–बकरी का वध किया है। वृष के नवांश में बैल की हत्या अथवा गोहत्या की है, ऐसा निश्चय करना। मिथुन के नवांश में गर्भहत्या (भ्रूणहत्या) की है। कर्क के नवांश में सर्प हत्या तथा सिंह के नवांश में चौपाया पशु की हत्या अर्थात् जंगल में आग लगाकर पशुओं की हत्या। ऐसा सिंह के नवांश में निर्णय करे।

कन्यायां च वदेद्विद्वान्पापं स्त्रीत्यागजं मुने ।। धनस्याहरणं व्याजात्तुलायां च वदेद्बुधः ।।५।। वृश्चिके ग्रामचटके वधं चैवांडजस्य हि ।। मित्रद्रोहकृते ब्रूयाद्धन्विन्यथ विशंकितः ।।६।। फलानां वृक्षजातीनां मकरे चौर्यभेदनम् ।। कुंभे चैवानुसूयंतं वाच्यं विप्र विपश्चितः ।।७।। ब्रूयाद्विप्रधनं मीने पूर्वार्द्धे तु विपश्चितः ।। उत्तरार्धे धनादानं तद्वधं परिकल्पितम् ।।८।। एकांशे चैकजन्मस्याद्द्व्यंशे चैव द्विजन्मनी ।। त्र्यंशे चैव त्रिजन्म स्याच्छेषे जन्मचतुष्टयम् ।।९।। एवं सर्वत्र निश्चित्य लग्ने चैवेह जन्मनि ।। कर्काद्या विप्र जन्माद्यं वदेत्सर्वत्र निश्चयम् ।।१०।। अन्यथा जारजो भूयाल्लग्नेन्दुं नेक्षते गुरुः ।। एवं चाष्टोत्तरशतं नवांशाः परिकीर्त्तिताः ।।११।। क्षत्रिये क्षत्रियादीनां वैश्ये चैव विडादिकान् ।। शूद्रे शूद्रादिकान्वाच्यं विप्रे वै ब्राह्मणादिकान् ।।१२।।

कन्या में विवाहित स्त्री का त्याग तथा तुला के नवांश में ठगी से धनहरण एवं वृश्चिक के नवांश में चिड़िया आदि पक्षी के अंडों का नाश तथा धनु के नवांश में मित्रद्रोह एवं मकर के नवांश में चोरी से फल तथा वृक्षों का छेदन, कुंभ में परद्रोह तथा मीन के पूर्वार्द्ध में विप्रधन की चोरी या बरजोरी (जबर्दस्ती से लेना) और उत्तरार्द्ध में विप्र को मारकर धन लेना।।३ से ८ तक।। (इस प्रकार ९ नवांशों में जो राशि हो उसी के अनुसार पूर्वजन्म के पाप का निश्चय करे। यह फल नवांशराशि का कहा। लग्न के अंशों से नवांश का ज्ञान सहज है) प्रथम नवांश में एक जन्म का पाप और द्वितीय नवांश में दो जन्म का, तीसरे में तीन और शेष नवांशों में चार जन्म कहना।।९।। इस प्रकार लग्न से इस जन्म में पूर्वपाप का फल कहना। कर्क आदि नवांश राशि से ब्राह्मण आदि वर्ण का निर्देश करना।।१०।। लग्न और चन्द्रमा पर गुरु दृष्टि न हो तो जारज संतान कहना। इस रीति से १२X८= १०८ नवांशों का फल कहा।।११।। नवांश में क्षत्रिय राशि हो तो पूर्वजन्म में क्षत्रिय जाति में जन्म और वैश्य में वैश्य तथा शूद्र में शूद्र कहना चाहिए।।१२।।

परे जन्मनि जन्म स्याद्बुद्ध्या चैवैहिकं वदेत् ।। तदीशे स्वोच्चतां प्राप्ते मृते स्वर्गे गतो भवेत् ।।१३।। तदीशे नीचतां प्राप्ते नरकादागत्य जज्ञिवान् ।। समत्वे च समाल्लोकान्मित्रे तीर्थे तनुं त्यजेत् ।।१४।। तदीशे वारिवेश्मस्थे मृतः प्रेतत्वमाप्नुयात् ।। तस्मादागत्य जज्ञेऽसौ पापं पुण्यं भुनक्ति हि ।।१५।। तदीशे पापसंयुक्ते नीचे वापि स्थिते सति ।। वृजिनं तामसं पूर्वं कृतं तामसनिश्चितम् ।।१६।। कुजकेतुसमायुक्ते समस्थे रांजसं वदेत् ।। शुभेप्युच्चस्थिते वाच्यं

सात्त्विकं वृजिनं बुधैः ॥१७॥ अनेनैव प्रकारेण लग्ने निश्चित्य बुद्धिमान् ॥ इह जन्मनि संयोज्यं क्रूरसाम्यं समत्वकम् ॥१८॥ सर्वस्य मानवस्यापि नक्षत्रत्रयमीरितम् ॥ जन्मनक्षत्रमेकं तु द्वितीयं मनुजन्म च ॥१९॥ त्रिजन्म च तृतीयं स्याद्भ्रातृव्यं मुनिसत्तम ॥२०॥

इति श्रीबृहत्पाराशरहोराशास्त्रेपूर्वखंडसारांशेपूर्वजन्मवर्णनं नामाष्टाविंशोऽध्यायः ॥२८॥

इसी प्रकार अपनी बुद्धि से उपर्युक्त शास्त्रानुसार विचार करके पूर्व, वर्तमान और आगामी जन्म का फल कहना चाहिए। जैसे नवांशपति उच्चराशि में हो तो मरने पर स्वर्ग में गति (गमन)॥१३॥ और नीच का हो तो नरक से आकर जन्म लिया है। सममें इस लोक में इसी लोक में आना जाना हो रहा है। मित्र राशि में हो तो तीर्थ में मरण होगा॥१४॥ नवांशेश जलराशि में हो तो मरने के बाद प्रेतगति में था और वह भोगकर अब मृत्यु लोक में जन्म लेकर पाप पुण्य का फल भोगता है॥१५॥ नवांशेश पापग्रह युक्त हो तो पूर्वजन्म में तामस योनि (पशु-पक्षि) भोग कर आया है। यह निश्चय है॥१६॥ मंगल, केतु से युक्त (नवांशेश) हो और सम राशि में हो तो समान राजस योनि में था। शुभराशि में उच्चस्थ हो तो सात्विक योनि में था। इस प्रकार जैसी योनि में था वैसा ही तामस, राजस, सात्विक पाप भी कहना॥१७॥ इसी प्रकार से बुद्धिमान को चाहिए कि-लग्न के नवांश में निश्चय करके इस जन्म के भी तामस, राजस तथा सात्विक कर्म का कथन करे॥१८॥ सम्पूर्ण मानव समाज के तीन जन्म के तीन नक्षत्र जाने॥१९॥ दूसरा यह मनुष्य जन्म का नक्षत्र, तीसरा बन्धु वर्ग का जानो॥२०॥

इति श्रीबृ० पा० हो० शा० पू० ख०सा० पूर्वजन्मवर्णन नामाष्टाविंशोऽध्यायः ॥२८॥

जीवानां सुखदुःखवर्णनाध्यायः

सुजन्मोवाच—आजन्ममृत्युर्पयन्तं जगतः सुखदुःखकम् ॥ ब्रूहि मे कृपया सौम्य विवाहादि सुतादिकम् ॥१॥ लोमश उवाच—सूर्यांगारागुमंदानामंशान्संयोज्य संस्कृतः ॥ तदायुः शरदाद्यस्य भागं कृत्वा वदेत्फलम् ॥२॥ तद्भागे दुर्व्रतं वाच्यं द्व्यूनाप्ते पीडनं क्वचित् ॥ वेदोनाप्ते सुखं किंचित्षड्नाप्ते स्त्रिया भयम् ॥३॥ दशोनाप्ते हि हृत्पीडा भूपोनाप्ते हि भेषजम् ॥ विंशोनाप्ते स्फुटतनु तत्त्वोनाप्ते श्रुतौ व्यथा ॥४॥ त्रिंशोनाप्ते शीतलादीन् द्विवेदोनाप्ते भयं मृतेः ॥ पंचाशन्न्यूनकेनाप्ते वारिभीतिर्निगद्यते ॥५॥

सुखदुःखवर्णनाध्याय (लोमश संहिता से)

(सुजन्मा, लोमश संवाद।) सुजन्मा ने कहा-जन्म से मृत्यु तक के सुख, दुःख, विवाह, सन्तान आदि का विचार कहिए॥१॥ ऋषि लोमशजी ने कहा-सूर्य, मंगल, राहु तथा शनि के अंश, कला, विकला अंकों को जोड़ना पश्चात् आगे कहे हुए अंकों को घटाकर शेष जो रहे उसकी (यहां राशि अंक नहीं रहेगा। केवल अंशादि अंक रहेगा) अंश संख्या ही आयु की

वर्षसंख्या जानना। पश्चात् उसके भाग कल्पना करके (आगे कहे अनुसार अंश कलादि अंक स्पष्ट करना तो अंश ही वर्ष हैं) ॥२॥ भाग में जो अंशांक है उस वर्षमें आगे लिखा फलविचार करना। २ घटा कर आये हुए भाग में शरीर पीड़ा सम्भव है। अंक में जो ऊपर वर्ष संख्या है, उस वर्ष में जानना। ४ घटाकर आये हुए भाग में सुख और ६ घटाकर लाये हुए भाग में स्त्री से भय होता है॥३॥ (अब आगे संक्षेप में ही लिखते हैं।) दस घटाकर लाये हुए भाग में हृदय में पीड़ा। १४ घटाकर लाये हुए भाग में औषध से भय। बीस घटानेसे फोड़ा फुन्सी का भय। और २५ घटाकर कर्ण व्यथा का विचार करे॥४॥ ३० घटाने से शीतल व्याधि। और ४२ कम करने से मृत्यु भय। ५० से जल भय होता है॥५॥

षष्ठ्यूनाप्ते हृतं चौरैर्वह्निं सप्ततिन्यूनहृत्॥ खाष्टोनाप्तेऽल्पघातादि नवतिन्यूनाप्तकेषु च ॥६॥ शतोनाप्ते सुतोत्पत्तिं व्याधिमष्टोत्तरोनके ॥ षोडशोत्तरशतेनाप्तं विवाहं परिकल्पितम् ॥७॥ विंशाधिकशतेनाप्ते पक्षद्वयंते मृतिर्भवेत् ॥ एवं भागप्रभेदेन जीवानासुखदुःखकम् ॥८॥ न्यूनांको भाग न्यूनेन शुभाशुभफलं दिशेत् ॥ तेषां योगो द्विभक्तो वाद्वि बाणप्रयुते दलौ ॥९॥ पूर्वोत्तरौ हि भवतः समाऽसमसुखासुखौ ॥ त्रिभागे तत्त्रिभागे वा घातादल्पान्व्रणान्वदेत् ॥१०॥ विस्फोटकं तत्त्रिभागे कल्प्यास्तुल्याः समीक्षिते ॥ तुर्यांशे तच्चतुर्थांशे मरणं मातृकादयः ॥११॥ धनांशे वित्तहरणं सहजांशे तनोर्मृतिः ॥ मातृमृत्युः सुखांशे तु सुतांशे सुतमृत्युदः ॥१२॥ रिपुभागे रिपोर्मृत्युर्जायांशे स्वस्त्रियो मृतिः ॥ रंध्रांशे ऋणदो मृत्यु भाग्यांशेच प्रभोर्मृतिः ॥१३॥ कर्मांशे पितरं हन्ति लाभांशे नष्टजीविकाम् ॥ व्ययांशे पशुवाहादिमृत्युः स्यान्नियतं द्विज ॥१४॥

६० घटाने पर लाये हुए भाग में चौर भय तथा ७० से अग्नि भय। ८० से अल्पघात तथा ९० घटाकर किये हुए भाग में भी घात से भय होता है॥६॥ १०० घटाने से पुत्रोत्पत्ति तथा १०८ घटाने से व्याधि और ११६ से विवाह का विचार करे॥७॥ इसी तरह १२० घटाकर शेष के २०वें या ९वें भाग में १ मास बाद मृत्यु का निर्देश (संभवानुसार) करे। इस प्रकार भाग के भेद से जीवों का सुख दुःख का विचार करे॥८॥ जोड़ किया हुआ अंक अति न्यून हो तो उसी से शुभाशुभ फल कहे (अर्थात् बड़े ध्रुवांक बिना घटाये हुए ही फल निर्देश करे) प्रथम के योग को २ का भाग देकर दो अंक सिद्ध कर एकमें ५२ जोड़े॥९॥ वे पूर्व अंक और उत्तर अंक होते हैं। एक की सम संज्ञा दूसरे की असम संज्ञा है, और वे अंक सुख दुःख के देनेवाले हैं॥ उन अंकों के तिहाई अथवा तिहाई के तिहाई (त्रिभाग के त्रिभाग) अर्थात् नोवें भाग के संख्याक में घात जन्य घाव हो॥१०॥ उसके त्रिभाग में विस्फोटक (शीतला) का भय तथा चतुर्थांश अथवा चतुर्थांश के चतुर्थांश में (१६ वें भाग में) माता की मृत्यु कहे॥११॥ दूसरे अंश में धन की चोरी (१२ भाग कल्पना के फल कहते हैं) तृतीयांश में मृत्यु से भय। चतुर्थांश में माता की मृत्यु। पंचमांश से सुतमृत्यु॥१२॥ षष्ठांश में शत्रु की मृत्यु। सप्तमांश में स्त्री मृत्यु। अष्टमांश में ऋणदाता की मृत्यु। नवमांश में स्वामी की मृत्यु। दशमांश में पिता की। एकादशांश में जीविका नाश तथा व्ययांश में पशु सवारी की हानि ॥१३॥१४॥

लग्नांशे मित्रमृत्युः स्याद्गुरूणां सहचारिणाम्।पंचमाशे प्राप्तिकरस्तत्पंचाशे धनं लभेत् ॥१५॥ पष्ठांशो दुःखदस्तस्य तत्षष्ठांशं च वा दिशेत् ॥ सप्तांशे तद्दशांशे वा घाता वाच्याः शिलादितः ॥१६॥ लग्ने वित्ते शिलाघातो जलघातस्त्रितुर्ययोः ॥ पुत्रे षष्ठे वृक्षघातो मन्दे मृत्यौ चतुष्पदात् ॥१७॥ धर्मे कर्मे कर्कघातो व्यये लाभे सरीसृपात् ॥ एवं स्थितिः स्याद्ग्रहाणां सप्तांशकफलं वदेत् ॥१८॥ आशांशे पुण्यदानादि रुद्रांशे समदुःखकम् ॥ अष्टमांशे मित्रयोगो नवमांशे गुरोर्वदेत् ॥१९॥ अर्कांशितिव्ययो वाच्यो विश्वांशो मानहानिदः ॥ शक्रांशे कलहं वाच्यं तिथ्यंशे चौरकान्वदेत् ॥२०॥ भूपांशे परजायादिसंगावाप्तिर्निगद्यते ॥ अत्यष्टचंशे हि नोद्वेगो धृत्यंशे शुचमादिशेत् ॥२१॥ अतिधृत्यं शके यात्रा विंशांशे बंधनादिकान् ॥ अर्को व्यवस्थितो यत्र तत्रैव पितृजं सुखम् ॥२२॥

लग्नांश में गुरु, मित्र आदि की मृत्यु। पंचमांश प्राप्तिकारक है। २५ वें भाग में धनप्राप्ति हो। षष्ठांश दुःखदायी है। ३६वां भाग भी दुःखदायी है। सप्तांश या दशांश में शिला आदि से घात हो॥१५॥१६॥ लग्न के तथा धनभाव के भाग में शिला से घात। ३।४ थे भाग में जलाघात ५।६में वृक्षघात। ७।८में चौपायेसे घात॥१७॥ ९।१० से कर्क (केंकड़ा) जलजन्तु से घात। ११।१२ मे सर्प से घात होता है॥ इस प्रकार १२ भाग करके १२ भावों पर फल समझना। और ७ भाग करके ७ ग्रहों के अनुसार फल समझना॥१८॥ १० म अंश में पुण्यदान आदि तथा ११वें में साधारण दुःख। ८ म अंश में मित्रयोग और नवमांश में गुरुयोग होता है॥१९॥ १२ वें अंश में अतिखर्च। १३ वें में मानहानि। १४ वें में कलह। १५वें में चौरभय॥२०॥ १६ वें अंश में परस्त्रीसंग।१७मेंश्रेष्ठ। १८ में चिन्ता होती है॥२१॥ १९ वें में यात्रा। २० वें में बंधन होता है। सूर्य स्थित जो अंश है उसमें पिता को सुख होता है॥२२॥

यत्र चंद्रः स्थितस्तत्र विवाहं परिकल्पितम् ॥ भ्रातृयोगो भवेत्तत्र यत्रांगारकसंस्थितिः ॥२३॥ स्वसायोगो हि यत्र ज्ञो यत्र वाचस्पतिः स्थितः ॥ तत्र पुत्रो यत्र शुक्रस्तत्र कन्या प्रकीर्तिता ॥२४॥ यत्र मंदः स्थितस्तत्र मातृजं सुखमादिशेत् ॥ एवं ग्रहानुसारेण सुखादि परिचिंतयेत् ॥२५॥ लग्नाधीशमदाधीशौ भागादिवेद संगुणौ॥ कृत्वा तदंतरमिते वर्षे वाच्यो विवाहकः॥२६॥ तत्पौ यत्र स्थितौ भावयोगे चांतरके तथा ॥ राशिं विवाहद्विगुणौ तद्वर्षे वा विवाहकम् ॥२७॥ तत्पंत्योरंतरं कार्यं राशिभागादिकान्हरेत् ॥ लब्धांकतुल्यमुद्वाहंमेषांके वा विनिर्दिशेत् ॥२८॥ एवं सुतर्क्षलाभाभ्यां पुत्रकन्ये विचिन्तयेत् ॥ तथैव भ्रातृभाग्याभ्यां भ्रातृभगिनीं विचिन्तयेत् ॥२९॥ व्ययलाभांतरं कार्यंतत्पत्योरपि चांतरम् ॥ भावांतरं व्ययं ज्ञेयं लाभं स्वाम्यंतरक्रमात् ॥३०॥

जिस अंश में चन्द्रमा हो उसमें विवाह हो। मंगल के अंश में भ्रातृयोग होता है॥२३॥ बुधांश में बहिन और गुरु अंश में पुत्र तथा शुक्रांश में कन्या हो॥२४॥ शन्यंश में मातृ सुख। इस प्रकार ग्रहों से सुख की कल्पना करे॥२५॥ लग्न सप्तमेश के अंशादि को ४ से गुणा करे तो अंशों के वर्ष में विवाह होता है॥२६॥ लग्न सप्तमेश जिन स्थानों में हों उन भावों की राशियों

का योग और अन्तर करे तो विवाह का वर्ष होगा। अथवा द्विगुण अंक विवाह का वर्ष होगा।।२६।। अथवा १।७ के स्वामीके राश्यादि अंकका अंतर करे और भावों के योग में भाग दे तो लब्धांक तुल्य वर्ष में विवाह होता है।।२८।। इसी प्रकार ५।११ भाव से पुत्रकन्या का विचार करे। तथा भ्रातृ भाग्य से भाई बहन का विचार करे।।२९।। ११।१२ भाव का अन्तर करे तो व्ययवर्ष और भावेशों के अन्तर, लाभ वर्ष होते हैं।।३०।।

सूर्येन्द्वारज्ञेज्यशुक्रमंदानां भार्गवादयः ।। तत्तत्संस्थितभावानां राशिभागादिका युतिः ।।३१।। तद्योगे द्वादशे तष्टे जन्ममासे मृतिं वदेत् ।। त्रिंशद्गुण्यं दिनं ज्ञेयमेवं नाडीपलादिकम् ।।३२।। लग्नचंद्रातरं कार्यं तत्कला तत्पलादिकम् ।। जन्मकाले विहीने तु जलप्रसव उच्यते ।।३३।। सूर्यचंद्रांतरं कार्यं तनुयुक्तं तथोत्तरम् ।। तत्तत्प्रमितिके वर्षे लाभं वै पुष्कलं वदेत् ।।३४।। राशिलग्नपयोर्योगे मृत्युयुक्ते विनिंदिते ।। ऋणं वा ऋणमुक्तं वा भवेद्वै चंद्रयोगके ।।३५।। सूर्येन्दुलग्नसंयोगे राशीशस्पष्टसंयुते ।। तद्वर्षे महती पीडा हीने सौख्यं न संशयः ।।३६।। सुतभाग्यांतरं कार्यं तद्वर्षे शीतलादिकम् ।। लग्नस्वांतरसंयोगे पितुर्मृत्युर्न संशयः ।।३७।। राशीशकर्मसंयोगे तदा कर्मोदयं वदेत् ।। धर्मव्ययसमायोगे तद्वर्षे व्ययनिश्चयः ।।३८।। मदनांतरभावेषु सर्वत्रैवं विलक्षयेत् ।। भाग्यादिमृत्युपर्यंतं ग्रहाणां फलमुच्यते ।।३९।। यत्त्वया खलु मे पृष्टं तदिदं कथितं मया ।। यस्मै कस्मै न दातव्यं स्ववाक्यपरिसिद्धये ।।४०।।

इति श्रीबृहत्पाराशरहोराशास्त्रेपूर्वखंडसारांशे जीवानां सुखदुःखवर्णनं नामैकोनत्रिंशत्तमोऽध्यायः ।।२९।।

सू० चं० मं० बु० बृ० शु० श० इन ग्रहों के ग्रहस्थित भावों का योग करे।।३१।। इस जोड़ में १२ का भाग दे तो उस वर्ष में जन्म के मास में मृत्यु कहे। तीस ३० से गुनने पर दिन घटी पल समय होगा।।३२।। लग्न चन्द्रका अन्तर करे। उसमें इष्ट घटावे तो जलप्रसव (गर्भाधान) का इष्ट होता है।।३३।। सूर्य चन्द्रान्तर में लग्न जोड़े। आगत वर्ष में बहुत लाभ हो।।३४।। लग्न और लग्नेश को जोड़कर अष्टमभाव भी जोड़े। उस वर्ष में ऋण होता है। चन्द्रयोग के वर्षमें ऋण मुक्त होता है।।३५।। लग्न सू० चं० योगवर्ष में पीड़ा और अन्तरवर्ष में सुख होता है।।३६।। ५।९ भावान्तर वर्ष में शीतला तथा १/२ के अन्तर के योग वर्ष में पिता की मृत्यु।। लग्न दशम संयोग वर्ष में भाग्योदय। ९/१२ योगवर्ष में व्यय होता है।। सातवें भाव तक के सब भावों में इसी प्रकार विचारना चाहिए। भाग्य से अष्टम भाव तक के ग्रहों का पल कहा गया।। जो तुमने हमसे पूछा था सो सब हमने तुमसे कह दिया है। अपनी वाक्सिद्धि की रक्षार्थ यह ज्ञान जिस किसी को नहीं देना।।३१-४०।।

इति श्रीबृ० पा० हो० शा० पू० ख०सा० जीवानां सुखदुःखवर्णन नामैकोनत्रिंशत्तमोऽध्यायः ।।२९।।

उदाहरणार्थ स्पष्टचक्र

सर्व ग्रह अंशादि। भाव राश्यादियोग में निम्न अंक घटाकर १२० का भाग दे। शेष आयु के वर्ष हैं।

श्रीः

ऊनांक

७	२-	पीडा	६०-	चौरभय
	४-	सुख	७०-	अग्निभय
	६-	स्त्रीभय	८०-	अल्पघात
	१०-	हृत्पीड़ा	९०-	" "
	१४-	औषधसेवन	१००-	पुत्रलाभ
१	२०-	स्फुटत्तनु	१०८-	व्याधि
	२५-	कर्णव्यथा	११६-	विवाह
	३०-	शीतलाभय	१२०-	मृत्यु(१मासबाद)
	३२-	मृत्युभय	०	
	५०-	वारिभीति	०	

	त्रिभागे	तत्त्रिभागे—	घाताद् व्रणानि
	तुर्यांशे	तत्तुर्यांशे—	मात्रादि मरणं
		धनांशे—	धनहरण
		सहजांशे—	मृत्यु
		सुखांशे—	मातृमृत्यु
		सुत्तांशे—	सुतमृत्यु
		रिपुभागे—	रिपुमृत्यु
२		जायांशे—	जायामृत्यु
		अष्टमांशे—	ऋणदमृत्यु
		भाग्यांशे—	प्रभुमृत्यु
		कर्मांशे—	पितृमृत्यु
		लाभांशे—	जीविका हानि
		व्ययांशे—	पशुवाहन हानि
		लग्नांशे—	मित्रमृत्यु

बाद—सू० मं० रा० श० से- (भागयोग से) अशुभफल
और-चं० बुध० गु० शु० से- (भागयोग से) शुभफल

९

	पंचमांशे—	प्राप्ति
	तत्पंचमांशे—	धनप्राप्ति
	षष्ठांशे—	दुःखदः
३	तत्षष्ठांशे—	" "
	सप्तांशे—	घात
	दशांशे—	घात

	लग्ने वित्ते—	शिलाघात
	३-४—	जलघात
४	५-६—	वृक्षघात
	७-८—	चतुष्पद घात
	९-१०—	कर्कघात
	११-१२—	सर्पघात

एवं स्थितिः स्याद् ग्रहाणां सप्तांशकफलं वदेत्—

	आशांशे—	पुण्यदान
	रुद्रांशे—	समदुःख
	अष्टमांशे—	मित्रयोग
	नवमांशे—	गुरो र्वदेत्
	अर्कांशे—	अतिव्यय
	१३ विश्वांशे—	मानहानि
५	१४ शक्रांशे—	कलह
	१५ तिथ्यंशे—	चौरभय
	१६ भूपांशे—	परजायासंग
	१७ अत्यष्टयंशे—	उद्वेगशान्ति
	१८ धृत्यंशे—	शोक
	१९ अतिधृत्यंशे—	यात्रा
	विंशे २० अंशे—	बंधन

	सूर्यस्थित्तिवशात्—	पितृसुख
	चन्द्र- " "—	विवाह सुख
	भौम " "—	भ्रातृयोग सुख
	बुध " "—	भगिनी सुख
६	गुरु " "—	पुत्र योग सुख
	शुक्र " "—	कन्यायोग सुख
	शनि " "	मातृ सुख

७— विवाह— १-लग्नेश, सप्तमेश के अंशादि चतुर्गुणित करके अन्तर करे। अंशमित वर्ष में विवाह हो।
२-लग्नेश, सप्तमेश स्थित भाव योग या अन्तर के वर्ष में अथवा द्विगुण में
३-लग्नेश, सप्तमेश का अन्तर करके अंश करे, तत्तुल्य वर्ष में विवाह हो।

१-इसी तरह ५।११ भावेशों से-पुत्र कन्या का विवाह कहना।
२-३।९ भावेशों से भाई बहिन का विवाह देखना।

८— लाभ तथा व्यय भावों के अन्तर से खर्च, और ११।१२ के स्वामी के अन्तर से लाभ

९— सूर्य से शनि तक के ग्रहों के भागादि तथा ग्रहस्थित भावों के राश्यादि (सब) जोड़कर (अंश करके १२० का भाग दे, शेष अंक अल्प, मध्य, दीर्घ आयु के अनुसार आयु के वर्ष हैं। तथा उस संख्या में १२ का भाग दे, शेष मास हैं। ३० से दिन और ६० से घटी एवं पल हैं।

(इसीमें नं० १ क्रिया का योग है)

ग्रहयोग से विचार

१०-

१—	आधान—	लग्न चन्द्रान्तर से।
२—	अधिकलाभ—	सूर्य चन्द्रान्तरमें लग्न योग।
३—	ऋणमुक्ति—	चन्द्र लग्नेश योग से।
४—	ऋण—	चन्द्र अष्टमेश योग से।
५—	महान् कष्ट—	सू० चं० चन्द्रेश लग्नयोग से
६—	कष्टमुक्ति—	सू०चं०ल० इनका योग राशीशसे अल्प हो।
७—	शीतला—	५।९ भावोंके अन्तर में (भाग वर्ष)
८—	पितृमृत्यु—	१।२ के अन्तर, या योग में
९—	भाग्योदय—	चन्द्रेश तथा दशम के योग में
१०—	विशेष व्यय—	९-१२ के योग वर्ष में

ग्रहों के ध्रुवांक-(जातक तत्व से)

सू०	चं०	मं०	बु०	बृ०	शु०	श०	रा०
१९,	४,	१९,	१०,	१३,	८,	३०,	१८

ग्रहाद्यवस्थाफलमाह

मैत्रेय उवाच—आदित्यादि ग्रहाणां च ह्यवस्था च पृथक्पृथक् ।। भेदाःकतिविधाःसंति कथय त्वं कृपानिधे ।।१।।
पराशर उवाच—भास्करादिग्रहाणां च ह्यवस्था विविधापि च ।। षण्णवत्यामितावस्था सारभूतं वदाम्यहम् ।।२।।

ग्रहादिअवस्था फल कथन

मैत्रेयजी ने कहा-सूर्य आदि ग्रहों की अलग अलग अवस्था तथा भेद कितने हैं सो कहिये। पराशरजी ने कहा-सूर्य आदि ग्रहों की अनेक अवस्था हैं, उनमें मुख्य ९६ अवस्था है। उनमें से सारभूत अवस्था कहते हैं।।१-२।।

अथ जाग्रदाद्यवस्थामाह

त्र्यंशादंशं त्रिभागं च कल्पयित्वा पृथक् पृथक् ।। विषमादिक्रमेणैव समे वै विपरीतकम् ।।३।। विज्ञाय प्रथमं पुंसां जाग्रत्स्वप्नसुषुप्तिकाः ।। विशेषतः परीक्षा स्याज्जागरः कार्यसाधकः ।।४।। स्वप्नाऽवस्था मध्यफला उपदेष्टा गुरुर्यदि ।। निष्फला चरमावस्था ज्ञातव्या मुनिसत्तम ।।५।।

अथ दीप्ताद्यवस्थामाह

दीप्तः स्वस्थः प्रमुदितः शांतो दीनोऽतिदुःखितः ।। विकलश्च खलः कोपी नवधा खेचरो भवेत् ।।६।। उच्चस्थः खेचरो दीप्तः स्वस्थः स्वोच्चातिमित्रभे ।। मुदितो मित्रभे शांतः समभे दीन उच्यते ।।७।। शत्रुभे दुःखितोऽतीव विकलः पापसंयुतः ।। खलः खलग्रहे ज्ञेयः कोपी स्यादर्कसंयुतः ।।८।। पाके प्रदीप्तस्य धराधिपत्यमुत्साहशौर्यं धनवाहने च ।। स्त्रीपुत्रलाभं शुभबंधुपूजां क्षितीश्वरान्मा नमुपैति विद्याम् ।।९।।

जाग्रत आदि अवस्था

राशि के ३० अंशो के ३ भाग कल्पना करे। प्रत्येक भाग में जाग्रत, स्वप्न, सुषुप्ति ३ अवस्था होती हैं। विषम राशियों में पहले १० अंश तक जाग्रत, बाद २० अंश तक स्वप्न, उसके बाद ३० अंश तक सुषुप्ति। और सम राशि में १० अंश तक सुषुप्ति और २० अंश तक स्वप्न तथा ३० तक जाग्रत अवस्था होती है।।३।। प्रथम ग्रह की अवस्था जानकर

फल कहना। जाग्रत अवस्था कार्य सिद्ध करनेवाली है।।४।। स्वप्न अवस्था मध्यम फल तथा सुषुप्ति अवस्था निष्फल जानना।।५।। दीप्तादि अवस्था–ग्रह की ९ अवस्था होती हैं। जिनके ये नाम हैं–दीप्त, स्वस्थ, प्रमुदित, शान्त, दीन, अति दुखित, विकल, क्रोधी। जो ग्रह परम उच्च राशि में हो वह 'दीप्त'। उच्च राशि में 'स्वस्थ' अतिमित्र राशि में 'मुदित'। मित्र राशि में 'शान्त' और सम राशि में 'दीन'। शत्रु राशि में 'दुखी' । पापग्रह युक्त में 'विकल'। अति पापी के साथ 'खल' और सूर्य के साथ 'क्रोधी' होता है।।६ से ८।। प्रदीप्त ग्रह की दशा में पृथ्वीपति, उत्साह, शूरता, धन, सम्पति, सवारी, स्त्री–पुत्र, मान–सम्मान तथा राज–मान्य विद्वान होता है।।९।।

स्वस्थस्य खेटस्य दशाविपाके स्वस्थो नृपाल्लब्धधनादिसौख्यम् ।। विद्यां यशः प्रीतिमहत्त्वमाराद्दारार्थभूम्यादिजधर्ममेति ।।१०।। मुदान्वितस्यापि दशाविपाके वस्त्रादिकं गन्धसुतीर्थधैर्यम् ।।पुराणधर्मश्रवणादिलाभं वस्त्रादियानाम्बरभूषणाप्तिम्।।११।। दशावि–पाके सुखधर्ममेति शांतस्य भूपुत्रकलत्रयानम्।।विद्याविनोदान्वितधर्मशास्त्रं बह्वर्थदेशाधिप-पूज्यतांच।।१२।। स्थानच्युतिर्बंधुविरोधता च दीनस्य खेटस्य दशाविपाके ।। जीवत्यसौ कुत्सितहीनवृत्त्या त्यक्तो जनैः रोगनिपीडितः स्यात् ।।१३।। दुःखार्दितस्यापि दशाविपाके नानाविधं दुःखमुपैति नित्यम् ।। विदेशगो बंधुजनैर्विहीनश्चोराग्निभूपैर्भयमातनोति ।।१४।। वैकल्यखेटस्य दशाविपाके वैकल्यमायाति मनोविकारम् ।। मित्रादिकानां मरणं विशेषात्स्त्रीपुत्रयानांबरचोरपीडाम् ।।१५।।

स्वस्थ ग्रह की दशा में मनुष्य भी स्वस्थ तथा राजमान्य, धन आदि सुख से सुखी, विद्या, यश और स्त्रीपुत्र, भूमि आदिक सम्पत्तिशाली तथा धर्मात्मा होता है।।१०।। मुदित ग्रह की दशा में सुन्दर वस्त्र, तीर्थ यात्रा, पुराण आदि धर्म कथा श्रवण, सवारी, वस्त्र भूषण आदि का लाभ होता है।।११।। शान्त ग्रह की दशा में सुखी, धर्मकर्ता, पृथ्वी, पुत्र, स्त्री आदि सवारी की प्राप्ति, धर्मशास्त्र के उपदेश तथा राजा से सम्मान प्राप्त होता है।।१२।। दीनग्रह की दशा में अपने स्थान से च्युति (हटना), बन्धुओं से विरोध, हीन वृत्ति से आजीवन, समाज से बहिस्कार तथा रोग से दुःखी होता है।।१३।। दुःखी ग्रह की दशा में नाना प्रकार के दुःख प्राप्त होते हैं। विदेश गमन, बन्धु वियोग, चोर, अग्नि और राजा से भय होता है।।१४।। विकल ग्रह की दशा में चिन्ता दुःख प्राप्त होते हैं। स्त्री, पुत्र, मित्र आदि की मृत्यु या वियोग होता है तथा चोरी, रोग का भय रहता है।।१५।।

दशाविपाके कलहं वियोगं खलस्य खेटस्य पितुर्वियोगम् ।। शत्रोर्जनानां धनभूमिनाशमुपैति नित्यं स्वजनैश्च निंदाम् ।।१६।। कोपान्वितस्यापि दशाविपाके पापाः समायांति बहुप्रकारैः ।। विद्याधनस्त्रीसुतबंधुनाशं पुत्रादिकृच्छ्रं त्वथ नेत्ररोगम् ।।१७।।

अथ बालाद्यवस्थाफलमाह

बालो रसांशैरसमे प्रदिष्टस्ततः कुमारो हि युवाथ वृद्धः ।। मृतः क्रमादुत्क्रमतः समर्क्षे बालाद्यवस्था

कथिता ग्रहाणाम् ।।१८।। फलं तु किंचिद्वितनोति बालश्चार्द्धं कुमारो यतते न पुंसाम् ।। युवा समग्रं खचरोऽथ वृद्धः फलं च दुष्टं मरणं मृताख्यम् ।।१९।।

अथ प्रवासाद्यवस्थाफलमाह

प्रवासनष्टा च मृता जया हास्या रतिर्मुदा ।। सुप्ता भुक्ता ज्वरा कंपा सुस्थितिर्नामसन्निभा ।।२०।। षष्टिघ्नं गतभं भुक्तघटीयुक्तं युगाहतम् ।। शराब्धिहृल्लब्धतोऽर्काच्छेषावस्थाद्विजोत्तम ।।२१।।

खल ग्रह की दशा में कलह, वियोग, माता पिता की मृत्यु या वियोग, शत्रु से भय, धन और भूमि का नाश तथा नित्य नई निन्दा होती है।।१६।। क्रोधी ग्रह की दशा में अनेक प्रकार के दु:ख, धन, स्त्री, सुत, बन्धु इनका नाश, पुत्र आदि को पीड़ा तथा नेत्र में बीमारी होती है।।१७।। बाल आदि अवस्था तथा फल–बाल आदि ५ अवस्था होती हैं। बाल, कुमार, युवा, वृद्ध और मृत। ६–६ अंशों की १–१ अवस्था होती है। विषम राशि में लिखित क्रम से तथा सम राशि में उल्टे क्रम से सूर्यादि ग्रहों की ये दशायें होती हैं। फल–ग्रह बाल अवस्था में हो तो कुछ फल देता है। कुमार अवस्था में यत्न करने से आधा फल तथा युवा अवस्था में पूरा फल। वृद्ध अवस्था में उद्योग हानि। और मृत्यु अवस्था में मरणकारी है।।१८।।१९।।

प्रवास आदि अवस्था–प्रवास आदि १२ अवस्थाएं होती हैं। प्रवास, नष्टा, मृता, जया, हास्या, रति, मुदा, सुप्ता, भुक्ता, ज्वरा, कन्या, सुस्थिति। इन अवस्थाओं का फल इनके नाम के समान है।।२०।। वर्तमान नक्षत्र की भुक्त घटी (भयात्) में गत नक्षत्र संख्या को ६० से गुणा करके योग करना। इस योग को पुन: ४ से गुणा करना। फिर ४५ से भाग देना। जो शेष बचे वह यदि १२ से अधिक हो तो १२ से भाग देना। शेष बचे उस संख्या की अवस्था जानना।।२१।।

प्रवासःप्रवासोपगे जन्मकालेऽर्थनाशस्तु नष्टोपगे मृत्युभीतिः ।। मृतावस्थिते स्याज्जयायां जयस्तु विलासस्तु हास्योपगे कामिनीभिः ।।२२।। रतौ स्याद्रतिः क्रीडिता सौख्यदात्री प्रसुप्तापि निद्रां कलिं देहपीडाम् ।। भयं तापहानिः सुखं स्यात्तु भुक्त्वा ज्वरा कंपिता सुस्थिता सुक्रमेण ।।२३।।

अथ लज्जिताद्यवस्थामाह

लज्जितो गर्वितश्चैव क्षुधितस्तृषितस्तथा ।। मुदितः क्षोभितश्चैव ग्रहभावाः प्रकीर्तिताः ।।२४।। पुत्रगेहगतः खेटोः राहुकेतुयुतो भवेत् ।। रविमंदकुजैर्युक्तो लज्जितो ग्रह एव च ।।२५।।

फल–जन्मकाल में ग्रह की प्रवास अवस्था हो तो मुसाफिरी । नाश अवस्था में धन का नाश। मृत अवस्था में मृत्यु से भय। जया अवस्था में जय। हास्य अवस्था में स्त्रियों से विलास। रति अवस्था में रमण। सुप्त अवस्था में निद्रा। कलि अवस्था में देह पीड़ा। कम्पित अवस्था में ज्वर। भुक्त अवस्था में सुख और चिन्ता–हानि। सुस्थिर अवस्था में शान्ति–दायिनी होती है।।२२।।२३।।

लज्जित आदि अवस्था–लज्जित, गर्वित, क्षुधित, तृषित, मुदित क्षुभित ये ६ अवस्थायें भी ग्रहों की होती है।।२४।। पंचम भाव में ग्रह स्थित हो। सूर्य, मंगल, शनि से युक्त हो अथवा राहुकेतु से युक्त हो तो 'लज्जित' अवस्था होती है।।२५।।

तुंगस्थानगतो वापि त्रिकोणेपि भवेत्पुनः ।। गर्वितः सोपि गदितो निर्विशंकं द्विजोत्तम ।।२६।। शत्रुगेही शत्रुयुक्तो रिपुदृष्टो भवेद्यदि ।। क्षुधितः स च विज्ञेयः शनियुक्तो यथा तथा ।।२७।। जलराशौ स्थितः खेटः शत्रुणा चावलोकितः ।। शुभग्रहा न पश्यंति तृषितः स उदाहृतः ।।२८।। मित्रगेही मित्रयुक्तो मित्रेण चावलोकितः ।। गुरुणा सहितो यश्च मुदितः स प्रकीर्तितः ।।२९।। रविणा सहितो यश्च पापाः पश्यंति सर्वथा ।। क्षोभितं तं विजानीयाच्छत्रुणा यदि वीक्षितः ।।३०।। येषु येषु च भावेषु ग्रहास्तिष्ठंति सर्वथा ।। क्षुधितः क्षोभितो वापि स नरोः दुःखभाजनः ।।३१।। एवं क्रमेण बोद्धव्यं सर्वभावेषु पंडितैः ।। बलाबलविचारेण वक्तव्यः फलनिर्णयः ।।३२।।

उच्च स्थान में हो अथवा त्रिकोण में हो तो 'गर्वित' अवस्था होती है।।२६।। शत्रु गृह में शत्रु ग्रह से युक्त या दृष्ट हो अथवा शनियुक्त हो तो 'क्षुधित' अवस्था होती है।।२७।। ग्रह जलराशि में शत्रु से दृष्ट हो, शुभग्रह की दृष्टि नहीं हो तो 'तृषित' अवस्था होती है।।२८।। ग्रह मित्र के घर में मित्रग्रह से युक्त तथा दृष्ट तथा गुरु सहित हो तो 'मुदित' होती है।।२९।। जो ग्रह सूर्य युक्त हो पापग्रह देखते हों तथा शत्रु दृष्ट हो तो 'क्षुभित' है।।३०।।
फल–जिन २ भावों में 'क्षुधित' और 'क्षुभित' ग्रह हों उन भावों का फल मनुष्य के लिये दुःखदायी होता है।।३१।। इसी प्रकार भावों में बलाबल का विचार करके फल का निर्णय करना चाहिए।।३२।।

अन्योन्यं च मुदा युक्तं फलं मिश्रं वदेत्पुनः ।। बलहीने तदा हानिः सबले च महाफलम् ।।३३।। कर्मस्थाने स्थितो यस्य लज्जितस्तृषितस्तथा ।। क्षुधितः क्षोभितो वापि स नरो दुःखभाजनः ।।३४।। सुतस्थाने भवेद्यस्य लज्जितो ग्रह एव च ।। सुतनाशो भवेत्तस्य एकस्तिष्ठति सर्वदा ।।३५।। क्षोभितस्तृषितश्चैव सप्तमे यस्य वा भवेत् ।। म्रियते तस्य नारी च सत्यमाहुर्द्विजोत्तम ।।३६।। नवालयारामसुखं नृपत्वं कलापटुत्वं विदधाति पुंसाम् ।। सदार्थलाभं व्यवहारवृद्धिं फलं विशेषादिह गर्वितस्य ।।३७।। भवति मुदितयोगे वासशालाविशाला विमलवसनभूषाभूमियोगासु सौख्यम् ।। स्वजनजनविलासो भूमि पागारवासो रिपुनिवहविनाशो बुद्धिविद्याविकाशः ।।३८।। दिशति लज्जितभाववशाद्रतिं विगतराममतिं विमतिक्षयम् ।। सुतगदागमनं गमनं वृथा कलिकथाभिरुचिं न रुचिं शुभे ।।३९।।

मुदित अवस्था में ग्रह हों तो मिश्रित फल कहना चाहिए। ग्रह बलहीन हो तो हानि, बलवान् हो तो महाफल होता है।।३३।। जिस जातक के दशमभाव में लज्जित, तृषित, क्षुधित, क्षोभित ग्रह हों, वह मनुष्य सदा सुखी रहता है।।३४।। जिसके पंचम भाव में लज्जित ग्रह हो उसके एक ही पुत्र संतान होती है और संतान का नाश होता है।।३५।। हे मैत्रेय! जिसके सप्तम स्थान में क्षोभित या तृषित ग्रह हो उसकी स्त्री की मृत्यु होती है यह निश्चय है।।३६।। गर्वितग्रह श्रेष्ठ भाव में होने से नये मकान, बागीचा, धन लाभ, व्यापार वृद्धि, अनेक प्रकार

की विद्या प्राप्त कराता है।।३७।। मुदित ग्रह के योग से विशाल महल, निर्मल वस्त्र, भूषण, भूमि, सुख, मित्रों में आनन्द, शत्रुओं का नाश, विद्या और बुद्धि का विकास करता है।।३८।। लज्जित ग्रह भक्ति हीनता, सुबुद्धि, कलहप्रियता, वृथा यात्रा, संतान की बीमारी और शुभ कार्य में अरुचि करता है।।३९।।

संक्षोभितस्यापि फलं विशेषाद्दरिद्रजातं कुमतिं च कष्टम् ॥ करोति वित्तक्षयमंघ्रिबाधां धनाप्तिबाधामवनीशकोपात् ॥४०॥ क्षुधितग्रहवशाद्वै शोकमोहादिपातः परिजनपरितापादाधिभीत्या कृशत्वम् ॥ कलिरपि रिपुलोकैरर्थबाधा नराणामखिलबलनिरोधो बुद्धिरोधो विषादात् ॥४१॥ तृषितखगभवे स्यादंगनासंगमध्ये भवति गदविकारो दुष्टकार्याधिकारः ॥ निजजनपरिवादादर्थहानिः कृशत्वं खलकृतपरितापो मानहानिः सदैव ॥४२॥

क्षोभित ग्रह विशेष दरिद्री, कुमति, रोगी, धन हानि, पैर की बीमारी, राजकोप से व्यापार में हानि कराता है।।४०।। क्षुधित ग्रह शोक, मोह, दुःख, चिन्ता, भय, परिताप, कृषता, शत्रुओं से कलह, धन हानि, किंकर्तव्यविमूढ़ता तथा दुर्बलता देता है।।४१।। तृषित ग्रह स्त्री को बीमारी, बुरे काम में रति, निन्दा, धन–हानि, मानहानि, कृशता और शत्रु से दुःख पहुँचाता है।।४२।।

अथ शयनाद्यवस्थामाह

शयनं चोपवेशं च नेत्रपाणिप्रकाशनम् ॥ गमनागमनं चाथ सभायां वसतिं तथा ॥४३॥ आगमं भोजनं चैव नृत्यं लिप्सां च कौतुकम् ॥ निद्रां ग्रहाणां चेष्टां च कथयामि तवाग्रतः ॥४४॥ यस्मिन्नृक्षे भवेत्खेटस्तेन तं परिपूरयेत् ॥ पुनरंशेन संपूर्य स्वनक्षत्रे नियोजयेत्॥४५॥ यातदंडं तथालग्नमेकीकृत्य सदा बुधः ॥ रविणा हरते भागं शेषं कार्ये नियोजयेत् ॥४६॥ नाक्षत्रिकदशाक्रमेण पुनः पूरणमाचरेत् ॥ नामाक्षरेण संयुक्ते हर्तव्यं रविणा ततः ॥४७॥ रवौ पंच तथा देयं चंद्रे दद्याद्द्वयं तथा ॥ कुजे द्वयं च संयुक्ते बुधे त्रीणि नियोजयेत् ॥४८॥ गुरौ बाणाः प्रदेयाश्च त्रयं दद्याच्च भार्गवे ॥ शनौ त्रयमथो देयं राहौ दद्याच्चतुष्टयम् ॥४९॥ शेषं हृतं च रामेण ग्रहाणां त्रिविधं भवेत् ॥ दृष्टिं चेष्टां विचेष्टां च कथयामि तवाग्रतः ॥५०॥

शयन आदि अवस्था–शयन, उपवेशन, नेत्र–हस्त प्रकाशन, गमन, आगमन, सभा स्थिति, आगम, भोजन, नृत्य, लिप्सा, कौतुक और निद्रा। ग्रहों की ये चेष्टायें कहते हैं।।४३।।४४।। ग्रह जिस नक्षत्र में हो उस नक्षत्र संख्या से ग्रह की संख्या को गुणा करना, बाद ग्रह के भुक्तांश संख्या से गुणा करना। पश्चात् वर्तमान नक्षत्र संख्या जन्म की ईष्ट घटी और जन्म का लग्न ये सब जोड़ना। बाद १२ का भाग देना, जो संख्या शेष रहे उस संख्या की पूर्वोक्त अवस्था जानना। और पूर्वागत संख्या में ३ का भाग देने से जो शेष बचे वह क्रमशः दृष्टि, चेष्टा और विचेष्टा अवस्था होती है।।४५।।४६।। नाक्षत्रिक दशा के लिये क्रम से पूर्वागत संख्या में सूर्य की दशा के लिये ५, चन्द्रमाका २, मंगल का २, बुध का ३, गुरु का ५, शुक्र का ३, शनि का ३, राहु का ४ तथा केतु का ४ होते हैं।।४७ से ५०।।

स्वरांशचक्रमिदम्				
१	२	३	४	५
अ	इ	उ	ए	ओ
क	ख	ग	घ	च
छ	ज	झ	ट	ठ
ड	ढ	त	थ	द
ध	न	प	फ	ब
भ	म	य	र	ल
व	श	ष	स	ह

सूर्यादिक्षेपांकचक्रम्								
सू०	चं०	मं०	बु०	बृ०	शु०	श०	रा०	के०
५	२	२	३	५	३	३	४	४

दृष्टिभेदमाह

दृष्टौ स्वल्पफलं ज्ञेयं चेष्टायां विपुलं फलम् ॥
विचेष्टायां फलं न स्यादेव दृष्टिफलं विदुः ॥५१॥
शुभाशुभं ग्रहाणां च समीक्ष्याथ बलाबलम् ॥
तुंगस्थाने विशेषेण बलं ज्ञेयं यथा बुधैः ॥५२॥

दृष्टिभेद तथा फल

दृष्टि में स्वल्प फल, चेष्टा में पूर्णफल, विचेष्टा में हीन फल ॥५१॥ इस प्रकार ग्रहों का शुभाशुभ फल देखकर और उच्च स्थान में विशेष करके बल जानना चाहिए॥५२॥

अथ प्रत्येकद्वादशावस्थाफलमाह

मंदाग्निरोगो बहुधा नराणां स्थूलत्वमंघ्रेरपि पित्तकोपः ॥ व्रणं गुदे शूलमुरः प्रदेशे यदोष्णभानौ शयनं प्रयाते ॥५३॥ दरिद्रता भारविहारशाली विवादविद्याभिरतो नरः स्यात् ॥ कठोरचित्तः खलु नष्टवित्तः सूर्यो यदा चेद्रुपवेशनस्थः ॥५४॥ नरः सदानंदधरो विवेकी परोपकारी बलवित्तयुक्तः ॥ महासुखी राजकृपाभिमानी दिवाधिनाथो यदि नेत्रपाणौ ॥५५॥ उदारचित्तः परिपूर्णवित्तः सभासु वक्ता बहुपुण्यकर्त्ता ॥ महाबली सुंदररूपशाली प्रकाशने जन्मनि पद्मिनीशे ॥५६॥ प्रवासशाली किल दुःखमाली सदालसी धीधनवर्जितश्च ॥ भयातुरः कोपपरो विशेषद्दिवाधिनाथे गमने मनुष्यः ॥५७॥ परदाररतो जनतारहितो बहुधागमने गमनाभिरुचिः कृपणः खलताकुशलो मलिनो दिवसाधिपतौ मनुजः कुमतिः ॥५८॥

द्वादश अवस्था के फल

सूर्य के फल–सूर्य शयन अवस्था मे हो तो मन्दाग्नि, स्थूलता, नेत्ररोग, पित्तप्रकोप, व्रण, छाती में शूल आदिरोग होते हैं।।५३।। सूर्य यदि उपवेशन अवस्था में हो तो दरिद्रता, बिहारशाली, (घुमक्कड़) विद्या सम्बन्धी विवाद, कठोर चित्त तथा दरिद्र होता है।।५४।। सूर्य नेत्रपाणि प्रकम्पन अवस्था में हो तो मनुष्य आनन्दी, विवेकी, परोपकारी, धनी तथा बलवान्, महासुखी, तथा राजकृपायुक्त होता है।।५५।।ग्रह यदि प्रकाशन अवस्था में हो तो उदार, महाधनी,व्याख्याता धर्मात्मा, महाबली तथा सुन्दर होता है।।५६।। सूर्य गमन अवस्था में हो तो प्रवासशाली, दु:खी, आलसी, निर्धन, भयातुर, क्रोधी होता है।।५७।। आगमन अवस्था में पर स्त्रीगामी, समाज बहिष्कृत, प्रवासी, कृपण खल (दुष्ट) कुमति तथा मलिन होता है।।५८।।

सभागते हिते नर:परोपकारतत्पर:सदार्थरत्नपूरितो दिवाकरे गुणाकर:।। वसुंधरानवांबरालयान्वितो महाबली विचित्रमित्रवत्सल: कृपाकलाधर: पर: ।।५९।। क्षोभितो रिपुगणै: सदा नरश्चंचल: खलमति: कृशस्तथा ।। धर्मकर्मरहितो मदोद्धतश्चागमे दिनपतौ यदा तदा ।।६०।। सदांगसंधिवेदनापरांगनाधनक्षयो बलक्षय: पदे पदे यदा तदा हि भोजने ।। असत्यता शिरोव्यथा तथा वृथान्नभोजनं रवावसत्कथारति: कुमार्गगामिनी मति: ।।६१।। विज्ञलोकै: सदा मंडित: पंडित: काव्यविद्यानवद्यप्रलापान्वित: ।। राजपूज्यो धरामंडले सर्वदा नृत्यलिप्सागते पद्मिनीनायके ।।६२।। सर्वदानंदधर्ता जनो ज्ञानवान्यज्ञकर्ता धराधीशसद्मस्थित: ।। पद्मबंधावरातेर्भयं स्वानन: काव्यविद्याप्रलापी मुदा कौतुके ।।६३।। निद्राभरारक्तनिभे भवेतां निद्रागते लोचनपद्मयुग्मे ।। रवौ विदेशे वसतिर्जनस्य कलत्रहानि: कतिधार्थनाश: ।।६४।।

सूर्य सभा में हो तो मनुष्य परोपकार तत्पर, धनधान्य पूरित, गुणी, भूमि सम्पतियुक्त, महाबली, मित्र–वत्सल और कृपालु होता है।।५९।। सूर्य आगम अवस्था में हो तो जातक शत्रु पीड़ित, चंचल, दुष्टबुद्धि, दुर्वल, धर्मकर्म रहित तथा घमण्डी होता है।।६०।। सूर्य भोजन अवस्था में हो तो संधि–वेदना, परांगना रत, निर्धन, निर्बल, असत्यभाषी, असत्कथारति, (गपाड़ी) बृथान्नभोजी तथा कुमार्गगामी होता है।।६१।। सूर्य नृत्यलिप्सा अवस्था में हो तो जातक विद्वत्समाज का मान्य पण्डित, मेधावी तथा राजपूज्य होता है।।६२।। सूर्य कौतुक अवस्था में हो तो जातक सदानंदी ज्ञानी, यज्ञकर्ता, राजनिवासी, काव्य विनोदी, तथा सुखी होता है।।६३।। सूर्य निद्रावस्था में हो तो निद्रालु, प्रवासी, भार्यारहित, दरिद्री होता है।।६४।।

अथ चंद्रफलम्–जनु:काले क्षपानाथे शयनं चेदुपागते।।मानी शीतप्रधानश्च कामी वित्तविनाशक: ।।६५।। रोगार्दितो मंदमतिर्विशेषाद्वित्तेन हीनो मनुज: कठोर: ।। अकार्यकारी परवित्तहारी क्षपाकरे चेदुपवेशनस्थे ।।६६।। नेत्रपाणौ क्षपानाथे महारोगी नरो भवेत् ।। अनल्पजल्पको धूर्त: कुकर्मनिरत: सदा ।।६७।। यदा राकानाथे गतवति विकाशं च जनने विकाश: संसारे विमलगुणराशेरवनिपात् ।। नवाशामाला स्यात्करितुरगलक्ष्म्या परिवृता विभूषा योषाभि: सुखमनुदिनं तीर्थगमनम् ।।६८।। सितेतरे पापरतो निशाकरे विशेषत:

क्रूरतरो नरो भवेत् ।। सदाशिरोगैः परिपीड्यमानो वलक्षपक्षे गमने भयातुरः ।।६९।। विधवागमनो मानी पादरोगी नरो भवेत् ।। गुप्तपापरतो दीनो मतितोषविवर्जितः ।।७०।। सकलजनवदान्यो राजराजेन्द्रमान्यो रतिपतिसमकांतिः शांतिकृत्कामिनीनाम् ।। सपदि सदसि याते चारुबिंबे शशांके भवति परमरीतिप्रीतिविज्ञो गुणज्ञः ।।७१।।

चन्द्रफल–जन्मकाल में यदि चन्द्रमा शयनअवस्था में हो तो अभिमानी, कफप्रकृति, कामी और शांत स्वभाव का होता है।।६५।। यदि चन्द्रमा उपवेशन में हो तो रोगी, मंदमति, दरिद्र, कठोर चोर, अकार्यकारी होता है।।६६।। चन्द्रमा नेत्रपाणि अवस्था में हो तो महारोगी, बकवादी, धूर्त, कुकर्मी होता है।।६७।। यदि चन्द्रमा विकाश अवस्था में हो तो जातक विकासबुद्धि राजाश्रयी,संसारप्रसिद्ध महाधनी,भोगी,तीर्थयात्राभिलाषी होता है।।६८।। यदि चन्द्रमा कृष्णपक्ष में तथा गमनअवस्था में हो तो मनुष्य पापी, अतिक्रूर, शिर रोग से पीड़ित होता है। और शुक्ल पक्ष में जन्म हो तो भयातुर होता है।।६९।। यदि चन्द्रमा आगम अवस्थामें हो तो जातक विधवागामी, अभिमानी, पादरोगी, गुप्तपापी, दीन, बुद्धिहीन तथा असन्तोषी होता है।।७०।। यदि जन्मसमय में चन्द्रमा सभा में हो तो जातक समाज में मान्य, राजमान्य, अतिसुन्दर, कीर्तिमान्, कामिनीभोगी, रीतिनीति का जानने तथा गुणज्ञ होता है।।७१।।

विधवागमनो मर्त्यो वाचालो धर्मपूरितः ।। कृष्णपक्षे द्विभार्यः स्याद्रोगी दुष्टतरो हठी ।।७२।। भाजने जनुषि पूर्णचंद्रमा मानयानजनतासुख नृणाम् ।। आतनोति वनितासुतासुखं सर्वमेव न सितेतरे शुभम् ।।७३।। नृत्यलिप्सागते चंद्रे सबले बलवान्नरः ।। गीतज्ञो हि रसज्ञश्च कृष्णे पापकरो भवेत् ।।७४।। कौतुकभवनं गतवति चंद्रे भवति नृपत्वं वा धनपत्वम् ।। कामलासु सदा कुशलत्वंवारवधूरतिरमणपटुत्वम् ।।७५।। निद्रागते जन्मनि मानवानां कलाधरे जीवयुते महत्त्वम् ।। यदांगनासंचितवित्तनाशः शिवालयं रौति विचित्रमुच्चैः ।।७६।।

चन्द्रमा आगम अवस्था में हो तो जातक विधवासेवी, वाचाल, धर्मात्मा, दो स्त्रीवाला, अतिदुष्ट, रोगी तथा हठी होता है।।७२।। यदि चंद्रमा भाजन अवस्था में हो तो सन्मान, सवारी, स्त्री, धन, संतान का सुख होता है। तथा कृष्णपक्ष में विपरीत फल होता है।।७३।। यदि चंद्रमा नृत्यलिप्सा अवस्था में हो तो मनुष्य बलवान्, गायन विद्या रसिक होता है। और कृष्णपक्ष में पापी होता है।।७४।। यदि चंद्रमा कौतुक भवन में हो तो मनुष्य राजा, धनपति, कुशल, तथा वारवनिता विलासी होता है।।७५।। यदि चंद्रमा निद्रा अवस्था में हो तो स्त्री, धनहीन, संचित धन का नाश करनेवाला तथा शिवालय में विचित्र प्रकार से शब्द करनेवाला होता है।।७६।।

अथ कुजफलम्–शयने वसुधापुत्रे जंतुरंगे जनो भवेत् ।। बहुना कंडुना युक्तो दद्रुणा च विशेषतः ।।७७।। बली सदा पापरतो नरः स्यादसत्यवादी नितरां प्रगल्भः ।। धनेन पूर्णो निजधर्महीनो धरासुतश्चेदुपवेशनस्थः ।।७८।। यदा भूमिसुते लग्ने नेत्रपाणिमुपागते ।। दरिद्रता सदा पुंसामन्यभे नगरेशता ।।७९।। प्रकाशो गुणस्यापि वासः प्रकाशे धराधीशभर्तुः सदा मानवृद्धिः ।। सुते भूसुते पुत्रकांतावियोगो भवेद्राहुणा दारुणो वा निपातः ।।८०।। गमनागमने

कुरुतेऽनुदिन व्रणजालभयं वनिताकलहः ।। बहुदद्रुककण्डुभयं बहुधा वसुधातनयो वसुहानिकरः ।।८१।। आगमने गुणशाली मणिमाली करालकरवाली ।। गजगंता रिपुहन्ता परिजनसंतापहारको भौमे ।।८२।। तुंगे युद्धकलाकलापकुशलो धर्मध्वजो वित्तपः कोणे भूमिसुते सभामुपगते विद्याविहीनः पुमान् ।। अंतेऽपत्यकलत्रमित्ररहितः प्रोक्तेतरस्थानगेऽवश्यं राजसभाबुधो बहुधनी मानी च दानी जनः ।।८३।।

मंगल का फल–यदि मंगल शयन अवस्था में हो तो मनुष्य खाज, खुजली वाला होता है।।७७।। यदि मंगल उपवेशन अवस्था में हो तो मनुष्य बलवान सदा पापरत असत्यभाषी, बकवादी, धनहीन, धर्महीन होता है।।७८।। मंगल जब लग्न में नेत्रपाणि अवस्था में हो तो पुरुष को दरिद्र करता है। वह मंगल अन्यराशि में हो तो नगर का स्वामी करता है।।७९।। जब मंगल प्रकाश अवस्था में हो तो तब जातक के गुणों का प्रकाश करता है। राजा से सदा सन्मान की वृद्धि होती है। और पंचमभाव में हो तो पुत्र स्त्री से वियोग करता है। राहु से युक्त या दृष्ट हो तो दुःखदायी पतन होता है।।८०।। मंगल गमनागमन अवस्था में हो तो घावों से भय, स्त्री से कलह, दाद, खाज, खुजली तथा धनहानि कारक है।।८१।। मंगल आगमन अवस्था में हो तो गुणी, मणि–माणिक युक्त, करवाल (शस्त्र) धारी, हाथी की सवारी तथा शत्रुनाश कारी तथा बन्धुओं का दुःखहारी होता है।।८२।। मंगल तुंग (उच्च) का होकर 'सभा' अवस्था में हो तो युद्धविद्या निपुण, धर्मात्मा, धनी होता है। यदि त्रिकोण स्थान में हो तो विद्याहीन तथा १२ भाव में हो तो स्त्री पुत्ररहित करता है। अन्य स्थान में बहुधनी, मानी तथा दानी होता है।।८३।।

आगमे भवति भूमिजे जनो धर्मकर्मरहितो गदातुरः ।। कर्णमूलगुरुशूलरोगवानेव कातरमतिः कुसंगमी ।।८४।। भोजने मिष्टभोजी च जनने सबले कुजे ।। नीचकर्मकरो नित्यं मनुजो मानवर्जितः ।।८५।। नृत्यलिप्सागते भूसुते जन्मनामिंदिराराशिरायाति भूमीपतेः ।। स्वर्णरत्नप्रवालैः सदामंडितो वासशाला नराणां भवेत्सर्वदा।।८६।।कौतुकी भवति कौतुके कुजे मित्रपुत्रपरिपूरितो जनः ।। उच्चगे नृपतिगेहमंडितः पूजितो गुणवरैर्गुणाकरैः ।।८७।। निद्रावस्थां गते भौमै क्रोधी धीधनवर्जितः ।। धूर्तो धर्मपरिभ्रष्टो मनुष्यो गदपीडितः ।।८८।।

यदि मंगल आगम अवस्था में हो तो जातक धर्मकर्म रहित, रोगी, कर्णमूल में रोगी, डरपोक तथा कुसंगति वाला होता है।।८४।। यदि मंगल भोजन अवस्था में हो और बलवान् हो तो मिष्टान्नभोजी, नीचकर्मकारी, तथा मानहीन होता है।।८५।। मंगल 'नृत्यलिप्सा' अवस्था में हो तो बहुलक्ष्मी की प्राप्ति होती है। सुवर्ण रत्न आदि प्राप्त होता है। रहने को निजी विशाल भवन होता है।।८६।। मंगल कौतुक अवस्था में हो तो जातक कौतुक के आश्चर्यजनक खेल जाननेवाला, मित्र–पुत्र युक्त हो तथा राशि में हो तो राजमहलों से युक्त गुणियों से पूजित होता है।।८७।। मंगल निद्रावस्था में हो तो जातक क्रोधी, मूर्ख, दरिद्री, धूर्त, धर्मभ्रष्ट तथा रोगी होता है।।८८।।

अथ बुधफलम्

क्षुधातुरो भवेदंगे खंजो गुंजानिभेक्षणः ।। अन्यभे लपटो धूर्तो मनुजः शयने बुदे ।।८९।। शशांकपुत्रे जनुरंगगेहे यदोपवेशे गुणराशिपूर्णः ।। पापेक्षिते पापयुते दरिद्रो हिते शुभे वित्तसुखी मनुष्यः ।।९०।। विद्याविवेकरहितो हिततोषहीनो मानी जनो भवति चंद्रसुतेऽक्षपाणौ ।। पुत्रालये सुतकलत्रसुखेन हीनः कन्याप्रजो नृपतिगेहबुधो वरार्थः ।।९१।। दाता दयालुः खलु पुण्यकर्ता विकाशने चंद्रसुते मनुष्यः ।। अनेकविद्यार्णवपारगता विवेकपूर्णः खलवर्गहन्ता ।।९२।। गमनागमने भवतो गमने बहुधा वसुधाधिपतेर्भवने ।। भवनं च विचित्रमलं रमया विदि नुश्च जनुः समये नितराम् ।।९३।।

बुध का फल–बुध शयन अवस्था में हो तो मनुष्य खंजा (लंगड़ा), लाल आंखवाला, अन्य राशि में हो तो लम्पट और धूर्त होता है।।८९।। यदि बुध उपवेश अवस्था में हो और लग्न में हो तो अनेक गुणशाली होता है।और यदि पापराशिमें पापग्रह युक्त हो तो दरिद्र तथा मित्र राशि में शुभग्रह युक्त हो तो धनवान् और सुखी होता है।।९०।। यदि बुध नेत्रपाणि अवस्था में हो तो जातक विद्या और विवेक से हीन तथा असन्तोषी और अभिमानी होता है। यदि पंचम भाव में हो तो पुत्र व स्त्री सुख से हीन तथा कन्या सन्तान वाला, राजमान्य तथा धनी होता है।।९१।। यदि बुध विकाश अवस्था में हो तो जातक दयालु, दानी, धर्मात्मा और अनेक विद्या पारंगत, विवेकी तथा दुष्टों का नाश करनेवाला होता है।।९२।। यदि बुध गमनागमन अवस्था में हो तो मनुष्य यात्रा प्रेमी, राजभवन में मान्य, बहुलक्ष्मी स्वामी. विद्वान् तथा धनी होता है।।९३।।

सपदि विदजनानामुच्चगे जन्मकाले सदसि धनसमृद्धिः सर्वदा पुण्यवृद्धिः ।। धनपतिसमता वा भूपता मंत्रिता वा हरिहरपदभक्तिः सात्त्विकी मुक्तिलब्धिः ।।९४।। आगमे जनुषि जन्मिनां यदा चन्द्रजे भवति हीनसेवया ।। अर्थसिद्धिरपि पुत्रयुग्मता बालिका भवति मानदायिका ।।९५।। भोजने चन्द्रमा जन्म काले यदा जन्मिनामर्थहानिः सदा वादतः ।। राजभीत्या कृशत्वं चलत्वं मतेरंगसंगो न जाया न मायासुखम् ।।९६।। नृत्यलिप्सागते चंद्रजे मानवो मानयानप्रवालव्रजैः संयुतः ।। मित्रपुत्रप्रतापैः सभापंडितः पापभे वारवामारते लम्पटः ।।९७।।

यदि जन्म समय में बुध उच्च राशि का होकर सभा स्थान में हो तो धन समृद्धि तथा धर्मात्मा, कुबेर के समान ऐश्वर्यशाली, राजा का मंत्री, ईश्वर भक्ति परायण, सात्विक भाववाला होता है तथा अन्त में मुक्ति प्राप्त होती है।।९४।। जब जन्मलग्न में बुध आगम अवस्था में हो तो नीच की सेवा करनेवाला, किन्तु धनी और दो पुत्र और एक कन्या होती है।।९५।। जन्म काल में बुध जब भोजन अवस्था में हो तो मनुष्य का धन मुकदमें बाजी में खर्च होता है। राजभय से सदा दुःखी रहता है। चंचल बुद्धि तथा भार्यासुख और धन सुख से हीन हो।।९६।। जब बुध नृत्य लिप्सा अवस्था में हो तो मनुष्य सन्तान, सवारी, रत्नों से युक्त, मित्र–पुत्रयुक्त, प्रतापी और सभा पण्डित होता है। पाप राशि में हो तो वार–वनिता–बिलासी तथा लम्पट होता है।।९७।।

कौतुके चंद्रजे जन्मकाले नृणामंगभे गीतविद्याऽनवद्या भवेत् ।। सप्तमे नैधने वारबध्वा रतिः पुण्यभे पुण्ययुक्ता मतिः सद्गतिः ।।९८।। निद्राश्रिते चंद्रसुते न निद्रासुखं सदा व्याधिसमाधियोगः ।। सहोत्थवैकल्यमनल्पतापो निजेन वादो धनमाननाशः ।।९९।।

अथ गुरुफलमाह

वचसामधिपे तु जनुः समये शयने बलवानपि हीनरवः ।। अतिगौरतनुः खलु दीर्घहनुः सुतरामरिभीतियुतो मनुजः ।।१००।। उपवेशं गतवति यदि जीवे वाचालो बहुगर्वपरीतः ।। क्षोणीपतिरिपुजनपरितप्तः पदजंघास्यकरव्रणयुक्तः ।।१०१।। नेत्रपाणिं गते देवराजार्चितेरोग युक्तोवियुक्तोवरार्थश्रिया ।। गीतनृत्यप्रियः कामुकः सर्वदा गौरवर्णो विवर्णोद्भवः प्रीतियुक् ।।१०२।।

जब बुध जन्म समय में कौतुक अवस्था में हो तो निष्पाप, गायन विद्यायुक्त होता है। ७ वें और ८ वें स्थान में हो तो वेश्यागामी होता है। शुभ राशि में हो तो पवित्र बुद्धिवाला होता है और अन्त में सद्गति होती है।।९८।। जब बुध निद्रा अवस्था में हो तो जातक सदा रोगी, विकल, दुःखी, कलहकारी और धन, मान से हीन होता है।।९९।।

गुरुफल–जन्म समय में यदि बृहस्पति बलवान् होकर शयन अवस्था में हो तो धीमी आवाज वाला, गौर वर्ण, लम्बी ठोड़ीवाला तथा शत्रु से भय माननेवाला होता है।।१००।। जब बृहस्पति उपवेश अवस्था में हो तो जातक बकवादी, घमण्डी, राजा और शत्रु से दुःखी तथा पैर, जंघा, हाथ और मुख व्रणयुक्त होता है।।१०१।। जब बृहस्पति नेत्रपाणि अवस्था में हो तो रोगी, दरिद्री, नाचगानप्रिय, कामी, गौरवर्ण, वर्णशंकर तथा प्रेमी होता है।।१०२।।

गुणानामानंदं विमलसुखकंदं वितनुते सदा तेजः पुंजं व्रजपतिनिकुंजप्रतिगमम् ।। प्रकाशं चेदुच्चे द्रुतमुपगतो वासवगुरुर्गुरुत्वं लोकानां धनपतिसमत्वं तनुभृताम्।।१०३।।साहसी भवति मानवः सदा मित्रवर्गसुखपूरितो मुदा ।। पंडितो विविधवित्तमंडितो वेदविद्यदि गुरौ गमं गते ।।१०४।। आगमनेजनता वरजाया यस्य जनुःसमये हरिमाया ।। मुंचति नालमिहालयमद्धा देवगुरौ परितः परिबद्धा ।।१०५।। सुरगुरुसमवक्ता शुभ्रमुक्ताफलाढ्यः सदसि सपदि पूर्णो वित्तमाणिक्यमानैः ।। गजतुरगरथाढ्यो देवताधीशपूज्यो जनुषि विविधविद्यागर्वितो मानवः स्यात् ।।१०६।। नानावाहनमानयानपटलीसौख्यं गुरावागमे भृत्यापत्यकलत्रमित्रजसुखं विद्याऽनवद्या भवेत् ।। क्षोणीपालसमानतानवरतं चातीवहृद्या मतिः काव्यानंदरतिः सदा हितगतिः सर्वत्र मानोन्नतिः ।।१०७।।

जब बृहस्पति प्रकाश अवस्था में हो तो गुणी, सुखी, तेजस्वी, राजमान्य, लोकमान्य, महाधनी होता है।।१०३।। जब बृहस्पति गमन अवस्था में होता है तो मनुष्य साहसी, मित्रवर्गयुक्त, पण्डित धनी तथा विद्वान् होता है।। १०४।। जब बृहस्पति जन्मलग्न में आगम अवस्था में होता है तो श्रेष्ठ भार्या तथा स्थिर लक्ष्मीवाला होता है।।१०५।। जब बृहस्पति सभा अवस्था में हो तो जातक बृहस्पति के समान वक्ता, मणिमाणिकयुक्त, ऐश्वर्यशाली, तथा

अनेक विद्यापारंगत होता है।।१०६।। बृहस्पति यदि आगम अवस्था में हो तो मनुष्य के अनेक सवारी तथा नौकर–चाकर, भार्या, पुत्र, मित्र का सुख तथा श्रेष्ठ विद्या होती है। और निरन्तर राजा के समान ऐश्वर्य तथा निर्मल बुद्धि और काव्य विनोद तथा कल्याण एवं सन्मान की उन्नति होती है।।१०७।।

भोजने भवति देवपुरोधाः यस्य तस्य सततं सुभोजनम् ।। नैव मुंचति रमालयं तदा वाजिवारणरथैश्च मंडितम् ।।१०८।। नृत्यलिप्सागते राजमानी धनी देवताधीशवंद्यः सदा धर्मवित् ।। तंत्रविज्ञो बुधैर्मंडितः पंडितः शब्द विद्यानवद्यो हि सद्यो जनः ।।१०९।। कुतूहली सकौतुके महाधनी जनः सदा ।। निजान्वये च भास्करः कृपाकलाधरः सुखी ।। निलिंपराजपूजिते सुतेन भूनयेन वा युतो महाबली धराधिपेन्द्रसद्मपंडितः ।।११०।। गुरौ निद्रागते यस्य मूर्खता सर्वकर्मणि ।। दरिद्रतापरिक्रान्तं भवनं पुंण्यवर्जितम्।।१११।।

देवगुरु जब भोजन अवस्था में हो तो निरन्तर अच्छा भोजन, सदा रहनेवाली लक्ष्मी तथा अनेक प्रकार की सवारी वाला होता है।।१०८।। बृहस्पति नृत्य लिप्सा अवस्था मे हो तो जातक राजमानी, धनी धर्मात्मा, तन्त्र विद्या विशारद, विद्वद्गोष्ठीयुक्त, पण्डित तथा श्रेष्ठ वैयाकरणी होता है।।१०९।। जब बृहस्पति कौतुक अवस्था में हो तो कौतुहल प्रिय, महाधनी, कृपालु, अपने कुल का सूर्य, सुखी, भूमि तथा सन्तानयुक्त, महाबली तथा राजाधिराज की सभा का पण्डित होता है।।११०।। बृहस्पति यदि निद्रा अवस्था में हो तो कर्मज्ञानहीन, मूर्ख, पुण्यहीन, दरिद्री होता है।।१११।।

अथ भृगुफलमाह

जनो बलीयानपि दंतरोगी भृगौ महारोषसमन्वितः स्यात् ।। धनेन हीनः शयनं प्रयाते वारांगनासंगमलंपटश्च ।।११२।। यदि भवेदुशना उपवेशने नवमणिव्रजकांचनभूषणैः ।। सुखमजस्रमरिक्षय आदरादवनिपादपि मानसमुन्नतिः ।।११३।।

शुक्र फल–जिस मनुष्य के जन्म लग्न में शुक्र क्रोधी अवस्था में होता है तो मनुष्य दन्त–रोगी होता है। और यदि शयन अवस्था में हो तो धनहीन, वैश्यागामी और लम्पट होता है।।११२।। यदि शुक्र उपवेश अवस्था में हो तो मणि, कांचन, भूषणयुक्त, निरन्तर सुखी, शत्रु क्षय, राजा से सम्मान पानेवाला होता है।।११३।।

नेत्रपाणिं गते लग्नगेहे कवौ सप्तमे मानभे यस्य तस्य ध्रुवम्।नेत्रपाते निपातो धनानामलं चान्यभे वासशाला विशाला भवेत्।।११४।।स्वालये तुंगभे मित्रभे भार्गवे तुंगमातंगलीलाकलापी जनः ।। भूपतेस्तुल्य एव प्रकाशं गते काव्यविद्याकलाकौतुकी गीतवित् ।।११५।। गमने जनने शुक्रे तस्य माता न जीवति ।। आधियोगो वियोगश्च जनानामरिभीतितः ।।११६।। आगमनं भृगुपुत्रे गतवति वित्तेश्वरो मनुजः ।। सत्तीर्थभ्रमशाली नित्योत्साही करांघ्रिरोगी च ।।११७।। अनायासेनालं सपदि महसा याति सहसा प्रगल्भत्वं राज्ञः सदसि गुणविज्ञः किल कवौ ।।

सभायामायाते रिपुनिवहहन्ता धनपतेः समत्व वा दाता बलतुरगगंता नरवरः ।।११८।। आगमे भार्गवेनागमो जन्मिनामर्थराशेररातेरतीव क्षतिः ।। पुत्रपातो निपातो जना नामपि व्याधिभीतिः प्रियाभोगहानिर्भवेत् ।।११९।।

यदि शुक्र नेत्रपाणि अवस्था में लग्न, सप्तम या दशम भाव में हो तो हर तरह से धन की प्राप्ति हो। अन्य राशि में हो तो विशाल भवन हो।।१०४।। यदि शुक्र प्रकाश अवस्था में अपनी राशि का या उच्च राशि अथवा मित्र राशि में हो तो उस मनुष्य के हाथी घोड़े हों, राजा के तुल्य ऐश्वर्य हो। काव्य विनोदी एवं गायन विद्या रसिक हो।।११५।। जिस मनुष्य के जन्म लग्न में शुक्र गमन अवस्था में हो उसको माता का सुख नहीं होता तथा सदा रोगी, इष्ट जनों का वियोग एवं शत्रुभय होता है।।११६।। शुक्र यदि आगमन अवस्था में हो तो धनी, तीर्थ यात्रा प्रेमी, उत्साही तथा हाथ पैर का रोगी होता है।।११७।। यदि शुक्र सभा अवस्था में हो तो विना परिश्रम के सहसा लक्ष्मी आती है। राजा की सभा में चतुर, विद्वान्, कवि और गुणी होता है, शत्रु नाश करनेवाला, धन कुबेर, सवारीवाला और माननीय होता है।।११८।। यदि शुक्र आगम अवस्था में हो तो शत्रु के कारण धन की हानि, पुत्र तथा बन्धुओं की हानि, भार्या हानि एवं रोग भय होता है।।११९।।

क्षुधातुरो व्याधिनिपीडितः स्यादनेकधारातिभयार्दितश्च ।। कवौ यदा भोजनगे युवत्या महाधनीः पंडितमंडितश्च ।।१२०।। काव्यविद्यानवद्या च हृद्या मतिः सर्वदा नृत्यलिप्सागते भार्गवे ।। शंखवीणामृदंगादिगानध्वनिव्रातनैपुण्यमेतस्य वित्तोन्नतिः ।।१२१।। कौतुकभवनं गतवति शुक्रे शक्रेशत्वं सदसि महत्त्वम् ।। हृद्या विद्या भवति च पुंसः पद्मा निवसति सद्मादरतः ।।१२२।। परसेवारतो नित्यं निद्रामुपगते कवौ ।। परनिंदापरो वीरो वाचालो भ्रमते महीम् ।।१२३।।

जब शुक्र क्षुधित अवस्था में हो तो रोगी, शत्रुभय तथा दुःखी होता है। और शुक्र जब भोजन अवस्था में हो तो महाधनी, भार्यासुख और पण्डितों से मान्य होता है।।१२०।। जब शुक्र मृत लिप्सा अवस्था में हो तो निष्पाप कविता बनानेवाला, सुबुद्धि, अनेक प्रकार के वाद्य तथा गान में निपुण और धनी होता है।।१२१।। जब शुक्र कौतुक अवस्था में हो तो सभा में इन्द्र के समान आदर पानेवाला, विद्वान और सदा लक्ष्मीवाला होता है।।१२२।। जब शुक्र निद्रा अवस्था में हो तो दूसरे का नौकर, निन्दक, वाचाल और घुमक्कड़ होता है।।१२३।।

अथ शनिफलम्

क्षुत्पिपासापरिक्रांतो विश्रांतः शयने शनौ ।। वयसि प्रथमे रोगो ततो भाग्यवतां वरः ।।१२४।। भानोः सुते चेदुपवेशनस्थे करालकारातिजनानुतप्तः ।। अपायशाली खलु दद्रुमाली नरोऽभिमानी नृपदंडयुक्तः ।।१२५।। नयनपाणिगते रविनंदने परमया रमयारमयायुतः ।। नपतितो हिततो मतितोषकृद्बहुकलाकलितो विमलोक्तिकृत्।।१२६।। नानागुणग्रामधनाधिशाली सदा नरो बुद्धिविनोदमाली ।। प्रकाशने भानुसुते सुभानुः कृपानुरक्तो हरपादभक्तः

।।१२७।। महाधनीनन्दननंदितः स्यादपायकारी रिपुभूमिहारी ।। गमे शनौ पंडितराजभावं धरापतेरायतने प्रयाति ।।१२८।। आगमने पदगर्दभयुक्तः पुत्रकलत्रसुखेन विमुक्तः ।। भानुसुते भ्रमते भुवि नित्यं दीनमना विजनाश्रयभावम् ।।१२९।। रत्नावलीकांचनमौक्तिकानां वातेन नित्यं व्रजति प्रमोदम् ।। सभागते भानुसुते नितांतं नयेन पूर्णो मनुजो महौजाः ।।१३०।। आगमे गदसमागमो नृणामब्जबंधुतनये यदा तदा ।। मंदमेव गमनं धरापतेर्याचनाविरहिता मतिः सदा ।।१३१।।

शनिफल–यदि शनि शयन अवस्था में हो तो भूख प्यास से व्याकुल तथा प्रथम अवस्था में रोगी और वृद्धावस्थामें भाग्यशाली होता है।।१२४।। शनि यदि उपवेश अवस्थामें हो तो समाज से दुःखी, कैदी, विघ्नबाधायुक्त, दाद, खाजका रोगी तथा राजदंडभोगी होता है।।१२५।। शनि यदि नयन पाणि अवस्था में हो तो परम श्रेष्ठ लक्ष्मीयुक्त राजा तथा बान्धवों का हितैषी और संतोष पानेवाला तथा कलाकुशल एवं मिष्टभाषी होता है।।१२६।। शनि जब प्रकाश अवस्था में हो तो अनेक गुणयुक्त तथा ऐश्वर्यशाली तथा विनोदी, कृपालु तथा हरिभक्त होता है।।१२७।। शनि गमन अवस्था में हो तो जातक महाधनी, पुत्रयुक्त, दुष्टबुद्धि, तथा शत्रु की भूमि का हरण करनेवाला एवं राजभवन में पण्डितराज तुल्य माननीय होता है।।१२८।। शनि यदि आगमन अवस्था में हो तो गधे के समान तथा स्त्री–पुत्र सुखहीन, व्यर्थ विचरणशील, दीन तथा जनाश्रयहीन होता है।।१२९।। शनि यदि सभा अवस्था में हो तो रत्न, सुवर्ण, मोती आदि की प्राप्ति का सुख तथा नीतिमान् तेजस्वी होता है।।१३०।। शनि आगम अवस्था में हो तो जातक रोगी मन्दगामी, मनस्वी एवं कभी याचना नहीं करता।।१३१।।

संगतेजनुषि भानुनंदने भोजनं भवति भोजनं रसैः ।। संयुतं नयनमंदतातता मोहतापपरितापिता मतिः ।।१३२।। नृत्यलिप्सागते मन्दे धर्मात्मा वित्तपूरितः ।। राजपूज्यो नरो धीरो महावीरो रणांगणे ।।१३३।। भवति कौतुकभावमुपागते रविसुते वसुधावसुपूरितः ।। अतिसुखी सुमुखीसुखपूरितः कवितयामलया कलया नरः ।।१३४।। निद्रागते वासरनाथपुत्रे धनी सदा चारुगुणैरुपेतः ।। पराक्रमी चंडविपक्षहंता सुवारकांतारतिरीतिविज्ञः ।।१३५।।

शनि यदि भोजन अवस्था में हो तो जातक को रसयुक्त भोजन प्राप्त होता है। दृष्टि मांद्य, तथा मोह एवं दुःख से दुःखी रहता है।।१३२।। शनि नृत्यलिप्सा अवस्था में हो तो धर्मात्मा, धनी, राजपूज्य, धीर तथा रणशूर होता है।।१३३।। शनि यदि कौतुकभाव में हो तो जातक धन, भूमियुक्त होता है। अतिसुखी तथा स्त्रीसुखयुक्त श्रेष्ठकवित्वशक्ति युक्त होता है।।१३४।। शनि निद्रा अवस्था में हो तो जातक सदा धनी, सुन्दर गुणयुक्त, पराक्रमी, शत्रुनाशकारी तथा वारविलासिनी रति प्रिय होता है।।१३५।।

अथ राहुफलम्

यदागमो जन्मनि यस्य राहौ कलेशाधिकत्वं शयनं प्रयाते।।वृषेऽथ युग्मेपि च कन्यकायामजे समाजो धनधान्यराशेः ।।१३६।। उपवेशनमिह गतवति राहौ दद्रुगदेन जनः परितप्तः ।। राजसमाजयुतो बहुमानी वित्तसुखेन सदा रहितः स्यात् ।।१३७।। नेत्रपाणावगौ नेत्रे भवतो

रोगपीडिते ।। दुष्टव्यालारिचौराणां भयं तस्य धनक्षयः ।।१३८।।

राहु फल–जन्म लग्न में राहु शयन अवस्था में हो तो अधिक क्लेशकारी होता है। तथा १।२।३।६ राशि में हो तो धन, धान्य समूहाधिपति होता है।।१३६।। राहु उपवेश अवस्था में हो तो जातक दाद रोग से दुःखी रहता है। राजसभा में गति होने पर भी घमण्डी होने से सदा धनहीन रहता है।।१३७।। राहु नेत्रपाणि अवस्था में हो तो जातक के नेत्र रोगी ही रहते हैं तथा सर्प, चोर, आदि से भय और धन हानि होती है।।१३८।।

प्रकाशने शुभासने स्थितिः कृतिः शुभा नृणां धनोन्नतिर्गुणोन्नतिः सदा विदामगाविह ।। धराधिपाधिकारता यशोलता तदा भवेन्नवीननीरदाकृतिर्विदेशतो महोन्नतिः ।।१३९।। गमने च यदा राहौ बहुसंतानवान्नरः ।। पंडितो धनवान्दाता राजपूज्यो नरो भवेत् ।।१४०।। राहावागमने क्रोधी सदा धीधनवर्जितः ।। कुटिलः कृपणः कामी नरो भवति सर्वथा ।।१४१।। सभागतो यदा राहुः पंडितः कृपणो नरः ।। नानागुणपरिक्रांतो वित्तसौख्यसमन्वितः ।।१४२।। चेदगावागमं यस्य याते तदा व्याकुलत्वं सदारातिभीत्याभयम् ।। महद्बन्धुवादो जनानां निपातो भवेद्वित्तहानिः शठत्वं कृशत्वम् ।।१४३।। भोजने भोजनेनालं विकलो मनुजो भवेत् ।। मन्दबुद्धिः क्रियाभीरुः स्त्रीपुत्रसुखवर्जितः ।।१४४।। नृत्यलिप्सागते राहौ महाव्याधिविवर्द्धनम् ।। नेत्ररोगो रिपोर्भीतिर्द्धनधर्मक्षयो नृणाम् ।।१४५।।

राहु प्रकाशन अवस्था में हो तो शुभआसन (स्थान) में स्थिति हो, धनवृद्धि तथा गुणों की उन्नति होती है राजपद का अधिकारी होता है। श्याम वर्ण और विदेश में उन्नति होती है।।१३९।। राहु गमन अवस्था में हो तो सन्तान बहुत होती है। जातक पंडित तथा मेधावी, धनवान्, दानी, राजपूज्य होता है।।१४०।। राहु आगमन अवस्था में हो तो जातक निर्बुद्धि, धनहीन, कुटिल, कृपण तथा कामी होता है।।१४१।। राहु सभा अवस्था में हो तो पण्डित, कृपण, कामी, नाना गुणयुक्त तथा धनी और सुखी होता है।।१४२।। यदि राहु आगमन अवस्था में हो व्याकुल तथा शत्रुभय से पीड़ित, बन्धुओं से विवादी और धन हानि, शठ, कृश और जनहीन होता है।।१४३।। राहु भोजन अवस्था में हो तो जातक को भोजन की ही चिन्ता रहती है। मन्दबुद्धि कामचोर तथा स्त्री पुत्र सुख हीन होता है।।१४४।। राहु नृत्यलिप्सा अवस्था में हो तो रोग बढ़ता ही रहता है। नेत्र रोगी ही रहते हैं, शत्रु से भय, धन तथा धर्म का क्षय होता है।।१४५।।

कौतुके च यदा राहौ स्थानहीनो नरो भवेत् ।।परदाररतो नित्यं परवित्तापहारकः ।।१४६।। निद्रावस्थां गते राहौ गुणग्रामयुतो नरः ।। कांतासन्तानवान्धीरो गर्वितो बहुवित्तवान् ।।१४७।।

अथ केतुफलम्

मेषे वृषेऽथ वा युग्मे कन्यायां शयनं गते ।। केतौ धनसमृद्धिः स्यादन्यभे रोगवर्धनम् ।।१४८।।

उपवेशं गते केतौ दद्रुरोगविवर्द्धनम् ॥ अरिवातनृपव्यालचौरशंका समंततः ॥१४९॥ नेत्रपाणिं गते केतौ नेत्ररोगः प्रजायते ॥ दुष्टसर्पादिभीतिश्च रिपुराजकुलादपि ॥१५०॥ केतौ प्रकाशने संज्ञे धनवान्धार्मिकः सदा ॥ नित्यं प्रवासी चोत्साही सात्त्विको राजसेवकः ॥१५१॥ गमेच्छायां भवेत्केतुर्बहुपुत्रो महाधनः ॥ पंडितो गुणवान्दाता जायते च नरोत्तमः ॥१५२॥ आगमे च यदा केतुर्नानारोगो धनक्षयः ॥ दंतघाती महारोगी पिशुनः परनिंदकः ॥१५३॥

जब राहु कौतुक अवस्था में हो तो मनुष्य को रहने का ठिकाना भी नहीं रहता। परस्त्रीगामी तथा चोर होता है॥१४६॥ राहु निद्रावस्था में हो तो गुण समूह युक्त, स्त्री पुत्र से सुखी धनी, गर्वीला तथा धीर होता है॥१४७॥

केतु फल—केतु शयनअवस्था में १।२।३।६ राशि में हो तो धनसमृद्धि हो, और राशियों में हो तो रोग की वृद्धि हो॥१४८॥ केतु उपवेश अवस्था में हो तो दाद—खाज आदि रोग तथा शत्रु, सर्प, चोर तथा राज भय रहता है॥१४९॥ केतु नेत्रपाणि अवस्था में हो जो जातक को नेत्ररोग तथा सर्पभय एवं शत्रु और राजकुल से भय होता है॥१५०॥ केतु प्रकाश अवस्था में हो तो धनवान्, धार्मिक, प्रवासी, उत्साही सात्त्विकभाववाला और राजसेवक होता है॥१५१॥ केतु गमन अवस्था में हो तो पुत्र बहुत हों तथा धनी पण्डित, गुणी और दाता होता है॥१५२॥ जब केतु आगम अवस्था में हो जो जातक को नाना रोग धनक्षय, दन्तरोग आदि होते हैं। और चुगलखोर तथा परनिन्दक होता है॥१५३॥

सभावस्थां गते केतौ वाचालो बहुगर्वितः ॥ कृपणो लम्पटश्चैव धूर्तविद्याविशारदः ॥१५४॥ यदागमे भवेत्केतुः केतुः स्यात्पापकर्मणाम् ॥ बन्धुवादरतो दुष्टो रिपुरोगनिपीडितः ॥१५५॥ भोजने तु जनो नित्यं क्षुधया परिपीडितः ॥ दरिद्रो रोगसंतप्तः केतौ भ्रमति मेदिनीम् ॥१५६॥ नृत्यलिप्सागते केतौ व्याधिना विकलो भवेत् । बुद्बुदाक्षो दुराधर्षो धूर्तोऽनर्थकरो नरः ॥१५७॥ कौतुकी कौतुके केतौ नटवामारतिप्रियः ॥ स्थानभ्रष्टो दुराचारी दरिद्रो भ्रमते महीम् ॥१५८॥ निद्रावस्थां गते केतौ धनधान्यसुखं महत् ॥ नानागुणविनोदेन कालो गच्छति जन्मिनाम् ॥१५९॥

केतु 'सभा' अवस्था में हो तो वाचाल, अभिमानी, कृपण, लम्पट तथा धूर्त होता है॥१५४॥ केतु यदि 'आगम' अवस्था में हो तो जातक पापी, बन्धु से कलह करनेवाला, दुष्ट एवं शत्रु तथा रोगी होता है॥१५५॥ केतु यदि 'भोजन' अवस्था में हो तो जातक भिखमंगा, दरिद्र, रोगी तथा घुमक्कड़ होता है॥१५६॥ केतु 'नृत्यलिप्सा में हो तो सदा रोगी तथा आंख की बीमारी वाला, धूर्त तथा अनर्थकारी होता है॥१५७॥ केतु 'कौतुक' अवस्था में हो तो नटजाति की स्त्री का प्रेमी, स्थानभ्रष्ट, दुराचारी, दरिद्र तथा यात्राप्रेमी होता है॥१५८॥ केतु 'निद्रा' अवस्था में हो तो धनधान्य का विशेष सुख होता है और अनेक गुण विनोद से समय यापन होता है॥१५९॥

अथ सर्वभावफलम्

शयनाद्येषु भावेषु यस्य तिष्ठंति सद्ग्रहाः ।। नित्यं तस्य शुभं ज्ञानं निर्विशंकं द्विजोत्तम ।।१६०।। भोजनाद्येकभावेषु पापास्तिष्ठंति सर्वथा ।। तदा सर्वविनाशोऽपि नात्र कार्या विचारणा ।।१६१।। निद्रायां च यदा पापो जायास्थाने शुभं वदेत् ।। यदि पापग्रहैर्दृष्टो न शुभं च कदाचन ।।१६२।। सुतस्थाने स्थितः पापो निद्रायां शयनेऽपि वा ।। तदा शुभं भवेत्तस्य नात्र कार्या विचारणा ।।१६३।। मृत्युस्थानस्थितः पापो निद्रायां शयनेपि वा ।। तदा तस्यापमृत्युः स्याद्राजतः परतस्तथा ।।१६४।। शुभग्रहैर्यदा युक्तः शुभैर्वा यदि वीक्षितः ।। तदा च मरणं तस्य गंगायां च विशेषतः ।।१६५।। कर्मस्थाने यदा पापः शयने भोजनेऽपि वा ।। तदा कर्मविपाकः स्यान्नानादुःखप्रदायकः ।।१६६।। दशमस्थो निशानाथः कौतुकी च प्रकाशने ।। तदैव राजयोगः स्यान्निर्विशंकं द्विजोत्तम ।।१६७।।बलाबलविचारेण ज्ञायते च शुभाशुभम् ।। एवं क्रमेण बोद्धव्यं सर्व भावेषु बुद्धिमन् ।।१६८।।

इति श्रीबृहत्पाराशरहोराशास्त्रेपूर्वखण्डे ग्रहाद्यवस्थाफलकथनं
नाम त्रिंशोऽध्यायः समाप्तः ।।३०।।

सर्वभावफल–ऊपर कहे गये भावफलों में यदि शुभग्रहों का योग हो तो समय समय पर सद्बुद्धि होती रहती है।।१६०।। भोजन अवस्था में यदि पाप ग्रह हों तो सब प्रकार से विनाश ही होता है।।१६१।। पापग्रह निद्रावस्था में सप्तमभाव में हो तो शुभफल होता है और यदि पापग्रह से दृष्ट हो तो शुभफल नहीं होता।।१६२।। पापग्रह निद्रावस्था में पंचमभाव में हो तो सन्तान के लिए शुभकारी है।।१६३।। यदि अष्टम भाव में पापग्रह निद्रावस्था में हो तो जातक की अकाल मृत्यु राज के कारण या अन्य कारण से होती है।।१६४।। यदि शुभ ग्रहों से युक्त या दृष्ट हो तो विशेष करके गंगा में डूबकर मृत्यु होती है।।१६५।। यदि दशम् भाव में पापग्रह शयन या भोजन अवस्था में हो तो जातक को अनेक दुःखों का सामना करना पड़ता है।।१६६।। यदि चन्द्रमा दशमभाव में कौतुक अथवा प्रकाश अवस्था में हो तो निःसन्देह राजयोग कारक होता है।।१६७।। इस प्रकार ग्रहों का बलावल विचार करके शुभाशुभ फल का निर्देश करना चाहिये। और इसी क्रम से सभी भावों में विचार करना चाहिए।।१६८।।

इति श्री बृ० पा० हो० शा० पू० भा० प्र० ग्रहावस्था फलकथनं
नाम त्रिंशोऽध्यायः ।।३०।।

मैत्रेय उवाच

दशाः कतिविधाः संति ह्येतन्मेब्रूहि तत्त्वतः ।। महर्षे त्वं समर्थोसि कृपया करुणानिधे ।।१।।

पराशर उवाच

अथातःसंप्रवक्ष्यामि दशाभेदाननेकशः ।। विंशोत्तरी दशा चोक्ता दशा तु षोडशोत्तरी ।।२।।

द्वादशोत्तरिका ज्ञेया तथैवाष्टोत्तरी दशा ।। पंचोत्तरी दशा तद्वद्दशा शतसमा स्मृता ।।३।। दशा हि चतुराशीतिः प्राह चाथ द्विसप्ततिः ।। तथा षष्टिसमा चोक्ता दशा षड्विंशतिःसमा ।।४।। नवमांशनवदशा राश्यंशकदशाः स्मृताः ।। दशा कालाभिधा चक्रदशाचक्रं मुनीश्वरैः ।।५।। चरपर्या दशा विप्र द्विजोत्तमदशा स्थिरा अथोत्तरदशा विप्र ब्रह्मता चापरा दशा ।।६।। केंद्राद्या च दशा ज्ञेया कारकादिग्रहा दशा ।। मांडूकी च दशा प्रोक्ता तथा शूलदशापि वा ।।७।। योगार्द्धगा दशा विप्र दृग्दशां कथयाम्यहम् ।। दशा त्रिकोणनामा वै राशीनां च दशा तथा ।।८।। तारादशा तथा ज्ञेया दशा ज्ञेया च वर्णदा ।। पंचस्वरदशा विप्र योगिनी च दशा स्मृता ।।९।। ततः पैंड्यदशा ज्ञेया तथांशी च दशा द्विज ।। नैसर्गिकदशा विप्र अष्टवर्गदशा स्मृता ।।१०।। संध्या दशा च ज्ञातव्या पाचका च दशा द्विज ।। द्विचत्वारिंशद्भेदाः स्युः कथयामि तवाग्रतः ।।११।।

अनेक दशाभेद कथन

मैत्रेय जी बोले–हे महर्षि! दशा कितने प्रकार की हैं, यह आप कहिये, क्योंकि हे करुणानिधि! इस विषय के कहने में आप ही समर्थ है।।१।। महर्षि पराशरजी ने कहा–अब हम अनेक दशा भिन्न भिन्न रूप से कहते हैं। विंशोत्तरी दशा तथा षोडशोत्तरी, द्वादशोत्तरी, अष्टोत्तरी, पंचोत्तरी, शताब्दिका, तथा चतुरशीति वर्षा, द्विसप्तति वर्षा, षष्ठि समा, तथा षड्विंशति समा, नवमांश दशा, राश्यंश दशा तथा कालदशा, कालचक्रदशा, चरपर्यायदशा, स्थिरदशा, ब्रह्मदशा, केन्द्रदशा, कारकदशा, मांडूकीदशा, शूलदशा, योगार्द्ध दशा, दृग्दशा, त्रिकोण दशा, राशि दशा, तारा दशा, वर्णद दशा, पंचस्वर दशा, योगिनी दशा, पैण्डी दशा, अंशी दशा, नैसर्गिक दशा, अष्टवर्ग दशा, संध्या दशा, पाचक दशा आदि ४२ प्रकार की दशा हैं। उनमें से कुछ प्रसिद्ध प्रसिद्ध दशा का विचार कथन करते हैं।।श्लोक २ से ११ तक।।

अथ विंशोत्तरीदशामाह

आनयनप्रकारं च श्रृणुष्व द्विजपुंगव ।। नामनक्षत्रपर्यंतमाधारः कृत्तिकादितः ।।१२।। दहनात्स्वर्क्षपर्यन्तं गणयेन्नवभिर्हरेत् ।।१३।। सूर्येन्दुक्ष्माजतमसो वाक्पतिर्मंदचंद्रजौ ।। केतुशुक्रौ क्रमादेते विज्ञेयाश्च दशाधिपाः ।।१४।। रसाशामुनिधृत्यब्दा भूपतिर्धृतिवत्सराः ।। सप्तेंदवो नगा व्योमबाहवो भास्करादितः ।।१५।।

विंशोत्तरी दशा प्रकार

विंशोत्तरी दशा स्पष्ट करने का प्रकार यह है कि–कृतिका नक्षत्र से गणना करनी चाहिये।।१२।। कृतिका से अपने नक्षत्र तक गणना करके अधिक हो तो ९ का भाग देना चाहिये।।१३।। दशा के क्रम से स्वामी कहते हैं। सू० चं० मं० रा० बृ० श० बु० के० शु० । आई हुई संख्या के अनुसार स्वामी होता है।।१४।। क्रम से वर्ष संख्या ६,१०,७,१८,१६,१९, १७,७,२० जानना।।१५।।

उदाहरण–कल्पना किया किसी का जन्म कृत्तिका नक्षत्र में है, अतः भयात १५।१० है, भभोग ६०।३० है, पलमय भयात ९१० को सूर्य के वर्ष ६ से गुणा किया तो ५४६० हुए,

इसमें पलमय भभोग ३६३० का भाग दिया तो लब्धि १ वर्ष प्राप्त हुआ। शेष १८३० को १२ से गुणा किया तों २१९६० हुए, ३६३० का भाग दिया तो ६ मास लब्ध हुए, शेष १८० को ३० से गुणा किया तो ५४० हुए, ३६३० का भाग दिया तो ०० दिन प्राप्त हुआ, पुनः ५४० को ६० से गुणा किया तो ३२४०० हुए, इसमें ३६३० का भाग दिया लब्ध ८ घटी प्राप्त हुई, शेष ३३६० को ६० से गुणा करके ३६३० के भाग से लब्ध ५५ पल प्राप्त हुए। इन वर्षादि सूर्य के वर्ष ६ में घटाया तो ४।५।२९।५१।०५ यह भोग्य वर्षादि हुए।

विंशोत्तरीदशा मानचक्रम्

सू०	चं०	मं०	रा०	बृ०	श०	बु०	के०	शु०	ग्र०
६	१०	७	१८	१६	१९	१७	७	२०	वर्ष
कृ०	रो०	मृ०	आ०	पुन०	पु०	आ०	म०	पूफा	नक्षत्राणि
उफा	ह०	चि०	स्वा०	वि०	ऽनु०	ज्ये	मू०	पूषा	"
उषा	श्र०	ध०	श०	पूभा	उभा	रे०	अ०	भ०	"

विंशोत्तरी दशाचक्रम्

सू०	चं०	मं०	रा०	बृ०	श०	बु०	के०	शु०	ग्र०
४	१०	७	१८	१६	१९	१७	७	२०	वर्ष
५	०	०	०	०	०	०	०	०	मा०
२९	०	०	०	०	०	०	०	०	दि०
५१	०	०	०	०	०	०	०	०	घ०
०५	०	०	०	०	०	०	०	०	प०

विंशोत्तरीदशाचक्रम्

२०१४	२०१८	२०२८	२०३५	२०५३	२०६९	२०८८	संवत्
३	९	९	९	९	९	९	राशि.
५	०४	४	४	४	४	४	अंश
८	५९	५९	५९	५९	५९	५९	घटी
१३	१८	१८	१८	१८	१८	१८	पल

अथ षोडशोत्तरीदशामाह

एकः पंचयुतौ रुद्राधृत्यंतं वत्सराःक्रमात् ।। रविर्भौमोगुरुमन्दःकेतुश्चन्द्रो बुधो भृगुः ।।१६।। अष्टौ दशाधिपाः प्रोक्ता राहुहीना नवग्रहाः ।। पुष्यभाज्जन्मभं यावद्गणयेद्वसुभिर्हरेत् ।।१७।। सूर्यहोरागते शुक्ले चन्द्रस्य कृष्णपक्षके ।। तदा नृणं फलार्थाय विचिंत्या षोडशोत्तरी ।।१८।।

षोडशोत्तरी दशा प्रकार

षोडशोत्तरी दशा में वर्ष संख्या ११ से १८ तक जानना और दशास्वामी सू० मं० गु० श० के० चं० बु० शु० होते हैं। ये आठ दशास्वामी ग्रह हैं।।१६।। इन दशाधिपों में राहुग्रह की गणना नहीं है। पुष्य नक्षत्र से जन्मनक्षत्र तक गिनकर आठ का भाग देना चाहिये।।१७।। शुक्लपक्ष में सूर्य की होरा और कृष्णपक्ष में चन्द्रमा की होरा से विचार करे। इस प्रकार मनुष्यों का शुभाशुभ विचार षोड़शोत्तरी दशा से करे।।१८।।

उदाहरण–पूर्वोदाहरण में जन्मनक्षत्र कृ० पलमय भयात ९१० तथा भभोग ३६३० है। दशा बुध की है, अतः ९१० को बुध के वर्ष १७ से भयात ९१० को गुणा किया तो १५४७० हुए, इसमें भभोग ३६३० का भाग दिया तो लब्ध ४ वर्ष प्राप्त हुए, शेष ९५० को १२ से गुणा किया और ३६३० का भाग दिया तो ३ मास प्राप्त हुए और आगे भी क्रमशः ३०।६०।६० से गुण कर भभोग ३६३० के भाग से प्राप्त अंक दिन, घटी, पल प्राप्त ४।१४।१८ हुए, इस प्रकार ४।३।४।१४।१८ वर्षादि दशा का भुक्तमान प्राप्त हुआ, इसको बुध के मान १७ वर्ष में घटाया तो १२।८।२५।४५।४२ यह बुध की भोग्य वर्षादि दशा हुई।

षोडशोत्तरी दशामानम्

सू०	मं०	बृ०	श०	के०	चं०	बु०	शु०	ग्र०
११	१२	१३	१४	१५	१६	१७	१८	व०
पु०	श्ले०	म०	पूफा	उफा	ह०	चि०	स्वा०	न०
वि०	ऽनु०	ज्ये०	मू०	पूषा	उषा	श्र०	ध०	न०
श०	पूभा	उभा	रे०	अ०	भ०	कृ०	रो०	न०
मृ०	आ०	पुन०	X	X	X	X	X	न०

षोडशोत्तरी दशा चक्रम्

बु०	शु०	सू०	मं०	बृ०	श०	के०	चं०	ग्र०
१२	१८	११	१२	१३	१४	१५	१६	व०
८	०	०	०	०	०	०	०	मा०
२५	०	०	०	०	०	०	०	दि०
४५	०	०	०	०	०	०	०	घ०
४२	०	०	०	०	०	०	०	प०
२०१४	२०२७	२०४५	२०५६	२०६८	२०८१			संवत्
३	००	०	०	०	०			
५	००	०	०	०	०			
८	५३	५३	५३	५३	५३			
१३	५५	५५	५५	५५	५५			

अथ द्वादशोत्तरीदशामाह

सूर्यो गुरुः शिखी ज्ञोऽगुः कुजो मंदो निशाकरः ।। शुक्रहीना दशा ह्येतद्द्वि चयात्सप्तमात्समाः ।।१९।। जन्मभात्पौष्णपर्यन्तं गणयेदष्टभिर्भजेत् ।। नवमांशे यदा जाता शुक्रस्य द्वादशोत्तरी ।।२०।।

द्वादशोत्तरी दशा

स्वामी ग्रह सू०७ गु०९ के०११ बु०१३ रा०१५ मं०१७ श०१९ चं०२१ इनमें शुक्र ग्रह को छोड़ कर बाकी ग्रहों की सात से २-२ बढ़ाकर वर्ष संख्या की दशा जानना।।१९।। जन्म नक्षत्र से रेवती नक्षत्र तक गणना करके ८ का भाग दे, शेष संख्या की दशा जाने, शुक्र के नवांश में जन्म हो तो द्वादशोत्तरी का विचार करे।।१९।।२०।।

द्वादशोत्तरी दशा क्रम चक्रम्

सू०	बृ०	के०	बु०	रा०	मं०	श०	चं०	ग्रहाः
७	९	११	१३	१५	१७	१९	२१	वर्षाणि

उदाहरण—भयात भभोग से पूर्ववत् दशा स्पष्ट करना।

अथाष्टोत्तरीदशामाह

सूर्यश्चंद्रः कुजः सौम्यः शनिर्जीवस्तमो भृगुः ।। एते दशाधिपाः प्रोक्ता विना केतुं नवग्रहा ।।२१।। रसाः पंचेन्दवो नागाः शैलचंद्रा नभेन्दवः ।। गोब्जाः सूर्यकुनेत्राश्च समाः प्रद्योतनादयः ।।२२।। लग्नेशात्केन्द्रकोणस्थे राहौ लग्ने स्थितं विना ।। अष्टोत्तरी द्विधा प्रोक्ता शिवाद्या कृतिकादितः ।।२३।। चतुष्कं त्रितयं तस्माच्चतुष्कं त्रितयं पुनः ।। यावत्स्वजन्मभं तावद्गणयेच्च यथाक्रमम् ।।२४।।

अष्टोत्तरी दशा

सूर्य, चन्द्र, मंगल, बुध, शनि, गुरु, राहु, शुक्र ये ग्रह केतु के बिना दशास्वामी हैं।।२१।। तथा इनके वर्ष—सू०६ चं०१५ मं०८ बु०१७ शनि १० गुरु १९ राहु १२ शुक्र २१ क्रम से हैं।।२२।। लग्नेश से राहु लग्न को छोड़कर केन्द्र या त्रिकोण स्थान में हो तो अष्टोत्तरी दशा ग्रहण करना।। अष्टोत्तरी की गणना दो प्रकार की होती है, एक आर्द्रा से दूसरी कृत्तिका से।।२३।। कथित नक्षत्र से जन्म नक्षत्र तक गणना करे। प्रथम पर्याय में ४ नक्षत्र, दूसरे में तीन, पुनः ४ और पश्चात् ३, इसी प्रकार जन्म नक्षत्र तक गणना करनी चाहिये।।२४।। (चक्र से स्पष्ट समझना)

विशेष-"**दशामानं चतुर्धा च त्रिधा चैव पुनःपुनः । अशुभानां शुभानाञ्च ग्रहाणां साधयेद्द्विज!**" अर्थात् पापग्रहोंके दशा वर्षोंके ४ भाग करके प्रति नक्षत्र १ भाग तथा शुभग्रहों के ३ भाग करके प्रतिनक्षत्र १ भाग दशामान ग्रहण करना। इस प्रकार जन्म नक्षत्र का जो मान प्राप्त हो उससे पूर्ववत् भयात भभोग से दशास्पष्ट करना चाहिए। तथा उत्तराषाढ का चतुर्थ चरण और श्रवण का १५ वाँ भाग 'अभिजित्' नक्षत्र माना गया है, अतः उत्तराषाढ के ३ चरण को ही भभोग मानना और श्रवण के आदि के १५वें भाग रहित को भभोग मानना तथा उत्तराषाढ का चतुर्थ चरण और श्रवण के १५वें भाग को मिलाकर अभिजित नक्षत्र का भभोग मानना। और इस भभोग के अनुसार ही भयात स्पष्ट करके दशा का साधन करना चाहिये॥२४॥

अथाष्टोत्तरीदशायन्त्रम्			
सू० मं० ७२	चं० भा० मं० १८०	मं० ९५	बुध २५४
६	१५	८	१७
आ० १८ पु० १८ पु० १८ आ० १८	म० ६० पू० ६० उ० ६० ० ०	ह० २४ चि० २४ स्वा० २४ वि० २४	अ० ६८ ज्ये० ६८ मू० ६८ ० ०
श० १२०	बृ० २२८	रा० १४४	शु० २५२
१०	१९	१२	२१
पू० ३० उ० ३० ऽभि० ३० श्र० ३०	ध० ७६ श० ७६ पू०भा० ७६ ० ०	उ० ३६ रे० ३६ अ० ३६ भ० ३६	कृ० ८४ रो० ८४ मृ० ८४ ० ०

उदाहरण-कल्पना किया कि-किसी जातक का जन्म उत्तराषाढ के द्वितीय चरण में है, और भयात ३०।५ है, तथा भभोग ६०।४० है तो यहां पर अभिजित् के भाग के नाम का चतुर्थांश १५।१८ घटाया तो शेष ४५।३० यह उत्तराषाढ का भभोग हुआ और भयात वही ३०।५ है, इसके पलात्मक १८०५ को शनिदशा के द्वितीय नक्षत्र (ऊपर चक्र में देखिये) के मान ३०

(मास) से गुणा किया तो ५४१५० हुए, इससे १४।५२।३६ मासादि प्राप्त हुए। यह उत्तराषाढ का भुक्तमान हुआ। इसको ३० (मास) में घटाया तो १५।७।२४ यह उत्तराषाढ का भोग्य मान हुआ, इसमें अभिजित् और श्रवण के मान ३०–३० मास का योग किया तो ७५।७।२४।०० हुआ मास संख्या में १२ का भाग दिया तो ६।३।७।२४।०० यह शनि की भाग्य दशा हुई।

विशेष सूचना–केवल अष्टोतरी और षष्ठचब्दिका दशामें अभिजित् की गणना है। अत: उषा. अभि. और श्रवण का भभोग मान पूर्वोक्त रीति से ग्रहण करना। अन्य नक्षत्रों में नक्षत्र के पूर्ण भभोग तथा भयात से विंशोत्तरी के समान ही दशा साधन करना, किन्तु दशा मान ऊपर चक्र में लिखे अनुसार पापग्रह का १/४ और शुभग्रह का १/३ पूर्ण भभोग के लिये ग्रहण करना चाहिए,भुक्त नक्षत्र के मान को छोड़कर भोग्यनक्षत्रके मानका योग करके भोग्यदशा साधन करना।

अष्टोत्तरी दशा चक्रम्

श०	बृ०	रा०	शु०	सू०	चं०	मं०	बु०	
६ ३ ७ २४ ००	१९ ० ० ० ०	१२ ० ० ० ०	२१ ० ० ० ०	६ ० ० ० ०	१५ ० ० ० ०	८ ० ० ० ०	१७ ० ० ० ०	व० मा० दि० घ० प०
२०१४	२०२०	२०३९	२०५१	२०७२	२०७८			सम्वत्
३ ५ ८ १५ ब	६ १२ ३२ १५	६ १२ ३२ १५	६ १२ ३२ १५	६ १२ ३२ १५	६ १२ ३२ १५			रा अं क वि

अथ पंचोत्तरीदशामाह

तमो विनानुराधादि विज्ञेयं जन्मभावधि ।। गणयेत्सप्तभिर्भक्ते शेषे कल्प्या दशाः शुभाः ।।२५।। रविर्ज्ञार्किसुतौ भौमो भार्गवो रजनीकरः ।। वाचस्पतिश्च कर्कांगे तस्यैव द्वादशांगके ।।२६।। पंचोत्तरी दशा चिंत्या द्वादशाद्याः क्रमात्समाः ।। बलाबलविवेकेन यथान्यायेन योजयेत् ।।२७।।

पंचोत्तरी दशा

जिस जातक के बृहस्पति कर्कराशि में तथा कर्क के द्वादशांश में हो उसके लिए इस पंचोत्तरी दशा का विचार करना चाहिए। अनूराधा नक्षत्र से जन्म नक्षत्र तक गणना करना।

सात का भाग देना। शेष अंक में सूर्य, बुध, शनि, मंगल, शुक्र, चन्द्र, गुरु इनके वर्ष से १२, १३, १४, १५, १६, १७, १८ जानना। ग्रहों के बलाबल से फल का विचार करना।।२५।।२६।।२७।।

उदाहरण–जन्मनक्षत्र के भयात भभोग से विंशोत्तरी दशा के समान ही दशा स्पष्ट करनी चाहिए।

पंचोत्तरीदशायन्त्रम्

सू	बु	श	मं	शु	चं	बृ
१२	१३	१४	१५	१६	१७	१८
अनु श रो पू फा	ज्ये पू भा मृ उ फा	मू उ भा आ ह	पू षा रे पुन चि	उ षा अ पु स्वा	श्र भ आश्ले व०	ध कृ म X

अथ शताब्दिकां दशामाह

रविश्चंद्रो भृगुश्चांद्रिर्जीवो विश्वंभरात्मजः ।। दैवाकरिः क्रमादेते बाणा बाणा दिशो दश ।।२८।। नखा नखाः खरामाश्च वर्षाणि दिनपादितः ।। वर्गोत्तमगते लग्ने दशा चिंत्या शताब्दिका ।।२९।। पौष्णाज्जन्मर्क्षपर्यन्तं गणयेत्सप्तभिर्हरेत् ।। शेषांके रवितो ज्ञेया दशा शतसमात्वियम् ।।३०।।

अथ शताब्दिकयंत्रमाह

सू०	चं०	शु०	बु०	बृ०	मं०	श०	ग्रहाः
५	५	१०	१०	२०	२०	३०	वर्षाणि
रेवती	अश्वि०	भ०	कृ०	रो०	मृ०	आ०	न–
पुनर्व०	पुष्य०	आश्ले०	म०	पू०	उत्त०	ह०	क्ष–
चित्रा०	स्वाती०	विशा०	अनुरा०	ज्ये०	मूल०	पू०षा०	त्रा–
उ०षा०	श्रवण०	धनिष्ठा	श०	पू०	उत्तरा०	०	णि

शतवर्षीया दशा

सूर्य, चन्द्र, शुक्र, बुध, गुरु, मंगल; शनि ये ग्रह दशा स्वामी हैं।।२८।। वर्ष संख्या ५–५ १०-१०-२०-२०-३० क्रम से जानना।।२९।। रेवती नक्षत्र से जन्म नक्षत्र तक गणना करके ७ का भाग देना। शेष संख्या से उपर्युक्त क्रम से सूर्यादि ग्रहों की संख्या जानना।।३०।।
उदाहरण–जन्म नक्षत्र का भयात भभोग कल्पना करके विंशोत्तरी दशा के समान ही दशास्पष्ट करनी चाहिए।
सूचना–जिस जातक का जन्म वर्गोत्तम लग्न में हो उसके लिए इस दशा से फल विचार करना।

अथ चतुरशीत्यब्दिकां दशामाह

रविश्चंद्रः कुजः सौम्यो जीवः शुक्रः शनैश्चरः ।। तमध्वजौ विना सर्वे ग्रहा द्वादश हायनाः ।।३१।। पवनाज्जन्मभं यावत्सप्ततष्टे दशा भवेत् ।। चतुर शीतिका ज्ञेया कर्मेशे कर्मसंस्थिते ।।३२।।

अथ चतुरशीत्यब्दिकाचक्रम्

रविः	चंद्रः	मंगलः	बुधः	बृह०	शुक्रः	शनिः	ग्रहाः
१२	१२	१२	१२	१२	१२	१२	वर्षाणि
स्वाती	विशा०	अनुरा०	ज्येष्ठा	मूल	पूर्वाषा०	उ०षा०	न–
श्रवण	धनिष्ठा	शत०	पू०भा०	उ०भा०	रेवती	अश्वि०	क्ष–
भरणी	कृत्तिका	रोहिणी	मृग	आर्द्रा	पुनर्वसु	पुष्य	त्रा-
आश्ले०	मघा	पूर्वा	उत्तरा	हस्त	चित्रा	०	णि

चतुरशीति वर्षा दशा

सूर्य, चन्द्र, मंगल, बुध, गुरु, शुक्र, शनि ये सात ग्रह स्वामी हैं राहु केतु का ग्रहण नहीं है।।३१।। सबके १२-१२ वर्ष हैं। स्वाती नक्षत्र से जन्मनक्षत्र तक गणना करके ७ का भाग देने से जो शेष रहे वह दशा जानना। जिस जातक के कर्मेश (दशमेश) दशमभाव में हो उसको इस दशा से फलाफल कहना चाहिए।।३२।।
उदाहरण–किसी जातक का जन्म नक्षत्र ज्येष्ठा है तो बुध की दशा हुई, अतः ज्येष्ठाके भयात भभोग से विंशोत्तरी दशा के समान भोग्य दशा का साधन करना।

अथ द्विसप्ततिकां दशामाह

लग्नेशे सप्तमे यत्र लग्ने वै मदनाधिपे ।। चिंतनीया दशा तत्र द्व्यधिकाः सप्ततिः समाः ।।३३।। नव वर्षाणि सर्वेषां विकेतूनां ग्रहात्मनाम् ।। मूलाज्जन्मर्क्षपर्यन्तं गणयेदष्टभिर्हरेत् ।। शेषा दशा विचिंत्या च वदेच्चैव महामुने ।।३४।।

अथ द्विसप्ततिकादशायन्त्रम्								
र०	चं०	मं०	बु०	बृ०	शु०	श०	रा०	ग्रहाः
९	९	९	९	९	९	९	९	वर्षाणि
मूल०	पूर्वाषा०	उत्तरा०	श्रवण०	धनिष्ठा०	शत०	पूर्वाभा०	उ०भा०	न–
रेवती	अश्वि०	भरणी	कृत्ति०	रोहिणी	मृग	आर्द्रा	पुनर्वसु	क्ष–
पुष्य	आश्ले०	मघा	पूर्वा	उत्तरा	हस्त	चित्रा	स्वाती	त्रा–
विशा०	अनुरा०	ज्येष्ठा	०	०	०	०	०	णि

द्विसप्ततिका दशा

जिस जातक के लग्नेश सप्तमभाव में अथवा सप्तमेश लग्न में हो उसके लिए ७२ वर्ष की दशा का विचार करना चाहिए।।३३।। केतु को छोड़कर क्रम से सूर्यादि ग्रह दशास्वामी हैं। सबके ९–९ वर्ष हैं। मूलनक्षत्र से जन्मनक्षत्र तक गणना करके ८ का भाग देना। शेष संख्या से दशा जानना।।३४।।

उदाहरण–किसी का जन्म श्रवण नक्षत्र में है तो बुध की दशा हुई, अतः श्रवण का भयात भभोग स्पष्ट करके विंशोत्तरी दशा के समान ही दशा स्पष्ट करनी चाहिए।

अथ षष्टिहायनीदशामाह

गुर्वर्कभूसुतानां च वर्षाणि दशकानि च ।। ततः शशिज्ञशुक्रार्कपुत्रागूनां समाश्च षट् ।।३५।। दास्रात्त्रयं चतुष्कं च त्रयं वेदं पुनः पुनः ।। यदैको लग्नराशीशश्चिन्त्या षष्टिसमा तदा ।।३६।।

षष्ठिहायनी दशा

गुरु, सूर्य, मंगल, चंद्रमा, बुध, शुक्र, शनि, राहु ये दशा स्वामी तथा वर्षसंख्या क्रम से १०-१०-१०-६-६-६-६-६ जानना।।३५।। अश्विनी नक्षत्र से ३-४-३-४ आदि क्रम से पुनः

पुनः दशा की गणना करना। लग्न की राशि तथा चन्द्र राशि एक ही हो उस जातक के लिए इस दशा का उपयोग है॥३६॥

सूचना–इस दशा की वर्षसंख्या भी अष्टोतरी दशा के समान तीन या चार नक्षत्रों पर विभाग करके १-१ भाग १-१ नक्षत्र का जानना। जिस ग्रह के तीन नक्षत्र हों, उसकी दशा के तीन करना, जैसे–बुध के तीन नक्षत्र हैं तो उसके ६ वर्षों के ३ भाग २–२ वर्ष के १-१ नक्षत्र के जानना। और ४ नक्षत्र हों तो ४ भाग करना, जैसे सूर्य के ४ नक्षत्र हैं तो दशा वर्ष १० के भाग २॥-२॥ वर्ष १-१ नक्षत्र के समझना।

उदाहरण–जैसे किसी का जन्म नक्षत्र स्वाती है तो बुध की दशा हुई, और स्वाती नक्षत्र का भयात भभोग क्रमशः२०।०० और ६०।०० है, तो स्वामी के २ वर्ष संख्या से भयात के पलांक को गुणा कर भभोग के पलांक का भाग देने से लब्ध भुक्त ०।८।०।०।० को २वर्षमें घटाया तो १।४।०।०।० हुआ, इसमें विशाखा के २ और अनुराधा के २वर्ष युक्त किये तो ५।४।०।०।० हुए।

अथ षष्टिहायनीदशायंत्रम्								
बृ०	र०	मं०	चं०	बु०	शु०	श०	रा०	ग्रहाः
१०	१०	१०	६	६	६	६	६	वर्षाणि:
अश्वि भरणी कृत्ति	रोहिणी मृग आर्द्रा पुनर्वसु	पुष्य आश्ले० मघा	पूर्वा उ०फा० हस्त चित्रा	स्वाती विशा० अनुरा	ज्येष्ठा मूल पूर्वाषा उत्तरा	ऽभिजि श्रवण धनि	शत पूर्वाभा उत्तरा रेवती	न क्ष- त्रा- णि

अथ षट्त्रिंशत्कांदशामाह

श्रवणाज्जन्मभं यावद्‌गणयेदष्टभिर्भजेत् ॥ शशांकाऽर्कसुरेज्यारज्ञाऽर्कजौ शुक्रराहवः ॥३७॥ एकोयं च यतश्चैकाद्वर्षाण्येषां क्रमात्स्मृताः ॥ दिवसे सूर्यहोरायां चिंत्या वै षड्गुणाब्दिका ॥३८॥ रात्रौ चांद्रादष्टतष्टाद्रेकात्स नृपजन्मभात् । सूर्येन्दुभूमिजनिशाधीशपुत्रसुरेज्यकाः ॥३९॥ भृगुमंदागुशिखिनो लग्नस्थाच्चिन्तिता दशा ॥४०॥ खेटक्रमाद्दशा चिंत्या यदा लग्ने शनिः स्थितः ॥ क्वचिद्‌ग्रहस्तदानीं च न चिंत्या बहुतो बलात् ॥४१॥

३६ षट्त्रिंशद् वर्षा दशा

श्रवण नक्षत्र से जन्मनक्षत्र तक गणना करके ८ का भाग दे, शेष अंक में क्रम से चं०, सू०, बृ०, मं०, बु०, श०, शु०, रा०॥३७॥ वर्ष संख्या क्रम से १,२,३,४,५,६,७,८, जानना। दिन में जन्म हो तो सूर्य की होरा से विचार करे और इस ३६ वर्षवाली दशा का उपयोग करे॥३८॥

रात्रि में जन्म हो तो उपर्युक्त प्रकार से दशा नक्षत्र लेकर दशास्वामी सूर्य, चन्द्र, मंगल, बुध, गुरु, शुक्र, शनि, राहु, इस क्रम से ग्रहण करना।।३९।। लग्न में स्थित ग्रह से दशा का आरंभ करे।।४०।। तथा सूर्यादि क्रम से जो वर्ष ऊपर कहे हैं वे ही देना। यदि लग्न में शनि हो तो इस दशा का विचार करना। और यदि लग्न में दूसरा बलवान ग्रह स्थित भी हो तो भी शनि को ही ३६ वर्षी दशा लेने में कारण माना जाता है। दूसरे ग्रह के कारण दशा का त्याग नहीं होता है।।४१।।

इसका उदाहरण विंशोत्तरी दशा के समान ही जानना।

अथ षट्त्रिंशत्यब्दिकादशायंत्रम्

चं०	सू०	बृ०	मं०	बु०	श०	शु०	रा०	ग्रहाः
१	२	३	४	५	६	७	८	वर्षाणि
श्र०	ध०	श०	पू०भा०	उ०भा०	रे०	अश्वि०	भर०	न-
कृ०	रो०	मृ०	आ०	पुन०	पुष्य	आश्ले०	मघा	क्ष-
पू०	उ०	ह०	चि०	स्वा०	वि०	अनु०	ज्येष्ठा	त्रा-
मू०	पू०षा०	उ०षा०	०	०	०	०	०	णि

अथ नवमांशनवदशामाह

अथ राशिक्रमं वक्ष्ये श्रृणुष्व द्विजपुंगव ।। ग्रहे राश्यादिके चाल्पे दशा तस्यादिमा भवेत् ।।४२।। ततस्तदधिकस्यैवं तुल्ये नैसर्गिकाद्बलात् ।। राशीशात्सप्तमांगेशाच्चिंत्या राशिक्रमाद्दशा ।।४३।। यस्मिन्नवांशकस्थेंके दशा तस्यादिमा मता ।। अग्रादब्जाच्च ये खेटाः केत्वंताः संस्थिताः क्रमात् ।।४४।। दशामानं प्रवक्ष्यामि यथोक्तं ब्रह्मणा पुरा ।। लिप्तीकृत्वा ग्रहं सोमंखाश्विभिर्भाजिते फलम् ।।४५।। पुनः सूर्ये हृते लब्धं समाद्यांशकला दशा ।। सर्वेषां मानवानां च दशास्त्वेता विचिंतयेत् ।।४६।।

नवांश नवदशा

हे द्विजश्रेष्ठ! अब हम नवांश दशा का राशिक्रम कहते हैं, आप श्रवण करें। प्रथम ग्रहदशा कहते हैं। ग्रहों में—सबसे कम राशि अंश वाले की दशा प्रथम होती है, इन दशाओं का विस्पष्ट विवरण इस प्रकार जानना—

दशा संख्या **विवरण**

प्रथम–जो ग्रह राशि अंश, कला, विकला में सबसे कम हो उसकी दशा प्रथम होगी तथा बाद उससे अधिक वाले की और बाद उससे अधिक राश्यादिवाले की। इसी प्रकार ९ ग्रहों में दशा जानना। यदि दो ग्रहों में राश्यादि समान हों तो नैसर्गिक बल से निर्णय करना।

द्वितीय–जो ग्रह सबसे अधिक राश्यादि हो, उसकी सर्वप्रथम तथा उसके बाद उससे कम और उसके बाद उससे कम; इसी प्रकार ९ ग्रहों की दशा होगी। राश्यादि समान होने पर नैसर्गिक बल से निणर्य करे।

तृतीय–नैसर्गिक बल से जिसका बल सबसे कम हो उसकी दशा सबसे प्रथम होगी। बाद उससे अधिक बल की, उसके बाद उससे अधिक बल की। इसी प्रकार आगे भी जानना। (यहां "तुल्ये नैसर्गिकाद् बलात्" इस पद की आवृत्ति होती है। जिससे पिछलो दो दशाओं में तो राश्यादि समान होने पर नैसर्गिक बल से यह अर्थ प्राप्त होता है। और तीसरे पर्याय में स्वतन्त्ररूप से दशाक्रम का बोधक होता है।) यह तीन ग्रह दशा हैं। इनमें वर्ष संख्या प्रत्येक दशा में १२ वर्ष जानना।

चतुर्थ–जन्मराशि के स्वामी से प्रथम दशा। अर्थात् जन्मराशि की प्रथम दशा बाद राशिक्रम से दशा जानना। जैसे जन्म राशि मेष है तो मेष, वृष, मिथुन इसी प्रकार से आगे भी। इसमें प्रति राशि दशां में वर्ष संख्या ९ लेना। यह सब दशाएं १०८ वर्ष की होने से।

पंचम भेद–लग्न से सप्तमेश की राशि से दशा जानना। क्रमराशि सें ही जानना। यथा सप्तमेश राशि तुला है तो तुला, वृश्चिक, धनु, मकर आदि।

षष्ठ भेद–लग्नेश की प्रथमदशा, बाद द्वितीयेश की, तब तृतीयेश की, बाद चतुर्थेश की, पश्चात् पंचमेश की, इसी प्रकार आगे भी जानना। (यहां ग्रहों में ७ ग्रह ही लेना। राहु केतु की राशीशिता नहीं है अतः उनका ग्रहण नहीं है। वर्ष संख्या ९–९ लेना।)

सप्तम भेद–लग्न में जो नवांश हो उसके स्वामी से आरंभ करके राहु केतु सहित सूर्यादि ग्रहों के नैसर्गिक क्रम से ९ ग्रहों की दशा जानना। वर्ष संख्या १२–१२ लेना।

अष्टम भेद–सप्तम भेद में जो नवांशेश से दशा ली है उससे नवम नवांश के स्वामी से यथाक्रम दशा जानना, ग्रहों में गणना नैसर्गिक क्रम से। वर्ष संख्या १२–१२।

नवम भेद–चन्द्रमा से दशा जानना। शेषं पूर्ववत् ॥४२–४४॥

स्पष्ट आयु निकालना–जैसा कि पहले ब्रह्माजी ने कहा है सो कहते हैं। चन्द्रमा के स्पष्ट राश्यादि को लेकर कलात्मक करे। (राशिको ३० से गुणा कर अंश जोड़ना, पश्चात् अंशांक में ६० से गुणा करके घटी युक्त करना तो कलात्मक चन्द्र होगा) फिर २० का भाग देकर लब्ध अंक में १२ का भाग देने से जो अंक वर्ष, मास, दिन आदि प्राप्त हो उसको १०८ परमायु में घटाना जो शेष रहे वह स्पष्ट वर्ष, मास आदि जातक की आयु जानना। सभी मनुष्यों में यह प्रयोग आयुमान के लिये करना चाहिए।।४५।।४६।।

उदाहरण–कल्पना की कि किसी जातक के जन्मकाल में चन्द्रस्पष्ट ८।२५।२९।३८। है तो

इसकी कलात्मक संख्या १५९२९।३८ हुई। इसमें २० का भाग दिया तो लब्ध ७९६।९ पुनः १२ का भाग दिया तो ६६।४।१।८ प्राप्त हुआ। इसको १०८ वर्ष में घटाया तो ४१।७।२८।५२ यह आयु का वर्षादि मान स्पष्ट हुआ।।

अथ राश्यंशकदशामाह

तन्वादिभावाः संस्पष्टाः प्रोक्तमार्गेण चानयेत् ।। लग्नेशांशस्थितो यत्र दशास्तस्य इमाः स्मृताः ।।४७।। द्वितीयेशादितश्चाग्रे ज्ञेया राश्यंशका दशा ।। चिंत्या लग्ने बलवति लग्नेशे वा बलान्विते ।।४८।।

अथ कालदशामाह

संध्या पंचघटी प्रोक्ता दिनषष्ठचंशनाडिका ।। सूर्यबिंबार्द्धतःपूर्वे परस्तादुदयादपि ।।४९।। संध्याद्वयं च विंशत्या घटिकाभिः प्रकीर्तितम् ।। दिनस्य विंशतिर्घटचः पूर्णसंज्ञा उदाहृताः ।।५०।। निशाया मुग्धसंज्ञाश्च घटिका विंशतिश्च याः ।। सूर्योदयस्य या संध्या खण्डाख्या दशनाडिकाः ।।५१।। अस्तकालस्य या संध्या सुधाख्या दश नाडिकाः ।। पूर्णमुग्धे गतघटी षड्गुणे नवधा लिखेत् ।।५२।। तथा खण्डसुधासूर्ये हते तु नवधा लिखेत् ।। विभक्तार्नींद्रिययुगैर्मानाख्यानफलानि च ।।५३।। क्रमात्सूर्यादिकानां वै मानमुक्तं मुनीश्वरैः ।। स्वस्वमानं स्वसंख्याभिर्गुणिते स्युः समादयः ।।५४।।

राश्यंशक दशा

पहले कही हुई रीति से लग्न आदि १२ भाव स्पष्ट करे। लग्नेश का नवांश जिस भाव में हो वहां से दशा का आरंभ करना।।४७।। इसी प्रकार आगे भी द्वितीयादि भावों के अधिपति से दशा रखना। यह दशा जहां लग्न या लग्नेश बलवान हो वहां प्रयुक्त करना।।४८।।

काल (होरा) दशा

यहां दिन शब्द से अहोरात्र का ग्रहण है। अहोरात्र मान ६० घटी का होता है। उसमें सूर्य के अर्द्धोदय काल से ५ घटी तक संध्या (औदयिकी संध्या) होती है और इसकी 'खण्डा' संज्ञा है। इसी प्रकार सूर्यास्त से पूर्व की भी ५ घटी संध्या काल है और उसकी 'मुग्धा' संज्ञा है। इस प्रकार सूर्यास्त (अर्द्धास्त) से पहिले की ५ घटी और बाद की ५ घटी संध्या काल है। इस तरह प्रातः की १० घटी पूर्वापर की 'खण्डा' और अस्तकाल की पूर्वापर की १० घटी 'सुधा' नाम की संध्या है। और दिन की बाकी २० घटी की 'पूर्णा' संज्ञा है। तथा रात्रि की बाकी २० घटी की 'मुग्धा' संज्ञा है। यदि 'पूर्णा' नामक दिन की २० घटी में जन्म हो तो (अर्थात् सूर्योदय से इष्टकाल यदि ५ घटी से अधिक हो तो प्रातः संध्या (खण्डा) की ५ घटी इष्ट में से घटा कर बाकी) ६ से गुणा करना। इसी प्रकार रात्रि की 'मुग्धा' नाम की मध्य घटी में जन्म हो तो संध्याकाल की घटी घटाकर बाकी को ६ से गुणा करना। यदि 'खण्डा या 'सुधा' नाम की संध्या में जन्म हो तो इष्ट घटी को १२ से गुणा करना। गुणित अंक को ९ स्थान में रखना।

और सब जगह अलग ४५ का भाग देना तो लब्ध दशा मान का ध्रुवांक होगा। इसको सूर्यादि ग्रहों की संख्या (सू०१, चं०२, मं०३, बु०४, गु०५, शु०६, श०७, रा०८, के०९) से गुणा करने से सूर्यादि ग्रहों की वर्ष, मास आदि दशा स्पष्ट होगी।।४९-५४।।

उदाहरण–इष्ट ८।१६ में प्रातः संध्या की ५ घटी कम करने से शेष ३।१६ को ६ से गुणा किया तो १९।३६ हुआ, इसमें ४५ का भाग दिया तो ००।२६।०८।०।०, इस सूर्यादि ग्रहों की क्रम संख्या से गुणा करके दिनों में ३० और मास संख्या में १२ का भाग देने से नीचे चक्र में दिखाई हुई वर्षादि दशा प्राप्त होगी।

अथ कालचक्रमहादशायन्त्रम्

सू०	चं०	मं०	बु०	बृ०	शु०	श०	रा०	के०
२	४	६	८	१०	१३	१५	१७	१९
२	४	६	९	११	१	३	६	८
८	१६	२४	२	१०	१८	२४	४	१२
०	०	०	०	०	०	०	०	०
१०	०	०	०	०	१	०	०	०
१९	१९	१९	१९	१९	१९	१९	१९	१९
००	०३	०७	१३	२२	३२	४५	६१	७८
१७	१७	१७	१७	१७	१७	१८	१८	१८
६५	६८	७२	७८	८७	९८	११	२७	४४
१०	०	४	११	८	८	९	१	७
४	१२	२८	२२	२४	४	२२	१८	२२
१४	१४	१४	१४	१४	१४	१४	१४	१४
२२	२२	२२	२२	२२	२२	२२	२२	२२

अथ कालचक्रदशामाह

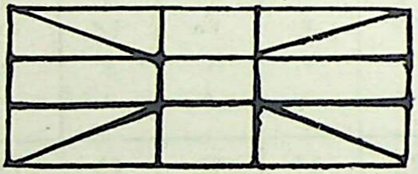
कालचक्रं प्रवक्ष्यामि नराणां हितकाम्यया ।। यावद्देहादिजीवांतमिति चक्रस्य निर्णयः ।।५५।।
सप्तविंशतिऋक्षाणि अनुलोमविलोमतः ।। वक्ष्येऽहं वै तवाग्रे च अश्विन्यादि यथाक्रमम् ।।५६।।
द्वे द्वे रेखात्मके चक्रे चतुष्कोणं लिखेत् क्रमात् ।। द्वादशग्रहनिर्माणं मेषादिद्वादशं न्यसेत् ।।५७।।
ईशान्यादिक्रमेणैव मीनांतं द्वादशं न्यसेत् ।। एवं क्रमेण चक्रं तद्विलिखेद्द्विजनंदन ।।५८।।

द्वादशारं लिखेच्चक्रं तिर्यगूर्ध्वं समानकम् ।। गृहाणि द्वादशैवं स्युस्सव्येषु च यथाक्रमम् ।।५९।। द्वितीयादिषु कोष्ठेषु राशीन्मेषादिकान्न्यसेत्।। एवं द्वादशराश्याख्यं कालचक्रमुदीरितम् ।।६०।। अश्विन्यादित्रयं चैव सव्यमार्गं प्रतिष्ठितम् ।। तिस्रोऽपसव्यास्स्युस्तारा रोहिण्याद्या यथाक्रमम् ।।६१।। कालचक्रदशासव्यापसव्यमार्गमग्रे स्फुटं वक्ष्यति ।।

कालचक्रदशा

कालचक्र नामक दशा का पूर्ण विवरण आगे कहेंगे जिससे मनुष्यों का बड़ा हित होता है। देहग्रह से जीवग्रह पर्यन्त उसका भोग (दशा) होता है, यह उस चक्र में निर्णय किया गया है।।५५।। २७ नक्षत्र क्रम से तथा व्युतक्रम से (सीधे और उलटे क्रम से गणना होना) अश्विनी आदि नक्षत्र उसमें रखे गये हैं।।५६।। दो दो रेखा सीधी और तिरछी बनाकर उनके कोणों में १–१ रेखा करके बारह घर का निर्माण करे, इन घरों में १२ राशियां रखे।।५७।। अश्विनी आदि नक्षत्र और मीन पर्यन्त राशि लिखे। हे द्विजनन्दन! इस प्रकार लिखे।।५८।। अथवा बारह कोठों का गोल चक्र लिखे, पूर्वोक्त रीति से तिरछी और सीधी रेखा करने से १२ कोष्ठक होंगे।।५९।। दूसरे ऊपर के कोष्ठक में १२ मेषादि राशि लिखे। इस प्रकार १२ राशियों का कालचक्र नामक चक्र कहा है।।६०।। अश्विनी आदि ३ नक्षत्र सीधे क्रम से, उसी क्रम से रोहिणी आदि तीन नक्षत्र उलटे क्रम से रखे।।६१।। इसका विशेष विवरण आगे कहेंगे।

कालचक्रम्



अथ चक्रदशामाह

रांशीश्वराद्दशा ज्ञेया सूर्यादीनां क्रमात्पुनः ।। दिवा रात्रिस्तथा संध्या त्रिकाले त्रिविधा दशा।।६२।। चक्राख्या च दशा प्रोक्ता तवाग्रे द्विजनंदन ।। लग्नस्थस्य दशा चादौ ततो वित्तस्थितादयः ।।६३।। त्रिधादयो यदैकस्थस्तदा भागादयोधिकात् ।। तत्रापि तुल्यो नैसर्गाद्बलात्सूर्योधिकस्य च ।।६४।। राशिप्रमितवर्षाणि भागाद्यान्यपपातत: ।। भावानामपि लग्नाच्च वर्षाणि दिङ्मितानि च ।।६५।।

चक्रदशा

यह चक्रदशा दिन, रात्रि, संध्या इन ३ समयों में भिन्न भिन्न प्रकार से होती है। दिन में जन्म हो तो जातक की राशि के स्वामी की राशि से दशा आरंभ होती है।।६२।। यह दशा 'चक्रदशा' नाम की है। और रात्रि में जन्म हो तो जन्मलग्न से दशा आरंभ होती है तथा संध्याकाल में जन्म हो तो द्वितीयभाव से आरंभ होती है।।६३।। तीनों प्रकार के स्वामी तथा राशि एक ही स्थान में हों या दो प्रकार एक स्थान में हों तो अंशाधिक्य से निर्णय करना। और अंशादिक भी समान हों तो नैसर्गिक बल से निर्णय करना। वह भी समान होने पर सूर्य

से लेना।।६४।। अंशादि का त्याग करके चक्र में राशि के समस्थान में वर्ष संख्या रखना। सभी भावों की वर्ष संख्या १०–१० होती है।।६५।।

उदाहरण–कल्पना किया कि, किसी का दिन में जन्म है और राशि का स्वामी गुरु है और वह एकादश भाव में स्थित है, अतः एकादश भाव से चक्र में दशा आरंभ की गई और प्रत्येक भाव की १०–१० वर्ष संख्या रखी गई। चक्र में देखें।

अथ चक्रदशामाह

११	१२	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	भावाः
१० ० ० ० ० ०	१० ० ० ० ० ०	१० ० ० ० ० ०	१० ० ० ० ० ०	१० ० ० ० ० ०	१० ० ० ० ० ०	१० ० ० ० ० ०	१० ० ० ० ० ०	१० ० ० ० ० ०	१० ० ० ० ० ०	१० ० ० ० ० ०	१० ० ० ० ० ०	वर्षाणि मासा-दयः
१९००	१० १९	२० १९	३० १९	४० १९	५० १९	६० १९	७० १९	८० १९	९० १९	२०००	२०१०	संवत्
१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२	रविः

अथ चरपर्यादशामाह

मैत्रेय सुमहाप्राज्ञ परोपहितकारक ।। आयुर्दायविचारो हि गहनः सर्वदा द्विज ।।६६।। आयुर्बहुप्रकारेण भाषितं ब्रह्मणा पुरा ।। लग्नर्क्षग्रहयोगेन आयुर्दायं वदामि ते ।।६७।। नक्षत्रायुः पुरा विप्र तवाग्रे कथितं मया ।। अधुना संप्रवक्ष्यामि राश्यायुर्द्विजसत्तम ।।६८।। लग्नादिव्ययपर्यंतं राशयो द्वादश द्विज ।। आयुर्वर्षे प्रदातव्या एभिश्चरपर्या दशा ।।६९।। ओजर्क्षाणां क्रमाद्विप्र समानां व्युत्क्रमात्पुनः ।। नाथांतेन समा ज्ञेया निर्विशंकं द्विजोत्तम ।।७०।। मेषो वृषोऽथ मिथुनस्तुलालिश्च धनुर्धरः ।। एतेषामोजसंज्ञा स्यादब्दानां गणनाक्रमात् ।।७१।। कर्कः सिंहश्च कन्या च नक्रकुंभझषा द्विज ।। एतेषां समसंज्ञा स्याद्वर्षाणां व्युत्क्रमाद्द्विज ।।७२।। स्वर्क्षसंस्थितखेटस्य वर्षाणि द्वादशैव हि ।। धनस्थे चैकवर्षं तु तृतीये हायनद्वयम् ।।७३।।

हे परहितकारक महाप्राज्ञ मैत्रेय! आयु का विचार बड़ा गहन है।।६६।। पहिले ब्रह्माजी ने अनेक प्रकार से आयु का वर्णन किया है।। लग्न आदि राशियों में ग्रहों के योग से आयु का निर्णय करना कहेंगे।।६७।। हमने पहले नक्षत्र से आयु का विचार कहा है। अब राशि से आयु का विचार कहते हैं।।६८।। लग्न से व्ययभाव तक १२ राशि हैं। इन राशियों से आयु के सम्बन्ध में वर्ष ग्रहण करना और इन वर्षों से 'चरपर्या' नाम की (चरपर्याय) दशा होती है।।६९।। इन राशियों से वर्ष लेने की रीति यह है कि विषम नाम की राशियों से वर्ष गणना क्रम से होती है, तथा सम राशियों से विपरीत क्रम से वर्ष गणना होती है। यह गणना राशि के भाव से उस राशि का स्वामी जहां स्थित हो वहां तक गिन कर जो संख्या हो वह वर्ष संख्या लेना।।७०।। मेष, वृष, मिथुन तथा तुला, वृश्चिक, धनु इनकी ओज (विषम) संज्ञा है। इनके वर्षों की गणना क्रम से होती है।।७१।। कर्क, सिंह, कन्या तथा मकर कुंभ, मीन इनकी समसंज्ञा है। इनकी वर्ष गणना उलटे क्रम से होती है।।७२।। (स्पष्ट विवरण) स्वराशि में स्थित ग्रह की वर्ष संख्या १२ होती है। दूसरे भाव में स्थित ग्रह से १ वर्ष होता है। और तीसरे भाव में ग्रह हो तो २ वर्ष लेना।।७३।।

तुर्ये वर्षत्रयं विप्र पंचमे तुर्यहायनम् ।। रिपुस्थे पंच वर्षाणि षड्वर्षाणि च सप्तमे ।।७४।।
रंध्रस्थे नगवर्षाणि चाष्टवर्षाणि पुण्यगे ।। नभःस्थे चांकवर्षाणि दिग्वर्षाणि तु लाभगे ।।७५।।
व्ययस्थे रुद्रवर्षाणि राश्यब्दाश्च मयानघ ।। पूर्वोक्तेन प्रकारेण कथिता वै द्विजोत्तम ।।७६।।
वृश्चिकाधिपती द्वौ च कुजकेतू द्विजोत्तम ।। स्वर्भानुपंगू कुंभस्य पती द्वौ चिंतयेद्द्विज ।।७७।।
स्वर्क्षे यदि स्थितौ द्वौ च भानुवर्षप्रदायकौ ।। परर्क्षे समतौ द्वौ च नाथांते न विचिंतयेत् ।।७८।।
परर्क्षे भिन्नभिन्नस्थौ द्वयोर्मध्ये तु यो बली ।। तस्य नाथांतरीत्या च वर्षाणि संलिखेद्द्विज ।।७९।। अग्रहात्सग्रहः प्राणी सग्रहादधिकग्रहः ।। साम्ये चरस्थिरद्वंद्वाः क्रमात्स्युर्बलिनो द्विज ।।८०।।

चौथेभाव में स्वामी होने से ३ वर्ष, पंचम भाव में स्वामी हो तो ४ वर्ष। षष्ठभावस्थित में ५ वर्ष, सप्तम में हो तो ६ वर्ष।।७४।। अष्टमभाव में ७ वर्ष। नवमभाव में ८ वर्ष। दशमभाव में ९ वर्ष। एकादशभाव में स्वामी हो तो १० वर्ष।।७५।। व्ययभाव में हो तो ११ वर्ष, इस प्रकार राशियों से वर्ष संख्या लेना, इस प्रकार वर्ष संख्या लेने की रीति तुमसे कही गई है।।७६।। वृश्चिक राशि के दो ग्रह स्वामी हैं– मंगल और केतु। इसी तरह कुंभ राशि के भी दो स्वामी हैं– शनि और राहु ।।७७।। यदि ये स्वराशि में हों तो १२ वर्ष लेना। यदि परराशि में हों तो वहां तक की संख्या लेना।।७८।। यदि परराशि में भिन्न २ राशि में हों, इनमें से जो बलवान् हो उस तक की संख्या लेना।।७९।। बलवत्ता विचार में नैसर्गिकरूप से ग्रहहीन से तो ग्रहयुक्त राशि बलवान् होती है तथा ग्रहयुक्त राशि से अधिक ग्रहवाली बलवान् होती है। अधिक ग्रहों में भी समान हो तो चर, स्थिर, और द्विस्वभाव राशियां उत्तरोत्तर बलवान् होती हैं।।८०।।

राशिसाम्ये यदा विप्र बहुवर्षप्रदो बली ।। तद्बाधादुच्चगः खेटो बलवान्सौबलो द्विज।।८१।।

यद्यल्पवर्षदो विप्र तदापि तुंगगो बली ॥ नाथांतेन समा ज्ञेया पूर्वोक्तेन क्रमेण हि ॥८२॥ उच्चखेटस्य यद्भावे वर्षमेकं तु निक्षिपेत् ॥ तथैव नीचखेटस्य वर्षमेकं त्यजेद्द्विज ॥८३॥ एकः स्वक्षेत्रगोऽन्यस्तु परत्र यदि संस्थितः ॥ तदान्यत्र स्थितं नाथं परिगृह्य दशां नयेत् ॥८४॥ एकः स्वोच्चगतस्त्वन्यः परत्र यदि संस्थितः ॥ ग्राहयेदुच्चखेटस्थं राशिमन्यं विहाय वै ॥८५॥ एवं सर्वं समालोच्य दशायां निधनं वदेत् ॥ पापयोगे पापदृष्टया यस्य पापात्त्रिकोणगाः ॥८६॥ निधनं तद्दशायां वै भाषितं ब्रह्मणा यथा ॥ चरपर्यादशायास्ते कथयिष्याम्यहं फलम् ॥८७॥

राशि भी समान हों तो वर्ष संख्या अधिक जिस राशि से प्राप्त हो उसको बली समझना। इसके भी अपवाद मे उच्चस्थ ग्रह की राशि वली होती है।।८१।। उच्चस्थ राशि से वर्ष संख्या कम भी प्राप्त हो तो भी उच्चस्थ राशि ही बलवान् होती है। इस प्रकार से भाव से भावेश तक गिन कर वर्ष लेना चाहिए।।८२।। जिस राशि में उच्चस्थ ग्रह हों तो उसकी वर्ष संख्या में १ और जोड़ना। इसी प्रकार नीचग्रह हो तो १ वर्ष घटाना।।८३।। जिन राशियों के दो स्वामी हैं उन ग्रहों में से एक तो उस राशि में हो और दूसरा अन्यराशि में हो तो अन्य राशिस्थित स्वामी तक की संख्या लेना।।८४।। और दो में से एक ग्रह उच्चस्थ हो तथा दूसरा अन्यराशि में हो तो उच्चस्थ ग्रह तक की संख्या ग्रहण करना (और पूर्वोक्त नियमानुसार १ और मिलाना) ।।८५।। इस प्रकार सब तरह से विचार करके मारक राशि में मृत्यु का निर्देश करना। जो राशि पापग्रहयुक्त या दृष्ट हो अथवा त्रिकोणभाव में पापग्रह हो।।८६।। उस दशा में निधन कहना, ऐसा पहिले ब्रह्माजी ने कहा है। इस चरपर्या दशा के फल आगे कहेंगे।।८७।।

अथ चरदशाचक्रम्												
१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	योगाः
११ ० ० ० ०	११ ० ० ० ०	७ ० ० ० ०	७ ० ० ० ०	६ ० ० ० ०	८ ० ० ० ०	६ ० ० ० ०	६ ० ० ० ०	२ ० ० ० ०	१२ ० ० ० ०	१२ ० ० ० ०	१ ० ० ० ०	८९ ० ० ० ०
१९ ००	११ १९	२२ १९	२९ १९	३६ १९	४२ १९	५० १९	५६ १९	५२ १९	६४ १९	७६ १९	८८ १९	८९ १९
१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२

उदाहरण—कल्पना किया कि—प्रथम भाव का स्वामी मंगल द्वादश भाव में है, अतः ११ वर्ष प्राप्त हुए। इसी प्रकार पूर्वोक्त रीति से तत् २ भाव के स्वामी से भावस्थिति पर्यन्त संख्या गिन कर वर्ष लिखना।

ये दशाएँ अप्रचलित हैं अतः अनुपयुक्त हैं। अतः काल्पनिक उदाहरण ही दिखाये गये हैं।

अथ नवमांशस्थिरदशामाह

अधुना संप्रवक्ष्यामि दशास्थिरविशेषतः॥ नवांशकदशामानं तवाग्रे कथयाम्यहम् ॥८८॥ प्रतिराशिप्रदिष्टैवमङ्काङ्काब्दा दशा स्थिरा ॥ तन्वादिव्ययभावानां स्पष्टीकृत्वा द्विजोत्तम ॥८९॥ ग्रहनवांशायुरीत्या दशा तुल्या नवांशका ॥ अस्थिरा इति विज्ञेया परपक्षमिदं क्रमम् ॥९०॥ पक्षद्वयं प्रवक्ष्यामि चरस्थिरद्वयं द्विज ॥ पूर्वं चरदशां वक्ष्ये तवाग्रे द्विजनन्दन ॥९१॥ ओजलग्ने जनुर्यस्य नवांशकदशा द्विज ॥ लग्नादिकं समारभ्य या जन्मप्रभृतिदशा ॥९२॥ समराशौ जनुर्यस्य नवांशकदशा द्विज ॥ राश्यादिकं समारभ्य पुरा शंभुप्रणोदितम् ॥९३॥ ओजराशिगते खेटे क्रमात्तत्तद्दशां नयेत् ॥ तत्तद्राशिनवांशाद्याः समे तु विपरीततः ॥९४॥ दशाप्रर्वतकः खेटो विषमर्क्षगतो द्विज ॥ राशिप्रतिनवाब्दानां सर्वेषां गणयेत्क्रमात् ॥९५॥ अष्टोत्तरशताब्दानां संख्यापूर्वं तदांशकाः ॥ ख्याता स्थिरदशा ज्ञेया निर्विशंकं द्विजोत्तम ॥९६॥ दशाप्रवर्तकः खेटः समराशिं गतो द्विज ॥ तत्तद्राशिं समारभ्य गणयेद्व्युत्क्रमेण च ॥९७॥

नवांश स्थिरदशा

अब हम नवांशदशा स्थिरस्वरूप वाली कहते हैं।।८८।। इस दशा में प्रतिराशि में ९–९ वर्ष होते हैं। प्रथम १२ भाव स्पष्ट करना चाहिए। तब भावों पर विचार करना।।८९।। ग्रह के नवांश की आयु की रीति से नवांश के बराबर वर्ष संख्या ग्रहण करना, ऐसा दूसरा पक्ष भी है, और इसका नाम नवांश अस्थिर दशा है।।९०।। हम तुमको स्थिरदशा और चर–(अस्थिर) दशा दोनों ही पक्ष कहेंगे। पहिले नवांश चरदशा ही कहते हैं।।९१।। जिसका जन्म विषम राशि में हो तो जन्मलग्न से ही दशा का आरंभ करना चाहिए।।९२।। यदि समराशि में जन्म हो तो जातक की राशि से नवांशदशा का आरंभ होता है।।९३।। (अब स्थिरदशा की रीति कहते हैं) ग्रह विषमराशि में हो तो क्रम से राशियों की दशा लगाना चाहिए, वह विषम नवांशदशा है। ग्रह समराशि में हो तो विपरीत गणना करना।।९४।। दशादाता स्थान विषम में होने से प्रतिराशि ९–९ वर्ष रखकर १२ राशियों के १०८ वर्ष रखना।।९५।। हे द्विजवर! यह स्थिर दशा का क्रम कहा।।९६।। दशादाता ग्रह यदि समराशि में हो तो राशिगणना विपरीत क्रम से करना चाहिए।।९७।।

तत्तद्राशिगतानां च नवांशास्ते द्विजोत्तम ॥ अष्टोत्तरशतं संख्या ह्यब्दानां च दशा स्थिरा ॥९८॥ विषमर्क्षे दशाप्राप्ते मेषे मेषादिकं गणेत् ॥ वृषे वृषादिकं गण्यं क्रमेण द्विजसत्तम ॥९९॥ समराशिदशाप्राप्ते नवांशकक्रमेण च ॥ संमुखं राशिमारभ्य गणयेद्द्विजसत्तम

॥१००॥ एवं तत्तद्दशाकाले विषमे पूर्ववत्क्रमाम् ॥ समे संमुखमारभ्य नवांशकक्रमेण च ॥१०१॥ मेषे मेषादिकं गण्यं वृषे च मकरादिकम् ॥ मिथुने च तुलाद्यं च कर्के कर्कादिकं द्विज ॥१०२॥ एवं क्रमेण गणयेद्विषमर्क्षदशांतरे ॥ समर्क्षान्तर्दशाप्राप्ते गणना संमुखेन च ॥१०३॥ मेषे च धनुराद्यं च वृषे कन्यामृगं गणेत् ॥ मिथुने च तुलाद्यं च कर्के मीनादिकं च यत् ॥१०४॥ एवं क्रमेण गणयेत्समे संमुखराशितः ॥ द्वयोः क्रममहं वक्ष्ये त्रिशूल्यभिहितं यथा ॥१०५॥

१२हों भावो के ९–९ वर्ष रखने से १०८ वर्ष की पूरी दशा होगी॥९८॥ विषमराशि में दशा हो तो मेष में मेष से ही तथा वृष में वृष से ही इसी क्रम से आरंभ करना॥९९॥ इसी रीति से विषम राशि में अपने नवांश के आरंभ से क्रम से गणना करना, और समराशि में अपने नवांश के नौवें नवांश से आरंभ करके विपरीत उलटा गिनते हुए क्रम से दशा रखना॥१००॥१०१॥ मेष राशि में नवांश मेष से तथा वृष में मकर से, मिथुन में तुला से, कर्क में कर्क राशि से गणना करे॥१०२॥ विषम राशि की नवांश दशा में उपर्युक्त क्रम से गणना करे। समराशि की गणना सम्मुखीन (नौवीं) राशि से करे॥१०३॥ यथा मेष में धनु से उलटी रीति से, वृष में मकर से कन्या तक उलटी रीति से, मिथुन में मिथुन से उलटा तुला तक तथा कर्क में मीन से उलटा कर्क तक॥१०४॥ (सूचना–विषम राशि में वर्ष गणना क्रम से तथा सम राशि में वर्ष गणना विपरीत क्रम से करना चाहिए) इस उलटे क्रम से सम राशि में नौवें नवांश से प्रथम नवांश तक उलटा गिना जाता है॥१०५॥

अथ नवांशस्थिरदशाचक्रम्

१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	भावाः
९ ० ० ० ०	९ ० ० ० ०	९ ० ० ० ०	९ ० ० ० ०	९ ० ० ० ०	९ ० ० ० ०	९ ० ० ० ०	९ ० ० ० ०	९ ० ० ० ०	९ ० ० ० ०	९ ० ० ० ०	९ ० ० ० ०	१०८ ० ० ० ०
१९ ००	१९ ०९	१९ १८	१९ २७	१९ ३६	१९ ४५	१९ ५४	१९ ६३	१९ ७२	१९ ८१	१९ ९०	१९ ९९	२० १०८
१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२

अथ स्थिरदशामाह

अधुना संप्रवक्ष्यामि स्थिरदशां द्विजोत्तम ।। प्रकारद्वितयं वक्ष्ये यथा शंभुप्रणोदितम् ।।१०६।। चरस्थिरद्विस्वभावा राशयस्त्रिविधाः क्रमात् ।। सप्ताष्टमनवाब्दां च आनयीत दशां स्थिराम् ।।१०७।। मेषे सप्ताब्दविज्ञेया वृषे वसु समा द्विज ।। मिथुने नव वर्षाणि कर्कात्यादि यथाक्रमम् ।।१०८।। द्वादशराशिपर्यन्तं ज्ञायतेऽब्दादिद्विजोत्तम ।। षण्णवतिसमा संख्या तामारभ्य वदाम्यहम् ।।१०९।। एषा स्थिरा सिद्धदशा तस्या यदिप्रवर्तकम् ।। ब्रह्मग्रहाश्रितारंभस्तदग्रे पूर्ववत्क्रमः ।।११०।।

नवांश स्थिरदशा

हे द्विजोत्तम! अव हम 'स्थिरदशा' कहते हैं। भगवान् शंभु के कथनानुसार दो रीति कही जाती है।।१०६।। चर, स्थिर, द्विस्वभाव तीन प्रकार की राशि हैं। इनमें क्रम से ७।८।९ वर्ष ग्रहण करना।।१०७।। जैसे मेष में ७ वर्ष तथा वृष में ८ वर्ष एवं मिथुन में ९ वर्ष ग्रहण करना।।१०८।। इसी प्रकार आगे भी वारह राशियों तक ९६ वर्ष होंगे यह ९६ वर्ष की सिद्ध वर्षों की स्थिर दशा कहाती है।।१०९।। इस दशा में जो ग्रह ब्रह्मासंज्ञक हो उससे आरंभ करना। यदि ब्रह्मा ग्रह विषम राशि में हो तो क्रम से दशा चलेगी और यदि सम राशि में ब्रह्मा ग्रह हो तो पूर्वोक्तानुसार विपरीत क्रम से आगे की दशा जानना।।११०।।
चक्र तथा उदाहरणः-यहां कल्पना किया कि-ब्रह्मग्रह मकरस्थ है, अतः उसीसे दशा आरंभ है, वर्ष संख्या चरादि रीति से ग्रहण की गई है।

अथ स्थिरदशायन्त्रमिदम्

१०	११	१२	१	२	३	४	५	६	७	८	९	भावाः
७ ० ० ० ०	८ ० ० ० ०	९ ० ० ० ०	७ ० ० ० ०	८ ० ० ० ०	९ ० ० ० ०	७ ० ० ० ०	८ ० ० ० ०	९ ० ० ० ०	७ ० ० ० ०	८ ० ० ० ०	९ ० ० ० ०	वर्षा० ० ० ० ०
१९ ००	१९ ०७	१९ १५	१९ २४	१९ ३१	१९ ३९	१९ ४८	१९ ५५	१९ ६३	१९ ७२	१९ ७९	१९ ८७	१९ ९६
१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२

अथोत्तरदशाचतुर्विधप्राणमाह

अथोत्तरदशाविप्रो! निरूपणमिहोच्यते। प्राणबलेन संयुक्ते तत्रादौ राशिरुच्यते ॥१११॥ आद्यं प्राणिबलं वाच्यं कारके योग संमतात् ॥ स्वस्वकारकसंबंधे तत्तद्राशिर्बलप्रदः ॥११२॥ कारकयोगेबलसाम्यग्रहयोगाच्च साम्यता ॥ भूयसा ग्रहयोगेन बलं वाच्यं द्विजोत्तम ॥११३॥ ग्रहाधीनं ग्रहबलमिति न्य.येन चिंतयेत् ॥ तदापि साम्यता विप्र यदापि निर्णयं वदेत् ॥११४॥ राश्याधिपे स्वतुंगस्थे मित्रक्षेत्रादिकेऽपिवा ॥ एवं राशिबलं ज्ञेयं निर्विशंकं द्विजोत्तम ॥११५॥ ततो बलविशेषोर्थो नैसर्गिकमतं पुरा ॥ तस्मान्निसर्गकबलं संग्राह्यं द्विजसत्तम ॥११६॥ अग्रहात्सग्रहो ज्यायान्सग्रहादधिकग्रहाः ॥ साम्ये चरस्थिरद्विर्वा क्रमात्स्युर्बलशालिनः ॥११७॥ एवं चरस्थिरप्राणिस्थिरोद्वंद्वबलीद्विज ॥ ध्यायेद्विलंबनैसर्गीचिंतयित्वा न संशयः ॥११८॥ पूर्वोक्तेकारकाध्यायेचिंतयेद्द्विजसत्तम । कारकयोगादि बलं तस्मात्प्राणवती भवेत् ॥११९॥ राशौ कारकयोगेषु निजनाथेन संयुते ॥ स राशिर्बलवान् विप्र कारकेयोगकेमते ॥१२०॥ स्वामियुक्तः कारकेषु यत्तद्राशिर्बली द्विज ॥ तत्तद्राशौ चिंतनीयमग्रमग्रे विशेषतः ॥१२१॥

चतुर्विधप्राणदशा

हे मैत्रेय! अब उत्तरदशा या चतुर्विध प्राणदशा का निरूपण करते हैं। उस निरूपण में प्रथम प्राणवल से युक्त राशि कहते हैं।।१११।। प्राणबल चार प्रकार के हैं, उनमें पहला प्राणवल कारक ग्रह का योग होने से होता है। अर्थात् अपने २ कारक से (जो राशि जिस भाव में है उस भाव का कारक जो ग्रह है उससे) सम्बन्ध होने से वह राशि बलवान् होती है।।११२।। कारकयोग में भी बल की समानता हो (दो राशियों का बल समान हो) तथा ग्रह योग से भी बल की समानता हो तो अधिक ग्रहयोग से बल का निर्णय करे।।११३।। ग्रहयोग से होनेवाला बल ग्रह के आधीन है इस नियम से विचार करे। जब बल में समानता हो तब निर्णय (विचार) करना चाहिए।।११४।। (ग्रहबल कहते हैं) राशि का स्वामी उच्च राशि में हो या मित्रराशि में (अथवा स्वगृही हो) तो वह राशि बलवान् होती है।।११५।। और इनके अभाव में पहिले जैसा कहा है, वैसा नैसर्गिक बल देखना। उस नैसर्गिक बल से राशि को बलवान् जानना।।११६।। ग्रहहीन राशि से ग्रहयुक्त राशि बलवान् होती है। ग्रहयुक्त में अधिक ग्रहयुक्त राशि बलवान् होती है।। दोनों प्रकार समान होने से चर, स्थिर, द्विस्वभाव राशि उत्तरोत्तर निसर्गतः (स्वभावतः) बलवान् हैं।। इस प्रकार चर से स्थिर, और स्थिर से द्विस्वभाव राशि बलवान् होती है। इस नैसर्गिक बल का विचार करे।।११८।। पूर्वोक्त कारकाध्याय में कहे हुए कारकयोग का बल विचार कर उस बल से राशि का बल जाने।।११९।। राशि में कारक ग्रह स्थित हो, या स्वस्वामी हो तो वह राशि कारकयोग से अथवा योग (स्वामी योग से) बलवान् होती है।।१२०।। यदि स्वामी ही कारक भी हो तो वह राशि बलवान् होती है। यह विचार हर एक राशि में करना चाहिए।।१२१।।

एकराशौ बहुग्रहाः संयुक्ता द्विजसत्तम ॥ राशिद्वारा बली ज्ञेयो यदि अग्रायनेधिकः ॥१२२॥ स्वल्पांशाल्पबली ज्ञेयो मध्यांशान्मध्यवीर्यकः ॥ अंशाधिकबली ज्ञेयो ग्रामवनविलक्षणात्

।।१२३।। ओजराशौ वेशिके च पुरतः पार्श्वसंस्थिताः ।। पृष्ठतो वा प्राण इति बलदत्वेन कथ्यते।।१२४।।इति प्रथमभेदः ।। यस्मिन्राशेः स्वामियोगे गुरुचांद्रिनिरीक्षिते ।। स राशिर्बलवान्प्रोक्तो द्वितीयेपि च प्राणिनि ।।१२५।। राशीनां द्वादशानां च बलमेवं द्वितीयकम् ।। इति प्रोक्तप्रकारेण द्वितीयं ज्ञायते बलम् ।।१२६।। इति द्वितीयप्राणभेदः ।। स्वामिनां तृतीयं प्राणि तवाग्रे गदितं मया ।। स्वात्मकारककुण्डल्यां चिन्तयेद्द्विजसत्तम ।।१२७।। केंद्रे पणफरे प्रोक्तं स्वामिदौर्बल्यमेव हि ।। केंद्रदुर्बलवांश्चैवं पणफरे चैकसंज्ञकः ।।१२८।।

एक राशि में यदि अनेक ग्रह हों तो वह राशि राशिबल से बली है। यदि अगले भाव में अन्यबल हो तो इस राशि को बलवान् समझे।।१२२।। इसी प्रकार कम अंश वाली राशि अल्पबली है और मध्य अंशवाली मध्यबली और अधिक अंशवाली अधिकबली होती है।। जैसे ग्राम्य शूकर से वन्य शूकर बलवान् होता है।।१२३।। राशि यदि विषम या 'वेशि' संज्ञावाली हो, या २।१२ में शुभग्रह हों अथवा किसी पृष्ठभाव स्थित ग्रह बल प्रदान करता हो तो वह राशि 'बलद' अर्थात् बलवान् है।।१२४।। यह प्रथम भेद है।। जो राशि अपने स्वामी से युक्त होकर गुरु या बुध से दृष्ट हो वह राशि भी (द्वितीय प्रकार से) बलवती है।।१२५।। १२ राशियों का यह द्वितीय बल है। इस प्रकार से दूसरा बल जाना जाता है।।१२६।। द्वितीय प्राणभेद।। तीसरा प्राण बल हमने आत्मकारक लग्न में कहा है। उस प्रकार से विचार करना।।१२७।। तथा इस भेद में स्थान बल से भी विचारना कि—केन्द्र से पणफर में एक विश्वा दुर्बलता है। अर्थात् पणफरभाव स्थित ग्रह केन्द्र से १ दुर्बल है।।१२८।।

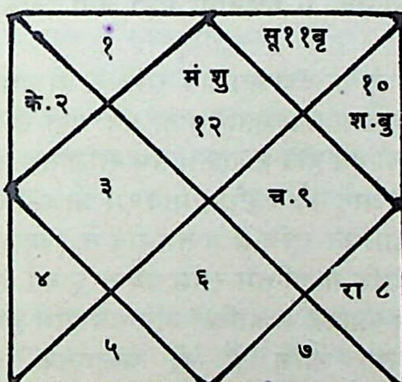
आपोक्लिमे द्विगुणितमेवं दौर्बल्यमेव च ।। तृतीयं प्राणि इत्येव जानीयाद्द्विजनंदन।।१२९।। इति तृतीयप्राणभेदः ।। चतुर्थप्राणि विज्ञेयं तवाग्रे च वदाम्यहम् ।। पापयोगेन रहितः पापक्रांतो न पश्यति ।। स राशिर्बलवान् विप्र प्राणधारे चतुर्थकः ।।१३०।। चतुर्विधे प्राणसंज्ञे एतेषां बलवीर्ययुक् ।। स राशिरत्र भागे च अंतः पाके द्विजोत्तम ।।१३१।। इति चतुर्थभेदः ।।

पणफर से आपोक्लिम भावस्थ राशि दुर्बलतर २ बल से न्यून है। इस प्रकार यह तीसरा प्राणबल जानना।।१२९।। यह तृतीय प्राणबल है।। चतुर्थ प्राणबल तुम्हारे सामने कहते हैं। जो राशि पापग्रह युक्त न हो तथा पापदृष्ट भी न हो वह राशि चौथी श्रेणी की बली है।।१३०।। यह हमने चार प्रकार का प्राणबल कहा। इनमें जो राशि प्राणबल से बली हो उसकी प्रथमदशा तथा द्वितीय प्राणबल से युक्त राशि की चौथी दशा, त० से, स ० च० से दशमभाव की दशा जानना।।१३१।। चतुर्थ भेद समाप्त ।।

उदाहरण तथा चक्रः इस कल्पित उदाहरण में आत्मकारक मंगल ही प्रथम प्राण है, द्वितीय शनि प्राण है, तृतीय प्राण शुक्र और चतुर्थप्राण चन्द्रमा है।

अथ चतुर्विधप्राणदशायंत्रम्												
१२ मं०	१	२	१० श०	११	१२	१२ शु०	१	२	९ चं०	१०	११	भा
१ ० ० ० ०	११ ० ० ० ०	११ ० ० ० ०	१२ ० ० ० ०	१२ ० ० ० ०	१ ० ० ० ०	१ ० ० ० ०	११ ० ० ० ०	११ ० ० ० ०	२ ० ० ० ०	१२ ० ० ० ०	१२ ० ० ० ०	वर्ष ० ० ० ०
१९००	१९०१	१९१२	१९२३	१९३२	१९४७	१९४८	१९४९	१९६०	१९७१	१९७३	१९८५	१९९७
१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२

कारकलग्नमाह



अस्या दशाया वर्षाणि

चरदशावदानीतानि

अथ ब्रह्मग्रहाश्रितषष्ठांत्यब्दिकां दशामाह

अधुना संप्रवक्ष्यामि ब्रह्मतामपरां दशाम् ।। तस्याः प्रकारो वै विप्र तवाग्रे गदितो मया ।।३२।।
पूर्वोक्तलक्षणाक्रांते यत्र ब्रह्मग्रहे स्थिते ।। तमारभ्य दशा ज्ञेया षष्ठात्यब्दां समानयेत् ।।३३।।

ओजलग्ने रविश्चंद्रो मंगलादिक्रमेण च ।। यस्य राशिस्थिते ब्रह्मा तद्ग्रहात्षष्ठखेचरः ।।३४।। रवेर्भृगुं विजानीयाच्छिखिनोगुरिति क्रमः ।। षष्ठांतिमसमा विप्र गणनीया यथोक्तकम् ।।३५।। समलग्नेयदा प्राज्ञ ब्रह्मखेटःसमाश्रितः ।। तत्तद्राशितमोराशिपर्यंताब्दसमं नयेत् ।।३६।।

ब्रह्मग्रहाश्रित दशा

अब हम ब्रह्मा नाम के ग्रह के आश्रित दशा कहते हैं। इसका कुछ विवरण प्रथम भी कर चुके हैं।।३२।। प्रथम कहे हुए लक्षणों से युक्त ब्रह्मग्रह जिस राशि में हो उस राशि से यह दशा आरंभ की जाती है।।३३।। राशि यदि विषम हो तो क्रम गणना से सूर्य, चन्द्रादि के समान दशाराशि की गणना करे। ब्रह्मा जिस ग्रह की राशि में हो (फलविचार) उससे छठे ग्रह की राशि से करना चाहिए।।३४।। छठी राशि स्वामी का गणनाक्रम इस प्रकार जाने, जैसे सूर्य का छठा शुक्र है और आगे शनि राहु आदि। और वर्षसंख्या भी सब राशियों में ६–६ वर्ष लेना।।३५।। हे विप्र! जब ब्रह्मग्रह समराशि में हो तो उस लग्नराशि से तमोराशि (सूर्यास्त राशि = सप्तमराशि) सप्तमभाव से दशा आरंभ करना।।३६।।

यद्वा ब्रह्मसमां राशिमारभ्य क्रियते द्विज ।। षष्ठराश्यंतमब्दांश्च संग्राह्यपरक्षकः ।।३७।। दशा ब्रह्मग्रहपरा राशिमारभ्य कीर्त्यते ।। षट्खेटा यत्र पूर्णाश्च भवंति द्विजसत्तम ।।३८।। तावद्धि राशिपर्यन्तं समा ग्राह्याः प्रयत्नतः ।। यत्तत्समायुः संज्ञेयं निर्विशंकं द्विजोत्तम ।।३९।। ओजक्रमेण गणनां समेषु चिंतयेत्क्रमः ।। समोपि सप्तमाच्चेत्तत्तद्राशिर्ब्रह्मणाश्रितः ।। ४०।। ओजब्रह्मग्रहाश्रित्यैतद्ग्रहात्षष्ठमांतकः ।। समाना गणना विप्र पुरा शंभुप्रणोदिता ।।४१।। समे ब्रह्मग्रहाश्रिते सप्तमः षष्ठमान्तकः ।। गणनीया समा ज्ञेया निर्विशंकं द्विजोत्तम ।।४२।।

और दूसरा यह भी पक्ष है कि ब्रह्मग्रहाश्रित राशि से ही दशा आरंभ करना और ६–६ वर्ष ग्रहण करना।।३७।। यह दशा ब्रह्मग्रहाश्रित है, अतः यहीं से आरंभ की जाती है। जिसमें कि ६ वर्ष ही ग्रहराशि के पूर्ण वर्ष होते हैं।।३८।। उस राशि तक राशियों की वर्ष संख्या लेना, जहां तक स्वल्प, मध्य, दीर्घ आयु की अवधि हो।।३९।। ओज=विषम राशि में क्रम से गणना करना और समराशि में ब्रह्माश्रित राशि से सप्तमभाव से (व्युत्क्रम) गणना करना।।१४०।। विषम राशि में ब्रह्माश्रित राशि से अन्तिम राशि पर्यन्त ६ वर्ष के हिसाब से गणना होती है, यह शम्भु कथित है।।१४१।। ब्रह्मग्रह के आश्रित यदि समराशि हो तो सप्तम राशि ही गणना में प्रधान है और सप्तम राशि से ही षष्ठान्तक दशा की गणना करनी चाहिए।।१४२।।

अथ बलविशेषं दर्शयति

लग्नेशाल्लाभभावेशौ लग्न इत्यादितो द्विज ।। स्थातव्यं च पितुः प्राण इत्येवं ब्रह्मणोदितम् ।।४३।। षड्वर्गादिस्तु संबंधः स्थानव्यतिकरो द्विज ।। तथा पूर्वोक्तसंबंधे तस्याः स्पष्टं वदाम्यहम् ।।४४।। ओजलग्नाश्रिते लग्ने तद्राशिगणनाक्रमात् ।। षष्ठस्वाम्यंतरीत्या च समानीया द्विजोत्तम ।।४५।। ब्रह्माश्रितसमे लग्ने सप्तमाद्व्युत्क्रमेणच ।। गणयेत्षष्टिसंख्याह्नि

ह्यब्दानिंह द्विजोत्तम ।।४६।। एकमेकादशे पापे दृष्टियोगे भवत्यपि ।। ग्रहयोगं तथा विप्र प्रबले च व्यतीकरः ।।४७।। रुद्रशूलदशादौ च क्वचित्प्राणो भवत्यपि ।। तदग्रे तुंगादिबलं व्यतिकरार्थचतुर्थकः ।।४८।। तुंगमूलत्रिकोणेषु स्वर्क्षमित्रादिवर्गके।।ग्रहयोगबलप्राप्ताश्चत्वारो द्विजसत्तम ।।४९।। इत्यास्थानव्यतिकरो भेदार्था च चतुर्विधा ।। अथ कारकयोगानां चतुर्द्धा भेद उच्यते ।।१५०।।

ग्रह तथा राशि का बल

लग्न तथा लग्नेश से लाभ राशि और लाभेश के बलाबल विचार से पिता का विचार किया जाता है।।१४३।। ग्रह का बल व्यतिकर षड्वर्गादि सम्बन्ध और पूर्वोक्त सम्बन्ध जानना । इसको स्पष्ट कहते हैं।।१४४।। लग्न यदि विषम राशि में हो तो दशा राशि की गणना क्रम से होती है। और छठे भाव के स्वामी के स्थान तक दशा रखना चाहिए।।४५।। यदि ब्रह्माश्रित राशि सम हो तो लग्न के सप्तम भाव से दशा रखना चाहिए और वर्ष संख्या सब राशियों की ६–६ वर्ष होगी। ग्यारहवें भाव में पापग्रह की दृष्टि या पापग्रह का योग हो तो विघ्न की संभावना होती है।।४७।। रुद्र शूल दशा में किसी भाव में बलवान ग्रह हो तो उसके बल का विचार चार प्रकार से किया जाता है।।४८।। हे मैत्रेय! वे चार प्रकार ये हैं। उच्च में, मूल त्रिकोण में, स्व राशि में, मित्रवर्ग में, इस प्रकार ग्रह योग के चार प्रकार होते हैं।।४९।। इस प्रकार स्थान बल के ४ भेद हुए। चार ही प्रकार कारक योग के भी कहे जाते हैं।।१५०।।

चतुर्धा प्राणसंज्ञेयं पूर्ववद्द्विजसत्तम ।। प्राण इत्युपसंहारः पुरा शंभुप्रणोदितः ।।५१।। पंचम इत्युपपदं केतुपंचमकं शुभम् ।। ओजे क्रमेण गणना समे वा व्युत्क्रमेण च ।।५२।। दशाऽऽनेयाऽब्दसंख्या च पर्यायाष्टक्रमेण च ।। नाथांतेन समाज्ञेया पूर्ववद्द्विजसत्तम ।।५३।। त्रिकं त्रिकं राशिपदमोजे चतुःक्रमेण च।। समे व्युत्क्रमरीत्या च राशेः पदत्रिकं त्रिकम् ।।५४।। क्रमेण पंचमे केतुर्नवमे व्युत्क्रमेण च ।। शुभं फलं न दत्त्वैनं पंचमे शिखि-सौम्यवत् ।।५५।।

इस प्रकार से यह बल जो कि प्राण संज्ञक और जिसका उल्लेख हम पहले कर चुके हैं, उसी को यहां समझना।।५१।। पांचवां एक बल और होता है जिसको 'उपपद' या'केतु पंचम'कहा जाता है। जिस जातक के पंचम भाव में केतु हो उसके लिये यह चर–दशा नाम की दशा कही जाती है। इस दशा में भी विषम राशि हो तो क्रमशः गणना करना और सम राशि में विपरीत क्रम से गणना करनी चाहिए।।५२।। और इस दशा में वर्ष संख्या चरपर्या पहले कहे अनुसार राशि के स्वामी तक जो प्राप्त हो वही जानना, इसका विवरण पहले कह चुके हैं।।५३।। विषम राशि में ३–३ राशियों के ४ विभाग क्रम से होते हैं। और सम राशि में ३–३ राशि के ४ विभाग विपरीत क्रम से होते हैं।।५४।। क्रम गणना और व्युत्क्रम गणना में इस प्रकार समझना चाहिए। जैसे–क्रम गणना से लग्न से पंचम भाव में यदि केतु हो तो व्युतक्रम गणना में वह केतु नवम भाव में समझा जायेगा। विपरीत गणना अशुभ फल कारक और क्रम गणना शुभ फल कारक होती है।।५५।।

पंचम इत्युपपदं पदारूढे विचिंतयेत् ।। ओजक्रमेण गणना समे लग्ने च व्युत्क्रमः ।।५६।। नवमे संस्थिते केतावारूढ-राशितो द्विज ।। विषमे पूर्ववत्तर्हि क्रमेण पंचमे स्थिते ।।५७।। शुभे फलप्रदातारः पंचमे चरसंज्ञकाः ।। केतोर्दशायां वै पापा ददत्येवं शुभ फलम् ।।५८।। ग्रहनवांशकरीत्या च समानीतं द्विजोत्तम।। चरनवांशाब्दसंज्ञेयं भावे बलद्वितीयकम् ।।५९।।

पंचम भाव जैसे लग्न से होता है, इसी प्रकार लग्न के आरूढ पद से जो पंचम राशि हो उससे भी पूर्वोक्त प्रकार के अनुसार विचार किया जाता है। उस भाव की दशा में भी विषम राशि में क्रम गणना और सम राशि में विपरीत गणना होती है।।५६।। यदि लग्न से नवम भाव में केतु हो अथवा आरूढ राशि से नवम भाव में केतु हो तो भी विषम राशि में पूर्ववत् क्रम से गणना और सम राशि में विपरीत गणना होती है।।५७।। पंचम भाव में चर राशि हो तो शुभ फल देती है। तथा केतु की दशा में भी पंचम भाव में पापग्रह होने पर भी शुभ फल होता है।।५८।। ग्रह के नवांश की रीति से तथा राशि की नवांश रीति से दशा में अन्तर्दशा का विचार करना चाहिए। और इस दशा का नाम 'चर–नवांश' वर्ष दशा है।।५९।।

**स्वस्वाम्यादि दशा ग्राह्या फलादेशाय हेतवे । स्थिरनवांशे वर्षाणि राशिं प्रति नवैव हि ।।१६०।।
चरराशिनवांशाब्दे मासान्येव चरस्थिरा ।। विधेयेद्द्विफलार्थाय बले ग्राह्यं द्विजोत्तम ।।६१।।
यस्मिन्काले यस्य राशेर्यदा सा च चरस्थिरा ।। पर्यायस्तद्दशायां च स राशिर्द्वारमुच्यते ।।६२।।
लग्नाद्यावद्दूरं स्याद्द्वारराशिर्द्विजोत्तम ।। तस्माच्च तावद्दूरो हि बाह्यराशिर्भवत्यपि ।।६३।।
चरानुक्तितमार्गः स्यादष्टषष्ठादिका स्थिरे ।। उभये कंटका ज्ञेया लग्नपंचमभाग्यतः ।।६४।।
चरस्थिरद्विःस्वभावे ओजेषु प्राक्क्रमोत्क्रमः तेषु च त्रिषु युग्मेषु ग्राह्या व्युतक्रमतोऽखिला ।।६५।।
एवमुल्लिखितो राशिः पाकराशिरिति स्मृतः ।। स एव भोगराशिश्च पर्याये प्रथमे स्थिरः ।।६६।।
लग्नाद्यावत्तिथःपाकः पर्याय इव दृश्यते ।। तावन्मात्रं ततोभोगः पर्याये तत्र गृह्यताम् ।।६७।। तदिद चरपर्यायस्थिरपर्याययोद्वयोः ।। त्रिकोणाख्यदशायां च पापभोगप्रकल्पनम् ।।६८।।**

इस नवांश दशा में भी राशि के स्वामी से दशा आरंभ होती है। और महादशा के वर्ष प्रति राशि ९ जानने चाहिए।।१६०।। हे मैत्रेय! चर राशि महादशा के नवांश के अन्तर में विशेष फल जानने के लिये आधा भाग चर राशि और आधा भाग स्थिर राशि का जानना चाहिए।।६१।। जिस समय में जो आयु (अल्प, मध्य, दीर्घ) प्राप्त हुई हो, उस दशा की उस आयु के लिये वह 'द्वार राशि' है।।६२।। लग्न से जितने स्थान संख्या पर द्वार राशि हो, उतनी ही संख्या और आगे 'बाह्य राशि' होती है।।६३।। राशि दशा में चर राशि के लिये कोई विशेष स्थान कथित नहीं है। स्थिर राशि के लिये षष्ठ और अष्टम स्थान कथित है। और द्विस्वभाव राशि में केन्द्र तथा त्रिकोण भाव कहे गये हैं।।६४।। ओज राशियों के चर, स्थिर, द्विस्वभाव राशि में पहले कहे अनुसार पहले क्रम से, पीछे व्युत्क्रम से गणना होती है। और शेष की ३–३ राशियों में विपरीत गणना होती है।।६५।। इस प्रकार बताई हुई राशि दशा की राशि है और अपने पयार्य में पहली नवांश की भी राशि है।।६६।। लग्न से जितनी संख्या पर द्वार राशि हो भोग में उस तिथि की उतनी ही संख्या पर बाह्य दशा जानना।।६७।। यह

विचार चरपर्या तथा स्थिरपर्या दोनों दशाओं में किया जाता है, उसी प्रकार उनकी त्रिकोण राशि की दशा में भी करना चाहिए।।६८।।

तयोर्द्वयोः समालोक्य योगं पापेन विप्र तम् ।। पापग्रहदशायां च वंध्यादि परिचिंतयेत् ।।६९।। पापयोगे च पापाद्ये देहपीडा मनोव्यथा ।। नृपाद्भीतिर्महाक्लेशो भवति द्विजसत्तम ।।१७०।। यस्मिन् राशौ पापभोगः पापाश्चेत्पापयोगतः ।। स्वर्क्षे गुरुसमीपस्थे पापयोगो न बाधते ।।७१।। शुभखेटाश्च सर्वे वा मध्ये कोपि ग्रहो द्विज ।। समीपे स्वर्क्षतुंगस्थे पापयोगो न बाधते ।।७२।। शुभे शुभफलं वाच्यं सा दशा सर्वशोभना।। राज्यलक्ष्मीप्रदात्री च प्रतिष्ठा गौरवं सुखम् ।।७३।। बलिनोः शुक्रशशिनोःकेंद्राख्यानुदशां नयेत् ।। पुरुषश्चेतसो नेयाः स्त्रियश्चेद्दर्पणं नयेत् ।।७४।। आदौ शुक्रादितो नेया द्वितीयं सूर्यतो द्विज ।। कुजादितस्तृतीये च प्रकारं सर्वतो नयेत् ।।७५।।

इन दोनों दशाओं में यदि पापग्रह का योग हो तो उसके फल का विचार करना चाहिए।।६९।। पापग्रह का योग अथवा दृष्टि होने से देह में पीड़ा, मन में चिन्ता, राज से भय तथा महान् क्लेश होता है।।१७०।। और जिस राशि में पापग्रहों का योग और दृष्टि तो हो, किन्तु गुरु स्वगृही हो तो पापग्रह की बाधा नहीं होती है।।७१।। अथवा सब शुभग्रह हों, स्वराशि और उच्च के हों, तो राशि गत पापग्रह का योग बाधा नहीं देता।।७२।। शुभग्रह के योग से शुभफल कहना। वह दशा सब प्रकार से अच्छी है। राज्यलक्ष्मी की देनेवाली, प्रतिष्ठा, गौरव और सुख देनेवाली होती है।।७३।। शुक्र और चन्द्रमा बलवान् हों तो केन्द्र दशा से विचार करना चाहिए। पुरुष का लग्न से स्त्री का सप्तम स्थान से विचार करना चाहिए।।७४।। दशा में पहले शुक्र से द्वितीय वर्ग में सूर्य से और तृतीय वर्ग में मंगल से विचार करना।।७५।।

क्रमव्युत्क्रमभेदेन भृगुभानुकुजान्नयेत् ।। सर्वेषां फलमित्येवं यथा शंभुप्रणोदितम् ।।७६।। लग्नसप्तमयोर्मध्ये बली चैकः प्रकल्प्यताम् ।। केंद्रे पणफरापोक्ले दशार्थे द्विजसत्तम ।।७७।। केंद्रपथमतो नेयात्पंचमात्पणफरे स्थिते ।। नवमाच्चापोक्लिमे नेयाद्दशारंभो ह्ययं क्रमात् ।।७८।। ओजे समप्रभेदेन पुरुषः स्त्री प्रकल्पयेत् ।। लग्नात्तद्विमुखाद्विप्र दशाद्वादशराशिषु ।।७९।। चरे पूर्वप्रकारेण स्थिरे षष्ठादिकेन च ।। यावद्द्वादशभावानां भेदं दत्त्वारिभाषितम् ।।१८०।। चरे प्रकारमेवैकं स्थिरे षष्ठादितो द्विज ।।८१।। चरपर्या दशा प्रोक्ता पूर्वाख्येयं द्विजोत्तम ।। स्थिरपर्यादितः प्रोक्ता सप्ताष्टनववर्षतः ।।८२।।

इस प्रकार शुक्र, सूर्य और मंगल से क्रम और व्युतक्रम भेद से सभी भावों का पल विचारना चाहिए।।७६।। लग्न और सप्तम में जो ग्रह बली हो, वह ग्रह यदि केन्द्र में हो तो लग्न से आरम्भ करना, पणफर में हो।।७७।। तो पंचम भाव से आरंभ करना। और आपोक्लिम स्थान में हो तो नवम भाव से आरम्भ करना।।७८।। ओज राशि हो तो पुरुष के लिये सम राशि हो तो स्त्रियों के लिये। लग्न से और सप्तम भाव से चर दशा स्पष्ट

करना।।७९।। चर दशा में पूर्व प्रकार से दशा लगाना। स्थिर दशा में षष्ठादि क्रम से दशा लगाना। इस प्रकार बारहवों भाव की दशा लगाना।।१८०।। चर राशि में एक ही प्रकार है और स्थिर राशि में षष्ठादि प्रकार है।।८१।। हे द्विजोत्तम! इस प्रकार यह चरपर्या दशा कही गई और ७।८।९ वर्ष के प्रमाण से स्थिरपर्या दशा कही गई।।८२।।

उदाहरण तथा चक्र–

कल्पना किया कि–बुध ब्रह्मग्रह है अतः उपर्युक्त नियमानुसार बुध के स्थान से दशा आरंभ की और सब भावों के ६–६ वर्ष योग करके चक्र का निर्माण किया गया।

अथ ब्रह्मदशायंत्रम्

१०	११	१२	१	२	३	४	५	६	७	८	९	भावाः
बु०		के०		बृ०		सू०		शु०		चं०		
६ ० ० ० ०	६ ० ० ० ०	६ ० ० ० ०	६ ० ० ० ०	६ ० ० ० ०	६ ० ० ० ०	६ ० ० ० ०	६ ० ० ० ०	६ ० ० ० ०	६ ० ० ० ०	६ ० ० ० ०	६ ० ० ०	७२ वर्षा- णि
१९००	१९०६	१९१२	१९१८	१९२४	१९३०	१९३६	१९४२	१९४८	१९५४	१९६०	१९६६	१९७२
१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२

अथ केंद्रादिदशामाह

अथ केंद्रदशारीत्या भेदानाह द्विजोत्तम ।।८३।। प्रथमे चरराशौ च लग्ने वा सप्तमेऽपि वा ।। बलवद्राशिमारभ्य उक्तमार्गे दशाक्रमः ।।८४।। विषमे समभेदाच्च प्रथमे प्राक्क्रमोत्क्रमः ।। प्रथमादि द्वितीयादि द्वादशानां क्रमेण च ।।८५।। संप्राक्क्रमोक्तपदमप्यनुज्झितक्रमोपरि ।। दशा द्वादशराशीनां क्रमव्युत्क्रमभेदतः ।।८६।। स्थिरराशौ द्वितीयेपि लग्ने वा सप्तमे द्विज ।। षट्षष्ठादि च रीत्या च दशारंभः प्रकाशयेत् ।।८७।।पदाच्च पूर्वमुक्तेन क्रमव्युत्क्रमभेदतः।। क्रमाद्बृषे वृश्चिके च व्युत्क्रमात्कुंभसिंहयोः ।।८८।। पृथक्क्रमेण तृतीयद्विस्वभावदशा द्विज ।। लग्ने वा सप्तमे वापि बलवाश्च विलोकयेत् ।।८९।। चतुष्टकेन्द्रादिदिशा लग्नपंचमभाग्यतः ।। केंद्रे लग्ने ततो नेयात्पणफरे पंचमादितः ।।९०।। आपोक्लिमे भाग्यतश्च दशारंभो द्विजोत्तम ।। नव नव समा ग्राह्या मैत्रेयस्पष्ट भाषिते ।।९१।।

केन्द्रादिदशा

अब केन्द्रदशा की रीति से दशा के चर, स्थिर, तथा द्विस्वभावराशिदशा के भेद कहते है (महादेवजी ने) उनमें प्रथम चरराशि दशा में लग्न में चर राशि हो तो लग्न और सप्तम में जो बलवान् राशि हो, उससे दशा का आरंभ करे।।८३।।८४।। (लग्न या सप्तम भाव की चरराशि जो बलवान् हो वह) यदि विषम हो तो क्रम गणना से और सम हो तो विपरीत क्रम से दूसरी, तीसरी आदि १२ राशियों तक दशा होती है।।८५।। प्रथम कहे हुए क्रम का उल्लंघन नहीं करना।।१२।। राशियों की दशा क्रम तथा विपरीतक्रम से ही जानना।।८६।। (अब स्थिरराशि की दशा कहते हैं) द्वितीय पर्याय में लग्न में स्थिर राशि हो तो लग्न या सप्तम में जो बलवान् हो, लग्न से दशा का आरंभ होकर उसके बाद उससे छठे भाव की दशा, बाद उससे छठे भाव की दशा होती है।।८७।। पहिले कही हुई रीति से सीधे और उलटे क्रम से दशा रखना। वृष और वृश्चिक लग्न हो तो क्रम से और सिंह कुंभ हो तो उलटे क्रम से दशा की गणना करना।।८८।। (द्विस्वभावराशि की दशा) द्विस्वभावराशि यदि लग्न में हो तो लग्न सप्तम में जो बलवान् हो उससे देखना।।८९।। केंद्र के चार भावों की दशा इस प्रकार रखना कि–प्रथम लग्न आदि चारों केंद्र भावों की, बाद पणफर स्थानों में से केवल एक पंचमभाव की उसके बाद पड़नेवाले तीन केन्द्र स्थानों की।।१९०।। और बाद आपोक्लिम स्थानों में से प्रथम नवमभाव की और बाद में पड़नेवाले तीन केन्द्र के भावों की दशा होती है। और सब राशियों की दशा में वर्ष संख्या ९–९ ही होती है।।९१।।

अथ कारककेन्द्रदशामाह

सूर्यादिनवखेटाश्च आयुर्दायनवांशकान् ।। नवभिर्नवभिर्वर्षैः कारककेन्द्रादिका दशा।।९२।। षां नवांशकानां च ह्यब्दानां द्विजसत्तम ।। कारकेंद्रादि संस्थाप्य क्रमात्पूर्वं समानयेत् ।।९३।। आदौ केंद्रस्थराशिश्च तस्याधिपक्रमेण च ।। नवभिर्नवभिर्वर्षैः कारककेंद्रादिसंस्थिता।।९४।। आदौ केन्द्रस्थराशिश्च तस्याधिपक्रमेण च ।। बलाधिक्येन प्रथमस्ततो दुर्बलसंज्ञकः ।।९५।। प्रतिभे नव वर्षाणि कारकाश्रितराशितः ।। जन्मसंपद्विपत्क्षेमप्रत्यरीसाधको बधः ।।९६।। मैत्रातिमैत्रमित्ये- वं तत्तदंतर्दशां नयेत् ।। स्वकेंद्रस्थाधिपानां च सूर्यादीनां ग्रहाद्द्विज ।।९७।। कारकलग्ने समालोक्य लग्नसप्तमयो र्बली ।। तदारभ्य क्रमेणैवं क्रमव्युत्क्रमभेदतः ।।९८।। गृहकारकपर्यंतं राशिसंख्या दशाब्दिका ।। ततः कारककेंद्रादिविभागेन बली भवेत् ।।९९।।

कारककेन्द्रदशा

सूर्यादि नवग्रह इस कारककेन्द्रदशामें ९–९ वर्ष की आयुरूप दशा तथा नवांशरूप से अन्तरदशा देने वाले हैं।।९२।। उन ग्रहों तथा नवांशों की वर्ष दशा पहिले स्थापित करनी चाहिए।।९३।। प्रथम केन्द्रस्थ राशि अपने स्वामी ग्रह के क्रम से ९–९ कारककेन्द्रदशामें लगानी चाहिए।।९४।। केन्द्रराशियों में अपने स्वामी के क्रम से जो राशि बलवान् होगी उसकी दशा प्रथम रखी जायगी, उसके बाद उससे दुर्बल की (और उसके बाद उससे दुर्बल की) ।।९५।। प्रति राशि के ९–९ वर्ष होते हैं, उन नौ वर्षों की अन्तरदशा में जन्म, सम्पत्, विपत्, क्षेम, प्रत्यरि, साधक, बध।।९६।। मैत्र, अतिमैत्र इन तारानामों से अन्तर्दशा रखना,

यह अन्तरदशा अपने केन्द्रस्वामी सूर्य आदि ग्रह की कही जाती है।।९७।। इस दशा के आरंभ करने में भी लग्न और सप्तमभाव में जो बलवान् हो उससे विषम तथा सम राशि के अनुसार क्रम और व्युत्क्रम भेद से दशा रखनी होती है।।९८।। अपने स्वामी तक यह दशा केन्द्र के स्थानों में बलवान् ग्रह के विभाग से रखी जाती है।।९९।।

आदौ केंद्रस्थितानां च स्थितानां पणफरे ततः ।। आपोक्लिमे स्थितानां च ततोपि बलवद्द्विज ।।२००।। बलाढ्यः प्रथमे विप्र क्रमेण सर्वदुर्बला ।। केन्द्रादिस्थग्रहाणां च दशाब्दानयनं कृतम् ।।१।। खेटात्कारकपर्यन्तं राशिसंख्याप्रमाणतः ।। एवं दूरं महाप्राज्ञ नवत्यब्दान्नयेत्क्रमात् ।।२।। यथा कारकग्रहस्याब्दास्तथा कारकयुक्तकाः ।। तत्तद्ग्रहाणामब्दानामानेयं द्विजसत्तम ।।३।। एवं स्थिरदशारम्भात्स्थानं दर्शयति द्विज ।। अंतर्दशाब्दमानेयं ह्यर्क भानां क्रमेण च ।।४।। लग्नादिचतुः केंद्रेषु वैषम्याधिके वै द्विज ।। तद्राशेः स्थितिमारभ्य ह्येकाब्दे न क्रमेण च ।।५।। चतुःकेंद्रेषु विप्रेंद्र विषमातिबलाधिका ।। दशाप्रदत्वात्सराशिः कारकं पर्यवस्थितः ।।६।। अंतर्दशां तदारभ्य द्वादशराशिषु द्विज ।। प्रतिराश्येक मब्दं च सर्वे स्पष्टाधिपाः क्रमात् ।।७।।

प्रथम केन्द्रस्थित राशियों की अपने बलाबल के अनुसार बाद पणफर राशियों की, पश्चात् आपोक्लिम राशियों की दशा रखनी चाहिए।।२००।। हे विप्र! सबसे बली राशि की प्रथम इसी तरह उससे दुर्बल और उससे दुर्बल ग्रह की अर्थात् केन्द्र के चारों भावों में ग्रहों के बलाबल से अन्त में (चौथी) सबसे दुर्बल ग्रह की दशा होगी।।१।। पूर्वोक्त प्रकार से ग्रहों से बलका विचार करते हुए शेष तक १२ भावों की दशा रखना।।२।। जिस कारक ग्रह के वर्ष दशा में रखे गये हैं, वे वर्ष उसी दशा में उसी ग्रह के रख कर (समझकर) राशि के वर्ष अपने स्वामी (कारक) के भी समझना।।३।। इस प्रकार अपने २ भाव की दशा स्थिर होने पर अन्तर्दशा भी १२ हों भावों की रखना।।१४।। लग्न आदि ४ केन्द्र स्थानों में जो बलाधिक राशि है प्रथम उसीसे अन्तर्दशा भी आरंभ होगी। भोग प्रमाण १–१ वर्ष का होगा।।५।। हे विप्रेन्द्र! चारों केन्द्रस्थानों में विषम राशि भी बल में अधिक है अतः प्रथम दशादात्री होनेसे कारककेंद्र दशा में स्थित है। अर्थात् अपने विषमत्व बल से ही उसका इस दशा में महत्व है।।६।। १२ राशियों में अपने २ स्पष्टक्रम से प्रतिराशि १–१ वर्ष देकर अन्तर्दशा रखनी चाहिए।।७।।

एवं महादशाब्दानां द्वादशराशिषु भ्रमेत् ।। तदनंतर्दशा ज्ञेया भानू राश्योपरिभ्रमन् ।।८।। नवांशाख्या दंशाब्दानामित्यनुवृत्यमेव च ।। आदिराशिर्नवाब्दानां संग्राह्यो द्विजसत्तम ।।९।। एवं केंद्रबलाधिक्यमारभ्य प्रथमा दशा ।। दुर्बलानां च सर्वेषामब्दानामानयेत्क्रमात् ।। १०।।

इस प्रकार महादशा के १२ राशियों में तत्तद् ग्रह की अन्तर्दशा भी भ्रमण करती है (होती है)।।८।। राशि के ९ वर्षों में अन्तर की अनुवृत्ति से आदि राशि ही अपने २ नवांश वर्षों की स्वामिनी होती है।।९।। पूर्वोक्त प्रकार से इस प्रकार बलाबल विचार से केन्द्र में बलाधिक प्रथम होती हुई अन्त तक १२ राशियों की दशा होती है ।।८-१०।।

उदाहरण–उपर्युक्त नियमानुसार कारकभावों में लग्नसप्तम भावों में से बलवान् होने से सप्तम भाव से दशा आरंभ करके प्रथम क्रमशः ७।१०।१।४ इन केन्द्रभावों की, पश्चात् ८।११।२।५ इन पणफर भावों की और इसके बाद ९।१२।३।६ इन आपोक्लिम भावों की दशा रखी गई। और वर्ष संख्या सबकी ९–९ यह समान है। पश्चात् संम्वत् और जन्मकालीन सूर्य नीचे रखना।

अथ केंद्रादिदशायंत्रम्												
७	१०	१	४	८	११	२	५	९	१२	३	६	भावाः
९ ० ० ० ०	९ ० ० ० ०	९ ० ० ० ०	९ ० ० ० ०	९ ० ० ० ०	९ ० ० ० ०	९ ० ० ० ०	९ ० ० ० ०	९ ० ० ० ०	९ ० ० ० ०	९ ० ० ० ०	९ ० ० ० ०	१०८ ० ० ० ०
१९ ००	१९ ०९	१९ १८	१९ २७	१९ ३६	१९ ४५	१९ ५४	१९ ६३	१९ ७२	१९ ८१	१९ ९०	१९ ९९	२०००
१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२

अथ कारकग्रहदशानयनमाह

लग्नाद्वा सप्तमाद्विप्र गणनीयः क्रमोत्क्रमात् ॥ कारकावधिराशिश्च संख्या यंत्रात्मिकाः समाः ॥११॥ कारकग्रहदशा विप्र अन्येषां तु व्यतिक्रमः॥ ग्रहाः कारकपर्यंतं विषमसमविरोधतः ॥१२॥ क्रमव्युत्क्रमभेदेन गणनीयं द्विजोत्तम ॥ संख्यासमा इहाब्दाश्च पुरा शंभुप्रणोदिताः ॥१३॥ कारकयुग् ग्रहाणां तु कारकतुल्य–संख्यया ॥ संग्राह्याश्च समा ज्ञेयाः पूर्वोक्तेन दशाक्रमः ॥१४॥ लग्नात्कारकपर्यंतं संख्यां न्यस्य दशा भवेत् ॥ गणनीयं प्रयत्नेन समालब्धदशां नयेत् ॥१५॥ तद्युक्तानां तुल्याब्दाः प्रत्येकं स्युर्दशाक्रमात् ॥ उभयोरधिकं संख्या कारकस्य दशासमाः ॥१६॥ कारकस्य युतस्यादौ तत्केन्दादिस्थितास्ततः॥ दशाः क्रमेण विज्ञेयाः शुभाशुभफलप्रदाः॥ १७॥ पूर्वं फलं प्रवक्ष्येऽहं दशायास्तु द्विजोत्तम ! स्वामिना बलवान् विप्र तस्याधिकशुभं फलम् ॥१८॥

कारक ग्रहदशा

लग्न तथा सप्तमभाव में जो बलवान् हो उससे विषम राशि होने से क्रम से और समराशि होने से

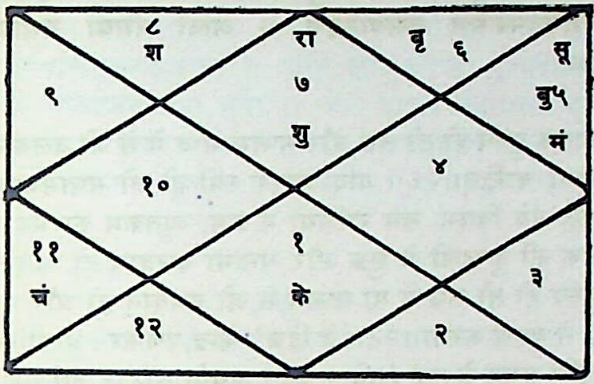
उलटे क्रम से आत्मकारक ग्रह जिस स्थान में हो वहां तक गिन कर वर्षसंख्या रखना चाहिए ॥११॥ हे विप्र! इस कारक ग्रह की दशा में अन्य दशाओं से भेद है। ग्रह या राशि की दशा के वर्ष विषम और सम राशि में परस्पर विपरीत क्रम से वर्ष संख्या ग्रहण की जाती है ॥१२॥ ऐसा ही पहिले भगवान शम्भु ने कहा है कि–विषम, सम राशियों में क्रम तथा व्युत्क्रम भेद से वर्षों की संख्या लेना चाहिए॥१३॥ और आत्मकारक के साथ जो ग्रह हों उनकी दशा के वर्ष भी आत्मकारक के बराबर ही होते हैं॥१४॥ लग्न से आत्मकारक ग्रह तक गिनकर (विषम, सम में क्रम–व्युत्क्रमभेद से) जो संख्या हो वह आत्मकारक की दशा होती है ॥१५॥ आत्मकारक युक्त ग्रह की आत्मकारक के तुल्य ही जानना। दोनों की संख्या अधिक हो तो अधिक और न्यून हो तो न्यून दशा जानना ॥१६॥ आत्मकारक से युक्त होकर केन्द्रादि शुभस्थान में होने से शुभफल एवं इसके विपरीत अशुभ फल होता है ॥१७॥ हे द्विजोत्तम! इस दशा का फल हमने पहिले कहा है। जिस दशा का स्वामी शुभ और बलवान् होता है, उस दशा का अधिक शुभ फल होता है ॥१८॥

कारकचक्रम्						
मं	चं	सू	बु	श	बृ	शु
आत्म–कारकः	अमात्य–कारकः	भ्रातृ–कारकः	मातृ–कारकः	पुत्र–कारकः	ज्ञाति–कारकः	दारा–कारकः

उदाहरण–उपर्युक्त चक्र में अंशानुक्रम से कारक दिखाये गये हैं। इसी क्रम से दशा चक्र में दशा रखी गई है। लग्न से आरंभ करके जितनी संख्या पर ग्रह हो उतने वर्ष समझना चक्र में स्पष्ट है।

कारकदशाचक्रम्							
मं०	चं०	सू०	बु०	श०	बृ०	शु०	ग्रहाः
११ ० ० ०	५ ० ० ०	११ ० ० ०	११ ० ० ०	२ ० ० ०	१२ ० ० ०	१ ० ० ०	वर्षाणि
२०१४	२०२५	२०३०	२०४१	२०५२	२०५४	२०६६	सम्वत् २०६७
४ २३ २८ १८	४ २३ २८ १८	४ २३ २८ १८	४ २३ २८ १८	४ २३ २८ १८	४ २३ २८ १८	४ २३ २८ १८	सूर्यः

जन्मलग्नम्



अथ मंडूकदशामाह

मंडूक इति विख्यातां त्रिकूटाख्यां दशां द्विज ।। सप्ताष्टनवसंख्याश्च क्रमाब्दा स्थिरदशा इति ।।१९।। चरस्थिरद्विस्वभावे सप्ताष्टनवसंख्यया। अब्दांस्तु पूर्वरीत्या च ह्यानीय च दशा स्थिरा ।।२०।। तद्राशेश्चाब्दकूटश्च घटितत्वाद्द्विजोत्तम ।। चरस्थिरद्विस्वभावानां त्रिकोणर्क्षं प्रवर्तते ।।२१।। क्रमेण प्रोक्तरीत्या च प्रवृत्तत्वात्त्रिकूटका ।। मंडूकेति समाख्याता पुरा शंभुप्रणोदिता ।।२२।। केंद्रात्पणफराच्चैवापोक्लिमलग्नपंचतः ।। क्रमेणभाग्यादिति च त्रिकोणाख्या च पूर्ववत् ।।२३।। त्रिकूटघटितत्वाच्च केंद्रादिति द्विजोत्तम समुद्र घटितत्वाच्च दशा स्थूला त्रिकूटका ।।२४।। वैषम्याद् यदि विप्रेन्द्र लग्नसप्तमयोस्तथा ।। मध्ये बलवती राशिस्तमारभ्य प्रवर्तते ।।२५।।

मंडूक दशा

मंडूकदशा नाम से प्रसिद्ध, तीन समूहवाली (अर्थात् प्रथम केन्द्र से, द्वितीय पर्याय में पणफर से, तृतीय पर्याय में आपोक्लिम से होने वाली है) अतः त्रिकूट नामवाली दशा है। इसमें ७,८,९ वर्ष क्रम से होने से स्थिर दशाओं की श्रेणी की है।।१९।। चर, स्थिर, द्विस्वभाव राशियों में ७,८,९ वर्ष संख्यायुक्त पूर्व रीत्यनुसार रखना चाहिए ।।२०।। तत् तत् राशि के वर्ष निश्चित होने से प्रथम केन्द्र से पश्चात् त्रिकोण ५।९ से यह दशा प्रवृत्त होती है।।२१।। क्रम से केन्द्र से त्रिकोण में प्रवृत्त होने से 'त्रिकूटदशा' अथवा मंडूक दशा कही गई है।।२२।। अथवा दूसरे शब्दों में प्रथम केन्द्र से और बाद फणफर से पश्चात् आपोक्लिम से लग्न, पञ्चम, नवम भावों से प्रवृत्त होने से भी 'त्रिकूट' संज्ञा सार्थक है।।२३।। तीन समूह– घटित (युक्त) होने से तथा हे द्विजोत्तम! यह दशा ४–४ स्थानों के तीन कूट (समूह) युक्त होने से भी 'त्रिकूटा' है।।२४।। हे विप्रेन्द्र! यदि लग्न तथा सप्तम भाव में विषमराशि हो तो उनमें जो बलवती राशि हो उसी से यह दशा आरंभ होती है।।२५।।

पुंसो जातकवान् विप्र लग्नसप्तमयोर्द्वयोः ।। बलाढ्येन दशा ज्ञेया पूर्वोक्तेन क्रमेण च ।।२६।। स्त्रीजातकवती विप्र बलवत्सप्तमा दशा ।। आनीय पूर्वरीत्या च पुनरुक्तं प्रणोदितम् ।।२७।।

बलिनौ शुक्रशशिनौ ज्ञेया मंडूकका दशा ।। पुरुषश्च ततो नेयात्स्त्री चेद्दर्पणतो नयेत् ।।२८।।
केंद्रे पणफराच्चापोक्लिमक्रमेण बलवान्द्विज ।। आदौ रीत्या दशाऽऽनेया प्रतिराशि नवाब्दिका ।।२९।।

हे विप्र! यदि जातक पुरुष हो तो लग्न और सप्तम भाव में से जो बलवान् राशि हो उससे दशा का आरंभ करना चाहिए।।२६।। यदि जातक स्त्री हो तो सप्तमभाव से ही दशा का आरंभ होगा। पूर्व कहे गये विषम, सम राशियों में क्रम, व्युतक्रम का भेद पुनः याद दिलाते हैं।।२७।। जिस जातक की कुण्डली में शुक्र और चन्द्रमा बलवान् हों, उनके लिए यह मंडूक दशा कही गई है। पुरुष हो तो लग्न से या सप्तम से, जो बलवान् हो और स्त्री जातक हो तो दर्पण (सप्तमभाव) से ग्रहण करना।।२८।। हे द्विज! केन्द्र, पणफर, आपोक्लिम क्रम से प्रथम कही रीति से प्रतिराशि समूह के नव (नये २ वर्ष) अर्थात् ७।८।९ वर्ष संख्यारूप भिन्न भिन्न संख्यावाली यह दशा है। (यहां 'प्रतिराशि नवाब्दिका'' इस पद का 'हर एक राशि के ९–९ वर्ष' यह अर्थ नहीं करना, क्योंकि पूर्वापर विरोध होगा। प्रथम के २१९।२२० संख्यक श्लोकों में दो बार ७,८,९ की वर्ष संख्या कह चुके हैं, तब अकस्मात् विरुद्ध कैसे कहते। अतः 'नवाब्दिका' पदको 'नवनवाब्दिका' पूर्व पदलोपी मानकर अर्थ करना ही संगत है। प्रति राशि नव = नवीन २ अर्थात् विभिन्न वर्ष लेना)।

अथ मण्डूकदशाचक्रम्

१	५	९	२	६	१०	३	७	११	४	८	१२	भावाः
७ ० ० ० ०	८ ० ० ० ०	९ ० ० ० ०	८ ० ० ० ०	९ ० ० ० ०	७ ० ० ० ०	९ ० ० ० ०	७ ० ० ० ०	८ ० ० ० ०	७ ० ० ० ०	८ ० ० ० ०	९ ० ० ० ०	० ० ० ० ०
१९ ००	१९ ०७	१९ १५	१९ २४	१९ ३२	१९ ४१	१९ ४८	१९ ५७	१९ ६४	१९ ७२	१९ ७९	१९ ८७	००
१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२	० ० ० ०

अथ शूलदशामाह

दशा शूलं प्रवक्तव्यं फलं निर्याणराशितः ।। प्रवक्ति सप्तमाद्विप्र निर्देशे शूलमात्रतः ।।३०।। माहेश्वरर्क्षादिदशानिर्याणस्थानशूलभम् ।। बलेन शूलं संग्राह्यं मृत्युश्चाथ द्विजोत्तम ।।३१।। दशानेकविधा विप्र सप्ताष्टनवभिः सदा ।। अत्र ग्राह्या महाप्राज्ञ शूले निर्याणनिश्चितम् ।।३२।। सर्वायुःपाकमारभ्य राशौ च विषमे द्विज ।। लग्नात्प्रवृत्ति विज्ञेया सप्ताष्टनवभिः समाः ।।३३।। समे तु सप्तमाद्विप्र नग नाग नवाब्दिकाः ।। दशामारभ्य संग्राह्यं निर्विशंकमिदं क्रमात् ।।३४।।

शूलदशा

शूलदशा के निर्देश (कथन) में निर्याण (मृत्यु) राशि के सप्तमराशि से यह दशा तथा फलनिर्देश कहा जाता है।।२३०।। पूर्वोक्त माहेश्वर अथवा रुद्रग्रह की राशि से निश्चित हुआ जो मृत्युस्थान उससे शूलराशि जानी जाती है। बलाबलविचार से इस शूलदशा में मृत्यु का निर्णय किया जाता है।।३१।। इस शूलदशा के यद्यपि अनेक प्रकार हैं। तथापि मृत्युनिर्णय के लिए ७,८,९ वर्ष वाली ही ग्रहण करना।।३२।। इस सम्पूर्ण दशा के आरंभ करने में लग्न विषम हो तो लग्न से क्रम से ७।८।९ वर्ष रखना।।३३।। और लग्न में समराशि हो तो सप्तम भाव से दशा का आरंभ करना और वर्ष संख्या ७।८।९ क्रम से रहेगी। इस प्रकार से इस दशा को ग्रहण करना ।।३४।।

उदाहरण–चक्र में स्पष्ट है।

अथशूलदशाचक्रम्												
६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४	५	यो०
९ ० ० ० ०	७ ० ० ० ०	८ ० ० ० ०	९ ० ० ० ०	७ ० ० ० ०	८ ० ० ० ०	९ ० ० ० ०	७ ० ० ० ०	८ ० ० ० ०	९ ० ० ० ०	७ ० ० ० ०	८ ० ० ० ०	९६ ० ० ० ०
१९००	१९०९	१९१६	१९२४	१९३३	१९४०	१९४८	१९५७	१९६४	१९७२	१९८१	१९८८	१९९६
१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२

अथ नक्षत्रदशामाह

नक्षत्रायुर्महाप्राज्ञ पूर्णमग्रे प्रभाषितम् ।। विंशोत्तरी पंचधा च द्विधा चाष्टोत्तरी मता ।।३५।। मनुवर्गोपरि दशा सर्वेषां चिंतयेद्द्विज ।। ततो निर्याणमालेख्यं निर्विशंकं भविष्यति ।।३६।।

अथ योगार्द्धदशामाह

चरस्थिरदशा विप्र यं च योगं समाचरेत् ।। तस्यार्धं च समायुर्दा योगार्द्धाख्या तु सा दशा ।।३७।। लग्नसप्तमयोर्मध्ये चिंतयेत्तु बलाश्रयम् ।। लग्ने बलयुते लग्नाद्दशारंभ प्रकाशयेत् ।।३८।। तस्मात्सप्तमवीर्याढ्यं ।। दशारंभं प्रकल्पयेत् ।। पुंसां स्त्रीजातकं वक्ष्ये क्रमव्युतक्रमभेदतः ।।३९।। बलिनस्तु दशाऽऽनेया राशेर्हि शशिशुक्रयोः ।। स्त्रीचेद्दर्पणतो नेया पुरुषश्च ततो नयेत् ।।४०।।

नक्षत्र दशा

हे महाभाग! नक्षत्र द्वारा प्राप्त होनेवाली ५ प्रकार की विंशोत्तरी दशा–अन्तर्दशा, प्रत्यन्तर्दशा, सूक्ष्मदशा, प्राणदशा भेद से तथा अष्टोतरी के २ प्रकार (आर्द्रा तथा कृत्तिका से आरंभ) सम्पूर्ण रूप से कही गई हैं। उन सब नक्षत्र दशाओं के फल का विचार मनुष्य वर्गो पर विचार करना तथा फलरूप भोग के समाप्त होने पर मृत्यु का निश्चय करना।।३५–३६।।

योगार्द्ध दशा

चरराशि के दशावर्ष तथा स्थिर राशि के दशा वर्ष जोड़ कर आधे करने से (अर्थात् प्रत्येक राशि के चरदशा के वर्ष लेना और स्थिरदशा के वर्ष लेना योग कर आधा करने से) योगार्द्ध दशा होती है।।३७।। लग्न और सप्तमभाव में से जो बलवान् हो उससे दशारंभ करना। जैसे लग्न बलवान् हो तो लग्न से दशारंभ करना।।३८।। सप्तमराशि बलवान् हो तो सप्तमभाव से दशा का आरम्भ करना। तथा विषम सम भेद से क्रम व्युत्क्रम गणना का भी ध्यान रखना।।३९।। जो राशि बलवान् हो उससे दशा का आरंभ करना। जिस जातक के चन्द्र, शुक्र बलवान् हों उसके लिए यह दशा देखना। स्त्री जातक हो तो लग्न तथा सप्तमभाव में जो राशि बलवान् हो उससे जो सप्तमभाव है, उससे दशा लेना। और पुरुष जातक हो तो लग्न सप्तम में जो बलवान् हो उसी से दशारंभ किया जाता है ।।४०।।

उदाहरण–इस 'योगार्द्धदशा' में वर्षादि इस रीति से लेना कि–प्रथम 'चरदशा' के तथा 'स्थिर दशा' की वर्षसंख्या का योग करके आधा करना (२ का भाग देना) लब्ध वर्ष मास उसी भाव के 'योगार्द्धदशा' के वर्ष मास होंगे। चक्र से स्पष्ट समझना।

अथ योगार्द्धदशाचक्रम्

१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	योगाः
९	९	८	७	७	८	६	७	५	९	१०	५	१२
०	६	०	०	०	६	६	०	६	६	०	०	६
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०
१९००	१९०९	१९१९	१९२७	१९३४	१९४१	१९४९	१९५६	१९६३	१९६९	१९७८	१९८८	१९९३
१०	१०	१०	१०	१०	१०	१०	१०	१०	१०	१०	१०	१०
४	४	४	४	४	४	४	४	४	४	४	४	४
१४	१४	१४	१४	१४	१४	१४	१४	१४	१४	१४	१४	१४
२२	२२	२२	२२	२२	२२	२२	२२	२२	२२	२२	२२	२२

अथ दृग्दशामाह

कुजादिति च ज्ञेया सा विलग्ननवमादितः क्रमत्रये कूटपदं नाम्ना वै दृग्दशा द्विज ।।४१।।
दृष्टिचक्रे संमुखश्च राश्यादौ नवमस्य च ।। कुत्रचित्क्रमरीत्या च कुत्रचिद्व्युत्क्रमेण च।।४२।।
ततोपि पंचमस्यैवं क्रमेण कुत्रचिद्द्विज ।। कुत्रचिद्व्युत्क्रमेणैव राश्येकादश संमुखम्।।४३।।

दृग्दशा

दृग्दशा के लिए शास्त्र में 'कुजात्' कहा है। अतः लग्न से (कुज=नवम) नवमभाव तथा दशम और एकादश इन तीन भावों से दशा का संकलन होता है। इन तीन भाव के समूह को त्रिकूट नाम से कहा है।।४१।। (यहां कुज शब्द का अर्थ नवम होता है क्योंकि–"कटपयादि अंका ग्राह्याः।" इस नियम से क–१ ज–८ इन अंकों को 'अंकानां वामतो गतिः' नियम के अनुसार रखा तो ८१ हुआ। १२ का भाग दिया तो शेष ९ यह राशि या भाव संख्या हुई। इस रीति के अनुसार 'कुजात्' का अर्थ 'नवमात्' किया है।) प्रथम दशारंभ नवम के सम्मुखस्थ राशि की दशा होती है। कहीं क्रम से और कही विपरीतक्रम से दशा जानना।।४२।। (यहां दृष्टिचक्रकी दृष्टि का कथन है। दृष्टिचक्र चतुर्थ अध्यायके आरंभमें देखें।) इसमें भीं राशि, क्रम के अनुरोध से अपने से पञ्चमभाव को देखती है और व्युत्क्रमानुरोध से एकादश भाव को देखती है।।४३।।

तस्याभावप्रमाणं हि न ग्राह्यं द्विजसत्तम ।। संग्राह्यं पंचमस्यैव दृष्टिचक्रे विशेषतः ।।४४।।
अभिपश्यंति ऋक्षाणि पार्श्वभं द्विजसत्तम ।। पूर्वोक्तयैव रीत्या तत्त्रिकूटपदमुच्यते ।।४५।।

त्रिराश्यात्मकूटपदं ततोपि दशमस्य च ।। दृग्दशेकादशे ज्ञेया नवमस्यापि दृग्दशा ।।४६।। फलार्थे दृग्दशा विप्र संगृह्यै कादशेपि च ।। तस्याः प्रकारं वक्ष्येहं पुनरुक्तं विशेषतः ।।४७।। अथौजयुग्मभेदेन गणनाक्रम उच्यते ।। यथा सामान्यं संज्ञेयं युग्मेषु पञ्चमाययोः ।।४८।। गणनायां च सामान्यं पंचमैकादशे द्विज ।। क्वचिदित्यात्मकं ज्ञेयं सासान्यत्रयकूटके ।।४९।। अथौजपदयोर्विप्र संज्ञेयं विपरीततः ।। युग्मे च युग्मपदयोर्यथा सामान्ययोजनम् ।।२५०।।

हे द्विजसत्तम! चतुर्थाध्याय में यह दृष्टिक्रम कहा है कि–राशियां अपनी संमुख राशि को तथा पार्श्वराशि को देखती हैं। उस पूर्वोक्त रीति से ही 'त्रिकूट' स्थान कहा जाता है।।४५।। तीन राशियों के मेल का नाम 'त्रिकूट' है। अतः ९।१०।११ भाव की राशियों से यह 'दृग्दशा' होती है।।४६।। फलनिर्देश के लिए यह 'दृग्दशा' कही गई है। इसका प्रकार पुनः स्पष्ट करके कहते हैं।।४७।। अब विषम, समभेद से गणना का क्रम कहते हैं। युग्मराशि में सामान्य रीति से ही ५।११ भाव की दशा जानना।।४८।। तीनों राशियों ९।१०।११ में पंचम एकादश राशि की गणना सामान्यरूप से जैसे चतुर्थाध्याय में कही है उसी प्रकार करना।।४९।। विषमराशि हो तो विपरीत क्रम से और समराशि हो तो क्रमगणना से ५।११ भाव की दशा रखना।।२५०।।

क्रमो वृषे वृश्चिके च हीत्युक्तेन द्विजोत्तम ।। अत्रापि ह्योजकूटस्थे पंचमैकादशात्क्रमात् ।।५१।। दृग्योगं च भवेद्विप्र दृग्दशा बलदायिका ।। युग्मकूटस्थसामान्यं व्युत्क्रमात्सिंहकुंभयोः ।।५२।। पंचमैकादशौ विप्र दृग्योगौ भवतस्तथा ।। राशीनां द्विस्वभावानां पंचमैकादशे स्थिते ।।५३।। दृग्योगस्याप्यभावश्च दृष्टिचक्रे विचिंतयेत् ।। यत्रभावे भवेद्दृष्टिस्तत्र तस्याश्रयादिके ।।५४।। नवमेशानंतरं च विज्ञेया गणिताग्रणीः ।। सप्तमस्य ततो ज्ञेया नवमादि त्रिकोणगे ।।५५।।

वृष और वृश्चिक राशि विषम वर्ग में होने के कारण प्रथम पंचम पश्चात् एकादशभाव राशि की दशा लेना।।५१।। इसी तरह सिंह और कुम्भराशि के समवर्ग में होने के कारण विपरीत क्रम से दृग्दशा ग्रहण करना।।५२।। द्विस्वभाव राशि पंचम एकादश में हो तो उनसे भी दशा वर्ष लेना।।५३।। दृष्टियोग पूर्वोक्त 'दृष्टिचक्र' से देखना। जिस भाव में दृष्टि हो उस भाव से दशा ग्रहण करना।।५४।। नवमभाव के बाद दशम आदि राशि की दशा लेना। लग्न सप्तमभाव में सप्तमभाव बलवान् हो तो सप्तमभाव से नवमादि राशि लेना।।५५।।

द्विधा राशिर्दृग्दशायां पार्श्वराशिद्वयं दशा ।। पुंराशिर्द्विस्वभावस्य ज्ञेया तस्य क्रमेण च ।।५६।। स्त्रीराशिर्द्विस्वभावेपि व्युत्क्रमेण द्विजोत्तम ।। चतुर्थदशमी ग्राह्यो पार्श्वभं तु न संशयः ।।५७।। चरराशिक्रमेणैव संस्थिते व्युत्क्रमेण च ।। पंचमैकादशौ विप्र दृग्योगं च भवत्यपि ।।५८।। पार्श्वराशेर्महाप्राज्ञ दशा नेया क्रमोत्क्रमात् ।। द्विस्वभावनवमादौ संज्ञेयाः सप्तमस्य च ।।५९।। ओजसंज्ञा द्विस्वभावे क्रमेण तुर्य व्योमके ।। समे व्युतक्रमतो ज्ञेया सा ग्राह्या व्योमतुर्ययोः ।।६०।। राशीनां द्वादशानान्तु संख्या नवनवाब्दकैः ।। संग्राह्यं दृग्दशानां च फलं पूर्वप्रकारतः ।।६१।।

यदि जातक पुरुष हो और लग्न में द्विस्वभाव राशि हो तो पार्श्व राशि पंचम एकादश नहीं होती, द्विस्वभावराशि की दृष्टि 'दृष्टिचक्र' में चतुर्थ, दशम पर होती है, अतः वही लेना।।५६।। इसी प्रकार जातक स्त्री हो तो भी विपरीत क्रम से चतुर्थ, दशम राशि ग्रहण करना।।२७।।चरराशि हो तो नियमानुसार क्रमसे या व्युत्क्रमसे पंचम तथा एकादश भाव की दशा ग्रहण करना।।५८।। हे महाप्राज्ञ! पार्श्वराशि की दशा क्रम और व्युत्क्रम से लेना। द्विस्वभाव राशि के नवमादि भावों में तथा सप्तमभावसे दशारंभ हो तो पूर्वोक्तानुसार दशा लेना।।५९।। द्विस्वभावराशि यदि विषम हो तो प्रथम चतुर्थ भाव की बाद दशम भाव की दशा लेना। सम राशि हो तो प्रथम दशम भाव की, बाद चतुर्थ की दशा लेना ।।६०।। बारह राशियों की वर्ष संख्या ९-९ वर्ष की ही जाने। यह हमने दृग्दशा कही। इसका फल पूर्वोक्त प्रकार से ही जानना ।।६१।।

अथ दृग्दशाचक्रम्

१	५	११	५	१	७	३	६	१२	१२	९	३	योगाः
९ ० ० ० ०	९ ० ० ० ०	९ ० ० ० ०	९ ० ० ० ०	९ ० ० ० ०	९ ० ० ० ०	९ ० ० ० ०	९ ० ० ० ०	९ ० ० ० ०	९ ० ० ० ०	९ ० ० ० ०	९ ० ० ० ०	१०८ ० ० ० ०
१९००	१९०९	१९१८	१९२७	१९३६	१९४५	१९५४	१९६३	१९७२	१९८१	१९९०	१९९९	२००८
१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२

उदाहरण-उपर्युक्त कल्पित उदाहरण में लग्न से नवम चरराशि है अतः चरराशि मेष की दशा पश्चात् इसकी दृष्ट राशियों की दशा रखी गई है, पश्चात् दशम और उसकी दृष्टराशियों की, इसके बाद एकादश और उसकी दृष्ट राशियों की दशा रखी गई है। दृष्टिविचार मूल में पूर्णरूप से कहा ही गया है। वर्ष संख्या ९-९ स्पष्टरूप से मूल में कही ही है।

अथ त्रिकोणदशामाह

दशा त्रिकोणनाम्ना या यथान्यायप्रकल्पना ।।चरपर्यायरीत्यादिश्लोकोक्तेन प्रदर्शितः।।६२।।
लग्नात्त्रिकोणेयो राशिर्बलवानुक्तहेतुभिः । तदारभ्यानयेच्छ्रीमँश्चरपर्यायवद्दशा ।।६३।।

युग्मराशिभवां पुंसामोजे गृह्णीत संमुखः ।। ओजराशिभुवां स्त्रीणां युग्मे चैव समाश्रयेत् ।।६४।। क्रमोत्क्रमेण गणयेदोजयुग्मेषु राशिषु ।। संपन्नचरपर्यायदशामिति प्रकल्पयेत् ।।६५।। ततोपि द्वारबाह्याभ्यां फलमेवं विचिंतयेत् ।। पाकभोगद्वयं विप्र पापयोगेन सौख्यदाम् ।।६६।। तदिदं चरपर्यायस्थिरपर्यायकं द्विज ।। त्रिकोणाख्यदशायां च पापभोगप्रकल्पनम् ।।६७।।

त्रिकोणदशा

त्रिकोण दशा नाम की यह दशा चरपर्यादिशा की रीति से कही गई है।।६२।। लग्न से तथा त्रिकोण राशियों से यह दशा आरंभ होती है। जो राशि पूर्वोक्त हेतुओं से बलवान् हो उसी से दशा आरंभ करना।।६३।। (समराशि में उत्पन्न पुरुष जातक की दशा राशि सम्मुखीन विषम राशि में दशा कल्पना होती है। तथैव विषमराशि में उत्पन्न स्त्री जातक की दशा की परिकल्पना समराशि में होती है।।६४।।) यथाक्रम और विपरीतक्रम से विषम, समराशियों में चरपर्यादशा के समान ही दशा की कल्पना करे।।६५।। इस दशा से द्वारराशि तथा वाह्यराशि से दशा और अन्तरदशा का विचार करे, द्वार राशि का दूसरा नाम 'पाकराशि' और बालराशि का 'भोगराशि' नाम है।।६६।। इस प्रकार चरदशा और स्थिरदशा दोनों से इस त्रिकोणदशा के फलभोग का विचार किया जाता है।।६७।।

पाकभोगे च पापाढचे देहपीडा मनोव्यथा ।। नृपाद्भीतिं भयं क्लेशमहारुग्भ्यां प्रपीडितः ।।६८।। अधुना संप्रवक्ष्यामि कारकाणां फलं द्विज ।। सप्तमश्च तृतीयश्च प्रथमो नवमोऽपि च ।।६९।। नवमात्स्वल्पा विज्ञेया पितृसौख्यं विचिन्तयेत् ।। शरीरारोग्यमैश्वर्यं चिंतयेत्प्रथमाद्द्विज ।।७०।।

राशि की दशा में पापग्रह योग होने पर देहपीड़ा, मनश्चिन्ता राजभय, क्लेश तथा रोगभय होता है।।६८।। अब यह विचार कहा जाता है कि—प्रथमकारक (आत्मकारक) से इसी प्रकार तृतीय, सप्तम, नवम कारक से तत् २ कारकोक्त फल का विचार करना चाहिए।।६९।। नवमकारक से पितृसौख्य का विचार तथा प्रथमकारक से अपनी आरोग्यता आदि का विचार करे।।२७०।।

उदाहरण—लग्न से त्रिकोण अर्थात् लग्न, पञ्चम, नवम भाव राशियों में जो बलवान् राशि हो उससे दशा का आरंभ करना, जैसे—कल्पित उदाहरण में प्रथम बलवान् होने से लग्न की, पश्चात् ५–९ की, एवं बाद में २।६।१० की इसी प्रकार ३।७।११ और ४।८।१२ की दशा ही है। इनके पूर्व चर पर्याय के तथा स्थिर पर्याय के समान रखना चाहिए।

अथ त्रिकोणदशाचक्रम्

१	५	९	२	६	१०	३	७	११	४	८	१२	योगाः
११ ० ० ० ०	६ ० ० ० ०	२ ० ० ० ०	११ ० ० ० ०	८ ० ० ० ०	१२ ० ० ० ०	७ ० ० ० ०	६ ० ० ० ०	१२ ० ० ० ०	७ ० ० ० ०	६ ० ० ० ०	१ ० ० ० ०	८९ ० ० ० ०
१९००	१९११	१९१७	१९१९	१९३०	१९३८	१९५०	१९५७	१९६३	१९७०	१९८२	१९८८	१९८९
१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२

अथ नक्षत्राद्राशिदशाक्रममाह

जन्मादौ चंद्रनक्षत्रे सर्वत्र घटिकौघके ।। भानुना दीयते भागंशेषनाड़ीः प्रकल्पयेत् ।।७१।। प्रथमं खण्डमारभ्य द्वादशे खंडके द्विज ।। लग्नाद्द्वादशराशीनां गणनीयं क्रमेण च ।।७२।। या घटी कर्मवत्खण्डे जन्मखण्डश्च आदितः ।। आरभ्य गणनायां च जन्मलग्नादितो द्विज ।।७३।। लग्नाद्द्वादशराशीशमारभ्य द्विजसत्तम। क्रमव्युत्क्रमभेदेन द्वादशर्क्षदशा मता ।।७४।।

नक्षत्र से राशिदशा

नक्षत्र के भभोग में १२ का भाग देकर बारहवाँ भाग प्राप्त करके जन्मकाल का कौनसा भाग है यह निश्चय करे।।७१।। प्रथम खण्ड से बारह खंडों में से जिस खंड में जन्म हो उस खण्ड तक जन्मलग्न से गणना करके जो राशि प्राप्त हो उसीसे १२ राशियों की दशा विषम तथा समराशि में क्रम तथा व्युत्क्रम से दशा का आनयन करे ।।७४।।

उदाहरण–कल्पना किया कि किसीका जन्म पूर्वाषाढा नक्षत्र में है, उसका भभोग ५७।४८ है। १२ का भाग दिया तो लब्ध ४ तथा शेष ९।४८ है, अतः कल्पित लग्न ५ से पञ्चम धनुः राशि प्राप्त हुई, इसी से दशा आरंभ की, और प्रतिराशि ९–९ वर्ष रखे गये। चक्र में देखिये:–

अथ नक्षत्रराशिदशाचक्रमिदम्												
९	१०	११	१२	१	२	३	४	५	६	७	८	योगाः
९ ० ० ० ०	९ ० ० ० ०	९ ० ० ० ०	९ ० ० ० ०	९ ० ० ० ०	९ ० ० ० ०	९ ० ० ० ०	९ ० ० ० ०	९ ० ० ० ०	९ ० ० ० ०	९ ० ० ० ०	९ ० ० ० ०	१०८ ० ० ० ०
१९००	१९०९	१९१८	१९२७	१९३६	१९४५	१९५४	१९६३	१९७२	१९८१	१९९०	१९९९	सम्वत्.
१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२

अथ तारादशामाह

**जन्मसंपद्विपत्क्षेमप्रत्यरीसाधको वधः ।। मैत्रातिमैत्रमित्येवं दशा ज्ञेया द्विजोत्तम ।।
विंशोत्तर्याःक्रमेणैवमब्दानिह विजानत ।। आदौ केंद्रग्रहा यस्य विज्ञेया तारका दशा ।।७५।।**

तारादशा

जन्म, सम्पत्, विपत्, क्षेम, प्रत्यरि, साधक, वध, मैत्र, अतिमैत्र ये नौ तारे हैं। विंशोत्तरी दशा के अनुसार ही इनकी दशा है। जातक की जन्मकुंडली में जो ग्रह केन्द्र में हो, उनमें जो ग्रह बलवान हो, सूर्यादि क्रम से उस ग्रह की तारा से दशा आरंभ होगी और आगे की दशाएं उपर्युक्त ताराक्रम से होंगी। प्रथम की दशा का भोग्य वर्षादिमान गणित द्वारा स्पष्ट निकाल कर रखना तथा आगे के वर्षमान विंशोत्तरी दशा के वर्ष ही जानना।।७५।।

उदाहरण—इस दशा में सूर्य, चन्द्र आदि ग्रहों के स्थान में जन्म, सम्पत् आदि नाम रखना और सूर्यादि ग्रहों के विंशोत्तरी में कथित वर्ष ही इनके वर्ष हैं, और साधन रीति भी वही है।

अथ तारादशाचक्रमाह									
साधकः	बुधः	मैत्रः	अतिमैत्रः	जन्म	संपत्	विपत्	क्षेम	प्रत्यरी	इमादशाः
१ ८ १ ३८ ६	१७ ० ० ० ०	७ ० ० ० ०	२० ० ० ० ०	६ ० ० ० ०	१० ० ० ० ०	७ ० ० ० ०	१८ ० ० ० ०	१६ ० ० ० ०	१०२ ८ १ ३८ ६
१९००	१९०२	१९१९	१९२६	१९४६	१९५२	१९६२	१९६९	१९८७	२००३
१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२	६ ५ १४ २२	६ ५ ५२ २६	६ ५ ५२ २६	६ ५ ५२ २६	६ ५ ५२ २६	६ ५ ५२ २६	६ ५ ५२ २६	६ ५ ५२ २६

अथ वर्णदशामाह

जन्महोरर्क्षलग्नर्क्षसंख्या ग्राह्या पृथक् पृथक् ।। ओजलग्ने च युग्मे तु चक्रशुद्धैकसंयुता ।।७६।। युग्मौजसाम्ये संयोज्य वियोज्यान्योन्यमन्यथा ।। मेषादितः क्रमादोजे मीनादेरुत्क्रमात्समे ।।७७।। एवं यल्लग्नमायातं वर्णदं तत्प्रकीर्तितम् ।। एवं द्वादशभावानां वर्णदं तत्प्रकीर्तितम् ।।७८।। एवं द्वादशभावानां वर्णदं लग्नमानयेत् ।। ग्रहाणां वर्णदा नैव राशीनां वर्णदा दशा ।।७९।। वर्षसंख्या विजानीयाच्चरपर्याप्रमाणतः ।।८०।।

वर्णद दशा

जन्मकाल के होरालग्न और जन्मलग्न से (अध्याय १० में कथनानुसार) अलग अलग संख्या ग्रहण करना, दोनों राशि विषम सम में हो तो पूर्वोक्तानुसार आगत संख्या १२ से अधिक हो तो १२ से शोधित करके १ जोड़े।।७६।। और दोनों राशि एक ही जाति की हों तो संयोजन, अन्यथा वियोजन करने पर जो संख्या प्राप्त हो वह विषम हो तो मेषादि क्रम से और सम हो तो मीनादि विपरीत क्रम से जो लग्न प्राप्त हो वह 'वर्णद' लग्न है।।७७।। इसी रीति से बारहों भावों का 'वर्णद' निकालना। यह वर्णदा दशा ग्रहों की नहीं होती, केवल राशियों की होती हैं।।७९।। चरपर्या दशा के अनुसार राशि के स्वामी तक विषम सम में क्रम, व्युत्क्रम भेद से वर्ष संख्या प्राप्त करें ।।८०।।

उदाहरण—कल्पना किया कि किसी का जन्म मेष लग्न में है, अतः जन्मलग्न विषम है तो संख्या १ प्राप्त हुई और होरा लग्न वृषभ है तो सम होने से विपरीत गणना से संख्या १० प्राप्त हुई, दोनों विषम संख्या होने से योग किया तो '११' यह वर्णद दशा राशि प्राप्त हुई, इसी प्रकार प्रत्येक भाव से वर्णद राशि का अंक प्राप्त करना चाहिए।

अथ वर्णददशाचक्रम्												
११	५	८	६	६	४	४	२	२	८	१२	९	योगाः
१२ ० ० ० ०	६ ० ० ० ०	६ ० ० ० ०	८ ० ० ० ०	८ ० ० ० ०	७ ० ० ० ०	७ ० ० ० ०	११ ० ० ० ०	११ ० ० ० ०	४ ० ० ० ०	३ ० ० ० ०	२ ० ० ० ०	८५ ० ० ० ०
१९००	१९१२	१९१८	१९२४	१९३२	१९४०	१९४७	१९५४	१९६५	१९७६	१९८०	१९८३	१९८५
१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२

अथ पंचस्वरदशामाह

पंचाकान्प्रथमे दत्त्वा स्वरान्वर्णांश्च विन्यसेत् ॥ आदावकछडाधाश्च अंत ओचठ्दवादयः ॥८१॥ कादिहांताँल्लिखेद्वर्णान्स्वराधोङञणोज्झितान् । तिर्यक्पंक्तिक्रमेणैव पंच पंच विभागतः ॥८२॥ न प्रोक्ता ङञणा वर्णा नामादौ संति तेन हि ॥ चेद्भवंति तदा ज्ञेया गजडास्ते यथाक्रमम् ॥८३॥ यदि नाम्नि स्युस्तद्वर्णाः संयोगाक्षरलक्षणाः ॥ ग्राह्यस्तदादिमो वर्ण इत्युक्तं ब्रह्मणा पुरा ॥८४॥

पंचस्वरदशा

(छः लाइन सीधी और १० लाइन तिरछी लिखने से, खड़े ५ कोष्टक और तिरछे ९ कोष्टक होते हैं। यह चक्र हुआ, अब इसमें वर्ण विन्यास कहते हैं।) ऊपर की तिरछी लाइन में १ से ५ तक के अंक लिखे। उनके साथ ५ स्वरों आ, ई, ऊ, ए, ओ, लिखे (यह दो लाईन हुई)। प्रथम की खडी पंक्ति में अ, क, छ, ड, ध, आदि अंक लिखे और अंत की पञ्चम खडी पंक्ति में

ओ, च, ठ, द, व आदि अंक लिखे।।८१।। पश्चात् आदि की खड़ी पंक्ति के वर्णों से मिलान करते हुए 'क' से 'ह' तक के अंक लिखे, प्रत्येक स्वर के नीचे पंक्तिवार अंक लिखे। ङ, ञ, ण इनको नहीं लिखे। तिरछी पंक्ति में क्रम से ५–५ अंक लिखे।।८२।। ङ, ञ, ण ये वर्ण नहीं कहे गए, क्योंकि–नाम के आदि में ये वर्ण नहीं होते। यदि हों तो उनके स्थान में क्रमशः ग, ज, ड इन अंको को मानना चाहिए।।८३।। यदि नाम के आदि में संयुक्त अक्षर हो तो उसके आदि का एक अक्षर लेना, यह कहा है।।८४।।

अकाराद्याः स्वराः पंच ब्रह्माद्याः पंच देवताः ।। निवृत्त्याद्याः कलाः पंच इच्छाद्यं शक्तिपंचकम् ।।८५।। मायाद्याश्चक्रभेदाश्च धराद्या भूतपंचकम् ।। शब्दादिविषयास्ते च कामबाणा इतीरिताः ।।८६।। प्रभवादिक्रमेणैषां स्वराणामस्वरादिकः ।। उदयो द्वादशाब्दानां प्रत्येकं द्वादशाब्दिकः ।।८७।। अस्यांतरादयो वर्षमेको मासो दिनद्वयम् ।। लोकाब्धिनाडिकाः प्रोक्ता अष्टत्रिंशत्पलानि च ।।८८।। द्वादशाब्दादिनाड्यंताः स्वस्थानाच्च स्वकालतः ।। उदयांते पुनस्त्वत्रांतरैरेकादशोदयैः ।।८९।। जन्मकर्माधानपिण्डं छिद्राः संज्ञाः स्वरादिषु ।। यत्र नामाक्षरं प्राप्तं तत्रैव उदितः स्वरः ।।९०।। तस्माद्वर्षान्विजानीयाद्वर्षान्मासो भवेत्पुनः।मासद्वयं च विज्ञेयं दिनद्वादशकाधिकम् ।।९१।। एवं क्रमेण जानीयाद्वर्षान् भागांश्च पंचसु ।।९२।।

आकार आदि ५ स्वरों के ब्रह्मा आदि ५ देवता हैं। निवृत्ति आदि ५ कला, इच्छा आदि ५ शक्ति हैं।।८५।। माया आदि ५ भेद और पृथ्वी आदि ५ भूत तथा शब्द आदि ५ विषय है, इच्छा आदि ५ शक्ति हैं।।८६।। प्रभव आदि ६० वर्षों में से १२-१२ वर्ष एक एक स्वरमें है।।८७।। इसके अन्तरोदय में १ वर्ष १ मास २ दिन ४७ घटी ३८ पल (अंतरदशा)।।८८।। १२ वर्ष की दशा में तथा अन्तरोदय अपने पर्याय तथा अपने काल में ११ अन्तर होते हैं।।८९।। प्रत्येक स्वर की संज्ञा जन्म, कर्म, आधान, पिण्ड, छिद्र ये हैं। जिस स्वर के नीचे नाम का आद्यक्षर होगा, उस जातक का वही उदित स्वर है ।।९०।। उस उदित स्वर से दशा का आरंभ होता है। वह दशा १२ वर्ष की और उसके अन्तरोदय के ११ अन्तर हैं। और उनमें प्रत्येक अन्तरोदय में पांचों स्वरों का भोगकाल होता है। जिसमें प्रत्येक स्वर का भोगकाल २ मास १२ दिन होते हैं।।९१।। इस क्रम से ५ स्वरों के वर्ष और मास जानना।।

मार्गपौषमासौ तु आद्यास्यादिदिनव्ययम् ।। एवं विभागश्चांद्राब्दे संप्रदायानुसारतः ।।९३।। तिथय प्रतिपत्पूर्वाःकुजादेर्वारनिर्णयः ।। नंदा भद्रा जया रिक्ता पूर्णा चापि यथाक्रमम् ।।९४।। क्रमेणांकाः प्रदातव्या ग्राह्याश्चांकसमुच्चयाः ।। चंद्राष्टावस्वरे ज्ञेया ईश्वरे नागकुंजराः ।।९५।। उस्वरे रामरंकाणि एस्वरे चंद्रखेचराः ।। ओस्वरे पंचदशभिः स्थितियोगसमुद्भवः ।।९६।। अस्वरे कौर्प्यसिंहाजा ईस्वरे ज्ञेंदुराशयः ।। उस्वरे चापजलजावेस्वरे तु तुलावृषौ ।।९७।। ओस्वरे मृगकुम्भौ च राशीशाद्वारजाः स्वराः ।। स्वराधः स्थापयेत्खेटान् राशेर्यो यस्य नायकः ।।९८।।

इन पांच स्वरों में क्रम से २–२ मास और १२–१२ दिन के विभाग से एक वर्ष का

भोगमान कहा है। अस्वर में मार्गशीर्ष और पौष मास तथा माघ के १२ दिन है। आगे इसी प्रकार ७२–७२ दिन ईकार आदि के हैं।।९३।। तथा प्रतिपदा आदि ३–३ तिथि क्रम से, एवं मंगल आदि वार जानना। तिथियों में नन्दा, भद्रा, जया, रिक्ता, पूर्णा ये अकारादि स्वरों की जानना।।९४।। आगे कहे जाने वाले अंक अकारादि स्वरों के नीचे देना और जिस स्वर के अंक की आवश्यकता हो उसको ग्रहण करना। 'अ' स्वर के नीचे ८१ और 'ई' स्वर के नीचे ८७ देना।।९५।। 'ऊ' स्वर में ९३ तथा 'ए' स्वर में ९१ एवं 'ओ' स्वर में १०५ स्थापन करना।।९६।। इसी प्रकार 'अ' स्वर में वृश्चिक, सिंह तथा मेष और 'ई' स्वर में ३।४।६ तथा 'उ' स्वर में ९।१२ एवं 'ए' स्वर में २।७ एवं 'ओ' स्वर में १०।११ तथा इन राशियों के स्वामी भी राशि के समान जानना, अर्थात् जिस राशि का जो स्वामी है वह राशि स्वर के नीचे ही रखना।।९८।।

अथ पंचस्वरचक्रम्

अ.	ई	उ	ए	ओ
१२	१२	१२	१२	१२
क	ख	ग	घ	च
छ	ज	झ	ट	ठ
ड	ढ	त	थ	द
ध	न	प	फ	ब
भ	म	य	र	ल
व	श	ष	स	ह

अथ पंचस्वरदशाचक्रमाह

ई	उ	ए	ओ	अ	योगाः
१२ ० ० ० ०	१२ ० ० ० ०	१२ ० ० ० ०	१२ ० ० ० ०	१२ ० ० ० ०	६० ० ० ० ०
१९००	१९१२	१९२४	१९३६	१९४८	१९६०
१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२

उदाहरण–कल्पना किया कि 'ईकार' स्वर में किसी का जन्म है, तो ईकार से ही दशा आरंभ की गई। इसका विशेष विवरण दशा अन्तर्दशा आदि 'नरपतिजयचर्या' नामक ग्रन्थ में है, जिज्ञासु को वहीं देखना चाहिए।

अथ योगिनीदशामाह

मंगला पिंगला धान्या भ्रामरी भद्रिका तथा ।। योगिन्योऽष्टौसमाख्याता उल्का सिद्धा च संकटा ।।९९।। पिंगलातो भवेत्सूर्यो मंगलातो निशाकरः ।। भ्रामरीतो भवेद्भौमो भद्रिकातो

बुधस्तथा ॥३००॥ धान्यकातो गुरुर्भूत्सिद्धातः कविसंभवः ॥ उल्कातो भानुतनयः संकटातस्तमोऽभवत् ॥१॥ स्वर्क्षं पिनाकिनयनयुक्तं च वसुभिर्हरेत् ॥ शेषेण योगिनी ज्ञेया शून्यपातेन संकटा ॥२॥ एकाभिवृद्ध्या वर्षाणि मंगलाप्रमुखासु च ॥३॥ गताभिर्भस्य नाडीभिर्गुणयित्वा तु तैर्दिनैः ॥ विहीना सा प्रकर्तव्या स्फुटा चैवं भवेद् ध्रुवम् ॥४॥

योगिनी दशा

मंगला, पिंगला, धान्या, भ्रामरी, भद्रिका, उल्का, सिद्धा, संकटा ये आठ नामकी योगिनी दशा है॥९९॥ पिंगला से सूर्य की उत्पत्ति है और मंगला से चन्द्रमा, भ्रामरी से मंगल तथा भद्रिका से बुध की उत्पत्ति है॥३००॥ धान्या से गुरु, सिद्धा से शुक्र, उल्का से शनि, संकटा से राहु की उत्पत्ति है॥१॥ जन्म नक्षत्र संख्या में ३ जोड़कर ८ का भाग देना, शेष रहे सो एकादि क्रम से मंगला आदि दशा जानना। ०, शेष रहे तो संकटा दशा जानना॥२॥ एकोत्तर वृद्धि १,२,३,४,५,६,७,८ इनकी वर्ष संख्या है॥३॥ नक्षत्र की गतघटी= भयात से दशावर्ष संख्या को गुणा कर ३६ का भाग देने से दशा भुक्त प्राप्त होगी॥४॥ (भुक्त को दशामान में घटाने से भोग्यदशा प्राप्त होगी)

उदाहरण-कल्पना किया कि-किसीका जन्म पूर्वाषाढामें है अतः नक्षत्र संख्या २० में ३ युक्त किया तो २३ हुए। इसमें ८ का भाग दिया तो शेष ७ रहे, अतः सिद्धा में जन्म हुआ विंशोत्तरी के समान ही युक्त भोग्य दशा प्राप्त करने पर ००।०७।११।३९।१८ भोग्य वर्षादि प्राप्त हुए।

अथ योगिनीदशाचक्रम्

सि.	सं.	मं.	पिं.	ध.	भ्रा.	भ.	उ.	योगिन्यः
०	८	१	२	३	४	५	६	२९
७	०	०	०	०	०	०	०	०
११	०	०	०	०	०	०	०	०
३९	०	०	०	०	०	०	०	०
१८	०	०	०	०	०	०	०	०
१९००	१९०१	१९०९	१९१०	१९१२	१९१५	१९१९	१९२४	१९३०
१०	५	५	५	५	५	५	५	५
४	१५	१५	१५	१५	१५	१५	१५	१५
१४	५३	५३	५३	५३	५३	५३	५३	५३
२२	४०	४०	४०	४०	४०	४०	४०	४०

अथ पिडांशनैसर्गिकाष्टकवर्गचतुर्णामायुः परिदशामाह

पैड्यांशनैसर्गिदशामायुः परिविचिंतयेत् ।। तथा ह्यष्टकवर्गे च विजानीहि द्विजोत्तम ।।५।।

पिंडादि चतुर्विध दशा

पिंडायु, अंशायु, नैसर्गिकायु तथा अष्टकवर्गायु इन चार प्रकार की दशाओं से आयु का विचार करे।।५।। इनके उदाहरण आगे कहेंगे।

अथ संध्यादशामाह

परायुर्द्वादशोभागः स्फुटं संध्या भवेत्ततः ।। स्वलग्नस्यदशाचादौ ततोऽन्येषु गृहेषु च ।।६।।

संध्यादशा

परमायु (१२०) वर्ष का जो बारहवां भाग है वह संध्या दशा का भोगकाल है और प्रथम लग्न की दशा उसके बाद क्रमशः दशा जानना।।६।।

सन्ध्यादशाचक्रम्											
१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२
१० ०	१० ०	१० ०	१० ०	१० ०	१० ०	१० ०	१० ०	१० ०	१० ०	१० ०	१० ०
२०००	२०१०	२०२०	२०३०	२०४०	२०५०	२०६०	२०७०	२०८०			
३ ४	३ ४	३ ४	३ ४	३ ४	३ ४	३ ४	३ ४	३ ४			

अथ पाचकदशामाह

संध्या रसगुणा कार्या चंद्रवह्निहृता फलम् ।। संस्थाप्य प्रथमे कोष्ठे ह्यर्द्धमर्द्धत्रिकोष्ठके ।।७।।
त्रिभागं वसुकोष्ठेषु लिखेद्विद्वान्प्रयत्नतः ।। एवं द्वादशभावेषु पाचकानि प्रकल्पयेत् ।।८।।

पाचकदशा

संध्यादशा के वर्षादि मान को ६ से गुणा करके ३१ का भाग देने पर जो फल प्राप्त हो वह प्रथम कोष्टक में रखे। बाद उसका आधा २ भाग आगे में ३ कोष्ठों में और तीसरा भाग बाकी के ८ कोष्ठों में रखने से पाचकदशा होती है।।७।।८।।

अथ पाचकदशाचक्रम्

१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	राशयः
१ ११ ६ ४६ २७	० ११ १८ २३ १३	० ११ १८ २३ १३	० ११ १८ २३ १३	० ७ २२ १५ २९	० ७ २२ १५ २९	० ७ २२ १५ २९	० ७ २२ १५ २९	० ७ २२ १५ २९	० ७ २२ १५ २९	० ७ २२ १५ २९	० ७ २२ १५ २९	वर्षाणि मासाः दिनानि घटचः पलानि
१९००	१९०२	१९०३	१९०४	१९०५	१९०५	१९०६	१९०६	१९०७	१९०८	१९०८	१९०९	१९२०
१० ४ १४ २२	९ ११ ० ४९	८ २९ २४ २	८ १७ ४७ १५	८ ६ १० २८	७ १७ २५ ५५	२ २८ ४१ २२	१० ९ ५६ ४०	५ २१ १२ १६	१ २ २७ ४३	८ १३ ४३ १०	६ २४ ५८ ३१	१० ४ १४ २२

बलाबलविवेकेन फलं ज्ञेयं दशासु च ॥ विपरीतं फलं वाच्यं खेटे वक्रगते सदा ॥९॥ आदिद्रेष्के स्थिते खेटे दशारम्भफलं वदेत् ॥ दशामध्ये फलं वाच्यं मध्यद्रेष्काणके स्थिते ॥३१०॥ अंते फलं तृतीयस्थे व्यस्तं खेटे च वक्रिणि ॥ इति ते कथिता विप्र दशाभेदा अनेकशः ॥११॥ यस्मै कस्मै न दातव्यं ज्ञानमेतत्सुदुर्लभम् ॥३१२॥

इति श्रीबृहत्पाराशरहोराशास्त्रेपूर्वखंडे अनेकदशाभेदकथनं नाम एकत्रिंशोऽध्यायः ॥३१॥

विशेष वक्तव्य–इस प्रकार ग्रहदशा तथा राशिदशाओं का भाव तथा ग्रह का बलाबल जानकर फल जानना चाहिए। ग्रह वक्री हो तो उसकी दशा का फल विपरीत (शुभग्रह अशुभग्रह तथा पापग्रह शुभफल) करता है।।९।। ग्रह अपने प्रथम द्रेष्काण में हो तो दशा के आरंभ में और दूसरे द्रेष्काण में हो तो मध्य में तथा तीसरे द्रेष्काण में हो तो अन्त में फल देता है।।३१०।। हे मैत्रेय! तुमको यह दशा के भेद कहे। यह ज्ञान जिस किसी को नहीं देना चाहिए, क्योंकि यह कठिनता से प्राप्त होता है।।११।।३१२।।

इति श्रीबृ० पा० हो० शा० पू० भावप्रका० अनेकदशाभेदकथनं नाम एकत्रिंशोऽध्यायः ।।३१।।

पराशर उवाच

मार्तण्डं च प्रणम्य सर्वजगतामीशं शिवं शंकरं सर्वेषा हृदि संस्थितं पशुपतिं भर्गं भवानीपतिम् ॥ लोकानां प्रलयोदयस्थितिकरं त्रैलोक्यंनाथं हरिं वक्ष्यामीह महेश्वरस्य कृपया दायप्रकाशं शुभम् ॥१॥

महादशा फलकथनाध्याय

श्रीपराशरजी ने कहा–सूर्यनारायण को नमस्कार करके तथा सब चराचर जगत के स्वामी, सबके हृदयदेश में (साक्षी रूप से) रहनेवाले तेजः स्वरूप पार्वती पति श्री पशुपति तथा कल्याणकारी शम्भु को प्रणाम करके तीनों लोकों की उत्पत्ति स्थिति तथा नाश करनेवाले भगवान् विष्णु को नमस्कार करके महेश्वर की कृपा से दाय (दशा) के फलप्रकाश प्रकरण कहते हैं।।१।।

अथ विंशोत्तरीपञ्चविधांतरमाह

अथ वक्ष्ये खगेशानां भुक्तिं पंचविधामहम् ।। दशा चांतर्दशाचैव तत्तदंतर्दशा तथा ।।२।। सूक्ष्मभुक्तिप्राणदशाप्येवं पंच दशाः स्मृताः ।।३।। मार्तण्डेन्दुकुजाहिजीवशनिवित्केतुः सितोंते क्रमात्षट्शक्तिर्मुनयो धृतिर्धरणिपा एकोनिता विंशतिः ।। अत्यष्टिर्मुनयो नखा इति विदुर्नाथा इमे खेचराः सप्तार्च्यर्यमविभ्वभादिनवकर्क्षाणां दिनेशादयः ।।४।।

विंशोत्तरी दशा के पाँच प्रकार–

अब हम सूर्यादि ग्रहों के पाँच प्रकार भोगकाल कहते हैं। महादशा, अंतर्दशा, प्रत्यन्तर्दशा, सूक्ष्मदशा, प्राणदशा।।२।।३।। क्रम से सूर्य, चन्द्र, मंगल, राहु, गुरु, शनि, बुध, केतु और शुक्र ये विंशोत्तरी दशा के स्वामी हैं। तथा दशा के वर्ष सूर्यादि ग्रहों के क्रम से ६,१०,७,१८,१६,१९,१७,७,२०। ये दशा वर्ष हैं। कृतिका, रोहिणी, मृगशिरा आदि नक्षत्रों पर तीन बार आवृत्ति करने से उपर्युक्त दशापति ग्रह ज्ञात होगा।।४।।

अथ विंशोत्तरीमहादशावर्षनक्षत्राणि

सू.	चं.	मं.	रा.	बृ..	श.	बु.	के.	शु.	ग्रहाः
६	१०	७	१८	१६	१९	१७	७	२०	वर्षाणि
कृ.	रो.	मृ.	आ.	पु.	पुष्य	आश्ले.	म.	पू.	इमानि–
उ.	ह.	चि.	स्वा.	वि.	अनु.	ज्ये.	मू.	पूर्वाषा	नक्षत्राणि
उ.षा.	श्र.	ध.	श.	पू.भा.	उ.भा.	रेवती	अश्वि.	भरणी	

अथ भुक्तभोग्यानयनमाह

स्फुटतरो हिमगुः कलिकात्मकः खखगजैर्विभजेद्गतऋक्षकम् ।। तदुडुवर्षगुणं च समादिकं खखगजैर्विभजेत्फलमत्र च ।।५।।

दशाभुक्त भोग्य साधन

जन्मकालीन स्पष्ट चन्द्रमा को घट्यात्मक करके ८०० का भाग देने से लब्ध गतनक्षत्र प्राप्त होगा। शेषांक से दशावर्ष गुणा कर पुनः ८०० का भाग देने से वर्ष, मास, दिन, घटी, पलरूप भुक्त दशा प्राप्त होगी। उसको दशा के वर्ष में घटाने से भोग्यदशा प्राप्त होगी।।५।।

अथ सूर्यस्य दशावर्षाणि ६ तत्फलम्

सूर्योत्कृष्टदशा करोति सुतधीप्रज्ञाधिकारोच्छ्रयज्ञानार्थागमकीर्तिपौरुषसुखप्राप्तीश्वरानुग्रहान् ।।भानोःपापदशा करोति विफलोद्योगार्थहान्यामयान्राजक्षोभमहीशकोपजनकारिष्टाग्निबाधोदयान् ।।६।। मूलत्रिकोणे स्वक्षेत्रे स्वोच्चे वा परमोच्चगे ।। केन्द्रत्रिकोणलाभस्थे भाग्यकर्माधिपैर्युते ।। बलं सूर्ये समायुक्ते रवौ वर्गे बलैर्युते ।। तस्मिन्दाये महासौख्यं धनलाभादिकं शुभम् ।।७।। अत्यन्त राजसन्मानमश्वांदोल्यादिकं शुभम् ।। सुताधिपसमायुक्ते पुत्रलाभं च विंदति ।।८।। धनेशस्य च संबंधे गजांतैश्वर्यमादिशेत् ।। वाहनाधिपसंबंधे वाहनत्रयलाभकृत ।।९।।

सूर्य दशाफल वर्ष ६

सूर्य की श्रेष्ठ दशा हो तो पुत्र प्राप्ति, श्रेष्ठ बुद्धि, अच्छे अधिकारों की प्राप्ति, ज्ञान का उदय, धनप्राप्ति, यश विस्तार, पौरुष वृद्धि, सुख प्राप्ति और ईश्वरानुग्रह होता है। और यदि सूर्य की पापदशा हो तो मनोरथ की विफलता, उद्योग और धन की हानि, अनेक रोगों की उत्पत्ति, राजक्षोभ, परिवार कलह, पिता को अरिष्ट, अग्नि बाधा आदि उपद्रव होते हैं।।६।। सूर्य अपने मूल त्रिकोण में अपनी राशि में, उच्च में अथवा परमोच्च में, केन्द्र, त्रिकोण या लाभ में स्थित हो और भाग्येश अथवा दशमेश से युक्त हो तथा बलवान् हो एवं अपने वर्गों में हो तो उसकी दशा में महान् सुख और पूर्वोक्त धन लाभ आदिक होते हैं।।७।। और विशेष करके राजकुल में सम्मान, घोड़ा, मोटर आदि की सवारी प्राप्त होती है। यदि सूर्य पंचमेश से युक्त हो तो पुत्रोत्सव होता है।।८।। यदि धनेश से सम्बन्ध हो तो विशेष ऐश्वर्य की प्राप्ति होती है। यदि वाहनेश से सम्बन्ध हो तो कम से कम ३ सवारी होती है।।९।।

नृपालतुष्टिर्वित्ताढ्यः सेनाधीशः सुखी नरः ।। वस्त्रवाहनलाभश्च इति दाये रवौ बली ।।१०।। नीचे षडष्टके रिष्फे दुर्बले पापसंयुते ।। राहुकेतुसमायुक्ते दुःस्थानाधिपसंयुते ।।११।। तस्मिन्दाये महापीडा धनधान्यविनाशकृत् ।। राजकोपं प्रवासं च राजदंडं धनक्षयम् ।।१२।। ज्वरपीडा यशोहानिर्बन्धुमित्रविरोधकृत् ।। प्रवासं रोगविद्वेषो ह्यपमृत्युभयं भवेत् ।।१३।। चौराहिव्रणभीतिश्च ज्वरबाधा भविष्यति ।। पितृक्षयभयं चैव गृहे त्वशुभमेव च ।।१४।। पितृवर्गे मनस्तापं जनद्वेषं च विंदति ।। शुभदृष्टियुते सूर्ये मध्ये तस्मिन्क्वचित्सुखम् ।। पापग्रहेण संदृष्टे वदेत्पापफलं नरः ।।१५।।

और राजा की प्रसन्नता विशेष धन लाभ या सेना पतित्व, उत्तम वस्त्र आदि लाभ होता है

और मनुष्य सुखी रहता है। (यह तो उत्तम फल कहा अब अधम फल कहते हैं)।।१०।। सूर्य नीच का हो, ६।८।१२ वें स्थानों में हो, बलहीन और पापग्रहयुक्त हो अथवा राहु–केतु से युक्त हो या त्रिषडाय के स्वामी से युक्त हो।।११।। तो उस दशा में महान् पीड़ा, धनधान्य का नाश, राजकोप और प्रवास, राजदण्ड, ज्वरपीड़ा, अपकीर्ति, बन्धु और मित्रों से विरोध तथा अपमृत्यु का भय होता है।।१२।।१३।। चौर, सर्प, घाव का भय, पिता के मरने का भय, घर में अशुभ कार्य, पितृवर्ग में चिन्ता तथा परिवार में कलह होती है।।१४।। सूर्य पर यदि शुभ ग्रहों की दृष्टि हो तो कुछ सुख। पापग्रहों की दृष्टि हो तो अधिक दुःख होता है।।१५।।

अथ चंद्रस्य महादशावर्षाणि १० तत्फलम्

चंद्रोत्कृष्टदशा करोति जननीश्रेयस्तडागादिकं क्षेत्रारामगृहासनद्विजवरश्रीशोभनांदोलिका ।। इन्दोः पापदशान्नहीनकृपणानंतार्थनाशामयप्रज्ञाहीनजुगुप्समातृमरणक्षोभातिशीतज्वरान् ।।१६।। स्वोच्चे स्वक्षेत्रगे चैव केंद्रे लाभत्रिकोणगे ।। शुभग्रहेण संयुक्ते वृद्धिचंद्रबलैर्युते ।।१७।। कर्मभाग्याधिपे चंद्रे वाहनीये बलैर्युते ।। आद्यंतैश्वोरुभाग्येशधनधान्यादिलाभकृत् ।।१८।। गृहे तु शुभकार्याणि वाहनं राजदर्शनम् ।। यत्नकार्यार्थसिद्धिः स्याद्गृहे लक्ष्मीकटाक्षकृत् ।।१९।। मित्रप्रभुवशाद्भाग्यं राज्यलाभं महत्सुखम् ।। अश्वांदोल्यादिलाभं च श्वेतवस्त्रादिलाभकृत् ।।२०।। पुत्रलाभादिसंतोषं गृहेगोधनसंकुलम् ।। धनस्थानगते चंद्रे तुंगे स्वक्षेत्रगेपि वा ।।२१।। अनेकधनलाभं च भाग्यवृद्धिर्महत्सुखम् ।। निक्षेपराजसन्मानं विद्यालाभं च विंदति ।।२२।।

चन्द्रदशा फल वर्ष १०

चन्द्रमा की श्रेष्ठ दशा हो तो माता को सुख, मकान, बाग–बगीचा, तलाव आदि, समाज में श्रेष्ठता, उत्तम सवारी आदि प्राप्त होती है। चन्द्रमा की पापदशा हो तो धन हीनता, कृपणता, बहुधननाश, रोग, किंकर्तव्यविमूढ़ता, निन्दा, मातृ मरण, दुःख, शीतज्वर आदि होता है।।१६।। (विशेष रूप से फल) चन्द्रमा यदि उच्च में, अपनी राशि में, मूल त्रिकोण आदि में, केन्द्र त्रिकोण या लाभ में हो और शुभ ग्रह से युक्त हो, बलवान तथा शुक्ल पक्ष का हो, अथवा ९वें दशवें का मालिक हो अथवा बलवान् शुभग्रह से युक्त हो तो उसकी दशा में भाग्य की बहुत वृद्धि होती है, धन–धान्य का लाभ होता है।।१७।।१८।। और घर में विवाह आदि शुभ कार्य होते हैं। वाहन का लाभ होता है। राज दर्शन, उद्योग की सिद्धि, मनोरथ सिद्धि, घर में लक्ष्मी की चकाचौंध रहती है। मित्र या स्वामी की कृपा से भाग्य वृद्धि, राज्य से लाभ तथा महान् सुख होता है। घोड़ा, मोटर आदि सवारी प्राप्त होती है।।१९।।२०।। पुत्र लाभ होता है। और यदि चन्द्रमा उच्च राशि का या स्वक्षेत्री होकर धन स्थान में हो।।२१।। तो अनेक धन का लाभ, भाग्य वृद्धि, महान् सुख, विद्या लाभ, अकस्मात् विशेष धन की प्राप्ति तथा राज सम्मान होता है।।२२।।

नीचे वा क्षीणचंद्रे वा धनहानिर्भविष्यति ।। दुश्चिक्ये बलसंयुते क्वचित्सौख्यं क्वचिद्धनम् ।।२३।। दुर्बले पापसंयुक्ते देहजाड्यं मनोरुजम् ।। भृत्यपीडा वित्तहानिर्मातृवर्गजनाद्वधः

॥२४॥षष्ठष्टमव्यये चंद्रे दुर्बले पापसंयुते॥ राजद्वेषो मनोदुःखं धनधान्यादिनाशनम् ॥२५॥ मातृक्लेशं मनस्तापं देहजाड्यं मनोरुजम् ॥ दुःस्थे चंद्रबलैर्युक्ते क्वचिल्लाभं क्वचित्सुखम् ॥ देहजाड्यं क्वचिच्चैव शांत्यर्थेन विनाशनम् ॥२६॥

चन्द्रमा नीच राशि का या क्षीण हो तो धन हानि होती है। तीसरे भाव में यदि बलवान् होकर स्थित हो तो कभी सुख कभी धन होता है॥२३॥ चन्द्रमा बल रहित, पापग्रह से युक्त हो तो शरीर में वात व्याधि, मन में चिन्ता, नौकर द्वारा धन हानि, मातृ वर्ग की मृत्यु होती है॥२४॥ चन्द्रमा ६।८।१२ वें स्थान में बलरहित तथा पापग्रह युक्त हो तो राजद्वेश, मन में दुःख, धनधान्य का नाश॥२५॥ माता को क्लेश, देह में जड़ता आदि फल होता है। बलवान् चन्द्रमा यदि तीसरे भाव में हो तो कभी २ लाभ तथा तथा देह में जड़ता होती है। शान्ति करने से सुख होता है॥२६॥

अथ कुजदशावर्षाणि ७ तत्फलम्

भौमोत्कृष्टदशा करोति वसुधाप्राप्तिं धनस्यागमान्प्रज्ञास्वच्छमनः पराक्रमदधत्पारिक्षयान्वानुजान् ॥ पापो भौमरुजार्तिदं च कलहं चौराग्निबंधव्रणमक्षिक्षीणमहीशपीडनरुजः क्षोभक्षतिं दास्यति ॥२७॥ परमोच्चगते भौमे स्वोच्चे मूलत्रिकोणगे ॥ स्वर्क्षे केंद्रत्रिकोणे वा लाभे वा धनगेऽपि वा ॥२८॥ संपूर्णबलसंयुक्ते शुभदृष्टे शुभांशके ॥राज्यलाभं भूमिलाभं धनधान्यादिलाभकृत् ॥२९॥ आधिक्यं राजसन्मानं वाहनांबरभूषणम् ॥ विदेशे स्थानलाभं च सोदराणां सुखं लभेत् ॥३०॥ केन्द्रं गते सदा भौमे दुश्चिक्ये बलसंयुते ॥ पराक्रमाद्वित्तलाभो युद्धे शत्रुजयो भवेत् ॥३१॥ कलत्रपुत्रविभवं राजसन्मानमेव च ॥ दशादौ सुखमाप्नोति दशांते कष्टमादिशेत् ॥३२॥ नीचादिदुःस्थगे भौमे बलाबलविवर्जिते ॥ पापयुक्ते पापदृष्टे सा दशा नेष्टदायिका ॥३३॥

भौम दशाफल वर्ष ७

मंगल की श्रेष्ठ दशा हो तो भूमि की प्राप्ति, धन का आगमन, सुबुद्धि, चिन्तारहित मन, पराक्रम का उदय, भाइयों से लाभ आदि फल होते हैं। यदि मंगल पापी हो तो रोग और कष्ट देनेवाला तथा कलह, चोरी, अग्नि, कैद, घाव, दृष्टि मन्दता, राजा से पीड़ा, क्रोध आदि होते हैं॥२७॥ मंगल उच्च का या परमोच्च का अथवा मूल त्रिकोण में, स्वगृही, केन्द्र, त्रिकोण, लाभ या धन स्थान में हो॥२८॥ सम्पूर्ण बलयुक्त हो, शुभग्रह से दृष्ट हो, शुभ नवांश में हो तो वहुत भूमि लाभ, राजा से लाभ, धन लाभ, ऐश्वर्य वृद्धि॥२९॥ अधिक राज सम्मान, सवारी, वस्त्र, भूषण, तालाव, विदेश में भूमि, मकान का लाभ, भाइयों का सुख होता है॥३०॥ मंगल बलवान् होकर केन्द्र या तीसरे भाव में हो तो अपने उद्योग से धन का लाभ, युद्ध में शत्रु से जय होती है॥३१॥ स्त्रीपुत्र से सुख तथा राज से सम्मान होता है। दशा के आदि में सुख परन्तु अन्त में कष्ट होता है। मंगल यदि नीच का, ६।८।१२ वें हो, बलरहित हो, पापयुक्त या दृष्ट हो तो नेष्ट फल होता है॥३२॥३३॥

अथ राहुदशावर्षाणि १८ तत्फलम्

राहूत्कृष्टदशा करोति सकलश्रेयो महद्राज्यकृद्धर्मार्थागमपुण्यतीर्थचलनज्ञानप्रभावोच्छ्रयान् ॥ राहोः पापदशा हि भीतिविषभीः सर्वांगरोगार्तिकृच्छस्त्राघातविरोधवृक्षपतनं नारातिपीडोदयान् ॥३४॥ राहोस्तु वृषभं केतोर्वृश्चिकं तुंगसंज्ञकम् ॥ मूलत्रिकोणकर्कं च युग्मचापं तथैव च ॥३५॥ कन्या च स्वगृहं प्रोक्तं मीनं च स्वगृहं स्मृतम् ॥ तद्दाये बहुसौख्यं च धनधान्यादिसंपदाम् ॥३६॥

राहु दशाफल वर्ष १८

राहु की श्रेष्ठ दशा महान् कल्याणकारी, राज्यवृद्धि, धनप्राप्ति, धर्म वृद्धि, तीर्थयात्रा, ज्ञान और प्रभाव की उन्नति करता है। राहु की पापदशा भय तथा सर्वांग रोग, कष्ट, शस्त्र से घात, विष से भय, स्वजन विरोध, वृक्ष से गिरना, शत्रु से पीड़ा आदि नेष्ट फल कारक है॥३४॥ (विशेष फल) राहु का वृष राशि उच्च तथा कर्क राशि मूल त्रिकोण है। केतु का वृश्चिक राशि उच्च और मिथुन राशि मूल त्रिकोण है। और राहु का कन्या राशि और केतु का मीन राशि स्वगृहि है। राहु की श्रेष्ठ दशा में बहुत सुख, धन–धान्य का लाभ होता है॥३५॥३६॥

मित्रप्रभुवशादिष्टं वाहनं पुत्रसंभवः ॥ नूतनगृहनिर्माणं धर्मचिंतामहोत्सवः ॥३७॥ विदेशराजसन्मानं वस्त्रालंकारभूषणम् ॥ शुभयुक्ते शुभैर्दृष्टे योगकारकसंयुते ॥३८॥ केन्द्रत्रिकोणलाभे वा दुश्चिक्ये शुभराशिगे ॥ महाराजप्रसादेन सर्वसंपत्सुखावहम् ॥३९॥ यवनप्रभुसन्मानं गृहे कल्याणसंभवम् ॥ रंध्रे वा व्ययगे राहौ तद्दाये कष्टदो भवेत् ॥४०॥ पापग्रहेण संबंधे मारकग्रहसंयुते ॥ नीचराशिगते वापि स्थानभ्रंशं मनोरुजम् ॥४१॥ विनश्येद्दारपुत्राणां कुत्सितानां च भोजनम् ॥ दशादौ देहपीडा च धनधान्यपरिच्युतिः ॥४२॥ दशामध्ये तु सौख्यं स्यात्स्वदेशे धनलाभकृत् ॥ दशांते कष्टमाप्नोति स्थानभ्रंशो मनोव्यथा ॥४३॥

राहु की श्रेष्ठ दशा में मित्र या स्वामी के द्वारा मनोरथ सिद्धि, वाहन का लाभ, पुत्रोत्पत्ति, नये मकान का बनाना, धार्मिक कार्य करना, विवाहादि उत्सव होते हैं॥३७॥ विदेश यात्रा, राज सम्मान, अलंकार, भूषणादि की प्राप्ति और यदि शुभ ग्रह युक्त अथवा दृष्ट हो, राजयोग कारक ग्रह से युक्त हो॥३८॥ केन्द्र, त्रिकोण या लाभ में हो, तीसरे स्थान में या शुभग्रह की राशि में हो तो राजा अथवा बड़े आदमी के सम्पर्क से बहुत लाभ हो। यवन जाति से लाभ हो, घर में कल्याण हो॥३९॥ आठवें या बारहवें स्थान में हो तो कष्टदायी होता है॥४०॥ पापग्रह से सम्बन्ध हो या मारक ग्रह से युक्त हो, नीच राशि में हो तो स्थान हानि, सम्पत्ति हानि, मन में घोर चिन्ता, स्त्री पुत्र का नाश, हीन भोजन प्राप्त होता है। तथा दशा की आदि में देह पीड़ा धन धान्य का नाश होता है॥४१॥४२॥ दशा के मध्य में सुख अपने देश में ही धन लाभ होता है। अन्त में कष्ट, स्थान हानि, चिन्ता होती है॥४३॥

अथ गुरुमहादशावर्षाणि १६ तत्फलम्

जीवोत्कृष्टदशा करोति विपुलग्रामाधिकारात्मजश्रीसौभाग्यगुणाकराश्रितजनाद्यांदोलिकावैभवान् ।। जैव्या पापदशा महीश्वरभयाद्व्याधिं च धैर्यच्युतिं धान्यानर्थमहीसुतार्तिजनकक्षोभाशनार्तिक्षयान् ।।४४।। स्वोच्चे स्वक्षेत्रगे जीवे केंद्रे लाभत्रिकोणगे ।। मूलत्रिकोणलाभे वा तुंगांशे स्वांशगेऽपि वा ।।४५।। राज्यलाभं महत्सौख्यं राजसन्मानकीर्तनम् ।। गजवाजिसमायुक्तं देवब्राह्मणपूजनम् ।।४६।। दारपुत्रादिसौख्यं च वाहनांबरलाभगम् ।। यज्ञादिकर्मसिद्धिः स्याद्वेदांतश्रवणादिकम् ।।४७।। महाराजप्रसादेन इष्टसिद्धिः सुखावहा ।। आंदोलिकादिलाभश्च कल्याणं च महत्सुखम् ।।४८।। पुत्रदारादिलाभश्च अन्नदानं महत्प्रियम् ।। नीचास्तपापसंयुक्ते जीवे रिष्फाष्टसंयुते ।।४९।। स्थानभ्रंश मनस्तापं पुत्रपीडामहद्भयम् ।। पश्चादिधनहानिश्च तीर्थयात्रादिकं लभेत् ।।५०।। आदौ कष्टफलं चैव चतुष्पाज्जीवलाभकृत् ।। मध्यांते सुखमाप्नोति राजसन्मानवैभवम् ।।५१।।

गुरु महादशा फल वर्ष १६

बृहस्पति की श्रेष्ठ दशा में विपुल धन लाभ, अधिकार प्राप्ति, पुत्रप्राप्ति, सौभाग्य वृद्धि, गुणों का उदय, अनेक नौकर, मोटर आदि सवारी बहुत विभव होता है। और पाप दशा में राजभय, व्याधि, धैर्य, हानि, धन हानि, पृथ्वी और पुत्र की हानि, पिता को कष्ट, चोरी आदि का भय होता है।।४४।। (विशेष फल) बृहस्पति उच्च का या स्वगृहि होकर केन्द्र, लाभ या त्रिकोण में हो, मूल त्रिकोण में या उससे लाभ में हो अथवा परमोच्च हो या अपने नवमांश में हो तो।।४५।। राज्य से लाभ, महान् सुख, सम्मान और कीर्ति, हाथी, घोड़े आदि सवारी, देव–ब्राह्मण की पूजा, स्त्री–पुत्र का सुख, यज्ञ आदिक श्रेष्ठ कर्म, वेदान्त ज्ञान का श्रवण होता है।।४६।।४७।। महाराज की कृपा से इच्छित कार्य की सिद्धि होती है। मोटर आदि सवारी का लाभ। घर में कल्याण और सुख होता है। स्त्री पुत्र का लाभ होता है। अन्न आदिक का दान होता है।।४८।। बृहस्पति नीच का, अस्त या पापग्रह युक्त हो, ८।१२ वें स्थान में हो तो स्थान हानि, चिन्ता, पुत्र–पीड़ा, महान् भय, धन–हानि, तीर्थ यात्रा आदि होती है।।४९।।५०।। गुरुदशा में पहले कुछ कष्ट, मध्य और अन्त में लाभ, सुख, राज सम्मान और वैभव होता है।।५१।।

अथ शनिमहादशावर्षाणि १९ तत्फलम्

मंदोत्कृष्टदशा करोति विभवप्रज्ञानयज्ञादिकक्षेत्रग्रामपुरादिनायकबहुव्यापारदक्षोत्सुकान् ।। मन्दः पापविषप्रयोगधनहृद्देहार्तिव्यर्थोदयान् राजक्रोधविरुद्धकार्यविचलोद्योगांगपीडोदयान् ।।५२।। स्वोच्चे स्वक्षेत्रगे मन्दे मित्रक्षेत्रेऽथ वा यदि ।। मूलत्रिकोणभाग्ये वा तुङ्गांशे स्वांशगेऽपि वा ।।५३।। दुश्चिक्ये लाभगे चैव राजसन्मानवैभवम् ।। सत्कीर्तिर्धनलाभश्च विद्यावादविनोदकृत ।।५४।।

शनिदशाफल वर्ष १९

शनि की श्रेष्ठ दशा में सम्पत्ति, ज्ञान यज्ञादि, ग्राम नगर आदिक का नायक होना, व्यापार

वृद्धि आदि तथा उत्सव होते हैं। शनि की पापदशा में विष प्रयोग, धन की चोरी, देह में कष्ट, रोग, राजकोप, कार्य की विरुद्धता, उद्योग की हानि और शरीर पीड़ा होती है।।५२।। (विशेष फल) शनि यदि उच्च का, स्वगृही, मित्र क्षेत्री, मूल त्रिकोणी अथवा भाग्य स्थान में हो, परमोच्च या अपने नवमांश में हो, ३।११ वें स्थान में हो तो राज से सम्मान और विभूति की प्राप्ति हो। अच्छी कीर्ति या धन का लाभ हो। महाराज की कृपा से हाथी, घोड़ा भूषण का लाभ हो।।५३।।५४।।

महाराजप्रसादेन गजवाहनभूषणम् ।। राजयोगं प्रकुर्वीत सेनाधीशान्महत्सुखम् ।।५५।। लक्ष्मीकटाक्षचिह्नानि राज्यलाभं करोति च ।। गृहे कल्याणसंपत्तिर्दारपुत्रादिलाभकृत्।।५६।। षष्ठाष्टमव्यये मंदे नीचे वास्तंगतेऽपि वा ।। विषशस्त्रादिपीडा च स्थानभ्रंशं महद्भयम् ।।५७।। पितृमातृवियोगं च दारपुत्रादिपीडनम् ।। राजवैषम्यकार्याणि ह्यनिष्टं बंधनं तथा ।।५८।। शुभयुक्तेक्षिते मंदे योगकारकसंयुते ।। केंद्रत्रिकोणलाभे वा मीनगे कार्मुके शनौ ।।५९।। राज्यलाभं महोत्साहं गजाश्वांबरसंकुलम् ।।६०।।

यदि शनि राजयोग करता हो तो सेनापति से सुख हो। घर में खूब लक्ष्मी हो तथा कल्याण, सम्पत्ति, स्त्री–पुत्र लाभ आदिक होते हैं।।५५।।५६।। शनि ६।८।१२ वें हो, नीच अथवा अस्त हो तो विष और शस्त्र से पीड़ा होती है। स्थान हानि और महान् भय होता है।।५७।। माता–पिता का वियोग, स्त्री–पुत्र को पीड़ा होती है। राजकोप से अनिष्ट और बन्धन होता है।।५८।। शनि शुभग्रह से युक्त अथवा दृष्ट होकर तथा राजयोग कारक ग्रह से संयुक्त होकर केन्द्र या त्रिकोण में हो, मीन अथवा धनराशि में हो तो महान् उत्साहयुक्त हो और राज्य से बहुत बड़ा लाभ हो।।६०।।

अथ बुधमहादशावर्षाणि १७ तत्फलम्

सौम्योत्कृष्टदशा करोति वसनानंतादिधान्योच्छ्रयाञ्छ्रेयः सौख्यगृहस्वबंधुविजयप्राप्तीष्टवस्त्वागमान् ।। बोध्याः पापदशाविदेशगमनं क्षोभः स्वबंधुक्षयः प्रज्ञाहीनमतिर्धनार्तिकलहक्षेत्रार्थनाशपदः ।।६१।। स्वोच्चे स्वक्षेत्रसंयुक्ते केंद्रलाभत्रिकोणगे ।। मित्रक्षेत्रसमायुक्ते सौम्ये दाये महत्सुखम् ।।६२।।

बुधमहादशाफल वर्ष–१७

बुध की श्रेष्ठ दशा में सुन्दर वस्त्र, अनन्त धान्यराशि प्राप्ति, कल्याण सुख, स्वजन परिवार सुख, विजय प्राप्ति, इष्ट वस्तु की प्राप्ति आदि फल होता है।। तथा नेष्ट दशा में विदेश यात्रा, दुःख, बन्धुक्षय, बुद्धिहीनता, धनक्षय, कष्ट, आपत्ति, कलह, भूमि तथा धन का नाश होता है।।६१।। बुध उच्चराशि में या स्वगृही होकर केन्द्र या त्रिकोण में अथवा लाभस्थान में हो, मित्रक्षेत्र में स्थित या युक्त हो तो दशा में महान् सुख।।६२।।

धनधान्यादिलाभ च सत्कीर्तिधनसंपदाम् ॥ ज्ञानाधिक्यं नृपप्रीतिं सत्कर्मगुणवर्द्धनम् ॥६३॥ पुत्रदारादि सौख्यं च देहारोग्यं महत्सुखम् ॥ क्षीरेण भोजनं सौख्यं व्यापारेण धनागमम् ॥६४॥ शुभदृष्टियुते सौम्ये भाग्ये कर्माधिपे यदा ॥ आधिपत्ये बलवती संपूर्णफलदायिका ॥६५॥ पापग्रहयुते दृष्टे राजद्वेषं मनोरुजम् ॥ बंधुजन विरोधं च विदेशगमनं तथा ॥६६॥ परप्रेष्यं च कलहं मूत्रकृच्छ्रान्महद्भयम् ॥ षष्ठाष्टमव्यये सौम्ये लाभभोगार्थनाशनम् ॥६७॥ वातपीड़ा धनं चैवं पांडुरोगं तथैव च ॥ नृपचौराग्निभीतिं च कृषिगोभूमिनाशनम् ॥६८॥ दशादौ धनधान्यं च विद्यालाभं महत्सुखम् ॥ पुत्रकल्याणसंपत्तिः सन्मार्गे धनलाभकृत् ॥६९॥ मध्ये नरेंद्रसन्मानमंते दुःखं भविष्यति ॥७०॥

धनधान्यलाभ, सत्कीर्ति, धन, सम्पत्ति की प्राप्ति, ज्ञानवृद्धि, राजप्रीति, सत् कर्म तथा गुण की वृद्धि होती है॥६३॥ स्त्री पुत्र का सुख, देह की आरोग्यता, क्षीरभोजन, सौख्य तथा व्यापार से लाभ होता है॥६४॥ बुध शुभ ग्रह की दृष्टि से युक्त होकर भाग्यस्थान में या दशमेश से युक्त हो। अथवा नवम–दशम का स्वामी हो तो फल पूर्ण होता है॥६५॥ यदि बुध पापयुक्त अथवा दृष्ट हो तो राजद्वेष, मन में चिन्ता बन्धुओं से विरोध, विदेश यात्रा होती है॥६६॥ दूसरे की नौकरी, कलह, मूत्रकृच्छ्र की बीमारी होती है। ६।८।१२ भाव में हो तो लाभ, सुख तथा धन का नाश करता है॥६७॥ वातरोग, पाण्डुरोग, राजा चोर अग्नि से भय, खेती गौ भूमि का नाश होता है॥६८॥ दशा के आदि में–धन, विद्या का लाभ, महान् सुख, पुत्र–प्राप्ति तथा घर में कल्याण, सम्पत्ति, सन्मार्ग प्रवृत्ति, धन का लाभ होता है॥६९॥ दशामध्य में राजसन्मान प्राप्त होता है और अन्त में दुःख होता है॥७०॥

अथ केतुभुक्तिमहादशावर्षाणि ७ तत्फलम्

केतूत्कृष्टदशा करोति विजयक्रूरक्रियार्थागमं म्लेच्छक्ष्मापतिलब्धभाग्यकवनप्रारंभशत्रुक्षयान् ॥ केतोः पापदशातिकष्टविफलानर्थक्रियायोगहृच्छूलास्थिज्वरकंपनद्विजजनद्वेषातिमूर्खक्रियान् ॥७१॥ केंद्रलाभत्रिकोणे वा शुभराशौ शुभेक्षिते ॥ स्वोच्चे वा शुभवर्गे वा राजप्रीतिं मनोरुजम् ॥७२॥ देशग्रामाधिपत्यं च वाहनं पुत्रसंभवम् ॥ देशांतरप्रयाणं च अन्यदेशे सुखावहम् ॥ ७३॥ पुत्रदारसुखं चैव चतुष्पाज्जीवलाभकृत् ॥ दुश्चिक्ये षष्ठलाभे वा केतुदयि सुखं भवेत् ॥७४॥ राज्यं करोति मित्रांशं गजवाजिसमन्वितम् ॥ दशादौ राजयोगाश्च दशामध्ये महद्भयम् ॥७५॥ अंते दूराटनं चैव देहविश्रमणं तथा ॥ धने रंध्रे व्यये केतौ पापदृष्टियुतेक्षिते ॥७६॥ निगडं बंधुनाशं च स्थानभ्रंशं मनोरुजम् ॥ शूद्रशून्यादिलाभं च नानारोगाकुलं भवेत् ॥७७॥

केतुदशा फल वर्ष७

केतु की श्रेष्ठदशा में विजय, क्रूर कर्म से धनप्राप्ति यवन या म्लेच्छराज से भाग्यवृद्धि और शत्रुनाश होता है। केतु की पापदशा में अतिकष्ट विकल मनोरथ धनप्राप्ति के योग की हानि, शूलरोग, अस्थिज्वर कंपनरोग, ब्राह्मणद्वेष, तथा अति मूर्खता होती है॥७१॥ केतु यदि केन्द्र, त्रिकोण, लाभ में शुभराशि में शुभग्रह दृष्ट हो और स्वउच्च में या शुभवर्ग में हों तो राज से

प्रीति, मन में चिंता॥७२॥ देश या ग्राम का आधिपत्य, सवारी, पुत्रोत्पत्ति, देशान्तर यात्रा, तथा अन्य देश में सुख ॥७३॥ स्त्री पुत्र का सुख, गौ आदि का लाभ होता है॥ ३।६।११ भाव में हो तो केतुदशा में सुख होता है॥७४॥ राज्य समान वैभव, मित्र प्राप्ति, सवारी आदि प्राप्त होती है। दशा के आदि में राजयोग और मध्य में महान् भय, अन्त में दूर की यात्रा तथा देहकष्ट या मृत्यु होती है॥७५॥ केतु यदि २।८।१२ में हो और पापयुक्त तथा दृष्ट हो तो कैद, बन्धुनाश, स्थानहानि, चिन्ता, रोग और नीच जाति से लाभ होता है॥७६॥७७॥

अथ शुक्रमहादशावर्षाणि २० तत्फलम्

शौक्री श्रेष्ठदशा करोति सुखसौभाग्योच्छ्रयांदोलिकाऽष्टैश्वर्यैर्युतधर्मबुद्धिकनकारामाश्वगीतोत्सवान्॥शौक्री पापदशा कलत्रभयकृन्नीचार्थहानिप्रदा तिर्यग्जंतुसमुत्थदोषविपुलस्त्रीवर्गरोगोद्भवान् ॥७८॥ परमोच्चगते शुक्रे स्वोच्चे स्वक्षेत्रकेंद्रगे ॥ नृपाभिषेकसंप्राप्तिर्वाहनांबरभूषणम् ॥७९॥ गजाश्वपशुलाभं च नित्यं मिष्टान्नभोजनम् ॥ अखंडमंडलाधीशराजसन्मानवैभवम् ॥८०॥ मृदंगवाद्यघोषं च गृहे लक्ष्मीकटाक्षकृत् ॥ त्रिकोणस्थे मीनशुक्रे राज्यार्थगृहसंपदः ॥८१॥ विवाहोत्सवकार्याणि पुत्रकल्याणवैभवम् ॥ सेनाधिपत्यं कुरुते इष्टबंधुसमागमम् ॥८२॥ नष्टराज्याद्धनप्राप्तिर्गृहे गोधनसंग्रहम् ॥ षष्ठाष्टमव्यये शुक्रे नीचे वा व्ययराशिगे ॥८३॥

शुक्रमहादशा फल वर्ष २०

शुक्र की श्रेष्ठ दशा में सुख सौभाग्य की उन्नति, मोटर आदि सवारी तथा अष्टविध ऐश्वर्य, धर्मबुद्धि, सुन्दर बागीचा, घोड़ा आदियुक्त सवारी, गीतोत्सव आदि श्रेष्ठ फल होता है। शुक्र की पापदशा में स्त्री–पुत्र से भय, नीचसंग से धनहानि, पशु आदि से भय तथा स्त्रीवर्ग को रोग आदि नेष्ट फल होता है॥७८॥ शुक्र उच्च या परमोच्च में या स्वक्षेत्र में होकर केन्द्र में हो तो राजकुलोत्पन्न को राज्यप्राप्ति होती है। वाहन, वस्त्र, भूषण प्राप्त होते हैं॥७९॥ हाथी-घोड़े आदि पशुओं का लाभ होता है। नित्य सुन्दर भोजन और अखण्ड मण्डल (जिला) का अधीशत्व तथा राजा से सन्मान और वैभव प्राप्त होता है॥८०॥ मृदंग आदि वाद्यों का शब्द (गाना बजाना) होता रहता है। घर में लक्ष्मी की कृपा रहती है। यदि शुक्र मीनराशि का त्रिकोण में हो तो राजा के समान धन सम्पत्ति होती है॥८१॥ विवाह आदि उत्सव के कार्य, पुत्रोत्पत्ति तथा सेनापतित्व, इष्ट–मित्र सम्मिलन॥८२॥ नष्ट हुआ राज्य भी प्राप्त होता है। घर में गोधन होता है। यदि शुक्र ६।८।१२ स्थान में हो अथवा नीच का या व्ययेशराशि में हो॥८३॥

आत्मबंधुजनद्वेषं दारवर्गादिपीडनम् ॥ व्यवसायात्फलं नष्टं गोमहिष्यादिहानिकृत् ॥८४॥ दारपुत्रादिपीडा वा आत्मबंधुवियोगकृत् ॥ भाग्यकर्माधिपत्येन लग्नवाहनराशिगे ॥८५॥ तद्दशायां महत्सौख्यं देशग्रामाधिपत्यताम् ॥ देवालयतडागादिपुण्यकर्मसु संग्रहम् ॥८६॥ अन्नदाने महत्सौख्यं नित्यं मिष्टानभोजनम् ॥ उत्साहः कीर्तिसंपत्ती स्त्रीपुत्रधनसंपदः ॥८७॥ स्वभुक्तौ फलमेवं स्याद्बलान्यन्यानि भुक्तिषु ॥ द्वितीयद्यूननाथे तु देहपीडा भविष्यति ॥८८॥ तद्दोषपरिहारार्थं रुद्रं वा त्र्यंबकं जपेत् ॥ श्वेतां गां महिषीं दद्यादारोग्यं च भविष्यति ॥८९॥

तो आत्मीय स्वजनों से द्वेष, स्त्री आदि को पीड़ा हो, व्यापार से होनेवाले फल की हानि, गौ–भैंस आदि का नाश।।८४।। स्त्री–पुत्र को पीड़ा, आत्मीय–बन्धु से वियोग होता है। ९।१० का स्वामी होकर लग्न तथा तृतीय भाव में हो।।८५।। तो शुक्र की दशा में महान् सुख एवं देश या नगर का आधिपत्य, देवालय (देवमन्दिर) तालाब आदि धर्म कार्य में रुचि।।८६।। अन्नदान हो तथा महान् सुख हो, नित्य मिष्टान्न भोजन हो। उत्साह की वृद्धि, कीर्ति, सम्पत्ति, स्त्री–पुत्र धन सम्पत्ति हो।।८७।। अपने अन्तर में तो उपर्युक्त फल होता है। अन्यान्य अन्तर अपना २ विशेष फल देते हैं। द्वितीय तथा सप्तम भाव का स्वामी हो तो देहपीड़ा होती है।।८८।। उस दोष के नाश के लिए रुद्रपाठ या त्र्यम्बक मन्त्र का जंप करे। तथा श्वेत वर्ण की गौ दूधवाली का दान करे तो आरोग्यता प्राप्त होती है।।८९।।

अथ द्वादशभावाधीशदशाफलमाह

लग्नेशस्य दशा बलं बहुधनं वित्तेशितुः पंचतां कष्टं वेति सहोदरालयपतेः पापं फलं प्रायशः ।। तुर्यस्वामिन आलयं किल सुताधीशस्य विद्यासुखं रोगागारपतेररातिजभयं जायापतेः शोकताम् ।।९०।। मृत्युं मृत्युपतेः करोति नियतं धर्मेशितुः सत्क्रियां चित्तं राजपतेर्नृपाश्रयमथो लाभं हि लाभेशितुः ।। रोगं द्रव्यविनाशनं च बहुधा कष्टं व्ययेशस्य वै पूर्वैरंगभृतामुदीरितमिदं तन्वादिभावेशजम्।।९१।। भावाधिपो बलयुतो निजगेहगामी तुङ्गत्रिकोणशुभवर्गगतोपि पूर्णम् ।। जंतोःफलं खलु करोति यदारिनीचस्थानस्थितोऽशुभफलं विबलो विशेषात् ।।९२।। आहुः शुभा-शुभफलं नृणां कालविदो जनाः ।। एतद्धृतं विनिर्णीतमायुषां निश्चयो नृणाम् ।।९३।। पंचमेशदशायां तु धर्मपस्य दशा तु या ।। अतीव शुभदा प्रोक्ताकालविद्भिर्मुनीश्वरैः ।।९४।। समंत्रनाथस्य तपोधिपस्य दशा शुभा राज्यसुतप्रदा स्यात् ।। सत्कीर्तिनाथस्य सुखेश्वरस्य दशा तथा प्राहुरुदार चित्ताः ।।९५।। पंचमेशेन युक्तस्य ग्रहस्य शुभदा दशा ।। नाथे धर्मपयुक्तस्य दशा परमशोभना ।।९६।।

द्वादशभावाधीश दशाफल

लग्नेश की दशा शारीरिक बल देती है। धनेश की दशा शुभ हो तो धनदाता, अशुभ हो तो कष्ट और मृत्यु। तृतीयेश की दशा प्रायः नेष्ट फल दायक होती है। सुखेश की दशा में भूमि और मकान का विचार। पंचमेश की दशा में विद्या सम्बन्धी और संतान सम्वन्धी विचार किया जाता है। षष्ठेश की दशा में शत्रू का भय तथा सप्तमेश की दशा में रोग और कष्ट का विचार होता है।। अष्टमेशकी दशामें मृत्यु का विचार। नवमेशमें सत्कार्य का विचार। दशमेश से राज्य से लाभ का विचार। लाभेश से लाभ तथा व्ययेश की दशा में रोग, धन हानि और कष्ट का विचार होता है। मनुष्यों के लिये इस प्रकार कुण्डली से १२ भावों के विचार करने योग्य पदार्थों का निर्णय किया है।।९१।। किसी भी भाव का स्वामी बलवान् हो, स्वगृही हो उच्च तथा त्रिकोण में अथवा शुभ वर्ग में हो तो सम्पूर्ण शुभ फल करता है। और यदि शत्रु राशि में, नीच राशि में तथा निर्बल हो तो अशुभ फलकारक है।।९२।। और प्राचीन आचार्यों ने कहा है कि शुभग्रह प्रायः शुभ फ़ल देते हैं। और आयु का भी निर्णय किया है।।९३।। पंचमेश और नवमेश की दशा बहुत श्रेष्ठ होती है, ऐसा प्राचीन आचार्यों ने कहा है।।९४।। पंचमेश

और दशमेश की दशा सन्तान और ऐश्वर्य देनेवाली होती है। सुखेश तथा नवमेश की दशा सुख तथा कीर्तिदायक होती है।।९५।। कोई भी दशा पंचमेश से युक्त हो तो शुभदायक होती है। नवमेश से युक्त हो तो अति सुखदायक होती है।।९६।।

पापदृष्टस्य खेटस्य दशा राजप्रदायिनी ।। शुभयुक्तस्य खेटस्य दशा द्रव्यप्रदायिनी ।। सपंचमेशलग्ने वा दशा राज्यप्रदायिनी।।९७।।सपंचमेशस्य तपोधिपस्य दशा भवेद्राज्यसुखार्थलाभदा ।। तथैव मानाधिपसंयुतस्य सुतेश्वरस्यापि दशा शुभा स्यात् ।।९८।। पंचमेशेन युक्तस्य मानेंद्रस्य दशा शुभा ।। सुखेशसहितस्यापि धर्मेशस्य दशा शुभा ।। पञ्चमस्थानगस्यापि मानेशस्य दशा शुभा ।।९९।। शुभाशुभस्थानगमा न यस्य तथैव मानार्थसुखान्विता स्यात् ।। तदा नृणां सौख्यकरी भवेद्धि सुखेशयुक्तस्य च मानवस्य ।।१००।।

पंचमेश से दृष्ट या युक्त हो तो ऐश्वर्य देनेवाली तथा द्रव्यदाता होती है। पंचमेश लग्न में हो तो राज्य देनेवाली होती है।।९७।। पंचमेश और दशमेश की दशा राज्य, सुख और धन लाभ देती है। पंचमेश, दशमेश से युक्त हो तो बहुत श्रेष्ठ होती है।।९८।। पंचमेश से युक्त दशमेश की दशा शुभ होती है। सुखेश से युक्त नवमेश की दशा शुभ होती है। दशमेश पंचमभाव में हो तो भी उसकी दशा शुभ होती है।।९९।। ऊपर कही हुई दशायें अशुभ स्थान में न हों तो मान, धन, सुख देनेवाली होती हैं। तब ये दशायें सुख भाव के स्वामी से युक्त हों तो विशेष सुखकारी होती हैं।।१००।।

षष्ठस्य सप्तमस्यैको नायको मानराशिगः ।। दशा तस्य शुभा ज्ञेया तथा तेन युतस्य च ।।१।। एको द्विसप्तमस्थाननायको यदि सौख्यगः ।। तेन युक्ता दशा ज्ञेया शुभा प्राहुर्मनीषिणः ।।२।। षष्ठाष्टमव्ययाधीशाः पञ्चमाधिसंयुताः ।। तेषां दशा च शुभदा प्रोच्यते कालवित्तमैः ।।३।। सुखेशो मानभावस्थो मानेशसुखराशिगः ।। तयोर्दशां शुभां प्राहुर्ज्योतिः शास्त्रविदो जनाः ।।४।। सुतेशमानेशसुखेशधर्मपा एकत्र युक्ता यदि यत्र कुत्र ।। तेषां दशा राज्यफलप्रदा तैर्युक्तग्रहाणामपि वै वदेद्वा ।।५।। बाहनस्थानसंयुक्तमंत्रनाथदशा शुभा ।। सुखराशिस्थकर्मेशदशा राज्यप्रदायिनी ।।६।।

छठे, सातवें स्थान का यदि एक ही स्वामी होकर दशम भाव में हो तो उसकी दशा शुभ होती है। यदि सुखेश से युक्त हो तो अधिक शुभ होती है।।१०१।। (यह योग केवल सिंह लग्न में ६–७ का स्वामी शनि होने से प्राप्त होता है।) एक ही ग्रह दूसरे सातवें घर का मालिक होकर चतुर्थ भाव में हो और चतुर्थेश से युक्त हो तो उसकी दशा शुभ होती है।।१०२।। (यह योग मेष लग्न में शुक्र तथा तुला लग्न में मंगल से होता है।) ६।८।१२ के स्वामी पंचमेश से युक्त हों तो उनकी दशा शुभ होती है।।१०३।। सुखेश दशम में दशमेश सुखभाव में हों तो दोनों दशायें शुभ होती हैं, ऐसा ज्योतिषशास्त्र के जाननेवाले कहते हैं।।१०४।। ४।५।९।१० वां के स्वामी यदि किसी भी भाव में मिलकर स्थित हों तो उनकी दशा राज्य देनेवाली होती है। और इनसे सम्बन्धित दशा भी शुभ होती है।।१०५।। तृतीयेश पंचमेश के साथ युक्त हो तो शुभ तथा दशमेश चतुर्थ भाव में हो तो ऐश्वर्य दात्री होती है।।१०६।।

ताभ्यां युक्तस्य खेटस्य दृष्टियुक्तस्य चैतयोः ।। राज्यप्रदां दशां प्राहुर्विद्वांसो दैवचिंतकाः ।।७।। कर्मस्थानस्य बुद्धीशदशा संपत्करी भवेत् ।। मानस्थिततपोधीशदशा राज्यप्रदायिनी ।।८।। यस्मिन्भावे शुभस्वामिसंबंधस्तुङ्गखेचरः ।। स्यात्तद्भावदशायां तु अत्यैश्वर्यमखंडितम् ।।९।। यद्भावेशः स्वार्थराशिमधितिष्ठति पश्यति ।। स्यात्तद्भावदशाकाले धनलाभो महत्तरः ।।११०।। यस्माद्व्ययगतो यस्तु तद्दशायां धनक्षयम् ।। यस्मात्त्रिकोणगाः पापास्तत्रात्मशम-नाशनम् ।।११।। पुत्रहानिः पितुः पीडा मनस्तापो महान् भवेत् ।। यस्मात्त्रिकोणगा रिःफरंध्रेशार्केन्दुसूर्यजाः ।।१२।।

पंचमेश दशमेश से युक्त तथा दृष्ट ग्रह की दशा ज्योतिषियों ने शुभ कही है।।१०७।। इसी प्रकार पंचमेश दशमभाव में हो तो उसकी दशा सम्पत्ति देनेवाली और नवमेश दशम भाव में हो तो राज्य दायिनी होती है।।१०८।। जिस भाव में शुभग्रह युक्त उच्च राशि का ग्रह हो उस भाव की राशि की दशा अखण्डित महान् ऐश्वर्य देनेवाली होती है।।१०९।। जिस भाव का स्वामी अपने राशि में स्थित है उस भाव की दशा के समय महान् धन लाभ होता है।।११०।। जिस भाव से उस भाव का स्वामी १२ वें भाव में हो उस भाव की दशा में धन हानि होती है। और जिस भाव से पापग्रह त्रिकोण भाव में हों तो चित्त चिन्तित और दुःखित रहता है।।१११।। जिस भाव में सूर्य, चन्द्रमा, शनि तथा व्ययेश और अष्टमेश त्रिकोण भाव में हों तो उस भाव राशिकी दशामें पुत्र हानि, पिताको पीड़ा तथा महान् दुःख होता है।।११२।।

पुत्रपीडा द्रव्यहानिस्तत्र केत्वहिसंगमे ।। विदेशभ्रमणं क्लेशो भयं चैव पदे पदे ।।१३।। यस्मात्षष्ठाष्टमे क्रूरनीचखेटादयः स्थिताः ।। रोगशत्रुनृपाद्वा स्यान्मुहुः पीडा सुदुःसहा ।।१४।। यस्माच्चतुर्थः क्रूरः स्याद्भूगृहक्षेत्रनाशनम् ।। पशुहानिस्तत्र भौमे गृहेदाहप्रमातृधृक् ।।१५।। शनौ हृदयशूलं स्यात्सूर्ये राजप्रकोपनम् ।। सर्वस्वहरणं राहौ विषचौरादिजं भयम् ।।१६।। यस्मादृशमभे राहुः पुण्यतीर्थाटनं भवेत् ।। तस्मात्कर्मायभाग्यर्क्षगताः शोभनखेचराः।।१७।।

जिस भाव में राहु या केतु हों, उस भाव की दशा में पुत्र पीड़ा, धनहानि, विदेशभ्रमण, भय तथा क्लेष होता है।।११३।। जिस भाव से ६।८ वें पापग्रह तथा नीचस्थग्रह हो तो रोग, शत्रु, राजा से अत्यन्त पीड़ा होती है और बार बार होती है।।११४।। जिस भाव से पापग्रह चौथे स्थान में हो तो उसकी दशा में भूमि, मकान, खेत का नाश और पशु हानि होती है। यदि मंगल चौथे हो तो गृह स्वामीयुक्त मकान अग्नि से नष्ट होता है।।११५।। शनि चौथे हो तो हृदयशूल, सूर्य से राजभय, राहु से सर्वस्व हानि तथा विष, चोर आदि का भय होता है।।११६।। जिस भाव से दशम भाव में राहु हो और राहु से ९।१०।११ में शुभ ग्रह हो तो शुभ मंगलकारी, तीर्थयात्रा होती है।।११७।।

विद्यार्थधर्मसत्कर्मख्यातिपौरुषसिद्धयः ।। यतः पंचमकामारिगताः स्वोच्चशुभग्रहाः ।।१८।।

पुत्रदारादिसंप्राप्तिर्नृपपूजा महत्तरा ।। यस्मिन् ज्ञानाय कर्माबुनवलग्नाधिपाः स्थिताः ।।१९।। तत्तद्भावार्थसिद्धिः स्याच्छ्रेयो योगानुसारतः ।। यस्मिन् गुरुर्वा शुक्रो वा शुभेशो वापि संस्थितः ।। २०।। कल्याणोत्सवसपत्तिर्देवब्राह्मणतर्पणम् ।। यच्चतुर्थे तुंगखेटाः शुभस्वामी ग्रहश्च वा ।।२१।।

जिस भाव से पांचवें, छठवें, सातवें उच्च राशि स्थित शुभ ग्रह हों तो विद्या, धन, धर्म, सत्कर्म, ख्याति और पौरुष की सिद्धि होती है।।११८।। जिस भाव में ४।५।९।१०।११ भावों के स्वामी हों उस दशा में पुत्र, स्त्री आदि प्राप्ति तथा राजकुल में महान् आदर होता है।।११९।। जिस भाव में बृहस्पति अथवा शुक्र या शुभभाव का स्वामी हो उस भाव की सिद्धि तथा योगानुसार कल्याण होता है।।१२०।। जिस भाव के चौथे स्थान के उच्चराशिगत ग्रह हो या शुभ ग्रह हो तो उसकी दशा में कल्याण, उत्सव, सम्पत्ति तथा देव–ब्राह्मण की पूजा होती है।।१२१।।

वाहनग्रामलाभश्च पशुवृद्धिश्च भूयसी ।। तत्र चंद्रेशलाभः स्याद्बहुधान्यरसान्युत ।।२२।। पूर्णे विधौ निधिप्राप्तिर्लभेद्वा मणिसंचयम् ।। तत्र शुक्रे मृदंगादिवाद्यगानपुरस्कृतः ।।२३।। आंदोलिकाप्तिर्जीवे तु कनकांदोलिका ध्रुवम् ।। लग्नकर्मेशभाग्येशतुंगस्थशुभयोगतः ।।२४।। सर्वोत्कर्षमहैश्वर्यसाम्राज्यादिमहत्फलम् ।। एवं तत्तद्भावदायफलं यत्स्याद्विचिंतयेत् ।।२५।। एकैकोडुदशा स्वीया गुणैरष्टादशात्मना ।। भिन्ना फलविपाकस्तु कुर्याद्वै चित्रसंयुतम् ।।२६।। परमोच्चे तुंगमात्रे तदर्वाक्तदुपर्यपि ।। मूल त्रिकोणभे स्वर्क्षे स्वाधिमित्रग्रहस्य भे ।।२७।।

तथा वाहन और भूमि का लाभ होता है, पशुओं की वृद्धि होती है। चन्द्र या चन्द्रेश युक्त हो तो बहु धान्य, रस (घी,चीनी) प्राप्त होती है।।१२२।। जिस भाव से चतुर्थ स्थान में पूर्ण चन्द्रमा हो और उच्चराशि का हो तो भूमिगत द्रव्य अथवा मणि आदि की प्राप्ति होती है। और यदि शुक्र हो तो नाच गान का आनन्द रहता है।।१२३।। बृहस्पति हो तो मोटर आदि की सवारी। लग्नेश, कर्मेश, भाग्येश और उच्चस्थ शुभग्रह का योग हो तो सुवर्ण रत्न–युक्त सिंहासन प्राप्त होता है।।१२४।। और उच्चस्थ बृहस्पति का योग हो तो सर्वोत्कर्ष युक्त महान् ऐश्वर्यशाली साम्राज्य प्राप्त होता है। इस प्रकार भाव की दशा का फल अच्छी तरह विचार कर कहना चाहिए।।१२५।। एक २ ही राशि की दशा अपने शुभग्रह और पापग्रहों के १८ प्रकार के योगों से भिन्न २ विचित्र फलदायक होती है।।१२६।। (अब अठारह प्रकार के योग दिखाते हैं) प्रथम शुभयोग–परमोच्च ग्रह का सम्बन्ध, केवल उच्च का सम्बन्ध अथवा उस भाव से सम्बंधित प्रथम अथवा द्वितीय भाव में उच्च ग्रह का सम्बन्ध या मूल त्रिकोण, स्वगृही, अधिमित्रगृही या मित्र गृही अथवा दृष्टियुक्त समगृही हो।।१२७।।

तत्कालसुहृदो गेहे उदासीनस्य भे तथा ।। शत्रोर्भेऽधि रिपोर्भे च नीचांतादूर्ध्वदेशभे ।।२८।। तस्मादर्वाङ् नीचमात्रे नीचांते परमांशके ।। नीचारिवर्गे शकले स्ववर्गे केंद्रकोणभे ।।२९।। अवस्थितस्य खेटस्य समरे पीडितस्य च ।। गाढमूढस्य च दशापचितिः स्वगुणैः फलम् ।। ३०।। परमोच्चगतो यस्तु योऽतिवीर्यपरत्रवान् ।। संपूर्णाख्या तद्दशा तु राज्यभोग्यशुभप्रदा ।।३१।।

लक्ष्मीकटाक्षचिह्नानां चिदावासगृहप्रदा ।। तुंगमात्रगतस्यापि तथा वीर्याधिकस्य च ।।३२।। पूर्णाख्या बहुधैश्वर्यदायिन्यपि रुजप्रदा ।। अतिनीचगतस्यापि दुर्बलस्य ग्रहस्य तु ।।३३।। रिक्तासानिष्टफलदा व्याध्यनर्थमृतिप्रदा ।। अत्युच्चादतिनीचान्नं मध्यगस्य च रोहिणी ।।३४।।

अब अशुभ सम्बन्ध दिखाते हैं–शत्रु की राशि में, अधिशत्रु की राशि में, नीच और परम नीच में अथवा पिछली अगली राशि में पापग्रह का योग, नीच अंश में, नीच वर्ग में और बलहीन होना ये पाप योग के ९ भेद हुए ।। शुभयोग में विशेष कहते हैं। अपने वर्ग में, केन्द्र या त्रिकोण में शुभ होता है। ऐसे ही पापग्रहों से पीड़ित और पराजित ग्रह सुषुप्ति अवस्था में अथवा मूढ़ अवस्था में होने से अशुभ होता है और उसकी दशा नेष्ट होती है ।। जो ग्रह परमोच्च राशिगत तथा पूर्ण बलवान् हो उसकी दशा सम्पूर्ण राज्यभोग और शुभफल दायक होती है।।१३१।। उस दशा में घर में लक्ष्मी का भण्डार भरा रहता है। श्रेष्ठ भवन आदि का सुख होता है। उच्च राशि गत होने पर भी यदि पूर्ण बलवान् हो।।१३२।। तो उस दशा में अनेक प्रकार के ऐश्वर्य रहते हुए भी कुछ रोगों की चिन्ता रहती है। अति नीचगत दुर्बल ग्रह की दशा में।।१३३।। जो अपने उच्च से नीच राशि की तरफ आता हुआ ग्रह मध्य में हो, उस ग्रह की दशा अवरोहिणी कहलाती है। (अवरोहण= नीचे उतरना) फल–व्याधि, अर्थहानि, क्लेश आदि तथा मृत्युदायक है।।१३४।।

मित्रोच्चभावप्राप्तस्य मध्याख्या ह्यर्थदा दशा ।। नीचांतादुच्चभागान्तं भषट्के मध्यगस्य च ।।३५।। दशा चाऽऽरोहिणी नीचरिपुभांशगतस्य च ।। अधमाख्या भयक्लेशव्याधिदुःखविवर्द्धिनी ।।३६।। नामानुरूपफलदा पाककाले दशा इमा ।। भाग्येशगुरुसंबंधा योगदृक्केंद्रभादिभिः ।।३७।। परेषामपि दायेषु भाग्योपक्रममुन्नयेत् ।। जातको यस्तु फलदो भाग्ययोगप्रदोऽथ यः ।।३८।। सफलो वक्रिमादूर्ध्वमन्यानपि च खेचरान् ।। दुर्बलानसमर्थांश्च फलदानेषु योगतः ।।३९।। तारतम्यात्सुसंबंधा दशा ह्येताः फलप्रदाः ।। स्वकेंद्रादिजुषां तेषां पूर्णार्द्धांघ्रिव्यवस्थया ।।१४०।।

अपनी नीच राशि से उच्च राशि की तरफ जाता हुआ मध्य में जो ग्रह है अथवा जो मित्र की उच्च राशि में हो तो वह 'मध्या' नाम की दशा है और धनदातृ है। और इस दशा का नाम आरोहिणी है।।१३५।। (आरोहण=ऊपर चढ़ना) जो ग्रह नीच राशि में या शत्रु के नवांश में हो उसकी दशा अधमा नाम की है। वह दशा भय, क्लेश, व्याधि और दुःख बढ़ानेवाली होती है।।१३६।। अपने दशाकाल में नाम के अनुसार फल देनेवाली ये दशायें हैं।।१३७।। यदि ग्रह भाग्येश अथवा बृहस्पति से युक्त अथवा दृष्टि सम्बन्ध रखता हो तो दूसरे ग्रहों की दशा में भी अपने अन्तर में भाग्य वृद्धि कारक होता है।।१३८।। जो ग्रह भाग्य योग देनेवाला है, वह मार्गी हो अथवा होने पर और जो बलहीन ग्रह हैं उनसे दृष्टि आदि सम्बन्ध करता हो तो उनको भी श्रेष्ठ फलदान में समर्थ कर देता है।।१३९।। बलाबल के अनुसार यथासम्बन्ध से उन ग्रहों की दशा शुभफल देने में समर्थ होती है।।१४०।।

प्रसह्यकार इत्येतत्संततं संपदां बलात् ।। शीर्षोदयस्वगा स्वस्वदशादौ स्वफलप्रदा ।।४१।। उदयोदयराशिस्थदशा मध्यफलप्रदा ।। पृष्ठोदयर्क्षगाः खेटाः स्वदशांते फलप्रदां ।।४२।। जन्मकाले दशानाथस्वेष्टगानां विचारणे ।। निसर्गतश्च तत्काले सुहृदां हरणे शुभम् ।।४३।। संपादयेत्तदा कष्टं तद्विपर्ययगामिनाम् ।। दशेशाक्रांतभावानां दारस्य द्वादशार्क्षभम् ।।४४।। भुक्त्वा द्वादशराशीनां दशाभुक्तिं प्रकल्पयेत् ।। एकैकराशेर्या तत्र सुहृत्स्वक्षेत्रगामिनी ।।४५।। तस्या राज्यादिसंपत्तिपूर्वकं शुभमीरयेत् ।। दुःस्थानरिपुनीचस्थनीचक्रूरयुता च या ।।४६।। तस्यामनर्थकलहं रोगमृत्युभयादिकम् ।। बिंदुभूयस्त्वशून्यत्ववशत्वीयाष्टवर्गके ।।४७।। वृद्धिं हानिं च तद्राशिं भावस्य स्वग्रहात्क्रमात् ।। भावयोजनया विद्यात्सुताद्यादि शुभाशुभम्।।४८।।

यदि ग्रह स्वगृही अथवा केन्द्र आदि शुभस्थान में हो तो अपने विश्वाबल के अनुसार पूरा, आधा या चौथाई जितना फल देने में समर्थ हो तथा शीर्षोदयी राशि में हो तो निरन्तर ही सम्पत्तियों को जबर्दस्ती खींचकर लानेवाला तथा अपनी दशा के आदि में पूरा फल देनेवाला होता है।।४१।। सूर्योदयी राशि में जो दशा हो वह मध्यम काल में फल तथा पृष्ठोदयी राशि की दशा मध्यम फल देनेवाली होती है।। वह फल भी दशा के अन्त में ही देती है।।४२।। मनुष्य के जन्म समय में दशा के स्वामी ग्रह तथा अन्य ग्रहों के विचार करने में नैसर्गिक बल तथा तात्कालिक बल और मैत्रीबल का विचार करे।।४३।। इस बल के अनुसार शुभ और अशुभ फल का निर्णय करे। और ग्रह के शत्रु सम ग्रहों का भी निरीक्षण करे। दशा के स्वामी से विपरीत भाववाले ग्रहों का सम्बन्ध तथा दशास्वामी से सम्बन्धित भावों का विचार बारहों राशियों में करे।।४४।। बारह राशियों की दशा तथा अन्तर–दशा की कल्पना करे। जिस भाव की राशि अपने मित्र या स्वगृही ग्रह से युक्त हो।।४५।। उस दशा में राजा के समान सम्पत्ति और सुख होता है और जो राशि शत्रु, नीचत्व, अथवा नीच तथा पापग्रह युक्त हो उसकी दशा में अनर्थ, कलह, रोग और मृत्युभय होता है। इसी प्रकार उस राशि के अष्टक वर्ग के विचार में यदि बिन्दु अधिक हों अथवा केवल शून्य हों अथवा रेखा अधिक हों।।४७।। तो हानि या वृद्धि भाव के ग्रह के अनुसार जानें। भावराशि की दशा में सन्तान आदि पदार्थों का भी शुभाशुभ विचार करे।।४८।।

धात्वादिराशिभेदाच्च धात्वादिग्रहयोगतः ।। शुभपापदशाभेदाच्छुभपापयुतैरपि ।।४९।। इष्टानिष्टस्थानभेदात्फलभेदात्समुन्नयेत् ।। एवं सर्वग्रहाणां च स्वां स्वामंतर्दशामपि ।।१५०।। स्वराशितो राशिभुक्तिं प्रकल्प्य फलमीरयेत् ।। अन्तरंतर्दशां स्वीयां विभज्यैवं पुनः पुनः ।।५१।। कालसंक्षेपतः सूक्ष्मफलं ब्रूयाद्दिनं प्रति ।। स्वाध्यारंभकृतो होराग्रंथेऽयमपि वाऽमुना ।।५२।। केन्द्रे कोणे कारका भावनाथा भावप्राप्तिर्दुःस्थिता भावहत्यै ।। अर्थे लाभे विक्रमा वा यदा ते भावात्सर्वेमातृपित्रादितुल्याः ।।५३।। भावं पश्यति भावेशो भावस्थे लग्नगेऽपि वा ।। बलिनः स्वोच्चगे वाऽपि तद्भावात्त्विष्टपुष्टया ।।५४।।

राशि के बलाबल भेद से तथा बलवान ग्रहों के योग आदि से शुभ या अशुभ ग्रहों के योग

से दशा के फल में भेद होता है।।४९।। शुभ और अशुभ स्थान के भेद से भी फल में भेद होता है। इस प्रकार सभी ग्रह अपनी अपनी अन्तर्दशाओं में भी अपना फल देते हैं।।१५०।। किसी भी राशि की अन्तर्दशा में भिन्न–भिन्न अन्तर्दशाओ में ग्रहयोग के अनुसार भिन्न भिन्न फल देते हैं।।५१।। अन्तर्दशा और प्रत्यन्तरदशा तथा सूक्ष्मदशा निकालकर दिन–दिन का फल कहना चाहिए। इस प्रकार जो मनुष्य होराग्रन्थ का स्वाध्याय करेंगे, वे फल कहने में समर्थ होंगे।।५२।। जिन भावों के स्वामी कारक होकर केन्द्र या त्रिकोण में हों तो उस भाव के फल की प्राप्ति होती है। और दुष्ट स्थान में हों तो उस भाव की हानि होती है। भाव का स्वामी दूसरे, तीसरे तथा लाभ में हो तो माता–पिता के कारक होते हैं।।५३।। जिस भाव का स्वामी अपने भाव को देखता हो या अपने भाव में हो अथवा लग्न में हो, बलवान और उच्चराशि में हो तो उस भाव से इच्छित फल प्राप्त होता है।।५४।।

यद्भावेशोरिनीचस्थो मूढो वा तन्न पश्यति ।। तद्भावासत्त्वमालस्यं वैरित्वं च विनिर्दिशेत् ।।५५।। भावेशाक्रांतराशीशो यदि रंध्रारिरिःफगः ।। तद्भावनाशनं चैव भावनाथेन दृश्यते ।।५६।। परमोच्चगते विलग्ननाथे तनुभावे शुभखेचरेण दृष्टे ।। उडुपे शुभसंयुते च दृष्टे शतमायुः प्रवदंति बुद्धिमंतः ।।५७।। भावैश्चतुर्भिर्बलिभिर्धनभाग्यायकर्मभिः ।। संपूर्णवित्तं सततं कुबेर इव जायते ।।५८।। लग्ने वाहेशदेहानां संबन्धश्चाश्ववाहनम् ।।शुक्रेणांदोलिकाप्राप्तिर्गुरुणा गजवाहनम् ।।५९।। केन्द्रायस्वविलग्नकोणसहजस्थौ कांत्यवाहेश्वरौ देहेऽयेन्दुविलग्ननाथसहिता-वन्योन्यभावाश्रितौ ।। अन्योन्यामतिभाग्यकंटकगतौ दुःस्थानगौ स्वग्रहं पश्येतां यदि दीनवंशजनितोऽपि स्याच्चतुर्वाहनः ।।१६०।।

इति श्रीबृहत्पाराशरहोराशास्त्रे पूर्वखण्डे विंशोत्तरीमहादशाफलकथनं
नाम द्वात्रिंशत्तमोऽध्यायः ।।३२।।

जिस भाव का स्वामी शत्रु राशि में या नीच का हो तथा मूढ़ अवस्था में हो और अपने भाव को न देखता हो तो उस भाव की हानि, आलस्य अथवा शत्रुता प्राप्त होती है।।५५।। जिस भाव का स्वामी जिस राशि में स्थित हो उस राशि का स्वामी यदि ६।८।१२ स्थान में हो तो उस भाव की हानि होती है। यदि भावेश न देखता हो।।५६।। लग्नेश लग्न में परमोच्च अंश में हो तथा शुभग्रह की दृष्टि हो और उस राशि पर भी सौम्य ग्रह की दृष्टि या योग हो तो मनुष्य की आयु १०० वर्ष की होती है।।५७।। जिस मनुष्य के जन्म–लग्न में धनभाव तथा ९।१०।११ भावों के स्वामी चारों ही पूर्वोक्त पूर्ण बल से युक्त हों तो वह मनुष्य संसार में प्रसिद्ध धनकुबेर होता है।।५८।। लग्नेश और चतुर्थेश का सम्बन्ध हो तो घोड़े की सवारी और इनके साथ शुक्र का भी सम्बन्ध हो तो मोटर की सवारी तथा बृहस्पति के सम्बन्ध से हाथी की सवारी होती है।।५९।। जिस मनुष्य की जन्मकुण्डली में लग्नेश तथा चन्द्रमा केन्द्र, लाभ, धन, लग्न, त्रिकोण, अथवा सहज स्थान में हों, अथवा इन स्थानों के स्वामी हों, अथवा परस्पर एक दूसरें के भाव में हो अथवा केन्द्र या त्रिकोण में हो तथा अपने स्थान को देखते हों तो दीन वंश में पैदा हुआ मनुष्य भी चतुरंगिणी सेना का नायक होता है।।१६०।।

इति श्रीबृहत्पाराशरहोराशास्त्रे पूर्वखण्डे भावप्रकाशिकायां विंशोत्तरीमहादशाफलकथनं
नाम द्वात्रिंशत्तमोऽध्यायः ।।३२।।

अथान्तर्दशाकरणमाह

दशा दशाहता कार्या दशभिर्भागमाहरेत् ।। लब्धांकाश्च भवेन्मासास्त्रिंशघ्ने च दिनानि च ।।१।।

अथ सूर्यविंशोत्तरीवर्षाणि ६ तन्मध्येंतरमाह									
सू	चं	मं	रा	बृ	श	बु	के	शु	ग्रह
०	०	०	०	०	०	०	०	१	०
३	६	४	१०	९	११	१०	४	०	०
१८	०	६	२४	१८	१२	६	६	०	०
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०

अथ चंद्रविंशोत्तरीवर्षाणि १० तन्मध्येन्तरम्									
चं	मं	रा	बृ	श	बु	के	शु	सू	ग्र
०	०	१	१	१	१	०	१	०	०
१०	७	६	४	७	५	७	८	६	०
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०

अथ भौमविंशोत्तरीवर्षाणि ७ तन्मध्येन्तरम्									
मं	रा	बृ	श	बु	के	शु	सू	चं	ग्र
०	१	०	१	०	०	१	०	०	०
४	०	११	१	११	४	२	४	७	०
२७	१८	६	९	७	२७	०	६	०	०
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०

अथ राहुविंशोत्तरीवर्षाणि १८ तन्मध्येन्तरम्									
रा	बृ	श	बु	के	शु	सू	चं	मं	ग्र
२	२	२	२	१	३	०	१	१	०
८	४	१०	६	०	०	१०	६	०	०
१२	२४	६	१८	१८	०	२४	०	०	०
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०

अन्तर्दशाकरण

जिसकी दशा में जिसका अन्तर साधन करना हो, उन दोनों ग्रहों की दशाओं को परस्पर गुणा करना। गुणितांक में १० का भाग देने पर माससंख्या प्राप्त होगी। शेष को ३० से गुणा कर १० का भाग देने पर दिन संख्या प्राप्त होगी।।१।।

(सरल रीति–जिस ग्रह में जिस ग्रह का अन्तर जानना हो उन दोनों ग्रहों की दशा परस्पर गुणा करना तो गुणित अंक की दहाई के अंक मास होते हैं। और इकाई का अंक त्रिगुणित दिन होते हैं।)

उदाहरण–सूर्यदशा में सूर्य का अन्तर जानना है, सूर्य दशा की वर्ष संख्या ६–६ को परस्पर गुणा किया तो ३६ हुए, १० का भाग दिया तो ३ मास लब्ध हुए, शेष ६ को ३० से गुणा किया तो १८० हुए, १० का भाग दिया तो लब्ध १८ दिन हुए।

अथवा–सूर्यदशावर्ष परस्पर गुणा किया तो ३६ हुए, इस संख्या में दहाई का अंक ३ मास है, और इकाई का अंक ६ त्रिगुणित १८ दिन हैं।

अथ विंशोत्तरीगुरुवर्षाणि १६ तन्मध्येन्तरम्									
बृ	श	बु	के	शु	सू	चं	मं	रा	ग्र
२	२	२	०	२	०	१	०	२	०
१	६	३	११	८	९	४	११	४	०
१८	१२	६	६	०	१८	०	६	२४	०
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०

अथ विंशोत्तरीशनिवर्षाणि १९ तन्मध्येन्तरम्									
श	बु	के	शु	सू	चं	मं	रा	बृ	ग्र
३	२	१	३	०	१	१	२	२	०
०	८	१	२	११	७	१	१०	६	०
३	९	९	०	१२	०	९	६	१२	०
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०

अथ विंशोत्तरीबुधवर्षाणि १७ तन्मध्येन्तरम्									
बु	के	शु	सू	चं	मं	रा	बृ	श	ग्र
२	०	२	०	१	०	२	२	२	०
४	११	१०	१०	५	११	६	३	८	०
२७	२७	०	६	०	२७	१८	६	९	०
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०

अथ विंशोत्तरीकेतुवर्षाणि ७ तन्मध्येन्तरम्									
के	शु	सू	चं	मं	रा	बृ	श	बु	ग्र
०	१	०	०	०	१	०	१	०	०
४	२	४	७	४	०	११	१	११	०
२७	०	६	०	२७	१८	६	९	२७	०
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०

अथ विंशोत्तरीभृगुवर्षाणि २० तन्मध्येन्तरम्								
शु०	सू०	चं०	मं०	रा०	गु०	श०	बु०	के०
३	१	१	१	३	२	३	२	१
४	०	८	२	०	८	२	१०	२
०	०	०	०	०	०	०	०	०
०	०	०	०	०	०	०	०	०
०	०	०	०	०	०	०	०	०

भावयोगफलमाह

स्वद्वादशांशके लग्ननाथे वा स्वदृकाणगे ।। तस्य भुक्तिं शुभामाहुर्मुनयः कालचिंतकाः ।।२।। स्वत्रिंशांशेऽथ वा मित्रत्रिंशांशे वा स्थितो यदि ।। तस्य भुक्तिः शुभा प्रोक्ता कालविद्भिर्मनीषिभिः ।।३।। मित्रक्षेत्रे नवांशस्थे मित्रस्य द्विरसांशके ।। तस्य भुक्तिः शुभा प्रोक्ता कालविद्भिर्मनीषिभिः ।।४।। बुद्धिक्षेत्रनवांशस्थे पुत्रस्य द्विरसांशके ।। मित्रद्रेष्काणगे वापि तस्य भुक्तिःशुभावहा ।।५।। तयो राशिनवांशस्थे धर्मस्य द्विरसांशके ।। गुरुद्रेष्काणगे वापि तस्य भुक्तिःशुभावहा ।।६।। सुखराशिनवांशस्थे वाहनद्विरसांशके ।। सुखद्रेष्काणगे वापि

तस्य भुक्तिः शुभावहा ।।७।। विलग्ननाथस्थितभांशनाथे मित्रांशगे मित्रखगेन दृष्टे ।। सुहृद्दृकाणस्थनवांशके वा तदास्य भुक्तिं शुभदां वदंति ।।८।।

भावयोगफल

लग्नेश अपने द्वादशांश में अथवा द्रेष्काण में हो तो उसकी अन्तर्दशा शुभ होती है, ऐसा त्रिकालज्ञ मुनि कहते हैं।।२।। अथवा अपने त्रिशांश या मित्र के त्रिशांश में हो तो उसका भी अन्तर शुभ होता है।।३।। अथवा मित्र के घर में या मित्र के नवांश में या मित्र के द्वादशांश में हो तो उस ग्रह का अन्तर शुभ होता है।।४।। अथवा लग्नेश पंचमभाव में या नवांश में अथवा पंचम भाव के १२ अंश में या मित्र द्रेष्काण मे हो तो भी अन्तर शुभ होता है।।५।। लग्नेश, पंचमेश की राशि या नवांश में अथवा नवमभाव के द्वादशांश में हो तो अन्तर शुभ होता है।।६।। लग्नेश चतुर्थभाव में या चतुर्थ के नवांश में अथवा चतुर्थ के द्वादशांशमें या चतुर्थके द्रेष्काण में हो तो उसका अन्तर शुभ होता है।।७।। लग्नेश जिस राशि में हो उस राशि के नवांश का स्वामी अपने मित्रग्रह के नवांश में हो तथा मित्रदृष्ट हो तो अन्तर शुभ होता है। अथवा मित्र के द्रेष्काण में स्थित नवांशेश के मित्रांश में हो और मित्र दृष्ट हो तो अन्तर शुभ होता है।।८।।

अथ वक्ष्ये विशेषेण दशा कष्टप्रदा नृणाम् ।। षष्ठाष्टमव्ययेशानां दशा कष्टप्रदायिनी ।।९।। एषा भुक्तिर्हि कष्टा स्यान्मारकस्य दशा यदि ।। मारकेशेन षष्ठेशे युक्ते लग्नाधिपे यदि ।।१०।। तस्य भुक्तौ ज्वरप्राप्तिं प्राहुः कालविदो जनाः ।। सरोगे सशरीरेशश्चंद्रषड्वर्गगो यदि ।।११।। जलदोषस्तस्य भुक्तौ स्यादजीर्णो न संशयः ।। षष्ठेशयुतलग्नेशो बुधषड्वर्गगो यदि ।।१२।। तस्य भुक्तौ भवेद्वायुर्वातो वा देहजाडयकृत् ।। सारिनाथविलग्नेशो गुरुः षड्वर्गगो यदि ।। तस्य भुक्तौ भवेद्रोगः पीडा वा ब्राह्मणेन तु ।।१३।। नक्षत्रेशो विलग्नेशो भृगुषड्वर्गगो यदि ।। तस्य भुक्तौ भवेत्पीडा रोगस्त्री संगमेन च ।।१४।। सरोगे सविलग्नेशः शनिषड्वर्गगो यदि ।। तस्य भुक्तौ भवेद्वातः सन्निपातोथ वा नृणाम् ।। लग्नेशरोगेशपयोर्भवेन्मारकभुक्तिषु ।।१५।। मृत्यौ स्थितैः सैंहिकमंदकेतुभिर्मनोहिकाश्वासर्विषूचिकाभिः ।। रोगो नराणामथ तस्य भुक्तौ भवेद्यदा मारकसंयुतिश्च ।।१६।। एवं भ्रात्रादिभावानां नायकौ यत्र संस्थितः ।। तत्तत्षड्वर्गयोगेन तत्तद्भावफलं वदेत् ।।१७।।

अब कष्टकारी दशा कहते हैं। ६।८।१२ भाव के स्वामी की दशा कष्टदायक होती है।।९।। यदि लग्नेश, मारकेश से युक्त अथवा षष्ठेश से युक्त या दृष्ट हो तो अन्तर कष्टकारी होता है।।१०।। उसके अन्तर में ज्वर होता है। लग्नेश रोगेश युक्त होकर चन्द्रमा के षड्वर्ग में हो तो ज्वर होता है।।११।। अथवा जलदोषयुक्त बीमारी या अजीर्ण की बीमारी होती है। यदि बुध के षड्वर्ग में हो तो।।१२।। उसके अन्तर में वातव्याधि या देहजाड्य की बीमारी होती है। वही यदि गुरु के षड्वर्ग में हो तो उसके अन्तर में ब्राह्मण द्वारा पीड़ा प्राप्त हो।।१३।। चन्द्रमा और लग्नेश यदि शुक्र षड्वर्ग में हो तो अन्तर में स्त्रीसंग से रोग या कष्ट होता है।।१४।। षष्ठेश युत लग्नेश यदि शनि षड्वर्ग में हो तो उसके अन्तर में वातव्याधि या सन्निपात होता

है।।१५।। मारकेश ग्रह की दशा में रोगेशयुत लग्नेश का अन्तर हो तथा अष्टमभाव में राहु, शनि, केतु हों तो हिचकी, खांसी, दमा या हैजा की बीमारी होती है।।१६।। जिस प्रकार ये योग लग्नेश के साथ बताये गये हैं, उसी प्रकार अन्य सभी भावों से भी विचारने चाहिए।।१७।।

अथाग्रे फलमाह

केंद्राधीश्वरकोणनायकदशाश्चांतर्दशाः शोभनाः सामान्याश्च धनत्रिलाभभवनाधीशग्रहाणां दशा ।। षष्ठाष्टव्ययभावनायकदशाः कष्टा भवेयुःसदा नेतुर्लग्नमवेक्ष्य तत्तदधिपात्तत्तद्दशा–भुक्तिषु ।।१८।।

रविमहादशायां रवेरंतर्दशा मास ३ दिन १८ तत्फलम्

उच्चक्षेत्रे गते सूर्ये केंद्रलाभत्रिकोणगे ।। रविदयि स्वभुक्तौ च धनधान्यादिलाभकृत् ।।१९।।
देहरोगं वित्तलाभं राजप्रीतिकरं शुभम् ।। सर्वकार्यार्थसिद्धिः स्याद्विवाहं राजदर्शनम् ।।२०।।
द्वितीयद्यूननाथे तु अपमृत्युर्भविष्यति ।। तद्दोषपरिहारार्थं मृत्युंजयजपं चरेत् ।।२१।।
सूर्यप्रीतिकरीं शांतिं कुर्यादारोग्यमादिशेत् ।।२२।।

केन्द्रेश तथा त्रिकोणेश की दशा और अन्तर्दशा शुभ होती हैं। धनेश, तृतीयेश, लाभेश की दशा, अन्तर्दशा मध्यम होती हैं। ६।८।१२ भावों के स्वामी की दशा कष्टकारी होती हैं। इस प्रकार से उपर्युक्त सभी योगों से फल विचार करना चाहिये।।१८।।

सूर्यदशा में सूर्यान्तर मास ३ दिन १८ फल

सूर्य उच्च राशि का हो स्वगृही हो। केन्द्र त्रिकोण या लाभ में हो तो धन, धान्य आदि का लाभ होता है।।१९।। शरीर में निरोगता, धन का लाभ, राजा से प्रीति, सम्पूर्ण कार्य और अर्थ की सिद्धि तथा विवाह आदि शुभ कार्य होता है।।२०।। द्वितीय तथा सप्तम का स्वामी हो तो अपमृत्यु होनेका भय होता है। इस दोष को दूर करने के लिये महामृत्युंजय का जप करना या कराना चाहिए।।२१।। सूर्य की शांति करने से आरोग्यता प्राप्त होती है।।२२।।

रविदशायां चंद्रभुक्तिमासाः ६ दिना० तत्फलम्

सूर्यस्यांतर्गते चंद्रे लग्नात्केंद्रत्रिकोणगे ।। विवाहं शुभकार्यं च धनधान्यसमृद्धिकृत् ।।२३।। गृहक्षेत्राभिवृद्धिं च पशुवाहनसंपदाम् ।। तुंगे वा स्वक्षंगे वाऽपि दारसौख्यं धनागमम् ।।२४।। पुत्रलाभसुखं चैव सौख्यं राजसमागमम् ।। महाराजप्रसादेन इष्टसिद्धिसुखावहम् ।।२५।। क्षीणे वा पापसंयुक्ते दारपुत्रादिपीडनम् ।। वैषम्यजनसंवादभृत्यवर्गविनाशनम् ।।२६।। विरोधं राजकलहं धनधान्यपशुक्षयम् ।। षष्ठाष्टमव्यये चंद्रे जलभीतिं मनोरुजम् ।।२७।।

सूर्य दशा में चन्द्रान्तर ६ मास फल

सूर्य के अन्तर में चन्द्रमा हो, लग्न से केन्द्र या त्रिकोण में हो तो विवाह आदि शुभकार्य होते हैं। धन–धान्य की वृद्धि होती है।।२३।। भूमि और मकान में वृद्धि, पशु और वाहन आदि सम्पत्ति प्राप्त होती है। चन्द्रमा यदि उच्च का या स्वगृही हो तो स्त्री का सुख, और धन की प्राप्ति होती है।।२४।। पुत्र सन्तान की प्राप्ति और सुख तथा राज–समाज में आना–जाना होता है। महाराज या बड़े आदमी की कृपा से इच्छित कार्य की सिद्धि और सुख होता है।।२५।। चन्द्रमा यदि क्षीण या पापग्रह युक्त हो तो स्त्री–पुत्र को कष्ट होता है। परिवार में विषमता, बन्धुओं से विरोध तथा नौकर चले जाते हैं।।२६।। राज से मुकदमा, धन और पशु की हानि होती है। चन्द्रमा ६।८।१२ में हो तो जल में डूबने का भय, अशान्ति होती है।।२७।।

बंधनं रोगपीडा च स्थानविच्युतिकारकम् ।। दुःस्थानं चापि चित्तेन दायादजनविग्रहम् ।।२८।। निर्धनं कुत्सितान्नं च चौरादिनृपपीडनम् ।। मूत्रकृच्छ्रादिरोगश्च देहपीडाक्षयो भवेत् ।।२९।। दायेशाल्लाभभाग्ये च केंद्रे वा शुभसंयुते ।। भोगभोग्यादिसंतोषदारपुत्रादिवर्द्धनम् ।।३०।। राज्यप्राप्तिं महत्सौख्यं स्थानप्राप्तिं च शाश्वतीम् ।। विवाहं यज्ञदीक्षां च मुग्धान्यांबरभूषणम् ।।३१।। वाहनं पुत्रपौत्रादि लभते सुखवर्द्धनम् ।। दायेशाद्रिपुरंध्रस्थे व्यये वा बलवर्जिते ।।३२।। अकाले भोजनं चैव देशाद्देशं गमिष्यति ।। द्वितीयद्यूननाथेन अपमृत्युर्भविष्यति ।। श्वेतां गां महिषीं दद्याच्छांतिं कुर्यात्सुखं लभेत् ।।३३।।

बन्धन, रोग और पीड़ा तथा स्थान भ्रंश होता है। नेष्ट स्थान का रहना तथा परिवार में विग्रह होता है।।२८।। धनहीन, कुभोजन, चोर, शत्रु, राजा आदि से पीड़ा होती है। मूत्र–कृच्छ्र की बिमारी तथा दर्द की बिमारी होंती है।।२९।। चन्द्रमा सूर्य से यदि लाभ अथवा भाग्यस्थान में हो, केन्द्र या त्रिकोण में तथा शुगग्रह युक्त हो तो उत्तम भोग प्राप्त होते हैं। भाग्य की वृद्धि होती है। मन में सन्तोष, घर में स्त्री पुत्र की वृद्धि होती है।।३०।। राज्य से प्राप्ति, महान सुख, स्थान या भूमि की प्राप्ति स्थायी रूप से होती है। घर में विवाह आदि मंगल कार्य तथा यज्ञ आदि धर्म कार्य, दीक्षा, भूषण वस्त्र आदि की प्राप्ति होती है। वाहन की प्राप्ति, पुत्र पौत्र आदि का उत्सव होने से सुख वृद्धि होती है। सूर्य से ६।८।१२ स्थान में हो और बल रहित हो।।३२।। तो कुसमय भोजन, देश–विदेश की यात्रा आदि होती है। चन्द्रमा यदि द्वितीय सप्तम का स्वामी हो तो अपमृत्यु का भय होता है।
उपाय :– दूध देनेवाली सफेद गाय का दान करने से सुख होता है।।३३।।

रविदशायां कुजभुक्तिमासाः ४ दिना ०६ तत्फलम्

सूर्यस्यांतर्गते भौमे स्वोच्चे स्वक्षेत्रलाभगे ।। लग्नात्केंद्रत्रिकोणे वा शुभकार्यं शुभादिकम् ।।३४।। भूलाभं कृषिलाभं च धनधान्यादिवृद्धिदम् ।। गृहक्षेत्रादिलाभं च रक्तवस्त्रादिलाभकृत् ।।३५।। लग्नाधिपेन संयुक्ते सौख्यं राजप्रियं सुखम् ।। भाग्यलाभाधिपैर्युक्ते लाभश्चैवभविष्यति ।।३६।। बहुसेनाधिपत्यं च शत्रुनाशं मनोदृढम् ।। आत्मबंधुसुखं चैव भ्रातृवर्द्धनकं तथा ।।३७।।

दायेशाद्रिपुरंध्रस्थे पापयुक्ते च वीक्षिते ।। आधिपत्यबलैर्हीने क्रूरबुद्धिं मनोरुजम् ।।३८।। कारागृहे प्रवेशं च निर्गलं बंधुनाशनम् ।। भ्रातृवर्गविरोधं च कर्मनाशमथापि वा ।।३९।। नीचे वा बहुले भौमे राजमूलाद्धनक्षयः ।। द्वितीयद्यूननाथे तु देहे जाड्यं मनोरुजम् ।।४०।। सुब्रह्मजपदानं च अनड्वाहं तथैव च ।। शांतिं कुर्वीत विधिवदायुरारोग्यसिद्धिदाम् ।।४१।।

सूर्य दशा में भौमान्तर ४ मास ६ दिन फल

सूर्य में मंगल का अन्तर हो और मंगल उच्च का स्वगृही केन्द्र, त्रिकोण या लाभ में हो तो घर में मंगल कार्य होते हैं।।३४।। पृथ्वी का लाभ खेती का लाभ, धन–धान्य का लाभ, मकान खेत आदि का लाभ होता है। व्यापार में लाल वस्त्र से अधिक लाभ होता है।।३५।। लग्नेश से युक्त हो तो सुखकारी, राजप्रिय होता है। भाग्येश तथा लाभेश से युक्त हो तो विशेष लाभकारी होता है।।३६।। सेनापति की पदवी मिलती है, शत्रु का नाश होता है। मन में दृढ़ता तथा बल बुद्धि होती है। परिवार में सुख तथा वृद्धि होती है।।३७।। सूर्य से ६।८ वें स्थान में हो, पापग्रह से युक्त दृष्ट हो तो अधिकार से हीन, क्रूर बुद्धि मन में अशान्ति होती है।।३८।। कारागृह में वास, बेड़ी तथा हथकड़ी, बन्धु का नाश, भ्रातृ वर्ग में विरोध तथा इच्छा का नाश होता है।।३६।। मंगल नीच का या बलहीन हो तो राजकार्य से धन की हानि होती है और द्वितीय सप्तम का स्वामी हो तो देह में जड़ता, मन में दुःख होता है।।४०।। मंगलका दान तथा जप और बैल का दान करने से आयु और आरोग्य प्राप्त होता है।।४१।।

अथ रविदशायां राहुभुक्तिमासाः १० दि० २४ तत्फलम्

सूर्यस्यांतर्गते राहौ लग्नात्केंद्रत्रिकोणगे ।। आदौ द्विमासपर्यन्तं धननाशं महद्भयम् ।।४२।। चौराहिव्रणभीतिश्च दारपुत्रादिपीडनम् ।। तत्परं सुखमाप्नोति शुभयुक्ते शुभांशके ।।४३।। देहारोग्यं मनस्तुष्टी राजप्रीतिकरं सुखम् ।। लग्नाद्युपचये राहौ योगकारकसंयुते ।।४४।। दारेशाच्छुभराशिस्थे राजसन्मानकीर्तिदम् ।। भाग्यवृद्धिं यशोलाभं दारपुत्रादिपीडनम् ।।४५।। पुत्रोत्सवादिसंतोषं गृहे कल्याणशोभनम् ।। दायेशात्षष्ठरिष्फस्थे रंध्रे वा बलवर्जिते ।।४६।। बंधनं स्थाननाशश्च कारागृहनिवेशनम् ।। चौराहिव्रणभीतिश्च दारपुत्रादिपीडनम् ।।४७।। चतुष्पाज्जीवनाशश्च गृहक्षेत्रादिनाशनम् ।। गुल्मक्षयादिरोगश्च अतिसारादिपीडनम् ।।४८।। द्विसप्तस्थे तथा राहौ तत्स्थानाधिपसंयुते।।अपमृत्युभयं चैव सर्वभीतिश्च संभवेत्।।४९।।दुर्गाजपं च कुर्वीत छागदानं समाचरेत् ।। कृष्णां गां महिषीं दद्याच्छान्तिमाप्नोत्यसंशयम् ।।५०।।

सूर्य दशा में राहु अन्तर १० मास २४ दिन फल

सूर्य के अन्तर में राहु हो, लग्न से केन्द्र या त्रिकोण में हो तो पहले २ मास में धन का नाश, महान भय।।४२।। चोर, सर्प घाव आदि का भय, स्त्रीपुत्र को पीड़ा होती है। २ मास के बाद सुख होता है। मंगल आदि शुभग्रह युक्त शुभ नवांश में हो तो।।४३।। नीरोगता, सन्तोष, राजप्रीति और सुख होता है। यदि लग्न से केन्द्र स्थान में हो, योग कारक ग्रह से युक्त हो।।४४।। सप्तमेश से शुभ स्थान में हो तो राजसम्मान, कीर्ति, भाग्यवृद्धि, लाभ होता है तथा स्त्री–पुत्र को कुछ पीड़ा भी होती है।।४५।। और पुत्रोत्सव आदि मंगल कार्य, घर में सुख

शान्ति होती है। मंगल यदि बलहीन होकर सूर्य से ६।८।१२ स्थान में हो तो॥४६॥ बन्धन, स्थान-नाश, कैद, चोर, सर्प, घाव से भय, स्त्री पुत्र को पीड़ा होती है॥४७॥ पशु की हानि मकान और खेत की हानि, गुल्म का रोग तथा क्षय रोग तथा अतिसार आदि रोग होते हैं॥४८॥ राहु यदि २ या ७वें स्थान में स्यानेश से युक्त हो तो अकाल मृत्यु का भय होता है तथा अन्य प्रकार के भी भय होने सम्भव है॥४९॥
उपाय :-दुर्गामंत्र का जप एवं छाग (बकरा) दान करें तथा काली गाय का दान करें तो निश्चय शान्ति रहती है॥५०॥

अथ रविमध्ये गुरुभुक्तिमा० १९ दि० १८ तत्फलम्

सूर्यस्यांतर्गते जीवे लग्नात्केंद्रत्रिकोणगे ।। स्वोच्चे मित्रस्य वर्गस्थे विवाहं राजदर्शनम् ।।५१।। धनधान्यादिलाभं च पुत्रलाभं महत्सुखम् ।। महाराजप्रसादेन इष्टकार्यार्थलाभकृत् ।।५२।। ब्राह्मणप्रियसन्मानं प्रियवस्त्रादिलाभकृत् ।। भाग्यकर्माधिपवशाद्राज्यलाभं महोत्सवम् ।।५३।। नरवाहनयोगाश्च स्थानाधिक्यं महत्सुखम् ।। दायेशाच्छुभराशिस्थे भाग्यवृद्धिः सुखावहा ।।५४।। दानधर्मक्रियायुक्तो देवताराधना प्रियः ।। गुरुभक्तिर्मनः सिद्धिः पुण्यकर्मादिसंग्रहः ।।५५।। दायेशाद्रिपुरंध्रस्थे नीचे वा पापसंयुते ।। दारपुत्रादिपीडा च देहपीडा महद्भयम् ।।५६।। राजकोपं प्रकुरुते इष्टवस्तुविनाशनम् ।। पापमूलाद्द्रव्यनाशं देहभ्रष्टं मनोरुजम् ।।५७।। स्वर्णदानं प्रकुर्वीत इष्टजाप्यं च कारयेत् ।। गवां कपिलवर्णानां दानेनारोग्यमादिशेत् ।।५८।।

सूर्य में गुरु का अन्तर मास १९ दिन १८ फल

सूर्य में गुरु का अन्तर हो तथा गुरु लग्न से केन्द्र, त्रिकोण, उच्चराशि में हो या मित्र वर्ग में हो तो विवाह, राजदर्शन होता है॥५१॥ धन-धान्य का लाभ, महान सुख होता है। राजा या बड़े आदमी की कृपा से इच्छित कार्य की सिद्धि और विशेष लाभ होता है॥५२॥ देव ब्राह्मण की पूजा और सम्मान, प्रियबन्धु का मिलन, वस्त्र-भूषण का लाभ होता है। नवम्, दशम् स्वामी से युक्त हो या दृष्ट हो तो राज्यलाभ तथा महोत्सव होता है॥५३॥ नौकर चाकर तथा मोटर आदि सवारी होती है, बड़ा मकान होता है, महान सुख होता है। सूर्य से शुभस्थान और शुभराशि में हो तो भाग्य वृद्धि और मंगल होता है॥५४॥ दान, धर्म, क्रिया से युक्त, देवता की आराधना में प्रीति, गुरुभक्ति मन में सन्तोष, दान धर्म आदि पुण्य कार्य का संग्रह होता है॥५५०॥ सूर्य से ६।८ स्थान में हो, नीच का हो या पापग्रह युक्त हो तो स्त्री पुत्र को पीड़ा, देह को पीड़ा तथा महान भय होता है॥५६॥ राजकोप होता है, इष्ट वस्तु का नाश होता है, पाप के कारण द्रव्य का नाश, देह में रोग, मन में अशान्ति होती है॥५७॥
उपाय :-गुरु का जप और दान, सुवर्ण का दान तथा कपिला गऊ का दान करने से आरोग्यता होती है॥५८॥

अथ रविदशायां शनिभुक्तिमा० ११ दि० १२ तत्फलम्

सूर्यस्यांतर्गते मंदे लग्नात्केंद्रत्रिकोणगे ।। शत्रुनाशं महत्सौख्यं स्वल्पधान्यार्थलाभकृत् ।।५९।।
विवाहोत्सवकार्याणि शुभकार्यं शुभावहम् ।। स्वोच्चे स्वक्षेत्रगे मंदे सुहृद्ग्रहसमन्विते ।।६०।।
गृहे कल्याणसंपत्तिर्विवाहादिषु सत्क्रियाम् ।। राजसन्मानकीर्तिश्च नानावस्त्रधनागमः ।।६१।।
दायेशाद्रिपुरंध्रस्थे व्यये वा पापसंयुते ।। वातशूलमहाव्याधिज्वरातीसारपीडनम् ।।६२।।
बंधनं कार्यहानिश्च वित्तनाशं महद्भयम् ।। अकस्मात्कलहश्चैव दायादजनविग्रहम् ।।६३।।
भुक्त्यादौ मित्रहानिः स्यान्मध्ये किंचित्सुखावहम् ।। अंते क्लेशकरं चैव नीचं तेषां तथैव च ।।६४।।
पितृमातृवियोगं च गमनागमनं तथा ।। द्वितीयद्यूननाथे तु अपमृत्युभयं भवेत् ।।६५।।कृष्णां गां महिषीं दद्यान्मृत्युंजयजपं चरेत् ।। छागदानं प्रकुर्वीत सर्वसंपत्प्रदायकम् ।।६६।।

सूर्य दशा में शनि का अन्तर ११ मास १२ दिन फल

सूर्य की दशा में शनि का अन्तर हो, शनि लग्न से, त्रिकोण स्थान में हो तो शत्रु का नाश, सुख धन–धान्य का साधारण लाभ करता है।।५९।। विवाह आदि उत्सव शुभ कार्य होते हैं। शनि उच्चराशि का या स्वगृही हो, अपने मित्रग्रह से युक्त हो।।६०।। तो घर में कल्याण सुख, सम्पत्ति, विवाह आदि उत्सव, राज से सम्मान, कीर्ति, नानाप्रकार वस्त्रभूषण आदि की प्राप्ति होती है।।६१।। सूर्य से ६।८।१२ स्थान में हो, पापग्रह युक्त हो तो वायु, शूल, तपेदिक, ज्वर, अतिसार आदि बीमारियां होती है।।६२।। बन्धन, कार्य–हानि, धननाश तथा महान भय होता है। परिवार में अकस्मात् कलह तथा लड़ाई होती है।।६३।। अन्तर के आदि में मित्र की हानि हो, मध्य में कुछ सुख हो तथा अन्त में क्लेश हो। यदि शनि नीच राशि का तथा पाप संयुक्त हो।।६४।। तो माता–पिता का वियोग, यात्रा होती है। शनि यदि द्वितीयसप्तम का स्वामी हो तो अकाल मृत्यु का भय होता है।।६५।।
उपाय :–दूधवाली कालीगऊका दान करे, मृत्युंजय का जप करावे तथा छाग (बकरा) का दान करे तो यही दशा सभी सम्पत्ति की देनेवाली होती है।।६६।।

अथ रविदशायां बुधभुक्तिमा० १० दि० ६ तत्फलम्

सूर्यास्यांतर्गते सौम्ये स्वोच्चे वा स्वर्क्षगेऽपि वा ।। केन्द्रत्रिकोणलाभस्थे बुधे वर्गबलैर्युते ।।६७।।
राज्यलाभं महोत्साहं दारपुत्रादिसौख्यकृत् ।। महाराजप्रसादेन वाहनांबरभूषणम् ।।६८।।
पुण्यतीर्थफलावाप्तिर्गृहेगोधनसंकुलम् ।। भाग्ये लाभाधिपैर्युक्ते लाभवृद्धिकरो भवेत् ।।६९।।
भाग्यपंचमकर्मस्थे सन्मानो भवति ध्रुवम् ।। स्वकर्मधर्मबुद्धिश्च गुरुधर्मद्विजार्चनम् ।।७०।।
धनधान्यादिसंयुक्तं विवाहं पुत्रसंभवम् ।। दायेशाच्छुभराशिस्थे सौम्यभुक्तौ महत्सुखम् ।।७१।।
वैवाहिकं यज्ञकर्म दानधर्मजपादिकम् ।। स्वनामांकितपद्यानि नामद्वयमथाऽपि वा ।।७२।।
भोजनांबरभूषाप्तिरमरेशो भवेन्नरः ।। दायेशादशुभस्थाने रिष्फगे नीचगेऽपि वा ।।७३।।
देहपीडा मनस्तापो दारपुत्रादिपीडनम् ।। भुक्त्यादौ दुःखमाप्नोति मध्ये किंचित्सुखावहम् ।।७४।।
अंते तु राजभीतिश्च गमनागमनंतथा ।। द्वितीये द्यूननाथे तु देहजाड्यं ज्वरादिकम् ।।
विष्णुनामसहस्रं च ह्यन्नदानं च कारयेत् ।। रजतप्रतिमादानं कुर्यादारोग्यमादिशेत् ।।७५।।

सूर्य दशा में बुध का अन्तर १० मास ६ दिन

सूर्य की दशा में बुध का अन्तर हो और बुध उच्च का या स्वगृही हो, लग्न से केन्द्र, त्रिकोण या लाभ स्थान में हो, शुभ वर्ग में हो।।६७।। तो राज्य लाभ, महान् उत्साह, स्त्री पुत्र आदि का सुखकारक होता है। राजा या बड़े आदमी की कृपा से वाहन, भूषण आदि की प्राप्ति होती है।।६८।।पुण्य और तीर्थ फल की प्राप्ति, घर में गौ आदि पशु होते हैं। भाग्य स्थान में बुध लाभेश से युक्त हो तो बहुत लाभदायक होता है।।६९।। पंचम, नवम, दशम स्थान में बुध हो तो अपने व्यापार और धर्म की वृद्धि होती है तथा धर्म–कर्म में निष्ठा होती है एव गुरु, ब्राह्मण की पूजा होती है।।७०।। धनधान्य संयुक्त सुख होता है, विवाह तथा पुत्रोत्पत्ति होती है। सूर्य से शुभ राशि में हो, सौम्य ग्रह युक्त हो तो महान् सुख होता है।।७१।। विवाह सम्बन्धी मंगल कार्य, यज्ञ कर्म, दान, धर्म, जप आदिक होते हैं। तथा अभिनन्दन होता है।।७२।। उत्तम भोजन, वस्त्र, भूषण प्राप्त होते हैं। देवोपम सुख होता है। सूर्य से बुध १२ वें स्थान में हो अथवा नीच राशि का हो।।७३।। तो देह पीड़ा, मन में चिन्ता, जलन और स्त्री पुत्र को पीड़ा होती है। अन्तर के आदि में दुःख होता है। मध्य में कुछ सुख प्राप्ति होती है।।७४।। बुधान्तर के अन्त में राजभय, यात्रा होती है। बुध यदि द्वितीय, सप्तम का स्वामी हो तो वात, व्याधि, ज्वर आदि की बीमारी होती है।

उपाय :–विष्णुसहस्रनाम स्तोत्र पाठ, अन्नदान तथा बुधकी चांदी की प्रतिमा का दान करना चाहिए। उससे आरोग्यता और सुख होगा।।७५।।

रविमध्ये केतुभुक्तिमासाः ४ दिना० ६ तत्फलम्

सूर्यस्यांतर्गते केतौ देहपीडा मनोव्यथा ।। अर्थव्ययं राजकोपं स्वजनादेरुपद्रवम् ।।७६।।
लग्नाधिपेन संयुक्ते आदौ सौख्यं धनागमम् ।। मध्ये तत्क्लेशमाप्नोति मृतवार्तागमं वदेत् ।।७७।।
षष्ठाष्टमव्यये चैवं दायेशात्पापसंयुते ।। कपोलदंतरोगश्च मूत्रकृच्छ्रस्य संभवम् ।।७८।।
स्थानविच्युतिरर्थस्य मित्रहानिः पितुर्मृतिः ।। विदेशगमनं चैव शत्रुपीडा महद्भयम् ।।७९।।
लग्नादुपचये केतौ योगकारकसंयुते ।। शुभांशे शुभवर्गैश्च शुभकर्मफलप्रदम् ।।८०।।
पुत्रदारादिसौख्यं च संतोषं प्रियवर्द्धनम् ।। विचित्रवस्त्रलाभं च यशोवृद्धिः सुखावहा ।।८१।।
द्वितीयद्यून नाथे वा ह्यपमृत्युभयं वदेत् ।। दुर्गाजपं च कुर्वीत छागदानं तथैव च ।।८२।।
महामृत्युंजयजपं कुर्याच्छांतिमवाप्नुयात् ।।८३।।

सूर्य दशा में केतु अन्तर मास ४ दिन ६ फल

सूर्य की दशा में केतु का अन्तर हो तो देह में पीड़ा, मन में व्यथा, धन का खर्च, राज का कोप तथा उपद्रव होते हैं।।७६।। केतु यदि लग्नेश से युक्त हो तो आरम्भ में सुख और धन की प्राप्ति होती है। मध्य पूर्वोक्त क्लेश होते हैं। तथा अन्त में मृत व्यक्ति (स्वसम्बन्धी) की खबर मिलती है।।७७।। किन्तु ६।८।१२ स्थान में हो अथवा सूर्य से ६।८।१२ स्थान में एवं पापग्रह युक्त हो तो कपोल और दांत की बिमारी होती है। तथा मूत्र कृच्छ्र की बीमारी भी संभव है।।७८।। स्थान हानि, धन हानि, मित्र हानि, पिता की मृत्यु, विदेश गमन, शत्रु पीड़ा तथा महान् भय होता है।।७९।। लग्न से केन्द्र में कारक ग्रह से युक्त केतु हो, शुभ नवमांश में और

शुभ वर्ग में हो तो किये हुए शुभ कर्म का फल होता है।।८०।। और पुत्र, स्त्री का सुख, सन्तोष, विचित्र वस्त्र का लाभ, यश और सुख होते हैं।।८१।। केतु द्वितीय, सप्तम का स्वामी हो तो अकाल मृत्यु का भय होता है।

उपाय–दुर्गामन्त्र जप तथा छाग दान।।८२।। अथवा महामृत्युञ्जय का जप करने से शान्ति होती है।।८३।।

रविदशायां शुक्रान्तर्दशा मा० १२ दि० तत्फलम्

सूर्यस्यांतर्गते शुक्रे त्रिकोणे चंद्रगेऽपि वा ।। स्वोच्चे मित्रस्ववर्गस्थे इष्टस्त्रीभोग्यसंपदाम् ।।८४।। ग्रामांतरप्रयाणं च ब्राह्मणप्रभुदर्शनम् ।। राज्यलाभं महोत्साहं छत्रचामरवैभवम् ।।८५।। गृहे कल्याणसंपत्तिर्नित्यं मिष्टान्नभोजनम् ।। विद्रुमादिरत्नलाभं मुक्तावस्त्रादिलाभकृत् ।।८६।। चतुष्पाज्जीवलाभः स्याद्बहुधान्यधनादिकम् ।।उत्साहं कीर्तिसंपत्तिर्नरवाहनसंपदाम् ।।८७।। लग्नात् षष्ठाष्टमव्यये, शुक्रे वा बलवर्जिते ।। राजकोपं मनःक्लेशं पुत्रस्त्रीधननाशनम् ।।८८।। भुक्त्यादौ वाहनं मध्ये लाभः शुभकरो भवेत् ।। अन्ते यशोनाशनं च स्थानभ्रंशमथापि वा ।।८९।। बंधुद्वेषमनंतं च स्वकुलाद्रोगनाशनम् ।। द्वितीयद्यूननाथे तु देहे जाड्यं मनोरुजम् ।।९०।। रंध्ररिष्फसमायुक्तेऽपमृत्युर्भविष्यति ।।तद्दोषपरिहारार्थं मृत्युंजयजपं चरेत् ।।९१।। श्वेतां गां महिषीं दद्याद्रुद्रजाप्यं च कारयेत् ।।९२।।

इति श्रीबृहत्पाराशरहोराशास्त्रेपूर्वखण्डे सूर्यांतर्दशाफलकथनं
नाम त्रयास्त्रिंशोऽध्यायः ।।३३।।

सूर्य दशा में शुक्र का अन्तर मास १२ फल

सूर्य की दशा में शुक्रका अन्तर हो,शुक्र लग्नसे त्रिकोणमें या चन्द्रमाकी राशिमें हो, उच्चका अथवा मित्रकी राशिमें अथवा मित्रके या अपने वर्गमें हो तो इच्छित स्त्री,धन आदि प्राप्त होते हैं,ग्रामान्तरकी यात्रा होती है,राजदर्शन होता है,अधिकारका लाभ,महान् उत्साह तथा पदवृद्धि होती है।।८५।। घर में कल्याण, सम्पत्ति और नित्य मिष्टान्न भोजन प्राप्त होता है। हीरा, पन्ना आदि रत्न का लाभ, कीमती वस्त्र का लाभ होता है।।८६।। चौपाया जीव का लाभ, बहुत धनधान्य का लाभ होता है। उत्साह, कीर्ति, सम्पत्ति, मोटर आदि सवारी का लाभ होता है।।८७।। लग्न से ६।८।१२ वें स्थान में शुक्र हो। (पाठक यह जान लें कि–बुध और शुक्र सूर्य से छठे आठवें अथवा केन्द्र, कोण ४।५।७।९।१० भावों में कभी भी नहीं होते) और बलहीन हो तो राजकोप, क्लेश, स्त्री, पुत्र धन की हानि।।८८।। शुक्रान्तर के आदि में सवारी का लाभ और मध्य में शुभ, लाभ तथा अन्तर के अन्त में अपयश (निन्दा) अथवा स्थान हानि हो।।८९।। तथा बन्धुओं से द्वेष, परिवार से कलह हो और २।७ का स्वामी शुक्र हो तो देहजाड्य की बीमारी होती है। मन में अशान्ति भी होती है।।९०।। २।७ का स्वामी होते हुए भी ८।१२ के स्वामी से भी युक्त हो तो अकालमृत्यु होती है। इस दोष के लिये उपाय-महामृत्युञ्जय जप या रुद्रमन्त्र जप तथा श्वेत गौ का दान करे।।९१।।९२।।

इति श्रीबृ० पा० हो० शा० पू० भावप्रका० सूर्यान्तरदशाफलकथनं
नाम त्रयास्त्रिंशोऽध्यायः ।।३३।।

१ टिप्पणी :–सूर्य, बुध, शुक्र के अन्तरों में यह ध्यान रखना चाहिए कि–सूर्य के बाद बुध की तथा बुध के बाद शुक्र की कक्षा है, अतः सूर्य से बुध का अन्तर अधिक से अधिक २८ अंश (दोनों तरफ) और शुक्र का ४८ अंश, इससे अधिक अन्तर नहीं होता,तब सूर्यसे बुध २–१२ से अधिक दूर नहीं होता और शुक्र ।।११।१२।२।३। से अधिक दूर नहीं होता। इसलिये सूर्यसे बुध,३।४।५।६।७।८।९।१०।११भावोंमें कभी नहीं होता और शुक्र ४।५।६।७।८।९।१० भावों में कभी नहीं होता।

बुध और शुक्र परस्पर १०।११।१२।१।२।३।४ में होते हैं, परन्तु ये भी परस्पर ५।६।७।८।९ भावों में नहीं होते।

अथ चन्द्रदशायां चन्द्रभुक्तिमासाः १० दि०तत्फलम्

स्वोच्चे स्वक्षेत्रगे चंद्रे त्रिकोणेलाभगेपि वा ।। भाग्यकर्माधिपैर्युक्ते गजाश्वांबरसंकुलम् ।।१।। देवतागुरुभक्तिश्च पुण्यश्लोकादिकीर्तितम् ।। राज्यलाभं महत्सौख्यं यशोवृद्धिः सुखावहा ।।२।। पूर्णचंद्रे पूर्णबलं सेनाधिपमहत्सुखम् ।। पापयुक्तेऽथवा चंद्रे नीचे वा रिष्फषष्ठगे ।।३।। तत्काले धननाशः स्यात्स्थानच्युतिमथापि वा ।। देहालस्यं मनस्तापं राजमंत्रिविरोधकृत् ।।४।। मातृक्लेशंमनोदुखं निगडं बन्धुनाशनम् ।। द्वितीयद्यूननाथे तु रंध्ररिष्फसमन्विते ।।५।। देहजाड्यं महाभंगमपमृत्योर्भयं भवेत् ।। श्वेतां गां महिषीं दद्याद्दानेनारोग्यमादिशेत् ।।६।।

चन्द्रदशा में चन्द्रान्तर मास १० फल

चन्द्रमा स्वगृही, उच्च का तथा त्रिकोण या लाभस्थान में हो और ९।१० भाव के स्वामी से युक्त हो तो जातक का घर हाथी घोड़े आदि से युक्त हो।।१।। देवता गुरु की भक्ति तथा पवित्र वेद आदि का पाठ, राज्यलाभ, महान् सुख, यशोवृद्धि तथा सुख होता है।।२।। चन्द्रमा यदि पूर्णबली हो तो सेनाधिपति हो और महान् सुख हो। चन्द्रमा पापयुक्त या नीच का हो और ६।१२ भाव में हो।।३।। तो चन्द्रान्तर में धननाश हो या स्थान हानि हो। देह में आलस्य, मन अशान्त, राजा या मन्त्री से विरोध होता है।।४।। माता को क्लेश, मन में दुःख, कैद तथा बन्धु की हानि होती है। यदि २।७ का स्वामी हो और ८।१२ के स्वामी से युक्त हो तो देह में जड़ता, हानि तथा अपमृत्यु का भय होता है। उपाय-दूधवाली श्वेत गौ का दान करे तो शान्ति आरोग्यता होती है।।५।।६।।

अथ चन्द्रदशायां कुजभुक्तिमासाः ७ तत्फलम्

चंद्रस्यांतर्गते भौमे लग्नात्केंद्रत्रिकोणगे ।। सौभाग्यं राजसन्मानं वस्त्राभरणभूषणम् ।।७।। यत्न-कार्यार्थसिद्धिस्तु भविष्यति न संशयः ।। गृहक्षेत्राभिवृद्धिश्च व्यवहारे जयो भवेत् ।।८।। कार्यलाभं महत्सौख्यं स्वोच्चे स्वक्षेत्रगे फलम् ।। षष्ठाष्टमव्यये भौमे पापयुक्तेऽथवा यदि ।।९।। दायेशादशुभस्थाने देहार्तिपदवीक्षिते ।। गृहक्षेत्रादिहानिश्च व्यवहारं तथैव च ।।१०।। भृत्यवर्गेषु कलहं भूपालस्य विरोधनम् ।। आत्मबंधुवियोगं च नित्यं निष्ठुरभाषणम् ।।११।। द्वितीय द्यूननाथे तु रंध्रे रंध्राधिपो यदा ।।तद्दोषपरिहारार्थं ब्राह्मणस्यार्चनं चरेत् ।।१२।।

चन्द्रदशा में मंगल का अन्तर ७ मास फल

चन्द्रमा की दशा में मंगल का अन्तर हो। मंगल लग्न से केन्द्र या त्रिकोण में हो तो ऐश्वर्य, राजा से सम्मान प्राप्ति, वस्त्र आभूषण की प्राप्ति होती है।।७।। यत्न करने से कार्यसिद्धि, धनलाभ निःसंदेह होता है। मकान तथा भूमि की वृद्धि होती है तथा व्यवहार में जय होती है।।८।। मंगल उच्चराशि में या स्वगृही हो तो कार्य की सिद्धि तथा अधिक सुख होता है। यदि मंगल ६।८।१२ भाव में हो।।९।। अथवा चन्द्रमा से अशुभ स्थान में हो तो और षष्ठेश से दृष्ट हो तो गृह (मकान), क्षेत्र (भूमि) की हानि तथा व्यापार में भी हानि होती है।।१०।। परिवार में कलह (अथवा नौकरोंमें कलह) राजसे विरोध अपने बन्धु का वियोग तथा नित्य वकवाद रूपी कलह।।११।। सप्तमेश द्वितीय भाव में तथा अष्टमेश अष्टमभाव में हो तो विशेष अनिष्ट की सम्भावना है। इस दोष की निवृत्ति के लिए ब्राह्मणों की पूजा तथा दान देना चाहिए।।१२।।

अथ राहुभुक्तिमासाः १८ तत्फलमाह

चंद्रस्यांतर्गते राहौ लग्नात्केंद्रत्रिकोणगे ।। आदौ स्वल्पफलं ज्ञेयं शत्रुपीडा महद्भयम् ।।१३।। चौराहिराजभीतिश्च चतुष्पाज्जीवपीडनम् ।। बन्धुनाशं मित्रहानिं मानहानिं मनोव्यथाम् ।।१४।। शुभयुक्ते शुभैर्दृष्टे लग्नादुपचयेपि वा ।। योगकारकसंबन्धे यत्र कार्यार्थसिद्धिकृत् ।।१५।। नैर्ऋत्ये पश्चिमे भागे कश्चित्प्रभुसमागमम् ।। वाहनांबरलाभं च इष्टकार्यार्थसिद्धिकृत् ।।१६।। दायेशाद्रिपुरंध्रस्थे व्यये वा बलवर्जिते ।। स्थानंभ्रशं मनोदुःखं पुत्रक्लेशं महद्भयम् ।।१७।। राजकार्यकलापं च दारपीडा महद्भयम् ।। वृश्चिकादिविषाद्भीतिश्चौराहिनृपपीडनम् ।।१८।। दायेशात्केंद्रकोणे वा दुश्चिक्ये लाभगेपि वा ।। पुण्यतीर्थफलावाप्तिर्देवतादर्शनं महत् ।।१९।। परोपकारधर्मादिपुण्यधर्मादिसंग्रहम् ।। द्वितीयद्यूनराशिस्थे देहबाधा भविष्यति ।।२०।। छागदानं प्रकुर्वीत देहारोग्यं प्रजायते ।।२१।।

चन्द्रदशा में राहु अन्तर १८ मास फल

चन्द्रमा की दशा में राहु का अन्तर हो, राहु लग्न से केन्द्र या त्रिकोणस्थान में हो तो दशारंभ में कुछ श्रेष्ठ, पश्चात् शत्रुपीड़ा तथा महान् भय हो।।१३।। चोर, सर्प तथा राज से भय, गौ आदि पशु की पीड़ा, बन्धु नाश, मानहानि, मित्रहानि तथा मन में अशान्ति होतीं है।।१४।।शुभग्रहसे युक्त या दृष्ट हो अथवा लग्नसे उपचय स्थान में (३।६।११वें) कारकग्रह से सम्बन्ध हो तो उद्योग की सिद्धि तथा धनलाभ होता है।।१५।। नैर्ऋत्य दिशा या पश्चिम दिशा में किसी बड़े आदमी से मेल हो और उससे इच्छित कार्य की सिद्धि तथा सवारी आदि का लाभ हो।।१६।। दायेश - चन्द्रमासे ६।८वें हो या १२ वें में हो और बलरहित हो तो स्थान हानि, मनःक्लेश, सन्तान से दुःख, महान् भय।।१७।। राजकार्य हानि, स्त्री को पीड़ा, भय, सर्पादि से भय, चोरभय तथा राजा से भी पीड़ा होती है।।१८।। चन्द्रमा से केन्द्र या त्रिकोण में तीसरे या लाभस्थान में हो तो पवित्र तीर्थ यात्रा देवदर्शन होता है।।१९।। परोपकारी कार्य, पुण्य, दान, आदि श्रेष्ठ कार्य होते हैं। राहु दूसरे या सातवें भाव में हो तो शरीर कष्ट होता है।।२०।। इसकी शान्ति छाग (बकरा) के दान से होती है और दान के फल से आरोग्यता होती है।।२१।।

अथ गुरुभुक्तिमासाः १६ तत्फलम्

चंद्रस्यांतर्गते जीवे लग्नात्केंद्र त्रिकोणगे ।। स्वगेहे लाभस्वोच्चे वा राज्यलाभं महोत्सवम् ।।२२।। वस्त्राऽलंकारभूषाप्तिं राजप्रीतिं धनागमम् ।। इष्टदेवप्रसादेन गर्भाधानादिकं फलम् ।।२३।। शुभशोभनकार्याणि गृहेलक्ष्मीः कटाक्षकृत् ।। राजाश्रयं धनं भूमिगजवाजिसमन्वितम् ।।२४।। महाराजप्रसादेन इष्टसिद्धिः सुखावहा ।। षष्ठाष्टमव्यये जीवे नीचे वाऽस्तंगते यदि ।।२५।। पापयुक्तेऽशुभं कर्म गुरुपुत्रादिनाशनम् ।। स्थानभ्रंशं मनोदुःखमकस्मात्कलहं ध्रुवम् ।।२६।। गृहक्षेत्रादिनाशं च वाहनांबरनाशनम् ।। दायेशात्केंद्रकोणे वा दुश्चिक्ये लाभगेऽपि वा ।।२७।। भोजनांबरपश्वादि महोत्साहं करोति च ।। भ्रात्रादि सुखसंपत्तिधैर्यं वीर्यपराक्रमम् ।।२८।। यज्ञवीर्यविवाहश्च राज्यश्रीधनसंपदः ।। दायेशाद्रिपुरंध्रस्थे व्यये वा बलवर्जिते ।।२९।। करोति कुत्सितान्नं च विदेशगमनं तथा ।। भुक्त्यादौ शोभनं प्रोक्तमंते क्लेशकरं भवेत् ।।३०।। द्वितीय-द्यून-नाथे तु ह्यपमृत्युर्भविष्यति ।। तद्दोषपरिहारार्थं शिवसाहस्रकं जपेत् ।। स्वर्णदानमिति प्रोक्तं सर्वसंपत्प्रदायकम् ।।३१।।

चन्द्रदशा में गुरु का अन्तर १६ मास फल

चन्द्रदशा में बृहस्पति का अन्तर हो, लग्न से गुरु केन्द्र या त्रिकोण में हो या स्वगृही, उच्च का, लाभ भाव में हो तो राज्यलाभ तथा महोत्सव होता है।।२२।। वस्त्र, अलंकार, आभूषण की प्राप्ति, राजप्रीति, धनलाभ होता है। इष्टदेव की कृपा से सन्तान सुख होता है।।२३।। मंगल कार्य सम्पन्न होते हैं। घर में लक्ष्मी की कृपा रहती है। राजा के आश्रय से धन, भूमि तथा सवारी का लाभ होता है।।२४।। इच्छित कार्य सिद्ध होते हैं। गुरु यदि लग्न से ६।८।१२ में हो या नीचराशि में, अस्त हो।।२५।। पापग्रह युक्त हो तो अशुभ कार्य होते हैं। गुरु-पुत्र या गुरु तथा पुत्र आदि की हानि होती है। स्थानहानि, चिन्ता तथा अचानक ही कलह होती है।।२६।। मकान, भूमि आदि की हानि, सवारी आदि का नाश होता है। चन्द्रमा से केन्द्र या त्रिकोण में तीसरे या लाभ स्थान में हो तो।।२७।। उत्तम भोजन, वस्त्र, पशु आदि की प्राप्ति होती है। उत्साह बढ़ता है। भाई आदि से और सम्पत्ति, धैर्य बल प्राप्त होता है।।२८।। यज्ञ आदि पुण्य कार्य, विवाह आदि मंगलकार्य, राजा के समान ऐश्वर्य, धनसम्पत्ति होती है। चन्द्रमा से ६।८।१२ स्थान में तथा बलहीन हो।।२९।। तो कुभोजन और विदेशयात्रा होती है। अंतर्दशा के आरंभ में शुभ हो और अन्त में क्लेश हो।।३०।। २।७ का स्वामी यदि गुरु हो तो अपमृत्यु होती है।। इसकी शान्ति के लिए शिवसहस्रनामका पाठ करे या करावे। सुवर्ण का दान करे तो सब सम्पत्ति प्राप्त होती है।।३१।।

अथ शनिभुक्तिमासाः १९ तत्फलम्

चंद्रस्यांतर्गते मंदे लग्नात्केंद्रत्रिकोणगे ।। स्वक्षेत्रस्वांशगे चैव मंदे तुगांशसंयुते ।।३२।। शुभदृष्टियुते वाऽपि लाभे वा बलसंयुते ।। पुत्रमित्रार्थसंपत्तिः शूद्रप्रभुसमागमम् ।।३३।। व्यवसायात्फलाधिक्यं गृहक्षेत्रादिवृद्धिदम् ।। पुत्रलाभं च कल्याणं राजानुग्रहवैभवम् ।।३४।। षष्ठाष्टमव्यये मंदे नीचे वा धनगेऽपि वा ।। तद्भुक्त्यादौ पुण्यतीर्थे स्नानं चैव तु दर्शनम्

॥३५॥ अनेकजनत्रासश्च शस्त्रपीडा भविष्यति ॥ दायेशात्केंद्रराशिस्थे त्रिकोणे बलगेपि वा ॥३६॥ क्वचित्सौख्यं धनाप्तिश्च दारपुत्रविरोधकृत् ॥ द्वितीयद्यूनरंध्रस्थे देहबाधा भविष्यति ॥३७॥ तद्दोषपरिहारार्थं मृत्युंजयजपं चरेत् ॥ कृष्णां गां महिषीं दद्याद्दानेनारोग्य-मादिशेत् ॥३८॥

चन्द्रदशा में शनि का अन्तर १९ मास फल

चन्द्रमा की दशा में शनि का अन्तर हो और शनि लग्न से केन्द्र या त्रिकोण में अथवा स्वक्षेत्र या उच्च में हो एवं परमोच्च का हो॥२३॥ तथा शुभ दृष्टि या युक्त हो अथवा बलवान होकर लाभस्थान में हो तो पुत्र, मित्र, धन, सम्पत्ति प्राप्त होती है। तथा धनी शूद्र (या यवन आदि) से मेल होतब है॥३३॥ व्यापार से अधिक लाभ होता है। मकान भूमि आदि की वृद्धि होती है। पुत्रलाभ तथा कल्याण एवं राजकृपा से ऐश्वर्य प्राप्त होता है॥३४॥ शनि ६।८।१२ स्थान में, नीचराशि में, द्वितीय भाव में हो तो इसके अन्तर में प्रथम तो पवित्र तीर्थ में स्नान, देवदर्शन होता है॥३५॥ अनेक शत्रुओं से भय तथा शस्त्राघात होता है। चन्द्रमा से केन्द्र या त्रिकोण राशि में बलवान् हो॥३६॥ कुछ सुख, धनलाभ होकर स्त्री, पुत्र से विरोध होता है। २।७।८ इन स्थानों में हो तो देहकष्ट होता है॥३७॥ इसकी शान्ति के लिए मृत्युञ्जय जप करे। काली गौ का दान देने से शान्ति और आरोग्यता होती है॥३८॥

अथ बुधभुक्तिमासाः १७ तत्फलम्

चंद्रस्यांतर्गते सौम्ये केंद्रलाभत्रिकोणगे ॥ स्वर्क्षे नवांशके सौम्ये तुंगे वा बलसंयुते ॥३९॥ धनागमं राजमानं प्रियवस्त्रादि लाभकृत् ॥ विद्याविनोदसद्गोष्ठी ज्ञानवृद्धिः सुखावहा ॥४०॥ संतानप्राप्तिं संतोषं वाणिज्याद्धनलाभकृत् ॥ वाहनच्छत्रसंयुक्तं नानालंकारभूषितम् ॥४१॥ दायेशात्केंद्रकोणे वा लाभे वा धनगेऽपि वा ॥ विवाहं यज्ञदीक्षां च दानधर्मशुभादिकम् ॥४२॥ राजप्रीतिकरं चैव विद्वज्जनसमागमम् ॥ मुक्तामणिप्रवालानि वाहनांबरभूषणम् ॥४३॥ आरोग्यप्रीतिसौख्यं च सोमपानादिकं सुखम् ॥ दायेशाद्रिपुरंध्रस्थे व्यये वा नीचगेऽपि वा ॥४४॥ तद्भुक्तिर्देहबाधा च कृषिगोभूमिनाशनम् ॥ कारागृहप्रवेशं च दारपुत्रादिपीडनम् ॥४५॥ द्वितीयद्यूननाथे तु ज्वरपीडा महद्भयम् ॥ छागदानं प्रकुर्वीत विष्णुसाहस्रकं जपेत् ॥४६॥

चन्द्रदशा में बुधान्तर १७ मास फल

चन्द्रदशा में बुधान्तर हो, बुध लग्न से केन्द्र, लाभ, त्रिकोण में हो, स्वगृही, स्वनवांश, उच्च का शुभराशि में तथा बली हो॥३९॥ तो धनप्राप्ति,राजमान,सुन्दर वस्त्रादि प्राप्ति,विद्या, काव्य विनोद, मित्रगोष्ठी, ज्ञानं की वृद्धि, सुख॥४०॥ सन्तानप्राप्ति, सन्तोष, व्यापार से लाभ, सवारी, छत्र, नाना अलंकार की प्राप्ति होती है॥४१॥ दायेश, चन्द्रमा से केन्द्र में, त्रिकोण में, लाभस्थान में या धनभाव में हो तो विवाह, यज्ञ, दीक्षा, दान, धर्म तथा शुभकर्म॥४२॥ राजा से प्रीति, विद्वज्जन का समागम, हीरा मोती की प्राप्ति, सवारी, आभूषण, आरोग्यता, प्रीति, सुख तथा आनन्दकर पेय आदि की प्राप्ति होती है॥४३॥

चन्द्रमा से ६।८।१२ में या नीचराशि में हो।।४४।। तो बुधान्तर में देहकष्ट, खेती, पशु, भूमि का नाश होता है। कैदखाने में वास, स्त्रीपुत्र को पीड़ा होती है।।४५।। २।७ का स्वामी हो तो ज्वरपीड़ा तथा महान् भय होता है। उपाय-छाग दान करे या विष्णुसहस्र नाम स्तोत्र का पाठ करे या करावे।।४६।।

अथ केतुभुक्तिमासाः ७ तत्फलम्

चंद्रस्यांतर्गते केतौ केंद्रलाभत्रिकोणगे ।। दुश्चिक्ये बलसंयुक्ते धनलाभं महत्सुखम् ।।४७।। पुत्रदारादिसौख्यं च विघ्नकर्म करोति च ।। भुक्त्यादौ धनहानिः स्यान्मध्यगे सुखमाप्नुयात् ।।४८।। दायेशात्केंद्रलाभे वा त्रिकोणे बलसंयुते ।। क्वचित्फलं दशादौ तु ह्यल्पसौख्यं धनागमम् ।।४९।। गोमहिष्यादिलाभं च भुक्त्यंतेचार्थनाशनम् ।। पापयुक्तेऽथ वा दृष्टे दायेशाद्रं ध्ररिःफगे ।।५०।। हीनशत्रुत्वकार्याणि अकस्मात्कलहं ध्रुवम् ।। द्वितीयद्यूनराशिस्थे अनारोग्यं महद्भयम् ।।५१।। मृत्युंजयं प्रकुर्वीत सर्वसंपत्प्रदायकम् ।।५२।।

चन्द्र दशा में केत्वन्तर ७ मास फल

चन्द्रदशा में केतु का अन्तर हो केतु केन्द्र,लाभ, त्रिकोण में, तीसरे भाव में, बलवान् हो तो धनलाभ, महान् सुख।।४७।। स्त्रीपुत्र का सुख तथा कुछ विघ्नकारक भी होता है।अन्तरके आदि में धनहानि, मध्य में सुख प्राप्त होता है।।४८।। चन्द्रमा से केन्द्र में, त्रिकोण में, लाभस्थान में तथा बलवान हो तो दशा के आदि में कुछ कम रूप में सुख, धन की भी साधारण प्राप्ति होती है।।४९।। गौ, भैंस आदि का लाभ तथा अन्तर के अन्त में धन की हानि होती है। यदि केतु पापग्रह से युक्त अथवा दृष्ट हो तथा चन्द्रमा से ८।१२ में हो तो ।।५०।। हीन कार्य, शत्रु कार्य, अकस्मात् कलह, होती है। द्वितीय सप्तम की राशि में हो तो नीरोगता तथा महान् भय होता है।।५१।। उपाय-महामृत्युञ्जय जप करने से सब प्रकार शुभ होता है।।५२।।

अथ शुक्रभुक्तिवर्षः १ मासाः ८ तत्फलम्

चंद्रस्यांतर्गते शुक्रे केन्द्रलाभत्रिकोणगे ।। स्वोच्चे स्वक्षेत्रगे वापि राज्यलाभं करोति च ।।५३।। महाराजप्रसादेन वाहनांबरभूषणम् ।। चतुष्पाज्जीवलाभः स्याद्दारपुत्रादिवर्धनम् ।।५४।। नूतनागारनिर्माणं नित्यं मिष्टान्नभोजनम् ।। सुगंधपुष्पदायादिरम्यस्त्र्यारोग्यसंपदाम् ।।५५।। दशाधिपेन संयुक्ते देहसौख्यं महत्सुखम् ।। सत्कीर्तिसुखसंपत्तिगृहक्षेत्रादिवृद्धिकृत् ।।५६।। नीचे वास्तंगते शुक्रे पापग्रहयुतेक्षिते ।। भूनाशं पुत्रमित्रादिनाशनं पत्निनाशनम् ।।५७।। चतुष्पाज्जीवहानिः स्याद्राजद्वारे विरोधकृत् ।। धनस्थानगते शुक्रे स्वोच्चे स्वक्षेत्रसंयुते ।।५८।। निधिलाभं महत्सौख्यं भूलाभं पुत्रसंभवम् ।। भाग्यलाभाधिपैर्युक्ते भाग्यवृद्धिकरो भवेत् ।।५९।। महाराजप्रसादेन इष्टसिद्धिः सुखावहा ।। देवब्राह्मणभक्तिश्चमुक्ताविद्रुमलाभकृत् ।।६०।। दायेशाल्लाभगे शुक्रे त्रिकोणे केन्द्रगोपि वा ।। गृहक्षेत्राभिवृद्धिश्च वित्तलाभं महत्सुखम् ।।६१।। दायेशाद्रिपुरंध्रस्थे व्यये वा पापसंयुते ।। विदेशवासदुःखार्तिमृत्युचौरादिपीडनम् ।।६२।।

द्वितीयद्यूननाथे तु अपमृत्युभयं भवेत् ।। तद्दोषविनिवृत्त्यर्थं रुद्रजापं च कारयेत्।।६३।। श्वेतां गां रजतं दद्याच्छांतिमाप्नोत्यसंशयः ।।६४।।

चन्द्रदशा में शुक्रान्तर १ वर्ष ८ मास फल

चन्द्रमा की दशा में शुक्र का अन्तर हो। शुक्र केन्द्र में त्रिकोण में, लाभ में, स्वगृही, उच्च का हो तो राज्यलाभ कारक होता है।।५३।। राजा की कृपा से वस्त्र, भूषण, घोड़ा आदि की प्राप्ति, स्त्री पुत्र परिवार की वृद्धि।।५४।। नया मकान बनाना, नित्य मिष्टान्न भोजन, बाग की सैर, सुन्दर स्त्री, आरोग्यता आदि की प्राप्ति होती है।।५५।। दशास्वामी चन्द्रमायुक्त हो तो, देहसौख्य, धनप्राप्ति, कीर्ति, सुख, सम्पत्ति, मकान, भूमि आदि की वृद्धि होती है।।५६।। शुक्र नीचराशि में, अस्त, पापग्रह से दृष्ट या युक्त हो तो भूमिनाश, पुत्र मित्रनाश, भार्यानाश हो।।५७।। पशुहानि, राज से विरोध हो। शुक्र यदि स्वगृही, उच्च का होकर धनभाव में हो।।५८।। तो धरोहर की प्राप्ति, महान सुख, भूमिलाभ, पुत्रोत्पत्ति होती है। ९।११ के स्वामी से युक्त हो तो भाग्य वृद्धि होती है।।५९।। राजा की कृपा से इष्टसिद्धि, सुख, देवब्राह्मण भक्ति, हीरा मोती आदि की प्राप्ति होती है।।६०।। शुक्र चन्द्रमा से त्रिकोण में, केन्द्र में, लाभभाव में हो तो भूमि, मकान की वृद्धि, धनलाभ, अधिक सुख होता है।।६१।। चन्द्रमा से ६।८।१२ में पापग्रहयुक्त या दृष्ट हो तो विदेशवास, दुःख क्लेश, मृत्यु, चोर तथा सर्पादि से पीड़ा होती है।।६२।। द्वितीय सप्तमभाव का स्वामी शुक्र हो तो अपमृत्यु का भय होता है। इसकी शान्ति के लिए रुद्रमन्त्रजप या रुद्री पाठ तथा श्वेत गौ का दान करे तो निश्चय शान्ति होती है।।६४।।

अथ रविभुक्तिमासाः ६ तत्फलम्

चंद्रस्यांतर्गते भानौ स्वोच्चे स्वक्षेत्रसंयुते ।। केंद्रत्रिकोणलाभे वा धने वा सोदरे बले ।।६५।। नष्टराज्यं धनप्राप्तिं गृहे कल्याणशोभनम् ।। मित्रराजप्रसादेन ग्रामभूम्यादिलाभकृत् ।।६६।। गर्भाधानफलप्राप्तिर्गृहे लक्ष्मीः कटाक्षकृत् ।। भुक्त्यंते देहआलस्यं ज्वरपीडा भविष्यति ।।६७।। दायेशाद्रिपुरंध्रस्थे व्यये वा पापसंयुते ।। नृपचौरादिभीतिश्च ज्वररोगादिसंभवम् ।।६८।। विदेशगमनं चार्तिं लभते फलवैभवम् ।। द्वितीयद्यूननाथे तु ज्वरपीडा भविष्यति ।। तद्दोषपरिहारार्थं शिवपूजां च कारयेत् ।।६९।।

इति श्रीबृहत्पाराशरहोराशास्त्रे पूर्वखंडे चंद्रांतर्दशाफलकथनं नाम चतुस्त्रिंशोध्यायः ।।३४।।

चन्द्रदशा में सूर्यान्तर ६ मास फल

चन्द्रदशा में सूर्य का अन्तर हो, सूर्य उच्च का, स्वगृही केन्द्र में, त्रिकोण में, लाभ में, दूसरे या तीसरे भाव में हो।।६५।। तो नष्टराज्य की प्राप्ति, धनलाभ, घर में सुखशान्ति, मित्र तथा राजा की कृपा से ग्राम लाभ, भूमिलाभ ।।६६।। सन्तान की आशा, घर में लक्ष्मी की स्थिति हो, अन्तर के अन्त में आलस्य, कर्महीनता, ज्वर, पीड़ा होती है।।६७।। यदि चन्द्रमा से

पापयुक्त होकर ६।८।१२ में हो तो राजा चौर आदि का भय, ज्वर आदि पीड़ा॥६८॥ विदेशयात्रा तथा दुःख होता है। २।७ का स्वामी यदि सूर्य हो तो ज्वरपीड़ा होती है। इसकी शान्ति के लिए शिवपूजा करनी चाहिए॥६९॥

इति श्रीबृ० पा० हो० शा० पू० भावप्र० चन्द्रान्तर्दशाफलकथनं
नाम चतुस्त्रिंशोऽध्यायः ॥३४॥

अथ कुजदशायां कुजांतरंमा० ४ दि० २७ तत्फलम्

कुजस्यांतर्गते भौमे लग्नात्केन्द्रत्रिकोणगे ॥ लाभे वा धनसंयुक्ते दुश्चिक्ये धनसंयुते ॥१॥ लग्नाधिपेन संयुक्ते राजाऽनुग्रहवैभवम् ॥ लक्ष्मीकटाक्षचिह्नानि नष्टराज्यार्थलाभकृत् ॥२॥ पुत्रोत्सवादिसंतोषं गृहे गोक्षीरसंकुलम् ॥ स्वोच्चे वा स्वर्क्षगे भौमे स्वांशे वा बलसंयुते ॥३॥ गृहक्षेत्राभिवृद्धिश्च गोमहिष्यादिलाभकृत् ॥ महाराजप्रसादेन इष्टसिद्धिः सुखावहा ॥४॥ षष्ठाष्टमव्यये भौमे पापदृग्योगसंयुते ॥ मूत्रकृच्छ्रादिरोगश्च प्रेष्ठाधिक्यं व्रणाद्भयम् ॥५॥ चौरादिराजपीडा च धनधान्यपशुक्षयम् ॥ द्वितीये द्यूननाथे तु देहजाड्यं मनोरुजम् ॥६॥ तद्दोषपरिहारार्थं रुद्रजाप्यं च कारयेत् ॥ अनड्वाहं प्रदद्याच्च कुजदोषनिवृत्तये ॥७॥ आरोग्यं कुरुते तस्य सर्वसंपत्तिंदायकम् ॥८॥

मंगल की दशा में मंगल का अन्तर मा० ४ दि० २७ फल

मंगल दशा में मंगल का अन्तर हो और मंगल लग्न से केन्द्र में, त्रिकोण में, लाभ में, दूसरे, तीसरे भाव में॥१॥ लग्नेश से युक्त हो तो राजा की कृपा से सम्पत्ति की वृद्धि हो और घर में लक्ष्मी स्थिर रहे। नष्ट हुआ ऐश्वर्य और धन का लाभ हो॥२॥ पुत्र जन्म का उत्सव हो। घर में कल्याण, संतोष, गौ आदि हों। मंगल उच्च का स्वगृही, अपने नवांश में तथा बलवान् हो॥३॥ तो मकान, भूमि की वृद्धि, गौ, पशु आदि की वृद्धि हो। राजा या बड़े आदमी की कृपा से मनोरथ सिद्ध हो॥४॥ मंगल यदि ६।८।१२ स्थान में पापग्रह की दृष्टि या योग हो तो मूत्रकृच्छ्र की बीमारी, घाव से भय हो॥५॥ चोर आदि का भय, राज से भय, धनधान्य, पशु का क्षय हो। द्वितीय सप्तम का स्वामी हो तो देह जाड्य तथा मन में अशान्ति हो॥६॥ इसकी शान्ति के लिये रुद्र जप करे। लाल बैल का दान करे॥७॥ तो मंगल का दोष दूर होता है। आरोग्यता होती है तथा सम्पत्ति प्राप्त होती है॥८॥

अथ राहुभुक्तिमासाः १२ दिना० १८ तत्फलम्

कुजस्यांतर्गते राहौ स्वोच्चे मूलत्रिकोणगे ॥ शुभयुक्ते शुभैर्दृष्टे केन्द्रलाभत्रिकोणगे ॥९॥ तत्काले राजसन्मानं गृहभूम्यादिलाभकृत् ॥ कलत्रपुत्रलाभः स्याद्व्यवसायात्फलाधिकम् ॥१०॥ गंगास्नानफलावाप्तिं विदेशगमनं तथा ॥ षष्ठाष्टमव्यये राहौ पापयुक्तेऽथ वीक्षिते ॥११॥ चौराहिव्रणभीतिश्चचतुष्पाज्जीवनाशनम् ॥ वातपित्तक्षयं चैव कारागृहनिवेशनम् ॥१२॥ धनस्थानगते राहौ धननाशं महद्भयम् ॥ द्वितीये सप्तमे वापि ह्यपमृत्युभयं महत् ॥१३॥ नागदानं

प्रकुर्वीत देवब्राह्मणभोजनम् ।। मृत्युंजयजपं कुर्यादायुरारोग्यमादिशेत् ।।१४।।

राहु का अन्तर मास १२ दिन १८ फल

मंगल की दशा में राहु का अन्तर हो तथा राहु लग्न से उच्च राशि में, मूलत्रिकोण में हो।।९।। तो दशाकाल में राजकुल में सन्मान, मकान, भूमि आदि का लाभ, स्त्रीपुत्र का लाभ तथा व्यापार से अधिक लाभ होता है।।१०।। गंगा स्नान का फल मिलता है। विदेश की यात्रा होती है। ६।८।१२ में राहु पापग्रह से युक्त या दृष्ट हो।।११।। चोर, सर्प, घाव आदि से भय होता है। चौपाया की हानि, वात पित्त व्याधि तथा कैद होती है।।१२।। राहु धन स्थान में हो तो धन का नाश और महान् भय हो। राहु २।७ वें स्थान में हो तो अकाल मृत्यु का भय हो।।१३।। उपाय-सुवर्ण सर्प का दान, देवपूजा, ब्राह्मणभोजन, मृत्युञ्जय जप करने से आयु और आरोग्यता होती है।।१४।।

अथ गुरुभुक्तिमासाः ११ दिना० ६ तत्फलम्

कुजस्यांतर्गते जीवे त्रिकोणे केन्द्रगेपि वा ।। लाभे वा धनसंयुक्ते तुंगांशे स्वांशगेपि वा ।।१५।। सत्कीर्ती राजसन्मानं धनधान्यस्य वृद्धिकृत् ।। गृहे कल्याणसंपत्तिर्दारपुत्रादिलाभकृत् ।।१६।। दायेशात्केंद्रराशिस्थे त्रिकोणे लाभगेपि वा ।। भाग्यकर्माधिपैर्युक्ते वाहनाधिपसंयुते ।।१७।। लग्नाधिपसमायुक्ते शुभांशे शुभवर्गगे ।। गृहक्षेत्राभिवृद्धिश्च गृहे कल्याणसंपदः ।।१८।। देहारोग्यं महत्कीर्तिर्गृहे गोकुलसंग्रहः ।। चतुष्पाज्जीवलाभःस्याद्व्यवसायात्फलाधिकम् ।।१९।। कलत्रपुत्रविभवं राजसन्मानवैभवम् ।। षष्ठाष्टमव्यये जीवे नीचे वास्तंगते यदि ।।२०।। पापग्रहेणसंयुक्ते दृष्टे वा दुर्बले यदि ।। चौराहिनृपभीतिश्च पित्तरोगादिसम्भवम् ।।२१।। प्रेतबाधां भृत्यनाशं सोदराणां विनाशनम् ।। द्वितीयद्यूननाथे तु अपमृत्युज्वरादिकम् ।। तद्दोषपरिहारार्थं शिवसाहस्रकं जपेत् ।।२२।।

गुरु अन्तर मा० ११ दि० ६ फल

मंगलकी दशामें गुरुका अन्तर हो,गुरु केन्द्र,त्रिकोण या लाभमें अथवा धनस्थानमें हो अपने उच्चांशमें, अपने अंश में हो।।१५।।तो सत्कीर्ति,राजसम्मान,धनधान्यकी वृद्धि, सुख, सम्पत्ति, स्त्रीपुत्रका लाभ होता है।मंगलसे गुरु केन्द्रमें,त्रिकोण या लाभमें हो,नवमेश,दशमेश तथा चतुर्थेशसे युक्त हो।।१७।। लग्नेश से युक्त, अपने अंश में, शुभ वर्ग में हो तो मकान, भूमि की वृद्धि होती है तथा कल्याण और सम्पत्ति की वृद्धि होती है।।१८।। शरीर निरोग, महान् कीर्ति, गौ आदि चौपाया का लाभ, व्यापार से विपुल धन लाभ होता है।।१९।। स्त्री और पुत्र, वैभव, राज सन्मान होता है। गुरु यदि ६।८।१२ स्थान में या नीच का अथवा अस्त हो।।२०।। पापग्रह से युक्त या दृष्ट हो, बलहीन हो तो चोर, सर्पादि, राजभय होता है। पित्त जनित रोग होता है।।२१।। प्रेत बाधा, नौकर की हानि, भाइयों का नाश होता है। द्वितीय सप्तम का स्वामी हो तो ज्वर आदि रोग तथा अकाल मृत्यु का भय होता हैं। इसकी शान्ति के लिये 'शिवसहस्रनाम' स्तोत्र का पाठ करना चाहिए।।२२।।

अथ शनिभुक्तिमासाः १३ दिना० ९ तत्फलम्

कुजस्यांतर्गते मंदे स्वर्क्षे केंद्रत्रिकोणगे ।। मूलत्रिकोणकेन्द्रे वा तुंगांशे स्वांशगे यदि ।।२३।। लग्नाधिपतिना वापि शुभदृष्टियुतेंबले ।। राज्यसौख्यं यशोवृद्धिं स्वग्रामे धान्यवृद्धिकृत् ।।२४।। पुत्रपौत्रसमायुक्ते गृहे गौधनसंग्रहः ।। स्ववारे राजसन्मानं स्वमासे पुत्रवृद्धिकृत् ।।२५।। नीचादिक्षेत्रगे मन्दे षष्ठाष्टव्ययराशिगे ।। म्लेच्छवर्गप्रभुभयं धनधान्यादिनाशनम् ।।२६।। निगडं बंधनं रोगमंते क्षेत्रनिवासकृत् ।। द्वितीयद्यूननाथे तु पापयुक्ते महद्भयम् ।।२७।। धननाशं च संचारं राजद्वेषं मनोरुजम् ।। चौराग्निनृपपीडा च सहोदरविनाशनम् ।।२८।। बंधुद्वेषकरं चैव जीवहानिश्च जायते ।। अकस्माच्च मृतेर्भीतिः पुत्रदारादिपीडनम् ।।२९।। कारागृहादिभीतिश्च राजदण्डो महद्भयम् ।। दायेशात्केंद्रराशिस्थे लाभस्थे वा त्रिकोणगे ।।३०।। विदेशयानं लभते दुष्कीर्तिर्विविधा तथा ।। पापकर्मरतो नित्यं बहुजीवादिहिंसकः ।।३१।। विक्रयः क्षेत्रहानिश्च स्थानभ्रंशो मनोव्यथा ।। मृधेष्वपजयं चैव मूत्रकृच्छ्रान्महद्भयम् ।।३२।।दायेशात्षष्ठरंध्रे वा व्यये वा पापसंयुते ।। तद्भुक्तौ मरणं ज्ञेयं नृपचौरादिपीडनम् ।।३३।। वातपीडा च शूलादिज्ञातिशत्रुभयं भवेत् ।।३४।। तद्दोषपरिहारार्थं मृत्युंजयजपं चरेत् ।।३५।।

शनि का अन्तर मा० १३ दि० ९ फल

मंगल की दशा में शनि का अन्तर हो, शनि अपनी राशि में, लग्न से केन्द्र या त्रिकोण में, मूल त्रिकोण अथवा मूलत्रिकोण से केन्द्र में, परमोच्च या नवमांश में हो।।२३।। लग्नेश से युक्त, शुभ, दृष्टियुक्त बलवान् हो तो राजा के समान ऐश्वर्य, यश की वृद्धि, अपने देश में ही धन की वृद्धि हो।।२४।। पुत्र, पौत्र से युक्त, घर में गौ और धन का संग्रह हो। शनिवार को राज सन्मान हो। माघ, फाल्गुन में पुत्र हो।।२५।। शनि यदि ६।८।१२ स्थान में नीच या शत्रु गृह में हो तो म्लेच्छ वर्ग के अधिकारी से भय हो, धनधान्य का नाश हो।।२६।। कैद या हवालात हो। दशा के अन्त में रोग हो जिसके कारण अपने घर में ही रहना हो। द्वितीय सप्तम का स्वामी पापयुक्त हो तो महान् भय हो।।२७।। धन का नाश, राजद्वेष, मन में व्यथा, चोर, अग्नि, राजपीड़ा, सहोदर भाई का नाश।।२८।। वन्धुओं में द्वेष जीव की हानि, अकस्मात् किसी की मृत्यु का भय, स्त्री पुत्र को पीड़ा हो।।२९।। कैद होने का भय हो, राजदण्ड का भय हो। मंगल से शनि केन्द्र में, लाभ या त्रिकोण में हो।।३०।। तो विदेश यात्रा हो और इस यात्रा में अनेक प्रकार की बुराइयां हो। पाप कर्मरत तथा जीव हिंसक होता है।।३१।। मकान, भूमि आदि का विक्रय, स्थान हानि, मन में व्यथा, मुकदमे में पराजय, मूत्रकृच्छ्र की बीमारी होती है।।३२।। मंगल से शनि ६।८।१२ स्थान में, पापग्रह युक्त हो तो राज, चोर से पीड़ा होती है।।३३।। वात व्याधि, शूल, रोग, शत्रुभय या मृत्यु होती है।।३४।। इसकी शान्ति के लिये मृत्युञ्जय जप होना चाहिए।।३५।।

अथ बुधभुक्तिमासाः ११ दिना०२७ तत्फलम्

कुजस्यांतर्गते सौम्ये लग्नात्केन्द्रत्रिकोणगे ।। सत्कथाश्वाजपादानं धर्मबुद्धिर्महद्यशः ।।३६।। नीतिमार्गप्रसंगश्च नित्यं मिष्टान्नभोजनम् ।। वाहनांबरपश्वादिराजकर्म सुखानि च ।।३७।। कृषिकर्मफलं सिद्धिर्वारणांबरभूषणम् ।। नीचे वास्तंगते वापि षष्ठाष्टव्ययगेपि वा ।।३८।।

हृद्रोगं मानहानिश्च निगडं बंधुनाशनम् ।। दारपुत्रार्थनाशः स्याच्चतुष्पाज्जीवनाशनम् ।।३९।। दशाधिपेन संयुक्ते शत्रुवृद्धिर्महद्भयम् ।। विदेशगमनं चैव नानारोगास्तथैव च ।।४०।। राजद्वारे विरोधश्च कलहः सौम्यभुक्तिषु ।। दायेशात्केंद्रकोणे वा स्वोच्चे युक्तार्थलाभकृत् ।।४१।। अनेकधननाथत्वं राजसन्मानमेव च ।। भूपालयोगं कुरुते धनांबरविभूषणम् ।।४२।।

बुध का अन्तर मा० ११ दि० २७ फल

मंगलकी दशा में बुध का अन्तर हो, बुध लग्नसे केन्द्र या त्रिकोण में हो तो सत्कथा श्रवण, अजपा मन्त्र का ग्रहण, धर्म बुद्धि तथा महान् यश होता है।।३६।। नीति मार्ग में प्रवृत्ति, मिष्टान्न भोजन, वाहन वस्त्र, पशु आदि की प्राप्ति, राजकर्म का सुयोग और सुख होता है।।३७।। खेती से अच्छा लाभ, सवारी, वस्त्र-भूषण प्राप्त होता है। बुध यदि मंगल से ६।८।१२ भावों में, नीच राशि में, अस्त हो।।३८।। तो हृदय रोग, मानहानि, बन्धुनाश, कैद, स्त्रीपुत्र का नाश, चौपाया का नाश होता है।।३९।। मंगल से युक्त हो तो शत्रु वृद्धि, महान् भय, विदेश यात्रा तथा अनेक रोग होते हैं।।४०।। राज द्वार में विरोध, कलह होती है। मंगल से बुध केन्द्र, त्रिकोण में हो, उच्च का हो तो उचित धन का लाभ होता है।।४१।। अनेक सम्पत्ति का ट्रस्टी, राज सम्मान और धन सम्पत्ति की प्राप्ति होती है।।४२।।

भूरिवाद्यमृदंगादि सेनापत्यं महत्सुखम् ।। विप्राविनोदविमला वस्त्रवाहनभूषणम् ।।४३।। दारपुत्रादिविभवं गृहे लक्ष्मीः कटाक्षकृत् ।। दायेशात्षष्ठरिः फस्थे रंध्रे वा पापसंयुते ।।४४।। तद्दाये मानहानिः स्यात्क्रूरबुद्धिस्तु क्रूरवाक् ।। चौराग्निनृपपीडा च मार्गे चौरभयादिकम् ।।४५।। अकस्मात्कलहश्चैव बुधभुक्तौ न संशयः ।। द्वितीयद्यूननाथे तु महाव्याधिर्भयंकरा ।।४६।। अन्नदानं प्रकुर्वीत विष्णोर्नामसहस्रकम् ।। सर्वसंपत्प्रदं सौख्यं सर्वारिष्टप्रशांतये ।।४७।।

अनेक प्रकार के वाद्य यन्त्र तथा गान विद्या से सुख तथा सेनापति होता है। स्त्रियों का सुख, वस्त्र भूषण प्राप्ति होती है।।४३।। स्त्री पुत्र का सुख, लक्ष्मी की स्थिरता होती है। मंगल से बुध ६।८।१२ स्थान में, पापग्रह युक्त हो।।४४।। तो मानहानि, क्रूर बुद्धि तथा झगड़ालू होता है। चोर, अग्नि, राजा से पीड़ा और मार्ग में चोर का भय होता है।।४५।। अकस्मात् कलह होती है। द्वितीय, सप्तम का स्वामी हो तो भयंकर ब्याधि होती है।।४६।। इसकी शान्ति के लिये अन्नदान, विष्णुसहस्रनाम जप करने से सुख, सम्पत्ति और अरिष्ट शान्ति होती है।।४७।।

अथ केतुभुक्तिमासाः ४ दिना० २७ तत्फलम्

कुजस्यांतर्गते केतौ त्रिकोणे केंद्रगेपि वा ।। दुश्चिक्ये लाभगेवापि शुभयुक्ते शुभेक्षिते ।।४८।। राजानुग्रहशांतिश्च बहुसौख्यं धनागमम् ।। किंचित्फलं दशादौ तु भूलाभं पुत्रलाभकृत् ।।४९।। राजसंलाभकार्याणि चतुष्पाज्जीवलाभकृत् ।। योगकारकसंस्थाने बलवीर्यसमन्विते ।।५०।। पुत्रलाभो यशोवृद्धिर्गृहे लक्ष्मीःकटाक्षकृत् ।। भृत्यवर्गधनप्राप्तिः सेनापत्यं महत्सुखम् ।।५१।। भूपालमित्रं कुरुते यागांबरविभूषणम् ।। दायेशात्षष्ठरिः फस्थे रन्ध्रे वा पापसंयुते ।।५२।।

कलहो दंतरोगश्च चौरव्याघ्रादिपीडनम् ।। ज्वराती सारकुष्ठादिदारपुत्रादिपीडनम् ।।५३।। द्वितीयसप्तमस्थाने देहे व्याधिर्भविष्यति ।। सन्मानं जनसंतापं धनधान्यस्य प्रच्युतिम् ।।५४।।

केतु का अन्तर मा० ४ दि० २७ फल

मंगल की दशा में केतु का अन्तर हो, केतु लग्न से त्रिकोण या केन्द्र में, तीसरे अथवा लाभ स्थान में हो, शुभग्रह युक्त या दृष्ट हो।।४८।। तो राजा का अनुग्रह हो, बहुत सुख और धन की प्राप्ति हो। दशा के आदि में साधारण फल हो। भूमि और पुत्र का लाभ हो।।४९।। राजा से मैत्री हो। चौपाया का लाभ होता है। यदि केतु कारक स्थान में बलवान् होकर स्थित हो।।५०।। तो पुत्र लाभ, यश वृद्धि, लक्ष्मी की स्थिरता, मुनीम आदि नौकर के द्वारा धन की प्राप्ति, राजकुल में अधिकार तथा महान् सुख होता है।।५१।। राजा से मैत्री, यज्ञ आदि धर्म कार्य होते हैं। मंगल से बुध ६।८।१२ स्थान में पापग्रह युक्त हो।।५२।। तो कलह, दन्तरोग, चोर, ब्याघ्र आदि से पीड़ा, ज्वर, अतिसार, कुष्ठ आदि की बीमारी तथा स्त्री-पुत्र को पीड़ा होती है।।५३।। द्वितीय, सप्तम स्थान में हो तो अपने शरीर में व्याधि, परिवार में सन्ताप, धनधान्य की हानि तथा सन्मान होता है।।५४।।

अथ शुक्रभुक्तिमासाः १४ दिना० तत्फलम्

कुजस्यातंर्गते शुक्रे केंद्रलाभत्रिकोणगे ।। स्वोच्चे वा स्वर्क्षगे वापि शुभस्थानाधिपेऽथ वा ।।५५।। राज्यलाभं महत्सौख्यं गजाश्वांबरभूषणम् ।। लग्नाधिपेन संबंधे पुत्रदारादिवर्धनम् ।।५६।। आयुषो वृद्धिरैश्वर्य भाग्यवृद्धिसुखं भवेत् ।। दायेशात्केंद्रलाभस्थे लाभे वा धनगेऽपि वा ।।५७।।तत्काले श्रियमाप्नोति पुत्रलाभं महत्सुखम् ।।स्वप्रभोश्च महत्सौख्यं श्वेतवस्त्रादिलाभ-कृत् ।।५८।। महाराजप्रसादेन ग्रामभूम्यादिलाभदम् ।। भुक्त्यंतेफलमाप्नोति गीतनृत्यादिलाभ-कृत् ।।५९।। पुण्यतीर्थस्नानलाभं कर्माधिपसमन्विते ।। पापधर्मदयापुण्यं तडागं कारयिष्यति ।।६०।।दायेशाद्रध्ररिष्फस्थे षष्ठे वा पापसंयुते।।करोति दुःखबाहुल्यं देहपीड़ा धनक्षयम् ।।६१।। राजचौरादिभीतिश्च गृहे कलहमेव च ।। दारपुत्रादिपीडा च गोमहिष्यादिनाशकृत् ।।६२।। द्वितीयद्यूननाथे तु देहबाधा भविष्यति ।। श्वेतां गां महिषीं दद्यादायुरारोग्यमादिशेत् ।।६३।।

शुक्र का अन्तर मा० १४ फल

मंगल की दशा में शुक्र का अन्तर हो, शुक्र लग्न से केन्द्र, त्रिकोण या लाभ में हो, उच्च का स्वराशि में या शुभ स्थानाधिपति हो।।५५।। तो राज्य लाभ महान् सुख, हाथी, घोड़ा, वस्त्र आभूषण का लाभ होता है। लग्नेश से सम्बन्ध हो तो स्त्री-पुत्र की वृद्धि होती है।।५६।। आयु वृद्धि, ऐश्वर्य, भाग्य-वृद्धि और सुख होता है। मंगल से शुक्र केन्द्र, लाभ, केन्द्र से लाभ स्थान या धन स्थान में हो।।५७।। तो दशाकाल में लक्ष्मी की प्राप्ति, पुत्र लाभ, महान् सुख होता है। श्वेत वस्त्र से लाभ होता है। वेतन वृद्धि होती है।।५८।। राजा की कृपा से ग्राम, भूमि का लाभ होता है। अन्तर दशा के अन्त में विशेष फल होता है। गाना, बजाना आदि आनन्द के कार्य

होते हैं।।५९।। पुण्य तीर्थ में स्नान का लाभ होता है। दशमेश से युक्त हो तो दया धर्म आदि पुण्य कार्य होते हैं।। जलाशय बनाता है।।६०।। मंगल से शुक्र ६।८।१२ स्थानों में पापग्रह युक्त हो तो बहुत क्लेश दायक देह पीड़ा, धन क्षय।।६१।। राज-चौर का भय, परिवार में कलह, स्त्री-पुत्र को पीड़ा, चौपाया की हानि होती है।।६२।। द्वितीय सप्तम का स्वामी होने से देह बाधा (बीमारी) होती है। दूध वाली सफेद गौ का दान करने से आरोग्य होता है।।६३।।

अथ रविभुक्तिमासाः ४ दिन ६ तत्फलम्

कुजस्यांतर्गते सूर्ये स्वोच्चे स्वक्षेत्रकेंद्रगे ।। मूलत्रिकोणलाभे वा भाग्यकर्मेशसंयुते ।।६४।।
तद्भुक्तौ वाहनं कीर्तिः पुत्रलाभं च विंदति ।। धनधान्यसमृद्धिः स्याद्गृहे कल्याणसंपदः ।।६५।।
क्षेमारोग्यं महद्धैर्यं राजपूज्यं महत्सुखम् ।। व्यवसायात्फलाधिक्यं विदेशे राजदर्शनम् ।।६६।।
दायेशात्षष्ठरिःफे वा व्यये वा पापसंयुते ।। देहपीडा मनस्तापः कार्यहानिर्महद्भयम् ।।६७।।
शिरोरोगं ज्वरादिश्च अतीसारमथापि वा ।। द्वितीयद्यूननाथे तु सर्पज्वरविषाद्भयम् ।।६८।।
सुतपीडाकरं चैव शान्तिं कुर्याद्यथाविधि ।। देहा रोग्यं प्रकुरुते धनधान्यसमृद्धिदम् ।।६९।।

सूर्य का अन्तर मा० ४ दि० ६ फल

मंगल में सूर्य का अन्तर हो, सूर्य लग्न से केन्द्र, त्रिकोण, लाभ स्थान में, अपने उच्च राशि में स्वगृही, भाग्येश, कर्मेश से युक्त हो।।६४।। तो वाहन प्राप्ति, कीर्ति, पुत्र-लाभ, धनधान्य वृद्धि, घर में कल्याण, सम्पत्ति ।।६५।। आरोग्यता हिम्मत, सुख, राज पूजा प्राप्त होती है। व्यापार से अधिक लाभ, विदेश यात्रा, राज दर्शन होता है।।६६।। मंगल से सूर्य ६।८।१२ स्थान में पापग्रह युक्त हो तो देह पीड़ा, मन में चिन्ता, कार्य हानि, महान् भय होता है।।६७।। सिर में दर्द, ज्वर, अतिसार की बीमारी होती है। यदि सूर्य द्वितीय, सप्तम का स्वामी हो तो ज्वर और सर्प के विष से भय होता है।।६८।। सन्तान को भी पीड़ा होती है। इसकी यथा विधि शान्ति करने से आरोग्यता, धनधान्य की वृद्धि होती है।।६९।।

अथ चंद्रभुक्तिमासाः ७ तत्फलम्

कुजस्यांतर्गते चंद्रे स्वोच्चे स्वक्षेत्रकेंद्रगे ।। भाग्यवाहनकर्मेशलग्नाधिपसमन्विते ।।७०।। करोति विपुलं राज्यं गंधमाल्यांबरादिकम् ।। तडागं गोपुरादीनां पुण्यधर्मादिसंग्रहम् ।।७१।।
विवाहोत्सवकर्माणि दारपुत्रादिसौख्यकृत् ।। पितृमातृसुखावाप्तिं गृहे लक्ष्मीः कटाक्षकृत् ।।७२।।
महाराजप्रसादेन इष्टसिद्धिसुखादिकम् ।। पूर्णचंद्रे पूर्णफलं क्षीणे स्वल्पफलं भवेत् ।।७३।।
नीचारिस्थेष्टमे षष्ठे दायेशाद्रिपुरंध्रके ।। मरणं दारपुत्राणां कष्टं भूपतिनाशनम् ।।७४।।
पशुधान्यक्षयं चैव चोरादिरणभीतिकृत् ।। द्वितीयद्यूननाथे तु ह्यपमृत्युर्भविष्यति ।।७५।।
देहजाड्यं मनोदुःखं दुर्गालक्ष्मीजपंचरेत् ।। श्वेतां गां महिषीं दद्याद्दानेनारोग्यमादिशेत् ।।७६।।

इति श्रीबृहत्पाराशरहोराशास्त्रे पूर्वखण्डे भौममहादशांतरफलकथनंनाम पञ्चत्रिंशोऽध्यायः ।।३५।।

चन्द्रमा का अन्तर मा० ७ फल

मंगल की दशा में चन्द्रमा का अन्तर हो, चन्द्रमा स्वराशि में उच्च का या केन्द्र में हो, ४।९।१० के स्वामी से युक्त तथा लग्नेश युक्त हो।।७०।। तो विपुल ऐश्वर्य, सुन्दर वस्त्रादि की प्राप्ति, तालाब मकान आदि का बनाना, धर्म ब्रतादि का संग्रह होता है।।७१।। विवाहादि उत्सव कार्य, स्त्री-पुत्र का सुख, माता पिता का सुख तथा घर में लक्ष्मी की स्थिरता होती है।।७२।। राजा की कृपा से मनोरथ की सिद्धि तथा सुख होता है। चन्द्रमा पूर्ण हो तो फल पूर्ण होता है। क्षीण हो तो फल साधारण होता है।।७३।। चन्द्रमा नीच का, शत्रु गृह में, लग्न से या मंगल से ६।८ स्थान में हो तो स्त्री-पुत्र की मृत्यु, कष्ट, राजकोप, पशु, धान्य का क्षय, चोर, भय, लड़ाई, झगड़ा आदि होते हैं। चन्द्रमा द्वितीय, सप्तम का स्वामी हो तो अपमृत्यु होती है।।७५।। अथवा देह जाडच, चिन्ता, दुःख होता है।
उपाय-दुर्गा-लक्ष्मी मन्त्र का जप, श्वेत गौ का दान करने से आरोग्य होता है।।७६।।

इति श्रीवृ० पा० हो० शा० पू० भा० प्रका० भौमदशान्तरफलकथनं नाम पञ्चत्रिंशोऽध्यायः ।।३५।।

अथ राहुदशायां राहुभुक्तिमासाः ३२ दिना० १२ तत्फलम्

कुलीरे वृश्चिके चैव कन्यायां चापगेऽपि वा ।। तद्भुक्तौ राजसन्मानं वस्त्रवाहनभूषणम् ।।१।। व्यवसायात्फलाधिक्यं चतुष्पाज्जीवलाभकृत् ।। प्रयाणं पश्चिमे भागे वाहनांबरलाभकृत् ।।२।। लग्नाद्युपचयेराहौ शुभदृष्टियुतेक्षिते ।। मित्रांशे तुंगलाभेशे योगकारकसंयुते ।।३।। राज्यलाभं महोत्साहं राजप्रीतिं शुभावहाम् ।। गृहे कल्याणसंपत्तिर्दारपुत्रादिवर्द्धनम् ।।४।। षष्ठाष्टमे व्यये राहौ पापयुक्तेऽथ वीक्षिते ।। चौरादिव्रणपीडा च सर्वत्र जनपीडनम् ।।५।। राजद्वारजनद्वेष–इष्ट बंधुविनाशनम् ।। दारपुत्रादिपीडा च सर्वत्र जनपीडनम् ।।६।। द्वितीयद्यूननाथे तु सप्तम–स्थानमाश्रितः ।। सदा रोगं महाकष्टं शांतिं कुर्याद्यथाविधि ।। आरोग्यं संपदश्चैव भविष्यन्ति न संशयः ।।७।।

राहुदशा में राहु का अन्तर २ व. ८ मा. १२ दिन फल

राहु की महादशा में राहु का अन्तर हो, राहु ४।६।९।८ राशियों में हो तो अन्तर्दशा में राजसन्मान, सवारी, भूषण वस्त्र आदि की प्राप्ति होती है।।१।। व्यापार से लाभ अधिक हो। चौपाया का लाभ हो। पश्चिम दिशा की यात्रा हो। यात्रा से विशेष लाभ हो।।२।। लग्न आदि केन्द्रस्थान में शुभदृष्टियुक्त या दृष्ट राहु हो। मित्रनवांश में, उच्च राशि में, लाभेश हो, कारकग्रहयुक्त हो।।३।। तो राज्य से लाभ, महान् उत्साह, राजप्रीति, तथा सुख होता है। घर में सुख शान्ति, स्त्री पुत्र की वृद्धि,।।४।। राहु यदि ६।८।१२ स्थान में पापग्रहयुक्त या दृष्ट हो तो चोर आदि द्वारा आघात का भय तथा सर्वत्र अशान्ति होती है।।५।। राज भय, बन्धु द्वेष, इष्टबन्धु की हानि, स्त्री-पुत्र को पीड़ा तथा जनमात्र से पीड़ा होती है।।६।। राहु २।७ भाव का स्वामी होकर सप्तमभाव में स्थित हो तो सदा रोगी तथा महाकष्ट होता है। इसकी यथाविधि शान्ति करना चाहिए। शान्ति करने से आरोग्यता और संपत्ति होती है।।७।।

अथ गुरुभुक्तिमासाः २८ दिना० २४ तत्फलम्

राहोरंतर्गते जीवे लग्नात्केंद्रत्रिकोणगे ।। स्वोच्चे स्वक्षेत्रगे वापि तुंगे स्वांशेंशगेपि वा ।।८।।स्थान-लाभं मनोधैर्यं शत्रुनाशं महत्सुखम् ।। राजप्रीतिकरं सौख्यं महतीव समश्नुते ।।९।। दिने दिने वृद्धिरपि सितपक्षे शशी यथा ।। वाहनादिधनं भूरि गृहे गोधनसंकुलम् ।।१०।। नैर्ऋत्याः पश्चिमे भागे प्रयाणं राजदर्शनम् ।। युक्तकार्यार्थसिद्धिः स्यात्स्वदेशे पुनरेष्यति ।।११।। उपकारो ब्राह्मणानां तीर्थयात्रादिकर्मणाम् ।। वाहनं ग्रामलाभं च देवब्राह्मणपूजनम् ।।१२।। पुत्रोत्सवादिसंतोषं नित्यं मिष्टान्नभोजनम् ।। नीचे वास्तंगते वापि षष्ठाष्टव्ययराशिगे ।।१३।। शत्रुक्षेत्रे पापयुक्ते धनहानिर्भविष्यति ।। कर्मविघ्नो मनोहानिः सा पतिघ्नी भविष्यति ।।१४।। कलत्रपुत्रपीडा च हृद्रोगं राजकार्यकृत् ।। दायेशात्केंद्रकोणे वा लाभे वा धनगेपि वा ।।१५।। दुश्चिक्ये बलसंपूर्णे गृहक्षेत्रादिवृद्धिकृत् ।। भोजनांबरपश्वादिदानधर्मजपादिकम् ।।१६।। भुक्त्यंते राजकोणाच्च द्विमासं देहपीडनम् ।। ज्येष्ठभ्रातुर्विनाशं च भ्रातृपित्रादिपीडनम् ।।१७।। दायेशात्षष्ठरंध्रे वा रिःफे वा पापसंयुते ।। तद्भुक्तौ धनहानिः स्याद्देहपीडा भविष्यति ।।१८।। द्वितीयद्यूननाथे वा ह्यपमृत्युर्भविष्यति ।। स्वर्णस्य प्रतिमादानं शिवपूजां च कारयेत् ।।१९।। देहारोग्यं प्रकुरुते शांतिं कुर्याद्विचक्षणः ।।२०।।

गुरु का अन्तर व० २ मा० ४ दि० २४ फल

राहु की दशा में गुरु का अन्तर हो, गुरु लग्न से केन्द्र में, त्रिकोण में, स्वगृही, उच्चराशि में, अपने नवांश में हो ।।८।। तो मकान का लाभ, मन में धैर्य, शत्रुनाश, महान् सुख, राज से प्रीति तथा आनन्द होता है।।९।। शुक्लपक्ष के चन्द्रमा के समान सम्पत्ति की प्रतिदिन वृद्धि होती है। सवारी, धन तथा गौ आदि से घर भरा रहता है।।१०।। नैर्ऋत्य या पश्चिम दिशा में यात्रा, राजदर्शन, उचित कार्य की सिद्धि होकर पुनः स्वदेश में आना होता है।।११।। ब्राह्मणों का उपकार, तीर्थयात्रा, वाहन, ग्रामलाभ तथा देव, ब्राह्मणपूजा।।१२।। पुत्रोत्सव से आनन्द, नित्य उत्तम भोजन होता है। यदि गुरु नीच राशि में, अस्तंगत, ६।८।१२ भाव में हो।।१३।। शत्रु राशि में, पापग्रह युक्त हो तो धनहानि होती है। काम में बाधा, मन में अशान्ति, यह अन्तर्दशा जातक की नाशकारक होती है।।१४।। स्त्री, पुत्र को पीड़ा, हृदय रोग तथा राजकार्यकारी होता है। दशास्वामी से केन्द्र, त्रिकोण में, लाभ तथा धनस्थान में।।१५।। तीसरे स्थान में बलयुक्त हो तो गृह, भूमि की वृद्धि, वस्त्र, भूषण, पशु आदि का लाभ, दान, धर्म, जप आदि पुण्यकार्य होते हैं।।१६।। अन्तर के अन्त में राजकोष तथा दो मास तक देहपीड़ा ज्येष्ठभ्राता की मृत्यु, भ्राता, पिता आदि को पीड़ा होती है।।१७।। दशास्वामी राहु से ६।८।१२ स्थान में पापयुक्त हो तो धनहानि, देहपीड़ा होती है।।१८।। द्वितीय, सप्तम का स्वामी गुरु हो तो अपमृत्यु होती है। उपाय-सुवर्ण मूर्ति (गुरु की) का दान तथा शिव की पूजा-अभिषेक करावे।।१९।। तो शरीर की आरोग्यता प्राप्त होती है।।२०।।

अथ शनिभुक्तिमासाः ३४ दिना० ६ तत्फलम्

राहोरंतर्गते मंदे लग्नात्केंद्रत्रिकोणगे ।। स्वोच्चे मूलत्रिकोणे वा दुश्चिक्ये लाभराशिगे ।।२१।।

तद्भुक्तिवाहनं सेवा राजप्रीतिकरं शुभम् ।। विवाहोत्सवकार्याणि कृत्वा पुण्यानि भूरिशः ।।२२।। आरामकरणे युक्तं तडागं कारयिष्यति ।। शूद्रप्रभुवशादिष्टं लाभं गोधनसंग्रहम् ।।२३।। प्रयाणं पश्चिमे भागे प्रभुमूलाद्धनक्षयः ।। देहायासं फलाल्पत्वं स्वदेशे पुनरेष्यति ।।२४।। नीचारिक्षेत्रगे मंदे रंध्रे वा व्ययगेपि वा ।। नीचारौ राजभीतिश्च दारपुत्रादिपीडनम् ।।२५।। आत्मबंधुमनस्तापं दायादजनविग्रहम् ।। व्यवहारे च कलहमकस्माद्भूषणं लभेत् ।।२६।। दायेशात्षष्ठरिःफे वा व्यये वा पापसंयुते ।। हृद्रोगं मानहानिं च विवाहे शत्रुपीडनम् ।।२७।। अन्यदेशादिसारं च गुल्मवद्व्याधिभाग्भवेत् ।। कुभोजनं कोद्रवादि जातिदुःखाद्भयं भवेत् ।।२८।। द्वितीयद्यूननाथे तु ह्यपमृत्युर्भविष्यति ।। कृष्णां गां महिषीं दद्याद्दानेनारोग्यमादिशेत् ।।२९।।

राहुदशा में शनि का अन्तर व० २ मा० १० दि० ६ फल

राहु की दशा में शनि का अन्तर हो, लग्न से शनि केन्द्र, त्रिकोण में, उच्चराशि में, मूलत्रिकोण में, तीसरे भाव या लाभराशि में।।२१।। शनि के अन्तर में सवारी तथा नौकर चाकरों का सुख होता है। राजा से मैत्री तथा शुभकार्य होता है। विवाह आदि उत्सव के कार्य तथा अनेक पुण्यकार्य होते हैं।।२२।। बगीचा तथा तालाव करता है। शूद्र स्वामी द्वारा विशेष लाभ तथा गोधन का संग्रह होता है।।२३।। पश्चिम दिशा की यात्रा तथा स्वामी के कारण धनक्षय होता है। देहकष्ट, अधिक, फल कम तथा पुनः स्वदेश में वापस आता है।।२४।। शनि यदि नीचराशि में, शत्रुराशि में, ६।८।१२ भाव में हो तो राजभय तथा स्त्री, पुत्र को पीड़ा होती है।।२५।। अपने बन्धु तथा मन को असंतोष, परिवार में विग्रह, व्यापार में कलह तथा अकस्मात् भूषण का लाभ होता है।।२६।। राहु से शनि ६।८।१२ में पापयुक्त हो तो हृदय का रोग, मानहानि, तथा विवाह में शत्रुकृत बाधा हो।।२७।। अन्य देश यात्रा तथा उदर आदि में गुल्मव्याधि होती है। खराब कोद्रव (कोदों) आदि अन्न का भोजन तथा जाति में अपमान का भय होता है।।२८।। २।७ भाव का स्वामी हो तो अपमृत्यु होती है। काली गौ के दान से आरोग्यता प्राप्त होती है।।२९।।

अथ बुधभुक्तिमासाः ३० दिना० १८ तत्फलम्

राहोरंतर्गते सौम्ये भाग्ये वा स्वर्क्षगेपि वा ।। तुंगे वा केंद्रराशिस्थे पुत्रे वा बलगेपि वा ।।३०।।
राजयोगं प्रकुरते गृहे कल्याणवर्धनम् ।। व्यापारेण धनप्राप्तिर्विद्यावाहनमुत्तमम् ।।३१।।
विवाहोत्सवकार्याणि चतुष्पाज्जीवलाभकृत् ।। सौम्यमासे महत्सौख्यं स्ववारे राजदर्शनम् ।।३२।।
सुगंधपुष्पशय्यादि स्त्रीसौख्यं चातिशोभनम् ।। महाराजप्रसादेन धनलाभो महद्यशः ।।३३।।
दायेशात्केंद्रलाभे वा दुश्चिक्ये भाग्यकर्मगे ।। देहारोग्यं हृदुत्साह इष्टसिद्धिः सुखावहा ।।३४।।
पुण्यश्लोकादिकीर्तिश्च पुराणश्रवणादिकम् ।। विवाहो यज्ञदीक्षा च दानधर्मदयादिकम् ।।३५।।
षष्ठाष्टमव्यये सौम्ये मदे राशियुतेक्षिते ।। दायेशात्षष्ठरिःफे वा रंध्रे वा पापसंयुते ।।३६।।
देवब्राह्मणनिंदा च भोगभाग्यविहीनभाक् ।। सत्यहीनश्च दुर्बुद्धिश्चौराहिनृपपीडनम् ।।३७।।
अकस्मात्कलहश्चैव गुरुपुत्रादिनाशनम् ।। अर्थव्ययो राजकोपो दारपुत्रादिपीडनम् ।।३८।।
द्वितीयद्यूननाथे वा ह्यपमृत्युं तथाऽश्रियम् ।। तद्दोषपरिहारार्थं विष्णुसाहस्रकं जपेत् ।।
स्वगृह्योक्तविधानेन शांतिं कुर्याद्विचक्षणः ।।३९।।

राहुदशा में बुधान्तर मा० ३० दि० १८ फल

राहु की दशा में बुध का अन्तर हो। बुध लग्न से भाग्यस्थान में, स्वराशि में, उच्च में, केन्द्र में, पंचम में, बलवान होकर स्थित हो।।३०।। तो राजयोगकारक होता है। घर में कल्याण की वृद्धि तथा व्यापार से धनप्राप्ति एवं विद्या प्राप्ति तथा सवारी प्राप्ति होती है।।३१।। विवाह आदि उत्सव के कार्य चौपाया (गौ आदि) पशु की प्राप्ति तथा बुध की राशि ३।६ के सौरमास में महान् सुख और बुधवार को राजा या बड़े आदमी से मेल होता है।।३२।। सुगन्धित पुष्पयुक्त शय्या तथा सुन्दर स्त्री-सुख प्राप्त होता है। राजकृपा से धनलाभ तथा यश प्राप्त होता है।।३३।। राहु से बुध केन्द्र में, लाभ में, तीसरे ९।१० भाव में हो तो देह में आरोग्यता, हृदय में उत्साह तथा इच्छित कार्य की सुख कर सिद्धि होती है।।३४।। उसकी कीर्ति तथा यशगान होता है। पुराण आदि सदुपदेशों का श्रवण, विवाह, यज्ञ, दीक्षा, दान, धर्म, दया आदि शुभगुण प्राप्त होते हैं।।३५।। बुध यदि ६।७।८।१२ स्थान में हो या इनके स्वामी से युक्त या दृष्ट हो अथवा राहु से ६।८।१२ स्थान में पापग्रह युक्त हो।।३६।। तो देवब्राह्मण की निन्दा, उत्तमभोग तथा भाग्य से हीन होता है। सत्यहीन, दुर्बुद्धि तथा चोर, सर्प, राजा से पीड़ा होती है।।३७।। अकस्मात् कलह तथा गुरु और पुत्र आदि का नाश होता है।।३८।। द्वितीयेश तथा सप्तमेश हो तो धनहीन और अपमृत्यु होती है। इसकी शान्ति के लिए विष्णुसहस्रनाम का पाठ तथा गृह्यसूत्रोक्त विधान से शान्ति करना चाहिए।।३९।।

अथ केतुभुक्तिमा० १२ दिनानि १८ तत्फलम्

राहोरंतर्गते केतौ भ्रमणं राज्यकृद्धनम् ।। वातज्वरादिरोगश्च चतुष्पाज्जीवहानिकृत् ।।४०।। अष्टमाधिपसंयुक्ते देहजाड्यं मनोरुजम् ।। शुभयुक्ते शुभैर्दृष्टे देहसौख्यं धनागमः ।। राजसन्मानभूषाप्तिर्गृहे शुभकरो भवेत् ।।४१।। लग्नाधिपेन संबंधे इष्टसिद्धिः सुखावहा ।। लाभाधिपसमायुक्ते लाभो वा भवति ध्रुवम् ।।४२।। चतुष्पाज्जीवलाभःस्यात्केन्द्रे वाथ त्रिकोणगे ।। रंध्रस्थानगते केतौ व्यये वा बलवर्जिते ।।४३।। तद्भुक्तौ बहुरोगः स्याच्चोराहिव्रणपीडनम् ।। पितृमातृवियोगश्च भ्रातृद्वेषं मनोरुजम् ।।४४।। स्वप्रभोश्च महत्कष्टं वैषम्यं चित्तहिंसकम् ।। द्वितीयद्यूननाथे तु देहबाधा भविष्यति ।। तद्दोषपरिहारार्थं छागदानं च कारयेत् ।।४५।।

राहुदशा में केतु अन्तर १२ मा० १८ दिन फल

राहुकी दशामें केतुका अन्तर हो तो भ्रमण,राजसाहाय्यसे धनप्राप्ति,वातज्वर आदि रोग तथा चौपाया पशु आदि की हानि होती है।अष्टमेश युक्त हो तो देहजाड्य तथा क्लेश हो।शुभग्रहयुक्त या दृष्ट हो तो देहसौख्य, धनप्राप्ति, राजमान्यता, आभूषण प्राप्ति तथा घर में शुभकारी होता है।।४१।। लग्नेश से युक्त हो तो सुखकर, इष्टसिद्धि होती है। लाभेशयुक्त हो तो निश्चय लाभ होता है।।४२।। चौपाया जीव का लाभ होता है। यह शुभ फल केतु के केन्द्र या त्रिकोण में होने से होते हैं। केतु ८।१२ में बलहीन होकर स्थित हो।।४३।। तो अन्तर में अनेक रोग, चोर, सर्प, घाव से कष्ट हो। माता पिता का वियोग हो। भ्रातृद्वेष, चिन्ता हो।।४४।। अपने स्वामी से कष्ट, विषमता, हिंसावृत्ति होती है। २।७ का स्वामी हो तो देहकष्ट होता है। इसकी शान्ति के लिये छाग (बकरा) का दान करना चाहिए।।४५।।

अथशुक्रभुक्तिमासा: ३६ तत्फलम्

राहोरंतर्गते शुक्रे लग्नात्केंद्रत्रिकोणगे ।। लाभे वा बलसंयुक्ते योगप्राबल्यमादिशेत् ।।४६।। विप्रमूलाद्धनप्राप्तिर्गोमहिष्यादिलाभकृत् ।। पुत्रोत्सवादिसंतोषं गृहे कल्याणसंभवम् ।।४७।। सन्मानं राजसन्मानं राज्यलाभं महत्सुखम् ।। स्वोच्चे वा स्वर्क्षगे वापि तुंगांशे स्वांशगेऽपि वा ।।४८।। नूतनं गृहनिर्माणं नित्यं मिष्टान्नभोजनम् ।। कलत्रपुत्रविभवं मित्रसंयुक्तभोजनम् ।।४९।। अन्नदानप्रियं नित्यं दानधर्मादिसंग्रहम् ।। महाराजप्रसादेन वाहनांबरभूषणम् ।।५०।। व्यवसायात्फलाधिक्यं विवाहो मौंजिबंधनम् ।। षष्ठाष्टमव्यये शुक्रे नीचे शत्रुगृहे स्थिते ।।५१।। मंदारफणिसंयुक्ते तद्‌भुक्तौ रोगमादिशेत् ।। अकस्मात्कलहं चैव पितृपुत्रवियोगकृत् ।।५२।। स्वबंधुजनहानिश्च सर्वत्र जनपीडनम् ।। दायादिकलहं चैव स्वप्रभो: स्वस्य मृत्युकृत् ।।५३।। कलत्रपुत्रपीडां च शूलरोगादि संभवम् ।। दायेशात्केंद्रराशिस्थे त्रिकोणे वा समन्विते ।।५४।। लाभे वा धर्मराशिस्थे क्षेत्रपालमहत्सुखम् ।। सुगंध-वस्त्रशय्यादि गानविद्यापरिश्रमम् ।।५५।। छत्रचामरवाद्यादिगन्धपद्मसमन्वितम् ।। दायेशाद्रिपुरंध्रस्थे व्यये वा पापसंयुते ।।५६।। विषाहिनृपचौरादिमूत्रकृच्छ्रान्महद्भयम् ।। प्रमेहाद्रुधिरं रोगं कुत्सितान्नं शिरोरुजम् ।।५७।। कारागृहप्रवेशं च राजदंडाद्धनक्षयम् ।। द्वितीयद्यूननाथे वा दारपुत्रादिनाशनम् ।।५८।। आत्मपीडा भयं चैव ह्यपमृत्युस्तथा भवेत् ।। दुर्गालक्ष्मीजपं कुर्यान्मृत्युनाशकरो भवेत् ।।५९।।

राहु में शुक्र का अन्तर वर्ष ३ मास ० फल

राहु की महादशा में शुक्र का अन्तर हो तथा शुक्रलग्न से केन्द्र, त्रिकोण, लाभस्थान में बलसंयुक्त हो तो प्रबल शुभ योग होता है।।४६।। किसी ब्राह्मण के कारण धन की प्राप्ति तथा गाय-भैंस आदि की प्राप्ति होती है। पुत्रजन्म आदि उत्सव, घर में सुख शान्ति हो।।४७।। समाज में तथा राज में प्रतिष्ठा, राजा के समान ऐश्वर्य तथा महान् सुख होता है। शुक्र यदि उच्च में, स्वगृही, परमोच्च में या अपने नवांश में हो।।४८।। तो नये मकान बने तथा नित्य मिष्टान्न भोजन, स्त्री, पुत्र का सुख एवं मित्रगोष्ठी का सुख होता है।।४९।। नित्य अन्नदान, धर्म होता है। राजा की कृपा से वाहन, वस्त्र, भूषण होते हैं।।५०।। व्यापार से अधिक लाभ तथा विवाह आदि मंगलकार्य, दीक्षा, आदि शुभकार्य होते हैं।। यदि शुक्र ६।८।१२ में हो, शत्रुराशि में हो।।५१।। मंगल, शनि, राहु युक्त हो तो उसके अन्तर में रोग होता है। अकस्मात् कलह होता है। पिता पुत्र का वियोग होता है।।५२।। अपने बन्धुजन की हानि होती है। स्वजाति से पीड़ा, परिवार में कलह तथा गृहस्वामी की मृत्यु होती है।।५३।। स्त्री पुत्र को पीड़ा, शूलरोग होता है। राहु से शुक्र केन्द्र या त्रिकोण में हो।।५४।। लाभ में या नवम में हो तो बड़े अधिकारी के समान सुख हो, सुगंधित वस्त्रयुक्त शय्या तथा गान विद्या का रसिक होता है।।५५।। छत्र-चमर युक्त सिंहासन एवं सुगन्ध पुष्पयुक्त रहता है। राहु से शुक्र ६।८।१२ स्थान में पापग्रह युक्त हो तो।।५६।। विष, सर्प, राज, चोर से भय तथा मूत्र कृच्छ्र आदि बीमारी से महान् भय होता है। प्रमेह से रक्तस्राव तथा निकृष्ट अन्न का भोजन, सिरदर्द।।५७।। कैदखानों में वास, राजदंड से धनक्षय होता है। द्वितीय सप्तम का स्वामी हो तो स्त्री पुत्र का नाश होता है।।५८।। अपने शरीर में पीड़ा, भय, तथा अपमृत्यु होती है। 'दुर्गालक्ष्मी' मन्त्र के जप से रक्षा होती है।।५९।।

अथ रविभुक्तमासा: १० दिनानि २२ तत्फलम्

राहोरन्तर्गते सूर्ये स्वोच्चे स्वक्षेत्रकेंद्रगे।। त्रिकोणे लाभगे वापि तुंगांशे स्वांशगेपि वा ।।६०।।

शुभग्रहेण संदृष्टे राजप्रीतिकरं शुभम् ।। धनधान्यसमृद्धिश्च ह्यल्पसौख्यं सुखावहम् ।।६१।। अल्पग्रामाधिपत्यं च स्वल्पलाभो भविष्यति ।। भाग्यलग्नेशसंयुक्ते कर्मेशेन निरीक्षिते ।।६२।। राजाश्रयो महाकीर्तिर्विदेशगमनं महत् ।। देशाधिपत्यभोगं च गजाश्वांबरभूषणम् ।।६३।। मनोभीष्टप्रदानं च पुत्रकल्याणसंभवम् ।। दायेशाद्रिःफरंध्रस्थे षष्ठे वा नीचगेऽपि वा ।।६४।। ज्वरातिसाररोगं च कलहं राजविद्विषम् ।। प्रयाणं शत्रुवृद्धिं च नृपचौराग्निपीडनम् ।।६५।। दायेशात्केंद्रकोणे वा दुश्चिक्ये लाभगेपि वा ।। विदेशे राजसन्मानं कल्याणं च शुभावहम् ।।६६।। द्वितीयद्यूननाथे तु महारोगो भविष्यति ।। सूर्यप्रमाणशांतिं च कुर्यादारोग्यसम्भवाम् ।।६७।।

राहुदशा में सूर्यान्तर मास १० दिन २२ फल

राहु की महादशा में सूर्य का अन्तर हो और सूर्य लग्न से केन्द्र, त्रिकोण, लाभ, स्थानों में, उच्चराशि, स्वराशि या परमोच्च अथवा अपने नवांश में हो।।६०।। शुभग्रह से दृष्ट हो तो राजप्रीति प्राप्त होती है। धनधान्य की वृद्धि, साधारण सुख होता है।।६१।। साधारण अधिकार, मध्यम लाभ होता है। भाग्येश तथा लग्नेश से युक्त हो, दशमेश से दृष्ट हो।।६२।। तो राजा का आश्रय, महान् कीर्ति, विदेश यात्रा होती है। देशाधिपति का संयोग होता है तथा हाथी, घोड़ा, आदि आदि ऐश्वर्य होता है।।६३।। मनोरथ सिद्ध होते हैं, पुत्र का सुख प्राप्त होता है। राहु से सूर्य ६।८।१२ में नीच राशिगत हो तो।।६४।। ज्वर, अतिसार रोग, कलह, राजद्वेष, यात्रा, शत्रुवृद्धि, सजा, चोर तथा अग्नि से हानि होती है।।६५।। राहु से सूर्य केन्द्र, त्रिकोण में या तीसरे तथा लाभस्थान में हो तो विदेश में राजा से सन्मान, कल्याण तथा शुभ होता है।।६६।। दूसरे सातवें का स्वामी हो तो महारोग होता है। सूर्य की यथायोग्य शान्ति करने से आरोग्यता प्राप्त होती है।।६७।।

अथ चंद्रभुक्तिमासाः १८ तत्फलम्

राहोरंतर्गते चंद्रे स्वक्षेत्रे स्वोच्चगेऽपि वा ।। केंद्रत्रिकोणलाभे वा मित्रर्क्षे शुभसंयुते ।।६८।। राजत्वं राजपूज्यत्वं धनार्थं धनलाभकृत् ।। आरोग्यभूषणं चैव मित्रस्त्रीपुत्रसंपदः ।।६९।। पूर्णचंद्रे पूर्णफलं राजप्रीत्या शुभावहम् ।। अश्ववाहनलाभः स्याद्गृहक्षेत्रादि वृद्धिकृत् ।।७०।। दायेशात्सुखभाग्यस्थे केन्द्रे वा लाभगेऽपि वा ।। लक्ष्मीकटाक्षचिह्नानि गृहे कल्याणसम्भवम् ।।७१।। यद्यत्कार्यार्थसिद्धिः स्याद्धनधान्यसुखावहम् ।। सत्कीर्तिलाभसन्मानं देव्याराधनमाचरेत् ।।७२।। दायेशात्षष्ठरंध्रस्थे व्यये वा बलसंयुते ।। पिशाचक्षुद्रव्याघ्रादिगृहक्षेत्रार्थनाशनम् ।।७३।। मार्गे चौरभयं चैव व्रणाधिक्यं महोदरम् ।। द्वितीयद्यूननाथे तु अपमृत्युस्तदा भवेत् ।।७४।। श्वेतां गां महिषीं दद्याद्दानमारोग्यमाहरेत् ।।७५।।

राहुदशा में चन्द्रातर १८ मास फल

राहु की दशा में चन्द्रमा का अन्तर हो। चन्द्रमा केन्द्र या त्रिकोण तथा लाभस्थान में उच्चराशि का या स्वगृही, मित्रगृही अथवा शुभग्रहयुक्त हो तो।।६८।। राजा के समान या राजपूज्य तथा धन लाभकारी होता है। आरोग्यता तथा आभूषण की प्राप्ति, मित्र, स्त्री, पुत्र, सम्पत्ति प्राप्त होती है।।६९।। चन्द्रमा पूर्ण हो तो पूर्णसुख तथा राजा की कृपा से शुभ होता है। घोड़े की सवारी तथा मकान, भूमि की वृद्धि होती है।।७०।। राहु से चन्द्रमा ४।९ में केन्द्र में या लाभ में हो तो घर में लक्ष्मी का वास होता है तथा सुख शान्ति रहती है।।७१।। मनोरथ सिद्ध होते हैं। धनधान्य का सुख होता है। सत्कीर्ति लाभ, सन्मान तथा देवी या देवता का आराधन होता है।।७२।। राहुसे चन्द्रमा ६।८।१२ में बलयुक्त हो तो पिशाच आदि क्षुद्रव्याघ्रादि तथा गृह,

भूमि, धन की हानि होती है।।७३।। मार्ग में चोरी तथा फोड़ा-फुन्सी एवं उदरवृद्धि होती है। द्वितीय सप्तमाधीश हो तो अपमृत्यु होती है।।७४।। श्वेत गौ का दान करने से आरोग्यता प्राप्त होती है।।७५।।

अथ कुजभुक्तिमासाः १२ दिना० १९ तत्फलम्

राहोरंतर्गते भौमे लग्नाल्लाभत्रिकोणगे ।। केंद्रे वा शुभसंयुक्ते स्वोच्चे स्वक्षेत्रगेपि वा ।।७६।।
नष्टराज्यधनप्राप्तिर्गृहक्षेत्राभिवृद्धिकृत् ।। इष्टदेवप्रसादेन संतानसुखभोजनम् ।।७७।। क्षिप्रभो-
ज्यान्महत्सौख्यं भूषणाश्वांबरादिकृत् ।। दायेशात्केंद्रकोणे वा दुश्चिक्ये लाभगेऽपि वा ।।७८।।
रक्तवस्त्रादिलाभः स्यात्प्रयाणं राजदर्शनम् ।। पुत्रवर्गेषु कल्याणं स्वप्रभोश्च महत्सुखम् ।।७९।।
सेनापत्यं महोत्साहं भ्रातृवर्गधनागमम् ।। दायेशाद्रंध्ररिःफे वा षष्ठे पापसमन्विते ।।८०।।
पुत्रदारादिहानिश्च सोदराणां च पीडनम् ।। स्थानभ्रंशं बंधुवर्गदारपुत्रविरोधनम् ।।८१।।
चौराहिव्रणभीतिश्च सोदराणां च पीडनम् ।। आदौ क्लेशकरं चैव मध्यांते सौख्यमाप्नुयात् ।।८२।।
द्वितीयद्यूननाथे तु देहालस्यं महद्भयम् ।। अनड्वाहं च गां दद्यादारोग्यं च भविष्यति ।।८३।।

इति श्रीबृहत्पाराशरहोराशास्त्रेपूर्वखण्डे विंशोत्तर्यां राहोरंतर्दशाफलकथनं नाम षट्त्रिंशोऽध्यायः ।।३६।।

राहुदशा में भौमान्तर मास १२ दिन १८ फल

राहु की महादशा में मंगल का अन्तर हो और मंगल लग्न से केन्द्र, त्रिकोण में शुभग्रह युक्त उच्च का या स्वगृही हो।।७६।। तो नष्टराज्य तथा धनप्राप्ति हो। मकान, भूमि की वृद्धि हो। इष्टदेव की कृपा से पुत्र सन्तान का सुख तथा सुन्दर भोजन हो।।७७।। भोग सामग्री से महान् सुख, भूषण, घोड़ा आदि की सवारी हो। राहु से मंगल केन्द्र, त्रिकोण, लाभ तथा तृतीयभाव में हो।।७८।। तो लाल वस्त्र से लाभ हो, यात्रा तथा राजदर्शन एवं पुत्रवर्ग में कल्याण तथा अपने स्वामी से महान् सुख होता है।।७९।। सेनापतित्व, महान् उत्साह हो, भ्रातृवर्ग से धनप्राप्ति हो। राहु से मंगल ६।८।१२ में पापग्रह युक्त हो।।८०।। तो स्त्री पुत्र की हानि, भ्राता से पीड़ा, स्थानहानि तथा बंधुवर्ग, स्त्रीपुत्र से विरोध होता है।।८१।। चोर, सर्प, फोड़ा-फुन्सी का भय, भ्राताओं को पीड़ा होती है। अन्तर के आदि में क्लेश तथा मध्य और अन्त में सुख होता है।।८२।। द्वितीय सप्तम का स्वामी होने से आलस्य तथा भय होता है। बैल का दान करने से आरोग्यता होती है।।८३।।

इति श्री बृ० पा० हो० शा० पू० भावप्रका० विंशोत्तरीदशायां राहोरन्तर्दशा कथनं नाम षट्त्रिंशोऽध्यायः ।।३६।।

अथ गुरुदशायां गुरुभुक्तिमासाः २५ दिना० १८ तत्फलम्

स्वोच्चे स्वक्षेत्रगे जीवे लग्नात्केंद्रत्रिकोणगे ।। अनेकराजाधीशश्च संपन्नो राजपूजितः ।।१।।
गोमहिष्यादिलाभश्च वस्त्रवाहनभूषणम् ।। नूतनस्थाननिर्माणं हर्म्यप्राकारसंयुतम् ।।२।।
गजांतैश्वर्यसंपत्तिभाग्यकर्माणि संयुते ।। ब्राह्मणप्रभुसन्मानं समानप्रभुदर्शनम् ।।३।। स्वप्रभोः
स्वफलाधिक्यं दारपुत्रादिलाभकृत् ।। नीचांशे नीचराशिस्थे षष्ठाष्टव्ययराशिगे ।।४।।

नीचसंगं महादुःखं दायादजनविग्रहम् ।। कलहं न विचारोस्य स्वप्रभुष्वपमृत्युकृत् ।।५।। पुत्रदारवियोगं च धनधान्यार्थहानिकृत् ।। सप्तमाधिपदोषेण देहबाधा भविष्यति ।।६।। तद्दोषपरिहारार्थं शिवसाहस्रकं जपेत् ।। रुद्रजाप्यं च गोदानं कुर्यादिष्टं समाप्नुयात् ।।७।।

गुरुमहादशा में गुरु का अन्तर मा० २५ दि० १८ फल

गुरुमहादशा में गुरु का ही अन्तर हो और गुरु लग्न से केन्द्र, त्रिकोण में, उच्चराशि में, स्वराशि में हो तो अनेक राजाओं का राजा, ऐश्वर्यवान् राजपूज्य होता है।।१।। गौ, भैंस आदि का लाभ, वस्त्र, वाहन, भूषण का लाभ, नये महल तथा अन्य स्थानों का निर्माण होता है।।२।। हाथी, घोड़े रहें, इतना ऐश्वर्य, महान्, सम्पत्ति-सम्पन्न होता है। ब्राह्मण, साधु का सन्मान, राजाओं से मित्रता होती है।।३।। अपने स्वामी से अधिक फल होता है। स्त्री, पुत्र का लाभ होता है। बृहस्पति यदि नीचग्रह के साथ हो, नीच नवमांश में हो, ६।८।१२ राशि में हो।।४।। तो नीच जाति के मनुष्यों से संग, महान् दुःख, परिवार में विग्रह तथा कलह और इतने नीच विचार हो जाते हैं कि अपने स्वामी को मारने में भी नहीं हिचकते।।५।। स्त्री, पुत्र से वियोग, धनधान्य की हानि होती है। गुरु यदि सप्तमेश हो तो देह बाधा होती है।।६।। इसकी शान्ति के लिये 'शिवसहस्रनाम' का पाठ, रुद्र जप तथा गोदान करे तो इच्छित मनोरथ सिद्ध हो।।७।।

अथ शनिभुक्तिमासाः ३० दिना० १२ तत्फलम्

जीवस्यांतर्गते मंदे स्वोच्चे स्वक्षेत्रमित्रगे ।। लग्नात्केंद्रत्रिकोणस्थे लाभे वा बलसंयुते ।।८।। राज्यलांभ महत्सौख्यं वस्त्राभरणसंयुतम् ।। धनधान्यादिलाभं च स्त्रीलाभं बहुसौख्यकृत् ।।९।। वाहनांबरपश्वादिभूलाभं स्थानलाभगम् ।। पुत्रमित्रादिसौख्यं च नरवाहनयोगकृत् ।।१०।। नीलवस्त्रादिलाभश्च नीलाश्वं लभते च सः ।। पश्चिमां दिशमाश्रित्य प्रयाणं राजदर्शनम् ।।११।। अनेकयानलाभं च निर्दिश्य मंदभुक्तिषु ।। लग्नात्षष्ठाष्टमे मंदे व्यये नीचेस्तगेऽप्यरौ ।।१२।। धनधान्यादिनाशश्च ज्वरपीडा मनोरुजम् ।। स्त्रीपुत्रादिषु पीडा वा व्रणात्यादिकमुद्भवेत् ।।१३।। गृहे त्वशुभकार्याणि भृत्यवर्गादि पीडनम् ।। गोमहिष्यादिहानिश्च बंधुद्वेषो भविष्यति ।।१४।। दायेशात्केन्द्रकोणस्थे लाभे वा धनगेऽपि वा ।। भूलाभश्चार्थलाभश्च पुत्रलाभसुखं भवेत् ।।१५।। गोमहिष्यादिलाभश्च शूद्रमूलाद्धनप्रदम् ।। दायेदशाद्रिपुरंध्रस्ते व्यये वा पाप संयुते ।।१६।। धनधान्यादिनाशं च बंधुमित्रविरोधकृत् ।। उद्योगभंगो देहार्तिः स्वजनानां महद्भयम् ।।१७।। द्विसप्तमाधिपे मंदे ह्यपमृत्युर्भविष्यति ।। तद्दोषपरिहारार्थं विष्णुसाहस्रकं जपेत् ।।१८।। कृष्णां गां महिषीं दद्याद्दानेनारोग्यमादिशेत् ।।१९।।

बृहस्पति की दशा में शनि का अन्तर मा० ३० दि० १२ फल

बृहस्पति की दशा में शनि का अन्तर हो, शनि लग्न से केन्द्र, त्रिकोण, लाभ स्थान में हो तथा उच्च का स्वक्षेत्री या मित्र राशि में हो एवं बलवान् हो।।८।। तो राज्य लाभ, महान् सौख्य, वस्त्र आभरण की प्राप्ति, धन धान्य का लाभ, स्त्रीलाभ तथा बहुत सुख होता है।।९।। वाहन, वस्त्र, पशु, भूमि, स्थान, मकान् का लाभ होता है।। पुत्र, मित्र का सुख होता है।। नर

वाहन (पालकी, रिक्सा) का योग होता है।।१०।। नीले रंग के उत्तम वस्त्र की प्राप्ति तथा नीले रंग का घोड़ा प्राप्त होता है।। पश्चिम दिशा की यात्रा तथा राजदर्शन होता है।।११।। अनेक सवारी भी प्राप्त होती है। यदि शनि लग्न से ६।८।१२ स्थान में नीचराशि का अथवा शत्रु राशि में तथा अस्त हो।।१२।। तो धनधान्य का नाश, ज्वर पीड़ा, मन में चिन्ता, स्त्री पुत्र को रोग, फोड़ा, फुन्सी, दर्द आदि की बिमारी होती हैं।।१३।। घर में अशुभ कार्य, नौकरों में बीमारी, गौ आदि की हानि तथा बन्धुओं से द्वेष होता है।।१४।। बृहस्पति से यदि शनि केन्द्र, त्रिकोण, लाभ या धनभाव में हो तो भूमि और धन का लाभ तथा पुत्र का लाभ होता है।।१५।। गौ, भैंस आदि चौपाया का लाभ होता है। किसी शूद्र जाति के पुरुष द्वारा लाभ होता है।। गुरु से शनि ६।८।१२ में पापग्रहयुक्त हो।।१६।। तो धनधान्य का नाश, भाई और मित्र से विरोध, व्यापार भंग, देह में पीड़ा, स्वजनों से महान् भय होता है।।१७।। शनि यदि २।७ का स्वामी हो तो अपमृत्यु होती है। इसकी शान्ति के लिये विष्णुसहस्रनाम का पाठ।।१८।। तथा काली गौ का दान करे।।१९।।

अथ बुधभुक्तिमासाः २७ दिना० ६ तत्फलम्

जीवस्यांतर्गते सौम्ये केन्द्रलाभत्रिकोणगे ।। स्वोच्चे वा स्वर्क्षगे वापि दशाधिपसमन्विते ।।२०।।
अर्थलाभं देहसौख्यं राज्यलाभं महत्सुखम् ।। महाराजप्रसादेन इष्टसिद्धिः सुखावहा ।।२१।।
वाहनांबरपश्वादिगोधनैस्संकुलं गृहम् ।। महीसुतेन संदृष्टे शत्रुवृद्धिः सुखक्षयम् ।।२२।।
व्यवसायात्फलं नेष्टं ज्वरातीसारपीडनम् ।। दायेशाद्भाग्यकोणे वा केंद्रे वा तुंगनायके ।।२३।।
स्वदेशे धनलाभश्च पितृमातृसुखावहम् ।। गजवाजिसमायुक्तो राजमित्रप्रसादकः ।।२४।।

गुरु दशा में बुधान्तर मा० २७ दि० ६ फल

गुरु दशा में बुध का अन्तर हो, बुध लग्न से केन्द्र, त्रिकोण, लाभ में उच्च राशि का या स्वगृही तथा गुरु युक्त हो।।२०।। तो धन लाभ, देह सौख्य, राज्यलाभ, महान् सुख, राजा की कृपा से मनोरथ पूर्ण होता है।।२१।। सवारी, गौ आदि पशु होते हैं। मंगल की दृष्टि हो तो शत्रु वृद्धि तथा सुख हानि होती है।।२२।। व्यापार में धन हानि ज्वर, अतिसार की बीमारी होती है। गुरु से बुध केंद्र, त्रिकोण तथा भाग्य स्थान में हो।।२३।। तो अपने देश में ही धन लाभ, माता पिता का सुख, हाथी घोड़ा युक्त सवारी, राजा की मित्रता प्राप्त होती है।।२४।।

दायेशात्षष्ठरंध्रस्थे व्यये वा पापसंयुते ।। शुभदृष्टिविहीनश्चेद्धनधान्यपरिच्युतिः ।।२५।।
विदेशगमनं चैव मार्गे चौरभयं तथा ।। व्रणदाहाक्षिरोगश्च नानादेशपरिच्युतम् ।।२६।।
लग्नात्षष्ठाष्टरिःफे वा व्यये वा पापसंयुते ।। अकस्मात्कलहश्चैव गृहे निष्ठुरभाषणम् ।।२७।।
चतुष्पाज्जीवहानिश्च व्यवहारस्तथैव च ।। अपमृत्युभयं चैव शत्रूणां कलहो भवेत् ।।२८।।
शुभदृष्टौ शुभैर्युक्ते दारसौख्यं धनागमम् ।। आदौ शुभं देहसौख्यं वाहनाम्बरलाभगम् ।।२९।।
अंते तु धनहानिश्च स्वात्मसौख्यं च जायते ।। द्वितीयद्यूननाथे वा ह्यपमृत्युर्भविष्यति ।।३०।।
तद्दोषपरिहारार्थं विष्णुसहस्रकं जपेत् ।। बुधप्रीतिकरं चैव दानं शांतिं च कारयेत् ।।
आयुर्वृद्धिकरं चैव सर्वसौभाग्यसंपदम् ।।३१।।

गुरु से बुध ६।८।१२ में पापयुक्त शुभ दृष्टि रहित हो तो धनधान्य की हानि होती है।।२५।। विदेश यात्रा, मार्ग में चोरी, घान, अग्नि से भय, आंख में रोग, अनेक देशों में परिभ्रमण होता है।।२६।। बुध यदि लग्न से ६।८।१२ में पापग्रह युक्त हो तो अकस्मात् कलह तथा रोषपूर्ण व्यवहार होता है।।२७।। चौपाया जीव की हानि, व्यापार में हानि, अपमृत्यु का भय, शत्रु से कलह होती है।।२८।। यदि बुध शुभग्रह से युक्त और दृष्ट भी हो तो दशा के आरंभ में स्त्री को सुख, धनलाभ, आरोग्यता, वाहन आदि का लाभ होता है।।२९।। दशा के अन्त में धन हानि होती है। यदि बुध २।७ का स्वामी हो तो अपमृत्यु होती है। इसकी शान्ति के लिये 'विष्णु सहस्रनाम' का जप तथा दान करे तो आयु की वृद्धि तथा सुख-सम्पत्ति प्राप्त होती है।।३०।।३१।।

अथ केतुभुक्तिमासाः ११ दिना० ६ तत्फलम्

जीवस्यांतर्गते कैतौ शुभग्रहसमन्विते ।। अन्यसौख्यधनावाप्तिः कुत्सितान्नस्य भोजनम् ।।३२।।
परान्नं चैव श्राद्धान्नं पापमूलाद्धनानि च ।। दायेशाद्रिपुरंध्रस्ते व्यये वा पापसंयुते ।।३३।।
राजकोपं धनच्छेदं बंधनं रोगपीडनम् ।। बलहानिः पितृद्वेषो भ्रातृद्वेषो मनोरुजः ।।३४।।
दायेशात्सुतभाग्यस्थे वाहने कर्मगेऽपि वा।। नरवांहनयोगश्च गजाश्वांबरसंकुलम् ।।३५।।
महाराजप्रसादेन इष्टकार्यार्थलाभकृत् ।। व्यवसायात्फलाधिक्यं गोमहिष्यादिलाभकृत् ।।३६।।
यवनप्रभुमूलाद्वा वस्त्रभूषादिलाभकृत् ।। द्वितीयद्यूननाथे तु देहबाधा भविष्यति ।।३७।।
छागदानं प्रकुर्वीत मृत्युंजयजपं चरेत् ।। सर्वदोषोपशमनीं शांतिं कुर्याद्विधानतः ।।३८।।

गुरुदशा में केतु का अन्तर मा० ११ दि० ६ फल

गुरुदशा में केतु का अन्तर हो और केतु शुभग्रहयुक्त हो तो अन्य व्यक्ति के साहाय्य से सुख और धन की प्राप्ति होती है तथा निकृष्टभोजन प्राप्त होता है।।३२।। धर्म से प्राप्त अथवा श्राद्धीय-भोजन प्राप्त होता है। पापदोष से धन हानि होती है। गुरु से केतु ६।८।१२ में पापयुक्त हो तो।।३३।। राजकोप, धनहानि, बंधन, रोग तथा पीड़ा, बलहानि, पिता तथा भाई से द्वेष, मन में अशान्ति होती है।।३४।। गुरु से केतु ५।९।४।१० स्थान में हो तो हाथी, घोड़े, पालकी (मोटर) युक्त होता है।।३५।। राज साहाय्य से इच्छित लाभ, व्यापार से अधिक लाभ, गौ भैंस आदि का लाभ।।३६।। यवन जाति के अधिकारी द्वारा लाभ, वस्त्रभूषण आदि का लाभ होता है। २।७ का स्वामी हो तो देह बाधा होती है।।३७।। शान्ति के लिए छाग (वकरा) का दान, मृत्युञ्जय मन्त्र जप करे और सर्वदोष नाशक शान्ति करे।।३८।।

अथ शुक्रभुक्तिमासाः ३० दिनानि० तत्फलम्

जीवस्यांतर्गते शुक्रे भाग्यकेन्द्रेशसंयुते ।। लाभे वा सुतराशिस्थे स्वक्षेत्रे शुभसंयुते ।।३९।। नरवाहनयोगश्च गजाश्वांबरसंयुते ।। महाराजप्रसादेन देशाधिक्यं महत्सुखम् ।। नीलांबराणि शस्त्राणि लाभश्चैव भविष्यति ।।४०।। पूर्वस्यां दिशि आश्रित्य प्रयाणं धनलाभगम् ।। कल्याणं च महाप्रीतिः पितृमातृसुखावहा।।४१।। देवतागुरुभक्तिश्च अन्नदानं महत्तथा ।। तडागगोपुरादीनि कृत्वा पुण्यानि भूरिशः ।।४२।। षष्ठाष्टमव्यये नीचे दायेशाद्वा तथैव च ।।

कलहो बंधुवैषम्यं दारपुत्रादिपीडनम् ॥४३॥ मंदारराहुसंयुक्ते कलहो राजविग्रहम् ॥ स्त्रीमूलात्कलहं चैव श्वशुरात्कलहं तथा ॥४४॥ सोदरेण विवादः स्याद्धनधान्यपरिच्युतिः ॥ दायेशात्केंद्रराशिस्थे धने वा भाग्यगेऽपि वा ॥४५॥ धनधान्यादिलाभश्च स्त्रीलाभं राजदर्शनम् ॥४६॥

गुरुदशा में शुक्र का अन्तर मास ३० दि. ० फल

गुरुमहादशा में शुक्र का अन्तर हो, शुक्र भाग्येश तथा केन्द्रेश से युक्त हो, लाभभाव में या पञ्चमभाव में हो तथा स्वगृही, शुभग्रह युक्त हो तो॥३९॥ नरवाहन (पालकी या रिक्सा) का योग तथा हाथी, घोड़ा, वस्त्र, भूषण की प्राप्ति होती है। राजकृपा से अधिकार भूमि महान् सुख, नीलवर्ण पोशाक, तथा हथियार प्राप्त होते हैं॥४०॥ पूर्वदिशा में यात्रा, धनलाभ, कल्याण तथा समाज में प्रेम एवं मातापिता को सुख होता है॥४१॥ देवता, गुरु में भक्ति तथा अन्नदान, तालाब, महल, मन्दिर आदि का पुण्य प्राप्त होता है॥४२॥ बृहस्पति से शुक्र ६।८।१२ में नीच राशि का हो अथवा लग्न से हो तो कलह, बन्धुओं में वैमनस्य, स्त्री पुत्र को पीड़ा होती है॥४३॥ मंगल, शनि राहु युक्त हो तो घर में कलह तथा राजवर्ग से विग्रह होता है। विशेष करके स्त्री के कारण कलह और श्वशुर से भी कलह होता है॥४४॥ भाई से विवाद, धन सम्पत्ति की हानि होती है। यदि शुक्र, गुरु से केन्द्र, धनस्थान; भाग्यस्थान में हो॥४५॥ तो धन सम्पत्ति का लाभ, स्त्री लाभ तथा राजदर्शन होता है॥४६॥

वाहनं पुत्रलाभं च पशुवृद्धिमहत्सुखम् ॥ गीतवाद्यप्रसंगादिविद्वज्जनसमागमम् ॥४७॥ दिव्यान्नं भोजनं सौख्यं स्वबंधुजनपोषकम् ॥ द्विसप्तमाधिपे शुक्रे तद्दशायां युतेक्षिते ॥४८॥ अपमृत्युभयं तस्य स्त्रीमूलादौषधादिभिः ॥ तस्य रोगस्य शांत्यर्थं शांतिकर्म समाचरेत् ॥४९॥ श्वेतां गां महिषीं दद्यादायुरारोग्यवृद्धिकृत् ॥५०॥

सवारी, पुत्र लाभ, पशु वृद्धि, महान् सुख होता है। कवि, गायक, वादक, पण्डित गोष्ठी एवं मित्र गोष्ठी होती रहती है॥४७॥ उत्तम भोजन सुख, परिवार सुख होता है। शुक्र २।७ का स्वामी हो, पापयुक्त तथा दृष्ट हो॥४८॥ अपमृत्यु का भय और यह अपमृत्यु भी किसी स्त्री द्वारा औषधि में विष देने से होती है। इसकी शान्ति के लिये ग्रह शान्ति करना चाहिए तथा सफेद गौ का दान करे तो आयु वृद्धि और आरोग्यता होती है॥४९॥५०॥

अथ रविभुक्तिमासाः ९ दिना० १८ तत्फलम्

जीवस्यांतर्गते सूर्ये स्वोच्चे स्वक्षेत्रगेपि वा ॥ केन्द्रेवाथ त्रिकोणे च दुश्चिक्ये लाभगेपि वा ॥५१॥ भाग्ये वा बलसंयुक्ते दायेशाद्वा तथैव च ॥ तत्काले धनलाभः स्याद्राजसन्मानवैभवम् ॥५२॥ वाहनांबरपश्वादिभूषणं पुत्रसंभवम् ॥ मित्रप्रभुवशादिष्टं सर्वकार्ये शुभावहम् ॥५३॥ षष्ठाष्टमव्यये सूर्ये दायेशाद्वा तथैव च ॥शिरोरोगादिपीड़ा च ज्वरपीडा तथैव च ॥५४॥ सत्कर्मणि विहीनत्वं पापकर्म तथैव च ॥ सर्वत्रजनविद्वेषो ह्यात्मबंधुवियोगकृत् ॥५५॥ अकस्मात्कलहं चैव जीवस्यांतर्गते रवौ ॥ द्वितीयद्यूननाथे तु देहपीडा भविष्यति ॥५६॥

तद्दोषपरिहारार्थमादित्यहृदयं जपेत् ।। सर्वपीडोपशमनं सूर्यप्रीतिं च कारयेत् ।।५७।।

गुरु दशा में सूर्य का अन्तर मा० ९ दि. १८ फल

बृहस्पति की दशा में सूर्य का अन्तर हो, सूर्य लग्न से केन्द्र या त्रिकोण में, तीसरे या लाभ में, उच्च का या स्वगृही हो अथवा बलवान् होकर भाग्य स्थान में हो अथवा पूर्वोक्त प्रकार से बृहस्पति से ऐसा योग हो तो इस अन्तर में धन का लाभ, ऐश्वर्य, राज सम्मान होता है।।५१।।५२।। सवारी, गौ आदि पशु, सम्पत्ति तथा पुत्र होता है। किसी मित्र के कारण उन्नति, मनोरथ पूर्ति तथा समस्त कार्य सिद्ध होते हैं।।५३।। सूर्य लग्न से या बृहस्पति से ६।८।१२ में हो तो सिर दर्द, ज्वर पीड़ा होती है।।५४।। धार्मिक कार्य की हानि, पापकर्म की वृद्धि, समाज विरोध, परिवार में कलह होता है। तथा अकस्मात् विशेष कलहं होता है।।५५।। सूर्य यदि २।७ का स्वामी हो तो देह पीड़ा होती है।।५६।। इसकी शान्ति के लिये 'आदित्य हृदय' का पाठ तथा हवनादि करे।।५७।।

अथ चंद्रभुक्तिमासाः १६ दिनानि० तत्फलम्

जीवस्यांतर्गते चंद्रे केंद्रे लाभत्रिकोणगे ।। स्वोच्चे वा स्वर्क्षराशिस्थे पूर्णचंद्रबलैर्युते ।।५८।।
दायेशाच्छुभराशिस्थे राजसन्मानवैभवम् ।। दारपुत्रादिसौख्यं च क्षीराणां भोजनं तथा ।।५९।।
सत्कर्म च तथा कीर्तिः पुत्रपौत्रादिवृद्धिदम् ।। महाराजप्रसादेन सर्वसौख्यं धनागमम् ।।६०।।
अनेकजनसौख्यं च दानधर्मादिसंग्रहः ।। षष्ठाष्टमव्यये चंद्रे त्रिकोणे पापसंयुते ।।६१।।
दायेशात्षष्ठरंध्रे वा व्यये वा बलवर्जिते ।। मानार्थबंधुहानिश्च विदेश परिविच्युतिः ।।६२।।
नृपचौरादिपीडा च दायादिजनविड्वरम् ।। मातुलादिवियोगश्च मातृपीडा तथैव च ।।६३।।
द्वितीयषष्ठयोरीशे देहपीडा भविष्यति ।। तद्दोषपरिहारार्थं दुर्गापाठं च कारयेत्।।६४।।

चन्द्रमा का अन्तर मा० १६ फल

गुरु महादशा में चन्द्रमा का अन्तर हो, चन्द्रमा लग्न से या बृहस्पति से केन्द्र, त्रिकोण, लाभ स्थान में हो, स्वगृही या उच्च का अथवा शुभ राशि में हो।।५८।। तो राजा के समान वैभव, स्त्रीपुत्र का सुख, प्रतिदिन दूध का भोजन प्राप्त होता है।।५९।। सत्कर्म तथा कीर्ति, पुत्र पौत्र की वृद्धि, राजा की कृपा से धन लाभ और सर्वसुख होता है।।६०।। दान आदिक धर्म के कार्य होते हैं, जिससे समाज का कल्याण होता है। यदि चन्द्रमा लग्न से ६।८।१२ में या त्रिकोण में पापग्रह युक्त हो।।६१।। अथवा बृहस्पति से ६।८।१२ में बलहीन हो तो प्रतिष्ठा, धन और बन्धु की हानि होती है। विदेश यात्रा होती है।।६२।। राज, चौर से पीड़ा होती है। परिवार में विग्रह, मामा पक्ष का वियोग तथा माता को पीड़ा होती है।।६३।। चन्द्रमा यदि २।७ का स्वामी हो तो देह, पीड़ा होती है। इसकी शान्ति के लिये दुर्गा पाठ करना चाहिए।।६४।।

अथ कुजभुक्तिमासाः ११ दिनानि ६ तत्फलम्

जीवस्यांतर्गते भौमे लग्नात्केंद्रत्रिकोणगे ।। स्वोच्चे वा स्वर्क्षगे वापि तुङ्गांशे स्वांशगेऽपिवा

॥६५॥ विद्याविवाहकार्याणि ग्राम भूम्यादिलाभकृत् ॥ जनसामर्थ्यमाप्नोति सर्वकार्यार्थसिद्धिदम् ॥६६॥ दायेशात्केन्द्रलाभस्थे लाभे वा धनगेपि वा ॥ शुभयुक्ते शुभैर्दृष्टे धनधान्यादिसंपदम् ॥६७॥ मिष्टान्नदानविभवं राजप्रीतिकरं शुभम् ॥ स्त्रीसौख्यं च सुतावाप्तिः पुण्यतीर्थफलप्रदम् ॥ ६८॥ दायेशात्षष्ठरंध्रे वा व्यये वा नीचगेपि वा ॥ पापयुतेक्षिते वापि धान्यार्थगृहनाशनम् ॥६९॥ नानारोगभयं दुःखं नेत्ररोगादिसंभवम् ॥ पूर्वार्द्धे क्लेशमधिकम-परार्द्धे महत्सुखम् ॥७०॥ द्वितीयद्यूननाथे तु देहजाड्यं मनोरुजम् ॥ अनड्वाहं प्रकुर्वीत सर्वसंपत्प्रदायकम् ॥७१॥

मंगल का अन्तर मा० ११ दि० ६ फल

बृहस्पति की दशा में मंगल का अन्तर हो, मंगल लग्न से केन्द्र, त्रिकोण में उच्च राशि का, स्वगृही या परमोच्च हो अथवा अपने नवांश में हो।।६५।। तो विद्या प्राप्ति, विवाह कार्य, ग्राम भूमि का लाभ तथा जनबल प्राप्त होता है जिससे सब कार्य सिद्ध होते हैं।।६६।। बृहस्पति से केन्द्र तथा लाभ स्थान में, धन स्थान में, शुभग्रह युक्त या दृष्ट हो तो धन-सम्पत्ति प्राप्त होती है।।६७।। मिष्टान्न, दान, वैभव, राजप्रीति, स्त्री सौख्य, पुत्र प्राप्ति तथा तीर्थयात्रा होती है।।६८।। बृहस्पति से मंगल ६।८।१२ स्थान में नीच राशि गत हो, पापयुक्त या दृष्ट हो तो धन सम्पत्ति और मकान का नाश होता है।।६९।। अनेक रोग से भय, दुःख, नेत्र रोग भी संभव है। अन्तर के पूर्वार्ध में अधिक क्लेश हो। उत्तरार्ध में सुख हो।।७०।। मंगल यदि २।७ का स्वामी हो तो वात व्याधि, क्लेश होता है। बैल का दान करने से सुख सम्पत्ति होती है।।७१।।

अथ राहुभुक्तिमासाः २८ दिनानि २४ तत्फलम्

जीवस्यांतर्गते राहौ स्वोच्चे वा केंद्रगेऽपि वा ॥ मूलत्रिकोणभाग्ये च केंद्राधिपसमन्विते ॥७२॥ शुभयुक्तेक्षिते वापि योगप्रीतिं समादिशेत् ॥ भुक्त्यादौ शरमासांश्च धनधान्यपरिश्रमम् ॥७३॥ देशग्रामाधिकारं च यवनप्रभुदर्शनम् ॥ गृहे कल्याणसंपत्तिर्बहुसेनाधिपत्यताम् ॥७४॥ दूरयात्राधिगमनं पुण्यधर्मादिसंग्रहः ॥ सेतुस्नानफलावाप्तिरिष्टसिद्धिसुखावहम् ॥७५॥ दायेशात्षष्ठरंध्रे वा व्यये वा पापसंयुते ॥ चौराहिव्रणभीतिश्च राजवैषम्यमेव च ॥७६॥ गृहे कर्मकलापेन व्याकुले भवति ध्रुवम् ॥ सोदरेण विरोधः स्याद्दायादिजनविग्रहम् ॥७७॥ गृहे त्वशुभकार्याणि दुःस्वप्नादिभयं ध्रुवम् ॥ अकस्मात्कलहश्चैव क्षुद्रशून्यादिरोगकृत् ॥७८॥ द्विसप्तमस्थिते राहौ देहबाधां विनिर्दिशेत् ॥ तद्दोषपरिहारार्थं मृत्युंजयजपं चरेत् ॥७९॥ छागदानं प्रकुर्वीत सर्वसौख्यादिमांदिशेत् ॥८०॥

इति श्रीबृहत्पाराशरहोराशास्त्रे पूर्वखंडे विंशोत्तर्य्यां गुरोरंतर्दशाफलकथनं नाम सप्तत्रिंशोध्यायः ॥३७॥

राहु का अन्तर मा० २८ दि. २४ फल

बृहस्पति की दशा में राहु का अन्तर हो, राहु केन्द्र स्थान में उच्च राशि का तथा भाग्य स्थान में मूल त्रिकोणी हो, केन्द्रेश से युक्त हो।।७२।। शुभ ग्रह युक्त या दृष्ट हो तो शुभ योग

समझना। अन्तर के आरम्भ के ६ महीने में धन सम्पत्ति प्राप्त होती है।।७३।। नगर या देश में अधिकार प्राप्ति, यवन जातीय स्वामी का दर्शन, घर में सुख सम्पत्ति अथवा सेनापति होता है।।७४।। दूर देश की यात्रा, पुण्य धर्म के कार्य, रामेश्वर की यात्रा तथा मनोरथ सिद्धि होती है।।७५।। बृहस्पति से मंगल ६।८।१२ में पापयुक्त हो तो सर्प, चोर, आदि से आघात का भय, राज से विषमता।।७६।। घर के झंझट से व्याकुलता, सहोदर भाई से विरोध, परिवार में विग्रह होता है।।७७।। घर में अशुभ कार्य, अकस्मात् कलह, दुःस्वप्न, फोड़ा-फुन्सी अथवा शून्य रोग होता है।।७८।। राहु यदि २।७ स्थान में हो तो देह बाधा होती है। इसकी शान्ति के लिये मृत्युञ्जय जप कराये।।७९।। तथा छाग (बकरा) का दान करे तो सर्वप्रकार सुख होता है।।८०।।

इति श्री बृ० पा० हो० शा० पू० भावप्रका० विंशोत्तर्यां गुरोरन्तर्दशा फलकथनं नाम सप्तत्रिंशोऽध्यायः ।।३७।।

अथ शनिदशायां शनिभुक्तिमासाः ३६ दिनानि० तत्फलम्

मूलत्रिकोणस्वर्क्षे वा तुलायामुच्चगेऽपि वा ।। केंद्रत्रिकोणलाभे वा राजयोगादिसंयुते ।।१।। राज्यलाभं महत्सौख्यं दारपुत्रादिवर्धनम् ।। वाहनत्रयसंयुक्तं गजाश्वांबरसंकुलम् ।।२।। महाराजप्रसादेन अश्वदौत्यादिलाभकृत् ।। चतुष्पाज्जीवलाभः स्याद्ग्रामभूम्यादिलाभकृत् ।।३।। षष्ठाष्टमव्यये मंदे नीचे वा पापसंयुते ।। तद्भुक्त्यादौ राजभीतिर्विषशस्त्रादिपीडनम् ।।४।। रक्तस्रावं गुल्मरोगमतिसारादिपीडनम् ।। मध्ये चौरादिभीतिश्च देशत्यागं मनोरुजम् ।।५।। अंते शुभकरं चैव ग्रामभूम्यादिलाभकृत् ।। द्वितीयद्यूननाथे तु ह्यपमृत्युर्भविष्यति ।।६।। तद्दोषपरिहारार्थं मृत्युंजयजपं चरेत् ।।७।।

शनिमहादशा में शनि की अन्तर्दशा मास ३६ दि० फल

अन्तर्दशा में शनि जन्म लग्न से केन्द्र, त्रिकोण, लाभ (११) में या तुलाराशि में, परमोच्च में, मूलत्रिकोण में, स्वराशि में एवं योग कारक ग्रहयुक्त हो तो ।।१।। राजा से लाभ या राज्य का लाभ, महान् सुख, स्त्रीपुत्र की वृद्धि, तीन मोटर की सवारी, हाथी घोड़े तक ऐश्वर्य ।।२।। राजानुग्रह से घुड़सवार दूत हो, गौ आदि चौपाया पशु की स्थिति, ग्राम या विपुल भूमिलाभ होता है।।३।। यदि शनि ६।८।१२ स्थान में नीच का हो पापग्रहयुक्त हो तो राज से भय, विष शस्त्र द्वारा पीड़ा।।४।। रक्तस्राव, गुल्मरोग, अतिसार आदि रोग, चोर आदि से भय, स्वदेश का त्याग, मन में अशान्ति हो।।५।। दशा के अन्त में शुभफल हो, ग्राम भूमि का लाभ हो। यदि शनि २।७ का स्वामी हो तो अपमृत्यु होती है।।६।। इसकी शान्ति के लिए महामृत्युञ्जय मन्त्र का जप करना चाहिए।।७।।

अथ बुधभुक्तिमासाः ३२ दिनानि ९ तत्फलम्

**मंदस्यांतर्गते सौम्ये त्रिकोणे केंद्रगेपि वा ।। सन्मानं च यशःकीर्तिर्विद्यालाभं धनागमम् ।।८।।
स्वदेशे सुखमाप्नोति वाहनादिफलैयुर्ते ।। यज्ञादिकर्मसिद्धिश्च राजयोगादिसंभवम् ।।९।।
देहसौख्यं हृदुत्साहं गृहे कल्याणसंभवम्।।सेतुस्नानफलावाप्तिस्तीर्थयात्रादिकर्मणा ।।१०।।
वाणिज्याद्धनलाभश्च पुराणश्रवणादिकम् ।। अन्नदानफलं चैव नित्यंमिष्टान्नभोजनम् ।।११।।
षष्ठाष्टमव्यये सौम्ये नीचे वास्तंगते सति ।। रव्यारफणिसंयुक्ते दायेशाद्वा तथैव च ।।१२।।
नृपाभिषेकमर्थाप्तिर्देशग्रामाधिपत्यता ।। फलमीदृशमादौ तु मध्यांते रोगपीडनम् ।।१३।।
नष्टानि सर्वकार्याणि व्याकुलत्वं महद्भयम् ।। द्वितीयसप्तमाधीशे देहबाधा भविष्यति ।।१४।।
तद्दोषपरिहारार्थं विष्णुसाहस्रकं जपेत् ।। अन्नदानं प्रकुर्वीत सर्वसंपत्प्रदायकम् ।।१५।।**

बुध का अन्तर मास ३२ दिन ९ फल

शनि की महादशा में बुध का अन्तर हो। बुध केन्द्र, त्रिकोण में हो तो सन्मान, यश, विद्यालाभ, धनलाभ।।८।। तथा स्वदेश में सुखप्राप्ति, सवारी आदि का सुख, यज्ञ आदि धर्मकार्य, राजयोग के समान ऐश्वर्य होता है।।९।। देहसौख्य, परिवार में सुख, रामेश्वरजी की यात्रा, तीर्थाटन होता है।।१०।। व्यापार से धनलाभ, पुराण आदि का श्रवण, अन्नदान तथा नित्य उत्तम भोजन।।११।। यदि बुध ६।८।१२ भाव में हो, नीच राशि में, तथा अस्त हो या सूर्य, मंगल, राहुयुक्त हो। ये सब योग लग्न से या शनि से किसी से भी हो।।१२।। तो अन्तर्दशा के आदि में तो राज्याभिषेक में प्राप्ति, देश या नगर में पदाधिकार आदि शुभ फल होकर मध्य में तथा अन्त में रोग पीड़ा (दर्द)।।१३।। सम्पूर्ण कार्य में हानि, व्याकुलता, महान् भय होता है। द्वितीय सप्तम भाव का स्वामी हो तो देह में बीमारी होती है।।१४।। इसकी शान्ति के लिए, 'विष्णुसहस्रनाम' स्तोत्र का पाठ होना चाहिए। तथा अन्नदान करने से सर्वसम्पत्ति प्राप्त होती है।।१५।।

अथ केतुभुक्तिमासाः १३ दिनानि ९ तत्फलम्

**मन्दस्यान्तर्गते केतौ शुभग्रहयुतेक्षिते ।। स्वोच्चे वा शुभराशिस्थे योगकारक संयुते ।।१६।।
लग्नाधिपेन संयुक्ते आदौ सौख्यं धनागमः ।। गंगादि सर्वतीर्थेषु स्थानदैवत दर्शनम्।।१७।।
दायेशात् केन्द्रकोणे वा शुभयोग-समन्विते ।। समर्थो धर्म बुद्धिश्च सौख्यं नृप समागमः ।।१८।।
षष्ठाष्टमव्यये केतौ दायेशाद्वा तथैव च ।। दारिद्र्यं बंधनं भीतिः पुत्रदारादिनाशनम् ।।१९।।
स्थानभ्रंशं महद्भीतिः कुत्सितान्नस्य भोजनम् ।। शीतज्वरातिसारश्च ब्रणचौरादिपीडनम्
।।२०।। पुत्रदार-वियोगश्च संसारे भवति ध्रुवम् ।। स्वप्रभोश्च महाक्लेशः विदेश गमनं तथा
।।२१।। द्वितीयद्यून राशिस्थे अपमृत्युर्भविष्यति ।।२२।। छागदानं प्रकुर्वीत हचपमृत्युभयं
हरेत्।।२३।।**

केतु का अन्तर मास १३ दिन ९ फल

शनि की महादशा में केतु का अन्तर हो तथा केतु स्वोच्चराशि में शुभदृष्टि या शुभयुक्त हो अथवा शुभराशि में योगकारक से युक्त हो।।१६।। लग्नेश से संयुक्त हो तो **प्रथमार्द्धदशामें**

सुख तथा धनलाभ हो। गंगा आदि तीर्थों में स्नान, देवदर्शन हो॥१७॥ शनि से केन्द्र या त्रिकोण स्थान में शुभयोग युक्त हो तो सामर्थ्य की प्राप्ति तथा धर्मबुद्धि हो, सुखवृद्धि तथा राजा से मेल हो॥१८॥ लग्न से या शनि से ६।८।१२ स्थान में केतु हो तो दरिद्रता, बंधन, भय, स्त्री पुत्र का नाश होता है॥१९॥ स्थान हानि, महत् भय, निकृष्ट भोजन, शीतज्वर, अतिसार, घाव, चोर आदि से पीड़ा होती है॥२०॥ स्त्रीपुत्र का वियोग होता है। स्वामी से कष्ट होता है। विदेश यात्रा होती है॥२१॥ यदि केतु द्वितीय तथा सप्तम राशि में हो तो अपमृत्यु होती है॥२२॥ इसकी शान्ति के लिए छाग (बकरा) का दान करना चाहिए। यह दान करने से अपमृत्यु का भय दूर होता है॥२३॥

अथ शुक्रभुक्तिमासाः २६ दिनानि० तत्फलम्

मन्दस्यांतर्गते शुक्रे स्वोच्चे स्वक्षेत्रगेपि वा ॥ केंद्रे वा शुभसंयुक्ते त्रिकोणे लाभगेपि वा ॥२४॥
दारपुत्रधनप्राप्तिर्देहारोग्यं महोत्सवः ॥ गृहे कल्याणसंपत्ती राज्यलाभं महत्सुखम् ॥२५॥
महाराजप्रसादेन हीष्टसिद्धिः सुखावहा ॥ सन्मानः प्रभुसन्मानः प्रियवस्त्रादिलाभकृत् ॥२६॥
द्वीपांतराद्वस्त्रलाभः श्वेताश्वो महिषी तथा ॥ गुरुचारवशाद्भाग्यं सौख्यं च धनसंपदः ॥२७॥
शनिचारान्मनुष्योसौ योगमाप्नोत्यसंशयम् ॥ शत्रुनीचास्तगे शुक्रे षष्ठाष्टव्ययराशिगे ॥२८॥
दारनाशं मनःक्लेशं स्थाननाशं मनोरुजम् ॥ दाराणां स्वजनक्लेशः संतापो जनविग्रहम् ॥२९॥
दायेशाद्भाग्यगेनैव केंद्रे वा लाभसंयुते ॥ राजप्रीतिकरं चैव मनोभीष्टप्रदायकम् ॥३०॥
दानधर्मदयायुक्तस्तीर्थयात्रादिकं फलम् ॥ शास्त्रार्थकाव्यरचनां वेदांतश्रवणादिकम् ॥३१॥
दारपुत्रादिसौख्यं च वाहनच्छत्रलाभकम् ॥ दायेशाद्व्ययगे शुक्रे षष्ठे वा ह्यष्टमेपि वा ॥३२॥
नेत्रपीडा ज्वरभयं स्वकुलाचारवर्जितः ॥ कपोले दन्तशूलादि हृदि गुह्ये च पीडनम् ॥३३॥
जलभीतिर्मनस्तापो वृक्षात्पतनसंभवः ॥ राजद्वारे जनद्वेषः सोदरेण विरोधनम् ॥३४॥
द्वितीयसप्तमाधीशे आत्मक्लेशो भविष्यति ॥ तद्दोषपरिहारार्थं दुर्गादेवीजपं चरेत् ॥३५॥
श्वेतां गां महिषीं दद्यादायुरारोग्यवृद्धिदाम् ॥३६॥

शनिदशा में शुक्रान्तर मास २६ दिन ० फल

शनि की दशा में शुक्र का अन्तर हो। शुक्र लग्न से केन्द्र, त्रिकोण या लाभ में हो। उच्चराशि में हो या स्वगृही और शुभ ग्रहयुक्त हो तो॥२४॥ स्त्री, पुत्र, धन की प्राप्ति हो, देह की आरोग्यता, महोत्सव, घर में सुख सम्पत्ति, राज से लाभ तथा महान् सुख होता है॥२५॥ तथा राजकृपा से सुखदायक इच्छित फल होता है। प्रतिष्ठा तथा स्वामी से घर में आदर, तथा प्रिय वस्त्रादि का लाभ हो॥२६॥ और द्वीपान्तरसे वस्त्र (या वस्त्र व्यापार से) लाभ हो तथा श्वेतरंग का अश्व (घोड़ा) एवं भैंस हो। (गुरुसंचार से भाग्योदय, सुख, धन संपत्ति होती है॥२७॥ शनिसंचार से जातक अवश्य योग प्राप्त करता है॥२७॥

(सूचना-यह दो अर्द्धश्लोक वास्तव में एक ही श्लोक है और यह प्रकरण भी दूसरा ही है। लेखकों के प्रमाद से सम्मिलित हो गया है। इसका तात्पर्य यह है कि आत्मादि कारकों के अंशादि पर से जब गुरु संचार करता है तो उक्त फल तथा शनि संचार करता है तो शनि के लिए कहे हुए दुष्फल होते हैं। यह विषय स्पष्टरूप से देवकेरल आदि ग्रन्थों में देखना चाहिए।)

शुक्र यदि शत्रु राशि में, नीचराशि में अथवा अस्त होकर ६।८।१२ वें स्थान में हो।।२८।। तो स्त्री की मृत्यु मन में क्लेश, स्थानहानि, मन में अशान्ति, स्त्रियों को क्लेश, बन्धुदुःख, संताप, परिवारिक कलह होती है।।२७।। यदि शुक्र शनि से भाग्य, लाभ या केन्द्र में हो तो राजप्रीति हो, इच्छित कार्य सिद्ध होता है।।३०।। दान, धर्म, दया, तीर्थयात्रा आदि फल होता है। शास्त्रविचार, काव्यरचना, वेदान्तश्रवण।।३१।। स्त्री पुत्र का सुख, वाहन (मोटर आदि सवारी) छत्र का लाभ होता है। शनि से शुक्र ६।८।१२ स्थान में हो तो।।३२।। नेत्रपीड़ा, ज्वरभय, कुलाचारहीनता, कपोल या दांत में शूल, हृदय तथा गुह्यदेश में (पेट के नीचे का भाग) पीड़ा होती है।।३३।। जल से भय, मन में सन्ताप तथा वृक्ष से गिरना भी संभव है। राजकीय अधिकारी तथा सहोदर भाई से विरोध होता है।।३४।। द्वितीय सप्तम भाव का स्वामी यदि शुक्र हो तो आत्मक्लेश होता है। इसकी शान्ति के लिए दुर्गादेवी का जप करना चाहिए।।३५।। श्वेत रंग की गाय का दान करने से आयु और आरोग्यता की वृद्धि होती है।।३६।।

अथ रविभुक्तिमासाः ११ दिनानि १२ तत्फलम्

मंदस्यांतर्गते सूर्ये स्वोच्चे स्वक्षेत्रगेपि वा ।। भाग्याधिपेन संयुक्ते केंद्रलाभत्रिकोणगे ।।३७।। शुभदृष्टियुते वापि स्वप्रभोश्च महत्सुखम् ।। गृहे कल्याणसंपत्तिः पुत्रादिसुखवर्द्धनम् ।।३८।। वाहनांबरपश्वादिगोक्षीरसकुलं गृहम् ।। षष्ठाष्टमव्यये सूर्ये दायेशाद्वा तथैव च ।।३९।। हृद्रोगो मानहानिश्च स्थानभ्रंशो मनोरुजा ।। इष्टबंधु वियोगश्च उद्योगस्य विनाशनम् ।।४०।। तापज्वरादिपीडा च व्याकुलत्वं भयं तथा ।। आत्मसंबंधमरणमिष्टबंधुवियोगकृत् ।।४१।। द्वितीयद्यूननाथे तु देहबाधा भविष्यति ।। तद्दोषपरिहारार्थं सूर्यपूजां च कारयेत् ।।४२।।

शनिदशा में सूर्यान्तर मास ११ दिन १२ फल

शनि की महादशा में सूर्य का अन्तर हो। सूर्य उच्चराशि में, स्वगृही, तथा भाग्येशयुक्त हो। केन्द्र, लाभ या त्रिकोण में हो।।३७।। शुभदृष्टियुत हो तो अपने स्वामी से महान् सुख हो। घर में कल्याण, सुख तथा सम्पत्ति हो तथा पुत्र आदि सुख की वृद्धि हो।।३८।। सवारी, सुन्दर वस्त्र, गौ आदि पशुओं से गृह सम्पन्न हो। शनि से सूर्य ६।८।१२ में, अथवा लग्न से ६।८।१२ में हो।।३९।। तो हृदयरोग, मानहानि, स्थानविच्युति, मन में दुःख, इष्टबन्धु का वियोग तथा उद्योग का नाश होता है।।४०।। ज्वर आदि पीड़ा, भय और व्याकुलता, अपने सम्बन्धी का मरण तथा इष्ट बन्धु से वियोग होता है।।४१।। यदि सूर्य २।७ का स्वामी हो तो देहबाधा होती है। इसकी शान्ति के लिए सूर्य की आराधना करनी चाहिए।।४२।।

अथ चंद्रभुक्तिमासाः १९ दिनानि ० तत्फलम्

मंदस्यांतर्गते चंद्रे जीवदृष्टिसमन्विते ।। स्वोच्चे स्वक्षेत्रकेंद्रस्थे त्रिकोणे लाभगेपि वा ।।४३।। पूर्णचंद्रे सौम्ययुक्ते राजप्रीतिसमागमम् ।। महाराजप्रसादेन वाहनांबरभूषणम् ।।४४।। सौभाग्यं सुखवृद्धिं च मृत्यानां परिपालनम् ।। पितृमातुकुले सौख्यं पशुवृद्धिः सुखावहा ।।४५।। क्षीणे वा

पापसंयुक्ते पापदृष्टौ विनीचगे ।। क्रूरांशकगते वापि क्रूरक्षेत्रगतेपि वा ।।४६।। जातकस्य महत्कष्टं राजकोपो धनक्षयः ।। पितृमातृवियोगश्च पुत्रीपुत्रादिरोगकृत् ।।४७।। व्यवसायात्फलं नेष्टं नानामार्गे धनव्ययम् ।। अकाले भोजनं चैवमौषधस्य च भक्षणम् ।।४८।। कलाभिदृष्टचमादौ तु आदौ सौख्यं धनागमम् ।। दायेशात्केंद्रराशिस्थे त्रिकोणे लाभगेपि वा ।।४९।। वाहनांबरपश्वादिभ्रातृवृद्धिः सुखावहा ।। पितृमातृसुखावाप्तिः स्त्रीसौख्यं च धनागमम् ।।५०।। मित्रप्रभुवशादिष्टं सर्वसौख्यं शुभावहम् ।। दायेशात्षष्ठरिष्फे वा रंध्रे वा बलवर्जिते ।।५१।। शयनं रोगमालस्यं स्थानभ्रष्टं सुखावहम् ।। शत्रुवृद्धिविरोधं च इष्टबंधुवियोगकृत् ।।५२।। द्वितीयद्यूननाथे तु देहालस्यो भविष्यति ।। तद्दोषशमनार्थं च तिलहोमादिकं चरेत् ।।५३।। गुडं घृतं च दध्नाक्तं तडुलं च यथाविधि ।। श्वेतां गां महिषीं दद्यादायुरारोग्यवृद्धिकृत् ।।५४।।

शनिदशा में चन्द्रान्तर मास १९ दिन ० फल

शनि की दशा में चन्द्रमा का अन्तर हो। चन्द्रमा लग्न से केन्द्र, त्रिकोण तथा लाभस्थान में गुरुदृष्टियुक्त, स्वोच्च राशि में या स्वगृही तथा गुरुयुक्त या दृष्ट हो।।४३।।। यदि पूर्णचन्द्र सौम्यग्रहयुक्त हो तो राजासे प्रीति तथा मैत्री और आना जाना होता है। और उसकी कृपा से सवारी, वस्त्र, आभूषण।।४४।। सौभाग्य, सुख वृद्धि और आश्रित का पालन, मातृकुल तथा पितृकुल में सौख्य तथा सुखदायक पशुवृद्धि होती है।।४५।। यदि चन्द्रमा क्षीण हो, पापग्रहयुक्त, पापदृष्ट, नीच राशिगत, पावग्रह के नवांश में हो या पापराशि में हो।।४६।। तो जातक को महान् कष्ट, राजकोप और धन का क्षय होता है। माता पिता का वियोग होता है। पुत्र,कन्या को बीमारी होती है।।४७।। व्यापार में हानि तथा अनेक प्रकार से धनव्यय, कुसमय भोजन, औषधसेवन होता रहता है।।४८।। इस नेष्ट योगयुक्त में भी यदि चन्द्रमा एक कलारूप (सुदी द्वितीया का) हो तो अंतर के आदिकाल में सुख और धनलाभ होता है। यदि चन्द्रमा शनि से केन्द्र, त्रिकोण, या लाभस्थान में हो।।४९।। तो सवारी, वस्त्र, पशु आदि की प्राप्ति, भ्राता की वृद्धि, माता पिता का सुख, स्त्री का सुख, धनलाभ।।५०।। मित्र या स्वामी द्वारा इष्टपूर्ति, सर्वसौख्य, शुभ होता है। शनि से चन्द्रमा ६।८।१२ स्थान में।।५१।। हो तो अतिनिद्रा, रोग, आलस्य, स्थानहानि, सुख, शत्रुवृद्धि, विरोध तथा बन्धुवियोग होता है।।५२।। २।७ का स्वामी हो तो आलसी करता है, रोगी होता है। इसकी शान्ति के लिए तिलहोम, गुड़, घी, दही-भात, चावल का दान करे। श्वेत गौ का दान करे तो आरोग्यता प्राप्त होती है।।५४।।

अथ कुजभुक्तिमासाः १३ दिनानि ९ तत्फलम्

मंदस्यांतर्गते भौमे केंद्रलाभत्रिकोणगे ।। तुंगे स्वक्षेत्रगे वापि दशाधिपसमन्विते ।।५५।।
लग्नाधिपेन संयुक्ते आदौ सौख्यं धनागमम् ।। राजप्रीतिकरं सौख्यं वाहनांबरभूषणम् ।।५६।।
सेनाधिक्यं नृपप्रीतिः कृषिगोधान्यसंपदः ।। नूतनस्थाननिर्माणं भ्रातृवर्गेष्टसौख्यकृत् ।।५७।।
नीचे चास्तगते भौमे षष्ठाष्टव्ययराशिगे ।। पापदृष्टियुते वापि धनहानिर्भविष्यति ।।५८।।
चौराहिव्रणशस्त्रादिग्रंथिरोगादिपीडनम् ।। भ्रातृपित्रादिपीडा च दायादजनविग्रहम्।।५९।।
चतुष्पाज्जीवहानिश्च कुत्सितान्नस्य भोजनम् ।। विदेशगमनं चैव नानामार्गे धनव्ययः ।।६०।।
अष्टमद्यूननाथे तु द्वितीयस्थेऽथ वा यदि।। अपमृत्युभयं चैव नानाकष्टपराभवम् ।।६१।।

तद्दोषपरिहारार्थं शांतिहोमं च कारयेत् ।। अनड्वाहं प्रकुर्वीत सर्वारिष्टनिवारणम् ।।६२।।

मंगल का अंतर मा० १३ दि० ९ फल

शनिदशामें मंगल का अन्तर हो। मंगल केन्द्र, लाभ, त्रिकोण में, उच्चराशि में, स्वगृही, तथा शनि से युक्त हो तो।।५५।। और लग्नेश से युक्त हो तो प्रथम सुख और धनप्राप्ति, राजप्रीति, सुख, वाहन, वस्त्र, भूषण की प्राप्ति होती है।।५६।। सेनापतित्व, राजा से प्रीति, कृषि, गौ, सपंत्ति, तथा नूतन स्थान का निर्माण, भ्रातृवर्ग को सुख देनेवाला होता है।।५७।। यदि अस्त हो और ६।८।१२ स्थान में पापदृष्टियुक्त हो तो धनहानि होती है।।५८।। चोर आदि का उपद्रव, शस्त्राघात, ग्रंथिरोग, पीड़ा, तथा भ्राता, पिता आदि को पीड़ा, परिवार में विग्रह होता है।।५९।। गौ आदि पशु की हानि, निकृष्ट भोजन, विदेशयात्रा, विशेष खर्च होता है।।६०।। यदि मंगल ७।८ का स्वामी होकर द्वितीय भाव में स्थित हो तो अपमृत्यु का भय होता है, अनेक कष्ट तथा हार होती है।।६१।। इसकी शान्ति के लिए होम करे, बैल का दान करे तो सर्वथा अरिष्ट का निवारण होता है।।६२।।

अथ राहुभुक्तिमासाः ३४ दिनानि ६ तत्फलम्

मंदस्यांतर्गते राहौ कलहश्च मनोव्यथा ।। देहपीडा मनस्तापः पुत्रद्वेषो मनोरुजः ।।६३।। अर्थव्ययं राजभयं स्वजनादिह्युपद्रवम् ।। विदेशगमनं चैव गृहक्षेत्रादिनाशनम् ।।६४।। लग्नाधिपेन संयुक्ते योगकारकसंयुते ।।स्वोच्चे स्वक्षेत्रगे केंद्रे दायेशाल्लाभराशिगे ।।६५।।आदौ सौख्यं धनावाप्तिं गृह क्षेत्रादिसंपदम् ।। देवब्राह्मणभक्तिं च तीर्थयात्रादिकं लभेत् ।।६६।। चतुष्पाज्जीवलाभः स्याद्गृहे कल्याणवर्द्धनम् ।। मध्ये तु राजभीतिश्च पुत्रमित्रविरोधनम् ।।६७।। मेषादिकन्यकां चैव कुलीरे वृषभे तथा ।। मीनकोदंडसिंहेषु गजांतैश्वर्यमादिशेत् ।।६८।। राजसन्मान-भूषाप्तिं मृदुलांबरसौख्यकृत् ।। द्विसप्तमाधिपैर्युक्ते देहबाधा भविष्यति ।।६९।। मृत्युं जयं प्रकुर्वीत् च्छागदानं च कारयेत् ।। अनड्वाहं प्रकुर्वीत सर्वसंपत्सुखावहम् ।।७०।।

राहु का अन्तर मास ३४ दिन फल

शनिदशा में राहु का अन्तर हो तो (यदि शुभयोग युक्त न हो तो) कलह, मनोव्यथा, देहपीड़ा, सन्ताप, पुत्र से द्वेष, मन में अशान्ति।।६३।। धन का अधिक खर्च, राजभय, स्वजनों से उपद्रव, विदेश यात्रा तथा गृह भूमि का नाश होता है।।६४।। और यदि राहु लग्नेश से युक्त और योगकारक युक्त हो और उच्च राशि में, स्वगृही, केन्द्र या लाभसे (शनि से)।।६५।। हो तो प्रथम धनप्राप्ति, सुख, भूमि, मकान आदि सम्पत्ति, देवब्राह्मणभक्ति तथा तीर्थयात्रा होती है।।६६।। गौ आदि चौपाया की प्राप्ति, घर में सुख शान्ति होती है। मध्य में राजभय, पुत्र मित्र से विरोध होता है।।६७।। यदि राहु, मेष, कन्या, कर्क, वृष, मीन, धन और सिंह में हो तो हाथी होने योग्य ऐश्वर्य होता है।।६८।। राज सन्मान, भूषण प्राप्ति, सुन्दर वस्त्र का सुख होता है। २।७ के स्वामी से युक्त हो तो देहबाधा होती है।।६९।। मृत्युञ्जय मन्त्र जप और छागदान या बैलदान करने से सर्वसम्पत्ति का सुख होता है।।७०।।

अथ गुरुभुक्तिमासाः ३० दिनानि १४ तत्फलम्

मंदस्यांतर्गते जीवे केंद्रे लाभत्रिकोणगे ।।७१।। लग्नाधिपेन संयुक्ते स्वोच्चे स्वक्षेत्रगेपि वा ।।

सर्वकार्यार्थसिद्धिः स्याच्छोभनं भवति ध्रुवम् ।।७२।। महाराजप्रसादेन धनवाहनभूषणम् ।। सन्मानं प्रभुसन्मानं प्रियवस्त्रार्थलाभकृत् ।।७३।। देवतागुरुभक्तिश्च विद्वज्जनसमागमः ।। दारपुत्रादिलाभश्च पुत्रकल्याणवैभवम् ।।७४।। षष्ठाष्टमव्यये जीवे नीचे वा पापसंयुते ।। देहसंबन्धमरणं धनधान्यविनाशनम् ।।७५।। राजद्वेषःस्थानहानिः कार्यहानिर्भविष्यति ।। विदेशगमनं चैव कुष्ठरोगादिसंभवः ।।७६।। दायेशात्केंद्रकोणे वा धने वा लाभगेपि वा ।। विभवं दारसौभाग्यं राजश्रीधनसंपदः ।।७७।। भोजनांबरसौख्यं च दानधर्मादिकं भवेत् ।। ब्रह्मप्रतिष्ठासिद्धिश्च क्रतुकर्मफलप्रदम् ।।७८।। अन्नदानं महाकीर्तिर्वेदांतश्रवणादिकम् ।। दायेशात्षष्ठरंध्रे वा व्यये वा बलवर्जिते ।।७९।। बंधुद्वेषं मनोदुःखं ब्राह्मणं पदविच्युतम् ।। कुभोजनं कर्महानी राजदंडाद्धनव्ययम् ।।८०।। कारागृहप्रवेशं च पुत्रदारादिपीडनम् ।। द्वितीयद्यूननाथे तु देहबाधा मनोरुजम् ।।८१।। आत्मसंबंधमरणं भविष्यति न संशयः ।। तद्दोषपरिहारार्थं शिवसाहस्रकं जपेत् ।।८२।। स्वर्णदानं प्रकुर्वीत ह्यारोग्यं भवति ध्रुवम् ।।८३।।

इति श्रीबृहत्पाराशरहोराशास्त्रे पूर्वखण्डे विंशोत्तरीशन्यंतर्दशाफलकथनं नाम अष्टत्रिंशोऽध्यायः ।।३८।।

शनिदशा में गुरु अंतर मा० ३० दि० १४ फल

शनि की महादशा में गुरु का अन्तर हो, गुरु लग्न से केन्द्र, त्रिकोण, लाभस्थान में हो। लग्नेश युक्त उच्च राशि में स्वगृही हो तो सर्वकार्य सिद्धि, धनलाभ तथा शुभ होता है।।७२।। राजकृपा से धन वाहन, भूषण, सन्मान, स्वामी से मान, इच्छित धन प्राप्त होता है।।७३।। देव गुरु में भक्ति तथा विद्वानों में आदर, स्त्री पुत्रादि का लाभ तथा परिवार में उत्सव होता है।।७४।। यदि गुरु ६।८।१२ स्थान में हो, नीचराशि में पापयुक्त हो तो मृत्यु तथा धनधान्य का नाश होता है।।७५।। राजकोप, स्थान हानि, कार्य हानि होती है, विदेशयात्रा तथा कुष्ठ आदि की बीमारी होती है।।७६।। यदि गुरु शनि से केन्द्र, त्रिकोण, धनभाव, या लाभभाव में हो तो वैभव, स्त्रीसुख राजसमान लक्ष्मी, धन-सम्पत्ति प्राप्त होती है।।७७।। भोजन, वस्त्र का सुख तथा दान धर्म आदि होता है, ब्राह्मणों का सन्मान करने से सिद्धि होती है, यज्ञ का फल होता है।।७८।। अन्नदान, महान् यश, वेदान्तज्ञान श्रवण में प्रवृत्ति होती है। शनि से गुरु ६।८।१२ में बलरहित हो।।७९।। तो बन्धुद्वेष, मन में अशान्ति, ब्राह्मणाचार हानि, पदहानि, कुभोजन, कर्महानि, राजदण्ड से धनहानि।।८०।। कैद, स्त्री-पुत्र को पीड़ा होती है। यदि गुरु २।७ भाव का स्वामी हो तो देहपीड़ा होती है।।८१।। इसकी शान्ति के लिए शिवसहस्रनाम स्तोत्र का पाठ करे।।८२।। सुवर्ण का दान करे तो आरोग्यता प्राप्त होती है।।८३।।

इति श्रीबृहत्पाराशरहोराशास्त्रेपूर्वखंडे भावप्रकाशिकायां विं०दशायां शन्यन्तर्दशा फल कथनं नाम अष्टत्रिंशोऽध्यायः ।।३८।।

अथ बुधदशायांबुधभुक्तिमासाः २२ दिन २७ तत्फलम्

मुक्ताविद्रुमलाभश्च ज्ञानकर्मसुखादिकम् ।। विद्यामहत्त्वं कीर्तिश्च नूतनप्रभुदर्शनम् ।।१।। विभवं दारपुत्रादिपितृमातृसुखावहम् ।। नीचोग्रखेटसंयुक्ते षष्ठाष्टव्ययराशिगे ।।२।। पापयुक्तेऽथवा दृष्टे धनधान्यपशुक्षयम् ।। आत्मबंधुविरोधं च शूलरोगादिसंभवम् ।।३।। राजकार्यकलापेन व्याकुलो भवति ध्रुवम् ।। द्वितीयद्यूननाथे तु दारक्लेशो भविष्यति ।।४।। आत्मसंबंधमरणं वातशूलादिसंभवम् ।। तद्दोषपरिहारार्थं विष्णुसाहस्रकं जपेत् ।।५।।

बुध दशा में बुधान्तर
मास २२ दिन २७ फल

बुध की महादशा में बुध का अन्तर हो तथा शुभग्रह योग युक्त हो तो रत्नों का लाभ, ज्ञान तथा सुख प्राप्ति कर्मसिद्धि, विद्यावृद्धि, कीर्ति तथा नये स्वामी का योग होता है।।१।। अनेक वैभव तथा स्त्री, पुत्र, माता, पिता को सुख होता है। नीचराशि में पापग्रह युक्त हो। ६।८।१२ भाव में हो।।२।। पापदृष्ट हो तो धन-सम्पत्ति की हानि, अपने बन्धुओं से विरोध, शूलरोग आदि होते हैं।।३।। राजकार्य समूह से व्याकुल रहता है। २।७ का स्वामी हो तो स्त्री को दुःख होता है।।४।। अपने सम्बन्धी का मरण होता है। वातव्याधि होती है। इसकी शान्ति के लिए विष्णुसहस्रनाम का पाठ होना चाहिए।।५।।

केतुभुक्तिमासाः ११ दिनानि २७ तत्फलम्

बुधस्यांतर्गते केतौ लग्नात्केंद्रत्रिकोणगे ।। शुभयुक्ते शुभैर्दृष्टे लग्नाधिपसमन्विते ।।६।। योगकारकसंबंधे दायेशात्केंद्रलाभगे ।। देहसौख्यं धनाल्पत्वं बंधुस्नेहसहायकृत् ।।७।। चतुष्पाज्जीवलाभः स्यात्संसारे देहतापनम् ।। विद्याकीर्तिप्रसंगश्च समानप्रभुदर्शनम् ।।८।। भोजनांबरसौख्यं च ह्यादौ मध्ये सुखावहम् ।। दायेशाद्रिपुरंध्रस्थे अष्टमे पापसंयुते ।।९।। वाहनात्पतनं चैव पुत्रक्लेशसमाकुलम् ।। चौरादिराजभीतिश्च पापकर्मरतः सदा ।।१०।। वृश्चिकादिविषाद्भीतिर्नीचैः कलह संयुतः ।। शोकरोगादिदुःखं च संसारादिचलं भवेत् ।।११।। द्वितीयद्यूननाथे तु देहजाड्यं भविष्यति ।। तद्दोषपरिहाराय च्छागदानं तु कारयेत् ।।१२।।

केतु अन्तर मास ११ दिन २७ फल

बुध दशा में केतु का अन्तर हो, केतु लग्न से केन्द्र, त्रिकोण भाव में शुभग्रह युक्त या दृष्ट हो और लग्नेश से युक्त हो।।६।। योगकारक ग्रह से सम्बन्ध हो तथा बुध से भी केन्द्र या लाभ में हो तो देहसौख्य, सामान्य धन, बन्धु का स्नेह तथा साहाय्य।।७।। चौपाया पशु का लाभ तथा संसार से विरक्ति, विद्या की प्रसिद्धि, कीर्ति, समान आयुवाले प्रभु का दर्शन।।८।। उत्तम भोजन आदि प्रथम और मध्य अवधि में प्राप्त होते हैं। बुध से केतु ६।८।१२ स्थान में पापयुक्त हो तो।।९।। सवारी से गिरना तथा पुत्र को क्लेश, चोर तथा राजभय, पाप बुद्धि।।१०।। सर्प, बिच्छू आदि से भय, नीचों से कलह, शोक रोग आदि दुःख तथा जनसमाज से क्लेश होता है।।११।। केतु यदि २।७ भाव का स्वामी हो तो देह जाड्य रोग होता है। इसकी शान्ति के लिए छागदान करना चाहिए।।१२।।

अथ शुक्रभुक्तिमासाः ३४ दिनानि० तत्फलम्

सौम्यस्यांतर्गते शुक्रे केंद्रे लाभत्रिकोणगे ॥ सत्कथापुण्यधर्मादिसंग्रहः पुण्यकर्मकृत् ॥१३॥
मित्रप्रभुवशादिष्टं क्षेत्रलाभः सुखं भवेत् ॥ दशाधिपात्केंद्रगतेऽथवासल्लाभगेपि वा ॥१४॥
तत्काले श्रियमाप्नोति राजश्रीधनसंपदः ॥ वापीकूपतडागादिदानधर्मादिसंग्रहः ॥१५॥
व्यवसायात्फलाधिक्यं धनधान्यसमृद्धिदम् ॥ दायेशादशुभस्थाने व्यये वा बलवर्जिते ॥१६॥
हृद्रोगो मानहानिश्च ज्वरातीसारपीडनम् ॥ आत्मबंधुवियोगश्च संसारो देहनिःशमम् ॥१७॥
आत्मदुःखं मनस्तापमायदायादिकं तथा ॥ द्वितीयद्यूननाथे तु ह्यपमृत्युर्भविष्यति ॥१८॥
तद्दोषपरिहारार्थं दुर्गादेवीजपं चरेत् ॥१९॥

बुध दशा में शुक्र का अन्तर मास ३४ दिन ०फल

बुधमहादशा में शुक्र का अन्तर हो, शुक्र लग्न से केन्द्र, लाभ त्रिकोणभाव में हो तो सत्कथा श्रवण, धर्मकार्य आदि होते हैं॥१३॥ मित्र या प्रभु के कारण इच्छित कार्यसिद्धि, भूमिलाभ तथा सुख होता है। यदि शुक्र, बुध से चतुर्थ दशम या लाभ में हो तो अन्तरकाल में लक्ष्मी की प्राप्ति, राजा के समान ऐश्वर्य, कूप, वापी (बावड़ी), तड़ाग (तालाब) दान, धर्म आदि पुण्य कार्य होते हैं॥१५॥ व्यापार से अधिक लाभ, धन सम्पत्ति की प्राप्ति होती है। बुध से शुक्र अशुभस्थान या १२ में बलहीन हो तो॥१६॥ हृदयरोग, मानहानि, ज्वर, अतिसार आदि पीड़ा, आत्मबन्धु का वियोग, तथा अशान्ति रहती है॥१७॥ आत्मक्लेश, मन में कष्ट, आमदनी तथा परिवार की स्थिति भी असन्तोष पूर्ण रहती है। शुक्र यदि २.७ का स्वामी हो तो अपमृत्यु होती है॥१८॥ इसकी शान्ति के लिए 'दुर्गा देवी' का जप करना चाहिए॥१९॥

अथ रविभुक्तिमासाः १० दिनानि ६ तत्फलम्

सौम्यस्यांतर्गते सूर्ये स्वोच्चे स्वक्षेत्रकेन्द्रगे ॥ त्रिकोणे धनलाभे तु तुंगांशे स्वांशगेपि वा ॥२०॥
राजप्रसादसौभाग्यं मित्रप्रभुवशात्सुखम् ॥ भूम्यात्मजेन संदृष्टे आदौ भूलाभमेव च ॥२१॥
लग्नाधिपेन संदृष्टे बहुसौख्यं धनागमम् ॥ ग्रामभूम्यादिलाभं च भोजनांबरसौख्यकृत् ॥२२॥
षष्ठाष्टमव्यये वापि शन्यारफणिसंयुते ॥२३॥ चौराग्निशस्त्रपीडा च पित्ताधिक्यं भविष्यति ॥
शिरोरुङ्मनसस्ताप इष्टबंधुवियोगकृत् ॥२४॥ द्वितीयसप्तमाधीशे ह्यपमृत्युर्भविष्यति ॥
तद्दोषपरिहारार्थं शांतिं कुर्याद्यथाविधि ॥ सूर्यप्रीतिकरीं चैव दद्याद्धेनु हिरण्यकम् ॥२५॥

सूर्य का अन्तर मास १० दिन ६ फल

बुध की दशा में सूर्य का अन्तर हो। सूर्य लग्न से केन्द्र, त्रिकोण, धनभाव, लाभस्थान में स्वगृही, उच्चराशि में, स्वनवांश में या उच्चांश में हो तो ॥२०॥ राजा के समान महल में रहने या बनाने का सौभाग्य हो। मित्र या प्रभु के सहयोग से इच्छित कार्य की सिद्धि होती है। मंगल की दृष्टि हो तो प्रथम भूमि का लाभ होता है॥२१॥ लग्नेश भी देखता हो तो बहुसौख्य, धनलाभ। ग्रामभूमिलाभ तथा उत्तम भोजन, वस्त्र, भूषण लाभ होता है॥२२॥ यदि सूर्य लग्न से ६।८।१२ स्थान में शनि, मंगल, राहु युक्त हो तो चोर, अग्नि, शस्त्र से पीड़ा होती है।

पित्ताधिक्य, शिरोवेदना, संताप, प्रियबन्धु का वियोग होता है।।२४।। यदि सूर्य २।७ का स्वामी हो तो अपमृत्यु होती है। इसकी शान्ति के लिए सुवर्ण तथा गौ का दान और सूर्य की शान्ति करनी चाहिए।।२५।।

अथ चंद्रभुक्तिमासाः १७ दिनानि ० तत्फलम्

सौम्यस्यांतर्गते चंद्रे लग्नात्केंद्रत्रिकोणगे ।। स्वोच्चे वा स्वर्क्षगे वापि गुरुदृष्टिसमन्विते ।।२६।।
योगस्थानाधिपत्येन योगप्राबल्यमादिशेत् ।। स्त्रीलाभं पुत्रलाभं च वस्त्रवाहनभूषणम् ।।२७।।
नूतनालयलाभं च नित्यं मिष्टान्नभोजनम् ।। गीतवाद्यप्रसंगं च शास्त्रविद्यापरिश्रमम् ।।२८।।
दक्षिणां दिशमाश्रित्य प्रयाणं च भविष्यति ।। द्वीपांतरादिवस्त्राणां लाभश्चैव भविष्यति ।।२९।।
मुक्ताविद्रुमरत्नानि धौतवस्त्रादिलाभगम् ।। नीचारिक्षेत्रसंयुक्ते देहबाधा भविष्यति ।।३०।।
दायेशात्केंद्रकोणस्थे दुश्चिक्ये लाभगेऽपि वा ।। तद्भुक्त्यादौ पुण्यतीर्थस्थानदैवतदर्शनम् ।।३१।।
मनोधैर्यं हृदुत्साहं विदेशधनलाभकृत् ।। दायेशात्षष्ठरंध्रे वा व्यये वा पापसंयुते ।।३२।।
चौराग्निनृपभीतिश्च स्त्रीसंगे गमनं भवेत् ।। दुष्कृतिर्धनहानिश्च कृषिगोश्वादिनाशकृत् ।।३३।।
द्वितीयद्यूननाथेतु देहबाधाभविष्यति ।। तद्दोषपरिहारार्थं दुर्गादेवीजपं चरेत् ।।३४।। वस्त्रदानं प्रकुर्वीत आयुर्वृद्धिसुखावहम् ।।३५।।

चन्द्रमा का अन्तर मास १७ दिन ० फल

बुध की महादशा में चन्द्रमा का अन्तर हो, चन्द्रमा लग्न से केन्द्र, त्रिकोण में, स्वगृही, उच्च राशि में, गुरुयुक्त या दृष्ट हो।।२६।। चन्द्रमा यदि कारकेश हो तो बलवान् शुभयोग होता है। इसमें स्त्री पुत्र का लाभ, सवारी, वस्त्रभूषण प्राप्त होते हैं।।२७।। नया मकान बनाना, उत्तम भोजन, गानवाद्य का प्रसंग, शास्त्रीय विद्या में परिश्रम होता है।।२८।। दक्षिण दिशा की यात्रा तथा द्वीपान्तर से व्यापार और उसमें लाभ होता है। मोती, मूंगा आदि रत्न से तथा कपड़े के व्यवसाय से लाभ होता है।।२९।। यदि चन्द्रमा नीचराशि या शत्रुराशि में हो तो शरीर में अरिष्ट होता है।।३०।। यदि चन्द्रमा बुध से केन्द्र, त्रिकोण, तृतीय, लाभ स्थान में हो तो उसके अन्तर में पवित्र तीर्थ तथा देवदर्शन होते हैं।।३१।। मन में धैर्य, हृदय में उत्साह एवं विदेश में धन की प्राप्ति होती है। बुध से चन्द्रमा ६।८।१२में पापग्रह युक्त हो तो चोर, अग्नि, राज से भय, स्त्रीसंग में प्रवृत्ति, दुश्चरित्रता, धन हानि, खेती, गौ आदि पशु का नाश होता है।।३३।। चन्द्रमा २।७ का स्वामी हो तो देह बाधा होती है। इसकी शान्ति के लिये दुर्गामन्त्र जप करना चाहिए।।३४।। श्वेत वस्त्र का दान करने से आयु वृद्धि और सुख होता है।।३५।।

अथ कुजभुक्तिमासाः ११ दिनानि २७ तत्फलम्

सौम्यस्यांतर्गते भौमे लग्नात्केंद्रत्रिकोणगे ।। स्वोच्चे वा स्वर्क्षगे भौमे लग्नाधिपसमन्विते ।।३६।।
राजानुग्रहशांतिं च गृहे कल्याणसंभवम् ।। लक्ष्मीकटाक्षचिह्नानि नष्टराज्यार्थलाभकृत् ।।३७।।
पुत्रोत्सवादिसंतोषं गृहं गोधनसंकुलम् ।। गृहक्षेत्रादिलाभंचगजवाजिसमन्वितम् ।।३८।।

राजप्रीतिकरं चैव स्त्रीसौख्यं चातिशोभनम् ।। नीचक्षेत्रसमायुक्ते ह्यष्टमे वा व्ययेपि वा ।।३९।। पापदृष्टियुते वापि देहपीडा मनोव्यथा ।। उद्योगभंगो देहादौ स्वग्रामे धान्यनाशनम् ।।४०।। ग्रंथिशस्त्रव्रणादीनां भयं तापज्वरादिकम् ।। दायेषात्केंद्रगे भौमे त्रिकोणे लाभगेपि वा ।।४१।। शुभदृष्टेऽश्व संप्राप्तिर्देहसौख्यं धनागमम् ।। पुत्रलाभं यशोवृद्धिं भ्रातृवर्गो महाप्रियः ।।४२।। दायेशाद्रिपुरंध्रस्थे व्यये वा पापसंयुते ।। तद्भुक्त्यादौ महाक्लेशं भातृवर्गे महद्भयम् ।।४३।। नृपाग्निचौरभीतिश्च पुत्रमित्रविरोधनम् ।। स्थानभ्रंशे महद्धैर्यं मध्ये सौख्यं धनागमम् ।।४४।। अंते तु राजभीतिः स्यात्स्थानभ्रंशो ह्यथापि वा ।। द्वितीयद्यूननाथे च ह्यपमृत्युभयं भवेत् ।।४५।। अनड्वाहं प्रकुर्वीत मृत्युंजयजपं चरेत् ।।४६।।

मंगल का अन्तर मास ११ दिन २७ फल

बुध की महादशा में मंगल का अन्तर हो। मंगल लग्न से केन्द्र, त्रिकोण में स्वगृही या उच्चराशि का हो और लग्नेश से युक्त हो।।३६।। तो राजा का अनुगह, घर में सुख शान्ति, लक्ष्मी की स्थिरता, नष्ट सम्पत्ति की प्राप्ति होती है।।३७।। पुत्रोत्सव, घर, गौ आदि की स्थिति, मकान, भूमि का लाभ होता है। हाथी-घोड़े आदि सवारी तथा राजमैत्री, स्त्री से सुख होता है।।३८।। यदि मंगल नीच राशि में स्थित ८।१२ स्थानों में हो तो।।३९।। तथा पाप दृष्टियुक्त हो तो देह पीड़ा, मनोव्यथा, उद्योग भंग, अपने देश में धनहानि होती है।।४०।। शस्त्र से घाव, ग्रन्थी आदि रोग, भय, ज्वर आदि होते हैं। बुध से मंगल केन्द्र, त्रिकोण, लाभ स्थान में।।४१।। शुभ दृष्टि युक्त हो तो धन लाभ, देह सौख्य, पुत्र लाभ, यश वृद्धि तथा भ्राताओं से प्रेम होता है।।४२।। बुध से मंगल ६।८।१२ भाव में पापग्रहयुक्त हो तो अन्तर के आदि में महान् क्लेश, परिवार में महान भय होता है।।४३।। राज, अग्नि, चोर का भय, पुत्र और मित्र से विरोध, स्थान हानि तथा धैर्य होता है। अन्तर के मध्य भाग में धनप्राप्ति होती है।।४४।। अन्त में राजभय, स्थानहानि होती है। मंगल २।७ का स्वामी हो तो अपमृत्यु का भय होता है। शान्ति के लिए मृत्युञ्जय जप तथा बैल का दान करे।।४५-४६।।

अथ राहुभुक्तिमासाः ३० दिना १८ तत्फलम्

बुधस्यांतर्गते राहौ केंद्रलाभत्रिकोणगे ।। कुलीरकुंभगे वापि कन्यायां वृषभेपि वा ।।४७।। राजसम्मानकीर्तो च समये राजयिष्यति ।। पुण्यतीर्थस्थानलाभं देवतादर्शनं तथा ।।४८।। इष्टापूर्ते च महतो मानश्चांबरलाभकृत् ।। भुक्त्यादौ देहपीडा च अंते सौख्यं विनिर्दिशेत ।।४९।। षष्ठाष्टव्ययराशिस्थे तद्भुक्तौ धननाशनम् ।। भुक्त्यादौ देहनाशं च वातज्वरमजीर्ण-कृत् ।।५०।। लग्नाद्युपचये राहौ शुभग्रहसमन्विते ।। राजसंलापसंतोषं नूतनप्रभुदर्शनम् ।।५१।। दायेशात्षष्ठरिःफे वा ह्यष्टमे पापसंयुते ।। निष्ठुरं राजकार्याणि स्थानभ्रंशो महद्भयम् ।।५२।। बंधनं रोगपीडा च आत्मबंधुमनोव्यथा ।। हृद्रोगो मानहानिश्च धनहानिर्भविष्यति ।।५३।। द्वितीयसप्तमस्थे वा ह्यपमृत्युर्भविष्यति ।। तद्दोषपरिहारार्थं दुर्गालक्ष्मीजपं चरेत् ।।५४।। श्वेतां गां महिषीं दद्यादायुरारोग्यदायिनीम् ।।५५।।

राहु का अन्तर मा० ३० दि० १८ फल

बुध की महादशा में राहु का अन्तर हो, राहु लग्न से केन्द्र, त्रिकोण, लाभ स्थान में हो, वृष,

कर्क, कन्या तथा कुम्भ राशि में हो।।४७।। तो राज सम्मान, कीर्ति तथा राजा के समान ऐश्वर्य, तीर्थयात्रा, देवता दर्शन, स्थान लाभ।।४८।। चान्द्रायण आदि व्रत, यज्ञ, दान आदि शुभ कर्म होते हैं। समाज में प्रतिष्ठा, वस्त्र से लाभ, अन्तर के आदि में देह पीड़ा, अन्त में सुख होता है।।४९।। राहु ६।८।१२ भाव में हो तो उसके अन्तर में धननाश, वातज्वर, अजीर्ण रोग होता है।।५०।। लग्न आदि केन्द्र स्थान में शुभग्रह युक्त राहु हो तो राजा से मेलजोल,सन्तोष, किसी बड़े आदमी से मिलाप हो!।५१।। बुध से राहु ६।८।१२ स्थान में पापयुक्त हो तो राजकार्य में त्रुटि, अतएव राजा का निष्ठुर व्यवहार, स्थानभ्रंश, महान् भय हो।।५२।। बंधन, रोग और पीड़ा, परिवार में चिन्ता, हृदय में रोग, मानहानि, धनहानि हो।।५३।। राहु २।७ स्थान में हो तो अपमृत्यु होती है। इसका उपाय दुर्गालक्ष्मी मंत्र का जप है।।५४।। सफेद गौ का दान करने से आयु वृद्धि तथा आरोग्यता होती है।।५५।।

अथ गुरुभुक्तिमासाः २७ दिना० ६ तत्फलम्

बुधस्यान्तर्गते जीवे लग्नात्केंद्रत्रिकोणगे ।। स्वोच्चे वा स्वर्क्षगे वापि लाभे वा धनराशिगे ।।५६।।
देहसौख्यं धनप्राप्तिं राजप्रीतिं तथैवच ।। विवाहोत्सवकार्याणि नित्यमिष्टान्नभोजनम् ।।५७।।
गोमहिष्यादिलाभं च पुराणश्रवणादिकम् ।। देवतागुरुभक्तिं च दानधर्ममखादिकम् ।।५८।।
यज्ञकर्मप्रवृद्धिं च शिवपूजाफलं तथा ।। नीचे वास्तंगते वापि रिःफाष्टव्ययगेऽपि वा ।।५९।।
शन्यारपतिसंयुक्ते कलहो राजविग्रहम्।। चौरादिदेहपीडा च पितृमातृविनाशनम् ।।६०।।

गुरु का अन्तर मा० २७ दि० ६ फल

बुध की महादशा में गुरु का अन्तर हो, गुरु लग्न से केन्द्र, त्रिकोण में हो, उच्च अथवा स्वगृही हो, लाभ या धनराशि में हो।।५६।। तो देह सौख्य, धन प्राप्ति, राजप्रीति, विवाहादि उत्सव, उत्तम भोजन।।५७।। गौ आदि का लाभ, पुराण श्रवण, देवता-गुरु की भक्ति, दान, धर्म, यज्ञ आदि होते हैं।।५८।। उपासना तथा पूजा का फल प्राप्त होता है। गुरु यदि ६।८।१२ स्थान में नीच राशि अथवा अस्तंगत हो,।।५९।। शनि, मंगल युक्त हो अथवा शनि, मंगल की राशि के स्वामी से युक्त हो तो कलह, राज विग्रह, चोरी, रोग, देह पीड़ा, माता-पिता की मृत्यु,।।६०।।

मानहानी राजदंडो धनहानिर्भविष्यति ।। विषाहिज्वरपीडा च कृषिभो भूमिनाशनम् ।।६१।।
दायेशात्केंद्रकोणे वा लाभे वा बलसंयुते ।। बंधुपुत्रहृदुत्साहं शुभं शोभनसंयुतम् ।।६२।।
पशुवृद्धियशोलाभमन्नदानादिकं फलम् ।। दायेशात्षष्ठरंध्रे वा व्यये वा बलवर्जिते ।।६३।।
अंगतापश्च वैकल्यं देहबाधा भविष्यति ।। कलत्रबंधुवैषम्यं राजकोपो धनक्षयः ।।६४।।
अकस्मात्कलहाद्भीतिः प्रमोहो राजविग्रहम् ।। द्वितीयसप्तमस्थे वा देहबाधा भविष्यति ।।६५।।
तद्दोषपरिहारार्थं शिवसाहस्रकं जपेत् ।। गोभूहिरण्यदानेन सर्वारिष्टं व्यपोहति ।।६६।।

मानहानि, राजदण्ड, धनहानि, विष, सर्प, ज्वर, पीड़ा, कृषि हानि, भूमि नाश होता है।।६१।। बुध से गुरु केन्द्र, त्रिकोण, लाभ स्थान में बलवान् हो तो पुत्र, भ्राता के उत्साह की

वृद्धि, शुभ कार्य होता है।।६२।। पशु वृद्धि, यश विस्तार, अन्नदान आदि शुभ कर्म होते हैं। बुध से गुरु ६।८।१२ भाव में बलहीन हो तो।।६३।। ज्वर, विकलता, देह बाधा, परिवार में विषमता, राजकोप, भय, मोह, राज विग्रह होता है। २।७ का स्वामी हो तो देह बाधा होती है।।६५।। इसकी शान्ति के लिये शिव सहस्र जप, गौ भूमि सुवर्ण का दान करने से सब अरिष्ट की शान्ति होती है।।६६।।

अथ शनिभुक्तिमासाः ३२ दि० ९ तत्फलम्

सौम्यस्यांतर्गते मन्दे स्वोच्चे स्वक्षेत्रकेन्द्रगे ।। त्रिकोणलाभगे वापि गृहे कल्याणवर्द्धनम् ।।६७।। राज्यलाभं महोत्साहं गृहं गोधनसंकुलम् ।।६८।। शत्रुस्थानफलावाप्तिं भुक्त्या तीर्थविनाशनम् ।। षष्ठाष्टमव्यये मंदे दायेशाद्वा तथैव च ।।६९।। अरातिदुःखबाहुल्यं दारपुत्रादिपीडनम् ।। बुद्धिभ्रंशं बंधुनाशं कर्मनाशं मनोरुजम् ।।७०।। विदेशगमनं चैव स्वप्नं दूराभिसंपदम् ।। द्वितीयद्यूननाथे तु ह्यपमृत्युर्भविष्यति ।।७१।। तद्दोषपरिहारार्थं मृत्युंजयजपं चरेत् ।। कृष्णां गां महिषीं दद्यादायुरारोग्यवृद्धिदाम् ।।७२।।

इति श्रीबृहत्पाराशरहोराशास्त्रे पूर्वखंडे विंशोत्तरीबुधान्तर्दशाफलकथनं नामोनचत्वारिंशोऽध्यायः ।।३९।।

शनि का अन्तर मा० ३२ दि० ९ फल

बुध की महादशा में शनि का अन्तर हो, शनि लग्न से केन्द्र, त्रिकोण या लाभ स्थान में, स्वगृही या उच्च राशि का हो।।६७।। तो राज्य लाभ, महान् उत्साह होता है। घर में गौ आदि पशु रहते हैं।।६८।। शत्रु की सम्पत्ति प्राप्त होती है। तीर्थ यात्रा होती है। यदि बुध से शनि ६।८।१२ स्थान में अथवा लग्न से हो तो शत्रु द्वारा अति दुःख प्राप्त हो।।६९।। स्त्री-पुत्र को पीड़ा हो। ज्ञान हानि, बन्धुनाश, कर्मनाश, अशान्ति।।७०।। विदेश यात्रा, घर से दूर रहना होता है। शनि यदि २।७ का स्वामी हो तो अपमृत्यु होती है।।७१।। इसकी शान्ति के लिये मृत्युञ्जय जप तथा काली गौ दान करे तो आरोग्यता और वृद्धि होती है।।७२।।

इति श्री बृ० पा० हो० शा० पू० भा० प्र० विंशोत्तरी बुधान्तर दशाफलकथनं नाम ऊनचत्वारिंशोऽध्यायः ।।३९।।

अथ केतुभुक्तिदशायामंतर्दशामासाः ४ दि० ६ तत्फलम्

केंद्रे त्रिकोणलाभे वा लग्नाधिपसमन्विते ।। भाग्यकर्मसुसंबंधे वाहनेशसमन्विते।१।। तद्भुक्तौ धनधान्यादि चतुष्पाज्जीवलाभकृत् ।। पुत्रदारादिसौख्यं च राजप्रीतिमनोरथम् ।। ग्रामभूम्यादिलाभश्च गृहं गोधनसंकुलम् ।। नीचास्तखेटसंयुक्ते ह्यष्टमेव्ययगेपि वा ।।३।। हृद्रोगं मानहानिं च धनधान्यपशुक्षयम् ।। दारपुत्रादिपीडां च मनश्चांचल्यमेव च ।।४।। द्वितीयद्यूननाथेन संबंधे तत्रसंस्थिते ।। अनारोग्यं महत्कष्टमात्मबंधुवियोगकृत् ।।५।। दुर्गादेवीजपं कुर्यान्मृत्युंजयजपं चरेत् ।।६।।

केतु महादशा में केतु की अन्तर्दशा मास ४ दिन ६ फल

केतु यदि केन्द्र, त्रिकोण, लाभस्थान में लग्नेश युक्त तथा ९।१० भावों से सम्बन्ध रखता हो तथा चतुर्थेशयुक्त हो।।१।। तो इसके अन्तर में धन सम्पत्ति तथा गौ आदि प्राप्त होती है। स्त्री पुत्र का सुख तथा राजा से प्रीति, इच्छापूर्ति।।२।। ग्राम, भूमि का लाभ तथा घर में गोधन होता है। यदि केतु नीच राशि में, अस्तका, स्वयं हो या ऐसे ग्रह से युक्त हो अथवा ८।१२ भाव में हो।।३।। तो हृदयरोग, मान हानि, तथा धन सम्पत्ति का नाश, स्त्री-पुत्र को पीड़ा,मन की चंचलता होती है।।४।। यदि केतु २।७ के स्वामी से सम्बन्ध करता हो या २।७ में स्थित हो तो रोग, कष्ट, तथा बन्धुवियोग करता है।।५।। उपाय–दुर्गादेवीमंत्र जप या 'मृत्युञ्जय मन्त्र जप।।६।।

अथ शुक्रभुक्तिमासाः १४ दिनानि० तत्फलम्

केतोरंतर्गते शुक्रे स्वोच्चे स्वक्षेत्रसंयुते ।। केंद्रत्रिकोणलाभे वा राज्यनाथेन संयुते ।।७।।
राजप्रीतिं च सौभाग्यं राजत्स्वांबरसंकुलम् ।। तत्काले श्रियमाप्नोति भाग्यकर्मेशसंयुते ।।८।।
नष्टराज्यधनप्राप्तिं सुखवाहनमुत्तमम् ।। सेतुस्नानादिकं चैव देवतादर्शनं महत् ।।९।।
महाराजप्रसादेन ग्रामभूम्यादिलाभकृत् ।। दायेशात्केंद्रकोणे वा दुश्चिक्ये लाभगेपि वा ।।१०।।
देहारोग्यं शुभं चैव गृहे कल्याणशोभनम् ।। भोजनांबरभूषाप्तिमश्वदोलादिलाभकृत् ।।११।।
दायेशाद्रिपुरं ध्रस्थे व्यये वा पापसंयुते ।। अकस्मात्कलहं चैव पशुधान्यादिपीडनम् ।।१२।।
नीचस्थे खेटसंयुक्ते लग्नात्षष्ठाष्टराशिगे ।। स्वबंधुजनवैषम्यं शिरोक्षिव्रणपीडनम् ।।१३।।
हृद्रोगं मानहानिं च धनधान्यपशुक्षयम् ।। कलत्रपुत्रपीडायास्संचारं देहविह्वलम् ।।१४।।
द्वितीयद्यूननाथे तुदेहजाडचंमनोरुजम् ।। तद्दोषपरिहारार्थं दुगादिवीजपं चरेत ।। श्वेतां गां महिषीं दद्यादायुरारोग्यदायिनीम् ।।१५।।

शुक्र का अन्तर मास १४ दि. ० फल

केतु महादशा में शुक्र का अन्तर हो। शुक्र केन्द्र, त्रिकोण, लाभ में दशमेश युक्त हो।।७।। तो राजप्रीति, ऐश्वर्य, राजसी पोशाक, लक्ष्मी प्राप्त होती है।।८।। यदि ९।१० के स्वामी से युक्त हो तो नष्ट ऐश्वर्य की प्राप्ति, उत्तम वाहन सुख, रामेश्वरयात्रा, देवदर्शन प्राप्त होता है।।९।। राजा की कृपा से ग्राम भूमि का लाभ होता है। केतु यदि केन्द्र त्रिकोण, लाभ तथा तृतीयभाव में हो।।१०।। तो देहारोग्य, शुभ तथा घर में सुखशान्ति, उत्तम भोग्य पदार्थ तथा घोड़ा गाड़ी आदि का लाभ करता है।।११।। केतु यदि ६।८।१२ भाव में पापयुक्त हो तो अकस्मात् कलह तथा अन्न, पंशु की हानि होती है।।१२।। यदि केतु लग्न से ६।८ भाव में नीचग्रह से युक्त हो तो परिवार में वैमनस्य, सिर, आंख में ब्रण से पीड़ा।।१३।। हृदयरोग, मानहानि, धन ऐश्वर्य पशु का क्षय, स्त्री-पुत्र को पीड़ा, देह विह्वल रहे।।१४।। यदि केतु २।७ का स्वामी हो तो देहजाडच तथा मन में अशान्ति होती है। इसकी शान्ति के लिए 'दुर्गा' मन्त्र का जप करना चाहिए तथा श्वेत् गौ का दान करना चाहिए।।१५।। (यहां केतु की दशा में ही केतु का अन्तर है। अतः 'दायेशात्' पद व्यर्थ है।)

अथ रविभुक्तिमासाः ४ दिना० ६ तत्फलम्

केतोरंतर्गते सूर्ये स्वोच्चे स्वक्षेत्रगेपि वा ॥ केन्द्रत्रिकोणलाभे वा शुभयोगनिरीक्षिते ॥१६॥ धनधान्यादिलाभश्च राजानुग्रहवैभवम् ॥ अनेकशुभकार्याणि चेष्टसिद्धिः सुखावहा॥१७॥ षष्ठाष्टव्ययराशिस्थे पापग्रहसमन्विते ॥ तद्भुक्तौ राजभीतिश्च पितृमातृवियोगकृत् ॥१८॥ विदेशगमनं चैव चौराहिविषपीडनम् ॥ राजमित्रविरोधश्च राजदण्डाद्धनक्षयः ॥१९॥ शोकरोगभयं चैव उष्णाधिक्यं ज्वरो भवेत् ॥यातुः कार्यार्थसिद्धिः स्यात्स्वल्पग्रामाधिपत्य ॥२०॥ देहसौख्यं चार्थलाभं पुत्रलाभं मनोदृढम् ॥ यातुः कार्यार्थसिद्धिःस्यात्स्वल्पग्रामाधिपत्य युक् ॥२१॥ दायेशादष्टरिःफे वा षष्ठे वा पापसंयुते ॥ अन्नविघ्नो मनोभीतिर्धनधान्यपशुक्षयः ॥२२॥ आदौ मध्ये महाक्लेशानन्ते सौख्यं विनिर्दिशेत् ॥ द्वितीयसप्तमाधीशे ह्यपमृत्युर्भविष्यति ॥२३॥ दर्शशांतिं प्रकुर्वीत स्वर्णधेनुं प्रदापयेत् ॥२४॥

सूर्य का अन्तर मा० ४ दि० ६ फल

केतु महादशा में सूर्य का अन्तर हो। सूर्य लग्न से केन्द्र, त्रिकोण, लाभ में स्वगृही, उच्चराशि का हो शुभग्रह युक्त या दृष्ट हो॥१६॥ तो धन सम्पत्ति का लाभ, राज कृपा प्राप्त वैभव, अनेक शुभ कार्य तथा सुखकर इष्टसिद्धि हो॥१७॥ यदि सूर्य पापग्रह युक्त होकर ६।८।१२ भाव में हो तो अन्तर में राजभय, माता पिता से वियोग॥१८॥ विदेश यात्रा, चोर, सर्प, विष से पीड़ा तथा राजमित्र से विरोध और राजदण्ड से धनहानि होती है॥१९॥ शोक, रोग का भय तथा ज्वर की तीव्रता होती है। केतु से सूर्य केन्द्र त्रिकोण या २।११ भाव में हो॥२०॥ तो देहसौख्य, धनलाभ, पुत्रलाभ, मन की दृढ़ता तथा यात्रा का साफल्य एवं ग्राम का साधारण अधिकार प्राप्त होता है॥२१॥ यदि सूर्य केतु से ६।८।१२ भाव में पापयुक्त हो तो भोजन में भी त्रुटि, धन, सम्पत्ति, पशु की हानि होती है॥२२॥ प्रथम और मध्य में महान् दुःख और अन्त में सुख हो। २।७ का स्वामी यदि सूर्य हो तो अपमृत्यु होती है॥२३॥ उपाय-"दर्श यज्ञ" तथा "सुवर्ण धेनु" का दान करना चाहिए॥२४॥

अथ चन्द्रभुक्तिमासाः ७ दिना० ० तत्फलम्

केतोरंतर्गते चंद्रे स्वोच्चे स्वक्षेत्रराशिगे ॥ केन्द्रत्रिकोणलाभे वा धने शुभसमन्विते ॥२५॥ राजप्रीतिर्महोत्साहः कल्याणंचमहत्सुखम् ॥ महाराजप्रसादेन गृहभूम्यादिलाभकृत् ॥२६॥ भोजनांबरपश्वादिव्यवसायेऽधिकं फलम् ॥ अश्ववाहनलाभश्च वस्त्राभरणभूषणम ॥२७॥ देवालयतडागादिपुण्यधर्मादिसंग्रहम् ॥ पुत्रदारादिसौख्यं च पूर्णचंद्रस्तथैव च ॥२८॥ नीचे वा क्षीणगे चंद्रे षष्ठाष्टव्ययराशिगे ॥ आत्मदौस्थ्यं मनस्तापं कार्यविघ्नं महद्भयम् ॥२९॥ पितृमातृवियोगं च देहजाड्यं मनोव्यथाम् ॥ व्यसायात्फलं नष्टंगोमहिष्यादिनाशकृत् ॥३०॥ दायेशात्केन्द्रकोणे वा लाभे वा बलसंयुते ॥ कृषिगोभूमिलाभं च इष्टबंधुसमागमम् ॥३१॥ ताम सात्कार्यसिद्धिं च गृहे गोक्षीरमेव च ॥ भूकृत्यं शुभमारोग्यं मध्ये राजप्रियं शुभम् ॥३२॥ अंते तु राजभीतिं च विदेशगमनं तथा ॥ दूरयात्रादिसंचारं संबंधिजनपूजनम् ॥३३॥ दायेशात्षष्ठरिःफे वा रन्ध्रे वा बलवर्जिते ॥ धनधान्यादिहानिश्च मनोव्याकुलमेव च ॥३४॥ स्वबंधुजनदातृत्वं भ्रातृपीडा तथेव च ॥ निधनाधिपदोषेण द्विसप्तमाधिपे युते ॥३५॥ अपमृत्युभयं तस्य शांतिं कुर्याद्यथाविधि ॥ चंद्रप्रीतिकरं चैव ह्यायुरारोग्यसंभवम् ॥३६॥

केतु दशा में चन्द्रान्तर मास ७ दि.० फल

केतु की महादशा में चन्द्रमा का अन्तर हो। चन्द्रमा लग्न से केन्द्र, त्रिकोण, लाभ या धनस्थान में स्वोच्च या स्वगृही और शुभ ग्रहयुक्त हो॥२५॥ तो राजप्रीति, महान् उत्साह, कल्याण, महान् सुख एवं राजकृपा से गृह भूमिका लाभ होता है॥२६॥ उत्तम भोजन, सुन्दर वस्त्र, गौ आदि पशु, व्यापार से अधिक लाभ, घोड़े की सवारी, श्रेष्ठ आभूषण,॥२७॥ देवमन्दिर, तालाब, पुण्य, धर्म आदि का संग्रह, स्त्री-पुत्र का सुख यह सुलभ होते हैं, यदि चन्द्रमा पूर्ण हो तो॥२८॥ चन्द्रमा नीच तथा क्षीण और ६।८।१२ राशि में हो तो किं कर्तव्यविमूढता, मन में असन्तोष, कार्य में विघ्न, महान् भय,॥२९॥ पिता-माता का वियोग, देह की जड़ता, मन में व्यथा, व्यापार में हानि, गौ आदि पशुनाश होता है॥३०॥ केतु से चन्द्रमा केन्द्र, त्रिकोण, लाभभाव में बलवान हो तो कृपि गौ, भूमि का लाभ, प्रेमी बन्धु का दर्शन॥३१॥ कार्यसिद्धि, गोरस भोज्य, भूमि से सुन्दर खेती आरोग्यता, तथा अन्तर के मध्यकाल में राजानुग्रह प्राप्त होता है॥३२॥ अन्तर के अन्त में राजा से भय विदेशयात्रा, तथा दूर की यात्रा, संबन्धियों में आदर॥३३॥ होता है। केतु से चन्द्रमा बलहीन तथा ६।८।१२ भाव में हो तो धन सम्पत्ति की हानि मन में व्याकुलता॥३४॥ स्वीय बन्धुओंसे साहाय्य भ्राताओं से पीड़ा होती है। चन्द्रमा अष्टमाधिपति हो और २।७ भावाधीश से युक्त हो तो ॥३५॥ अकालमृत्यु का भय होता है। इसकी शान्ति करना चाहिए। चन्द्रमा की प्रसन्नता के लिए दानादि करे तो आयु और आरोग्यता होती है॥३६॥

अथ कुजभुक्तिमासाः ४ दिना० २७ तत्फलम्

केतोरंतर्गते भौमे लग्नात्केंद्रत्रिकोणगे ॥ स्वोच्चे स्वक्षेत्रगे भौमे शुभदृष्टियुतेक्षिते ॥३७॥ आदौ शुभफलं चैव ग्राम्यभूम्यादिलाभकृत् ॥ धनधान्यादिलाभश्च चतुष्पाज्जीवलाभकृत् ॥३८॥ गृहारामक्षेत्रलाभं राजानुग्रहवैभवम् ॥ भाग्य कर्मेशसंबंधे भूलाभं सौख्यमेव च ॥३९॥ दायेशात्केंद्रकोणे वा दुश्चिक्ये लाभगेपि वा ॥ राजप्रीतियशोलाभं पुत्रमित्रादिसौख्यकृत् ॥४०॥ षष्ठाष्टमव्यये भौमे दायेशाद्धनगेपि वा॥ द्रुतं करोति मरणं विदेशं चापदं भ्रमम् ॥४१॥ प्रमेहमूत्रकृच्छ्रादिचौरादिनृपपीडनम् ॥ कलहादौ व्यथायुक्तं किंचित्सुखविवर्द्धनम् ॥४२॥ द्वितीयद्यूननाथे तु तापज्वरविषाद्भयम् ॥ दारपीडा मनःक्लेशमपमृत्युभयंभवेत् ॥४३॥ अनड्वाहं प्रदद्यात्तु सर्वसंपत्सुखावहम् ॥४४॥

मंगल का अंतर मास ४ दि० २७ फल

केतु की महादशा में मंगल का अन्तर हो। मंगल लग्न से केन्द्र, त्रिकोण, अपने उच्च में या स्वगृही हो शुभग्रहदृष्टि युक्त या दृष्ट हो॥३७॥ तो अन्तर में पूर्वार्द्ध में शुभफल होता है। ग्रामभूमि का लाभ होता है, धन सम्पत्ति तथा गौ आदि प्राप्त होते हैं॥३८॥ मकान, बागीचा, खेत की भूमि आदि सब राजकृपा से प्राप्त होती है। ९।१० से सम्वन्ध हो तो पृथ्वी का लाभ और सुख होता है॥३९॥ केतु से मंगल केन्द्र, त्रिकोण, तृतीय तथा लाभभाव में हो तो राजप्रीति, यशोविस्तार, पुत्र मित्र आदि का सुख हो॥४०॥ मंगल ६।८।१२।२ भावमें तो विदेश में भ्रमण, आपत्ति तथा मृत्यु कारक होता है॥४१॥ प्रमेह, मूत्रकृच्छ्र की बीमारी,

चोर तथा राजा से पीड़ा कलह, दुःख तथा कभी कुछ सुख होता है।।४२।। २।७ का स्वामी हो तो ज्वर और विष से भय हो, स्त्री को पीड़ा, मन में क्लेश तथा अपमृत्यु का भय होता है।।४३।। बैल का दान करने से सब सुख होता है।।४४।।

अथ राहुभुक्तिमासाः १२ दिना. १८ तत्फलम्

केतोरंतर्गते राहौ स्वोच्चे मित्रस्वराशिगे ।। केंद्रत्रिकोणलाभे वा दुश्चिक्ये धनसंज्ञके ।।४५।। तत्काले धनलाभः स्यात्संसारो भवति ध्रुवम् ।। म्लेच्छप्रभुवशात्सौख्यं धनधान्यफलादिकम् ।।४६।। चतुष्पाज्जीवलाभः स्याद्ग्रामभूम्यादिलाभकृत् ।। भुक्त्यादौ क्लेशमाप्नोति मध्यांते सौख्यमाप्नुयात् ।।४७।। रंध्रे वा व्ययगे राहौ पापसंदृष्टिसंयुते ।। बहुपुत्रः कृशं देहं शीतज्वरविषाद्भयम् ।।४८।। चातुर्थिकज्वरं चैव क्षुद्रोपद्रवपीडनम् ।। अकस्मात्कलहं चैव प्रमेहं शूलमेव च ।।४९।। द्वितीयसप्तमस्थे वा तदा क्लेशंमहद्भयम् ।। तद्दोषपरिहारार्थं दुर्गादेवीजपं चरेत् ।। अयुतहोमः कर्तव्यः सर्वसौख्यप्रदायकः ।।५०।।

केतु की दशा में राहु का अन्तर मा० १२ दि० १८ फल

केतु की महादशा में राहु का अन्तर हो। राहु स्वोच्च या मित्रराशि में केन्द्र, त्रिकोण, लाभ, तथा २।३ भाव में हो तो।।४५।। अन्तर में धन लाभ संसार सुखमय होता है। यवन आदि अधिकारी द्वारा सुख तथा धन संपत्ति होती है।।४६।। चौपाया पशु का लाभ, तथा ग्राम भूमि का लाभ होता है। अन्तर के आदि में क्लेश तथा मध्य और अन्त में सुख होता है।।४७।। ८।१२ में पापग्रह से युक्त राहु हो तो बहुत सन्तान के भरण पोषण में असमर्थता, शीतज्वर, विषभय,।।४८।। चौथैया ज्वर तथा उपद्रवों से पीड़ा, अकस्मात् कलह, प्रमेह तथा शूल।।४९।। होता है। और यदि राहु २।७ की राशि में हो तो महान् भय और क्लेश होता है। इसकी शान्ति के लिए 'दुर्गा' मन्त्र का जप करे। और दश हजार आहुति से होम करे तो सब प्रकार का सुख होता है।।५०।।

अथ गुरुभुक्तिमासाः ११ दिना० ६ तत्फलम्

केतोरंतर्गते जीवे केंद्रलाभत्रिकोणगे ।। स्वोच्चे स्वक्षेत्रगे वापि लग्नाधिपसमन्विते ।।५१।। कर्मभाग्याधिपैर्युक्ते धनधान्यार्थसंपदम् ।। राजप्रीतिं मनोत्साहमश्वांदोल्यादिलाभकृत् ।।५२।। गृहे कल्याणसंपत्तिं पुत्रलाभं महोत्सवम् ।। पुण्यतीर्थं तथोत्साहं सत्कर्म च सुखावहम् ।।५३।। इष्टदेवप्रसादेन विजयं कार्यलाभकृत् ।। राजसँल्लापकार्याणि नूतनप्रभुदर्शनम् ।।५४।। षष्ठाष्टमव्यये जीवे दायेशान्नीचगेपि वा ।। चौराहिव्रणभीतिं च धनधान्यादिनाशनम् ।।५५।। पुत्रदारवियोगं च अतीवक्लेशसंभवम् ।। आदौ शुभफलं चैव अंते क्लेशकरं भवेत् ।।५६।। दायेशात्केंद्रकोणे वा दुश्चिक्ये लाभगेपि वा ।। शुभयुक्ते नृपाद्भीतिर्विचित्रांबरभूषणम् ।।५७।। दूरदेशप्रयाणं च स्वबंधुजनपोषणम् ।। भोजनांबरपश्वादिभुक्त्यादौ देहपीडनम् ।।५८।। अंते तु स्थानचलनमकस्मात्कलहो भवेत् ।। द्वितीयद्यूननाथे तु ह्यपमृत्युर्भविष्यति ।।५९।। तद्दोषपरिहारार्थं शिवसाहस्रकं जपेत् ।। महामृत्युंजयं जाप्यं सर्वोपद्रवनाशनम् ।।६०।।

गुरु का अन्तर मास ११ दि० ६ फल

केतु महादशा में गुरु का अन्तर हो। गुरु केन्द्र, त्रिकोण तथा लाभ में उच्च राशि का या

स्वगृही या लग्नेश युक्त हो।।५१।। गुरु ९।१० भाव के स्वामी से युक्त हो तो धनसम्पत्ति होती है। राजप्रीति, मन में उत्साह तथा घोड़ा गाड़ी या मोटर की सवारी होती है।।५२।। घर में कल्याण, सम्पत्ति, पुत्रलाभ से महोत्सव तथा पवित्र तीर्थ यात्रा, उत्साह और सुख होता है।।५३।। इष्ट देव कृपा से विजय और कार्य से लाभ होता है। राजा से मेलमिलाप, नये प्रभु का दर्शन।।५४।।यदि गुरु ६।८।१२ में (लग्न से या केतु से) नीचस्थित हो तो चोर,सर्प,घाव से भय और धन-सम्पत्ति का नाश होता है।।५५।। स्त्री-पुत्र से वियोग और बहुत क्लेश होता है। आदि में शुभ फल और अन्त में क्लेशकारी होता है।।५६।। यदि केतु से गुरु केन्द्र, त्रिकोण, लाभभाव तथा तृतीयभाव में शुभयुक्त हो तो राजभय, सुन्दर विचित्र भूषण।।५७।। दूरदेश की यात्रा, परिवार का भरण-पोषण, उत्तम भोजन, सुन्दर गौ आदि पशु की प्राप्ति हो। अन्तर के आदि में कुछ देहपीड़ा हो।।५८।। अन्त में स्थानविच्युति हो, अचानक कलह हो। गुरु यदि २।७ भाव का स्वामी हो तो अपमृत्यु होती है।।५९।। इसकी शान्ति के लिए 'शिवसहस्रनाम' का पाठ और 'महामृत्युञ्जय' का जप करे तो सब उपद्रवों का नाश होता है।।६०।।

अथ शनिभुक्तिमासाः १६ दिना० ९ तत्फलम्

केतोरंतर्गते मंदे स्वदशायां तु पीडनम् ।। बंधोः क्लेशे मनस्तापश्चतुपाज्जीवलाभकृत् ।।६१।।
राजकार्यकलापेन धननाशं महद्भयम् ।। स्थानाच्च्युतिः प्रवासश्च मार्गे चौरभयं भवेत् ।।६२।।
आलस्यं मनसो हानिश्चाष्टमे व्ययराशिगे ।। मीनत्रिकोणगे मंदे तुलायां स्वर्क्षगेपि वा ।।६३।।
केंद्रत्रिकोणलाभे वा दुश्चिक्ये वा शुभांशके ।। शुभदृष्टिसमाप्तौ च सर्वकार्यार्थसाधनम् ।।६४।।
स्वप्रभोश्च महत्सौख्यं भ्रमणं रणलाभगम् ।। स्वग्रामे सुखसंपत्तिः स्ववर्गे राजदर्शनम् ।।६५।।
दायेशात्षष्ठरिःफे वा अष्टमे पापसंयुते । देहतापो मनस्तापः कार्ये विघ्नो महद्भयम् ।।६६।।
आलस्यं मानहानिश्च पितृमात्रोर्विनाशनम् ।। द्वितीयद्यूननाथे तु ह्यपमृत्युभयं भवेत् ।।६७।।
तद्दोषपरिहारार्थं तिलहोमं च कारयेत् ।। कृष्णां गां महिषीं दद्यादायुरारोग्यवृद्धिदाम् ।।६८।।

शनि का अन्तर मास १६ तथा दिन ९ फल

केतु की दशा में शनि का अन्तर हो तो पीड़ा, बंधन, क्लेश, संताप, पशुहानि होती है।।६१।। राज कार्य के कारण धन हानि, महान् भय, स्थानभ्रंश, परदेश में वास, यात्रा में चोरों का भय।।६२।। आलस्य, चिन्ता हो। यदि शनि ८।१२ भाव में मीन राशि के त्रिकोणभाव में या तुलाराशि में अथवा स्वराशि में हो।।६३।। केन्द्र, त्रिकोण, लाभभाव में या तीसरे भाव में शुभग्रह के नवांश में हो, शुभदृष्टि हो तो सम्पूर्ण कार्य तथा मनोरथ सिद्ध होते हैं।।६४।। अपने स्वामी द्वारा महान् सुख, भ्रमण तथा रण में लाभ होता है, अपने ग्राम में सुख सम्पत्ति प्राप्त हो और यदि शनि अपने वर्ग में हो तो राजदर्शन हो।६५।। केतु से यदि शनि ६।८।१२ भाव में पापग्रह युक्त हो तो देह में ज्वर, मन में अशान्ति, कार्य में विघ्न तथा महान् भय होता है।।६६।। आलस्य, मानहानि, माता पिता का निधन होता है। और २।७ का स्वामी हो तो अपमृत्यु का भय होता है।।६७।। इसकी शान्त के लिए 'तिल-होम' तथा काली गौ का दान करे तो आयु तथा आरोग्यता होती है।।६८।।

अथ बुधभुक्तिमासाः ११ दि० २७ तत्फलम्

केतोरंतर्गते सौम्ये केंद्रलाभत्रिकोणगे ।। स्वोच्चे स्वक्षेत्रसंयुक्ते राज्यलाभो महत्सुखम् ।।६९।। सत्कथाश्रवणं दानं धर्मसिद्धिः सुखावहा ।। भूलाभः पुत्रलाभश्च शुभगोष्ठीधनागमः ।।७०।। अयत्नाद्धर्मलब्धिश्च विवाहश्च भविष्यति ।। गृहे शुभकरं चैव वस्त्राभरणभूषणम् ।।७१।। भाग्यकर्माधिपैर्युक्ते भाग्यवृद्धिः सुखावहा ।। विद्वद्गोष्ठीकलापेन संलापो भूषणादिकम् ।।७२।। षष्ठाष्टमव्यये सौम्ये मंदाराहियुतेक्षिते ।। विरोधराजकार्याणि परगेहनिवासनम् ।।७३।। वाहनांबरपश्वादिधनधान्यादिनाशकृत्।। भुक्त्यादौ शोभनं प्रोक्तं मध्ये सौख्यं धनागमम् ।।७४।।

बुध का अन्तर मा० ११ दि० २७ फल

केतु की महादशा में बुध का अन्तर हो। बुध लग्न से केन्द्र, लाभ, त्रिकोण में उच्चराशि का या स्वगृही हो तो राजा से लाभ और महान् सुख होता है।।६९।। इसके अन्तर में सत्कथा श्रवण, दान, धर्म, तथा सुख और भूमिलाभ, पुत्र लाभ, मित्रगोष्ठी तथा धन प्राप्ति होती है।।७०।। प्रायः बिना परिश्रम ही धर्मलब्धि, विवाह तथा घर में वस्त्राभरण, मंगल होता है।।७१।। ९।१० भाव का स्वामी भी युक्त हो तो भाग्य की वृद्धि हो, विद्वद्गोष्ठी का आनन्द रहे, भूषण आदि की प्राप्ति हो।।७२।। यदि बुध ६।८।१२ भाव में मंगल, शनि, राहु युक्त हो तो राजकार्य में विरोध, परगृह में निवास होता है।।७३।। वाहन, वस्त्र, पशु, धन, सम्पत्ति आदि का नाश होता है। अन्तरके आदिमें शुभ तथा मध्यमें सुख और धनप्राप्ति हो।।७४।।

अंते क्लेशकरं चैव दारपुत्रादिपीडनम् ।। दायेशात्केंद्रगे सौम्ये त्रिकोणे लाभगेपि वा ।।७५।। देहारोग्यं महाँलाभः पुत्रकल्याणवैभवम् ।। भोजनांबरपश्वादिव्यवसायेऽधिकं फलम् ।।७६।। दायेशात्षष्ठरंध्रे वा व्यये वा बलवर्जिते ।। तद्भुक्त्यादौ महाक्लेशो दारपुत्रादिपीडनम् ।।७७।। राजभीतिकरं चैव मध्ये तीर्थकरं भवेत् ।। द्वितीयद्यूननाथे तु ह्यपमृत्युर्भविष्यति ।। तद्दोषपरिहारार्थं विष्णुसाहस्रकं जपेत् ।।७८।।

इति श्रीबृहत्पाराशरहोराशास्त्रे पूर्वखण्डे विं० केत्वंतर्दशाफलकथनं नाम चत्वारिंशोऽध्यायः ।।४०।।

अन्तर के अन्त में दुःख, स्त्री पुत्र को पीड़ा हो। केतु से बुध केन्द्र में त्रिकोण में या लाभभाव में हो तो।।७५।। आरोग्यता, महान् लाभ, पुत्र कल्याण, वैभव, उत्तम भोजन, वस्त्रादि, गौ आदि पशु, तथा लाभकारी व्यापार होता है।।७६।। केतु से बुध ६।८।१२ में बलहीन हो तो उसके अन्तर के आदि में महाक्लेश, स्त्री, पुत्र को पीड़ा।।७७।। राजभय होता है, मध्य में तीर्थयात्रा होती है। २।७ का स्वामी बुध हो तो अपमृत्यु होती है। इसकी शान्ति के लिए 'विष्णुसहस्रनाम' स्तोत्र का पाठ करे।।७८।।

इति श्रीबृ० पा० हो० शा० पू० भा० प्र० केत्वन्तरदशाफलकथनंनाम चत्वारिंशोऽध्यायः ।।४०।।

अथ शुक्रदशायां शुक्रभुक्ति मासाः ४० दिना०० तत्फलम्

भृगोरंतर्गते शुक्रे लग्नात्केंद्रत्रिकोणगे ।। लाभे वा बलसंयुक्ते योगप्राबल्यमादिशेत् ।।१।। विप्रमूलाद्धनप्राप्तिर्गोमहिष्यादिलाभकृत् ।। पुत्रोत्सवादिसंतोषं गृहे कल्याणसंभवम् ।।२।। सन्मानं राजसन्मानं राज्यलाभो महत्सुखम् ।। स्वोच्चे वा स्वर्क्षगे वापि तुंगांशे स्वांशगेपि वा ।।३।। नूतनालयनिर्माणं नित्यं मिष्टान्नभोजनम् ।। कलत्रपुत्रविभवं मित्रसंयुक्तभोजनम् ।।४।। अन्नदानं प्रियं नित्यं दानधर्मादिसंग्रहः ।। महाराजप्रसादेन वाहनांबरभूषणम् ।।५।। व्यवसायात्फलाधिक्यं चतुष्पाज्जीवलाभकृत् ।। प्रयाणं पश्चिमे भागे वाहनांबरलाभकृत् ।।६।। लग्नाद्युपचये शुक्रे शुभदृष्टियुतेक्षिते ।। मित्रांशे तुंगलाभेशयोगकारकसंयुते ।।७।। राज्यलाभो महोत्साहो राजप्रीतिः शुभावहा ।। गृहे कल्याणसंपत्तिर्दारपुत्रादिवर्द्धनम् ।।८।। षष्ठाष्टमव्यये शुक्रे पापयुक्तेऽथ वीक्षिते ।। चौरादिव्रणभीतिश्च सर्वत्र जनपीडनम् ।।९।। राजद्वारे जनद्वेष इष्टबंधुविनाशनम् ।। दारपुत्रादिपीडा च सर्वत्र जनपीडनम् ।।१०।। द्वितीयद्यूननाथे तु स्थिते चेन्मरणं भवेत् ।। शुक्रे दुर्गाजपं कुर्याद्धेनुदानं च कारयेत् ।।११।।

शुक्रदशा में शुक्रान्तर वर्ष ३ मा० ४ दि. ० फल

शुक्र की महादशा में शुक्र का अन्तर हो। शुक्र लग्न से केन्द्र, त्रिकोण में या लाभ में बलवान् होकर स्थित हो तो प्रवल योग होता है।।१।। ब्राह्मण के द्वारा धन प्राप्ति हो, गौ आदि पशु का लाभ तथा पुत्रोत्सव आदि सन्तोष हो, घर में सुख शान्ति हो।।२।। समाज में सन्मान, राजा से मान तथा लाभ एवं महान् सुख होता है। यदि शुक्र अपने उच्चस्थान में स्वराशि का, उच्चांश में अपने नवांश में हो।।३।। तो नया मकान बने तथा नित्य उत्तम भोजन, स्त्री पुत्र का वैभव इष्टमित्रों सहित भोजन (मित्रगोष्ठी)।।४।। अन्नदान, दान-धर्म आदि का संग्रह होता है। राजकृपा से वाहनादि प्राप्त होता हैं।।५।। व्यापार से अधिक लाभ, चौपाया जीव का लाभ तथा पश्चिम दिशा की यात्रा से भी वाहनादि का लाभ होता है।।६।। लग्नादि केन्द्र में शुभदृष्टियुक्त शुक्र हो या मित्र नवांश में उच्च में तथा लाभेश योग हो या कारकेश का योग हो तो।।७।। राजा से लाभ, महान् उत्साह, राजप्रीति, घर में सुख शान्ति, स्त्री पुत्र की वृद्धि होती है।।८।। शुक्र यदि ६।८।१२ भाव में पापयुक्त या दृष्ट हो तो चोर, सर्प, घाव आदि से भय तथा जनपीड़ा होती है।।९।। राजद्वार में पराजय, इष्ट बन्धुओं से द्वेष तथा हानि, स्त्री पुत्र आदि को पीडा, प्रायः समाज में निन्दा होती है।।१०।। शुक्र २।७ का स्वामी हो तो मृत्यु होती है। इसकी शान्ति के लिये दुर्गा मन्त्र जप तथा गौदान करना चाहिए।।११।।

अथ रविभुक्तिमासाः १२ दिना . ० तत्फलम्

शुक्रस्यांतर्गते सूर्ये संतापं राजविड्रुजम् ।। दायादिकलहं चैव व्यवहारमथापि वा ।।१२।। स्वोच्चे स्वक्षेत्रगे सूर्ये मित्रर्क्षे केंद्रकोणगे ।। दायेशाच्छुभभावे वा लाभे वा धनगेऽपि वा ।।१३।। तद्भुक्तौ धनलाभः स्याद्राज्यस्त्रीधनसंपदः ।। स्वप्रभोश्च महत्सौख्यमिष्टबंधोः समागमः ।।१४।। पितृमात्रोः सुखप्राप्तिं भ्रातृलाभं सुखावहम् ।। सत्कीर्तिं सुखसौभाग्यं पुत्रलाभं च

विंदति ।।१५।। षष्ठाष्टमव्यये सूर्ये दायेशाद्द्वादशे तथा ।। नीचे वा पापवर्गस्थे देहतापं मनोरुजम् ।।१६।।

शुक्र दशा में सूर्यान्तर मा० १२ फल

शुक्र की महादशा में सूर्य का अन्तर हो, सूर्य लग्न से केन्द्र, त्रिकोण में अथवा शुक्र से शुभस्थान में लाभ, धन भावों में हो, उच्च राशि, स्वगृही या मित्र राशि में हो तो धनलाभ, ऐश्वर्य, स्त्री, धन सम्पत्ति, स्वामी से सुख प्राप्ति, इष्ट बन्धु का समागम, माता पिता को सुख प्राप्ति, भ्राता का लाभ, सत्कीर्ति, सुख, सौभाग्य तथा पुत्र लाभ होता है।।१२।।१३।।१४।। शुभ योग तथा पापयोग रहित सूर्य की दशा संताप, राजविग्रह, रोग, परिवार में कलह, व्यापार में साधारण लाभ करती है।।१५।। सूर्य लग्न से ६।८।१२ में या शुक्र से १२ वें नीच अथवा पापवर्ग में हो तो ज्वर, चिन्ता होती है।।१६।।

स्वजनात्परिसंक्लेशो नित्यं निष्ठुरभाषणम् ।। पितृपीडां बंधुहानी राजद्वारे विरोधकृत् ।।१७।। व्रणपीडाहिबाधा च स्वर्क्षगे च भयं तथा ।। नानारोगभयं चैव गृहक्षेत्रादिनाशनम् ।।१८।। सप्तमाधिपदोषेण ग्रहबाधा भविष्यति ।। तद्दोषपरिहारार्थं सूर्यप्रीतिं च कारयेत्।।१९।।

स्वजनों से क्लेश, नित्य लड़ाई झगड़ा, पिता की पीड़ा, बन्धु की हानि, राजद्वार में विरोध होता है।।१७।। घाव जनित पीड़ा, सर्प बाधा तथा भय होता है। नानारोग से भय, मकान, भूमि का नाश होता है।।१८।। सूर्य यदि सप्तमेश हो तो ग्रह बाधा होती है। इसकी शान्ति के लिये सूर्य का दान, जप आदि करना चाहिए।।१९।।

अथ चन्द्रभुक्तिमासाः २० दिना ०० तत्फलम्

शुक्रस्यांतर्गते चंद्रे केंद्रलाभत्रिकोणगे ।। स्वोच्चे स्वक्षेत्रगे चैव भाग्यकर्मेशसंयुते ।।२०।।
शुभयुक्ते पूर्णचंद्रे राज्यनाथेन संयुते ।। तद्भुक्तौ वाहनाधिक्येनापत्येन महत्सुखम् ।।२१।।
महाराजप्रसादेन गजांतैश्वर्यमादिशेत् ।। महानदीस्नानपुण्यं देवब्राह्मणपूजनम् ।।२२।।
गीतवाद्यप्रसंगादिविद्वज्जनविभूषणम् ।। गोमहिष्यादिवृद्धिश्च व्यवसायेऽधिकं फलम् ।।२३।।
भौजनांबरसौख्यं च बंधुसंयुक्तभोजनम् ।। नीचे वास्तंगते वापि षष्ठाष्टव्ययराशिगे ।।२४।।

चन्द्रमा का अन्तर मा० २० फल

शुक्र की महादशा में चन्द्रमा का अन्तर हो, चन्द्रमा केन्द्र, लाभ, त्रिकोण में, उच्च राशि या स्वगृही अथवा ९।१० के स्वामी से युक्त हो।२०।। शुभग्रह युक्त पूर्ण चन्द्र हो, अथवा कारक ग्रह से युक्त हो तो बहुत सवारियाँ तथा संतानों से बहुत सुख होता है।।२१।। राजकृपा से हाथी पर्यन्त ऐश्वर्य हो। गंगा आदि नदी का स्थान, देव ब्राह्मण पूजा,।।२२।। गानवाद्य का प्रसंग, विद्वद्जन गोष्ठी होती हैं। गौ आदि पशु की वृद्धि, व्यापार में लाभ अधिक होता है।।२३।। उत्तम भोग पदार्थ, मित्र गोष्ठी होती रहती है। चन्द्रमा यदि नीच का अस्त होकर ६।८।१२ भाव में हो।।२४।।

दायेशात्षष्ठगे वापि रंध्रे वा व्ययराशिगे ।। तत्काले धननाशः स्यात्संचरेत् महद्भयम् ।।२५।।
देहायासो मनस्तापो राजद्वारे विरोधकृत् ।। विदेशगमनं चैव तीर्थयात्रादिकं फलम् ।।२६।।
दारपुत्रादिपीडा च आत्मबंधुवियोगकृत् ।। दायेशात्केंद्रलाभस्थे त्रिकोणे व्ययगेपि वा ।।२७।।
राजप्रीतिकरं चैव देशग्रामाधिपत्यता ।। धैर्यं यशः सुखं कीर्तिर्वाहनांबरभूषणम् ।।२८।।
कूपारामतडागादिनिर्माणं धनसंग्रहः ।। भुक्त्यादौ देहसौख्यं स्यादंते क्लेशकरं भवेत् ।।२९।।

शुक्र से ६।८।१२ में हो तो अन्तर में धन नाश, भ्रमण, महान् भय होता है।।२५।। देह, दुःखी, मन चिन्तित, राजद्वार में विरोध, विदेश यात्रा तथा तीर्थ यात्रा होती है।।२६।। स्त्री पुत्र आदि को पीड़ा, बन्धु वियोग होता है। शुक्र से चन्द्रमा केन्द्र, त्रिकोण, लाभ या व्यय भाव में हो।।२७।। तो राजा की प्रसन्नता, देश या ग्राम का अधिकार, धैर्य, कीर्ति, सुख, वाहन आदि प्राप्त होते हैं।।२८।। कूप, तड़ाग, बागीचा आदि निर्माण होता है। धन का संग्रह होता है। अन्तर के आदि में सुख, अन्त में क्लेश होता है।।२९।।

अथ कुजभुक्तिमासाः १४ दिना० ० तत्फलम्

शुक्रस्यांतर्गते भौमे लग्नात्केंद्रत्रिकोणगे स्वोच्चे वा स्वर्क्षगे भौमे लाभे वा बलसंयुते ।।३०।।
लग्नाधिपेन संयुक्ते कर्मभाग्येन संयुते ।। तद्भुक्तौ राजयोगादिसंपदं शुभशोभनम् ।।३१।।
वस्त्राभरणभूम्यादेरिष्टसिद्धिः सुखावहा ।। षष्ठाष्टमव्यये वापि दायेशाद्वा तथैव च ।।३२।।
शीतज्वरादिपीडा च पितृमातृभयावहा ।। ज्वराद्यधिकरोगाश्च स्थानभ्रंशो मनोरुजा ।।३३।।
स्वबंधुजनहानिश्च कलहो राजविग्रहम् ।। राजद्वारजनद्वेषो धनधान्यव्ययोधिकम् ।।३४।।
व्यवसायात्फलं नेष्टं ग्रामभूम्यादिहानिकृत् ।। द्वितीयद्यूननाथे तु देहबाधा भविष्यति ।।३५।।

मंगल का अंतर मा० १४ दि. ० फल

शुक्र की महादशा में मंगल का अन्तर हो। मंगल लग्न से केन्द्र, त्रिकोण में स्वोच्च या स्वराशि का हो या बलवान होकर लाभ में हो।३०।। अथवा लग्नेश युक्त हो या ९।१० के स्वामी से युक्त हो तो अन्तर में राजयोग के समान सम्पत्ति और शुभ है।।३१।। उत्तम वस्त्रादि से इष्ट सिद्धि और शुभ होता है। लग्न से या शुक्र से ६।८।१२ भाव में।।३२।। हो तो शीत ज्वर आदि पीड़ा, माता पिता को भय तथा ज्वर आदि रोग, स्थानभ्रंश, मन में चिन्ता, बन्धु हानि।।३३।। कलहादि, राज से विरोध, राजद्वार के जन से विरोध, अधिक खर्च,।।३४।। व्यापार में हानि, ग्राम भूमि की हानि होती है। यदि मंगल २।७ का स्वामी हो तो देहबाधा होती है।।३५।।

अथ राहुभुक्तिमासाः ३६ दिना० ० तत्फलम्

शुक्रस्यांतर्गते राहौ केंद्रलाभत्रिकोणगे ।। स्वोच्चे वा शुभसंदृष्टे योगकारकसंयुते ।।३६।। तद्भुक्तौ बहुसौख्यं च धनधान्यादिलाभकृत् ।। इष्टबंधुसमाकीर्णं भोजनांबरलाभगम् ।।३७।। यातुः कार्यार्थसिद्धिः स्यात्पशुक्षेत्रादिसंभवः ।। लग्नाद्युपचये राहौ तद्भुक्तिः सुखदा भवेत् ।।३८।।

राहु का अन्तर मास ३६ दिन ० फल

शुक्र की महादशा में राहु का अन्तर हो। राहु लग्न से केन्द्र, लाभ, त्रिकोण में हो, उच्चराशि में,

शुभ दृष्ट अथवा कारकग्रह से युक्त हो।।३६।। तो अंतर में बहुत सुख, धन सम्पत्ति का लाभ, इष्ट मित्रों से युक्त, उत्तम भोगों का लाभ हो।।३७।। यदि यात्रा करे तो कार्य तथा धन की सिद्धि हो, पशु तथा भूमि की प्राप्ति होती है। यदि राहु केन्द्र में हो तो अन्तर शुभ होता है।।३८।।

शत्रुनाशो महोत्साहो राजप्रीतिकरी शुभा ।। भुक्त्यादौ शरमासांश्च अंते ज्वरमजीर्णकृत् ।।३९।। कार्ये विघ्नमवाप्नोति संचरं च मनोव्यथाम् ।। परं सुखं च सौभाग्यं महानिव समश्नुते ।।४०।। नैर्ऋतीं दिशमाश्रित्य प्रयाणं प्रभुदर्शनम् ।। यातुः कार्यार्थसिद्धिः स्यात्स्वदेशे पुनरेष्यति ।।४१।। उपकारो ब्राह्मणानां तीर्थयात्राफलं भवेत् ।। दायेशाद्रिपुरंध्रस्थे व्ययेवापापसंयुते ।।४२।। अशुभं लभते कर्म पितृमातृजनावधि ।। सर्वत्र जनविद्वेषं नानारूपादिसंभवम् ।।४३।। द्वितीये सप्तमे वापि देहालस्यं विनिर्दिशेत् ।। तद्दोषपरिहारार्थं मृत्युंजयजपं चरेत् ।।४४।।

शत्रु का नाश, महान् उत्साह, राजा से प्रीति होती है। आरम्भ में ६ महीने तक शुभ है। अन्त में ६ मास ज्वर और अजीर्ण की बिमारी हो।।३९।। कार्य में विघ्न, व्यर्थ की यात्रा, मन में चिन्ता होती है। शुभ योग में परम सुख और सौभाग्य होता है।।४०।। नैर्ऋत्य दिशा की यात्रा, बड़े आदमी से मिलाप तथा मनोरथ सिद्ध करके पुनः देश में आना होता है।।४१।। ब्राह्मणों का उपकार, तीर्थयात्रा होती है। शुक्र से राहु ६।८।१२ स्थानों में पापयुक्त हो।।४२।। तो अशुभ होता है। सपूर्ण परिवार तथा समाज में नेष्ट फल होता है।।४३।। राहु यदि २।७ में हो तो आलस्य और कार्य हानि होती है। इसकी शान्ति के लिये 'मृत्यञ्जय' जप होना चाहिए।।४४।।

अथ गुरुभुक्तिमासाः ३२ दिना० ० तत्फलम्

शुक्रस्यांतर्गते जीवे स्वोच्चे स्वक्षेत्रकेन्द्रगे ।। दायेशाच्छुभराशिस्थे भाग्ये वा कर्मराशिगे ।।४५।। नष्टराज्याद्धनप्राप्तिमिष्टार्थाम्बरसंपदम् ।। मित्रप्रभोश्चसन्मानंधनधान्यपरां गतिम् ।।४६।। राजसन्मानकीर्तिं च अश्वांदोलादिलाभकृत् ।। विद्वत्प्रभुसमाकीर्णं शास्त्रापार परिश्रमम् ।।४७।। पुत्रोत्सवादिसंतोषमिष्टबंधुसमागमम् ।। पितृमातृसुखप्राप्तिं भ्रातृपुत्रादि-सौख्यकृत् ।।४८।। दायेशात्षष्ठराशिस्थे व्यये वा पापसंयुते ।। राजचौरादिपीडा च देहपीडा भविष्यति ।।४९।। आत्मभुग्बंधुकष्टः स्यात्कलहेन मनोव्यथा ।। स्थानच्युतिं प्रवासंच नानारोगं समाप्नुयात् ।।५०।। द्वितीयसप्तमाधीशे देहबाधा भविष्यति ।। तद्दोषपरिहारार्थं महामृत्युंजयं चरेत् ।।५१।।

गुरु का अन्तर मा० ३२ दि.० फल

शुक्र की महादशा में बृहस्पति का अन्तर हो, बृहस्पति लग्न से या शुक्र से उच्चराशि में या स्वगृही होकर केन्द्र में, त्रिकोण में, भाग्य या दशम में हो।।४५।। तो नष्ट हुआ ऐश्वर्य प्राप्त होता है। मनोरथ पूर्ति तथा सम्पत्ति, मित्र तथा प्रभु से सम्मान, धन सम्पत्ति प्राप्त होती है।।४६।। राजा से सम्मान और कीर्ति तथा सवारी प्राप्त होती है। विद्वद्जन-गोष्ठी होती रहती है। शास्त्र में अपार परिश्रम होता है।।४७।। पुत्रोत्सव आदि सन्तोष, इष्ट बन्धु का

समागम होता है। माता पिता को सुख तथा भ्राता को पुत्र का सुख होता है।।४८।। शुक्र से गुरु ६।१२ भाव में पापयुक्त हो तो राज, चोर आदि से पीड़ा तथा देह पीड़ा होती है।।४९।। अपने पास रहनेवाले बन्धु को कष्ट होता है। पारिवारिक कलह से मन में चिन्ता रहती है। स्थान हानि, प्रवास तथा अनेक रोग होते हैं।।५०।। गुरु यदि २।७ का स्वामी हो तो देह बाधा होती है। इसकी शान्ति के लिये 'महामृत्युञ्जय' का जप करना चाहिए।।५१।।

अथ शनिभुक्तिमासाः ३८ दिना० ० तत्फलम्

शुक्रस्यांतर्गते मंदे स्वोच्चे तु परमोच्चगे ।। स्वर्क्षकेन्द्रत्रिकोणस्थे तुंगांशे स्वांशगेपि वा ।।५२।। तद्‌भुक्तौ बहुसौख्यं स्यादिष्टबंधुसमन्विते ।। सन्मानं बहुसन्मानं पुत्रिकागमनं शुभम् ।।५३।। पुण्यतीर्थफलावाप्तिर्दानधर्मादिपुण्यकृत् ।। स्वप्रभोश्च विशेषः स्यादति वा क्लेशभाग्भवेत् ।।५४।। देहालस्यमवाप्नोति आदायादधिकव्ययम् ।। षष्ठाष्टमव्यये मंदे दायेशाद्वा तथैव च ।।५५।। भुक्त्यादौ देहआरोग्यं पितृमातृजनावधि ।। दारपुत्रादिपीडा च संहारे देहविभ्रमम् ।।५६।। व्यवसायात्फलं नष्टं गोमहिष्यादिहानिकृत् ।। द्वितीयसप्तमाधीशे देहबाधा भविष्यति ।।५७।। तद्दोषपरिहारार्थं तिलहोमं च कारयेत् ।।५८।। यो गां ददाति भृगुजस्य दशाविपाके सौख्यं सदा नृपतितुल्य उपैति लक्ष्मीम् ।। श्रेयो यशः सुविजयो बहुराज्यलाभः श्रीसूर्यभांशकजनिर्बहुभाग्यभाक् स्यात् ।।५९।।

शनि का अन्तर मा० ३८ दि. ० फल

शुक्र की दशा में शनि का अन्तर हो, शनि लग्न से केन्द्र या त्रिकोण में, स्वराशि, उच्चराशि, परमोच्च में या अपने अंश में हो तो।।५२।। अन्तर में बहुत सुख, इष्ट बन्धु से मिलाप, सम्मान, समाज में प्रतिष्ठा, परिवार में कन्या का जन्म होता है।।५३।। पवित्र तीर्थ यात्रा, दान धर्म आदि पुण्य कार्य आदि शुभ फल के बाद दशा के उत्तरार्ध में अपने स्वामी से वैमनस्य अथवा क्लेश हो।।५४।। देह में आलस्य, आमदनी से अधिक खर्च होता है। शनि लग्न से या शुक्र से ६।८।१२ में हो।।५५।। तो अन्तर के आदि में परिवार में आरोग्यता, उत्तरार्ध में स्त्रीपुत्र को पीड़ा और अपने शरीर में विभ्रम (चक्कर आना) होता है।।५६।। व्यापार से लाभ नष्ट, पशु आदि की हानि होती है। यदि शनि २।७ का स्वामी हो तो देह बाधा होती है।।५७।। इसकी शान्ति के लिये तिल का हवन करना चाहिए।।५८।। जो मनुष्य शुक्र दशा में शनि के अन्तर में गौ का दान करता है वह राजा के समान सुख और लक्ष्मी प्राप्त करता है। कल्याण, यश, विजय तथा राज्य लाभ होता है।।५९।।

अथ बुधभुक्तिमासाः ३४ दिना ० तत्फलम्

शुक्रस्यांतर्गते सौम्ये केंद्रे लाभत्रिकोणगे ।। स्वोच्चे वा स्वर्क्षगे वापि राजप्रीतिकरं शुभम् ।।६०।। सौभाग्यं पुत्रलाभं च सन्मार्गे धनलाभकृत् ।। पुराणधर्मश्रवणं श्रृंगारिजनसंगमम् ।।६१।। इष्टबंधुजनाकीर्णं विप्रप्रभुसमागमम् ।। स्वप्रभोश्च महत्सौख्यं नित्यं मिष्टान्नभोजनम् ।।६२।। लग्नेशाभ्यांषष्ठरंध्रे व्यये वा बलवर्जिते ।। पापदृष्टौ तथा युक्ते चतुष्पाज्जीवहानिकृत् ।।६३।।अन्यालयनिवासश्च मनोवैकल्यसंभवः ।। कालातिक्रमभुक्त्या च ऋग्द्रव्यात्पित्र्यमेव च

॥६४॥ भुक्त्यादौ शोभनं प्रोक्तं मध्ये सौख्यं विनिर्दिशेत् ॥ अंते क्लेशकरं चैव शीतवातज्वरादिकम्॥६५॥ सप्तमाधीशदोषेण देहपीडा भविष्यति ॥ तद्दोषपरिहारार्थं विष्णुसाहस्रकं जपेत् ॥६६॥

बुध का अन्तर मा० ३४ दि. ० फल

शुक्र की महादशा में बुध का अन्तर हो, बुध लग्न से केन्द्र, त्रिकोण, लाभ में, उच्चराशि का, स्वगृही हो तो राजा की प्रीति प्राप्त होती है और शुभ होता है॥६०॥ सौभाग्य, पुत्र लाभ तथा सन्मार्ग से धन का लाभ होता है। पुराण, धर्म श्रवण, कविजन गोष्ठी का संगम होता है॥६१॥ इष्ट बन्धु से मिलाप, ब्राह्मण तथा स्वामी का समागम होता है। अपने स्वामी से महान् सुख तथा नित्य मिष्टान्न भोजन होता है॥६२॥ लग्न तथा लग्नेश से बुध ६।८।१२ भाव में बलरहित हो तथा पापग्रह दृष्ट हो या युक्त हो तो गौ आदि की हानि होती है॥६३॥ दूसरे के आश्रित रहना, मन में विकलता, अन्तर के मध्य में पितृ कार्य में धन का खर्च होता है॥६४॥ अन्तर का आदि और मध्य भाग सुखकर तथा अन्त में क्लेश और शीत, वात, ज्वर होता है॥६५॥ बुध सप्तमेश हो तो देह पीड़ा होती है। इसकी शान्ति के लिये विष्णुसहस्रनाम का पाठ होना चाहिए॥६६॥

अथ केतुभुक्तिमासाः १४ दिना० तत्फलम्

शुक्रस्यांतर्गते केतौ स्वोच्चे वा स्वर्क्षगेपि वा ॥ योगकारकसंबंधे स्थानवीर्यसमन्विते ॥६७॥ भुक्त्यादौ शुभमाधिक्यान्नित्यं मिष्टान्नभोजनम् ॥ व्यवसायात्फलाधिक्यं गोमहिष्यादिवृद्धिकृत् ॥६८॥ धनधान्यसमृद्धिश्च संग्रामे विजयो भवेत् ॥ भुक्त्यंते हि सुखं चैव अंते सुखकरं भवेत् ॥६९॥ मध्ये मध्ये महत्कष्टं पश्चादारोग्यमादिशेत् ॥ दायेशाद्रिपुरंध्रस्थे व्यये वा पापसंयुते ॥७०॥ चौराहिव्रणपीडा च वृद्धिनाशो महद्भयम् ॥ शिरोरुजं मनस्तापमकर्मकलहं तथा ॥७१॥ प्रमेहकर्म आरोग्यं नानामार्गे धनव्ययम् ॥ भार्या पुत्रविरोधश्च गमनं कार्यनाशनम् ॥७२॥ द्वितीयद्यूननाथे तु देहबाधा भविष्यति ॥ तद्दोषपरिहारार्थं मृत्युंजयजपं चरेत् ॥७३॥ छागदानं प्रकुर्वीत सर्वसंपत्प्रदायकम् ॥७४॥

इति श्रीबृहत्पाराशरहोराशास्त्रे पूर्वखण्डे विं० भृगोरंतर्दशाफलक० नाम एकचत्वारिंशोऽध्यायः ॥४१॥

केतु का अन्तर मा० १४ दि. ० फल

शुक्र की महादशा में केतु का अन्तर हो, केतु उच्च का स्वगृही या योगकारक ग्रह से सम्वन्ध युक्त तथा स्थान बलयुक्त हो॥६७॥ तो अन्तर के आदि में अधिक शुभ होता है। नित्य मिष्टान्न भोजन, व्यापार से अधिक लाभ, गौ आदि का लाभ होता है॥६८॥ धन सम्पत्ति की वृद्धि, संग्राम में विजय तथा समस्त अन्तर में सुख रहता है॥६९॥ किन्तु बीच २ में कष्ट, रोग भी होता है। परिणाम आरोग्यदायक होता है। शुक्र से केतु ६।८।१२ में पापग्रह युक्त हो॥७०॥ तो चोर, सर्प, घाव आदि से पीड़ा होती है। सम्पत्ति का नाश, महान् भय,

शिरोवेदना, चिन्ता, कलह तथा बेकारी होती है।।७१।। प्रमेह आदि बीमारी, धन का अपव्यय, भार्या पुत्र से विरोध, यात्रा, कार्य हानि होती है।।७२।। केतु यदि २।७ स्थान में हो तो देह बाधा होती है। इसकी शान्ति के लिये मृत्युञ्जय जप ।।७३।। तथा छाग दान करे तो सब सम्पत्ति प्राप्त होती है।।७४।।

इति श्रीबृ० पा० हो० शा० पू० भा० प्र० विंशो० भृगोरंतर्दशाफल कथनं नाम एकचत्वारिंशोऽध्यायः ।।४१।।

अथोपदशाप्रकरणमाह

स्वांतर्दशाब्दवृंदं च हन्यात्स्वाब्दैर्ग्रहस्य च ।।विंशोत्तरशतेनाप्तं घस्राः शेषं कलादिकम्।।१।।

प्रत्यन्तरदशाध्याय

ग्रह के अन्तरदशा के वर्ष, मास, दिन के एकरस (अर्थात् दिनसंख्या) करके जिस ग्रह का अन्तर निकालना हो उसको वर्ष संख्या से गुणा करके १२० का भाग देकर दिन, घटी, पल अंक लेकर दिन में ३० का भाग देकर मास प्राप्त करे।।१।।

उदाहरण-यथा, सूर्य महादशा में सूर्य का अन्तर मा० ३ दि० १८ है। इसके दिन किये तो १०८ हुए। अब इसमें सूर्य का प्रत्यन्तर निकालना है, इसलिये सूर्य के वर्ष ६ की संख्या से गुणा किया तो ६४८ हुए। इसमें १२० का भाग किया तो लब्धि ५ तथा शेष ४८ रहे। घटी अंक लेना है, इसलिये ६० मे गुणा किया तो २८८० हुआ। पुनः १२० का भाग किया तो लब्धि २४ तथा शेष कुछ भी नहीं रहा। अतः सूर्य प्रत्यन्तर दशा ५ दिन २४ घटी हुई। इसमें चन्द्रमा का प्रयन्तर निकालने के लिये चन्द्रमा के वर्ष १० से १०८ को गुणा किया जायेगा और १२० का भाग करने से दिन आदि दशा होगी। इसी प्रकार मंगल आदि का प्रत्यन्तर निकालने के लिये सूर्य की अन्तर दशा के दिन १०८ को तत्तत् ग्रह के वर्ष संख्या से गुणा करना और १२० का भाग देना। तो तत्तत् ग्रह की प्रत्यन्तर दशा प्राप्त होगी।

प्रत्यन्तरदशा के चक्र

अथ सूर्यमध्येसूर्यव्यंतरम्

सू०	चं०	मं०	रा०	बृ०	श०	बु०	के०	शु०	ग्रहाः
०	०	०	०	०	०	०	०	०	मासाः
५	९	६	१६	१४	१७	१५	६	१८	दिनानि
२४	०	१८	१२	२४	६	१८	१८	०	घटयः
०	०	०	०	०	०	०	०	०	पलानि
०	०	०	०	०	०	०	०	०	विपलानि

अथ सूर्यमध्येचन्द्रव्यंतरम्

च०	मं०	रा०	बृ०	श०	बु०	के०	शु०	सू०	ग्रहाः
०	०	०	०	०	०	०	१	०	मासाः
१५	१०	२७	२४	२८	२५	१०	०	९	दिनानि
०	३०	०	०	३०	३०	३०	०	०	घटयः
०	०	०	०	०	०	०	०	०	पलानि
०	०	०	०	०	०	०	०	०	विपलानि

अथ सूर्यमध्ये भौमव्यंतरम्

मं०	रा०	बृ०	श०	बु०	के०	शु०	सू०	चं०	ग्रहाः
०	०	०	०	०	०	०	०	०	मासाः
७	१८	१६	१९	१७	७	२१	६	१०	दिनानि
२१	५४	४८	५७	५१	२१	०	१८	३०	घटयः
०	०	०	०	०	०	०	०	०	पलानि
०	०	०	०	०	०	०	०	०	विपलानि

अथ सूर्यमध्येराहुव्यंतरम्

रा०	बृ०	श०	बु०	के०	शु०	सू०	चं०	मं०	ग्रहाः
१	१	१	१	०	१	०	०	०	मासाः
१८	१३	२१	१५	१८	२४	१६	२७	१८	दिनानि
३६	१२	१८	५४	५४	०	१२	०	५४	घटयः
०	०	०	०	०	०	०	०	०	पलानि
०	०	०	०	०	०	०	०	०	विपलानि

अथ सूर्यमध्ये गुरुव्यंतरम्

बृ	श०	बु०	के०	शु०	सू०	चं०	मं०	रा०	ग्रहाः
१	१	१	०	१	०	०	०	१	मासाः
८	१५	१०	१६	१८	१४	२४	१६	१३	दिनानि
२४	३६	४८	४८	०	२४	०	४८	१२	घट्यः
०	०	०	०	०	०	०	०	०	पलानि
०	०	०	०	०	०	०	०	०	विपलानि

अथ सूर्यमध्ये शनिव्यंतरम्

श०	बु०	के०	शु०	सू०	चं०	मं०	रा०	बृ०	ग्रहाः
१	१	०	१	०	०	०	१	१	मासाः
२४	१८	१९	२७	१७	२८	१९	२१	१५	दिनानि
९	२७	५७	०	६	३०	५७	१८	३६	घट्यः
०	०	०	०	०	०	०	०	०	पलानि
०	०	०	०	०	०	०	०	०	विपलानि

अथ सूर्यमध्य बुधव्यंतरम्

बु०	के०	शु०	सू०	चं०	मं०	रा०	बृ०	श०	ग्रहाः
१	०	१	०	०	०	१	१	१	मासाः
१३	१७	२१	१५	२५	१७	१५	१०	१८	दिनानि
२१	५१	०	१८	३०	५१	५४	४८	२७	घट्यः
०	०	०	०	०	०	०	०	०	पलानि
०	०	०	०	०	०	०	०	०	विपलानि

अथ सूर्यमध्ये केतुव्यंतरम्

के०	शु०	सू०	चं०	मं०	रा०	बृ०	श०	बु०	ग्रहाः
०	०	०	०	०	०	०	०	०	मासाः
७	२१	६	१०	७	१८	१६	१९	१७	दिनानि
२१	०	१८	३०	२१	५४	४८	५७	५१	घट्यः
०	०	०	०	०	०	०	०	०	पलानि
०	०	०	०	०	०	०	०	०	विपलानि

अथ सूर्यमध्येभृगुव्यंतरम्									
शु०	सू०	चं०	मं०	रा०	बृ०	श०	बु०	के०	ग्रहाः
२	०	१	०	१	१	१	१	०	मासाः
०	१८	०	२१	२४	१८	२७	२१	२१	दिनानि
०	०	०	०	०	०	०	०	०	घटचः
०	०	०	०	०	०	०	०	०	पलानि
०	०	०	०	०	०	०	०	०	विपलानि

अथ चंद्रमध्ये चंद्रव्यंतरम्									
चं०	मं०	रा०	बृ०	श०	बु०	के०	शु०	सू०	ग्रहाः
०	०	१	१	१	१	०	१	०	मासाः
२५	१७	१५	१०	१७	१२	१७	२०	१५	दिनानि
०	३०	०	०	३०	३०	३०	०	०	घटचः
०	०	०	०	०	०	०	०	०	पलानि
०	०	०	०	०	०	०	०	०	विपलानि

अथ चंद्रमध्ये भौमव्यंतरम्									
मं०	रा०	बृ०	श०	बु०	के०	शु०	सू०	चं०	ग्रहाः
०	१	०	१	०	०	१	०	०	मासाः
१२	१	२८	३	२९	१२	५	१०	१७	दिनानि
१५	३०	०	१५	४५	१५	०	३०	३०	घटचः
०	०	०	०	०	०	०	०	०	पलानि
०	०	०	०	०	०	०	०	०	विपलानि

अथ चंद्रमध्ये राहुव्यंतरम्									
रा०	बृ०	श०	बु०	के०	शु०	सू०	चं०	मं०	ग्रहाः
२	२	२	२	१	३	०	१	१	मासाः
२१	१२	२५	१६	१	०	२७	१५	१	दिनानि
०	०	३०	३०	३०	०	०	०	३०	घटचः
०	०	०	०	०	०	०	०	०	पलानि
०	०	०	०	०	०	०	०	०	विपलानि

अथ चंद्रमध्ये गुरुव्यंतरम्

गु०	श०	बु०	के०	शु०	सू०	चं०	मं०	रा०	ग्रहाः
२	२	२	०	२	०	१	०	२	मासाः
४	१६	८	२८	२०	२४	१०	२८	१२	दिनानि
०	०	०	०	०	०	०	०	०	घटयः
०	०	०	०	०	०	०	०	०	पलानि
०	०	०	०	०	०	०	०	०	विपलानि

अथ चंद्रमध्ये शनिव्यंतरम्

श०	बु०	के०	शु०	सू०	चं०	मं०	रा०	बृ	ग्रहाः
३	२	१	३	०	१	१	२	२	मासाः
०	२०	३	५	२८	१७	३	२५	१६	दिनानि
१५	४५	१५	०	३०	३०	१५	३०	०	घटयः
०	०	०	०	०	०	०	०	०	पलानि
०	०	०	०	०	०	०	०	०	विपलानि

अथ चंद्रमध्ये बुधव्यंतरम्

बु०	के०	शु०	सू०	चं०	मं०	रा०	बृ०	श०	ग्रहाः
२	०	२	०	१	०	२	२	२	मासाः
१२	२९	२५	२५	१२	२९	१६	८	२०	दिनानि
१५	४५	०	३०	३०	४५	३०	०	४५	घटयः
०	०	०	०	०	०	०	०	०	पलानि
०	०	०	०	०	०	०	०	०	विपलानि

अथ चंद्रमध्ये केतुव्यंतरम्

के०	शु०	सू०	चं०	मं०	रा०	बृ०	श०	बु०	ग्रहाः
०	१	०	०	०	१	०	१	०	मासाः
१२	५	१०	१७	१२	१	२८	३	२९	दिनानि
१५	०	३०	३०	१५	३०	०	१५	४५	घटयः
०	०	०	०	०	०	०	०	०	पलानि
०	०	०	०	०	०	०	०	०	विपलानि

अथ चंद्रमध्ये भृगुव्यंतरम्

शु०	सू०	चं०	मं०	रा०	बृ०	श०	बु०	के०	ग्रहाः
३	१	१	१	३	२	३	२	१	मासाः
१०	०	२०	५	०	२०	५	२५	५	दिनानि
०	०	०	०	०	०	०	०	०	घटयः
०	०	०	०	०	०	०	०	०	पलानि
०	०	०	०	०	०	०	०	०	विपलानि

अथ चंद्रमध्ये सूर्यव्यंतरम्

सू०	चं०	मं०	रा०	बृ०	श०	बु०	के०	शु०	ग्रहाः
०	०	०	०	०	०	०	०	१	मासाः
९	१५	१०	२७	२४	२८	२५	१०	०	दिनानि
०	०	३०	०	०	३०	३०	३०	०	घटयः
०	०	०	०	०	०	०	०	०	पलानि
०	०	०	०	०	०	०	०	०	विपलानि

अथ भौममध्ये भौमव्यंतरम्

मं०	रा०	बृ०	श०	बु०	के०	शु०	र०	चं०	ग्रहाः
०	०	०	०	०	०	०	०	०	मासाः
८	२२	१९	२३	२०	८	२४	७	१२	दिनानि
३४	३	३६	१६	४९	३४	३०	२१	१५	घटयः
३०	०	०	३०	३०	३०	०	०	०	पलानि
०	०	०	०	०	०	०	०	०	विपलानि

अथ भौममध्ये राहुव्यंतरम्

रा०	बृ०	श०	बु०	के०	शु०	सू०	चं०	म०	ग्रहाः
१	१	१	१	०	२	०	१	०	मासाः
२६	२०	२९	२३	२२	३	१८	१	२२	दिनानि
४२	२४	५१	३३	३	०	५४	३०	३	घटयः
०	०	०	०	०	०	०	०	०	पलानि
०	०	०	०	०	०	०	०	०	विपलानि

अथ भौममध्ये गुरुव्यंतरम्

बृ०	श०	बु०	के०	शु०	सू०	चं०	मं०	रा०	ग्रहाः
१	१	१	०	१	०	०	०	१	मासाः
१४	२३	१७	१९	२६	१६	२८	१९	२०	दिनानि
४८	१२	३६	३६	०	४८	०	३६	२४	घटचः
०	०	०	०	०	०	०	०	०	पलानि
०	०	०	०	०	०	०	०	०	विपलानि

अथ भौममध्ये शनिव्यंतरम्

श०	बु०	के०	शु०	सू०	चं०	मं०	रा०	बृ०	ग्रहाः
२	१	०	२	०	१	०	१	१	मासाः
३	२६	२३	६	१९	३	२३	२९	२३	दिनानि
१०	३१	१६	३०	५७	१५	१६	५१	१२	घटचः
३०	३०	३०	०	०	०	३०	०	०	पलानि
०	०	०	०	०	०	०	०	०	विपलानि

अथ भौममध्ये बुधव्यंतरम्

बु०	के०	शु०	सू०	चं०	मं०	रा०	बृ०	श०	ग्रहाः
१	०	१	०	०	०	१	१	१	मासाः
२०	२०	२९	१७	२९	२०	२३	१७	२६	दिनानि
३४	४९	३०	५१	४५	४९	३३	३६	३१	घटचः
३०	३०	०	०	०	३०	०	०	३०	पलानि
०	०	०	०	०	०	०	०	०	विपलानि

अथ भौममध्ये केतुव्यंतरम्

के०	शु०	सू०	चं०	मं०	रा०	बृ०	श०	बु०	ग्रहाः
०	०	०	०	०	०	०	०	०	मासाः
८	२४	७	१२	८	२२	१९	२३	२०	दिनानि
३४	३०	२१	१५	३४	३	३६	१६	४९	घटचः
३०	०	०	०	३०	०	०	३०	३०	पलानि
०	०	०	०	०	०	०	०	०	विपलानि

अथ भौममध्ये भृगुव्यंतरम्

शु०	सू०	चं०	मं०	रा०	बृ०	श०	बु०	के०	ग्रहाः
२	०	१	०	२	१	२	१	०	मासाः
१०	२१	५	२४	३	२६	६	२९	२४	दिनानि
०	०	०	३०	०	०	३०	३०	३०	घट्यः
०	०	०	०	०	०	०	०	०	पलानि
०	०	०	०	०	०	०	०	०	विपलानि

अथ भौममध्ये सूर्यव्यंतरम्

सू०	चं०	मं०	रा०	बृ०	श०	बु०	के०	शु०	ग्रहाः
०	०	०	०	०	०	०	०	०	मासाः
६	१०	७	१८	१६	१९	१७	७	२१	दिनानि
१८	३०	२१	५४	४८	५७	५१	२१	०	घट्यः
०	०	०	०	०	०	०	०	०	पलानि
०	०	०	०	०	०	०	०	०	विपलानि

अथ भौममध्ये चन्द्रव्यंतरम्

चं०	मं०	रा०	बृ०	श०	बु०	के०	शु०	सू०	ग्रहाः
०	०	१	०	१	०	०	१	०	मासाः
१७	१२	१	२८	३	२९	१२	५	१०	दिनानि
३०	१५	३०	०	१५	४५	१५	०	३०	घट्यः
०	०	०	०	०	०	०	०	०	पलानि
०	०	०	०	०	०	०	०	०	विपलानि

अथ राहुमध्ये राहुव्यंतरम्

रा०	बृ०	श०	बु०	के०	शु०	सू०	चं०	मं०	ग्रहाः
४	४	५	४	१	५	१	२	१	मासाः
२५	९	३	१७	२६	१२	१८	२१	२६	दिनानि
४८	३६	५४	४२	४२	०	३६	०	४२	घट्यः
०	०	०	०	०	०	०	०	०	पलानि
०	०	०	०	०	०	०	०	०	विपलानि

अथ राहुमध्ये गुरुव्यंतरम्

बृ०	श०	बु०	के०	शु०	सू०	चं०	मं०	रा०	ग्रहाः
३	४	४	१	४	१	२	१	४	मासाः
२५	१६	२	२०	२४	१३	१२	२०	९	दिनानि
१२	४८	२४	२४	०	१२	०	२४	३६	घटचः
०	०	१०	०	०	०	०	०	०	पलानि
०	०	०	०	०	०	०	०	०	विपलानि

अथ राहुमध्ये शनिव्यंतरम्

श०	बु०	के०	शु०	सू०	चं०	मं०	रा०	बृ०	ग्रहाः
५	४	१	५	१	२	१	५	४	मासाः
१२	२५	२९	२१	२१	२५	२९	३	१६	दिनानि
२७	२१	५१	०	१८	३०	५१	५४	४८	घटचः
०	०	०	०	०	०	०	०	०	पलानि
०	०	०	०	०	०	०	०	०	विपलानि

अथ राहुमध्ये बुधव्यंतरम्

बु०	के०	शु०	सू०	चं०	मं०	रा०	बृ०	श०	ग्रहाः
४	१	५	१	२	१	४	४	४	मासाः
१०	२३	३	१५	१६	२३	१७	२	२५	दिनानि
३	३३	०	५४	३०	३३	४२	२४	२१	घटचः
०	०	०	०	०	०	०	०	०	पलानि
०	०	०	०	०	०	०	०	०	विपलानि

अथ राहुमध्ये केतुव्यंतरम्

के०	शु०	सू०	चं०	मं०	रा०	बृ०	श०	बु०	ग्रहाः
०	२	०	१	०	१	१	१	१	मासाः
२२	३	१८	१	२२	२६	२०	२९	२३	दिनानि
३	०	५४	३०	३	४२	२४	५१	३३	घटचः
०	०	०	०	०	०	०	०	०	पलानि
०	०	०	०	०	०	०	०	०	विपलानि

अथ राहुमध्ये भृगुव्यंतरम्									
शु	सू०	चं०	मं०	रा०	बृ०	श०	बु०	के०	ग्रहाः
६	१	३	२	५	४	५	५	२	मासाः
०	२४	०	३	१२	२४	२१	३	३	दिनानि
०	०	०	०	०	०	०	०	०	घटयः
०	०	०	०	०	०	०	०	०	पलानि
०	०	०	०	०	०	०	०	०	विपलानि

अथ राहुमध्ये सूर्यव्यंतरम्									
सू०	चं०	मं०	रा०	गु०	श०	बु०	के०	शु०	ग्रहाः
०	०	०	१	१	१	१	०	१	मासाः
१६	२७	१८	१८	१३	२१	१५	१८	२४	दिनानि
१२	०	५४	३६	१२	१८	५४	५४	०	घटयः
०	०	०	०	०	०	०	०	०	पलानि
०	०	०	०	०	०	०	०	०	विपलानि

अथ राहुमध्ये चंद्रव्यंतरम्									
चं०	मं०	रा०	बृ०	श०	बु०	के०	शु०	सू०	ग्रहाः
१	१	२	२	२	२	१	३	०	मासाः
१५	१	२१	१२	२५	१६	१	०	२७	दिनानि
०	३०	०	०	३०	३०	३०	०	०	घटयः
०	०	०	०	०	०	०	०	०	पलानि
०	०	०	०	०	०	०	०	०	विपलानि

अथ राहुमध्ये भौमव्यंतरम्									
मं०	रा०	बृ०	श०	बु०	के०	शु०	सू०	चं०	ग्रहाः
०	१	१	१	१	०	२	०	१	मासाः
२२	२६	२०	२९	२३	२२	३	१८	१	दिनानि
३	४२	२४	५१	३३	३	०	५४	३०	घटयः
०	०	०	०	०	०	०	०	०	पलानि
०	०	०	०	०	०	०	०	०	विपलानि

अथ राहुमध्ये गुरुव्यंतरम्

गु०	श०	बु०	के०	शु०	सू०	चं०	मं०	रा०	ग्रहाः
३	४	३	१	४	१	२	१	३	मासाः
१२	१	१८	१४	८	८	४	१४	२५	दिनानि
२४	३६	४८	४८	०	२४	०	४८	१२	घटयः
०	०	०	०	०	०	०	०	०	पलानि
०	०	०	०	०	०	०	०	०	विपलानि

अथ राहुमध्ये शनिव्यंतरम्

श०	बु०	के०	शु०	सू०	चं०	मं०	रा०	बृ०	ग्रहाः
४	४	१	५	१	२	१	४	४	मासाः
२४	९	२३	२	१५	१६	२३	१६	१	दिनानि
२४	१२	१२	०	३६	०	१२	४८	३६	घटयः
०	०	०	०	०	०	०	०	०	पलानि
०	०	०	०	०	०	०	०	०	विपलानि

अथ गुरुमध्ये बुधव्यंतरम्

बु०	के०	शु०	सू०	चं०	मं०	रा०	बृ०	श०	ग्रहाः
३	१	४	१	२	१	४	३	४	मासाः
२५	१७	१६	१०	८	१७	२	१८	९	दिनानि
३६	३६	०	४८	०	३६	२४	४८	१२	घटयः
०	०	०	०	०	०	०	०	०	पलानि
०	०	०	०	०	०	०	०	०	विपलानि

अथ गुरुमध्ये केतुव्यंतरम्

के०	शु०	सू०	चं०	मं०	रा०	बृ०	श०	बु०	ग्रहाः
०	१	०	०	०	१	१	१	१	मासाः
१९	२६	१६	२८	१९	२०	१४	२३	१७	दिनानि
३६	०	४८	०	३६	२४	४८	१२	३६	घटयः
०	०	०	०	०	०	०	०	०	पलानि
०	०	०	०	०	०	०	०	०	विपलानि

अथ गुरुमध्ये भृगुव्यंतरम्

शु०	सू०	चं०	मं०	रा०	बृ०	श०	बु०	के०	ग्रहाः
५	१	२	१	४	४	५	४	१	मासाः
१०	१८	२०	२६	२४	८	२	१६	२६	दिनानि
०	०	०	०	०	०	०	०	०	घट्यः
०	०	०	०	०	०	०	०	०	पलानि
०	०	०	०	०	०	०	०	०	विपलानि

अथ गुरुमध्ये सूर्यव्यंतरम्

सू०	चं०	मं०	रा०	बृ०	श०	बु०	के०	शु०	ग्रहाः
०	०	०	१	१	१	१	०	१	मासाः
१४	२४	१६	१३	८	१५	१०	१६	१८	दिनानि
२४	०	४८	१२	२४	३६	४८	४८	०	घट्यः
०	०	०	०	०	०	०	०	०	पलानि
०	०	०	०	०	०	०	०	०	विपलानि

अथ गुरुमध्ये चन्द्रव्यंतरम्

चं०	मं०	रा०	बृ०	श०	बु०	के०	शु०	सू०	ग्रहाः
१	०	२	२	२	२	०	२	०	मासाः
१०	२८	१२	४	१६	८	२८	२०	२४	दिनानि
०	०	०	०	०	०	०	०	०	घट्यः
०	०	०	०	०	०	०	०	०	पलानि
०	०	०	०	०	०	०	०	०	विपलानि

अथ गुरुमध्ये भौमव्यंतरम्

मं०	रा	बृ०	श०	बु०	के०	शु०	सू०	चं०	ग्रहाः
०	१	१	१	१	०	१	०	०	मासाः
१९	२०	१४	२३	१७	१९	२६	१६	२८	दिनानि
३६	२४	४८	१२	३६	३६	०	४८	०	घट्यः
०	०	०	०	०	०	०	०	०	पलानि
०	०	०	०	०	०	०	०	०	विपलानि

अथ गुरुमध्ये राहुव्यंतरम्									
रा०	बृ०	श०	बु०	के०	शु०	सू०	चं०	मं०	ग्रहाः
४	३	४	४	१	४	१	२	१	मासाः
९	२५	१६	२	२०	२४	१३	१२	२०	दिनानि
३६	१२	४८	२४	२४	०	१२	०	२४	घट्यः
०	०	०	०	०	०	०	०	०	पलानि
०	०	०	०	०	०	०	०	०	विपलानि

अथ शनिमध्ये शनिव्यंतरम्									
श०	बु०	के०	शु०	सू०	चं०	मं०	रा०	बृ०	ग्रहाः
५	५	२	६	१	३	२	५	४	मासाः
२१	३	३	०	२४	०	३	१२	२४	दिनानि
२८	२५	१०	३०	९	१५	१०	२७	२४	घट्यः
३०	३०	३०	०	०	०	३०	०	०	पलानि
०	०	०	०	०	०	०	०	०	विपलानि

अथ शनिमध्ये बुधव्यंतरम्									
बु०	के०	शु०	सू०	चं०	मं०	रा०	बृ०	श०	पहाः
४	१	५	१	२	१	४	४	५	मासाः
१७	२६	११	१८	२०	२६	२५	९	३	दिनानि
१६	३१	३०	२७	४५	३१	२१	१२	२५	घट्यः
३०	३०	०	०	०	३०	०	०	३०	पलानि
०	०	०	०	०	०	०	०	०	विपलानि

अथ शनिमध्ये केतुव्यंतरम्									
के०	शु०	सू०	चं०	मं०	रा०	बृ०	श०	बु०	ग्रहाः
०	२	०	१	०	१	१	२	१	मासाः
२३	६	१९	३	२३	२९	२३	३	२६	दिनानि
१६	३०	५७	१५	१६	५१	१२	१०	३१	घट्यः
३०	०	०	०	३०	०	०	३०	३०	पलानि
०	०	०	०	०	०	०	०	०	विपलानि

अथ शनिमध्ये भृगुव्यंतरम्									
शु०	सू०	चं०	मं०	रा०	बृ०	श०	बु०	के०	ग्रहाः
६	१	३	२	५	५	६	५	२	मासाः
१०	२७	५	६	२१	२	०	११	६	दिनानि
०	०	०	३०	०	०	३०	३०	३०	घट्यः
०	०	०	०	०	०	०	०	०	पलानि
०	०	०	०	०	०	०	०	०	विपलानि

अथ शनिमध्ये सूर्यव्यंतरम्									
सू०	चं०	म०	रा०	बृ०	श०	बु०	के०	शु०	ग्रहाः
०	०	०	१	१	१	१	०	१	मासाः
१७	२८	१९	२१	१५	२४	१८	१९	२७	दिनानि
६	३०	५७	१८	३६	९	२७	५७	०	घट्यः
०	०	०	०	०	०	०	०	०	पलानि
०	०	०	०	०	०	०	०	०	विपलानि

अथ शनिमध्ये चन्द्रव्यंतरम्									
चं०	मं०	रा०	बृ०	श०	बु०	के०	शु०	सू०	ग्रहाः
१	१	२	२	३	२	१	३	०	मासाः
१७	३	२५	१६	०	२०	३	५	२८	दिनानि
३०	१५	३०	०	१५	४५	१५	०	३०	घट्यः
०	०	०	०	०	०	०	०	०	पलानि
०	०	०	०	०	०	०	०	०	विपलानि

अथ शनिमध्ये भौमव्यंतरम्									
मं०	रा०	बृ०	श०	बु०	के०	शु०	सू०	चं०	ग्रहाः
०	१	१	२	१	०	२	०	१	मासाः
२३	२९	२३	३	२६	२३	६	१९	३	दिनानि
१६	५१	१२	१०	३१	१६	३०	५७	१५	घट्यः
३०	०	०	३०	३०	३०	०	०	०	पलानि
०	०	०	०	०	०	०	०	०	विपलानि

अथ शनिमध्ये राहुव्यंतरम्

रा०	बृ०	श०	बु०	के०	शु०	सू०	चं०	मं०	ग्रहाः
५	४	५	४	१	५	१	२	१	मासाः
३	१६	१२	२५	२९	२१	२१	२५	२९	दिनानि
५४	४८	२७	२१	५१	०	१८	३०	५१	घटचः
०	०	०	०	०	०	०	०	०	पलानि
०	०	०	०	०	०	०	०	०	विपलानि

अथ शनिमध्ये गुरुव्यंतरम्

बृ०	श०	बु०	के०	शु०	सू०	चं०	मं०	रा०	ग्रहाः
४	४	४	१	५	१	२	१	४	मासाः
१	२४	९	२३	२	१५	१६	२३	१६	दिनानि
३६	२४	१२	१२	०	३६	०	१२	४८	घटचः
०	०	०	०	०	०	०	०	०	पलानि
०	०	०	०	०	०	०	०	०	विपलानि

अथ बुधमध्ये बुधव्यंतरम्

बु०	के०	शु०	सू०	चं०	मं०	रा०	बृ०	श०	ग्रहाः
४	१	४	१	२	१	४	३	४	मासाः
२	२०	२४	२३	१२	२०	१०	२५	१७	दिनानि
४९	३४	३०	२१	१५	३४	३	३६	१६	घटचः
३०	०	०	०	०	३०	०	०	३०	पलानि
०	०	०	०	०	०	०	०	०	विपलानि

अथ बुधमध्येकेतुव्यंतरम्

के०	शु०	सू०	चं०	मं०	रा०	बृ०	श०	बु०	ग्रहाः
२	१	०	०	०	१	१	१	१	मासाः
२०	२९	१७	२९	२०	२३	१७	२६	२०	दिनानि
४९	३०	५१	४५	४९	३३	३६	३१	३४	घटचः
३०	०	०	०	३०	०	०	३०	३०	पलानि
०	०	०	०	०	०	०	०	०	विपलानि

अथ बुधमध्ये शुक्रव्यंतरम्									
शु०	सू०	चं०	मं०	रा०	बृ०	श०	बु०	के०	ग्रहाः
५	१	२	१	५	४	५	४	१	मासाः
२०	२१	२५	२९	३	१६	११	२४	२९	दिनानि
०	०	०	३०	०	०	३०	३०	३०	घट्यः
०	०	०	०	०	०	०	०	०	पलानि
०	०	०	०	०	०	०	०	०	विपलानि

अथ बुधमध्ये सूर्यव्यंतरम्									
सू०	चं०	मं०	रा०	बृ०	श०	बु०	के०	शु०	ग्रहाः
०	०	०	१	१	१	१	१	१	मासाः
१५	२५	१७	१५	१०	१८	१३	१७	२१	दिनानि
१८	३०	५१	५४	४८	२७	२१	५१	०	घट्यः
०	०	०	०	०	०	०	०	०	पलानि
०	०	०	०	०	०	०	०	०	विपलानि

अथ बुधमध्ये चंद्रव्यंतरम्									
चं०	मं०	रा०	बृ०	श०	बु०	के०	शु०	सू०	ग्रहाः
१	०	२	२	२	२	०	२	०	मासाः
१२	२९	१६	८	२०	१२	२९	२५	२५	दिनानि
३०	४५	३०	०	४५	१५	४५	०	३०	घट्यः
०	०	०	०	०	०	०	०	०	पलानि
०	०	०	०	०	०	०	०	०	विपलानि

अथ बुधमध्ये भौमव्यंतरम्									
मं०	रा०	बृ०	श०	बु०	के०	शु०	सू०	चं०	ग्रहाः
०	१	१	०	१	०	१	०	०	मासाः
२०	२३	१७	२६	२०	२०	२९	१७	२९	दिनानि
४९	३३	३६	३१	३४	४९	३०	५१	४५	घट्यः
३०	०	०	३०	३०	३०	०	०	०	पलानि
०	०	०	०	०	०	०	०	०	विपलानि

अथ बुधमध्ये राहुर्व्यंतरम्									
रा०	बृ०	श०	बु०	के०	शु०	सू०	चं०	मं०	ग्रहाः
४	४	४	४	१	५	१	२	१	मासाः
१७	२	२५	१०	२३	३	१५	१६	२३	दिनानि
४२	२४	२१	३	३३	०	५४	३०	३३	घटचः
०	०	०	०	०	०	०	०	०	पलानि
०	०	०	०	०	०	०	०	०	विपलानि

अथ बुधमध्ये गुरुर्व्यंतरम्									
बृ०	श०	बु०	के०	शु०	सू०	चं०	मं०	रा०	ग्रहाः
३	४	३	१	४	१	२	१	४	मासाः
१८	९	२५	१७	२६	१०	८	१७	२	दिनानि
४८	१२	३६	३६	०	४८	०	३६	२४	घटचः
०	०	०	०	०	०	०	०	०	पलानि
०	०	०	०	०	०	०	०	०	विपलानि

अथ बुधमध्ये शनिर्व्यंतरम्									
श०	बु०	के०	शु०	सू०	चं०	मं०	रा०	बृ०	ग्रहाः
५	४	१	५	१	२	१	४	४	मासाः
३	१७	२६	११	१८	२०	२६	२५	९	दिनानि
२५	१६	३१	३०	२७	४५	३१	२१	१२	घटचः
३०	३०	३०	०	०	०	३०	०	०	पलानि
०	०	०	०	०	०	०	०	०	विपलानि

अथ केतुमध्ये केतुर्व्यंतरम्									
के०	शु०	सू०	चं०	मं०	रा०	बृ०	श०	बु०	ग्रहाः
०	०	०	०	०	०	०	०	०	मासाः
८	२४	७	१२	८	२२	१९	२३	२०	दिनानि
३४	३०	२१	१५	३४	३	३६	१६	४९	घटचः
३०	०	०	०	३०	०	०	३०	३०	पलानि
०	०	०	०	०	०	०	०	०	विपलानि

अथ केतुमध्ये भृगुव्यंतरम्

शु०	सू०	चं०	मं०	रा०	बृ०	श०	बु०	के०	ग्रहाः
२	०	१	०	२	१	२	१	०	मासाः
१०	२१	५	२४	३	२६	६	२९	२४	दिनानि
०	०	०	३०	०	०	३०	३०	३०	घटचः
०	०	०	०	०	०	०	०	०	पलानि
०	०	०	०	०	०	०	०	०	विपलानि

अथ केतुमध्ये सूर्यव्यंतरम्

सू०	चं०	मं०	रा०	बृ०	श०	बु०	कें०	शु०	ग्रहाः
०	०	०	०	०	०	०	०	०	मासाः
६	१०	७	१८	१६	१९	१७	७	२१	दिनानि
१८	३०	२१	५४	४८	५७	५१	२१	०	घटचः
०	०	०	०	०	०	०	०	०	पलानि
०	०	०	०	०	०	०	०	०	विपलानि

अथ केतुमध्ये चंद्रव्यंतरम्

चं०	मं०	रा०	बृ०	श०	बु०	के०	शु०	सू०	ग्रहाः
०	०	१	०	१	०	०	१	०	मासाः
१७	१२	१	२८	३	२९	१२	५	१०	दिनानि
३०	१५	३०	०	१५	४५	१५	०	३०	घटचः
०	०	०	०	०	०	०	०	०	पलानि
०	०	०	०	०	०	०	०	०	विपलानि

अथ केतुमध्ये भौमव्यंतरम्

मं०	रा०	बृ०	श०	बु०	के०	शु०	सू०	चं०	ग्रहाः
०	०	१	०	०	०	०	०	०	मासाः
८	२२	१९	२३	२०	८	२४	७	१२	दिनानि
३४	३	३६	१६	४९	३४	३०	२१	१५	घटचः
३०	०	०	३०	३०	३०	०	०	०	पलानि
०	०	०	०	०	०	०	०	०	विपलानि

अथ केतुमध्ये राहुव्यंतरम्

रा०	बृ०	श०	बु०	के०	शु०	सू०	चं०	मं०	ग्रहाः
१	१	१	१	०	२	०	१	०	मासाः
२६	२०	२९	२३	२२	३	१८	१	२२	दिनानि
४२	२४	५१	३३	३	०	५४	३०	३	घटयः
०	०	०	०	०	०	०	०	०	पलानि
०	०	०	०	०	०	०	०	०	विपलानि

अथ केतुमध्ये गुरव्यंतरम्

बृ०	श०	बु०	के०	शु०	सू०	चं०	मं०	रा०	ग्रहाः
१	१	१	०	१	०	०	०	१	मासाः
१४	२३	१७	१९	२६	१६	२८	१९	२०	दिनानि
४८	१२	३६	३६	०	४८	०	३६	२४	घटयः
०	०	०	०	०	०	०	०	०	पलानि
०	०	०	०	०	०	०	०	०	विपलानि

अथ केतुमध्ये शनिव्यंतरम्

श०	बु०	के०	शु०	सू०	चं०	मं०	रा०	बृ०	ग्रहाः
२	१	०	२	०	१	०	१	१	मासाः
३	२६	२३	६	१९	३	२३	२०	२३	दिनानि
१०	३१	१६	३०	५७	१५	१६	५१	१२	घटयः
३०	३०	३०	०	०	०	३०	०	०	पलानि
०	०	०	०	०	०	०	०	०	विपलानि

अथ केतुमध्ये बुधव्यंतरम्

बु०	के०	शु०	सू०	चं०	मं०	रा०	बृ०	श०	ग्रहाः
१	०	१	०	०	०	१	१	१	मासाः
२०	२०	२९	१७	२९	२०	२३	१७	२६	बिनानि
३४	४९	३०	५१	४५	४९	३३	३६	३१	घटयः
३०	३०	०	०	०	३०	०	०	३०	पलानि
०	०	०	०	०	०	०	०	०	विपलानि

अथ भृगुमध्ये भृगुव्यंतरम्

शु०	सू०	चं०	मं०	रा०	बृ०	श०	बु०	के०	ग्रहाः
६	२	३	२	६	५	६	५	२	मासाः
२०	०	१०	१०	०	१०	१०	२०	१०	दिनानि
०	०	०	०	०	०	०	०	०	घटयः
०	०	०	०	०	०	०	०	०	पलानि
०	०	०	०	०	०	०	०	०	विपलानि

अथ भृगुमध्ये सूर्यव्यंतरम्

सू०	चं०	मं०	रा०	बृ०	श०	बु०	के०	शु०	ग्रहाः
०	१	०	१	१	१	१	०	२	मासाः
१८	०	२१	२४	१८	२७	२१	२१	०	दिनानि
०	०	०	०	०	०	०	०	०	घटयः
०	०	०	०	०	०	०	०	०	पलानि
०	०	०	०	०	०	०	०	०	विपलानि

अथ भृगुमध्ये चंद्रव्यंतरम्

चं०	मं०	रा०	बृ०	श०	बु०	के०	शु०	सू०	ग्रहाः
१	१	३	२	३	२	१	३	१	मासाः
२०	५	०	२०	५	२५	५	१०	०	दिनानि
०	०	०	०	०	०	०	०	०	घटयः
०	०	०	०	०	०	०	०	०	पलानि
०	०	०	०	०	०	०	०	०	विपलानि

अथ भृगुमध्ये भौमव्यंतरम्

मं०	रा०	बृ०	श०	बु०	के०	शु०	सू०	चं०	ग्रहाः
०	२	१	२	१	०	२	०	१	मासाः
२४	३	२६	६	२९	२४	१०	२१	५	दिनानि
३०	०	०	३०	३०	३०	०	०	०	घटयः
०	०	०	०	०	०	०	०	०	पलानि
०	०	०	०	०	०	०	०	०	विपलानि

अथ भृगुमध्ये राहुव्यंतरम्

रा०	बृ०	श०	बु०	के०	शु०	सू०	चं०	मं०	ग्रहाः
५	४	५	५	२	६	१	३	२	मासाः
१२	२४	२१	३	३	०	२४	०	३	दिनानि
०	०	०	०	०	०	०	०	०	घटयः
०	०	०	०	०	०	०	०	०	पलानि
०	०	०	०	०	०	०	०	०	विपलानि

अथ भृगुमध्ये गुरुव्यंतरम्

बृ०	श०	बु०	के०	शु०	सू०	चं०	मं०	रा०	ग्रहाः
४	५	४	१	५	१	२	१	४	मासाः
८	२	१६	२६	१०	१८	२०	२६	२४	दिनानि
०	०	०	०	०	०	०	०	०	घटयः
०	०	०	०	०	०	०	०	०	पलानि
०	०	०	०	०	०	०	०	०	विपलानि

अथ भृगुमध्ये शनिव्यंतरम्

श०	बु०	के०	शु०	सू०	चं०	मं०	रा०	बृ०	ग्रहाः
६	५	२	६	१	३	२	५	५	मासाः
०	११	६	१०	२७	५	६	२१	२	दिनानि
३०	३०	३०	०	०	०	३०	०	०	घटयः
०	०	०	०	०	०	०	०	०	पलानि
०	०	०	०	०	०	०	०	०	विपलानि

अथ भृगुमध्ये बुधव्यंतरम्

बु०	के०	शु०	सू०	चं०	मं०	रा०	बृ०	श०	ग्रहाः
४	१	५	१	२	१	५	४	५	मासाः
२४	२९	२०	२१	२५	२९	३	१६	११	दिनानि
३०	३०	०	०	०	३०	०	०	३०	घटयः
०	०	०	०	०	०	०	०	०	पलानि
०	०	०	०	०	०	०	०	०	विपलानि

अथ भृगुमध्ये केतुव्यंतरम्									
के०	शु०	सू०	चं०	मं०	रा०	बृ०	श०	बु०	ग्रहाः
०	२	०	१	०	२	१	२	१	मासाः
२४	१०	२१	५	२४	३	२६	६	२९	दिनानि
३०	०	०	०	३०	०	०	३०	३०	घट्यः
०	०	०	०	०	०	०	०	०	पलानि
०	०	०	०	०	०	०	०	०	विपलानि

अथ विदशाफलं प्रारभ्यते

लग्नेशरोगनाथौ च निधनेशेन संयुतौ ।। मारकेशयुतौ दृष्टौ रोग नाथांशगौ यदि ।।२।। तस्य भुक्तौ विजानीयाद्व्यथां शस्त्रेण वैनृणाम् ।। शुभयोगेन बाधः स्यात्पापयोगेन मृत्युकृत् ।।३।। जीवांशे जीववर्गेण मूलांशे मूलवर्गतः ।। रोगादिप्रवदेत्तत्र तेषां भुक्तिवशात्फलम् ।।४।। विलग्ननाथस्य नवांशनाथो रंध्रांशकस्याधिपतिश्च युक्तौ ।। मेषस्य षड्वर्गगतौ यदा तौ भुक्तौ तयोर्जंबुकभीतितो बुधः ।।५।। वृषवर्गगतौ तौ चेद्वृश्चिकाद्भयमादिशेत् ।। युग्मवर्गगतौ भीतिः कपिजा नात्र संशयः ।।६।। कुलीरवर्गगौ तौ चेद्रासभाद्भीतिमादिशेत् ।। सिंहवर्गगतौ तौ चेद्भुक्तौ स्याद्व्याघ्रजं भयम् ।।७।। कन्यावर्गगतौ तौ चेद्भल्लूकाद्भयमंजसा ।। वणिग्वर्गगतौ तौ चेत्तद्भुक्तौ स्याद्गजाद्भयम् ।।८।। अलिवर्गगतौ येषां तेषां स्याद्गजतो भयम् ।। यदि कार्मुकवर्गस्थौ भुक्तौ स्याद्रथजं भयम् ।।९।। मृगवर्गगतौ तौ चेद्भुक्तौ करभजं भयम् ।। कुम्भवर्गगतौ तौ चेद्गोलांगूलाद्भयं भवेत् ।।१०।। मीनवर्गगतौ भुक्तौ तेषां स्याद्ग्राहजं भयम् ।। एवं देहादिभावानां षड्वर्गगतिभिः फलम् ।। सम्यग्विचार्य मतिमान्प्रवदेत्कालवित्तमः ।।११।।

विदशाफल

लग्नेश और षष्ठेश अष्टमेश युक्त हों और मारकेश से युक्त या दृष्ट हों तथा षष्ठेश के नवांश में हों तो।।२।। उसके प्रत्यंतर में शस्त्र के आघात से कष्ट होता है। शुभग्रह के दृष्टि अथवा योग से बाध (आघात नहीं होता या सामान्य होता है) और पापयोग से मृत्यु होती है।।३।। जीवांश में होने से जीव वर्ग से तथा मूलांश में होने से मूलवर्ग से रोग, आघात या मृत्यु होती है। सो प्रत्यन्तर में योगानुसार कहना चाहिए।।४।। लग्नेश जिस नवांश में हो उस राशि का स्वामी, अष्टमेश के या अष्टमभाव के नवांशपति से युक्त यदि मेषराशि के षड्वर्ग युक्त (एक साथ) हों तो जंबुक (सियार) का भय होता है।।५।। पूर्वोक्त दोनों वृश्चिक राशि के षड्वर्ग में हों तो बिच्छू से भय होता है। मिथुन के वर्ग में बंदर से भय होता है।।६।। कर्क के वर्ग में गर्दभ (गधे) से भय और सिंह वर्ग में व्याघ्र (बाघ) से भय होता है।।७।। कन्यावर्ग में भालू से भय एवं तुला राशि के वर्ग में हाथी से भय होता है।।८।। वृश्चिक के वर्ग में हाथी से भय तथा धनुराशि के वर्ग में रथ से भय होता है।।९।। मकर वर्ग में हाथी के सूंड से भय एवं

कुंभ वर्ग में हो तो बैल या गौ की पूँछ से भय होता है।।१०।। मीन वर्ग में हो तो ग्राह (मगर) से भय होता है। इस प्रकार लग्न से बारहों भावों का फल षड्वर्ग के विचार से कहा जाता है, ज्योतिर्वित् को चाहिए की भली प्रकार से विचार करके फल का निर्देश करे।।११।।

अथ सूर्यादिसर्वग्रहाणां विदशाफलमाह

(सू० सू०) उद्वेगोथ बलं वित्तदारार्तिः शिरसि व्यथा ।। ब्राह्मणेन विवादश्च सूर्यः स्वविदशां गतः ।।१२।। (सू० चं०) उद्वेगं कलहं चित्तपीडाँ स्वहृतिमद्भुताम् ।। मणिमुक्तादिनाशश्च विदशासु रवेः शशी ।।१३।। (सू० मं०) राजभीतिं शस्त्रभीतिं बंधनं बहुसंकटम् ।। शत्रुवह्निकृता पीडा स्वदशासु रवेः कुजः ।।१४।। (सू० रा०) श्लेष्मव्याधिं शस्त्रभीतिं धनहानिं महद्भयम् ।। राजभंगस्तथा त्रासो विदशासु रवेस्तमः ।।१५।। (सू० गु०)

सूर्यादिग्रहों का प्रत्यन्तर्दशाफल

(सू० सू० सू०) सूर्य अपनी विदशा (प्रत्यन्तर्दशा) में उद्वेग, बल, स्त्री धन कष्ट, सिरदर्द, ब्राह्मण से विवाद करता है।।१२।। (सू० चं०) उद्वेग, कलह, पीड़ा, विक्षेप, रत्ननाश यह फल सूर्य की विदशा में चन्द्रमा का है।।१३।। (सू० मं०) सूर्य में भौम की विदशा में, राजभय, शस्त्रभय, बंधन, बहुसकंट, शत्रु तथा अग्नि से पीड़ा होती है।।१४।। (सू० रा०) सूर्य की विदशा में राहु कफरोग, शस्त्रभय, धनहानि, महाभय, ऐश्वर्यनाश तथा त्रास करता है।।१५।। (सू० गु०)

शत्रुनाशं जयं वृद्धिं वस्त्रहेमादिभूषणम् ।। अश्वयानादि ददते गोधनं च रवेर्गुरुः ।।१६।। (सू० श०) धनहानिः पशोः पीडा महोद्वेगो महारुजः ।। अशुभं सर्वमाप्नोति विदशासु रवेः शनिः ।।१७।। (सू० बु०) विद्यालाभो बंधुसंगो भोज्यप्राप्तिर्धनागमः ।। धर्मलाभो नृपात्पूजा विदशासु रवेर्बुधः ।।१८।। (सू० के०) प्राणभीतिर्महाहानी राजभीतिश्च विग्रहः ।। शत्रुणा च महावादो विदशासु रवेः शिखी ।।१९।। (सू० शु०) दिनानि समरूपाणि लाभोऽप्यल्पो भवेदिह ।। स्वल्पा च सुखसंपत्तिर्विदशासु रवेर्भृगुः ।।२०।।

सूर्य की विदशा में गुरु शत्रुनाश, जय, वृद्धि, वस्त्रभूषणप्राप्ति, घुड़सवारी देता है।।१६।। (सू० श०) सूर्य विदशा में शनि धनहानि, पशुपीड़ा, उद्वेग, महारोग, आदि सर्वप्रकार से अशुभ करता है।।१७।। (सू० बु०) सूर्य की विदशा में बुध विद्यालाभ, बंधुसंग, भोगलाभ, धनलाभ, धर्मलाभ, राजपूजा, फल देता है।।१८।। (सू० के०) सूर्य की विदशा में केतु प्राणभय, महाहानि, राजभय, लड़ाई, विवाद करता है।।१९।। (सू० शु०) सूर्य की विदशा में शुक्र समान है, साधारण लाभ, सम समय, साधारण सुख सम्पत्ति करता है।।२०।।

अथ चंद्रविदशाफलमाह

(चं० चं०) भूभोज्यधनसंप्राप्ती राजपूजामहत्सुखम् ।। महालाभः स्त्रियो भोगो विदशासु स्वयं शशी ।।२१।। (चं० मं०) मतिवृद्धिर्महापूज्यः सुखं बंधुजनैः सह ।। धनागमं शत्रुभयं

चंद्रस्यातंगर्तः कुजः ॥२२॥ (चं० रा०) भवेत्कल्याणसंपत्ती राजवित्तसमागमः ॥ अशुभैरल्पमृत्युश्च चंद्रचंद्रांतरे तमः ॥२३॥ (चं० बृ०) वस्त्रलाभो महातेजो ब्रह्मज्ञानं च सद्‌गुरोः ॥ राज्यालंकरणावाप्तिश्चंद्रचंद्रांतरे गुरुः ॥२४॥ (चं० श०) दुर्दिने लभते पीडा वातपित्ताद्विशेषतः ॥ धनधान्ययशोहानिश्चंद्रचंद्रांतरे शनिः ॥२५॥ (चं० बु०) पुत्रजन्महयप्राप्तिर्विद्यालाभो महोन्नतिः ॥ शुक्लवस्त्रान्नलाभश्च चंद्रचंद्रांतरे बुधः ॥२६॥ (च० के०) ब्राह्मणेन समं युद्धमपमृत्युः सुखक्षयः ॥ सर्वत्र जायते क्लेशश्चंद्रचन्द्रांतरे शिखी ॥२७॥ (चं० शु०) धनलाभो महत्सौख्यं कन्याजन्म सुभोजनम् ॥ प्रीतिश्च सर्वलोकेभ्यश्चंद्रचन्द्रातरे भृगुः ॥२८॥ (चं० सू०) अन्नागमो वस्त्रलाभः शत्रुहानिः सुखागमः ॥ सर्वत्र विजयप्राप्तिश्चंद्रचंद्रांतरे रविः ॥२९॥

चन्द्रविदशाफल.

(चं० चं०) चन्द्रमा की विदशा में चन्द्रमा भूमि, भोग, धन की प्राप्ति, राजपूजा, महान् सुख, महालाभ, ललना भोग प्राप्त करता है॥२१॥ (चं० मं०) चन्द्रमा की विदशा में मंगल मतिवृद्धि महापूज्यता, बन्धुओं के साथ सुख, धनलाभ, तथा शत्रुभय करता है॥२२॥ (चं० रा०) चन्द्र विदशा में राहु, कल्याण, सम्पत्ति, राजा से धन प्राप्ति, दुःख तथा अल्प मृत्यु करता है॥२३॥ (चं० बृ०) चन्द्र विदशा में गुरु वस्त्र लाभ, तेजोवृद्धि, गुरु से ब्रह्म ज्ञान की प्राप्ति, राजा से अलङ्कार प्राप्ति करता है॥२४॥ (चं० श०) चन्द्रमा की विदशा में शनि कष्ट, पीड़ा, वात पित्त जनित रोग, धन सम्पत्ति, यश की हानि करता है॥२५॥ (चं० बु०) चन्द्रमा की विदशा में बुध पुत्र जन्म का हर्ष प्राप्त करता है। विद्या लाभ, महान् उन्नति, श्वेत वस्त्र तथा अन्न का लाभ करता है॥२६॥ (चं० के०) चन्द्र विदशा में केतु ब्राह्मण से विवाद, अपमृत्यु, सुख हानि तथा सर्वत्र क्लेश करता है॥२७॥ (चं० शु०) चन्द्र विदशा में शुक्र धन लाभ, महान् सौख्य, कन्या जन्म, सुभोजन तथा सब से प्रीति करता है॥२८॥ (चं० सू०) चन्द्र विदशा में सूर्य अन्न लाभ, वस्त्र लाभ, शत्रु हानि, सुख प्राप्ति तथा सर्वत्र विजय प्राप्ति करता है॥२९॥

अथ भौमविदशाफलमाह

(मं० मं०) शत्रुभीतिं कलिं घोरमकस्माज्जायते भयम् ॥ रक्तस्रावोपमृत्युश्च विदशासु स्वयं कुजः ॥३०॥ (मं० रा०) बंधनं राजभंगं च धनहानिः कुभोजनम् ॥ कलहः शत्रुभिर्नित्यं भौमभौमांतरे तमः ॥३१॥ (मं० गु०) मतिनाशं तथा दुःखं संतापः कलहो भवेत ॥ विफलं चिंतितं सर्वं भौमभौमान्तरे गुरुः ॥३२॥ (मं० श०) स्वामिनाशस्तथा पीडा धनहानिर्महाभयम् ॥वैकल्यं कलहस्त्रासो भौमभौमांतरे शनिः ॥३३॥ (मं० बु०) सर्वथा बुद्धिनाशश्च धनहानिर्ज्वरस्तनौ ॥ वस्त्रान्नसुहृदां नाशोभौमभौमांतरे बुधः ॥३४॥ (मं० के०) आलस्यं च शिरः पीड़ा पापरोगापमृत्युकृत् ॥ राजभीतिः शस्त्रघातो भौमभौमान्तरे शिखी ॥३५॥ (मं० शु०) चांडालात्संकटस्त्रासो राजशस्त्रभयं भवेत् ॥ अतिसारोथ वमनं भौमभौमांतरे भृगुः॥३६॥ (मं० सू०) भूमिलाभोर्थसंपत्तिः संतोषो मित्रसंगतिः ॥ सर्वत्र सुखमाप्नोति भौमभौमांतरे रविः ॥३७॥ (मं० चं०) याम्यां दिशि भवेल्लाभः सितवस्त्रविभूषणम् ॥ संसिद्धिः सर्वकार्याणां भौमभौमांतरे शशी ॥३८॥

मंगल विदशा फल

(मं० मं०) मंगल अपनी विदशा में शत्रुभय, घोर कलह, अकस्मात् भय, रक्तस्राव तथा अपमृत्यु करता है।।३०।। (मं० रा०) मंगल विदशा में राहु बन्धन, राजभंग, धन हानि, निकृष्ट भोजन तथा शत्रु से नित्य कलह करता है।।३१।। (मं० बृ०) मंगल विदशा में गुरु, मति-नाश तथा दुःख, संताप, कलह, चिन्तित कार्य की हानि करता है।।३२।। (मं० श०) मंगल की विदशा में शनि स्वामी नाश, पीड़ा, धन हानि, महाभय, विकलता, कलह तथा कष्ट करता है।।३३।। (मं० बु०) मंगल विदशा में बुध बुद्धिनाश, धनहानि, ज्वर, अन्नधन, वस्त्र का नाश करता है।।३४।। (मं० के०) मंगल की विदशा में केतु आलस्य, सिरदर्द, रोग, अपमृत्यु, राजभय तथा शस्त्र से घात करता है।।३५।। (मं० शु०) मंगल विदशा में शुक्र चाण्डाल से संकट की उत्पत्ति, भय, राज से भय, शस्त्र से भय, अतिसार और बमन की बिमारी करता है।।३६।। (मं० सू०) मंगल विदशा में सूर्य भूमि लाभ, धन लाभ, सन्तोष, मित्र से संगति, सर्वत्र सुख की प्राप्ति करता है।।३७।। (मं० चं०) मंगल विदशा में चन्द्रमा दक्षिण दिशा में लाभ, श्वेत वस्त्र प्राप्ति, भूषण प्राप्ति तथा सर्व कार्य सिद्ध करता है।।३८।।

अथ राहुविदशाफलमाह

(रा० रा०) बंधनं बहुधा रोगो बहुघातं सुहृद्भयम् ।। अकस्मादापदो यान्ति भयं राहोर्जलाग्नितः ।।३९।। (रा० बृ०) सर्वत्र लभते लाभं गजाश्वं च धनागमम् ।। राजसन्मानदं राज्यं भवेद्राह्वन्तरे गुरुः ।।४०।। (रा० श०) बंधनं जायते घोरं सुखहानिर्महद्भयम् ।। प्रत्यहं वातपीडा च राहो राह्वंतरे शनिः ।।४१।। (रा० बु०) सर्वत्र बहुधा लाभः स्त्रीसमश्च विशेषतः ।। परदेशगतः सिद्धि राहो राह्वंतरे बुधः ।।४२।। (रा० के०) बुद्धिनाशो भयं विघ्नं धनहानिर्महद्भयम् ।। सर्वत्र कलहोद्वेगौ राहो राह्वंतरे शिखी ।।४३।। (रा० शु०) योगिनीभ्यो मयं भूयादश्वहानिः कुभोजनम् ।। स्त्रीनाशः कुलजं शोकं राहो राह्वंतरे सितः ।।४४।। (रा० सू०) ज्वररोगो महाभीतिः पुत्रपौत्रादिपीडनम् ।। अल्पमृत्युः प्रमादश्च राहो राह्वंतरे रविः ।।४५।। (रा० चं०) उद्वेगकलहौ चिंता मानहानिर्महद्भयम् ।। पितुर्विकलता देहे राहो राह्वंतरे शशी ।।४६।। (रा० मं०) भगंदरकृता पीडा रक्तपित्तप्रपीडनम् ।। अर्थहानिर्महोद्वेगो राहो राह्वंतरे कुजः ।।४७।।

राहु विदशा फल

(रा० रा०) राहुविदशा में राहु बंधन, रोग, घात, मित्र से भी भय, तथा अचानक आपत्ति और जल तथा अग्नि से भय करता है।।३९।। (रा० बृ०) राहु विदशा में गुरु सर्वत्र लाभकारी, हाथी, घोड़ा, धन सम्पत्तियुक्त राजा के समान प्रतिष्ठा करता है।।४०।। (रा० श०) राहु विदशा में शनि, घोर बधनप्रदाता, सुखहानिकारक, भयदाता, प्रतिदिन वात वेदना कारक है।।४१।। (रा० बु०) राहु विदशा में बुध-प्रायः सर्वत्र लाभकारक, स्त्री के समान भीरू प्रकृति तथा परदेश में सिद्धि देता है।।४२।। (रा० के०) राहुविदशा में केतु-बुद्धिनाश, भय, विघ्न, धनहानि, महान् भय, सर्वत्र कलह तथा उद्वेग करता है।।४३।।

(रा० शु०) राहु विदशा में शुक्र-योगिनियों का भय, पशु हानि, निकृष्ट भोजन, स्त्रीनाश, शोक करता है।।४४।। (रा० सू०) राहु विदशा में सूर्य-ज्वररोग, महान् भय, पुत्र पौत्र पीड़ा, अल्पमृत्यु, तथा प्रमादकारक है।।४५।। (रा० चं०) राहु-विदशा में चन्द्रमा-उद्वेग, कलह, चिन्ता, मानहानि, महान् भय तथा पिता को विकलता करता है।।४६।। (रा० मं०) राहु की विदशा में मंगल-भगंदर की पीड़ा, रक्तपित्त की बीमारी, धनहानि तथा उद्वेग करता है।।४७।।

अथ गुरोर्विदशाफलमाह

(बृ० बृ०) हेमलाभो धान्यवृद्धिः कल्याणं च फलोदयः ।। बहु भावं गृहे बुद्धिं जीवजीवांतरे गुरुः ।।४८।। (गु० श०) गोभूमिहयलाभः स्यात्सर्वत्र सुखसाधनम् ।। संग्रहो ह्यन्नपानादि गुरोर्गुर्वंतरे शनिः ।।४९।। (गु० बु०) विद्यालाभो वस्त्रलाभो ज्ञानलाभः समौक्तिकः ।। सुहृदा संगमः स्नेहो जीवजीवांतरे बुधः ।।५०।। (बृ० के०) जलभीतिस्तथा चौर्यं बंधनं कलहो भवेत् ।। अल्पमृत्युर्भयं घोरं जीवजीवांतरे ध्वजः।।५१।। (बृ० शु०) नानाविद्यार्थसंप्राप्तिर्हेमवस्त्रविभूषणम् ।। लभते क्षेमसंतोषंजीवजीवांतरे कविः ।।५२।। (बृ० सू०) नृपाल्लाभस्तथा मित्रात्पितृतो मातृतोपि वा ।। सर्वत्र लभते पूजां जीवजीवांतरा रविः ।।५३।। (बृ० चं०) सर्वदुःखविमोक्षश्च मुक्तालाभो हयस्य च ।। सिध्यंति सर्वकार्याणि जीवजीवांतरे शशी ।।५४।। (बृ० मं०) शस्त्रभीतिर्गुदे पीडा वह्निमांद्यमजीर्णता।। पीडा शत्रुकृता भूरि जीवजीवांतरे कुजः ।।५५।। (बृ० रा०) चांडालेन विरोधः स्याद्भयं तेभ्यो रतिग्रहः ।। कष्टं स्याद्व्याधिशत्रुभ्यो जीवजीवांतरे तमः ।।५६।।

गुरु विदशा फल-

(गु० गु०) गुरुविदशा में गुरु-सुवर्णलाभ, कल्याण, फलप्राप्ति, घर में सम्पन्नता, श्रेष्ठबुद्धि करता है।।४८।। (गु० श०) गुरु विदशा में शनि-गौ, भूमि, घोड़ा का लाभ सर्वत्र लाभ तथा सुख, अन्नादि का भंडारपूर्ण करता है।।४९।। (गु० बु०) गुरुविदशा में बुध-विद्यालाभ, वस्त्रलाभ, ज्ञानोदय, रत्नलाभ, मित्रसमागम तथा प्रीति करता है।।५०।। (गु० के०) गुरु विदशा में केतु-जल से भय, चोरी, बंधन, कलह, अल्पमृत्यु का घोर भय उत्पन्न करता है।।५१।। (गु० शु०) गुरु विदशा में शुक्र-अनेक विद्या तथा धन की प्राप्ति, सुवर्ण, रत्न तथा भूषणं, क्षेम, संतोष देता है।।५२।। (गु० सू०) गुरु विदशा में सूर्य-राजा से लाभ, पिता, माता आदि सबसे सन्मान प्राप्त करता है।।५३।। (गु० चं०) गुरु विदशा में चन्द्रमा-सर्व दुःख हानि, मोतीका लाभ तथा घोड़ाका लाभ तथा सर्वकार्य सिद्ध करता है।।५४।।(गु०मं०) गुरु विदशा में मंगल-शस्त्र से भय, गुदा में पीड़ा, अग्निमांद्य, अजीर्णता तथा शत्रु से पीड़ा देता है।।५५।। (गु० रा०) गुरुविदशा में राहु-चाण्डाल से विरोध और भय, तथा कामुकता, रोग और शत्रु से कष्ट कारक होता है।।५६।।

अथ शनिविदशाफलमाह

(श० श०) देहपीडा कलेर्भीतिर्भयमंत्यजलोकतः ।। विदेशगमनंदुःखं शनेः शन्यंतरे शनिः

।।५७।। (श० बु०) बुद्धिनाशः कलेर्भीतिमन्नपानादिहानिकृत् ।। धनहानिर्भयं शत्रोः शनेः शन्यंतरे बुधः ।।५८।। (श० के०) बंधुशत्रुगृहे जातो वर्णहानिर्बहुक्षुधा ।। चित्ते चिन्ता भयं त्रासः शनेः सौरांतरे शिखी ।।५९।। (श० शु०) चिंतिते फलितं वस्तु कल्याणं स्वजनं जने ।। मनुष्यकृतितो लाभः शनेः शन्यंतरे भृगुः ।।६०।। (श० सू०) राजतेजोधिकारित्वं स्वगृहे जायते कलिः ।। ज्वरादिव्याधिपीडा च कोणे कोणांतरे रविः ।।६१।। (श० चं०) स्फीतबुद्धिर्महारंभो मंदतेजा बहुव्ययः ।। बहुस्त्रीभिः समं भोगं कोणे कोणांतरे शशी ।।६२।। (श० मं०) तेजोहानिः पुत्रघातो वह्निभीती रिपोर्भयम् ।। वातपित्तकृता पीडा कोणे कोणांतरें कुजः ।।६३।। (श० रा०) धननाशो वस्त्रहानिर्भूमिनाशो भयं भवेत् ।। विदेशगमनं मृत्युः कोणे कोणांतरे कुजः ।।६४।। (श० बृ०) गृहेषु स्त्रीकृतं छिद्रंह्यसमर्थो निरीक्षणे ।। अथ वा कलिमुद्वेगं शनेः सौरांतरे गुरुः ।।६५।।

शनि विदशा फल

(श० श०) शनि विदशा में शनि-देहपीड़ा, कलह तथा शूद्र से भय, विदेश की यात्रा तथा दुःख कारक होता है।।५७।। (श० बु०) शनि विदशा में बुध- बुद्धिनाश, कलह का भय, अन्नपान आदि में हानि, धन हानि तथा शत्रु से भय करता है।।५८।। (श० के०) शनि विदशा में केतु-बन्धु तथां शत्रु के घर में आवागमन आचार धर्म की हानि, भूख से व्याकुलता, चिन्ता, भय, त्रास कारक है।।५९।। (श० शु०) शनि विदशा में शुक्र-विचार मात्र से वस्तु की प्राप्ति, स्वजन से कल्याण, मानवनिर्मित वस्तु से लाभ कारक होता है।।६०।। (श० सू०) शनि विदशा में सूर्य-राजा के समान तेजस्वी, परिवार में कलह, ज्वर आदि व्याधि तथा पीड़ा कारक होता है।।६१।। (श० चं०) शनिविदशा में चन्द्र-शुद्ध बुद्धि, बड़े कार्यों का आरंभ, मन्द तेज, विशेष खर्च, अनेक स्त्रियों से प्रेम कारक है।।६२।। (श०. मं०) शनि विदशा में मंगल-तेज की हानि, पुत्र द्वारा घात, अग्नि से भय, शत्रु से भय, वात, पित्त से पीड़ा करता है।।६३।। (श० रा०) शनि विदशा में राहु-धननाश, वस्त्रहानि, भूमिनाश भय, तथा विदेश यात्रा और मृत्यु कारक है।।६४।। (श० बृ०) शनि विदशा में गुरु-घर में स्त्री के दुश्चरित्र को जानता हुआ भी देखने में असमर्थ, यदि देखे तो कलह, उद्वेग कारक होता है।।६५।।

अथ बुधविदशाफलमाह

(बु० बु०) बुद्धिर्विद्यार्थलाभो वा वस्त्रलाभो महत्सुखम् ।। स्वर्णादिधनलाभः स्यात्सौम्यसौम्यांतरे बुधः ।।६६।। (श० के०) कठिनान्नस्य संप्राप्तिरुदरे रोगसंभवः ।। कामलं रक्तपित्तं च सौम्यसौम्यांतरे शिखी ।।६७।। (बु० शु०) उत्तरस्यां भवेल्लाभो हानिः स्यात्तु चतुष्पदात् ।। अधिकारान्महाप्रीतिः सौम्ये सौम्यांतरे भृगुः ।।६८।। (बु० सू०) तेजोहानिर्भवेद्रोगस्तनुपीडा तु मांदवी ।। जायते चित्तवैकल्यं सौम्यसौम्यांतरे रविः ।।६९।। (बृ० चं०) स्त्रीलाभश्चार्थसंपत्तिः कन्यालाभो महद्धनम् ।। लभते सर्वतः सौख्यं सौम्यसौम्यांतरे शशी ।।७०।। (बु० मं०) धर्मधीर्धनसंप्राप्तिश्चौराग्न्यादिप्रपीडनम् ।। रक्तवस्त्रं शस्त्रघातः सौम्यसौम्यांतरे कुजः ।।७१।। (बु० रा०) कलहो जायते स्त्रीभिरकस्माद्भयसंभवः ।। राजशस्त्रकृता भीतिः सौम्यसौम्यांतरे तमः ।।७२।। (बु० बृ०)

राज्यं राज्याधिकारी वा पूजा राजसमुद्भवा ॥ विद्याधरान्नगुल्मश्च सौम्यसौम्यांतरे गुरुः ॥७३॥ (बु० श०) वातपित्तमहापीडा देहघातसमुद्भवा ॥ धननाशमवाप्नोति सौम्यसौम्यांतरे शनिः ॥७४॥

बुध विदशा में फल

(बु० बु०) बुध विदशा में बुध-बुद्धि, विद्या, धन का लाभ, वस्त्रलाभ, महान् सुख, सुवर्ण आदि धन का लाभ करता है।।६६।। (बु० के०) बुध विदशा में केतु-कठिन अन्नभक्षण से पेट में रोग होता है। पीलिया रोग तथा रक्तपित्त रोग होता है।।६७।। (बु० शु०) बुध विदशा में शुक्र-उत्तरदिशा में लाभ हो और चोपाया पशु से हानि, अधिकार से प्रीति उत्पन्न करता है।।६८।। (बु० सू०) बुध विदशा में सूर्य-तेजो हानि, रोग, शरीरपीड़ा, अग्निमांद्य तथा चित्त में विकलता करता है।।६९।। (बु० चं०) बुध विदशा में चन्द्रमा-स्त्रीलाभ, धनलाभ, कन्यालाभ तथा बहुत धन का लाभ और सुख करता है।।७०।। (बु० मं०) बुध विदशा में मंगल-धर्मबुद्धि, धन लाभ, चोर तथा अग्नि-जन्य हानि, रक्तवस्त्र से लाभ तथा शस्त्र चाकू आदि से घात करता है।।७१।। (बु० रा०) बुध विदशा में राहु-स्त्री जाति से कलह तथा अकस्मात् भय होता है। राजा तथा शस्त्र से भय कारक है।।७२।। (बु० बृ०) बुध विदशा में गुरु-राज्य देता है या राज्याधिकारी करता है। तथा राजा से पूजा होती है। विद्याधारण में समर्थता तथा गुल्मरोगकारक है।।७३।। (बु० श०) बुध विदशा में शनि-वात,पित्त जनित पीड़ा या घात जनित पीड़ा हो। तथा धननाश कारक होता है।।७४।।

अथ केतोर्विदशाफलमाह

(के० के०) अपां समुद्भवोऽकस्माद्देशांतरसमागमः ॥ धननाशोऽल्पमृत्युश्च केतोः केत्वंतरे शिखी ॥७५॥ (के० शु०) म्लेच्छभीत्यर्थनाशो वा नेत्ररोगः शिरोव्यथा ॥ हानिश्चतुष्पदानां च केतोः केत्वंतरे भृगुः ॥७६॥ (के० सू०) मित्रैः सह विरोधश्च स्वल्पमृत्युः पराजयः ॥ मतिभ्रंशो विवादश्च केतोः केत्वंतरे रविः ॥७७॥ (के० चं०) अन्ननाशो यशोहानिर्देहपीडा मतिभ्रमः ॥ आमवातादिवृद्धिश्च केतोः केत्वंतरे शशी ॥७८॥ (के० मं०) शस्त्रघातेनपातेन पीडितो वह्निपीडया ॥ नीचाद्भीती रिपोः शंका केतोः केत्वंतरे कुजः ॥७९॥ (के० रा०) कामिनीभ्यो भयं भूयात्तथा वैरिसमुद्भवः॥क्षुद्रादपि भवेद्भीतिःकेतोःकेत्वंतरे तमः ॥८०॥ (के० गु०) धनहानिर्महोत्पातो वस्त्रमित्रविनाशनम् ॥ सर्वत्र लभते क्लेशं केतोः केत्वंतरे गुरुः ॥८१॥ (के० श०) गोमहिष्यादिमरणं देहपीडा सुहृद्वधः ॥ स्वल्पाल्पलाभकरणं केतोः केत्वंतरे शनिः ॥८२॥ (के० बु०) बुद्धिनाशो महोद्वेगो विद्याहानिर्महाभयम् ॥ कार्यसिद्धिर्न जायेत केतोः केत्वंतरे बुधः ॥८३॥

केतु विदशा फल

(के० के०) केतु विदशा में केतु-अकस्मात् जलोदर आदि बीमारी, देशान्तरयात्रा, धननाश, अल्पमृत्यु कारक है।।७५।। (के० शु०) केतु विदशा में शुक्र-म्लेच्छ जाति से भय, धननाश, नेत्ररोग, सिरदर्द, चौपाये पशुओं की हानि कारक होता है।।७६।। (के० सू०) केतु

विदशा में सूर्य-मित्रों के साथ विरोध, स्वल्पमृत्यु, पराजय, बुद्धिनाश, विवाद कारक होता है।।७७।। (के० चं०) केतु विदशा में चन्द्रमा-अन्ननाश, यशोहानि, देहपीड़ा, मतिभ्रम, आमवात रोग की वृद्धि करता है।।७८।। (के० मं०) केतु विदशा में मंगल-शस्त्र घात से या गिरने से पीडित हो तथा अग्निभय, नीच जाति से भय, शत्रु से भय करता है।।७९।। (के० रा०) केतु विदशा में राहु-स्त्रियों से भय, तथा शत्रु से भय, एवं मामूली आदमी से भी डरता है।।८०।। (के० बृ०) केतु विदशा में गुरु-धन हानि, महान् उत्पात, वस्त्रनाश, मित्रता की हानि, सर्वत्र क्लेश कारक है।।८१।। (के० श०) केतु विदशा में शनि-गाय भैंस आदि की मृत्यु, देह पीड़ा, मित्र की हत्या, साधारण लाभकारक है।।८२।। (के० बु०) केतु विदशा में बुध-बुद्धिनाश, महान् उद्वेग, विद्याहानि, महाभय, कार्यहानि कारक है।।८३।।

अथ शुक्रविदशाफलमाह

(शु० शु०) श्वेताश्ववस्त्रमुक्ताद्याः स्वर्णमाणिक्यसंभवः ।। लभते सुन्दरीं नारीं शुक्रे शुक्रांतरे सितः ।।८४।। (शु० सू०) वातज्वरः शिरःपीडा राज्ञः पीडा रिपोरपि ।। जायते स्वल्पलाभोपि शुक्रे शुक्रांतरे रविः ।।८५।। (शु० चं०) कन्याजन्म नृपाल्लाभो वस्त्राभरणसंयुतः ।। राज्याधिकारसंप्राप्तिः शुक्रे शुक्रांतरे शशी ।।८६।। (शु० मं०) रक्तपित्तादिरोगश्च कलहस्ताडनं भवेत् ।। महान्क्लेशो भवेदत्र शुक्रे शुक्रांतरे कुजः ।।८७।। (शु० बृ०) महद्द्रव्यं महद्राज्यं वस्त्रमुक्तादिभूषणम् ।। गजाश्वादिपदप्राप्तिः शुक्रे शुक्रांतरे गुरुः ।।८८।। (शु० रा०) कलहो जायते स्त्रीभिरकस्माद्भयसंभवः राजतः शत्रुतः पीडा शुक्रे शुक्रांतरे तमः ।।८९।। (शु० श०) खरोष्ट्रछागसंप्राप्तिर्लोहमाषतिलादिकम ।। लभते स्वल्पपीडादि शुक्रे शुक्रांतरे शनिः ।।९०।। (शु० बु०) धनज्ञानमहाँल्लाभो राजराज्याधिकारता ।। निक्षेपाद्धनलाभोपि शुक्रे शुक्रांतरे बुधः ।।९१।। (शु० के०) अल्पमृत्युर्महाघोराद्देशाद्देशांतरागमः लाभोऽपि जायते मध्ये शुक्रे शुक्रांतरे शिखी ।।९२।।

इति श्रीबृहत्पाराशरहोराशास्त्रे पूर्वखण्डे सूर्याद्युपदशाफलकथनं नाम द्विचत्वारिंशोऽध्यायः ।।४२।।

शुक्र विदशा फल

(शु० शु०) शुक्र विदशा में शुक्र- श्वेत घोड़ा, वस्त्र, मोती, रत्न, सुवर्ण, माणिक आदि से युक्त भूषण सुन्दरी स्त्री प्राप्त करता है।।८४।। (शु० सू०) शुक्र विदशा में सूर्य-वात ज्वर, सिरदर्द, राजा तथा शत्रु से भय, साधारण लाभ भी करता है।।८५।। (शु० चं०) शुक्र विदशा में चन्द्रमा-कंन्या का जन्म, राजा से लाभ, वस्त्र आभरण का लाभ, राज्याधिकार प्राप्ति करता है।।८६।। (शु० मं०) शुक्र विदशा में मंगल-रक्त पित्त की बीमारी, कलह, ताड़न तथा महान् क्लेश कारक है।।८७।। (शु० बृ०) शुक्र विदशा में गुरु-बहुत द्रव्य प्राप्ति, महान् ऐश्वर्य, वस्त्र, रत्नप्राप्ति, हाथी घोडे आदि प्राप्त करता है।।८८।। (शु० रा०) शुक्र विदशा में राहु-स्त्रियों से कलह, अकस्मात् भय का संभव, राजा तथा शत्रु से पीडाकारक होता है।।८९।। (शु० श०) शुक्र विदशा में शनि-ऊंट, गधा आदि पशुओं की प्राप्ति, स्वल्पपीड़ा,

लोह, माष, (उड़द) तिल आदि का लाभ करता है।।९०।। (शु० बु०) शुक्र विदशा में बुध-बहुधन लाभ, ज्ञान लाभ, राज में मान तथा अधिकार तथा भूमिगत धन लाभ करता है।।९१।। (शु० के०) शुक्र विदशा में केतु-अल्पमृत्यु (मृत्युसमान) घोरतर देशदेशान्तर यात्रा, तथा लाभ भी होता है।।९२।।

इति श्री बृ० पा० हो० शा० पू० भावप्रका० सूर्याद्युपदशाफलकथनं नाम द्विचत्वारिंशोऽध्यायः ।।४२।।

अथ सूक्ष्मदशाकरणमाह

स्वोपदशाघटीवृन्दं हतं स्वाब्दग्रहेण च ।।विंशोत्तरशतेनाप्तं (१२०) लिप्ता शेषं कलादिकम् ।।१।।

सूक्ष्मदशाकरण

पूर्व कथित ग्रह की विदशा के दिनादि को घटीरूप में एकरस करके जिस ग्रह की सूक्ष्मदशा देखनी हो उसके दशावर्ष से गुणा करके १२० का भाग देने से सूक्ष्म दशा (घटचादि) प्राप्त होगी।।१।।

अथाग्रे उपदशाचक्राणि

अथ सूर्योपदशा तन्मध्ये सूर्यसूक्ष्मचक्रं लिख्यते										
ग्रहाः	सूर्य	चं०	मं०	रा०	बृ०	श०	बु०	के०	शु०	यो०
दिना०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	३
घटचः	१६	२७	१८	४८	४३	५१	४५	१८	५४	१८
पला०	१२	०	५४	३६	१२	१८	५४	५४	०	०

उदाहरण-जैसे सूर्य में सूर्य की सूक्ष्मदशा निकालनी है-सूर्य की विदशा दि० ५ घ० २४ है। इसकी कुल घटीसंख्या ३२४ हुई। इसको सूर्यदशा वर्ष से गुणा किया तो १९४४ हुए। इसमें १२० का भाग दिया तो १६ आए। शेष २४ को ६० से गुणा किया तो १४४०। पुनः १२० का भाग दिया तो लब्ध १२''। इस प्रकार १६ घटी १२ पल यह सू० सू० सू० सू०=सूक्ष्म दशा हुई। इसी रीति से अन्य ग्रहों की सूक्ष्मदशा प्राप्त करना। इसका फल प्रायः सौम्यग्रहों का शुभ और पापग्रहों का अशुभ समझना चाहिए। पूर्वोक्त स्थानादि योगानुसार ही फल का निर्देश होना चाहिए। इस प्रकरण में फलादेश सम्बन्धी श्लोकों में प्रायः इसी नियम से फल कहा गया है। वह ग्रह के केवल नैसर्गिक स्वभाव को ही लक्ष्य करके कहा है, नहीं तो अधिक से अधिक सूक्ष्म दशा १।।-१।।। दिन और कम में आधेदिन में श्लोकोक्त फल होना प्रायः संभव ही नहीं है।

अथ सूक्ष्मदशाफलमाह

लग्नेश्वरो रंध्रपतिश्च युक्तौ वृषे वृषांशे वृषभे दृकाणे ।। स्थितौ भवेतां यदि तौ वृषेण यातान्निमित्तौ मरणस्य वेद्यौ ।।२।। वृषे युग्मांशगौ तौ चेद्भल्लूकेन मृतिर्नृणाम् ।। वृषे कर्कांशगौ तौ चेन्नक्रादथ जले मृतिः ।।३।। वृषे सिंहाशगौ तौ चेद्व्याघ्राद्याघाततो मृतिः वृषे कन्यांशगौ तौ चेत्कपिना नाऽत्र संशयः ।।४।। वृषे तुलांशगौ तौ चेद्व्याघ्राद्भीतिं वदेत्तदा ।। वृषे कौर्मांशगौ तौ चेद्भुक्तौ चिंता व्ययो भवेत् ।।५।। वृषे चापांशगौ तौ चेदश्वेन च मृतिं वदेत् ।। वृषे कुम्भांशगौ तौ चेद्दंतव्यापारतो भयम् ।।६।। वृषे मृगांशगौ तौ चेन्महिषेण मृतिं वदेत् ।। वृषे कुम्भांशगौ तौ चेद्गोलांगूलान्मृतिं वदेत् ।।७।। वृषे झषांशगौ तौ चेदजबस्ताद्भयं भवेत् ।। एवं संचिंत्य मतिमान्भ्रात्रादीनां मृतिं वदेत् ।।८।।

सूक्ष्म दशा फल

लग्नेश तथा अष्टमेश दोनों वृषराशि में वृष नवांश में या वृष द्रेश्काण हों तो वृषभ के घात से मरण होता है। तथा लग्नेशाष्टमेश वृषराशि में मिथुन नवांश में हो तो भालू से मृत्यु होती है, वृष के कर्कांश में हों तो जल में मगर से मृत्यु हो।।३।। वृष के सिंहाश में हों तो व्याघ्र आदि के आघात से (आगे इसी प्रकार) कन्यांश में हों तो वानर से मृत्यु हो।।४।। तुलांश में व्याघ्र से, वृश्चिकांश में हों तो अन्तर में चिन्ता, खर्च हो।।५।। धनांश में हों तो घोड़े के कारण मृत्यु हो। कुम्भांश में हों तो हाथीदांत के व्यापार के कारण मृत्यु हो।।६।। मकरांश में हो तो महिष (भैंसे) से मृत्यु हो तथा कुम्भांश में गौ की पूंछ की आघात से भी मृत्यु सम्भव है।।७।। मीनांश में बकरे से भय हो।। इसी प्रकार भ्राता आदि के लिये भी भावेश और उसके अष्टमेश के उपर्युक्त नवमांश की स्थिति से विचार करना।।८।।

अथ सूर्यादिग्रहाणां सूक्ष्मदशाफलमाह

(सू० सू०) नृणां भूमिपरित्यागो विगमं प्राणनाशनम् ।। स्थाननाशो महाहानिः सूर्यसूक्ष्मदशाफलम् ।।९।। (सू० चं०) देवब्राह्मणभक्तिश्च नित्यकर्मरतस्तथा ।। सुप्रीतिः सर्वमित्रैश्च रवेः सूक्ष्मगते विधौ ।।१०।। (सू० मं०) क्रूरकर्मरतिस्तिग्मशत्रुभिः परिपीडनम् ।। रक्तस्रावादिरोगश्च रवेः सूक्ष्मगते कुजे ।।११।। (सू० रा०) चौराग्निविषभीतिश्च रणे भंगः पराजयः ।। दानधर्मादिहीनश्च रवेः सूक्ष्मगते ह्यगौ ।।१२।। (सू० बृ०) नृपसत्काराजार्हः सेवकैः परिपूजितः ।। राजचक्षुर्गतः शांतः सूर्यसूक्ष्मगते गुरौ ।।१३।। (सू० श०) चौर्यसाहसकर्मार्थं देवब्राह्मणपीडनम् ।। स्थानच्युतिं मनोदुःखं रवेः सूक्ष्मगते शनौ ।।१४।। (सू० बु०) दिव्यांबरादिलब्धिश्च दिव्यस्त्रीपरिभोगता ।। अचिंतितार्थसिद्धिश्च रवेः सूक्ष्म गते बुधे ।।१५।।

सूर्य में सूक्ष्मदशाफल

(सू०३सू०)भूमि या स्थान त्याग,यात्रा,प्राणनाश,महान् हानि होती है।।९।।(सू०३ चं०) सूर्य की अंतर दशा में चन्द्रमा की सूक्ष्मदशा हो तो देवता और ब्राह्मण की भक्ति, नित्य कर्म में रति, और मित्रों से प्रीति होती है।।१०।। (सू०३मं०) सूर्य में मंगल हो तो क्रूर कर्म में

रत रहता है, दुष्ट शत्रुओं से पीडित होता है तथा रक्त स्राव आदि रोग होता है।।११।। (सू० सू० सू० रा०) चौर अग्नि तथा विष से पीडा हो, रण में भंग तथा पराजय हो, दान धर्म से हीन हो।।१२।। (सू० ३ बृ०) राजयोग्य सत्कार सेवकरों से पूजा तथा राजसभा में प्रवेश और आत्म संतोष प्राप्त हो।।१३।। (सू० ३ श०) चौरी आदि में उत्साह, देव ब्राह्मण को पीड़ा, स्थान हानि तथा मन में दुःख होता है।।१४।। (सू० ३ बु०) सुन्दर वस्त्राभूषण प्राप्ति, सुन्दरनारी भोग तथा अचिन्तित कार्य सिद्ध होता है।।१५।।

(सू० के०) गुरुतार्तिविनाशश्च भृत्यदारभयस्तथा ।। क्वचित्सेवकसंबंधो रवेः सूक्ष्मगते ध्वजे ।।१६।। (सू० शु०)पुत्रमित्रकलत्रादिसौख्यसंपन्न एव च ।। नानाविधा च संपत्ती रवेः सूक्ष्मगते भृगौ ।।१७।।

(सू० ३ के०) अधिक बीमारी, हानि स्त्री तथा नोकर से भय तथा सेवक से कभी २ मेल भी रहे।।१६।। (सू० ३ शु०) स्त्री, पुत्र, मित्र आदि से सुख हो तथा अनेक प्रकार की सम्पत्ति प्राप्त हो।।१७।।

अथ चंद्रसूक्ष्मदशाफलमाह

(चं० चं०) भूषणं भूमिलाभश्च सन्मानं नृपपूजनम् ।। तामसत्वं गुरुत्वं च चंद्रसूक्ष्मदशाफलम् ।।१८।। (चं० मं०) दुःखं शत्रुविरोधश्च कुक्षिरोगः पितुर्मृतिः ।। वातपित्तकफोद्रेकः शशिसूक्ष्मगते कुजे ।।१९।। (चं० रा०) क्रोधनं मित्रबंधूनां देशत्यागो धनक्षयः ।। विदेशान्निगडप्राप्तिरिंदुसूक्ष्मगतेप्यहौ।।२०।। (चं० बृ०) छत्रचामरसंयुक्तं वैभवं पुत्रसंपदः ।। सर्वत्र सुखमाप्नोति चंद्रसूक्ष्मगते गुरौ ।।२१।। (चं० श०) राजोपद्रवनाशः स्याद्व्यवहारे धनक्षयः ।। चौरत्वं विप्रभीतिश्च चंद्रसूक्ष्मगते शनौ ।।२२।।

चन्द्रसूक्ष्मदशाफल

(चं० ३ चं०) आभूषण तथा भूमिका लाभ, सन्मान, राजपुजा, तामसी बुद्धि तथा अभिमान होता है।।१८।। (चं० ३ मं०) दुःख, शत्रु से विरोध, कुक्षिरोग तथा पिता की मृत्यु एवं सन्निपात आदि बीमारी होती है।।१९।। (चं० ३ रा०) मित्र बन्धुओं पर क्रोध, देशत्याग, धनहानि, विदेश में कैद होना आदि होता है।।२०।। (चं० ३ बृ०) छत्र चामर से युक्त विभव, पुत्र आदि सम्पत्ति, तथा सर्वत्र सुख प्राप्त होता है।।२१।। (चं० ३ श०) राज से भय, धन का नाश हो, व्यापार में हानि हो, चोरी तथा ब्राह्मण से भी भय हो।।२२।।

(चं० बु०) राजमानं वस्तुलाभो विदेशाद्वाहनादिकम् ।। पुत्रपौत्रसमृद्धिश्च चंद्रसूक्ष्मगते बुधे ।।२३।। (चं० के०) आत्मनो वृत्ति हननं सस्यभृङ्गवृषादिभिः ।। अग्निचौर्यादिभीतिः स्याच्चंद्रसूक्ष्मगते ध्वजे ।।२४।। (चं० शु०) विवाहो भूमिलाभश्च वस्त्राभरणवैभवम् ।। राज्यलाभश्च कीर्तिश्च चन्द्रसूक्ष्मगते भृगौ।।२५।। (चं०सू०) क्लेशात्क्लेशःकार्यनाशः पशुधान्यधनक्षयः ।। गात्रवैषम्यभूमिश्च चंद्रसूक्ष्मगते रवौ ।।२६।।

(चं० ३ बु०) राज से सन्मान, वस्तु लाभ, विदेश के वाहन का लाभ, पुत्र पौत्र समृद्धि प्राप्त होती है।।२३।। (चं० ३ के०) अपनी वृत्तिका नाश, सस्य (वनस्पति) शृंग आदि से हानि, अग्नि चोर आदि से भय हो।।२४।। (चं० ३ शु०) विवाह, भूमिलाभ, वस्त्र आभूषण सम्पत्ति की प्राप्ति, राज्यलाभ और यशलाभ होता है।।२४।। (चं० ३ सू०) दुःख के बाद दुःख तथा कार्यहानि, पशुधान्य और धन का क्षय, शारीरिक स्वास्थ्य की विषमता होती है।।२६।।

अथ भौमसूक्ष्मदशाफलमाह

(मं० मं०) भूमिहानिर्मनः खेदो ह्यपस्मारी च बंधुयुक् ।। पुरक्षोभमनस्तापो भौमसूक्ष्मदशाफलम् ।।२७।। (मं० रा०) अंगदोषो जनाद्भीतिः प्रमदावंशनाशनम् ।। वह्निसर्पभयं घोरं भौमसूक्ष्मगतेप्यहौ ।।२८।। (मं० बृ०) देवपूजारतिश्चात्र मंत्राभ्युत्थानतत्पर: ।। लोकपूज्यं प्रमोदं च भौमसूक्ष्मगते गुरौ ।।२९।।

भौमसूक्ष्मदशाफल

(मं० ३ मं०) भूमि की हानि, मन में खेद, अपस्मार (मृगी) की बीमारी, बंधुसाहाय्यलाभ, मन में क्षोभ और दुःख होता है।।२७।। (मं० ३ रा०) किसी अंग में दोष, भय, स्त्रीहानि, अग्नि सर्प से भय होता है।।२८।। (मं० ३ बृ०) देवताओं की पूजा, भक्ति, मन्त्र पुरश्चरणरति, लोक पूजा तथा सुख होता है।।२९।।

(मं० श०) बंधनान्मुच्यते वद्धो धनधान्यपरिच्छदः ।। भृत्यार्थबहुलः श्रीमान्भौमे सूक्ष्मगते शनौ ।।३०।। (मं० बु०) वाहनं छत्रसंयुक्तं राज्यभोगपरं सुखम् ।। कासश्वासादिका पीडा भौमसूक्ष्मगते बुधे ।।३१।। (मं० के०) पर प्रेरितबुद्धिश्च सर्वत्रापि च गर्हिता ।। अशुचिः सर्वकालेषु भौमसूक्ष्मगते ध्वजे ।।३२।। (मं० शु०) इष्टस्त्रीभोगसंपत्तिरिष्टभोजनसंग्रहः ।। इष्टार्थश्चैव लाभश्च भौमसूक्ष्मगते भृगौ ।।३३।। (मं० सू०) राजद्वेषो द्विजात्क्लेशः कार्याभिप्रायवंचकः ।। लोकेऽपि निंद्यतामेति भौमसूक्ष्मगते रवौ ।।३४।। (मं० चं०) शुद्धत्वं धनसंप्राप्तिर्देवब्राह्मणवत्सलः ।। व्याधिना परिभूयेत् भौमसूक्ष्मगते विधौ ।।३५।।

(मं० ३ श०) कैदी कैद से छूटता है, धन, धान्य वस्त्र प्राप्त होते हैं, नोकर मित्र आदि तथा सम्पत्तिशाली होता है।।३०।। (मं० ३ बु०) छत्रयुक्त वाहन, राजासमान, सुख के साथ श्वास खांसी आदि बीमारी भी होती है।।३१।। (मं० ३ के०) दूसरे की सम्मति में रहना, सर्वत्र निन्दा होना, सदा मलीन रहना होता है।।३२।। (मं० ३ शु०) इच्छानुसार स्त्री, सम्पत्ति,भोग,भोजन,वस्त्र, धन,लाभ आदि होते हैं।।३३।।(मं०३सू०) राजासे द्वेष,ब्राह्मणसे क्लेश, कार्य की हानि, ठगी तथा लोक में निन्दा होती है।।३४।। (मं० ३ चं०) शुद्धता, धनलाभ, देवब्राह्मण पूजा तथा रोगी रहता है।।३५।।

अथ राहोः सूक्ष्मदशाफलमाह

(रा० रा०) लोकोपद्रवबुद्धिश्च स्वकार्ये मतिविभ्रमः ।। शून्यता चित्तदोषः स्याद्राहोः

सूक्ष्मदशाफलम् ॥३६॥ (रा० बृ०) दीर्घरोगी दरिद्रश्च सर्वेषां प्रियदर्शनः ॥ दानधर्मरतः शस्तो राहोः सूक्ष्मगते गुरौ ॥३७॥ (रा० श०) कुमार्गात्कुत्सितोग्रश्च दुष्टश्च परसेवकः ॥ असत्संगमतिर्मूढो राहोः सूक्ष्मगते शनौ ॥३८॥ (रा० बु०) स्त्रीसंभोगमतिर्वाग्मी लोकसंभावनावृतः ॥ अन्नमिच्छंस्तनुग्लानी राहोः सूक्ष्मगते बुधे ॥३९॥ (रा० के०) माधुर्यं मानहानिश्च बंधनं चाप्रमारकम् ॥ पारुष्यं जीवहानिश्च राहोः सूक्ष्मगते ध्वजे ॥४०॥ (रा० शु०) बंधनान्मुच्यते बद्धः स्थानमानार्थसंचयः ॥ कारणाद्द्रव्यलाभश्च राहोः सूक्ष्मगते भृगौ ॥४१॥ (रा० सू०) व्यक्तार्शो गुल्मरोगश्च क्रोधहानिस्तथैव च ॥ वाहनादिसुखं सर्वं राहोः सूक्ष्मगते रवौ ॥४२॥ (रा० चं०) मणि रत्नधनावाप्तिर्विद्योपासनशीलवान् ॥ देवार्चनपरो भक्त्या राहोः सूक्ष्मगते विधौ ॥४३॥ (रा० मं०) निर्जितं जनविद्रावो जने क्रोधश्च बंधनात् ॥ चौर्यशीलरतिर्नित्यं राहोः सूक्ष्मगते कुजे ॥४४॥

राहुसूक्ष्मदशाफल

(रा० ३ रा०) जनसमाज में उपद्रवकारी अपने कार्य में अस्थिरता तथा किंकर्तव्य विमूढता होतीं है।।३६।। (रा० ३ बृ०) दीर्घरोगी, दरिद्री तथा जनप्रिय एवं दान धर्म में रुचि होती है।।३७।। (रा० ३ श०) कुमार्गी, दुष्टबुद्धि, उग्रस्वभाव, दुष्ट, परसेवी, असत्संगी तथा मूढ होता है।।३८।। (रा० ३ बु०) अतिकामी, वाचाल, लोक निन्दायुक्त, बहुभोजी तथा मलिन रहता है।।३९।। (रा० ३ के०) माधुर्य, मानहानि, बंधन, उपद्रव, कठोरता एवं जीव हानि भी होती है।।४०।। (रा० ३ शु०) बन्धन से मुक्ति, स्थान मान धन का सञ्चय तथा कारण से द्रव्य का लाभ होता है।।४१।। (रा० ३ सू०) बवासीर तथा गुल्मरोग, क्रोधरहितता एवं वाहन आदि का सुख होता है।।४२।। (रा० ३ चं०) मणि रत्न धन की प्राप्ति, विद्याव्यसन तथा उपासनाशीलता एवं भक्ति से देव पूजनकारी होता है।।४३।। (रा० ३ मं०) पराजय, जनसमूह से निरादर तथा बन्धुओं पर क्रोध होता है एवं सदा चोरी में चित्त रहता है।।४४।।

अथ गुरोः सूक्ष्मदशाफलमाह

(बृ० बृ०) शोकनाशो धनाधिक्यमग्निहोत्रं शिवार्चनम् ॥ वाहनं छत्रसंयुक्तं जीवसूक्ष्मदशाफलम् ॥४५॥ (बृ० श०) व्रतहा सूर्य वर्ती च विदेशे वसुनाशनम् ॥ विरोधो धननाशश्च गुरोः सूक्ष्मगते शनौ ॥४६॥ (बृ० के०) ज्ञानं विभवपांडित्ये शास्त्रश्रोता शिवार्चनम् ॥ अग्निहोत्रं गुरोर्भक्तिर्गुरोः सूक्ष्मगते ध्वजे ॥४७॥ (बृ० शु०) रोगान्मुक्तिः सुखं भोगं धनधान्यसमागमम् ॥ पुत्रदारादिकं सौख्यं गुरोः सूक्ष्मगते भृगौ ॥४८॥ (बृ० सू०) वातपित्त प्रकोपश्च श्लेष्मोद्रेकस्तु दारुणः ॥ रसव्याधिकृतं शूलं गुरोः सूक्ष्मगते रवौ ॥४९॥ (बृ० चं०) छत्रचामरसंयुक्तं वैभवं पुत्रसंपदः ॥ नेत्रकुक्षिगता पीडा गुरोः सूक्ष्मगते विधौ ॥५०॥ (बृ० मं०) स्त्रीजनाच्च विषोत्पत्तिर्बंधनं चातिनिग्रहम् ॥ देशांतरगमो भ्रांतिर्गुरोः सूक्ष्मगते कुजे ॥५१॥ (बृ० रा०) व्याधिभिः परिभूतः स्याच्चौरैरपहृतं महत् ॥ सर्पवृश्चिकदष्टत्वं गुरोः सूक्ष्मगतेप्यहौ ॥५२॥

गुरु सूक्ष्मदशा फल

(बृ० ३ बृ०) शोकनाश, बहुधन, हवन, शिवपूजा तथा छत्रयुक्त वाहन होता है।।४५।। (बृ० ३ श०) व्रतत्यागी, विदेश में धन-हानि, जन विरोध एवं दुःख होता है।।४६।। (बृ० ३ के०) ज्ञानवृद्धि, विभव, पाण्डित्य, शास्त्रश्रवण, शिवपूजा, हवन तथा गुरुभक्ति होती है।।४७।। (बृ० ३ शु०) रोगमुक्ति, सुख, भोग, धनधान्य प्राप्ति, स्त्री पुत्र सुख होता है।।४८।। (बृ० ३ सू०) वात, पित्त का प्रकोप, एवं कफ सम्बन्धी बीमारी, शूल रोग, अन्य रोग भी होते हैं।।४९।। (बृ० ३ चं०) छत्र चमरयुक्त वैभव, पुत्र आदि सम्पत्ति तथा नेत्र कुक्षि पीड़ा होती है।।५०।। (बृ० ३ मं०) स्त्री के कारण विषग्रहण, बंधन, निग्रह, देशान्तरयात्रा तथा गुरु से भ्रान्ति आदि फल होता है।।५१।। (बृ० ३ रा०) रोगों से दुःख, धन की चोरी तथा सर्प बिच्छू आदि से पीड़ा होती है।।५२।।

अथ शनेः सूक्ष्मदशाफलमाह

(श० श०) धनहानिर्महाव्याधिः शनेः पीडा कुलक्षयः ।। भिन्नाहारी महादुःखी मंदसूक्ष्मदशाफलम् ।।५३।। (श० बु०) वाणिज्यवृत्तेर्लाभश्च विद्याविभवमेव च ।। स्त्रीलाभश्च महीप्राप्तिः शनेः सूक्ष्मगते बुधे ।।५४।। (श०के०)चौरोपद्रवकुष्ठादिवृत्तिक्षयवि-गुंफनम् ।। सर्वांगपीडनं व्याधिः शनिसूक्ष्मगते ध्वजे ।।५५।। (श० शु०) ऐश्वर्यमायुधाभ्यासं पुत्रलाभोभिषेचनम् ।। आरोग्यं धनकामौ च शनिसूक्ष्मगते भृगौ ।।५६।। (श० सू०) राजतेजोविकारत्वं स्वगृहे जायते कलिः ।। किंचित्पीडा स्वदेहोत्था शनिसूक्ष्मगते रवौ।।५७।। (श० चं०) स्फीतबुद्धिर्महारंभो मंदतेजा बहुव्ययः ।। स्त्रीपुत्रैश्च समं सौख्यं शनिसूक्ष्मगते विधौ ।।५८।। (शं० मं०) तेजोहानिर्महोद्वेगो वह्निक्षयभ्रमः कलिः ।। वातपित्तकृता पीडा शनेः सूक्ष्मगते कुजे ।।५९।। (श० रा०) पितृमातृविनाशश्च मनोदुःखं गुरुव्ययम् ।। सर्वत्र विफलं स्याच्च शनिसूक्ष्मगतेप्यहौ ।।६०।। (श० बृ०) सन्मुद्राभोगसन्मानं धनधान्यविवर्द्धनम् ।। छत्रचामरसंप्राप्तिः शनेः सूक्ष्मगते गुरौ ।।६१।।

शनि सूक्ष्मदशा फल

(श० ३ श०) धनहानि, महाव्याधि, पीड़ा तथा कुल में क्षय, स्वाभाविक भोजन की अप्राप्ति, तथा महान् दुःख होता है।।५३।। (श० ३ बु०) अपने व्यापार से लाभ, विद्या और सम्पत्ति, स्त्री तथा भूमि का लाभ होता है।।५४।। (श० ३ के०) चौरों का उपद्रव, कोढ की बीमारी, वृतिका क्षय, निन्दा तथा सर्वांग में पीड़ा होती है।।५५।। (श० ३ शु०) ऐश्वर्य तथा आयुध का अभ्यास, पुत्र का लाभ तथा बड़े पद की प्रतिष्ठा, आरोग्यता तथा धन प्राप्ति होती है।।५६।। (श० ३ सू०) राज से वैमनस्य तथा स्वगृह में कलह एवं अपने शरीर में पीड़ा होती है।।५७।। (श० ३ चं०) बुद्धि की विशदता तथा बड़े कार्य का आरम्भ, अधिक खर्च तथा स्त्री पुत्र से सुख होता है।।५८।। (श० ३ मं०) तेज की हानि, महान् उद्वेग, मंदाग्नि, भ्रम, कलह तथा वातपित्त की पीड़ा होती है।।५९।। (श० ३ रा०) माता पिता की मृत्यु, मन में अशान्ति, गुप्तचिन्ता, एवं सर्वत्र विफलता होती है।।६०।। (श० ३ बृ०) श्रेष्ठ सम्पत्ति का भोग, सन्मान तथा धनधान्यकी वृद्धि एवं छत्र चामरयोग्य पदकी प्राप्ति होती है।।६१।।

अथ बुधसूक्ष्मदशाफलमाह

(बु० बु०) सौभाग्यं राजसन्मानं धनधान्यादिसंपदः ।। सर्वेषां प्रियदर्शी च बुधसूक्ष्मदशाफलम् ।।६२।। (बु० के०) बालग्रहाग्निभिस्तापः स्त्रीगदोद्भवदोषभाक् ।। कुमार्गीकुत्सितांशा च बुधसूक्ष्मगते ध्वजे ।।६३।। (बु० शु०) वाहनं धनसंपत्तिर्जलजान्नार्थसंभवः ।। शुभकीर्तिर्महाभोगो बुधसूक्ष्मगते भृगौ ।।६४।। (बु० सू०) ताडनं नृपवैषम्यं बुद्धिस्खलनरोगभाक् ।। हानिर्जनापवादं च बुधसूक्ष्मगते रवौ ।।६५।। (बु० चं०) सुभगः स्थिरबुद्धिश्च राजसन्मानसंपदः ।। सुहृदां गुरुसंस्कारो बुधसूक्ष्मगते विधौ ।।६६।। (बु० मं०) अग्निदाहो विषोत्पत्तिर्जडत्वं च दरिद्रता ।। विभ्रमश्च महोद्वेगो बुधसूक्ष्मगते कुजे ।।६७।। (बु० रा०) अग्निसर्पनृपाद्भीतिः कृच्छ्रादरिपराभवः ।। भूतावेशभ्रमाद् भ्रांतिर्बुधसूक्ष्मगतेप्यहौ ।।६८।। (बु० बृ०) गृहोपकरणं भव्यं त्यागं भोगादिवैभवम् ।। राजप्रसादसंपत्तिर्बुधसूक्ष्मगते गुरौ ।।६९।। (बु० श०) वाणिज्यवृत्तिलाभश्च विद्याविभवमेव च ।। स्त्रीलाभश्च महाव्याप्तिर्बुधसूक्ष्मगते शनौ ।।७०।।

बुध सूक्ष्म दशाफल

(बु० ३ बु०) सौभाग्य तथा राजसन्मान तथा धन धान्य आदि सम्पत्ति एवं सबसे प्रेम प्राप्त होता है।।६२।। (बु० ३ के) बालकों में पीडा, अग्नि से भय, स्त्री को बीमारी, कुमार्ग में प्रवृत्ति, निन्दनीय इच्छा होती है।।६३।। (बु०३शु०) वाहनप्राप्ति तथा धन सम्पत्ति की वृद्धि, चावल से अधिक लाभ, शुभकीर्ति तथा उत्तम भोग प्राप्त होता है।।६४।। (बु० ३ सू०) राज से दण्ड, बुद्धि में विषमता रोग, हानि तथा लोकनिन्दा होती है।।६५।। (बु० ३ चं०) सुन्दर भाग्य, स्थिरबुद्धि राज से सन्मान, सम्पत्ति, मित्र तथा गुरु से उपदेश प्राप्त होता है।।६६।। (बु० ३ मं०) अग्नि से कष्ट, विष से हानि, जड़ता, दरिद्रता, विभ्रम तथा महान् उद्वेग प्राप्त होता है।।६७।। (बु० ३ रा०) अग्नि, सर्प तथा राजा से भय, कठिनता से शत्रु का दमन, भूतावेश से चित्तभ्रम होता है।।६८।। (बु० ३ बृ०) घर के सुन्दर सामान तथा श्रेष्ठ भोग सामग्री, राजयोग्य सम्पत्ति होती है।।६९।। (बु० ३ श०) व्यापार से लाभ, विद्या तथा सम्पत्ति, स्त्री लाभ तथा महाव्याधि भी होती है।।७०।।

अथ केतोः सूक्ष्मदशाफलमाह

(के० के०) पुत्रदारादिजं दुःखं गात्रवैषम्यमेव च ।। दारिद्रयाद्भिक्षुवृत्तिश्च केतोः सूक्ष्मदशाफलम् ।।७१।। (के० शु०) रोगनाशोऽर्थलाभश्च गुरुविप्रानुवत्सलः ।। संगमः स्वजनैः सार्द्धं केतोः सूक्ष्मगते भृगौ ।।७२।। (के० सू०) युद्धभूमिविनाशश्च विप्रवासः स्वदेशतः ।। सुहृद्विपत्तिरार्तिश्च केतोः सूक्ष्मगते रवौ ।।७३।। (के० चं०) दासीदाससमृद्धिश्च युद्धे लब्धिर्जयस्तथा ।। ललिता कीर्तिरुत्पन्ना केतोः सूक्ष्मगते विधौ ।।७४।। (के० मं०) आसने भयमभ्रादेश्चौरदुष्टादिपीडनम् ।। गुल्मपीडा शिरोरोगः केतोः सूक्ष्मगते कुजे ।।७५।। (के० रा०) विनाशः स्त्रीगुरूणां च दुष्टस्त्रीसंगमाल्लघुः ।। बमनं रुधिरं पित्तं केतोः सूक्ष्मगतेऽप्यगौ ।।७६।। (के० बृ०) वैरं विरोधसंपत्तिः सहसा राजतोभवम् ।। पशुक्षेत्रविनाशार्तिः केतोः सूक्ष्मगते गुरौ ।।७७।। (के० श०) मृषा पीडा भवेत्क्षुद्रसुतोत्पत्तिश्च लंघनम् ।। स्त्रीविरोधः

सत्यहानिः केतोः सूक्ष्मगते शनौ ॥७८॥ (के० बु०) नानाविधजनाप्तिश्च विप्रयोगोऽरिपीडनम् ॥ अर्थसंपत्समृद्धिश्च केतोः सूक्ष्मगते बुधे ॥७९॥

केतु सूक्ष्मदशा फल

(के० ३के०) पुत्र स्त्री जन्य दुःख तथा शारीरिक अस्वस्थता एवं दरिद्रताके कारण भिक्षुवृत्तिसे जीवनयापन होता है॥७१॥ (के० ३ शु०) रोग का नाश तथा धनलाभ एव गुरु तथा ब्राह्मण का भक्त, इष्टमित्रों से मेल रहता है॥७२॥ (के० ३ सू०) युद्ध में विनाश तथा अन्य देश में प्रवास, मित्रों से विपत्ति, तथा क्लेश हो॥७३॥ (के० ३ चं०) दास और दासियाँ तथा सम्पत्ति हो, युद्ध से लाभ और जय हो एवं शुभ कीर्ति हो॥७४॥ (के० ३ मं०) रहने के स्थान में भय, घोड़े आदि चौपाया तथा चोर दुष्ट आदि से पीड़ा और गुल्मपीड़ा तथा सिरदर्द होता है॥७५॥ (के० ३ रा०) सास ससुर की मृत्यु तथा दुष्ट स्त्री के सहयोग से लघुता तथा रुधिर का वमन होता है॥७६॥ (के० ३ बृ०) वैर विरोध तथा अकस्मात् राजभय एवं पशु तथा खेत का नाश और अरिष्ट होता है॥७७॥ (के० ३ श०) व्यर्थ की पीड़ा तथा अत्यन्त कमजोर सन्तान की उत्पत्ति, लघन, स्त्री से विरोध, सस्य की हानि होती है॥७८॥ (के० ३बु) अनेक अतिथि का आगमन, शत्रुपीड़ा, धन, सम्पत्ति की वृद्धि होती है॥७९॥

अथ शुक्र सूक्ष्मदशा फलमाह

(शु० शु०) शत्रुहानिर्महत्सौख्यं शंकरालयसंभवम् ॥ तडागकूपनिर्माणं शुक्रसूक्ष्मदशाफलम् ॥८०॥ (शु० सू०) उरस्तापो भ्रमश्चैव गतागतविचेष्टितम् ॥ क्वचिल्लाभः क्वचिद्धानिर्भृगोः सूक्ष्म गते रवौ ॥८१॥ (शु० चं०) आरोग्यं धनसंपत्तिः कार्यलाभो गतागतैः ॥ विद्याबुद्धिविवृद्धिः स्याद्भृगोः सूक्ष्मगते विधौ ॥८२॥ (शु० मं०) जडत्वं रिपुवैषम्यं देशभ्रंशो महद्भयम् ॥ व्याधिदुःखसममुत्पत्तिर्भृगोः सूक्ष्मगते कुजे ॥८३॥ (शु० रा०) राज्याग्निसर्पजा भीतिर्बंधुनाशो गुरुव्यथा ॥ स्थानच्युतिर्महाभीतिर्भृगोः सूक्ष्मगतेऽप्यहौ ॥८४॥ (शु० बृ०) सर्वत्र कार्यलाभश्च क्षेत्रार्थविभवोन्नतिः ॥ वणिग्वृत्तेर्महालब्धिर्भृगोः सूक्ष्मगते गुरौ ॥८५॥ (शु० श०) शत्रुपीड़ा महद्दुःखं चतुष्पादविनाशनम् ॥ स्वगोत्रगुरुहानिः स्याद्भृगोः सूक्ष्मगते शनौ ॥८६॥ (शु० बु०) बांधवादिषु संपत्तिर्व्यवहारो धनोन्नतिः पुत्रदारा दितः सौख्यं भृगोः सूक्ष्मगते बुधे ॥८७॥ (शु० के०) अग्निरोगो महापीडा मुखनेत्रशिरोव्यथा ॥ संचितार्थात्मनः पीडा भृगोः सूक्ष्मगते ध्वजे ॥८८॥

इति श्रीबृहत्पाराशरहोराशास्त्रे पूर्वखंडे सूर्यादिसूक्ष्मदशाफलकथनं नाम त्रिचत्वारिंशोऽध्यायः ॥४३॥

शुक्र सूक्ष्मदशा फल

(शु० ३ शु०) शत्रु की हानि तथा महान् सुख, शिवमन्दिर निर्माण, कूप तालाब निर्माण होता है॥८०॥ (शु० ३ सू०) छाती में जलन, बुद्धि में भ्रम, निश्चेष्ट पड़े रहना, कभी लाभ कभी हानि होती है॥८१॥ (शु० ३ चं०) आरोग्यता, धन सम्पत्ति की प्राप्ति, व्यापार से लाभ, यात्रा से लाभ, विद्या बुद्धि की वृद्धि होती है॥८२॥ (शु० ३ मं०) देह में जड़ता, शत्रु से

विषमता, देशत्याग, पहान् भय, व्याधि और दुःख की उत्पत्ति होती है।।८३।। (शु० ३ रा०) में राज्य, अग्नि, सर्प से भय, बन्धु का नाश, माता पिता को व्यथा, स्थान से हटना तथा महान भय होता है।।८४।। (शु० ३ बृ०) सर्वत्र कार्य की सिद्धि तथा लाभ, खेत व्यापार और विभव की उन्नति तथा व्यापार से विपुल लाभ हो।।८५।। (शु० ३ श०) शत्रु से पीड़ा, महान् दुःख, पशु का नाश, बन्धु तथा माता पिता की हानि होती है।।८६।। (शु० ३ बु०) बन्धु में सम्पन्नता तथा मेल, व्यापार से बहुलाभ, स्त्रीपुत्र से सुख होता है।।८७।। (शु० ३ के०) मन्दाग्नि की बीमारी, मुख, नेत्र और सिर में व्यथा, सञ्चित धन की हानि, शरीर में पीड़ा, होती है।।८८।।

इति श्रीबृहत्पाराशर हो० शास्त्रे पू० भावप्रका० सूक्ष्मदशाफलकथनं नाम त्रिचत्वारिंशोऽध्यायः।।४३।।

अथ प्राणदशानयनमाह

स्वसूक्ष्माख्यदशायाश्च पिंडे विघटिकात्मके ।। स्वाब्देस्तष्टे पुनस्तष्टे विंशोत्तरशतेन च ।। लब्धं विघटिका ज्ञेया विपलानि ततः परम् ।।१।।

प्राणदशानयन

सूक्ष्मदशा की घटी, पल संख्या को पलात्मक पिण्ड (एकरस) करके जिस ग्रह की प्राणदशा देखना है उसके दशा वर्ष से गुणा करके १२० का भाग देने से लब्ध पल, विपल प्राप्त होंगी। पलांक ६० से अधिक होने पर ६० का भाग देने पर घटी, पल, विपल ये तीन अंक प्राप्त होते हैं।।१।।

अथ सूर्यसूक्ष्मदशा तन्मध्ये प्राणदशाचक्रम्

ग्रहाः	सू०	चं०	मं०	रा०	बृ०	श०	बु०	के०	शु०	यो०
घटयः	०	१	०	२	२	२	२	०	२	१६
पला०	४८	२१	५६	२५	९	३३	१७	५६	४२	१२
विपला०	३६	०	४२	४८	३६	५४	४२	४२	०	०

अथ प्राणदशामाह

शरीरनाथो मरणाधिपेन युक्तो मृगेंद्रेण मृगाधिपांशे ।। तयोर्विपाके भयमाखुतो मृतिं सर्पात्तदा

प्राहुरुदारचित्ताः ।।२।। सिंहे कन्यांशगौ तौ चेत्कफकंपादितो मृतिः ।। मृगराजे तुलासंस्थे तयोर्भुक्तौ मृतिं वदेत् ।।३।। अल्पांशगो मृगेंद्रे वा तयोदयि सरीसृपात् ।। चापांशगो मृगेंद्रे तु तद्वर्गाच्च मृतिं वदेत् ।।४।। मृगांशगौ तौ सिंहे च तयोदयि खरान्मृतिः ।। कुंभाशंगौ यदा तौ च मृगराजनृपाद्भयम् ।।५।। मीनांशकगतौ सिंहे सारंगाद्भयमादिशेत् ।। सिंहे मेषांशगौ तौ चेद्गोमायोर्भयमादिशेत् ।।६।। वृषांशगौ तौ सूर्यर्क्षे तयोदयि शुनो मृतिः ।। युग्माशंगौ तौ सूर्यर्क्षे गोलांगूलाद्भयं भवेत् ।।७।।

प्राणदशा का निर्याण में उपयोग

लग्नेश अष्टमेश युक्त सिंह राशि नवांश में अथवा सूर्य नवांश में हो तो उनकी 'प्राणदशा' में मूषक या सर्प के काटने से मृत्यु होती है।।२।। यदि लग्नेशाष्टमेश दोनों सिंह राशि में कन्या के नवमांश में हों तो कफवृद्धि या कंपरोग से मृत्यु होती है। सिंहराशि के तुलांश में हों तो।।३।। उनकी 'प्राणदशामें' सर्प से मृत्यु होती है। सिंह राशि में धनुरंश में हों तो भी सर्पवर्ग से ही मृत्यु होती है।।४।। सिंह राशि में मकर नवांश में हो तो उनकी 'प्राणदशा' में गधे से मृत्यु होती है। इसी प्रकार कुंभांश में होने से सिंह से मृत्यु होती है।।५।। और सिंह राशि में मीन नवांश में हों तो सारंग (पक्षी) से मृत्यु होती है। सिंह में मेष नवांश में हों तो 'गोमायु' गीदड़ (सियार) से मृत्यु होती है।।६।। सिंह में वृष नवांश में हों तो उनकी प्राणदशा में कुत्ते के काटने से मृत्यु होती है। इसी तरह सूर्यराशि में मिथुनांश में हों तो उनकी प्राणदशा में 'गोलांगूल' (गौ या बैल की पूँछ) से मृत्यु हो।।७।।

कर्कांशगौ तु सिंहे तु ह्यग्निदग्धाद्गृहान्मृतिः ।। एवं भ्रात्रादिभावानां तत्तद्भुक्तौ फलं वदेत् ।।८।। देहाधिपौ मृत्युपतिश्च युक्तश्चापांशगौ कार्मुकराशिगौ चेत् ।। दाये तयोर्वाजिकृतं च मृत्युं वदंति तत्कालविदो महांतः ।।९।। चापे मृगांशगौ तौ चेत्सारंगाद्भयमादिशेत् ।। हये कुम्भांशगौ तौ चेद्वराहाद्भयमादिशेत् ।।१०।। हये मीनांशगौ तौ चेत्पाके नक्राद्भयं तयोः ।। मेषांशगौ तौ चापे तु तयोदयि चतुष्पदात् ।।११।। हये वृषांशगौ तौ चेद्रासभाद्भयमादिशेत् ।।१२।। युग्मांशगौ हयांगेषु वानराद्भयमादिशेत् ।। कर्कांशगौ हयांगे तु चाखुना भयमेतयोः ।।१३।। सिंहांशगौ हयांगेषु जंबुकाद्भयमेतयोः ।। कन्यांशगौ हयांगे तु लांगूलान्मृतिरुच्यते ।।१४।।तुलांशगौ हयांगे तु लोष्टान्मरणमेतयोः ।। अल्पांशगा हयांगेषु तयोः पाके सरीसृपात् ।। एवं भ्रात्रादिभावानां फलमाहुर्मनीषिणः ।।१५।।

सिंह में कर्कांशमें हों तो घर में आग लगने से जलकर मृत्यु हो। यह निर्देश मात्र है। जैसे अष्टमेश लग्नेश से जातक का निधनकारण कहा है, इसी प्रकार भ्राता, पिता, माता आदि के लिए भी उनके भावेश और अष्टमेश से पूर्वोक्त योग होने पर उपर्युक्त कारणानुसार मृत्यु होती है।।८।। (अब तक सिंहराशिगत का फल कहा। अन्य राशि का फल कहते हैं) लग्नेश और अष्टमेश धनुराशि में धनु नवांश में ही हों तो उनकी प्राणदशा में घुड़सवारी से मृत्यु होती है।।९।। तथा ये दोनों धनुराशि में मीनांश में हों तो उनकी प्राणदशा में मगरमच्छ से मृत्युभय है। मेष के नवांश में चौपाये पशु से भय।।११।। धनुराशि के वृषांश में गधे से भय। मिथुनांश में वानर से भय हो।।१२।। कर्कांश में हो तो मूषक से भय हो।।१३।। धनु राशि में

सिंहांश में हो तो सियार से भय हो। कन्यांश में हो तो गोलांगूल से भय हो।।१४।। इसी प्रकार धनुराशि में तुलांश में हो तो पत्थर की चोट से मृत्यु हो। धनुराशि के अंश अत्यल्प हों तो सर्प से मृत्यु। इसी तरह भ्राता आदि के लिए भी विचार करना।।१५।।

विलग्नयोनेर्धननायकश्च मृगे मृगांशे च गतेऽथ युक्ते ।। भुक्तोऽथ प्रीतिश्च भवेन्नराणां विवाहहेतुः प्रवदंति संतः ।।१६।। कुम्भाशगौ मृगांगे च भल्लूकाद्भयमेतयोः ।। झषांशगौ मृगांशे च सारंगाद्भयमेतयोः ।।१७।। युग्मांशगौ मृगास्ये तौ हरिणान्मृतिरेतयोः।कर्कांशगौ मृगास्ये तौ तयोदयि मृतिर्गजात् ।।१८।। कौर्प्यांशगौ मृगांशे तौ नकुलान्मृतिरेतयोः ।। चापांशगौ मृगांशे तौ मार्जारान्मृतिरेतयोः ।।१९।। एवं निश्चित्य मतिमान्भ्रात्रादीनां फलं वदेत् ।।२०।।

तथा लग्नेश और धनेश,मकर राशिके मकरनवांशमें हो तो मनुष्योंमें प्रीति और विवाहका कारण होता है।।१६।। तथा लग्नेश अष्टमेश मकरराशि के कुंभांश में हों तो भालू से भय हो। मकर और मीनांश में हो तो सारंग से भय होता है।।१७।। मकरराशि में मिथुनांश में हो तो हरिण से भय होता है। कर्कांश में हो तो हाथी से मृत्यु होती है।।१८।। मकरराशि में वृश्चिकांश में हों तो नेवले से मृत्यु ।। और धनुरांश में हों तो बिडाल से मृत्यु होती है।।१९।। इसी प्रकार से भ्राता आदि के लिए भी फल निश्चय करे।।२०।।
नोट—यहां सिंह, धन, मकर राशियों में नवांशों का फल निर्देश किया है। इसी ढंग से अन्य राशि तथा अन्य नवांश में भी एवं अन्यान्य भावों के लिए भी समझना चाहिए। 'प्राणदशा' का उपयोग ऊपर दिखाये गये 'मृत्यु' विचार में ही मुख्य है।।

अथ सूर्यप्राणदशाफलमाह

(सू० सू०) पौंश्चल्यविषजा बाधा मोषणं विषमेक्षणम् ।। सूर्यप्राणदशायां तु मरणं कृच्छ्रमादिशेत् ।।२१।। (सू० चं०) सुखं भोजनसंपत्तिः संस्कारो नृपवैभवम् ।। उदाराविकृताभिश्च रवेः प्राणगते विधौ ।।२२।। (सू० मं०) भूपोपद्रवमन्यार्थे द्रव्यनाशो महद्भयम् ।। महत्युपचयप्राप्ती रवेः प्राणगते कुजे ।।२३।। (सू० रा०) अन्नोद्भवा महापीडा विषोत्पत्तिर्विशेषतः ।। अर्थाग्निराजभिः क्लेशं रवेः प्राणगतेप्यहौ ।।२४।। (सू० बृ०) नानाविद्यार्थसंपत्तिः कार्यलाभो गतागतैः ।। जीवप्राणश्रमे वासो रवेः प्राणगते गुरौ ।।२५।। (सू० श०) बंधनं प्राणनाशश्च चित्तोद्वेगस्तथैव च ।। बहुबाधा महाहानी रवेः प्राणगते शनौ ।।२६।। (सू० बु०) राजान्नभोगः सततं राजलांछनतत्पदम् ।। आत्मा संतर्पयेदेवं रवेः प्राणगते बुधे ।।२७।। (सू० के०) अन्योन्यं कलहश्चैव वसुहानिः पराजयः ।। गुरुस्त्रीबंधुहानिश्च सूर्यप्राणगते ध्वजे ।।२८।। (सू० श०) राजपूजा धनाधिक्यं स्त्रीपुत्रादिभवं सुखम् ।। अन्नपानादिभोगादि सूर्यप्राणगते भृगौ ।।२९।।

सूक्ष्मसूर्य में प्राणदशा फल

(सू०४सू०)। सूर्य प्राणदशा में व्यभिचारिणी स्त्री द्वारा विषप्रयोग, नेत्रपीड़ा तथा कष्ट से मृत्यु होती है।।२१।। (सू० ४ चं०) चन्द्र प्राणदशा में सुख, भोजन में श्रेष्ठता, शुभ संस्कार, राजसमान वैभव तथा उदारभाव होते हैं।।२२।।। (सू० ४ मं०) राज से भय, अन्यं

के निमित्त से धनहानि, महान् भय, उन्नति तथा प्राप्ति होती है।।२३।। (सू० ४ रा०) राहु की प्राणदशा में अन्नजात पीड़ा, विशेषरूप से विष की उत्पत्ति, अग्नि तथा राजभय होता है।।२४।। (सू० ४ बृ०) गुरुप्राणदशा में नाना विद्या तथा धन सम्पत्ति व्यापार तथा यात्रा से लाभ तथा निज देश में वास होता है।।२५।। (सू० ४ श०) सूर्य में शनि की प्राणदशा हो तो बंधन, प्राणहानि, चित्तोद्वेग, बहुबाधा, महान् हानि होती है।।२६।। (सू० ४ बु०) सूक्ष्मसूर्य में बुध प्रा० द० हो तो राजा से निरन्तर प्राप्ति तथा राजचिह्नयुक्त पद एवं आत्मसन्तोष होता है।।२७।। (सू० ४ के०) सूक्ष्म सूर्य में केतु की प्रा० द० हो तो परिवार में कलह, धनहानि, पराजय, स्त्री बंधु माता पिता की हानि होती है।।२८।। (सू० ४ शु०) सूर्य सूक्ष्ममें शुक्र की प्रा० द० हो तो राज पूजा, अधिक धन, स्त्री पुत्र से सुख तथा उत्तम खान पान प्राप्त होता है।।२९।।

अथ चंद्रप्राणदशाफलमाह

(चं० चं०) योगाभ्यासं समाधिं च देशिकत्वं च पश्यति ।। इति सर्वं समासेन चंद्रप्राणदशाफलम् ।।३०।। (चं० मं०) क्षयं कुष्ठं बंधुनाशं रक्तस्रावान्महद्भयम् ।। भूतावेशादि जायेत चंद्रप्राणगते कुजे ।।३१।। (चं० रा०) सर्पभीतिर्विशेषेण भूतोपद्रववान्सदा ।। दृष्टिक्षोभो मतिभ्रंशश्चंद्रप्राणगतेप्यहौ ।।३२।। (चं० बृ०) धर्मवृद्धिः क्षमाप्राप्तिर्देवब्राह्मण पूजनम् ।। सौभाग्यं प्रियदृष्टिश्च चन्द्रप्राणगते गुरौ ।।३३।। (चं० श०) सहसा देहपतनं शत्रूपद्रववेदना ।। अंधत्वं च धनक्षतिश्चंद्रप्राणगते शनौ ।।३४।। (चं० बु०) चामरच्छत्रसंप्राप्ती राज्यलाभो नृपात्ततः ।। समत्वं सर्वभूतेषु चन्द्रप्राणगते बुधे ।।३५।। (चं० के०) शस्त्राग्निरिपुजा पीडा विषाग्निः कुक्षिरोगता ।। पुत्रदारवियोगश्च चंद्रप्राणगते शिखी ।।३६।। (चं० शु०) पुत्रमित्रकलत्राप्तिर्विदेशाच्च धनागमः ।। सुखसंपत्तिरर्थश्च चन्द्रप्राणगते भृगौ ।।३७।। (चं० सू०) तीव्रदोषी प्रदोषी च प्राणहानिर्मनोविषम् ।। देशत्यागी महाभीतिश्चंद्रप्राणगते रवौ ।।३८।।

सूक्ष्म चन्द्र में प्राणदशा फल

(चं० ४ चं०) सूक्ष्म चन्द्र में चन्द्र की प्राणदशा हो तो योगाभ्यास से समाधि प्राप्त हो, गुरु का साक्षात्कार हो। यह सब संक्षेप में हो।।३०।। (चं० ४ मं०) सूक्ष्म चं० में मंगल की प्रा० द० हो तो क्षय, कुष्ठ, बन्धुनाश तथा रक्तस्राव से महान् भय एवं भूतावेश आदि होता है।।३१।। (चं० ४ रा०) सूक्ष्म चं० में राहु प्रा० द० हो तो विशेष करके सर्पभय तथा भूतों का उपद्रव नेत्र में विकार बुद्धि में विषमता होती है।।३२।। (चं० ४ बृ०) सूक्ष्म चन्द्र में गुरु की प्रा० द० हो तो धर्म की वृद्धि, क्षमा प्राप्ति, देव ब्राह्मण की पूजा, सौभाग्य और प्रिय दृष्टि होती है।।३३।। (चं० ४ श०) सूक्ष्म चन्द्र में शनि की प्राणदशा हो तो देह में जड़ता, शत्रुओं का उपद्रव तथा शरीर में पीड़ा, नेत्र विकार तथा धनहानि होती है।।३४।। (चं० ४बु०)सूक्ष्म चं० में बुध की प्रा० द० हो तो छत्र चामर की प्राप्ति, राज्य लाभ तथा सबमें समान भाव होता है।।३५।। (चं० ४ के०) सूक्ष्म चन्द्र में केतु की प्रा० द० हो तो शस्त्र अग्नि शत्रु से पीड़ा विष से भय, कुक्षिरोग तथा स्त्री पुत्र से वियोग होता है।।३६।। (चं० ४ शु०) सूक्ष्म चं० में

शुक्र की प्रा० द० हो तो स्त्री पुत्र मित्र की प्राप्ति तथा विदेश से धनलाभ एवं सुख सम्पत्ति होती है।।३७।। (चं० ४ सू०) सूक्ष्म चन्द्र में सूर्य प्रा० द० हो तो तीव्ररोगी तथा वातादि दोषवान्, प्राणहानि, मन में विकार, देशत्याग एवं महान् भय होता है।।३८।।

अथ भौमप्राणदशाफलमाह

(मं० मं०) क्षेत्रहानिमनोदुःखम् ह्यपस्मारादिरोगकृत् ।। परिवारकृता पीडा भौमे प्राणदशाफलम् ।।३९।। (मं० रा०) विच्युतः सुतदारादिबंधूपद्रवपीडितः ।। प्राणत्यागी विषेणैव भौमप्राणगतेप्यहौ ।।४०।। (मं० बृ०) देवार्चनपरः श्रीमान्मंत्रानुष्ठानतत्परः ।। पुत्रपौत्रसुखावाप्तिर्भौमप्राणगते गुरौ ।।४१।। (मं० श०) अग्निबाधा भवेन्मृत्युरर्थनाशः पदच्युतिः ।। बंधुभिर्बंधुताहानिर्भौमप्राणगते शनौ ।।४२।। (मं० बु०) दिव्यांबरसमुत्पत्तिर्दिव्याभरणभूषितः ।। दिव्यांगनायाः संप्राप्तिर्भौमप्राणगते बुधे ।।४३।। (मं० के०) पतनोत्पातपीडा च नेत्रक्षोभो महद्भयम् ।। भुजंगाद्द्रव्यहानिश्च भौमप्राणगते ध्वजे ।।४४।। (मं० शु०) धनधान्यादिसंपत्तिर्लोकपूजा सुखागमा ।। नानाभोगैर्भवेद्रोगी भौमप्राणगते भृगौ ।।४५।। (मं० सू०) ज्वरोन्मादः क्षयोर्थश्च राजविद्वेहसंभवः ।। दीर्घरोगी दरिद्रः स्याद्भौमप्राणगते रवौ ।।४६।। (मं० चं०) भोजनादिसुखप्रीतिर्वस्त्राभरणवांछितम् ।। शीतोष्णव्याधिपीडा च भौमप्राणगते विधौ ।।४७।।

सूक्ष्म भौम में प्राणदशा फल

(मं० ४ मं०) मंगल अपनी प्राणदशा में खेत की हानि, मन में चिन्ता तथा मृगी आदि रोग एवं परिवार के कलह से क्लेश होता है।।३९।। (मं० ४ रा०) सूक्ष्म मंगल में राहु की प्राणदशा हो तो स्त्री पुत्र बन्धु आदि के उपद्रव से दुःखित होकर विष के द्वारा प्राणहानि करता है।।४०।। (मं० ४ बृ०) सूक्ष्म भौम में गुरु की प्रा० द० हो तो देवपूजा निरत, श्रीमान् तथा मन्त्रानुष्ठान में तत्पर एवं पुत्र पौत्र सुख की प्राप्ति होती है।।४१।। (मं० ४ श०) सूक्ष्म भौम में शनि की प्राणदशा हो तो मृत्यु या धननाश एवं पदच्युति, तथा बन्धुओं से बन्धुता की हानि होती है।।४२।। (मं० ४ बु०) सूक्ष्म भौम में बुध की प्राणदशा हो तो सुन्दर वस्त्र प्राप्ति तथा सुन्दर आभरण युक्तता एवं सुन्दरी स्त्री प्राप्त होती है।।४३।। (मं० ४ के०) सूक्ष्म भौमदशा में केतु की प्राणदशा हो तो ऊपर से गिरने की पीड़ा, नेत्र में विकार, महान् भय तथा सर्प निमित्त से हानि होती है।।४४।। (मं० ४ शु०) सूक्ष्म मं० में शुक्र की प्रा० द० हो तो धनधान्य आदि संपत्ति, लोक में पूजा, सुख की प्राप्ति तथा नाना भोगों की प्राप्ति होती है।।४५।। (मं० ४ सू०) सूक्ष्म भौ० दशामें सूर्य का प्राणान्तर हो तो ज्वर जन्य उन्माद, धनक्षय, राजद्वेष, दीर्घरोगी और दरिद्र होता है।।४६।। (मं० ४ चं०) सूक्ष्म भौ० दशामें चन्द्र की प्राणदशा हो तो इच्छित भोजन वस्त्र आभरण की प्राप्ति तथा सर्द गरम विकार होता है।।४७।।

अथ राहोः प्राणदशाफलमाह

(रा० रा०) अन्नाशने विरक्तश्च विषभीतिस्तथैव च ।। साहसाद्धननाशश्च राहोः

प्राणदशाफलम् ॥४८॥ (रा० बृ) अंगसौख्यं विनर्भीतिर्वाहनादेश्च संगता ॥ नीचैःकलहसंप्राप्ती राहोः प्राणगते गुरौ ॥४९॥ (रा० श०) गृहदाहशरीरे च नीचैरपहृतं धनम् ॥ रोगबंधनसंप्राप्ती राहोः प्राणगते शनौ ॥५०॥ (रा० बु०) गुरूपदेशविभवो गुरुसत्कारवर्द्धनम् ॥ गुणवाञ्छीलवांश्चापि राहोः प्राणगते बुधे ॥५१॥ (रा० के०) स्त्रीपुत्रादिविरोधश्च गृहान्निष्क्रमणादपि ॥ साहसात्कार्यहानिश्च राहोः प्राणगते ध्वजे ॥५२॥ (रा० शु०) छत्रवाहनसंपत्तिः सर्वार्थफलसंचयः ॥ शिवार्चनगृहारंभी राहोः प्राणगते भृगौ ॥५३॥ (रा० सू०) अर्शादिरोगभीतिश्च राज्योपद्रवसंभवः ॥ चतुष्पादादिहानिश्च राहोः प्राणगते रवौ ॥५४॥ (रा० चं०) सौमनस्यं च सद्बुद्धिःसत्कारो गुरुदर्शनम् ॥ पापभीतिर्मनःसौख्यं राहोः प्राणगते विधौ ॥५५॥ (रा० मं०) चंडालाग्निवशाद्भीतिःस्वपद च्युतिरापदः ॥ मलिनः श्वादिवृत्तिश्च राहोः प्राणगते कुजे ॥५६॥

सूक्ष्म राहु में प्राणदशा फल

(रा० ४ रा०) निज प्राणदशा में राहु-भोजन में विरसता, विष से भय तथा हठ के कारण धन की हानि करता है।।४८।। (रा० ४ बृ०) सूक्ष्म राहु में गुरु की प्राणदशा हो तो, शारीरिक सुख, निर्भयता, वाहन प्राप्ति तथा नीचसंगति होती है।।४९।। (रा० ४ श०) सू० रा० में शनि की प्रा० द० हो तो घर का दाह तथा धन की चोरी, रोग और बंधन की प्राप्ति होती है।।५०।। (रा० ४ बु०) सूक्ष्म राहु में बुध की प्राणदशा हो तो गुरु के उपदेश से विभव की प्राप्ति तथा देव ब्राह्मण पूजा से धनादि की वृद्धि और गुण शील की प्राप्ति होती है।।५१।। (रा० ४ के०) सूक्ष्म रा०मे०के० की प्राणदशा हो तो स्त्री पुत्र से विरोध तथा गृहत्याग भी सम्भव एवं साहस से कार्य की हानि होती है।।५२।। (रा० ४ शु०) सूक्ष्म रा०में शुक्र की प्राणदशा हो तो छत्र वाहन संप्राप्ति तथा अनेक प्रकार की सम्पत्ति का संचय तथा शिवमन्दिर का निर्माण आरंभ होता है।।५३।। (रा० ४ सू०)सूक्ष्म रा० में सूर्य की प्राणदशा में हो तो बवासीर की बीमारी का भय, राज का उपद्रव चतुष्पद आदि की हानि होती है।।५४।। (रा० ४ चं०) सूक्ष्मराहु में चन्द्रमा की प्राणदशा हो तो सौमनस्य, सद्बुद्धि, आगत का सत्कार, गुरुदर्शन, पाप से भय तथा सुख होता है।।५५।। (रा० ४चं०)सूक्ष्म रा०दशामें चन्द्र की प्राणदशा हो तो चाण्डाल तथा अग्नि से भय, पदच्च्युत्ति, आपत्ति तथा मलिन वृत्ति होती है।।५६।।

अथ गुरोः प्राणदशाफलमाह

(बृ० बृ०) शोकनाशो धनाधिक्यमग्निहोत्रं शिवार्चनम् ॥ वाहनं छत्रसंयुक्तं जीवप्राणदशाफलम् ॥५७॥ (बृ० श०) व्रतहानिर्धर्मलोपः विदेशे वसुनाशनम् ॥ विरोधो बन्धुभिः सार्द्धं गुरोः प्राणगते शनौ ॥५८॥ (बृ० बु०) विद्यायामनुरागश्च लोककीर्तिर्धनागमः पुत्रदारासुखप्राप्ति र्गुरोः प्राणगते बुधे ॥५९॥ (बृ० के०) ज्ञानं च वैभवं चैव शास्त्रज्ञानं शिवार्चनम् ॥ अग्निहोत्रं गुरोर्भक्तिः गुरोः प्राणगते ध्वजे ॥६०॥ (बृ० शु०) रोगान्मुक्तिः सुखं भोगः धनधान्यसमागमः ॥ पुत्रदारादिकं सौख्यं गुरोः प्राणगते भृगौ ॥६१॥ (बृ० सू०) वातपित्तप्रकोपं च श्लेष्मोद्रेकन्तु दारुणम् ॥ रसव्याधिकृतं शूलं गुरोः प्राणगते रवौ ॥६२॥

(बृ० चं०) छत्र चामरसंयुक्तं वैभवं पुत्रसम्पदः ।। नेत्रकुक्षिगता पीडा गुरोः प्राणगते विधौ ।।६३।। (बृ० मं०) स्त्रीजनाच्च विषोत्पत्तिः बंधनं चातिनिग्रहः ।। देशान्तरगमो भ्रान्ति र्गुरोः प्राणगते कुजे ।।६४।। (बृ० रा०) व्याधिभिः परिभूतश्च चौरैरपहृ धनम् ।। सर्पवृश्चिक-दंशश्च गुरोः प्राणगते प्यहौ ।।६५।।

सूक्ष्म गुर्वन्तर प्राणदशा फल

(बृ० ४ बृ०) गुरु की प्राणदशा में शोकनाश, धनवृद्धि, हवन, शिवपूजा तथा छत्रयुक्त सवारी होती है।।५७।। (बृ० ४ श०) गुरु में शनि की प्राणदशा हो तो व्रतहानि, धर्मलोप, विदेशगमन, धनहानि, बन्धुविरोध होता है।।५८।। (बृ० ४ बु०) सूक्ष्मगुरु में बुध की प्राणदशा हो तो विद्या में अनुराग लोक में यश, धन की प्राप्ति, स्त्री पुत्र से सुख होता है।।५९।। (बृ० ४ के०) सूक्ष्म गु० दशा में केतु की प्रा० द० हो तो ज्ञान प्राप्ति, ऐश्वर्य, शास्त्रज्ञान, शिवपूजा, अग्निहोत्र तथा गुरुभक्ति होती है।।६०।। (बृ० ४ शु०) सूक्ष्म गुरु में शुक्र की प्राणदशा हो तो रोग से मुक्ति, सुखभोग, धनधान्यवृद्धि, पुत्रस्त्री से सुख होता है।।६१।। (बृ० ४ सू०) सूक्ष्म गु० दशा में सूर्य की प्राणदशा हो तो त्रिदोष जनित व्याधि तथा आमरस जन्य शूल होता है।।६२।। (बृ० ४ चं०) सूक्ष्म गुरु में चन्द्र की प्राणदशा हो तो छत्र चामरयुक्त वैभव, पुत्र तथा सम्पत्ति, नेत्र और कुक्षि में विकार होता है।।६३।। (बृ० ४ मं०) सूक्ष्म गुरु में भौम की प्राणदशा हो तो स्त्री द्वारा विष प्रयोग, बंधन, क्लेशकरनिग्रह, देशान्तर यात्रा तथा भ्रान्ति होती है।।६४।। (बृ० ४ रा०) सूक्ष्म गुर्वन्तर में राहु की प्रा० द० हो तो जातक, रोगों से दुःखी, चोरी से धन की हानि, सर्प बिच्छू से दंशन होता है।।६५।।

अथ शनिप्राणदशाफलमाह

(श० श०) ज्वरेण ज्वलिता कांतिः कुष्ठरोगोदरादिरुक् ।। जलाग्निकृतमृत्युः स्यान्मंदप्राणदशाफलम् ।।६६।। (श० बु०) धनं धान्यं च मांगल्यं व्यवहाराभिपूजनम् ।। देवब्राह्मणभक्तिश्च शनेः प्राणगते बुधे ।।६७।। (श० के०) मृत्युवेदनदुःखं च भूतोपद्रवसंभवः ।। परदाराभिभूतत्वं शनेः प्राणगते ध्वजे ।।६८।। (श० शु०) पुत्रार्थविभवैः सौख्यं क्षितिमानादिना सुखम् ।। अग्निहोत्रं विवाहश्च शनेः प्राणगते भृगौ ।।६९।। (श० सू०) अक्षिपीडा शिरोव्याधिः सर्पशत्रुभयं भवेत् ।। अर्थहानिर्महाक्लेशः शनेः प्राणगते रवौ।।७०।। (श० चं०) आरोग्यं पुत्रलाभश्च शांतिपौष्टिकवर्धनम् ।। देवब्राह्मणभक्तिश्च शनेः प्राणगते विधौ ।।७१।। (श० मं०) गुल्मरोगः शत्रुभीतिर्मृगया प्राणनाशनम् ।। सर्पाग्निशत्रुतो भीतिः शनेः प्राणगते कुजे ।।७२।। (श० रा०) देशत्यागो नृपाद्भीतिर्मोहनं विषभक्षणम् ।। वातपित्तकृता पीडा शनेः प्राणगतेप्यहौ ।।७३।। (श० बृ०) सेनापत्यं भूमिलाभं संगमं स्वजनैः सह ।। गौरवं नृपसन्मानं शनेः प्राणगते गुरौ ।।७४।।

शनि प्राणदशा फल

(श० ४ श०) शनि अपनी प्राणदशा में ज्वर की तीव्रता कुष्ठ तथा जलोदर रोग एवं जल या अग्नि से मृत्यु करता है।।६६।। (श० ४ बु०) सूक्ष्म शनि में बुध की प्रा० द० हो तो धन,

धान्य तथा मंगल कार्य हो, व्यापार वृद्धि से यश और देव ब्राह्मण की पूजाभक्ति होती है।।६७।। (श० ४ के०) सूक्ष्मशनि में के० की प्रा० द० हो तो मृत्यु के समान कष्ट तथा भूतबाधा एवं परस्त्री में आसक्ति होती है।।६८।। (श० ४ शु०) सूक्ष्म शनि में शुक्र का अन्तर हो तो धन पुत्रों से सुख, ऐश्वर्यवृद्धि भूमि तथा सम्मान प्राप्ति, अग्निहोत्र एवं विवाह आदि मंगल कार्य होते हैं।।६९।। (श० ४ सू०) सूक्ष्म शनिदशा में सूर्य प्राणदशा हो तो नेत्र पीड़ा, सिर में दर्द, सर्प तथा शत्रु से भय, धन हानि तथा क्लेश होता है।।७०।। (श० ४ चं०) सूक्ष्म श० में चन्द्र की प्रा० द० हो तो आरोग्य, पुत्रलाभ, शान्ति तथा पुष्टि की वृद्धि, देव ब्राह्मण भक्ति होती है।।७१।। (श० ४ मं०) सूक्ष्म शनि में भौम की प्राणदशा हो तो गुल्मरोग तथा शत्रु से भय, शिकार खेलने में प्राणहानि अथवा सर्प, अग्नि और शत्रुकृत् पीड़ा होती है।।७२।। (श० ४ रा०) सूक्ष्म श० दशा में राहु की प्राणदशा हो तो देशत्याग, राजभय, मोह, विषभक्षण, तथा वात पित्त जनित पीड़ा होती है।।७३।। (श० ४ । बृ०) सूक्ष्म श० दशा में गुरु की प्रा० द० हो तो सेनापतित्त्व, भूमिलाभ, स्वजनों से मेल तथा राजमान्यता का गौरव होता है।।७४।।

अथ बुधप्राणदशाफलमाह

(बु० बु०) आरोग्यं सुखसंपत्तिर्धर्मकर्मादिसाधनम् ।। समत्वं सर्वभूतेषु बुधप्राणदशाफलम् ।।७५।। (बु० के०) दहनं चौर विद्धांगं परमाधिं विषोद्भवम् ।। देहांतकरणे दुःखं बुधप्राणगते ध्वजे ।।७६।। (बु० शु०) प्रभुत्वं धनसंपत्तिः कीर्तिर्धर्मः शिवार्चनम् ।। पुत्रदारादिकं सौख्यं बुधप्राणगते भृगौ ।।७७।। (बु० सू०) अंतर्दाहो ज्वरोन्मादौ बांधवानांरति स्त्रिया ।। पापनिस्तेयसंपत्तिर्बुधप्राणगते रवौ ।।७८।। (बु० चं०) स्त्रीलाभश्चार्थसंपत्तिः कन्यालाभो धनागमः ।। लभते सर्वतः सौख्यं बुधप्राणगते विधौ ।।७९।। (बु० मं०) पतितः कुक्षिरोगी च दंतनेत्रादिजा व्यथा ।। अर्शांसि प्राणसंदेहो बुधप्राणगते कुजे ।।८०।। (बु० रा०) वस्त्राभरणसंपत्तिर्वियोगो विप्रवैरिता ।। सन्निपातोद्भवं दुःखं बुधप्राणगतेप्यहौ ।।८१।। (बु० गु०) गुरुत्वं धनसंपत्तिर्विद्या सद्गुणसंग्रहः ।। व्यवसायेन सल्लाभो बुधप्राणगते गुरौ ।।८२।। (बु० श०) चौर्येण निधनप्राप्तिर्विधनत्वं दरिद्रता ।। याचकत्वं विशेषेण बुधप्राणगते शनौ ।।८३।।

बुध प्राणदशा फल

(बु० ४ बु०) बुध अपनी प्राणदशा में आरोग्यता, सुख, सम्पत्ति, धर्मकार्य की सम्पन्नता तथा सबसे प्रेमभाव होता है।।७५।। (बु० ४ के०) सूक्ष्म बु० में केतु की प्रा० द० हो तो अग्नि से हानि चोरों से घाव, विष जनित पीड़ा, मृत्युसम दुःख होता है।।७६।। (बु० ४ शु०) सूक्ष्म बुध में शुक्र की प्रा० द० हो तो सन्मान, धन सम्पत्ति, यश, धर्मवृद्धि, शिवाराधन, स्त्री पुत्र से सुख होता है।।७७।। (बु० ४ सू०) कलेजे में जलन, ज्वर तथा उन्माद, बांधव तथा स्त्री से प्रीति, पाप तथा चोरी में सम्पत्ति की प्राप्ति होती है।।७८।। (बु० ४ चं०) सूक्ष्म बु० में चन्द्र की प्राणदशा हो तो धन तथा स्त्री की प्राप्ति, कन्यालाभ, धनलाभ तथा सर्वप्रकार सुख होता है।।७९।। (बु० ४ मं०) सूक्ष्म बु० दशा में मंगल की प्रा० द० हो तो समाज से पतित हो, कुक्षिरोगी, दांत तथा नेत्र में पीड़ा हो, बवासीर तथा प्राणघातक कष्ट हो।।८०।। (बु० ४

रा०) सूक्ष्म बुधदशा में राहु की प्रा० द० हो तो वस्त्र आभूषण संपत्तियों से वियोग तथा ब्राह्मण से वैर हो, सन्निपात जनित दुःख हो।।८१।। (बु० ४ बृ०) सूक्ष्म बुधान्तर में गुरु का प्राणान्तर हो तो प्रभुता, धन, सम्पत्ति, विद्या तथा सद्गुण संग्रह हो, व्यापार से लाभ होता हो।।८२।। (बु० ४ श०) सूक्ष्म बुध की दशा में शनि की प्रा० द० हो तो चोरी से धनहीनता तथा मृत्यु भी सम्भव है। विशेष करके भिक्षा से जीवनयापन हो।।८३।।

अथ केतोः प्राणदशाफलमाह

(के० के०) अश्वपातेन घातं च पादस्खलनमेव च ।। निर्विचारबधोत्पत्तिः केतोः प्राणदशाफलम् ।।८४।। (के० शु०) क्षेत्रलाभो वैरिनाशो हयलाभो मनःसुखम् ।। पशुक्षेत्रधनाप्तिश्च केतोः प्राणगते भृगौ ।।८५।। (के० सू०) स्तेयाग्निरिपुभीत्यादिघातश्चैवावरोधयुक् ।। प्राणांतकरणं कृच्छ्रं केतोः प्राणगते रवौ ।।८६।। (के० चं०) देवद्विजगुरोः पूजा दीर्घयात्रा धनं सुखम् ।। कंठाश्रिते नेत्ररोगीः केतोः प्राणगते विधौ ।।८७।। (के० मं०) तीव्ररोगो नसावृद्धिर्विभ्रमः सन्निपातजः ।। स्वबंधुजनविद्वेषः केतोः प्राणगते कुजे ।।८८।। (के० रा०) विरोधः स्त्रीसुताद्यैश्च गृहान्निष्क्रमणं भवेत् ।। स्वसाहसात्कार्यहानिः केतोः प्राणगतेऽप्यहौ ।।८९।। (के० बृ०) शस्त्रव्रणमहारोगैर्हृत्पीडादिसमुद्भवः ।। सुतदारवियोगश्च केतोः प्राणगते गुरौ ।।९०।। (के० श०) मतिविभ्रमतीक्ष्णश्च क्रूरकर्मरतः सदा ।। व्यसनाद्बंधनं दुःखं केतोः प्राणगते शनौ ।।९१।। (के० बु०) कुसुमं शयनं भूषा लेपनं भोजनादिकम् ।। सौख्यं सर्वांगभोग्यं च केतोः प्राणगते बुधे ।।९२।।

केतुप्राणदशाफल

(के० ४ के०) केतु अपनी प्राणदशा में घोड़े पर से गिरकर घाव होना, पैर फिसल कर गिरना तथा बिना विचारे हानिकारक कार्य में प्रवृत्ति होती है।।८४।। (के० ४ शु०) खेत से लाभ तथा शत्रु का नाश, घोड़े की सवारी, मन में आनन्द, पशु खेत तथा धन की प्राप्ति होती है।।८५।। (के० ४ सू०) सूक्ष्म केतु की दशा में सू० प्रा० द० हो तो चोरी, अग्नि, शत्रु का भय तथा घात होता है तथा प्राणान्तकारी कष्ट होता है।।८६।। (के० ४ चं०)केतुकी सूक्ष्म दशामें चन्द्रमा का प्राणान्तर हो तो देव, द्विज, गुरु की पूजा, लम्बी यात्रा, धन प्राप्ति तथा सुख होता है, कंठ तथा नेत्र में बीमारी होती है।।८७।। (के० ४ मं०) सूक्ष्म केतु के अन्तर में मंगल का प्राणान्तर हो तो तीव्र रोग, नासिका में विकार, सन्निपात का भ्रम, बन्धुओं से वैमनस्य होता है।।८८।। (के० ४ रा०) सूक्ष्म केतु में राहु का प्राणान्तर हो तो स्त्री पुत्र आदि से विरोध, गृहत्याग, अपनी ही भूल से कार्य में हानि होती है।।८९।। (के० ४ बृ०) केतु के सूक्ष्मान्तर में गुरु की प्रा० द० हो तो शस्त्र से घाव, बीमारी, हृदय में पीड़ा, स्त्री पुत्र से वियोग होता है।।९०।। (के० ४ श०) केतु के सूक्ष्म में शनि का प्राणान्तर हो तो बुद्धि में विभ्रम हो तथा क्रूरकर्म में संलग्न रहे, व्यसन के कारण बन्धन तथा दुःख होता है।।९१।। (के० ४ बु०) सूक्ष्म केतु में बुध की प्रा० द० हो तो सुन्दर भोजन तथा शरीर सुख प्राप्त होता है।।९२।।

शुक्रप्राणदशाफलमाह

(शु० शु०) ज्ञानमीश्वरभक्तिश्च तोषकर्मरसायनम् ।। पुत्रपौत्रसमृद्धिश्च शुक्रप्राणगते फलम्

।।९३।। (शु० सू०) लोकप्रकाशकीर्तिश्च सुतसौख्यविवर्जितः ।। उष्णादिरोगजं दुःखं शुक्रप्राणगते रवौ ।।९४।। (शु० चं०) देवार्चने कर्मरतिर्मैत्रतोषणतत्परः ।। धनसौभाग्यसंपत्तिः शुक्रप्राणगते विधौ ।।९५।। (शु० मं०) ज्वरो मसूरिकास्फोटकंडूचिपिटकादिकाः ।। देवब्राह्मणपूजा च शुक्रप्राणगते कुजे ।।९६।। (शु० रा०) नित्यं शत्रुकृता पीडा नेत्रकुक्षिरुजादयः ।। विरोधः सुहृदां पीडा शुक्रप्राणगतेप्यहौ ।।९७।। (शु० बृ०) आयुरारोग्यमैश्वर्यं पुत्रस्त्रीधनवैभवम् ।। छत्रवाहनसंप्राप्तिः शुक्रप्राणगते गुरौ ।।९८।। (शु० श०) राजोपद्रवजाभीतिः सुखहानिर्महारुजः ।। नीचैः सह विषादं च शुक्रप्राणगते शनौ ।।९९।। (शु० बु०) संतोषं राजसन्मानं नानादिग्भूमिसंपदः ।। नित्यमुत्साहवृद्धिः स्याच्छुक्रप्राणगते बुधे ।।१००।। (शु० के०) जीवितात्मयशोहानिर्धनधान्यपरिच्छदः ।। त्यागभोगधनानि स्युः शुक्रप्राणगते ध्वजे ।।१०१।।

इति श्रीबृहत्पाराशरहोराशास्त्रे पूर्वखंडे सूर्यादिप्राणदशा फलकथनं नामचतुश्चत्वारिंशोऽध्यायः ।।४४।।

शुक्र प्राणदशा फल

(शु० ४ शु०) अपनी प्राणदशा में शुक्र ज्ञान और ईश्वर भक्ति, सन्तोष एवं कर्म की सफलता तथा पुत्र पौत्र की समृद्धि कारक होता है।।९३।। (शु० ४ सू०) सूक्ष्म शु० की दशा में सूर्य की प्राणदशा हो तो लोक में प्रकाश, कीर्ति तथा पुत्रहीनता एवं पित्तज व्याधि होती है।।९४।। (शु० ४ चं०) सूक्ष्म शु० में चन्द्र की प्राणदशा हो तो देवार्चन मे भक्ति तथा मित्रों में प्रेम, धन और सौभाग्य सम्पत्ति की प्राप्ति होती है।।९५।। (शु० ४ मं०) सू० शु० में भौम की प्राणदशा हो तो ज्वर, शीतला, खुजली, फोड़ा-फुन्सी आदि होती है। देव ब्राह्मण पूजा भी होती है।।९६।। (शु० ४ रा०) सूक्ष्म शुक्र में राहु की प्रा० द० हो तो नित्य शत्रुबाधा, नेत्र तथा कुक्षिरोग, मित्रों में विरोध तथा पीड़ा होती है।।९७।। (शु० ४ बृ०) सूक्ष्म शुक्र में गुरु की प्राणदशा हो तो आयु वृद्धि, आरोग्यता, ऐश्वर्य, स्त्री पुत्र आदि ऐश्वर्य, छत्र तथा वाहन की प्राप्ति होती है।।९८।। (शु० ४ श०) शुक्र की सूक्ष्म दशा में शनि का प्राणान्तर हो तो राजा के उपद्रव से भय होता है। सुख की हानि तथा बीमारी एवं नीच मनुष्यों से विवाद होता है।।९९।। (शु० ४ बु०) सूक्ष्म शुक्र में बुध की प्राणदशा हो तो सन्तोष, राजसन्मान, नाना प्रकार की सम्पत्ति तथा नित्य उत्साह की वृद्धि होती है।।१००।। (शु० ४ के०) सूक्ष्म शुक्र में केतु की प्रा० द० हो तो स्वास्थ्य तथा यश की हानि, धनादि वस्तु का नाश एवं भोग्य पदार्थ अप्राप्त होते हैं।।१०१।।

इति श्रीबृहत्पाराशरहोराशास्त्रे पूर्वखण्डे भावप्रकाशिकायां सूर्यादिप्राणदशा फलकथनं नाम चतुश्चत्वारिंशोऽध्यायः ।।४४।।

अथ कालचक्रदशाप्रकरणमाह

वंदेऽहं गोपिकानाथं भारतीं गणनायकम् ।। पार्वत्यै कथितं पूर्वं कालचक्रं पिनाकिना ।।१।।

तच्चक्रसारमुद्धृत्य लघुमार्गेण कथ्यते ।। शुभाशुभं मनुष्याणां भूतं भव्यं च भावि तत् ।।२।। भूतै ५ कविंश २१ गिरयो ७ नव ९ दिक् १० षोडषा १६ ब्धयः ४ ।। सूर्यादीनां क्रमाद्वायूराशीनां स्वामिनो वशात् ।।३।। नरस्य जन्मकाले वा प्रश्नकाले यदंशकः ।। तदादि नवपर्यन्तमायुषं परिचक्षते ।।४।। अश्विन्यदितिहस्तर्क्षमूलप्रोष्ठपदाभिधाः ।। अंशकाद् गणयेन्मेषात्प्रादक्षिण्य-क्रमेण तु ।।५।। प्राजापत्यमघेंद्राग्निश्रवणं च यथाक्रमम् ।। अप्रदक्षिणधिष्ण्यानि भवंत्येतानि पार्वति ।।६।। अश्विन्यादित्रयं चैव सव्यमार्गे व्यवस्थितम् ।। रोहिण्यादित्रयं चैव अपसव्ये व्यवस्थितम् ।।७।। एवमृक्षं चतुर्भागं कृत्वा चक्रे समुद्धरेत् ।। अंशावसाने जातस्य आयुर्द्धायोऽस्य कस्यचित् ।।८।। संपूर्णायुर्भवेदादावधमांशस्य मध्यमम् ।। अपमृत्युसमं कष्टमशांते चापरे जगुः ।।९।। ज्ञात्वैवं स्फुटसिद्धांतो राश्यंशं गणयेद्बुधः ।। अनुपातेन वक्ष्यामि तदुपायमतः परम् ।।१०।।

कालचक्र दशा प्रकरण

प्रथम गणेश तथा शारदा एवं भगवान् श्रीकृष्ण की वन्दना करते हैं। भगवान् शंकर ने जो श्रीपार्वतीजी को कहा था, उस 'कालचक्रदशा'।।१।। का सारांश लेकर संक्षिप्त रीति से मनुष्यों का भूत, वर्तमान तथा भविष्य शुभ और अशुभ का ज्ञापक यह 'कालचक्र' (समयचक्र) कहा जाता है।।२।। सूर्यादि ग्रहों के क्रम से ५,२१,७,९,१०,१६,४ ये दशा वर्ष हैं। १२ राशियों की दशा में ये वर्ष अपने अपने स्वामी ग्रह के वर्ष जानना।।३।। मनुष्य के जन्मकाल या प्रश्नकाल में जो अंश (नवांश) हो उससे आरम्भ करके नोवें अंश तक ही परमायु जानना।।४।। अश्विनी, पुनर्वसु, हस्त, मूल, पूर्वाभाद्रपद इन नक्षत्रों में प्रथमादि पाद में मेषादि क्रम से (सव्यःसीधे क्रम से) प्रति अंश आगे कही जानेवाली रीति से गणना करे।।५।। तथा रोहिणी, मघा, विशाखा, श्रवण ये अपसव्य (उलटे मार्ग के) मार्ग के नक्षत्र हैं।।६।। (और स्पष्ट कहते हैं) अश्विनी आदि तीन नक्षत्र (अश्विनी, भरणी, कृत्तिका) सव्यमार्ग के नक्षत्र हैं। और रोहिणी, मृगशिर, आर्द्रा ये अपसव्य मार्ग के नक्षत्र हैं।।७।। इस उक्त प्रकार के नक्षत्रों के चार भाग करके स्पष्ट समझने के लिए चक्र में लिखे नोवें नवांश की दशा में या अंश के शेष में जन्म लेने वाले बालकों में कोई ही जीवन लाभ कर सकता है।।८।। अंश के आदि में जन्मने वाले की आयु पूर्ण और मध्य भाग में मध्य और अंत में जन्मने वाले की आयु अल्प होती है। या अपमृत्यु के समान कष्ट होता है।।९।। इस प्रकार प्रथम जानकर निश्चित् स्पष्ट आयु जानने के लिए अनुपात (गणित) का उपाय कहते हैं।।१०।।

गततारा त्रिभिर्भक्ता शेषं चत्वारिसंगुणम् ।। वर्तमान-पदेनाढ्यं राशीनामंशको भवेत् ।।११।। ये च जीवांशके जाता गतनाडिविनांशकाः ।। स्वस्वदशाब्दगुणिताः पंचभूमि १५ विभाजिताः ।।१२।। एवं महादशा ज्ञेयाः सूर्यादीनां यथाक्रमम् ।। गणयेज्जीवपर्यन्तमायुष्यं परिचिंतयेत् ।।१३।।

गत नक्षत्र संख्या में तीन (३) का भाग दे, शेष संख्या को ४ से गुणा करे। वर्तमान नक्षत्र को चरण संख्या का योग करे तो राशि का 'नवांश' होता है।।११।। जिनका जन्म जीवांश में है उनकी अंशरहित केवल घटिकासंख्या को ग्रह के अपने अपने वर्ष संख्या से गुणा करके १५

का भाग देकर।।१२।। जो लब्ध वर्षादि अंक प्राप्त हो वह सूर्यादि ग्रहों की महादशा जीवपर्यन्त जानना चाहिए।।१३।।

सव्ये मेषादिरपसव्ये वृश्चिकादिरंशो ज्ञातव्यः

ये जीवा अंशके जाता गतनाडीपलेन तु ।। तदंशोनहताब्दस्तु पंचभूमिविभाजिताः ।।१४।। एवं महादशारंभो भवेदंशाद्यथाक्रमात् ।। गणयेन्नवपर्यंतमायुष्यं तत्प्रकीर्तितम् ।।१५।। सूर्यादीनां क्रमादेतद्दशाः सर्वदशासु च ।।१६।। मेषगोयमकुलीरराशिषु स्वांशकेषु परमायुरुच्यते ।। ज्ञानकं १०० मद ८५ गज ८३ स्तद ८६ क्रमात्तत्त्रिकोणभवनेषु तद्भवेत् ।।१७।। द्वादशारं लिखेच्चक्रं तिर्यगूर्ध्वसमानकम् ।। गृहा द्वादश जायंते सव्यचक्रे यथाक्रमम् ।।१८।। द्वितीयादिषु कोष्ठेषु राशीन्मेषादिकाँल्लिखेत् ।। एवं द्वादशराश्याख्यकालचक्रमुदीरितम् ।।१९।। विश्वर्क्षपूर्वाभाद्रं च रेवती सव्यतारकः ।। एतद्दशोडुपादीनामश्विन्यादौ च वीक्षयेत् ।। विशदस्तत्प्रकारस्तु कथ्यते शृणु पार्वति ।।२०।। देहजीवौ मेषचापौ दस्राद्यचरणस्य च ।। मेषादिचापपर्यंतं राशिपाश्च दशाधिपाः ।।२१।। देहजीवौ नक्रयुग्मौ दिगीशार्काष्टभूधराः ।। षड्वेदशरलोकाश्च राशिपाश्च दशाधिपाः ।।२२।। दस्रादिदशताराणां तृतीयचरणेषु च ।। गौर्देहो मिथुनं जीवो द्विकार्केशदशांशकाः ।।२३।। अक्षिरामाख्यनाथास्ते दशाधिपतयः क्रमात् ।। अश्विन्यादि-दशोडूनां चतुर्थचरणेषु च ।।२४।।

जिनका जन्म जीवांश में है। उनके अंश की गत नाड़ी पर दशावर्ष से गुणा करके १५ मे भाग देने पर भुक्त महादशा प्राप्त होगी। इसी प्रकार तत् अंश से जानना और नौवें अंश तक आयु जानना।।१४।।१५।। सर्व राशियों की दशा में स्वामी सूर्यादि ग्रहों के कहे हुए वर्षो के अनुसार ।।१६।। मेष, वृष, मिथुन, कर्क इन राशियों के अंश की परमायु क्रमशः १००।८५।८३।८६ जानना और इनसे त्रिकोण स्थान में (राशि में) भी यही संख्या जानना।।१७।। (यहां पर ज्ञानकं, मद, गज, तद, ये संख्यासूचक शब्दकल्प हैं। इनमे संख्या इस प्रकार ग्रहण की जाती है। 'क ट प या दि अंकाग्राह्याः तथा 'अंकानां वामतो गतिः' अर्थात् क, ट, प, य से गिनकर अंक लेना और उत्तरोत्तर बायें अर्थात् इकाई, दहाई, सैंकड़ा, क्रम से रखना। और ञ, ङ, न ज्ञ की शून्य संख्या लेना यथा ज्ञानकं -ञ-० न-० क-१ वामतो गतिः १०० इसी प्रकार म से ५, द से ८ = ८५ आगे भी इसी प्रकार समझें) १२ घर का चक्र वनाना जो चारों तरफ से समान हो, यह चक्र सव्यमार्ग का होता है।।१८।। दूसरे कोष्टक से मेष आदि १२ राशियां लिखें। इस प्रकार यह १२ राशियों का 'कालचक्र' तैयार होता है।।१९।। उत्तराषाढ़ा, पूर्वाभाद्रपद, रेवती ये सव्यमार्ग के नक्षत्र हैं। इनकी दशा के नक्षत्रों की दशा की गणना अश्विनी में देखना।।२०।। मेष और धनु राशि देह और जीव राशि हैं, इनकी दशा अश्विनी के प्रथम चरण से आरंभ होती है। और मेष से धन राशि तक के स्वामी ग्रह ही दशा के स्वामी होते हैं।।२१।। (अश्विनी के द्वितीय चरण में) देह और जीव क्रमशः मकर और मिथुन हैं और १०।११।१२।८।७।६।४।५।३ ये दशा राशि और राशियोंके स्वामीग्रह ही दशापति होते हैं।।२२।। अश्विनी आदि दस नक्षत्रों के तृतीय चरण में वृष राशि देह और

मिथुन जीव संज्ञक है। और २।१।१२।११।१०।९।१।२।३ ये दशाराशि हैं॥२३॥ अश्विनी आदि दसनक्षत्रों के चतुर्थ चरण में॥२४॥

कर्कमीनौ देहजीवौ कर्कादिनवभेश्वराः ॥ दशाधिपा नव ज्ञेयाः शृणु पार्वति निश्चितम् ॥२५॥ याम्येज्यचित्रतोयर्क्षा उत्तराभाद्रतारकाः ॥ एतत्पंचोडुपादीनां भरण्यादौ च वीक्षयेत् ॥२६॥ याम्यप्रथमपादस्य देहजीवावलीझषः ॥ नागागर्तुपयोधीषु रामाक्षींद्वर्कभेश्वरा : ॥२७॥ याम्यद्वितीयपादस्य देहजीवौ घटांगने ॥ रुद्रदिङ्नंदचंद्राक्षिरामाब्धिषु रसेश्वराः ॥२८॥ याम्यतृतीयपादस्य देहजीवौ तुलांगने ॥ सप्ताष्टांकदिगीशार्कगजादिरसराशिपाः ॥२९॥ देहजीवौ कर्कचापौ चतुर्थचरणे स्मृतौ ॥ वेदबाणाग्निनेत्रेंदुसूर्येशदशनंदपाः ॥३०॥ सव्यमेव विजानीयादपसव्यं तु कथ्यते ॥ द्वादशारं लिखेच्चक्रं तिर्यगूर्ध्वसमानकम् ॥३१॥ द्वितीयादिषु कोष्ठेषु वृश्चिकाद्वचस्तमालिखेत् ॥ प्राजापत्य-मघेंद्राग्निश्रवणं च चतुष्टयम् ॥३२॥

कर्क, देह, मीन जीव है। और कर्क राशि से मीन राशि पर्यन्त क्रम से दशा राशि है॥२५॥ (इस प्रकार अश्विनी के ४ चरणों के नक्षत्र राशि के बाद भरणी के ४ पाद के नक्षत्र और राशि कहते हैं।) भरणी, पुष्य, चित्रा, पूर्वाषाढ़ा, उत्तराभाद्रपद इन ५ नक्षत्रों में भरणी के प्रथमपाद से देखना॥२६॥ भरणी के प्रथम पाद में वृश्चिक-देह। मीन-जीव है। और ८।७।६।४।५।३।२।१।१२ ये दशा राशि हैं॥२७॥ भरणी के द्वितीय पाद में देह कुंभ। जीव-कन्या है। ११।१०।९।१।२।३।४।५।६। ये दशाराशि हैं॥२८॥ भरणी के तृतीय पाद के देह-तुला। जीव-कन्या। और दशा राशि ७।८।९।१०।११।१२।८।७।६ हैं। (इनके स्वामी ग्रह दशापति हैं)॥२९॥ भरणी के चतुर्थ पाद में देह-कर्क। जीव-धन हैं। दशा राशि ४।५।३।२।१।१२।११।१०।९ हैं॥३०॥ इस प्रकार हमने सव्यमार्ग का वर्णन किया। अब अपसव्यमार्ग कहा जाता है। १२ कोष्टक का चक्र लिखना॥३१॥ द्वितीय आदि कोष्टक से वृश्चिक आदि राशियां लिखें। रोहिणी, मघा, विशाखा, श्रवण ये चार नक्षत्र अपसव्यमार्ग के हैं॥३२॥

धातृवद्वीक्षयेद्देहजीवौ कर्किधनुर्धरौ ॥ नवदिग्रुद्रसूर्येन्दुनेत्राग्निष्वब्धिराशिपाः ॥३३॥ धातृद्वितीयचरणे तुलास्त्रीदेहजीवकौ ॥ षष्ठ सप्ताष्टार्करुद्रा दिङ्नवा गिरिराशिपाः ॥३४॥ धातृतृतीयचरणे देह-जीवौ घटांगने ॥ षड्वाणाब्धिगुणाक्षींदुनंददिग्रुद्रराशिपाः ॥३५॥ रोहिण्यंतपदे देहजीवावलिझषौ स्मृतौ ॥ सूर्येन्दुद्विगुणेष्वब्धितर्कशैलाष्टराशिपाः ॥३६॥ चांद्ररौद्रभगार्यम्णमित्रेंद्रवसुदारुणम् ॥ एतत्ताराष्टकं चैव विज्ञेयं चांद्रवत्क्रमात् ॥३७॥

इन चारों नक्षत्रों में रोहिणी के समान ही देह जीव देखना। रोहिणी के प्रथम पाद में देह-कर्क जीव-धनु है। दशा राशि ९।१०।११।१२।१।२।३।५।४ हैं (इनके स्वामी दशापति हैं) ॥३३॥ रोहिणी के द्वितीय चरण में देह-तुला। जीव-कन्या दशाराशि ६।७।८।१२।११।१०।९।८।७ हैं॥३४॥ रोहिणी के तृतीय चरण में देह-कुंभ। जीव-कन्या दशाराशि ६।५।४।३।२।१।९।१०।११ हैं॥३५॥ रोहिणी के चतुर्थ चरण में देह-वृश्चिक। जीव-मीन दशाराशि १२।१।२।३।५।४।६।७।८ हैं॥३६॥ मृगशिर, आर्द्रा, पूर्वाफाल्गुनी,

उत्तराभाद्रपद, अनुराधा, ज्येष्ठा, धनिष्ठा, शतभिषा इन ८ नक्षत्रों के देह जीव और दशाराशि मृगशिर के समान जानना।।३७।।

देहजीवो कर्किमीनौ मृगाद्यचरणस्य च ।। व्यस्तमीनादिकर्कान्तं राशिपाश्च दशाधिपाः ।।३८।। गौर्देही मिथुनं जीव इन्दुभस्य द्वितीयके ।। त्रिद्व्यर्काकदिगीशार्कचन्द्रर्क्षभवनाधिपाः ।।३९।। देहजीवौ नक्रयुग्मौ मृगपादे तृतीयके ।त्रिबाणाब्धिरसांगाष्टसूर्येशदशराशिपाः।।४०।। मेषचापौ देहजीवाविंदुभस्य चतुर्थके ।। व्यस्तं चापादि मेषांतं राशिपाश्च दशाधिपाः ।।४१।। एवं व्यस्ततरे ज्ञेयं देहजीवदशादिकम् ।। स्पष्टं तवाग्रे कथितं पार्वति प्राणवल्लभे ।।४२।।

मृगशिर के प्रथम चरण के देह-कर्क। जीव मीन मीन से उलटी कर्क तक विपरीत क्रम की राशि दशाधिप हैं।।३८।। मृगशिर नक्षत्र के द्वितीय पाद में देह-वृष। जीव-मिथुन। दशाराशि ३।२।१।९।१०।११।१२।१।२ इनके स्वामी दशापति होते हैं।।३९।। मृगशिर के तीसरे चरण में देह-मकर। जीव-मिथुन। दशाराशि ३।५।४।६।७।८।१२।११।१० तथा इनके स्वामी ग्रह राशिपति=दशापति हैं।।४०।। मृगशिर के चौथे चरण में देह-मेष। जीव-धनु। धनु राशि से मेष तक विपरीत क्रम से गणना करना चाहिए। राशियों के स्वामी ही दशास्वामी होते हैं।।४१।। हे प्राणेश्वरि पार्वति! हमने यह अपसव्यमार्ग के देह, जीव, दशाधिप तुम्हारे सामने स्पष्ट रूप से कहे हैं।।४२।।

कालचक्र दशा का उदाहरण

स्पष्ट चन्द्रमा १०।२६।३०।३३ इन राश्यादि की घटी की, तो १९५९०।३३ हुआ, ८०० का भाग दिया तो लब्ध २४ (गत नक्षत्र शतभिषा) यह व्यर्थ है। शेष संख्या ३९० हुई, अतः पूर्वाभाद्रपद का गतकालमान है। इसको ६० से गुणा किया तो २३४०० हुआ, इसमें ८०० का भाग दिया तो २९।१५ यह स्पष्ट 'भयात काल' हुआ। यह १५ घटी से अधिक है अतः १५ का भाग दिया तो शेष १४।१५ रहा, "विश्वर्क्ष पूर्वाभाद्रं च रेवती सव्यतारकः ।।" इत्यादि नियमानुसार सव्यमार्ग में पूर्वाभाद्रपद के द्वितीय चरण में जन्म होने से देहाधिप-'शनि' तथा 'जीवाधिप-'बुध' हुआ, एवं वृष नवांश में ८५ वर्ष की 'परमदशा' प्राप्त हुई। अब दशाकाल स्पष्ट करने के लिए पूर्वाभाद्रपद के द्वितीय पाद की भुक्त घटी १४।१५ को एकरस किया तो ८५५ हुआ, अब दशा वर्ष ८५ से गुणा किया तो ७२६७५ हुए। इसमें ९०० का भाग दिया तो लब्ध भुक्त वर्षादि ८०।१०।१५ हुआ, इसको ८५ में कम किया तो ४।१।१५ वर्षादि बुध के भोग्य वर्षादि हुए। अतः कालचक्री दशा में जन्म समय में जीवाधिप बुध की यह अन्तिमभोग्य दशा प्राप्त हुई।

अथ कालचक्रसव्यमार्गदशाप्रकरणचक्रम्

दशानां नक्षत्रनामानि तथा नक्षत्रपदानि	देहाधिपः	अथ सव्यनक्षत्रदशा १।२।३।७।८।९।१३।१४।१५।१९।२०।२१ २५।२६।२७ सव्य.	जीवाधिपतिः	अंशाः	परमायुर्वर्षाणि
अ.१च.१मू.१९च.१पु.७ च.१पू.२५च.१ह.१३च.१	भौ.	पो.१ रं.२ गा.३ वो.४ मा.५ ता.६ स.७ हो.८ धि.९ मं.७वशु१६व बु९व चं २१ र५व बु९व शु१६वमं.७वगु१०व	गुरुः	मेषांशः	दशा १०० वर्षाणि
अ.१च.२ मू.१९ च.२ पु.७ च.२पू.२५च.२ह.१३च.३	श.	न.१०क्ष.११त्र.१२ दा ८ सि.७ च.६ वं.४ ण.५ गा.३ श.४ श.४ गु.१० मं.७ शु.१६ बु.९ चं.२१ सू.५ बु.९	बुधः	वृषांशः	दशा ८५ वर्षाणि
अ.१च.३ मू.१९ च.३ पु.७ च.३ पू.२५ च.३ ह.१३ च.३	शु.	रू.२ पा.१ अ.१२क्षु.११नि.१० धा.९ य.१ रं.२ गं.३ शु.१६ मं.७ गु.१० श.४ श.४ गु.१० मं.७ शु.१६ बु.९	बुधः	मिथुनांशः	दशा ८३ वर्षाणि
अ.१ च.४ मू.१९ च.४ पु.७ च.४ पु.२५ च.४ ह.१३ च.४	चंद्र	वा.४ णि.५ च.६ स्थ.७ द.८ धि.९ न.१०क्ष.११व.१२ च.२१ सू.५ बु.९ शु.१६ मं.७ गु.१० श.४ श.४ गु.१०	गुरुः	कर्कांश	दशा ८६ वर्षाणि
म.२ च.१ चि.१४ च.१ पु.८ च.१पू.२०च.१उ.२६च.१	भौम	ह.८ स.७ श्र.६ व.४ शा.५ व.३ र.२ प.१ त्र.१२ मं.७ शु.१६ बु.९ चं.२१ र.५ बु.९ शु.१६ मं.७ गु.१०	गुरुः	सिंहांशः	दशा १०० वर्षाणि
म.२ च.३ पू.२० च.२ पु.८ च.२चि.१४च.२उ.२६च.२	शनि	क्षु.११ना.१०धि.९ क.१ र.२ गो.३ भी.४ ना.५ चं.६ श.४ श.४ गु.१० मं.७ शु.१६ बु.९ चं.२१ सू.५ बु.९	बुधः	कन्यांशः	दशा ८५ वर्षाणि
म.२ च.३ पू २० च.३ पू.८ च.३उ.२६च.३चि.१४च.३	शुक्र	सू.७ द.८ धि.९ म.१०क्ष.११त्र.१२ ज.८ सि.७ चं.६ शु.१६ मं.७ गु.१० श.४ श.४ गु.१० मं.७ शु.१६ बु.९	बुधः	तुलांशः	दशा ८३ वर्षाणि

भ.२च.४पू.२० च.४ पू.८ च.४चि.१४च.४उ.२६च.४	चंद्र	वा.४ मा.५ गा.३ र.२ क.१ त्र.१२क्षु.११नी.१० धि.९ चं.२१ सू.५ बु.९ शु.१६ मं.७ गु.१० श.४ श.४ गु.१०	गुरुः	वृश्चिकांशः	दशा ८६ वर्षाणि
कृ.३च.१उ.२१च.१अ.९ च.१रे.२७च.१स्वा.१५च.१	भौम	पौ.१ रं.२ गा.३ वा.४ मा.५ वा.६ स.७ हो.८ धि.९ मं.७ शु.१६ बु.९ च.२१ र.५ बु.९ शु.१६ मं.७ गु.१०	गुरुः	धनांशः	दशा १०० वर्षाणि
कृ.३च.२उ.२१च.२अ.९ च.२रे.२७च.स्वा.१५च.२	श.	न.१०क्ष.११त्र.१२ दा.८ सि.७ च.६ व.४ ण.५ गा.३ श.४ श.४ गु.१० मं.७ शु.१६ बु.९ च.२१ सू.५ बु.९	बुधः	मकरांशः	दशा ८५ वर्षाणि
कृ.३च.३उ.२१च.३अ.९च.३ रे.२७चं.३स्वा.१५च.३	शु.	रू.२ पो.१ त्र.१२क्षु.११र्नि.१०धा.९ य.१ रं.२ ग.३ शु.१६ मं.७ गु.१० श.४ श.४ गु.१० म.७ शु१६ बु.९	बुधः	कुंभांशः	दशा ८३ वर्षाणि
कृ.३च.४उ.२१च.४अ.९च.४ रे.२७च.४स्वा.१५च.४	चंद्र	वा.४ णि.५ च.६ स्थं.७ द.८ धि.९ न.१०क्ष.११त्र.१२ चं.२१ सू.५ बु.९ शु.१६ मं.७ गु.१० श.४ श.४ गु.१०	गुरुः	मीनांशः	दशा ८६ वर्षाणि

अथ कालचक्राऽपसव्यमार्गदशाप्रकरणचक्रम्

दशानांनक्षत्रनामानि तथा नक्षत्रपादानि	जीवाधिपतिः	अपसव्यनक्षणाणि ४।५।६।१०।११।१२।१६।१७।१८।२२।२३।२४	देहाधिपः	अंशाः	परमायुर्वर्षाणि
रो४ चं.१ वि.१६ चं.१ मं.१० च.१ श्र.२२ च.१	गुरुः	ध.९ न.१०क्ष.११त्रं.१२ प.१ रा.२ ग.३ मि.५ व.४ गु.१० श.४ श.४ गु.१० म.७ शु.१६ बु.९ सू.५ चं.२१	चंद्रः	वृश्चिकांशः	दशावर्षाणि ८६
रो.४ चं.२वि.१६च.२म.१० च.२ श्र.२२ च.२	बुधः	ता.६ सा.७ द ८ त्र.१२क्षु.११र्नि.१० धि.९ दी.८ सि.७ बु.९ शु.१६गु.१०गु.१० श.४ श.४ गु.१० म.७ शु.१६	शुक्रः	तुलांशः	दशावर्षाणि ८३
रो.४चं.३वि.१६चं.३म.१० च.३ श्र.२२ च.३	बुधः	च.६ र्मी.५ भो.४ गी.३ रा.२ य.१ ध.९ न.१०क्षु.११ बु.९ सू.५ चं.२१ बु.९ शु.१६ म.७ गु.१० श.४ श.४	शनिः	कन्यांशः	दशाब्दाः ८५

रो.४ चं.४ वि.१६ च.४ म.१० चं.४ श्र.२२ चं. ४	गुरुः	त्र.१२ पा.१ रा.२ ग.३ शु.५ भ.४ ते.६ स.७ दा.८ गु.१० म.७ शु.१६ बु.९ र.५ चं.२१ बु.९ शु.१६ मं.७	भौ.	सिंहांशः	दशाब्दाः १००
मृ.५च.१अ.१७च.१पू.११ च.१ ध.२३ च.१	गुरुः	त्र.१२क्षु.११र्नि.१० धि.९ दी.८ सा.८ त.६ नी.५ व.४ गु.१० श.४ श.४ गु.१० म.७ शु.१६ बु.९ सू.५ चं.२१	चंद्रः	कर्कांशः	दशावर्षाणि ८६
मृ.५चं.२अ.१७चं.२प.११ चं.२ ध.२३ चं.२	बुधः	गी.३ रा.२ यु.१ ध.९ न.१०क्ष.११त्र.१२ क.१ रा.२ बु.९ शु.१६ मं.७ गु.१० श.४ श.४ गु.१० मं.७ शु.१६	शु०	मिथुनांशः	दशावर्षाणि ८३
मृ.५च.३अ.१७च.३पू.११ चं.३ ध.२३ च.३	बुधः	गो.३ मा.५ वा.४ ची.६ स.७ द.८ त्र.१२क्षु.११न्ने.१० बु.९ सु.५ चं.२१ बु.९ शु.१६ मं.७ गु.१० श.४ श.४	श०	वृषांशः	दशावर्षाणि ८५
मृ.५च.४अ.१७च.४पू.११ च.४ ध.२३ च.४	गुरुः	धी.९ ज्ये.८ सी.७ त.६ मी.५ वा.४ गा.३ रा.२ य.१ गु.१० मं.७ शु.१६ बु.९ सु.५ चं.२१ बु.९ शु.१६ म.७	भौमः	मेषांशः	दशाब्दाः १००
आ.६च.१ज्ये.१८च.१ उ.१२ च.१ श.२४ च.१	गुरुः	त्र.१२क्षु.११नि.१० धि.९ दा.८ सी.७ त.६ मी.५ व.४ गु.१० श.४ श.४ गु.१० मं.७ शु.१६ बु.९ सू.५ चं.२१	चंद्रः	मीनांशः	दशाब्दा ८६
आ.६च.२ ज्ये.१८ च.२ उ.१२च.२श.२४ च.२	बुधः	गी.३ रा.२ यु.१ ध.९ नं.१०क्ष.११त्र.१२ य.१ रा.२ बु.९ शु.१६ मं.७ गु.१० श.४ श.४ गु.१० मं.७ शु.१६	शु.	कुंभांशः	दशाब्दाः ८३
आ.६ च.३ ज्ये.१८ च.३ उ.१२ च.३ श.२४ च.३	बुधः	गो.३ मा.५ वा.४ चा.६ स.७ द.८ त्र.१२क्षु.११न्ने.१० बु.९ सू.५ चं.२१ बु.९ शु.१६ मं.७ गु.१० श.४ श.४	श.	मकरांशः	दशाब्दा ८५
आ.६च.४ज्ये.१८ च.४ उ.१२च.४ श.२४च.४	गुरुः	धी.९ ज्ये.८ सी.७ त.६ मा.५ वा.४ गा.३ र.२ यो.१ गु.१० मं.७ शु.१६ बु.९ र.५ चं.२१ बु.९ शु.१६ मं.७	भौमः	धनुरंशः	दशाब्दाः १००

अथ कालचक्रमेषांशदशावर्षाणि १०० तन्मध्ये भौमांतर्वर्षाणि ७ तस्योपदशाचक्रम्										
ध्रुवांक	मं० १	शु० २	बु० ३	चं० ४	सू० ५	बु० ६	शु० ७	मं० ८	बृ० ९	योगाः
२	०	१	०	१	०	०	१	०	०	७
०	५	१	७	५	४	७	१	५	८	०
२५	२६	१३	१६	१९	६	१६	१३	२६	१२	०
१२	२४	१२	४८	१२	०	४८	१२	२४	०	०
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०

अथ कालचक्रमेषांश दशावर्षाणि १०० तन्मध्ये भृगोरंतर्वर्षाणि १६ तस्योपदशाचक्रम्										
ध्रुवांक	शु० २	बु० २	चं० ४	सू० ५	बु० ६	शु० ७	मं० ८	बृ० ९	मं० १	योगाः
०	२	१	३	०	१	२	१	१	१	१६
१	६	५	४	९	५	६	१	६	१	०
२७	२१	८	९	१८	८	२१	१३	३६	१३	०
३६	३६	२४	३६	०	२४	३६	१२	०	१२	०
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०

अथ कालचक्रमेषांशदशावर्षाणि १०० तन्मध्ये बुधांतर्वर्षाणि ९ तस्योपदशाचक्रम्										
ध्रुवांक	बु० ३	चं० ४	सू० ५	बु० ६	शु० ७	मं० ८	बृ० ९	मं० १	शु० २	योगाः
०	०	१	०	०	१	०	०	०	१	९
१	९	१०	५	९	५	७	१०	७	५	०
२	२१	२०	१२	२१	८	१६	२४	१६	८	०
२४	३६	२४	०	३६	२४	४८	०	४८	२४	०
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०

अथ कालचक्रमेषांशदशावर्षाणि १०० तन्मध्ये चंद्रांतर्वर्षाणि २१ तस्योपदशाचक्रम्										
ध्रुवांक	चं० ४	सू. ५	बु० ६	शु० ७	मं० ८	बु० ९	मं० १	शु० २	बु० ३	योगाः
०	४	१	१	३	१	२	१	३	१	२१
२	४	०	१०	४	५	१	५	४	१०	०
१५	२७	१८	२०	९	१९	६	१९	९	२०	०
३६	३६	०	२४	३६	१२	०	१२	३६	२४	०
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०

अथ कालचक्रमेषांशदशावर्षाणि १०० तन्मध्ये रव्यंतर्वर्षाणि ५ तस्योपदशाचक्रम्

ध्रुवांक	सू० ५	बु० ६	शु० ७	मं० ८	बृ० ९	मं० १	शु० २	बु० ३	चं० ४	योगाः
०	०	०	०	०	०	०	०	०	१	५
०	३	५	९	४	६	४	९	५	०	०
१८	०	१२	१८	६	०	६	१८	१२	१८	०
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०

अथ कालचक्रमेषांशदशावर्षाणि १०० तन्मध्ये बुधांतर्वर्षाणि ९ तस्योपदशाचक्रम्

ध्रुवांक	बु० ६	शु० ७	मं० ८	बृ० ९	मं० १	शु० २	बृ० ३	चं० ४	सू० ५	योगाः
०	०	१	०	०	०	१	०	१	०	९
२	९	५	७	१०	७	५	९	१०	५	०
२४	२१	८	१६	२४	१६	८	२१	२०	१२	०
०	३६	२४	४८	०	४८	२४	३६	२४	०	०
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०

अथ कालचक्रमेषांशदशावर्षाणि १०० तन्मध्ये भृगोरंतर्वर्षाणि १६ तस्योपदशाचक्रम्

ध्रुवांक	शु० ७	मं० ८	बृ० ९	मं० १	शु० २	बु० ३	चं० ४	सू०५	बु० ६	योगाः
०	२	१	१	१	२	१	३	०	१	१६
१	६	१	७	१	६	५	४	९	५	०
२७	२१	१३	६	१३	२१	८	९	१८	८	०
३६	३६	१२	०	१२	३६	२४	३६	०	२४	०
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०

अथ कालचक्रमेषांशदशावर्षाणि १०० तन्मध्ये भौमांतर्वर्षाणि ७ तस्योपदशाचक्रम्

ध्रुवांक	मं० ८	बृ० ९	मं० १	शु० २	बु० ३	चं० ४	सू०५	बु० ६	शु० ७	योगाः
०	०	०	०	१	०	१	५	१	१	७
०	५	८	५	१	७	५	४	७	१	०
२५	२६	१२	२६	१३	१६	१९	६	४८	१३	०
१२	२४	०	२४	१२	४८	१२	०	१६	१२	०
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०

अथ कालचक्रमेषांशदशावर्षाणि १०० तन्मध्ये गुरोरंतर्वर्षाणि १० तस्योपदशाचक्रम्

ध्रुवांक	बृ० ९	मं० १	शु० २	बु० ३	चं० ४	सू० ५	बु० ६	शु० ७	मं० ८	योगाः
०	१	०	१	०	२	०	०	१	०	१०
१	०	८	७	१०	१	६	१०	७	८	०
६	०	१२	६	२४	६	०	२४	६	१२	०
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०

अथ कालचक्रवृषभांशदशावर्षाणि ८५ तन्मध्ये शन्यंतर्वर्षाणि ४ तस्योपदशाचक्रम्

ध्रुवांक	श० १०	श ११	वृ० १२	मं० ८	शु० ७	बु० ६	चं० ४	सू० ५	बु० ३	योगाः
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	४
१६	२	२	५	३	९	५	११	२	५	०
५६	५	५	१९	२८	१	२	२५	२४	२	०
२८	४३	४५	·१४	३५	३	२८	४५	४२	४८	०
१४	५३	५३	४२	१८	३२	१४	५३	२१	१४	०

अथ कालचक्रवृषभांशदशावर्षाणि ८५ तन्मध्ये शन्यंतर्वर्षाणि ४ तस्योपदशाचक्रम्

ध्रुवांक	श० ११	बृ०१२	मं० ८	शु० ७	बु० ६	चं० ४	सू० ५	बु० ३	श०१०	योगाः
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	४
१६	२	५	३	९	५	११	२	५	२	०
२८	७	१९	२८	१	२	२५	२४	२	७	०
५६	४५	५४	३५	३	१८	४५	४२	२८	४५	०
१४	५३	४२	१८	३२	१४	५३	२१	१४	५३	०

अथ कालचक्रवृषभांशदशावर्षाणि ८५ तन्मध्ये गुरोरंतर्वर्षाणि १० तस्योपदशाचक्रम्

ध्रुवांक	बृ०१२	मं० ८	शु० ७	बु० ६	चं० ४	सू० ५	बु० ३	श०१०	श०११	योगाः
१	१	०	१	१	२	०	१	०	०	१०
१२	२	९	१०	०	५	७	०	५	५	०
२१	३	२६	१७	२१	१९	१	२१	१९	१९	०
१०	३१	२८	३८	१०	२४	४५	१०	२४	२४	०
३५	४६	१४	४९	३५	४२	५३	३५	४३	४३	०

अथ कालचक्रवृषभांशदशावर्षाणि ८५ तन्मध्ये भौमांतर्दशार्वर्षाणि ७ तस्योपदशाचक्रम्

ध्रुवांक	मं०८	शु०७	बु०६	चं०४	सू०५	बु०३	श.१०	श०११	बृ०१२	योगाः
०	०	१	०	१	०	०	०	०	०	७
२९	६	३	८	८	४	८	३	३	९	०
३८	२७	२४	२६	२२	२८	२६	२८	२८	२६	०
४९	३१	३१	४९	३५	१४	४९	३५	३५	२८	०
२४	४६	१०	२५	१७	७	२५	१८	१८	१४	०

अथ कालचक्रवृषभांशदशावर्षाणि ८५ तन्मध्ये भृगोरंतर्वर्षाणि १६ तस्योपदशाचक्रम्

ध्रुवांक	शु०७	बु०६	चं०४	सू०५	बु०३	श०१०	श.११	बृ.१२	मं०८	योगाः
२	३	१	३	०	१	०	०	१	१	१६
७	०	८	११	११	८	९	९	१०	३	०
४५	४	९	१३	८	९	१	१	१७	२४	०
५२	१४	५२	३	४९	५२	३	३	३८	२१	०
५६	७	५६	३२	२५	५६	३२	३२	४९	११	०

अथ कालचक्रवृषभांशदशावर्षाणि ८५ तन्मध्ये बुधांतर्वर्षाणि ९ तस्योपदशाचक्रम्

ध्रुवांक	बु०६	चं०४	सू०५	बु०३	श.१०	श.११	बृ०१२	मं०८	शु०७	योगाः
१	०	२	०	०	०	०	१	०	१	९
८	११	२	६	११	५	५	०	८	८	०
७	१३	२०	१०	१३	२	२	२१	२६	९	०
३	३	२८	३५	३	२८	२८	१०	४९	५२	०
३१	३२	१४	१८	३२	१४	१४	३५	२५	५६	०

अथ कालचक्रवृषभांशदशावर्षाणि ८५ तन्मध्ये चंद्रांतर्वर्षाणि २१ तस्योपदशाचक्रम्

ध्रुवांक	चं०४	सू०५	बु०३	श.१०	श.११	बृ०१२	मं०८	शु०७	बु०६	योगाः
२	५	१	२	०	०	२	१	३	२	२१
२८	२	२	२	११	११	५	८	११	२	०
५६	७	२४	२०	२५	२५	१९	२२	१३	२०	०
२८	४५	४२	२८	४५	४५	२४	३५	३	२८	०
१४	५३	२१	१४	५३	५३	४३	१७	३२	१४	०

अथ कालचक्रवृषभांशदशावर्षाणि ८५ तन्मध्ये सूर्यांतर्वर्षाणि ५ तस्योपदशाचक्रम्										
ध्रुवांक	र०५	बु०३	श.१०	श.११	बृ०१२	मं०८	शु०७	बु०६	चं०४	योगाः
०	०	०	०	०	०	०	०	०	१	५
२१	३	६	२	२	७	४	११	६	२	०
१०	१५	१०	२४	२४	१	२८	८	१०	२४	०
३५	५२	३५	४२	४२	४५	१४	४९	३५	४२	०
१७	५६	१८	२१	२१	५३	७	२५	१८	२१	०

अथ कालचक्रवृषभांशदशावर्षाणि ८५ तन्मध्ये बुधांतर्वर्षाणि ९ तस्योपदशाचक्रम्										
ध्रुवांक	बु०३	श.१०	श.११	बृ०१२	मं०८	शु०७	बु०६	चं०४	सू०५	योगाः
१	०	०	०	१	०	१	०	२	०	९
८	११	५	५	०	८	८	११	२	६	०
७	१३	२	२	२१	२६	९	१३	२०	१०	०
३	३	२८	२८	१०	४९	५२	३	२८	३५	०
३१	३२	१४	१४	३५	२५	५६	३२	१४	१८	०

अथ कालचक्रमिथुनांशदशावर्षाणि ८३ तन्मध्ये भृगोरंतर्वर्षाणि १६ तस्योपदशाचक्रम्										
ध्रुवांक	शु०२	मं०१	बृ०१२	श.११	श.१०	बृ०९	मं०१	शु०२	बु०३	योगाः
२	३	१	१	०	०	१	१	३	१	१६
९	१	४	११	९	९	११	४	१	८	०
२३	०	५	३	७	७	३३	५	०	२४	०
५१	२१	४७	५८	३५	३५	५८	४७	२१	३४	०
१९	४१	०	३३	२५	२५	३३	०	४१	४२	०

अथ कालचक्रमिथुनांशदशावर्षाणि ८३ तन्मध्ये भौमांतर्वर्षाणि ७ तस्योपदशाचक्रम्										
ध्रुवांक	मं०१	बृ०१२	श.११	श.१०	बृ०९	मं०१	शु०२	बृ०३	शु०२	योगाः
१	०	०	०	०	०	०	१	०	१	७
०	७	१०	४	४	१०	७	४	९	४	०
२१	२	३	१	१	३	२	५	३	५	०
२१	३१	३६	२६	२६	३६	३१	४७	१५	४७	०
१२	४८	५२	४५	४५	५२	४८	०	१०	०	०

अथ कालचक्रमिथुनांशदशावर्षाणि ८३ तन्मध्ये गुरोरंतदशार्वर्षाणि १० तस्योपदशाचक्रम्

ध्रुवांक	बृ०१२	श.११	श.१०	बृ०९	मं०१	शु०२	बु०३	शु०२	मं०१	योगाः
१	१	०	०	१	०	१	१	१	०	१०
१३	२	५	५	२	१०	११	१	११	१०	०
२२	१३	२३	२३	१३	३	३	०	३	३	०
२४	४४	२९	२९	४४	३६	५८	२१	५८	३६	०
३४	६	३८	३८	६	५२	३३	४२	३३	५२	०

अथ कालचक्रमिथुनांशदशावर्षाणि ८३ तन्मध्ये शन्यंतर्वर्षाणि ४ तस्योपदशाचक्रम्

ध्रुवांक	श.११	श.१०	बृ०९	मं०१	शु०२	बृ०३	शु०२	मं०१	बृ०१२	योगाः
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	४
१७	२	२	५	४	९	५	९	४	५	०
२०	९	९	२३	१	७	६	७	१	२३	०
५७	२३	२३	२९	२६	३५	८	३५	२६	२९	०
४९	५२	५२	३८	४५	२५	४०	२५	४५	३८	०

अथ कालचक्रमिथुनांदशावर्षाणि ८३ तन्मध्ये शन्यतर्वर्षाणि ४ तस्योपदशाचक्रम्

ध्रुवांक	श.१०	बृ.९	मं०१	शु०२	बु०३	शु०२	मं०१	बृ०१२	श.११	योगाः
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	४
१७	२	५	४	९	५	९	४	५	२	०
२०	९	२३	१	७	६	७	१	२३	९	०
५७	२३	२९	२६	३५	८	३५	२६	२९	२३	०
४९	५२	३८	४५	२५	४०	२५	४५	३८	५२	०

अथ कालचक्रमिथुनांशदशावर्षाणि ८३ तन्मध्ये गुरोरंतर्वर्षाणि १० तस्योपदशाचक्रम्

ध्रुवांक	बृ०९	मं०१	शु०२	बु०३	शु०२	मं०१	बृ०१२	श.११	श.१०	योगाः
१	१	०	१	१	१	०	१	०	०	१०
१३	२	१०	११	१	११	१०	२	५	५	०
२२	१३	३	३	०	३	३	१३	२३	२३	०
२४	४४	२६	५८	२१	५८	३६	४४	२९	२९	०
३४	६	५२	३३	४२	३३	५२	६	३८	३८	०

अथ कालचक्रमिथुनांशदशावर्षाणि ८३ तन्मध्ये भौमांतर्वर्षाणि ७ तस्योपदशाचक्रम्

ध्रुवांक	मं०१	शु०२	बु०३	शु०२	मं०१	बृ०१२	श०११	श०१०	बृ०९	योगाः
१	०	१	०	१	०	०	०	०	०	७
०	७	४	९	४	७	१०	४	४	१०	०
२१	२	५	३	५	२	३	१	१	३	०
४१	३१	४७	१५	४७	३१	३६	२६	२६	३६	०
१२	४८	०	१०	०	४८	५२	४५	४५	५२	०

अथ कालचक्रमिथुनांशदशावर्षाणि ८३ तन्मध्ये भृगोरंतर्वर्षाणि १६ तस्योपदशाचक्रम्

ध्रुवांक	शु०२	बु०३	शु०२	मं० १	बृ०१२	श०११	श०१०	बृ०९	मं०१	योगाः
२	३	१	३	१	१	०	०	१	१	१६
९	१	८	१	४	११	९	९	११	४	०
२३	०	२४	०	५	३	७	७	३	५	०
५१	२१	३४	२१	४७	५८	३५	३५	५८	४७	०
१९	४१	४२	४१	०	३३	२५	२५	३३	०	०

अथकालचक्रमिथुनांदशावर्षाणि ८३ तन्मध्ये बुधांतर्वर्षाणि ९ तस्योपदशाचक्रम्

ध्रुवांक	बु०३	शु०२	मं०१	बृ०१२	श.११	श.१०	बृ०९	मं०१	शु०२	योगाः
१	०	१	०	१	०	०	१	०	१	९
९	११	८	९	१	५	५	१	९	८	०
२	९१	२४	३	०	६	६	०	३	२४	०
१०	१९	३४	१५	२१	८	८	२१	१५	३४	०
७	३२	४२	१०	४२	४०	४०	४२	१०	४२	०

अथ कालचक्रकर्कांशदशावर्षाणि ८६ तन्मध्ये चंद्रांतर्वर्षाणि २१ तस्योपदशाचक्रम्

ध्रुवांक	चं०४	सू०५	बु०६	शु०७	मं०८	बृ०९	श०१०	श०११	बु०१२	योगाः
२	५	१	२	३	१	२	०	०	२	२१
२७	१	२	२	१०	८	५	११	११	५	०
२५	१६	१९	११	२६	१५	९	२१	२१	९	०
५४	२	३२	९	३	२०	४	३७	३७	४	०
७	४७	५	४६	४२	५६	११	४१	४१	११	०

अथ कालचक्रकर्कांशदशावर्षाणि ८६ तन्मध्ये सूर्यांतर्वर्षाणि ५ तस्योपदशाचक्रम्

ध्रुवांक	सू०५	बु०६	शु०७	मं०८	बृ०९	श०१०	श०११	बृ०१२	चं०४	योगाः
०	०	०	०	०	०	०	०	०	१	५
२०	३	६	११	४	६	२	२	६	२	०
५५	१४	८	४	२६	२९	२३	२३	२९	१९	०
४८	३९	२२	५३	३०	१८	४३	४३	१८	३२	०
५०	४	२०	१	४२	९	१५	१५	९	५	०

अथ कालचक्रकर्कांशदशावर्षाणि ८६ तन्मध्ये सूर्यांतर्वर्षाणि ९ तस्योपदशाचक्रम्

ध्रुवांक	बु०६	शु०७	मं०८	बृ०९	श.१०	श.११	बु०१२	चं०४	सू०५	योगाः
१	०	१	०	१	०	०	१	२	०	९
७	११	८	८	०	५	५	०	२	६	०
४०	९	२	२३	१६	०	०	१६	११	८	०
२७	४	४७	४३	४४	४१	४१	४४	९	२२	०
५४	११	२४	१५	४०	५१	५१	४०	४६	३०	०

अथ कालचक्रकर्कांशदशावर्षाणि ८६ तन्मध्ये भृगोरंतर्वर्षाणि १६ तस्योपदशाचक्रम्

ध्रुवांक	शु०७	मं०८	बृ०९	श०१०	श०११	बृ०१२	चं०४	सू०५	बु०६	योगाः
२	२	१	१	०	१	१	३	०	१	१६
६	११	३	१०	८	८	१०	१०	११	८	०
५८	२१	१८	९	२७	२७	९	२६	४	२	०
३६	३७	५०	४६	५४	५४	४६	३०	५३	४७	०
१६	४१	१४	२	२६	२६	२	४२	१	२६	०

अथ कालचक्रकर्कांशदशावर्षाणि ८६ तन्मध्ये भौमांतर्वर्षाणि ७ तस्योपदशाचक्रम्

ध्रुवांक	मं०८	बृ०९	श०१०	श०११	बृ०१२	चं०४	सू०५	बु०६	शु०७	योगाः
०	०	०	०	०	०	१	०	०	१	७
२९	६	९	३	३	९	८	४	८	३	०
१८	२	२३	२७	२७	२३	१५	२६	२३	१८	०
८	६	१	१२	१२	१	२०	३०	४३	५०	०
२२	५९	२४	३३	३३	२४	५६	४२	१५	१४	०

अथ कालचक्रकर्कांशदशावर्षाणि ८६ तन्मध्ये गुरोरंतर्वर्षाणि १० तस्योपदशाचक्रम्

ध्रुवांक	बृ०९	श०१०	श०११	बृ०१२	चं०४	सू०५	बु०६	शु०७	मं०८	योगाः
० १	१	०	०	१	२	०	१	१	०	१०
११	१	५	५	१	५	६	०	१०	९	०
५१	२८	१७	१७	२८	९	२९	१६	९	२३	०
३७	३६	३६	३६	३६	४	१८	४४	४६	१	०
४०	१६	३०	३०	१६	१३	९	४०	२	२४	०

अथ कालचक्रकर्कांशदशावर्षाणि ८६ तन्मध्ये शन्यंतर्वर्षाणि ४ तस्योपदशाचक्रम्

ध्रुवांक	श०१०	श०११	बृ०१२	चं०४	सू०५	बु०६	शु०७	मं०८	बृ०९	योगाः
० ०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	४
१६	२	२	५	११	२	५	८	३	५	०
४४	६	६	१७	२१	२३	०	२७	२७	१७	०
३९	५८	५८	२६	३७	४३	४१	५४	१२	२६	०
४	३७	३७	३०	३१	१५	५१	२६	३३	३०	०

अथ कालचक्रकर्कांशदशावर्षाणि ८६ तन्मध्ये शन्यंतर्वर्षाणि ४ तस्योपदशाचक्रम्

ध्रुवांक	श०११	बृ०१२	चं०४	सू०५	बु०६	शु०७	मं०८	बृ०९	श०१०	योगाः
० ०	१	०	०	०	०	०	०	०	०	४
१६	२	५	११	२	५	८	३	५	२	०
४४	६	१७	२१	२३	०	२७	२७	१७	६	०
३९	५८	२६	३७	४३	४१	५४	१२	२६	५८	०
४	३७	३०	४१	१५	५१	२६	३३	३०	३७	०

अथ कालचक्रकर्कांशदशावर्षाणि ८६ तन्मध्ये गुरोरंतर्वर्षाणि १० तस्योपदशाचक्रम्

ध्रुवांक	बृ०१२	चं०४	सू०५	बु०६	शु०७	मं०८	बृ०९	श०१०	श०११	योगाः
० १	१	२	०	१	१	०	१	०	०	१०
११	१	५	६	०	१०	९	१	५	५	०
५१	२८	९	२९	१६	९	२३	२८	१७	१७	०
३७	३६	४	१८	४४	४६	१	३६	२६	२६	०
४०	१६	१३	९	४०	२	२४	१६	३०	३०	०

अथ कालचक्रसिंहांशदशावर्षाणि १०० तन्मध्ये भौमांतर्वर्षाणि ७ तस्योपदशाचक्रम्

ध्रुवांक	मं०८	शु०७	बु०६	चं०४	सू०५	बु०६	शु०२	मं०१	बृ०१२	योगाः
०	०	१	०	१	०	०	१	०	०	७
०	५	१	७	५	४	७	१	७	८	०
२५	२६	१३	१६	१९	६	१६	१३	२	१२	०
१२	२४	१२	४८	१२	०	४८	१२	४	०	०
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०

अथ कालचक्रसिंहांश दशावर्षाणि १०० तन्मध्ये मृगोरंतर्वर्षाणि १६ तस्योपदशाचक्रम्

ध्रुवांक	गु०७	बु०६	चं०४	सू०५	बु०६	शु०२	मं०१	बृ०१२	मं०८	योगाः
०	२	१	३	०	१	२	१	१	१	१६
१	६	५	६	९	५	६	१	७	१	०
२७	२१	८	९	१८	८	२१	१३	६	१३	०
३६	३६	२४	३६	०	२४	३६	१२	०	१२	०
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०

अथ कालचक्रसिंहांशदशावर्षाणि १०० तन्मध्ये बुधांतर्वर्षाणि ९ तस्योपदशाचक्रम्

ध्रुवांक	बु०६	चं०४	सू०५	बु०६	शु०२	मं०१	बृ०१२	मं०८	शु०७	योगाः
०	०	१	०	०	१	०	०	०	१	९
१	९	१०	५	९	५	७	१०	७	५	०
२	२१	२०	१२	२१	८	१६	२४	१६	८	०
२४	३६	२४	०	३६	२४	४८	०	४८	२४	०
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०

अथ कालचक्रसिंहांशदशावर्षाणि १०० तन्मध्ये चंद्रांतर्वर्षाणि २१ तस्योपदशाचक्रम्

ध्रुवांक	चं०४	सू०५	बु०६	शु०२	मं०१	बृ०१२	मं०८	शु०७	बु०६	योगाः
०	४	१	१	३	१	२	१	३	१	२१
२	४	०	१०	४	५	१	५	४	१०	०
१५	२७	१८	२०	९	१९	६	१९	९	२१	०
३६	३६	०	२४	३६	१२	०	१२	३६	२४	०
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०

अथ कालचक्रसिंहांशदशावर्षाणि १०० तन्मध्ये रव्यंतर्वर्षाणि ५ तस्योपदशाचक्रम्

ध्रुवांक	सू०५	बु०६	शु०२	मं०१	बृ०१२	मं०८	शु०७	बु०६	चं०४	योगाः
०	०	०	०	०	०	०	०	०	१	५
०	३	५	९	४	६	४	९	५	०	०
१८	०	१२	१८	६	०	६	१८	१२	१८	०
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०

अथ कालचक्रसिंहांशदशावर्षाणि १०० तन्मध्ये बुधांतर्वर्षाणि ९ तस्योपदशाचक्रम्

ध्रुवांक	बु०६	शु०२	मं०१	बृ०१२	मं०८	शु०७	बु०६	चं०४	सू०५	योगाः
०	०	१	०	०	०	१	०	१	०	९
२	९	५	७	१०	७	५	९	१०	५	०
२४	२१	८	१६	२४	१७	८	२१	२०	१२	०
०	३६	२४	४८	०	४८	२४	३६	२४	०	०
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०

अथ कालचक्रसिंहांशदशावर्षाणि १०० तन्मध्ये भृगोरंतर्वर्षाणि १६ तस्योपदशाचक्रम्

ध्रुवांक	शु०२	मं०१	बु०१२	मं०८	शु०७	बु०६	चं०४	सू०५	बु०६	योगाः
०	२	१	१	१	२	१	३	०	१	१६
१	६	१	७	१	६	५	४	९	५	०
२७	२१	१३	६	१३	२१	८	९	१८	८	०
३६	३६	१२	०	१२	३६	२४	३६	०	२४	०
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०

अथ कालचक्रसिंहांशदशावर्षाणि १०० तन्मध्यें भौमांतर्वर्षाणि ७ तस्योपदशाचक्रम्

ध्रुवांक	मं०१	बृ०१२	मं०८	शु०७	बु०६	चं०४	सू०५	बु०६	शु०२	योगाः
०	०	०	०	१	०	१	०	०	१	७
०	५	८	५	१	७	५	४	७	१	०
२५	२६	१२	२६	१३	१६	१९	६	१६	१३	०
१२	२४	०	२४	१२	४८	१२	०	४८	१२	०
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०

अथ कालचक्रसिंहांशदशावर्षाणि १०० तन्मध्ये गुरोरंतर्वर्षाणि १० तस्योपदशाचक्रम्

ध्रुवांक	गु०१२	मं०८	शु०७	बु०६	चं०४	सू०५	बु०६	शु०२	मं०१	योगाः
०	१	०	१	०	२	०	०	१	०	१०
१	०	८	७	१०	१	६	१०	७	८	०
६	०	१२	६	२४	६	०	२४	६	१२	०
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०

अथ कालचक्रकन्यांशदशावर्षाणि ८५ तन्मध्ये शन्यंतर्वर्षाणि ४ तस्योपदशाचक्रम्

ध्रुवांक	श०४	श १०	गु०९	मं०१	शु०२	बु०३	चं०४	सू०५	बु०६	योगाः
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	४
०	२	२	५	३	९	५	११	२	५	०
५६	७	७	१९	२८	१	२	२५	२४	२	०
२८	४५	४५	१४	३५	३	२८	४५	४२	२८	०
१४	५३	५३	४२	१८	३२	१४	५३	२१	१४	०

अथ कालचक्रकन्यांशदशावर्षाणि ८५ तन्मध्ये शन्यंतर्वर्षाणि ४ तस्योपदशाचक्रम्

ध्रुवांक	श०१०	गु०९	मं०१	शु०२	बु०३	चं०४	सू०५	बु०६	श ११	योगाः
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	४
०	२	५	३	९	५	११	२	५	२	०
५६	७	१९	२८	१	२	२५	४४	२	७	०
२८	४५	५४	३५	३	२८	४५	४२	२८	४५	०
१४	५३	४२	१८	३२	१४	५३	२१	१४	५३	०

अथ कालचक्रकन्यांशदशावर्षाणि ८५ तन्मध्ये गुरोरंतर्वर्षाणि १० तस्योपदशाचक्रम्

ध्रुवांक	बृ०९	मं०१	शु०२	बु०३	चं०४	सू०५	बु०६	श १०	श १०	योगाः
० १	०	०	१	१	२	०	१	०	०	१०
१२	२	९	१०	०	५	७	०	५	५	०
२१	३	२६	१७	२१	१९	१	२१	१९	१९	०
१०	३१	२८	३८	१०	२४	४५	१०	२४	२४	०
३५	४६	१४	४९	३५	४२	४३	३५	४३	४३	०

अथ कालचक्रकन्यांशदशावर्षाणि ८५ तन्मध्ये भौमांतर्वर्षाणि ७ तस्योपदशाचक्रम्

ध्रुवांक	मं०१	शु०२	बु०३	चं०४	सू०५	बु०६	श०११	श०१०	बृ०९	योगाः
०	०	१	०	१	०	०	०	०	०	७
२९	६	६	८	८	४	८	३	३	९	०
३८	२७	२४	२६	२२	२८	२६	२८	२८	२६	०
४९	३१	२१	४९	३५	१४	४९	३५	३५	१८	०
२४	४६	१०	२५	१७	७	२५	१८	१८	१४	०

अथ कालचक्रकन्यांशदशावर्षाणि ८५ तन्मध्ये भृगोरंतर्वर्षाणि १६ तस्योपदशाचक्रम्

ध्रुवांक	श०२	बु०३	चं०४	सू०५	बु०६	श०११	श०१०	बृ०९	मं०१	योगाः
२	३	१	३	०	१	०	०	१	१	१६
७	०	८	११	११	८	९	९	१०	३	०
४५	४	९	१३	८	९	१	१	१७	२४	०
५२	१४	५२	३	४९	५२	३	३	३८	२१	०
५६	७	५६	३२	२५	५६	३२	३२	४९	११	०

अथ कालचक्रकन्यांशदशाव०८५ तन्मध्ये बुधांतर्वर्षाणि ९ तस्योपदशाचक्रम्

ध्रुवांक	बु०३	चं०४	सू०५	बु०६	श०११	श०१०	बृ०९	मं०१	शु०२	योगाः
१	०	२	०	०	०	०	१	०	१	१
८	११	२	६	११	५	५	०	८	८	०
७	१३	२०	१०	१३	२	२	२१	२६	९	०
६	३	२८	३५	३	२८	२८	१०	४९	५२	०
३१	३२	१४	१८	२२	१४	१४	३५	२५	५६	०

अथ कालचक्रकन्यांशदशावर्षाणि ८५ तन्मध्ये चंद्रांतर्वर्षाणि २१ तस्योपदशाचक्रम्

ध्रुवांक	चं०४	सू०५	बु०६	श०११	श०१०	बृ०९	मं०१	शु०२	बु०२	योगाः
२	५	१	२	०	०	२	१	३	२	२१
२८	२	२	२	११	११	५	८	११	२	०
५६	७	२४	२०	२५	२५	११	२२	१३	२०	०
२८	४५	४२	२८	४५	४५	२४	३५	३	२८	०
१४	५३	२१	१४	४३	४३	४३	१७	३२	१४	०

अथ कालचक्रकन्यांशदशावर्षाणि ८५ तन्मध्ये सूर्यांतर्वर्षाणि ५ तस्योपदशाचक्रम्										
ध्रुवांक	सू०५	बु०६	श०११	श०१०	बृ०९	मं०१	शु०२	बु०३	चं०४	योगाः
० ०	०	०	०	०	०	०	०	०	१	५
२१	३	६	२	२	७	४	११	६	२	०
१०	१५	१०	२४	२४	१	२८	८	१०	२४	०
३५	५२	३५	४२	४२	४५	१४	४९	३५	४२	०
१७	५६	१७	२१	२१	५३	७	२५	१८	२१	०

अथ कालचक्रकन्यांशदशावर्षाणि ८५ तन्मध्ये बुधांतर्वर्षाणि ९ तस्योपदशाचक्रम्										
ध्रुवांक	बु०६	श.११	श.१०	बृ०९	मं०१	शु०२	बु०३	चं०४	सू०५	योगाः
० १	०	०	०	१	०	१	०	२	०	९
८	११	५	५	०	८	८	११	२	६	०
७	१३	२	२	२१	२६	९	१३	२०	१०	०
३	३	२८	२८	१०	४९	५२	३	२८	३५	०
२१	३२	१४	१४	३५	२५	५६	३२	१४	१८	०

अथ कालचक्रतुलांशदशावर्षाणि ८३ तन्मध्ये भृगोरंतर्वर्षाणि १६ तस्योपदशाचक्रम्										
ध्रुवांक	शु०७	मं०८	बृ०९	श.१०	श०११	बृ०१२	मं०८	शु०७	बु०६	योगाः
० २	३	१	१	०	०	१	१	३	१	१६
९	१	४	११	९	९	११	४	१	८	०
२३	०	५	३	७	७	३	५	०	२४	०
५१	२१	४७	५८	३५	३५	५८	४७	२१	३४	०
१९	४१	०	३३	२५	२५	३३	०	४१	४२	०

अथ कालचक्रतुलांशदशावर्षाणि ८३ तन्मध्ये भौमांतर्वर्षाणि ७ तस्योपदशाचक्रम् सू०५										
ध्रुवांक	मं०८	बृ०९	श.१०	श.११	बृ०१२	मं०८	शु०७	बु०६	शु०७	योगाः
० १	०	०	०	०	०	०	१	०	१	७
०	७	१०	४	४	१०	७	४	९	४	०
२१	२	३	१	१	३	२	५	३	५	०
४१	३१	३६	२६	२६	३६	३१	४७	१५	४७	०
१२	४८	५२	४५	४५	५२	४८	०	१०	०	०

अथ कालचक्रतुलांशदशावर्षाणि ८३ तन्मध्ये गुरोरंतर्वर्षाणि १० तस्योपदशाचक्रम्

ध्रुवांक	बृ०९	श.१०	श.११	बृ०१२	मं०८	शु०७	बु०६	शु०७	मं०८	योगाः
० १	१	०	०	१	०	१	१	१	०	१०
१३	२	५	५	२	१०	११	१	११	१०	०
२२	१३	२३	२३	१३	३	३	०	३	३	०
२४	४४	२९	२९	४४	३६	५८	२१	५८	३६	०
३४	६	३८	३८	६	५२	३३	४२	३३	५२	०

अथ कालचक्रतुलांशदशावर्षाणि ८३ तन्मध्ये शन्यंतर्वर्षाणि ४ तस्योपदशाचक्रम्

ध्रुवांक	श.१०	श.११	बृ०१२	मं०८	शु०७	बु०६	शु०७	मं०८	बृ०९	योगाः
० ०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	४
१७	२	२	५	४	९	५	९	४	५	०
२०	९	९	२३	१	७	६	७	१	२३	०
५७	२३	२३	२९	२६	३५	८	३५	२६	२९	०
४९	५२	५२	३८	४५	२५	४०	२५	४५	३८	०

अथ कालचक्रतुलांशदशावर्षाणि ८३ तन्मध्ये शन्यंतर्वर्षाणि ४ तस्योपदशाचक्रम्

ध्रुवांक	श.११	बृ०१२	मं०८	शु०७	बु०६	शु०७	मं०८	बृ०९	श.१०	योगाः
० ०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	४
१७	२	५	४	९	५	८	४	५	२	०
२०	९	२३	१	७	६	७	१	२३	९	०
५७	२३	२९	२६	३५	८	३५	२६	२९	२३	०
४९	५२	३८	४५	२५	४०	२५	४५	३८	५२	०

अथ कालचक्रतुलांशदशावर्षाणि ८३ तन्मध्ये गुरोरंतर्वर्षाणि १० तस्योपदशाचक्रम्

ध्रुवांक	बृ०१२	मं०८	शु०७	बु०६	श०७	मं०८	बृ०९	श.१०	श.११	योगाः
१	१	०	१	१	१	०	१	०	०	१०
१३	२	१०	११	१	११	१०	२	५	५	०
२२	१३	३	३	०	३	३	१३	२३	२३	०
२४	४४	३६	५८	२१	५८	३६	४४	२९	२९	०
३४	६	५२	३३	४२	३३	५२	६	३८	३८	०

अथ कालचक्रतुलांशदशावर्षाणि ८३ तन्मध्ये **भौमांतर्दशावर्षाणि ७ तस्योपदशाचक्रम्**

ध्रुवांक	मं० ८	शु० ७	बु० ६	शु० ७	मं० ८	बृ० ९	श०१०	श०११	बृ०१२	योगाः
० १	०	१	०	१	०	०	०	०	०	७
०	७	४	९	४	७	१०	४	४	१०	०
२१	२	५	३	५	२	३	१	१	३	०
४१	३१	४७	१५	४७	३१	३६	२६	२६	३६	०
१२	४८	०	१०	०	४८	५२	४५	४५	५२	०

अथ कालचक्रतुलांशदशावर्षाणि ८३ तन्मध्ये भृगोरंतर्वर्षाणि १६ तस्योपदशाचक्रम्

ध्रुवांक	शु० ७	बु० ६	शु० ७	मं० ८	बृ० ९	श०१०	श०११	बृ०१२	मं० ८	योगाः
० २	३	१	३	१	१	०	०	१	१	१६
९	१	८	१	४	११	९	९	११	४	०
२३	०	२४	०	५	३	७	७	३	५	०
५१	२१	३४	२१	४७	५८	३५	३५	५८	४७	०
१९	४१	४२	४१	०	३३	२५	२५	३३	०	०

अथ कालचक्रतुलांशदशावर्षाणि ८३ तन्मध्ये बुधांतर्वर्षाणि ९ तस्योपदशाचक्रम्

ध्रुवांक	बृ० ६	शु० ७	मं० ८	बृ० ९	श१०	श०११	बु०१२	मं० ८	शु० ७	योगाः
० १	०	१	०	१	०	०	१	०	०	९
९	११	८	९	१	५	५	१	९	८	०
२	२१	२४	३	०	६	६	०	३	२४	०
१०	१९	३४	१५	२१	८	८	२१	१५	३४	०
७	३२	४२	१०	४२	४०	४०	४२	१०	४२	०

अथ कालचक्रवृश्चिकांशदशावर्षाणि ८६ तन्मध्ये चन्द्रांतर्वर्षाणि २१ तस्योपदशाचक्रम्

ध्रुवांक	चं० ४	सू० ५	बु० ३	शु० २	मं० १	बृ०१२	श०११	श०१०	बृ० ९	योगाः
० २	५	१	२	३	१	२	०	०	२	२१
२७	१	२	२	१०	८	५	११	११	५	०
५४	१६	१९	११	२६	१५	९	२१	२१	९	०
२५	२	३२	९	३०	२०	४	३७	३७	४	०
६	४७	५	४६	४२	५६	११	४१	४१	११	०

अथ कालचक्रवृश्चिकांशदशावर्षाणि ८६ तन्मध्ये सूर्यांतर्वर्षाणि ५ तस्योपदशाचक्रम्

ध्रुवांक	सू० ५	बु० ३	शु० २	मं० १	बृ१२	श०११	श०१०	बृ० ९	चं० ४	योगाः
०	०	०	०	०	०	०	०	२	१	५
२०	३	६	११	४	६	२	२	६	६	०
५५	१४	८	४	२६	२९	२३	२३	२९	१९	०
४८	३९	२२	५३	३०	१८	४३	४३	१८	३२	०
५०	४	२०	१	४२	९	१५	१५	९	५	०

अथ कालचक्रवृश्चिकांशदशावर्षाणि ८६ तन्मध्ये बुधांतर्वर्षाणि ९ तस्योपदशाचक्रम्

ध्रुवांक	बु० ३	शु० २	मं० १	बृ१२	श११	श०१०	बृ०९	चं० ४	सू०५	योगाः
१	०	१	०	१	०	०	१	२	०	९
७	११	८	८	०	५	५	०	२	६	०
४०	९	२	२३	१६	०	०	१६	११	८	०
२७	४	४७	४३	४४	४१	४१	४४	९	२२	०
५४	११	२६	१५	४०	५१	५१	४०	४६	२०	०

अथ कालचक्रवृश्चिकांशदशावर्षाणि ८६ तन्मध्ये भृगोरंतर्वर्षाणि १६ तस्योपशाचक्रम्

ध्रुवांक	शु० २	मं० १	बृ०१२	श११	श१०	बृ० ९	चं० ४	सू० ५	बृ० ३	योगाः
२	२	१	१	०	०	१	३	०	१	१६
६	११	३	१०	८	८	१०	१०	११	८	०
५८	२१	१८	९	२७	२७	९	२६	४	२	०
३६	३७	५०	४६	५४	५४	४६	३०	५३	४७	०
१६	४१	१४	२	२६	२६	२	४२	१	२६	०

अथ कालचक्रवृश्चिकांशदशावर्षाणि ८६ तन्मध्ये भौमांतर्वर्षाणि ७ तस्योपशाचक्रम्

ध्रुवांक	मं० १	बृ०१२	श०११	श१०	बृ० ९	चं० ४	सू० ५	बु० ३	शु० २	योगाः
२	०	०	०	०	०	१	०	०	१	७
२९	६	९	३	३	९	८	४	८	३	०
१८	२५	२३	२७	२७	२३	१५	२६	२३	१८	०
८	६	१	१२	१२	१	२०	३०	४२	५०	०
२२	५९	२४	३३	३३	२४	५६	४२	१५	१४	०

अथ कालचक्रवृश्चिकांशवशावर्षाणि ८६ तन्मध्ये गुरोरंतर्वर्षाणि १० तस्योपवशाचक्रम्

ध्रुवांक	बृ०१२	श११	श०१०	बृ० ९	चं० ४	सू० ५	बु० ३	शु० २	मं० १	योगाः
० १	१	०	०	१	२	०	१	१	०	१०
११	१	५	५	१	५	६	०	१०	९	०
५९	२८	१७	१७	२८	९	२९	१६	९	२३	०
३७	३६	२६	२६	३६	४	१८	४४	४६	१	०
४०	१६	३०	३०	१६	१३	९	४०	२	२४	०

अथ कालचक्रवृश्चिकांशदशावर्षाणि ८६ तन्मध्ये शन्यंतर्वर्षाणि ४ तस्योपशाचक्रम्

ध्रुवांक	श०११	श१०	बृ० ९	चं० ४	सू० ५	बु० ३	शु० २	मं० १	बृ० १२	योगाः
० ०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	४
१६	२	२	५	११	२	५	८	३	५	०
४४	६	६	१७	२१	२३	०	२७	२७	१७	०
३९	५८	५८	२६	३७	४३	४१	५४	१२	२६	०
४	३७	३७	३०	४१	१५	५१	२६	३३	३०	०

अथ कालचक्रवृश्चिकांशदशावर्षाणि ८६ तन्मध्ये शन्यंतर्वर्षाणि ४ तस्योपदशाचक्रम्

ध्रुवांक	श०१०	बृ० ९	चं० ४	सू० ५	बु० ३	शु० २	मं० १	बृ०१२	श०११	योगाः
० ०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	४
१६	२	५	११	२	५	८	३	५	२	०
४४	६	१७	२१	२३	०	२७	२७	१७	६	०
३९	५८	२६	३७	४३	४१	५४	१२	२६	५८	०
४	३७	३०	४१	१५	५१	२६	२३	३०	३७	०

अथ कालचक्रवृश्चिकांशदशावर्षाणि ८६ तन्मध्ये गुरोरंतर्वर्षाणि १० तस्योपदशाचक्रम्

ध्रुवांक	बृ० ९	चं० ४	सू० ५	बु० ३	शु० २	मं० १	बृ०१२	श०११	श०१०	योगाः
० १	१	२	०	१	१	०	१	०	०	१०
११	१	५	६	०	१०	९	१	५	५	०
५१	२८	९	२९	१६	९	२३	२८	१७	१७	०
३७	३६	४	२८	४४	४६	१	३६	२६	२६	०
४०	१६	१३	९	४०	२	२४	१६	३०	३०	०

अथ कालचक्रधनांशदशावर्षाणि १०० तन्मध्ये भौमांतर्वर्षाणि ७ तस्योपदशाचक्रम्

ध्रुवांक	मं० १	शु० २	बु० ३	चं० ४	सू० ५	बु० ६	शु० ७	मं० ८	बृ० ९	योगाः
०	०	१	०	१	०	०	१	०	०	७
०	५	१	७	५	४	७	१	५	८	०
२५	२६	१३	१६	१९	६	१६	१३	२६	१२	०
१२	२४	१२	४८	१२	०	४८	१२	२४	०	०
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०

अथ कालचक्रधनांशदशावर्षाणि १०० तन्मध्ये भृगोरंतर्वर्षाणि १६ तस्योपदशाचक्रम्

ध्रुवांक	शु० २	बु० २	चं० ४	सू० ५	बु० ६	शु० ७	मं० ८	बृ० ९	मं० १	योगाः
०	२	१	३	०	१	२	१	१	१	१६
१	६	५	६	९	५	६	१	६	१	०
२७	२१	८	९	१८	८	२१	१३	३६	१३	०
३६	३६	२४	३६	२	२४	३६	१२	०	१२	०
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०

अथ कालचक्रधनांशदशावर्षाणि १०० तन्मध्ये बुधांतर्वर्षाणि ९ तस्योपदशाचक्रम्

ध्रुवांक	बु० ३	चं० ४	सू० ५	बु० ६	शु० ७	मं० ८	बृ० ९	मं० १	शु० २	योगाः
०	०	१	०	०	१	०	०	०	१	९
१	९	१०	५	९	५	७	१०	७	५	०
२	२१	२०	१२	२१	८	१६	२४	१६	८	०
२४	३६	२४	०	३६	२४	४८	०	४८	२४	०
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०

अथ कालचक्रधनांशदशावर्षाणि १०० तन्मध्ये चंद्रांतर्वर्षाणि २१ तस्योपदशाचक्रम्

ध्रुवांक	चं० ४	सू० ५	बु० ६	शु० ७	मं० ८	बृ० ९	मं० १	शु० २	बु० ३	योगाः
०	४	१	१	३	१	२	१	३	१	२१
२	४	०	१०	४	५	१	५	४	१०	०
१५	२७	१८	२०	९	१९	६	१९	९	२०	०
३६	३६	०	२४	३६	१२	०	१२	३६	२४	०
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०

अथ कालचक्रधनांशदशावर्षाणि १०० तन्मध्ये रव्यंतर्वर्षाणि ५ तस्योपदशाचक्रम्

ध्रुवांक	सू० ५	बु० ६	शु० ७	मं० ८	बृ० ९	मं० १	शु० २	बु० ३	चं० ४	योगाः
०	०	०	०	०	०	०	०	०	१	५
०	३	५	९	४	३	४	९	५	०	०
१८	०	१२	१८	६	०	६	१८	१२	१८	०
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०

अथ कालचक्रधनांशदशावर्षाणि १०० तन्मध्ये बुधांतर्वर्षाणि ९ तस्योपदशाचक्रम्

ध्रुवांक	बु० ६	शु० ७	मं० ८	बृ० ९	मं० १	शु० २	बु० ३	चं० ४	सू० ५	योगाः
०	०	१	०	०	०	१	०	१	०	९
२	९	५	७	१०	७	५	१	१०	५	०
२४	२१	८	१६	२४	१६	८	२१	२०	१२	०
०	३६	२४	४८	०	४८	२४	३६	२४	०	०
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०

अथ कालचक्रधनांशदशावर्षाणि १०० तन्मध्ये भृगोरंतर्वर्षाणि १६ तस्योपदशाचक्रम्

ध्रुवांक	शु० ७	मं० ८	बु० ९	मं० १	शु० २	बु० ३	चं० ४	सू० ५	बु० ६	योगाः
०	२	१	१	१	२	१	३	०	०	१६
१	६	१	७	१	३	५	४	९	५	०
२७	२१	१३	६	१३	२१	८	९	१८	८	०
३६	३६	१२	०	१२	३६	२४	३६	०	२४	०
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०

अथ कालचक्रधनांशदशावर्षाणि १०० तन्मध्ये भौमांतर्वर्षाणि ७ तस्योपदशाचक्रम्

ध्रुवांक	मं० ८	बृ० ९	मं० १	शु० २	बु० ३	चं० ४	सू० ५	बु० ६	शु० ७	योगाः
०	०	०	०	१	०	१	०	०	१	७
०	५	८	५	१	७	५	४	७	१	०
२५	२६	१२	२६	१३	१६	१९	६	१६	१३	०
१२	२४	०	२४	१२	४८	१२	०	४८	१२	०
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०

अथ कालचक्रधनांशदशावर्षाणि १०० तन्मध्ये गुरोरतर्वर्षाणि १० तस्योपदशाचक्रम्

ध्रुवांक	गु० ९	मं० १	शु० २	बु० ३	चं० ४	सू० ५	बु० ६	शु० ७	मं० ८	योगाः
०	१	०	१	०	२	०	०	१	०	१०
१	०	८	७	१०	१	६	१०	७	८	०
६	०	१२	६	२४	६	०	२४	६	१२	०
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०

अथ कालचक्रमकरांशदशावर्षाणि ८५ तन्मध्ये शन्यंतर्वर्षाणि ४ तस्योपदशाचक्रम्

ध्रुवांक	श०१०	श११	गु०१२	मं० ८	शु० ७	बु० ६	चं० ४	सू० ५	बु० ३	योगाः
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	४
१६	२	२	५	३	९	५	११	२	५	०
५६	७	७	१९	२८	१	२	२५	२४	२	०
२८	४५	४५	२४	३५	३	२८	४५	४२	२८	०
२४	५३	५३	४२	१८	३२	१४	५३	२१	२४	०

अथ कालचक्रमकरांशदशावर्षाणि ८५ तन्मध्ये शन्यंतर्वर्षाणि ४ तस्योपदशाचक्रम्

ध्रुवांक	श०११	गु१२	मं० ८	शु० ७	बु० ६	चं० ४	सू० ५	बु० ३	श०१०	योगाः
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	४
१६	२	५	३	९	५	११	२	५	२	०
५८	७	१९	२८	१	२	२५	२४	२	७	०
२८	४५	२४	३५	३	२८	४५	४२	२८	४५	०
१४	५३	४२	१८	३२	१४	५३	२१	१४	५३	०

अथ कालचक्रमकरांशदशावर्षाणि ८५ तन्मध्ये गुरोरंतर्वर्षाणि १० तस्योपदशाचक्रम्

ध्रुवांक	बृ०१२	मं० ८	शु० ७	बु० ६	चं० ४	सू० ५	बु० ३	श०१०	श०११	योगाः
१	१	०	१	१	२	०	१	०	०	१०
१२	२	९	१०	०	५	७	०	५	५	०
२१	३	२६	१७	२१	१९	१	२१	१९	१९	०
१०	३१	२८	३८	१०	२४	४५	१०	२४	२४	०
३५	४६	१४	४९	३५	४२	५३	३५	४३	४३	०

अथ कालचक्रमकरांशदशावर्षाणि ८५ तन्मध्ये भृगोरंतर्वर्षाणि १६ तस्योपदशा चक्रम्

ध्रुवांक	शु० ७	मं० ८	बु० ६	चं० ४	सू०५	बृ० ३	श१०	श०११	बृ०१२	योगाः
० ७	०	१	०	१	०	०	०	०	०	१०
२९	६	३	८	८	४	८	३	३	९	०
३८	२७	२४	२६	२२	२८	२६	२८	२८	२६	०
४९	३१	२१	४९	३५	१४	४९	३५	३५	१८	०
२४	४६	१०	२५	१७	७	२५	१८	१८	१४	०

अथ कालचक्रमकरांशदशावर्षाणि ८५ तन्मध्ये भृगोरंतर्वर्षाणि १६ तस्योपदशा चक्रम्

ध्रुवांक	शु० ७	बु० ६	चं० ४	सू० ५	बु०	श० ३	श१०	बृ०१०	मं०१२	योगाः
० २	६	१	३	०	१	०	०	१	१	१६
७	०	८	११	११	८	९	९	१०	३	०
४५	४	९	१३	८	९	१	१	१७	२४	०
५२	१४	५२	३	४९	५२	३	३	३८	२१	०
५६	७	५६	३२	२५	५६	३२	३२	४९	११	०

अथ कालचक्रमकरांशदशावर्षाणि ८५ तन्मध्ये बुधांतर्वर्षाणि ९ तस्योपदशा चक्रम्

ध्रुवांक	बु० ६	चं० ४	सू०५	बु० ३	श१०	श०११	बृ०१२	मं० ८	शु० ७	योगाः
० १	०	२	०	०	०	०	१	०	१	९
८	११	२	६	११	५	५	०	८	८	०
७	१३	२०	१०	१३	२	२	२१	२६	९	०
३	३	२८	३५	३	२८	२८	१०	४९	५२	०
३१	३२	१४	१८	३२	१४	१४	३५	२५	५६	०

अथ कालचक्रमकरांशदशावर्षाणि ८५ तन्मध्ये चंद्रातर्वर्षाणि २१ तस्योपदशा चक्रम्

ध्रुवांक	चं० ४	सू० ५	बु० ३	श०१०	श११	बृ०१२	म८-१	शु७-२	बु ६	योगाः
० २	५	१	२	०	०	२	१	३	२	२१
२८	२	२	२	११	११	५	८	११	२	०
५६	७	२४	२०	२५	२५	१९	२२	१३	२०	०
२८	४५	४२	२८	४५	४५	२४	३५	३	२८	०
१४	५३	३१	१४	५३	५३	४३	१७	३२	१४	०

अथ कालचक्रमकरांशदशावर्षाणि ८५ तन्मध्ये सूर्यांतर्वर्षाणि ५ तस्योपदशा चक्रम्

ध्रुवांक	सू० ५	बु० ३	श०१०	श०११	बृ१२	म० ८	शु० ७	बु० ६	चं० ४	योगा:
० २	०	०	०	०	०	०	०	०	१	५
२१	३	६	२	२	७	४	११	६	२	०
१०	१५	१०	२४	२४	१	२८	८	१०	२४	०
३५	५२	३५	४२	४२	४५	१४	४९	३५	४२	०
१७	५६	१८	२१	२१	५३	७	२५	१८	२१	०

अथ कालचक्रमकरांशदशावर्षाणि ८५ तन्मध्ये बुधांतर्वर्षाणि ९ तस्योपदशा चक्रम्

ध्रुवांक	बु० ३	श१०	श०११	बृ०१२	मं० ८	शु० ७	बु० ६	च० ४	सू० ५	योगा:
० १	०	०	०	१	०	१	०	२	०	९
८	११	५	५	०	८	८	११	२	६	०
७	१३	२	२	२१	२६	९	१३	२०	१०	०
३	३	२८	२८	१०	४९	५२	३	२८	३५	०
३१	३२	१४	१४	३५	२५	५६	३२	१४	१८	०

अथ कालचक्रकुंभांशदशावर्षाणि ८३ तन्मध्ये भृगोरंतर्वर्षाणि १६ तस्योपदशाचक्रम्

ध्रुवांक	शु० २	मं० १	बृ१२	श११	श१०	बृ० ९	मं० १	शु० २	बु० ३	योगा:
०	३	१	१	०	०	१	१	३	१	१६
२	१	४	११	९	९	११	४	१	८	०
९	०	५	३	७	७	३	५	०	२४	०
२३	२१	४७	५८	३५	३५	५८	४७	२१	३४	०
५१	४१	०	३३	२५	२५	३३	०	४१	४२	०

अथ कालचक्रकुंभांशदशावर्षाणि ८३ तन्मध्ये भौमांतर्वर्षाणि ७ तस्योपदशा चक्रम्

ध्रुवांक	म० १	बृ१२	श०११	श०१०	बृ० ९	मं० १	शु० २	बु० ३	शु० २	योगा:
० १	०	०	०	०	०	०	१	०	१	७
०	७	१०	४	४	१०	७	४	९	४	०
२१	२	३	१	१	३	२	५	३	५	०
४१	३१	३६	२६	२६	३६	३१	४७	१५	४७	०
१२	४८	५२	४५	४५	५२	४८	०	१०	०	०

अथ कालचक्रकुंभांशदशावर्षाणि ८३ तन्मध्ये गुरोरंतर्वर्षाणि १० तस्योपदशाचक्रम्

ध्रुवांक	बृ०१२	श११	श०१०	बृ०९	मं० १	शु० २	बु० ३	शु० २	मं० १	योगाः
० १	१	०	०	१	०	१	१	१	०	१०
१३	२	५	५	२	१०	११	१	११	१०	०
२२	१३	२३	२३	१३	३	३	०	३	३	०
२४	४४	२९	२९	४४	३६	५	१	५८	३६	०
३४	६	३८	३८	६	५२	३३	४२	३३	५२	०

अथ कालचक्रकुंभांशदशावर्षाणि ८३ तन्मध्ये शन्यंतर्वर्षाणि ४ तस्योपदशाचक्रम्

ध्रुवांक	श०११	श१०	बृ० ९	मं० १	शु० २	बु० ३	शु० २	मं० १	बृ०१२	योगाः
० ०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	४
१७	२	२	५	४	९	५	९	४	५	०
२०	९	९	२३	१	७	६	७	१	२३	०
५७	२३	२३	२९	२६	३५	८	३५	२६	२९	०
४९	५२	५२	३८	४५	२५	४०	२५	४५	३८	०

अथ कालचक्रकुंभांशदशावर्षाणि ८३ तन्मध्ये शन्यंतर्वर्षाणि ४ तस्योपदशाचक्रम्

ध्रुवांक	श०१०	बृ० ९	मं० १	शु० २	बु० ३	शु० २	म० १	बृ०१२	श०११	योगाः
० ०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	४
१७	२	५	४	९	५	९	४	५	२	०
२०	९	२३	१	३७	६	३७	१	२३	९	०
५७	२३	२९	२६	३५	८	३५	२६	२९	२३	०
४९	५२	३८	४५	२५	४०	२५	४५	२८	५२	०

अथ कालचक्रकुंभांशदशावर्षाणि ८३ तन्मध्ये गुरोरंतर्वर्षाणि १० तस्योपदशाचक्रम्

ध्रुवांक	बृ० ९	मं० १	शु० २	बु० ३	शु० २	मं० १	बृ०१२	श०११	श०१०	योगाः
० ०	१	०	१	१	१	०	१	०	०	१०
१३	२	१०	११	१	११	१०	२	५	५	०
२२	१३	३	३	०	३	३	१३	२३	२३	०
२४	४४	३६	५८	२१	५८	३६	४४	२९	२९	०
३४	६	५२	३३	४२	३३	५२	६	३८	३८	०

अथ कालचक्रकुम्भांशदशावर्षाणि ८३ तन्मध्ये भौमांतर्दशावर्षाणि ७ तस्योपदशाचक्रम्										
ध्रुवांक	मं०१	शु०२	बु०३	शु०२	मं०१	बृ०१२	श११	श.१०	बृ०९	योगाः
°१	०	१	०	१	०	०	०	०	०	७
०	७	४	९	४	७	१०	४	४	१०	०
२१	२	५	३	५	२	३	१	१	३	०
४१	३१	४७	१६	४७	३१	३६	२६	२६	३६	०
१२	४८	०	१०	०	४८	५२	४५	४५	५२	०

अथ कालचक्रकुम्भांशदशावर्षाणि ८३ तन्मध्ये भृगोरंतर्वर्षाणि १६ तस्योपदशाचक्रम्										
ध्रुवांक	शु०२	बु०३	शु०२	मं०१	बृ०१२	श.११	श.१०	बृ०९	मं०१	योगाः
°२	३	१	३	१	१	०	०	१	१	१६
९	१	८	१	४	११	९	९	११	४	०
२३	०	२४	०	५	३	७	७	३	५	०
५१	२१	३४	२१	४७	५८	३५	३५	५८	४७	०
१९	४१	४२	४१	०	३३	२५	२५	३३	०	०

अथ कालचक्रकुम्भांशदशावर्षाणि ८३ तन्मध्ये बुधांतर्वर्षाणि ९ तस्योपदशाचक्रम्										
ध्रुवांक	बु०३	शु०२	मं०१	बृ०१२	श.११	श.१०	बृ०९	मं०१	शु०२	योगाः
°१	०	१	०	१	०	०	१	०	१	९
९	११	८	९	१	५	५	१	९	८	०
२	२१	२४	३	०	६	६	०	३	२४	०
१०	१९	३४	१५	२१	८	८	२१	१५	३४	०
७	३२	४२	१०	४२	४०	४०	४२	१०	४२	०

अथ कालचक्रमीनांशदशावर्षाणि ८३ तन्मध्ये चंद्रांतर्वर्षाणि २१ तस्योपदशाचक्रम्										
ध्रुवांक	चं०४	सू०५	बु०६	शु०७	मं०८	बृ०९	श.१०	श.११	बृ०१२	योगाः
०	५	१	२	३	१	२	०	०	०	२१
२	१	२	२	१०	८	५	११	११	५	०
२७	१६	१९	११	२६	१५	९	२१	२१	९	०
५४	२	३२	९	३०	२०	४	३७	३७	४	०
२७	४७	५	४७	४२	५६	११	४१	४१	११	०

अथ कालचक्रमीनांशदशावर्षाणि ८६ तन्मध्ये सूर्यांतर्वर्षाणि ५ तस्योपदशाचक्रम्

ध्रुवांक	सू०५	बु०६	शु०७	मं०८	बृ०९	श.१०	श.११	बृ०१२	चं०४	योगाः
०	०	०	०	०	०	०	०	०	१	५
२०	३	६	११	४	६	२	२	६	२	०
५५	१४	८	४	२६	२९	२३	२३	२९	१९	०
४८	१९	२२	५३	३०	१८	४३	४३	८	३२	०
५०	४	२०	१	४२	९	१५	१५	९	५	०

अथ कालचक्रमीनांशदशावर्षाणि ८६ तन्मध्ये बुधांतर्वर्षाणि ९ तस्योपदशाचक्रम्

ध्रुवांक	बु०६	शु०७	मं०८	बृ०९	श.१०	श.११	बृ०१२	चं०४	सू०५	योगाः
१	०	१	०	१	०	०	१	२	०	९
७	११	८	८	०	५	५	०	२	६	०
४०	९	२	२३	१६	०	०	१६	११	८	०
२७	४	४७	४३	४४	४१	४१	४४	९	२२	०
५४	११	२६	१५	४०	५१	५१	४०	४६	२०	०

अथ कालचक्रमीनांशदशावर्षाणि ८६ तन्मध्ये भृगोरंतर्वर्षाणि १६ तस्योपदशा चक्रम्

ध्रुवांक	शु०७	मं०८	बृ०९	श.१०	श.११	बृ०१२	चं०४	सू०५	बु०६	योगाः
२	२	१	०	०	०	१	३	०	१	१६
६	११	३	१०	८	८	१०	१०	११	८	०
५८	२१	१८	९	२७	२७	९	२६	४	२	०
३६	३७	५०	४६	५४	५४	४६	३०	५३	४७	०
१६	४१	१४	२	२६	२६	२	४२	१	२६	०

अथ कालचक्रमीनांशदशावर्षाणि ८६ तन्मध्ये भौमांतर्वर्षाणि ७ तस्योपदशा चक्रम्

ध्रुवांक	मं०८	बृ०९	श.१०	श.११	बृ०१२	चं०४	सू०५	बु०६	शु०७	योगाः
०	०	०	०	०	०	१	०	०	१	७
२९	६	९	३	३	९	८	४	८	३	०
१८	२५	२३	२७	२७	२३	१५	२६	२३	१८	०
८	६	१	१२	१२	१	२०	३०	४३	५०	०
२२	५९	२४	३३	३३	२४	५६	४२	१५	१४	०

अथ कालचक्रमीनांशदशावर्षाणि ८६ तन्मध्ये गुरोरंतर्वर्षाणि १० तस्योपदशाचक्रम्

ध्रुवांक	बृ०९	श.१०	श११	बृ०१२	चं०४	सू०५	बु०६	शु०७	मं०८	योगाः
१	१	०	०	१	२	०	१	१	०	१०
११	१	५	५	१	५	६	०	१०	९	०
५१	२८	१७	१७	२८	९	२९	१६	९	२३	०
३७	३६	२६	२६	२६	४	१८	४४	४६	१	०
४०	१६	३०	३०	१६	१३	९	४०	२	२४	०

अथ कालचक्रमीनांशदशावर्षाणि ८६ तन्मध्ये शन्यंतर्वर्षाणि ४ तस्योपदशा चक्रम्

ध्रुवांक	श.१०	श.११	बृ०१२	चं०४	सू०५	बु०६	शु०७	मं०८	बृ०९	योगाः
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	४
१६	२	२	५	१	२	५	८	३	५	०
४४	६	६	१७	२१	१३	०	२७	२७	१७	०
३९	५८	५८	२६	३७	४३	४१	५४	१२	२६	०
४	३७	३७	३०	४१	१५	५१	२६	३३	३०	०

अथ कालचक्रमीनांशदशावर्षाणि ८६ तन्मध्ये शन्यंतर्वर्षाणि ४ तस्योपदशा चक्रम्

ध्रुवांक	श११	बृ०१२	चं०४	सू०५	बु०६	शु०७	मं०८	बृ०९	श.१०	योगाः
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	४
१६	२	५	११	२	५	८	३	५	२	०
४४	६	१७	२१	२३	०	२७	२७	१७	६	०
३९	५८	२६	३७	४३	४१	५४	१२	२६	५८	०
४	३७	३०	४१	१५	५१	२६	२३	३०	३७	०

अथ कालचक्रमीनांशदशावर्षाणि ८६ तन्मध्ये गुरोरंतर्वर्षाणि १० तस्योपदशाचक्रम्

ध्रुवांक	बृ०१२	चं०४	सू०५	बु०६	शु०७	मं०८	बृ०९	श.१०	श.११	योगाः
१	१	२	०	१	१	०	१	०	०	१०
११	१	५	६	०	१०	९	१	५	५	०
५१	२८	९	२९	१६	९	२३	२८	१७	१७	०
३७	३६	४	१८	४४	४६	१	३६	२६	२६	०
४०	१६	१३	९	४०	२	२४	१६	३०	३०	०

अपसव्यकालचक्र वृश्चिकांशदशावर्षाणि ८६ तन्मध्ये गुरोरंतर्वर्षाणि १० तस्योपदशाचक्रम्

ध्रुवांक	बृ०९	श.१०	श.११	बृ०१२	मं०१	शु०२	बु०३	सू०५	चं०६	योगाः
०१	१	०	०	१	०	१	१	०	२	१०
११	१	५	५	१	९	१०	१०	६	५	०
५१	२८	१७	१७	२८	२३	९	१६	२९	९	०
३७	३६	२६	२६	३६	१	४६	४४	१८	४	०
४०	१६	३०	३०	१६	२४	२	४०	९	१३	०

अपसव्यकालचक्रवृश्चिकांशदशावर्षाणि ८६ तन्मध्ये शन्यंतर्वर्षाणि ४ तस्योपदशाचक्रम्

ध्रुवांक	श.१०	श.११	बृ०१२	मं०१	शु०२	बु०३	सू०५	चं०४	बृ०९	योगाः
००	०	०	०	०	०	०	०	०	०	४
१६	२	२	५	३	८	५	२	११	५	०
४४	६	६	१७	२७	२७	०	२३	२१	१७	०
३९	५८	५८	२६	१२	५४	४१	४३	३७	२६	०
४	३७	३७	३०	३३	२६	५१	१५	४१	३०	०

अपसव्यकालचक्रवृश्चिकांशदशावर्षाणि ८६ तन्मध्ये शन्यंतर्वर्षाणि ४ तस्योपदशाचक्रम्

ध्रुवांक	श११	बृ०१२	मं०१	शु०२	बु०३	सू०५	चं०४	बृ०९	श१०	योगाः
००	०	०	०	०	०	०	०	०	०	४
१६	२	५	३	८	५	२	११	५	२	०
४४	६	१७	२७	२७	०	२३	२१	१७	६	०
३९	५८	२६	१२	५४	४१	४३	३७	२६	५८	०
४	३७	३०	३३	२६	५१	१५	४१	३०	३७	०

अपसव्यकालचक्रवृश्चिकांशदशावर्षाणि ८६ तन्मध्ये गुरोरंतर्वर्षाणि १० तस्योपदशाचक्रम्

ध्रुवांक	गु०१२	मं०१	शु०२	बु०३	सू०५	चं०४	गु०९	श.१०	श११	योगाः
०१	१	०	१	१	०	२	१	०	०	१०
११	१	९	१०	०	६	५	१	५	५	०
५१	२८	२३	९	१६	२९	९	२८	१७	१७	०
३७	३६	१	४६	४४	१८	४	३६	२६	२६	०
४०	१६	२४	२	४०	९	१३	१६	३०	३०	०

अपसव्यकालचक्रवृश्चिकांशदशावर्षाणि ८६ तन्मध्ये भौमांतर्वर्षाणि ७ तस्योपदशाचक्रम्

ध्रुवांक	मं०१	शु०२	बु०३	सू०५	चं०४	बृ०९	श १०	श ११	बृ०१२	योगाः
० ०	०	१	०	०	१	०	०	०	०	७
२९	६	३	८	४	८	९	३	३	९	०
१८	२५	१८	२३	२६	१५	२३	२७	२७	२३	०
८	६	५०	४३	३०	२०	१	१२	१२	१	०
२२	५९	१४	१५	४२	५६	२४	३३	३३	२४	०

अपसव्यकालचक्रवृश्चिकांशदशावर्षाणि ८६ तन्मध्ये भृगोरंतर्वर्षाणि १६ तस्योपदशा चक्रम्

ध्रुवांक	शु०२	बु०३	सू०५	चं०४	बृ०९	श१०	श११	गु०१२	मं०१	योगाः
० २	२	१	०	३	१	२	२	१	१	१६
६	११	८	११	१०	१०	८	८	१०	३	०
५८	२१	२	४	२६	९	२७	२७	९	१८	०
३६	३७	४७	५३	३०	४६	५४	५४	४६	५०	०
१६	४१	२६	१	४२	२	२६	२६	२	१४	०

अपसव्यकालचक्रवृश्चिकांशदशावर्षाणि ८६ तन्मध्ये बुधांतर्वर्षाणि ९ तस्योपदशाचक्रम्

ध्रुवांक	बु०३	सू०५	चं०४	बृ०९	श१०	श११	गु०१२	मं०१	शु०२	योगाः
० १	०	०	२	१	०	०	१	०	१	९
७	११	६	२	०	५	५	०	८	८	०
४०	९	८	११	१६	०	०	१६	२३	२	०
२७	४	२२	९	४४	४१	४१	४४	४३	४७	०
५४	११	२०	४६	४०	५२	५२	४०	१५	२६	०

अपसव्यकालचक्रवृश्चिकांशदशावर्षाणि ८६ तन्मध्ये सूर्यांतर्वर्षाणि ५ तस्योपदशाचक्रम्

ध्रुवांक	सू०५	चं०४	बृ०९	श१०	श११	गु०१२	मं०१	शु०२	बु०३	योगाः
० ०	०	१	०	०	०	०	०	०	०	५
२०	३	२	६	२	२	६	४	११	६	०
५५	१४	१९	२९	२३	२३	२९	२६	४	८	०
४८	३९	३२	१८	४३	४३	१८	३०	५३	२२	०
५०	४	५	९	१५	१५	९	४२	९	२०	०

अपसव्यकालचक्रवृश्चिकांशदशावर्षाणि ८६ तन्मध्ये चन्द्रांतर्वर्षाणि २१ तस्योपदशाचक्रम्

ध्रुवांक	चं०४	बृ०९	श१०	श११	गु०१२	मं०१	शु०२	बु०३	सू०५	योगाः
० २	५	२	०	०	२	१	३	२	१	२१
२७	१	५	११	११	५	८	१०	२	२	०
५४	१६	९	२१	२१	९	१५	२६	११	१९	०
५६	२	४	३७	३७	४	२०	३०	९	३२	०
७	४७	११	४१	४१	११	५६	४२	४६	५	०

अपसव्यकालचक्रतुलांशदशावर्षाणि ८६ तन्मध्ये बुधांतर्वर्षाणि ९ तस्योपदशाचक्रम्

ध्रुवांक	बु०६	शु०७	मं०८	गु०१२	श०११	श०१०	बृ०९	मं०८	शु०७	योगाः
० १	०	१	०	१	०	०	१	०	१	९
९	११	८	९	१	५	५	१	९	८	०
२	२१	२४	३	०	६	६	०	३	२४	०
१०	१९	३४	१५	२१	८	८	२१	१५	३४	०
७	३२	४२	१०	४२	४०	४०	४२	१०	४२	०

अपसव्यकालचक्रतुलांशदशावर्षाणि ८३ तन्मध्ये भृगोरंतर्वर्षाणि ५ तस्योपदशाचक्रम्

ध्रुवांक	शु०७	मं०८	बृ०१२	श११	श१०	गु०९	मं०८	शु०७	बु०६	योगाः
० २	३	१	१	०	०	१	०	३	१	१६
९	१	४	११	९	९	११	४	१	८	०
२३	०	५	३	७	७	३	५	०	२४	०
५१	२१	४७	५८	३५	३५	५८	४७	२१	३४	०
१९	४१	०	३३	२५	२५	३३	०	४१	४२	०

अपसव्यकालचक्रतुलांशदशावर्षाणि ८३ तन्मध्ये भौमांतर्वर्षाणि ७ तस्योपदशाचक्रम्

ध्रुवांक	मं०८	बृ०१२	श११	श१०	गु०९	मं०८	शु०७	बु०६	शु०७	योगाः
० १	०	०	०	०	०	०	१	०	१	७
०	७	१०	४	४	१०	७	४	९	४	०
२१	२	३	१	१	३	२	५	३	५	०
४१	३१	३६	२६	२६	३६	३१	४७	१५	४७	०
१२	४८	५२	४५	४५	५२	४८	०	१०	०	०

अपसव्यकालचक्रतुलांशदशावर्षाणि ८३ तन्मध्ये गुरोरंतर्वर्षाणि १० तस्योपदशाचक्रम्

ध्रुवांक	बृ०१२	श११	श०१०	बृ० ९	मं० ८	शु० ७	बु० ६	शु० ७	मं० ८	योगाः
० १	१	०	०	१	०	१	१	१	०	१०
१३	२	५	५	२	१०	११	१	११	१०	०
२२	१३	२३	२३	१३	३	३	०	३	३	०
२४	४४	२९	२९	४४	३६	५८	२१	५८	३६	०
३४	६	३८	३८	६	५२	३३	४२	३३	५२	०

अपसव्यकालचक्रतुलांशदशावर्षाणि ८३ तन्मध्ये शन्यंतर्वर्षाणि ४ तस्योपदशाचक्रम्

ध्रुवांक	श०११	श१०	बृ० ९	मं० ८	शु० ७	बु० ६	शु० ७	मं० ८	बृ० १२	योगाः
० ०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	४
१७	२	२	५	४	९	५	९	४	५	०
२०	९	९	२३	१	७	६	७	१	२३	०
५७	२३	२३	२९	२६	३५	८	३५	२६	२९	०
४९	५२	५२	३८	४५	२५	४०	२५	४५	३८	०

अपसव्यकालचक्रतुलांशदशावर्षाणि ८३ तन्मध्ये शन्यंतर्वर्षाणि ० तस्योपदशा चक्रम्

ध्रुवांक	श०१०	बृ० ९	मं० ८	शु० ७	बु० ६	शु० ७	मं० ८	बृ०१२	श०११	योगाः
० ०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	४
१७	२	५	४	९	५	९	४	५	२	०
२०	९	२३	१	७	६	७	१	२३	९	०
५७	२३	२९	२६	३५	८	३५	२६	२९	२३	०
४९	५२	३८	४५	२५	४०	२५	४५	३८	५२	०

अपसव्यकालचक्रतुलांशदशावर्षाणि ८३ तन्मध्ये गुरोरंतर्वर्षाणि १० तस्योपदशा चक्रम्

ध्रुवांक	बृ० ९	मं० ८	शु० ७	बु० ६	शु० ७	मं० ८	बृ०१२	श०११	श०१०	योगाः
० १	१	०	१	१	१	०	१	०	०	१०
१३	२	१०	११	१	११	१०	२	५	५	०
२३	१३	३	३	०	३	३	१३	२३	२३	०
२४	४४	३६	५८	२१	५८	३६	४४	३९	३९	०
३४	६	५२	३३	४२	३३	५२	६	३८	३८	०

अपसव्यकालचक्रतुलांशदशावर्षाणि ८३ तन्मध्ये भौमांतर्वर्षाणि ७ तस्योपदशा चक्रम्

ध्रुवांक	मं० ८	शु० ७	बु० ६	शु० ७	मं० ८	बृ०१२	श११	श०१०	बृ० ९	योगाः
० १	०	१	०	१	०	०	०	०	०	७
०	७	४	९	४	७	१०	४	४	१०	४
२१	२	५	३	५	२	३	१	१	३	०
४१	३१	४७	१५	४७	३१	३६	३६	३६	३६	०
१२	४८	०	१०	०	४८	५२	४५	४५	५२	०

अपसव्यकालचक्रतुलांशदशा वर्षाणि ८६ तन्मध्ये मृगोरंतर्वर्षाणि १६ तस्योपदशाचक्रम्

ध्रुवांक	शु० ७	बु० ६	शु० ७	मं० ८	बृ०१२	श०११	श१०	बृ० ९	मं० ८	योगाः
० २	३	१	३	१	१	०	०	१	१	१६
९	१	८	१	४	११	९	९	११	४	०
२३	०	२४	०	५	३	७	७	३	५	०
५१	२१	३४	२१	४७	५८	३५	३५	५८	४७	०
१९	४१	४२	४१	०	३३	२५	२५	३३	०	०

अपसव्यकालचक्रकन्यांशदशावर्षाणि ८५ तन्मध्ये बुधांतर्वर्षाणि ९ तस्योपदशाचक्रम्

ध्रुवांक	बु० ६	सू० ५	चं० ४	बु० ३	शु० २	मं० १	बृ० ९	श०१०	श०११	योगाः
० १	०	०	२	०	१	०	१	०	०	९
८	११	६	२	११	८	८	०	५	५	०
७	१३	१०	२०	१३	९	२६	२१	२	२	०
३	३	३५	२८	३	५२	४९	१०	२८	२८	०
३१	३२	१८	१४	३२	५६	२५	३५	१४	१४	०

अपसव्यकालचक्रकन्यांशदशावर्षाणि ८५ तन्मध्ये सूर्यांतर्वर्षाणि ५ तस्योपदशा चक्रम्

ध्रुवांक	सू० ५	चं० ४	बु० ३	शु० २	मं० १	बृ० ९	श१०	श०११	बु० ६	योगाः
० ०	०	१	०	०	०	०	०	०	०	५
२१	३	२	६	११	४	७	२	२	६	०
१०	१५	२४	१०	८	२८	१	२४	२४	१०	०
३५	५२	४२	३५	४९	१४	४५	४२	४२	४५	०
१७	५६	१	१८	२५	७	५३	२१	२१	१८	०

अपसव्यकालचक्रकन्यांशदशावर्षाणि ८५ तन्मध्ये चंद्रांतर्वर्षाणि २१ तस्योपदशा चक्रम्

ध्रुवांक	चं० ४	बु० ३	शु० २	मं० १	बृ० ९	श०१०	श११	बु० ६	सू० ५	योगाः
२	५	२	३	१	२	०	०	२	१	२१
२८	२	२	११	८	५	११	११	२	२	०
५६	७	२०	१३	२२	१९	२५	२५	२०	२४	०
२८	४५	२८	३	३५	२४	४५	४५	१८	४२	०
१४	५३	१४	३२	१७	४३	५३	५३	१४	२१	०

अपसव्यकालचक्रकन्यांशदशावर्षाणि ८५ तन्मध्ये बुधांतर्वर्षाणि ९ तस्योपदशा च०

ध्रुवांक	बु० ३	शु० २	मं० १	बृ० ९	श१०	श०११	बु० ६	सू० ५	चं० ४	योगाः
१	०	१	०	१	०	०	०	०	२	९
८	११	८	८	०	५	५	११	६	२	०
७	१३	९	२६	२१	२	२	१३	१०	२०	०
३	३	५२	४९	१०	२८	२८	३	३५	२८	०
३१	३२	५६	२५	३५	१४	१४	३२	१८	१४	०

अपसव्यकालचक्रकन्यांशदशावर्षाणि ८५ तन्मध्ये भृगोरंतर्वर्षाणि १६ तस्योपदशाचक्रम्

ध्रुवांक	शु० २	मं० १	बृ० ९	श०१०	श११	बु० ६	सू० ५	चं० ४	बु० ३	योगाः
२	३	१	१	०	०	१	१	३	१	१६
७	०	३	१०	९	९	८	११	११	८	०
४५	४	२४	१७	१	१	९	१८	१३	९	०
५२	१४	२१	३८	३	३	५२	३९	३	५२	०
५६	७	११	४९	३२	३२	५६	२५	३२	५६	०

अपसव्यकालचक्रकन्यांशदशावर्षाणि ८५ तन्मध्ये भौमांतर्वर्षाणि ७ तस्योपदशाचक्रम्

ध्रुवांक	मं० १	बृ० ९	श०१०	श०११	बु० ६	सू० ५	चं० ४	बु० ३	शु० २	योगाः
०	०	०	०	०	०	०	१	०	१	७
२९	६	९	३	३	८	४	८	८	३	०
३८	२७	२६	२८	२८	२६	२८	२२	२६	२४	०
४९	३१	२८	३५	३५	४९	१४	३५	४९	२१	०
२४	४६	१४	१८	१८	३५	७	१७	२५	१०	०

अपसव्यकालचक्रकन्यांशदशावर्षाणि ८५ तन्मध्ये गुरोरंतर्वर्षाणि १० तस्योपदशाचक्रम्

ध्रुवांक	बृ० ९	श१०	श०११	बु० ६	सू० ५	चं० ४	बु० ३	शु० २	मं० १	योगाः
१	१	०	०	१	०	२	१	१	०	१०
१२	२	५	५	०	७	५	०	१०	९	०
२१	३	१९	१९	२१	१	१९	२१	१७	२६	०
१०	३१	२४	२४	१०	४५	२४	१०	३८	२८	०
३५	४६	४३	४३	३५	५३	४२	३५	४९	१४	०

अपसव्यकालचक्रकन्यांशदशावर्षाणि ८५ तन्मध्ये शन्यंतर्वर्षाणि ४ तस्योपदशाचक्रम्

ध्रुवांक	श०१०	श११	बु० ६	सू० ५	चं० ४	बु० ३	शु० २	मं० १	बृ० ९	योगाः
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	४
१६	२	२	५	२	११	५	९	३	५	०
५६	७	७	२	२४	२५	२	१	२८	१९	०
२८	४५	४५	२८	४२	४५	२८	३	३५	२४	०
१४	५३	५३	१४	२१	५३	१४	३२	१८	४२	०

अपसव्यकालचक्रकन्यांशदशावर्षाणि ८५ तन्मध्ये शन्यंतर्वर्षाणि ४ तस्योपदशाचक्रम्

ध्रुवांक	श०११	बु० ६	सू० ५	चं० ४	बु० ३	शु० ३	मं० १	बृ० ९	श० १०	योगाः
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	४
१६	२	५	२	११	५	९	३	५	२	०
५६	७	२	२४	२५	२	१	२८	१९	७	०
२८	४५	२८	४२	४५	२८	३	३५	२४	४५	०
१४	५३	१४	२१	५३	१४	३२	१८	४२	५३	०

अपसव्यकालचक्रसिंहांशदशावर्षाणि १०० तन्मध्ये गुरोरंतर्वर्षाणि १० तस्योपदशाचक्रम्

ध्रुवांक	गु०१२	मं० १	शु० २	बु० ३	सू० ५	चं० ४	बु० ६	शु० ७	मं० ८	योगाः
०	१	०	१	०	०	२	०	१	०	१०
१	०	८	७	१०	६	१	१०	७	८	०
६	०	१२	६	२४	०	६	२४	६	१२	०
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०

अपसव्यकालचक्रसिंहांशदशावर्षाणि १०० तन्मध्ये भौमांतर्वर्षाणि ७ तस्योपदशाचक्रम्										
ध्रुवांक	मं० १	शु० २	बु० ३	सू० ५	चं० ४	बु० ६	शु० ७	मं० ८	बृ०१२	योगाः
०	०	१	०	०	१	०	२	०	०	७
२५	५	१	७	४	५	७	१	५	८	०
१२	२६	१३	१६	६	१९	१६	१३	२६	१२	०
०	२४	१२	४८	०	१२	४८	१२	२४	०	०
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०

अपसव्यकालचक्रसिंहांशदशावर्षाणि १०० तन्मध्ये भृगोरंतर्वर्षाणि १६ तस्योपदशाचक्रम्										
ध्रुवांक	शु० २	बु० ३	सू० ५	चं० ४	बु० ६	शु० ७	मं०८	गु०१२	मं०१	योगाः
०	२	१	०	३	१	२	१	१	१	१६
१	६	५	९	४	५	६	१	६	१	०
२७	११	८	१८	९	८	२१	१३	३६	१३	०
३६	३६	२४	०	३६	२४	३६	१२	०	१२	०
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०

अपसव्यकालचक्रसिंहांशदशावर्षाणि १०० तन्मध्ये बुधांतर्वर्षाणि ९ तस्योपदशाचक्रम्										
ध्रुवांक	बु० ३	सू० ५	चं० ४	बु० ६	शु० ७	मं० ८	गु१२	मं० १	शु० २	योगाः
०	०	०	१	०	१	७	०	०	१	९
२	९	५	१०	९	५	७	१०	७	५	०
२४	२१	१२	२०	२१	८	१६	२४	१६	८	०
०	३६	०	२४	३६	२४	४८	०	४८	२४	०
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०

अपसव्यकालचक्रसिंहांशदशावर्षाणि १०० तन्मध्ये सूर्यांतर्वर्षाणि ५ तस्योपदशाचक्रम्										
ध्रुवांक	सू० ५	चं० ४	बु० ६	शु० ७	मं० ८	गु०१२	मं० १	शु० २	बु० ३	योगाः
०	०	१	०	०	०	०	०	०	०	५
१८	२	०	५	९	४	६	४	९	५	०
०	०	१८	१२	१८	६	०	६	१८	१२	०
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०

अपसव्यकालचक्रसिंहांशदशावर्षाणि १०० तन्मध्ये चंद्रांतर्वर्षाणि २१ तस्योपदशाचक्रम्										
ध्रुवांक	चं० ४	बु० ६	शु० ७	मं० ८	गु१२	म० १	शु० २	बु० ३	सू० ५	योगाः
०	४	१	३	१	२	१	३	१	१	२१
२	४	१०	४	५	१	५	४	१०	०	०
१५	२७	२०	९	१९	६	१९	९	२०	१८	०
३६	३६	२४	३६	१२	०	१२	३६	२४	०	०
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०

अपसव्यकालचक्रसिंहांशदशावर्षाणि १०० तन्मध्ये बुधांतर्वर्षाणि ९ तस्योपदशाचक्रम्										
ध्रुवांक	बु० ६	शु० ७	मं० ८	गु०१२	मं० १	शु० २	बु० ३	सू० ५	चं० ४	योगाः
०	०	१	०	०	०	०	०	०	१	९
१	९	५	७	१०	७	५	९	५	१०	०
२	२१	८	१६	२४	१६	८	२१	१२	२०	०
२४	३६	२४	४८	०	४८	२४	३६	०	२४	०
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०

अपसव्यकालचक्रसिंहांशदशावर्षाणि १०० तन्मध्ये भृगोरंतर्वर्षाणि १६ तस्योपदशाचक्रम्										
ध्रुवांक	शु० ७	मं० ८	बृ०१२	मं० १	शु० २	बु० ३	सू० ५	चं० ४	बु० ६	योगाः
०	२	१	१	१	०	१	०	३	१	१६
१	६	१	७	१	६	५	९	४	५	०
२७	२१	१३	६	१३	२१	८	१८	९	८	०
३६	३६	१२	०	१२	३६	२४	०	३६	२४	०
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०

अपसव्यकालचक्रसिंहांशदशावर्षाणि १०० तन्मध्ये भौमांतर्वर्षाणि ७ तस्योपदशाचक्रम्										
ध्रुवांक	मं० ८	बृ१२	मं० १	शु० २	बु० ३	सू० ५	चं० ४	बु० ६	शु० ७	योगाः
०	०	०	०	१	०	०	१	०	१	७
२५	५	८	५	१	७	४	५	७	१	०
१२	२६	१२	१६	१३	१६	६	१९	१६	१३	०
०	२४	०	२४	१२	४८	०	१२	४८	१२	०
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०

अपसव्यकालचक्रकर्कांशदशावर्षाणि ८६ तन्मध्ये गुरोरंतर्वर्षाणि १० तस्योपदशाचक्रम्

ध्रुवांक	बृ०१२	श११	श०१०	बृ० ९	मं० ८	शु० ७	बु० ६	सू० ५	चं० ४	योगाः
१	१	०	०	१	०	१	१	०	२	१०
११	१	५	५	१	९	१०	०	६	५	०
५१	२८	१७	१७	२८	२३	९	१६	२९	९	०
३७	३६	२६	२६	३६	१	४६	४४	१८	४	०
४०	१६	३०	३०	१६	२४	२	४०	९	१३	०

अपसव्यकालचक्रकर्कांशदशावर्षाणि ८६ तन्मध्ये शन्यंतर्वर्षाणि ४ तस्योपदशाचक्रम्

ध्रुवांक	श०११	श१०	बृ० ९	मं० ८	शु० ७	बु० ६	सू० ५	चं० ४	बृ०१२	योगाः
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	४
१६	२	२	५	३	८	५	२	११	५	०
४४	६	६	१७	२७	२७	०	२३	२१	१७	०
३९	५८	५८	२६	१२	५४	४१	४३	३७	२६	०
४	३७	३७	३०	३३	२६	५१	२५	४१	३०	०

अपसव्यकालचक्रकर्कांशदशावर्षाणि ८६ तन्मध्ये शन्यंतर्वर्षाणि ४ तस्योपदशाचक्रम्

ध्रुवांक	श०१०	बृ० ९	मं० ८	शु० ७	बु० ६	सू० ५	चं० ४	बृ०१२	श०११	योगाः
०	०	०	०	०	०	०	०	१	०	४
१६	२	५	३	१	५	२	११	५	२	०
४४	६	१७	२७	२७	०	२३	२१	१७	६	०
३९	५८	२६	१२	५४	४१	४३	३७	२६	५८	०
४	३७	३०	३३	२६	५१	१५	४१	३०	३७	०

अपसव्यकालचक्रकर्कांशदशावर्षाणि ८६ तन्मध्ये गुरोरंतर्वर्षाणि १० तस्योपदशाचक्रम्

ध्रुवांक	बृ० ९	मं० ८	शु० ७	बु० ६	सू० ५	चं० ४	बृ१२	श०११	श०१०	योगाः
१	१	०	१	१	०	२	१	०	०	१०
११	१	९	१०	०	६	५	१	५	५	०
५१	२८	२३	९	१६	२९	९	२८	१७	१७	०
३७	३६	१	४६	४४	१८	४	३६	२६	२६	०
४०	१६	२४	२	४०	९	१६	१३	१६	३०	०

अपसव्यकालचक्रकर्कांशदशावर्षाणि ८६ तन्मध्ये भौमांतर्वर्षाणि ७ तस्योपदशाचक्रम्

ध्रुवांक	म० ८	शु० ७	बु० ६	सू० ५	च० ४	बृ०१२	श११	श०१०	बृ० ९	योगाः
० ०	०	१	०	०	१	०	०	०	०	७
२९	६	३	८	४	८	९	३	३	९	०
१८	२५	१८	२३	२६	१५	२३	२७	२७	२३	०
८	६	५०	४३	३०	२०	१	१२	१२	१	०
२२	५८	१४	१५	४२	५६	२४	३३	३३	२४	०

अपसव्यकालचक्रकर्कांशदशावर्षाणि ८६ तन्मध्ये भृगोरंतर्वर्षाणि १६ तस्योपदशाचक्रम्

ध्रुवांक	शु० ७	बु० ६	सू० ५	चं० ४	बृ१२	श०११	श१०	बृ० ९	मं० ८	योगाः
० २	२	१	०	३	१	०	०	१	१	१६
६	११	८	११	१०	१०	८	८	१०	३	०
५८	२१	२	४	२६	९	२७	२७	९	१८	०
३६	३७	४७	५३	३०	४६	५४	५४	४६	५०	०
१६	४१	२६	१	४२	२	२६	२६	२	१४	०

अपसव्यकालचक्रकर्कांशदशावर्षाणि ८६ तन्मध्ये बुधांतर्वर्षाणि ९ तस्योपदशाचक्रम्

ध्रुवांक	बु० ६	सू० ५	चं० ४	बृ०१२	श११	श०१०	बृ० ९	मं० ८	शु० ७	योगाः
० १	०	०	२	१	०	०	१	०	१	९
७	११	६	२	०	५	५	०	८	८	०
४०	९	८	११	१६	०	०	१६	२३	२	०
२७	४	२२	९	४४	४१	४१	४४	४३	४७	०
५४	११	२०	४६	४०	५१	५१	४०	१५	२६	०

अपसव्यकालचक्रकर्कांशदशावर्षाणि ८६ तन्मध्ये सूर्यांतर्वर्षाणि ५ तस्योपदशाचक्रम्

ध्रुवांक	सू० ५	चं० ४	बृ०१२	श०११	श१०	बृ० ९	मं० ८	शु० ७	बु० ६	योगाः
० ०	०	१	०	०	०	०	०	०	०	५
२०	३	२	६	२	२	६	४	११	६	०
५५	१४	१९	२९	२३	२३	२९	२६	४	८	०
४८	३९	३२	१८	४३	४३	१८	३०	५३	२२	०
५०	४	१५	९	१५	१५	९	४२	१	२०	०

अपसव्यकालचक्रकर्कांशदशावर्षाणि ८६ तन्मध्ये चंद्रांतर्वर्षाणि २१ तस्योपदशाचक्रम्										
ध्रुवांक	चं० ४	बृ१२	श०११	श०१०	बृ० ९	मं० ८	शु० ७	बु० ६	सू० ५	योगाः
० २	५	२	०	०	२	१	३	२	१	२१
२७	१	५	११	११	५	८	१०	२	२	०
५४	१६	९	२१	२१	९	१५	२६	११	१९	०
२५	२	४	३७	३७	४	२०	३०	९	३२	०
७	४७	११	४१	४१	११	५६	४२	४६	५	०

अपसव्यकालचक्रमिथुनांशदशावर्षाणि ८३ तन्मध्ये बुधांतर्वर्षाणि ९ तस्योपदशाचक्रम्										
ध्रुवांक	बु० ३	शु० २	मं० १	बृ० ९	श१०	श०११	बृ१२	मं० १	शु० २	योगाः
० १	०	१	०	१	०	०	१	०	१	९
९	११	८	९	१	५	५	१	९	८	०
२	२१	२४	३	०	६	६	०	३	२४	०
१०	१९	३४	१५	२१	८	८	२१	१५	३४	०
७	३२	४२	१०	४२	४०	४०	४२	१०	४२	०

अपसव्यकालचक्रमिथुनांशदशावर्षाणि ८३ तन्मध्ये भृगोरंतर्वर्षाणि १६ तस्योपदशाचक्रम्										
ध्रुवांक	शु० २	मं० १	बृ० ९	श०१०	श११	बृ०१२	मं० १	शु० २	बु० ३	योगाः
० २	३	१	१	०	०	१	१	३	०	१६
९	१	४	११	९	९	११	४	१	८	०
२३	०	५	३	७	७	३	५	०	२४	०
५१	२१	४७	५८	३५	३५	५८	४७	२१	३४	०
१९	४१	०	३३	२५	२५	३३	०	४१	४२	०

अपसव्यकालचक्रमिथुनांशदशावर्षाणि ८३ तन्मध्ये भौमांतर्वर्षाणि ७ तस्योपदशाचक्रम्										
ध्रुवांक	मं० १	बृ० ९	श०१०	श०११	बृ१२	मं० १	शु० २	बु० ३	शु० २	योगाः
० १	०	०	०	०	०	०	१	०	१	७
०	७	१०	४	४	१०	७	४	९	४	०
२१	२	३	१	१	३	२	५	३	५	०
४१	३१	३६	२६	२६	३६	३१	४७	१५	४७	०
१२	४८	५२	४५	४५	५२	४८	०	१०	०	०

अपसव्य काल चक्र मिथुनांशदशावर्षाणि ८३ तन्मध्ये गुरोरंतर्वर्षाणि १० तस्योपदशाचक्रम्

ध्रुवांक	बृ०९	श १०	श ११	गु०१२	मं०१	शु०२	बु०३	शु०२	मं०१	योगाः
१	१	०	०	१	१	१	१	१	०	१०
३	२	५	५	२	१०	११	१	११	१०	०
२२	१३	२३	२३	१३	३	३	०	३	३	०
२४	४४	३९	३९	४४	३६	५८	२१	५८	३६	०
३४	६	३८	३८	६	५२	३३	४२	३३	५२	०

अपसव्यकालचक्रमिथुनांशदशावर्षाणि ८३ तन्मध्ये शन्यंतर्वर्षाणि ४ तस्योपदशाचक्रम्

ध्रुवांक	श १०	श ११	गु०१२	मं०१	शु०२	बु०३	शु०२	मं०१	बृ०९	योगाः
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	४
१७	२	२	५	४	९	५	९	४	५	०
२०	९	९	२३	१	७	६	७	१	२३	०
५७	२३	२३	२९	२६	३५	८	३५	२६	२९	०
४९	५२	५२	३८	४५	२५	४०	२५	४५	३८	०

अपसव्यकालचक्रमिथुनांशदशावर्षाणि ८३ तन्मध्ये शन्यंतर्वर्षाणि ४ तस्योपदशाचक्रम्

ध्रुवांक	श ११	गु०१२	मं०१	शु०२	बु०३	शु०२	मं०१	बृ०९	श १०	योगाः
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	४
१७	२	५	४	९	५	९	४	५	२	०
२०	९	२३	१	७	६	७	१	२३	९	०
५७	२३	२९	२६	३५	८	३५	२६	२९	२३	०
४९	५२	३८	४५	२५	४०	२५	४५	३८	५२	०

अपसव्यकालचक्रमिथुनांशदशावर्षाणि ८३ तन्मध्ये गुरोरंतर्वर्षाणि १० तस्योपदशाचक्रम्

ध्रुवांक	गु०१२	मं०१	शु०२	बु०३	शु०२	मं०१	गु०९	श १०	श ११	योगाः
१	१	०	१	१	१	०	१	०	०	१०
१३	२	१०	११	१	११	१०	२	५	५	०
२२	१३	३	३	०	३	३	१३	२३	२३	०
२४	४४	३६	५८	२१	५८	३६	४४	२९	२९	०
३४	६	५२	३३	४१	३३	५२	६	३८	३८	०

अपसव्यकालचक्रमिथुनांशदशावर्षाणि तन्मध्ये भौमांतर्वर्षाणि ७ तस्योपदशाचक्रम्										
ध्रुवांक	मं०१	शु०२	बु०३	शु०२	मं०१	गु०९	श १०	श ११	बृ०१२	योगाः
१	०	१	०	१	०	०	०	०	०	७
०	७	४	९	४	७	१०	४	४	१०	०
२१	२	५	३	५	२	३	१	१	३	०
४१	३१	४७	१५	४७	३१	३६	२६	२६	३६	०
१२	४८	०	१०	०	४८	५२	४५	४५	५२	०

अपसव्यकालचक्रमिथुनांशदशावर्षाणि ८३ तन्मध्ये भृगोरंतर्वर्षाणि १६ तस्योपदशाचक्रम्										
ध्रुवांक	शु०२	बु०३	शु०२	मं०१	गु०९	श १०	श ११	गु०१२	मं०१	योगाः
२	३	१	३	१	१	०	०	१	१	१६
९	१	८	१	४	११	९	९	११	४	०
२३	०	२४	०	५	३	७	७	३	५	०
५१	२१	३४	२१	४७	५८	३५	३५	५८	४७	०
१९	४१	४२	४१	०	३३	२५	२५	३३	०	०

अपसव्यकालचक्रवृषभांशदशावर्षाणि ८५ तन्मध्ये बुधांतर्वर्षाणि ९ तस्योपदशाचक्रम्										
ध्रुवांक	बु०३	सू०५	चं०४	बु०६	शु०७	मं०८	गु०१२	श ११	श १०	योगाः
१	०	०	२	०	१	०	१	०	०	९
८	११	६	२	११	८	८	०	५	५	०
७	१३	१०	२०	१३	९	२६	२१	२	२	०
३	३	३५	२८	३	५२	४९	१०	२८	२८	०
३१	३२	१८	१४	३२	५६	२५	३५	१४	१४	०

अपसव्यकालचक्रवृषभांशदशावर्षाणि ८५ तन्मध्ये सूर्यांतर्वर्षाणि ५ तस्योपदशाचक्रम्										
ध्रुवांक	सू०५	चं०४	बु०६	शु०७	मं०८	गु०१२	श १०	श ११	बु०३	योगाः
०	०	१	०	०	०	०	०	०	०	५
२१	३	२	६	११	४	७	२	२	६	०
१०	१५	२४	१०	८	२८	१	२४	२४	१०	०
३५	५२	४२	३५	४९	१४	४५	४२	४२	३५	०
१७	५६	२१	१८	२५	१७	५३	२१	२१	१८	०

अपसव्यकालचक्रवृषभांशदशावर्षाणि ८५ तन्मध्ये चंद्रांतर्वर्षाणि २१ तस्योपदशाचक्रम्

ध्रुवांक	चं०४	बु०६	शु०७	मं०८	गु०१२	श १०	श ११	बु०३	सू०५	योगाः
२°	५	२	३	१	२	०	०	२	१	२१
२८	२	२	११	८	५	११	११	२	२	०
५६	७	२०	१३	२२	१९	२५	२५	२०	२४	०
२८	५४	१८	३	३५	२४	४५	४५	२८	४२	०
१४	५३	१४	३२	१७	४२	५३	५३	१४	२१	०

अपसव्यकालचक्रवृषभांशदशावर्षाणि ८५ तन्मध्ये बुधांतर्वर्षाणि ९ तस्योपदशाचक्रम्

ध्रुवांक	बु०६	शु०७	मं०८	गु०१२	श १०	श ११	बु०३	सू०५	चं०४	योगाः
१°	०	१	०	१	०	०	०	०	२	९
८	११	८	८	०	५	५	११	६	२	०
७	१३	९	२६	२१	२	२	१३	०	२०	०
३	३	५२	४९	१०	२८	२८	३	३५	२८	०
३१	३२	५६	२५	३५	१४	१४	३२	१८	१४	०

अपसव्यकालचक्रवृषभांशदशार्वर्षाणि ८५ भृगोरंतर्वर्षाणि १६ तस्योपदशाचक्रम्

ध्रुवांक	शु०७	मं०८	वृ०१२	श १०	श ११	बु०३	सू०५	चं०४	बु०६	योगाः
२°	३	१	१	०	०	१	०	३	१	१६
७	०	३	१०	९	९	८	११	११	८	०
४५	४	२४	१७	१	१	९	८	१३	९	०
५२	१४	२१	३८	३	३	५२	४९	३	५२	०
५६	७	११	४९	३२	३२	५६	२५	३२	५६	०

अपसव्यकालचक्रवृषभांशदशावर्षाणि ८५ तन्मध्ये भौमांतर्वर्षाणि तस्योपदशाचक्रम्

ध्रुवांक	मं०८	वृ०१२	श १०	श ११	बु०३	सू०५	चं०४	बु०६	शु०७	योगाः
०°	०	०	०	०	०	०	१	०	१	७
२९	६	९	३	३	८	४	८	८	३	०
३८	२७	२६	२८	२८	२६	२८	२२	३६	२४	०
४९	३१	२८	३५	३५	४९	१४	३५	४९	२१	०
२४	४६	१४	१८	१८	२५	७	१७	२५	१०	०

अपसव्यकालचक्रवृषभांशदशावर्षाणि ८५ तन्मध्ये गुरोरंतर्वर्षाणि १० तस्योपदशा चक्रम्

ध्रुवांक	बृ०१२	श ११	श १०	बु०३	सू०५	चं०४	बु०६	शु०७	मं०८	योगाः
१	१	०	०	१	०	२	१	१	०	१०
१२	२	५	५	०	७	५	०	१०	९	०
२१	३	१९	१९	२१	१	१९	२१	१७	२६	०
१०	३१	२४	२४	१०	४५	२४	१०	३८	२८	०
२५	४६	४३	४३	३५	५३	४२	३५	४९	१४	०

अपसव्यकालचक्रवृषभांशदशावर्षाणि ८५ तन्मध्ये शन्यंतर्वर्षाणि ४ तस्योपदशाचक्रम्

ध्रुवांक	श ११	श १०	बु०३	सू०५	चं०४	बु०३	शु०२	मं०१	बृ०१२	योगाः
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	४
१६	२	२	५	२	११	५	९	३	५	०
५६	७	७	२	२४	२५	२	१	२८	१९	०
२८	४५	४५	२८	४२	४५	२८	३	३५	२४	०
१४	५३	५३	१४	२१	५३	१४	३२	१८	४२	०

अपसव्यकालचक्रवृषभांशदशावर्षाणि८५ तन्मध्ये शन्यंतर्वर्षाणि ४ तस्योपदशाचक्रम्

ध्रुवांक	श १०	बु०३	सू०५	चं०४	बु०३	शु०२	मं०१	बृ०१२	श०१२	योगाः
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	४
१६	२	५	२	११	५	९	३	५	२	०
५६	७	२	२४	२५	२	१	२८	१९	७	०
२८	४५	२८	४२	४५	२८	३	३५	२४	४५	०
१४	५३	१४	२१	५३	१४	३२	१८	४२	५३	०

अपसव्यकालचक्रमेषांशदशावर्षाणि १०० तन्मध्ये गुरोरंतर्वर्षाणि १० तस्योपदशाचक्रम्

ध्रुवांक	गु०९	मं०८	शु०७	बु०६	सू०५	चं०४	बु०३	शु०२	मं०१	योगाः
०	१	०	१	०	०	२	०	१	०	१०
१	०	८	७	१०	६	१	१०	७	८	०
६	०	१२	६	२४	०	६	२४	६	१२	०
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०

अपसव्यकालचक्रमेषांशदशावर्षाणि १०० तन्मध्ये भौमांतर्वर्षाणि ७ तस्योपदशाचक्रम्

ध्रुवांक	मं०८	शु०७	बु०३	सू०५	चं०४	बु०३	शु०२	मं०१	बृ०१	योगाः
०	०	१	०	०	१	०	१	०	०	७
२५	५	१	७	४	५	७	१	५	१२	०
१२	२६	१३	१६	६	१९	१६	१३	२६	०	०
०	२४	१२	४८	०	१२	४८	१२	२४	०	०
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०

अपसव्यकालचक्रमेषांशदशावर्षाणि १०० तन्मध्ये भृगोरंतर्वर्षाणि १६ तस्योपदशाचक्रम्

ध्रुवांक	शु०७	बु०३	सू०५	चं०४	बु०३	शु०२	मं०१	बृ०९	मं०८	योगाः
०	२	१	०	३	१	२	१	१	१	१६
१	६	५	९	४	५	६	१	७	१	०
२७	२१	८	१८	९	८	२१	१३	६	१३	०
३६	३६	२४	०	३६	२४	३६	१२	०	१२	०
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०

अपसव्यकालचक्रमेषांशदशावर्षाणि १०० तन्मध्ये बुधांतर्वर्षाणि ९ तस्योपदशा चक्रम्

ध्रुवांक	बु०३	सू०५	चं०४	बु०३	शु०२	मं०१	बृ०९	मं०८	शु०७	योगाः
०	०	०	१	०	१	०	०	०	१	९
२	९	५	१०	९	५	७	१०	७	५	०
२४	२१	१२	२०	२१	८	१६	२४	१६	८	०
०	३६	०	२४	३६	२४	४८	०	४८	२४	०
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०

अपसव्यकालचक्रमेषांशदशावर्षाणि १०० तन्मध्ये सूर्यांतर्वर्षाणि ५ तस्योपदशा चक्रम्

ध्रुवांक	सू०५	चं०४	बु०३	शु०२	मं०१	बृ०९	मं०८	शु०७	बु०३	योगाः
०	०	१	०	०	०	०	०	०	०	५
१८	३	०	५	९	४	६	४	९	५	०
०	०	१८	१२	१८	६	०	६	१८	१२	०
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०

अपसव्यकालचक्रमेषांशदशावर्षाणि १०० तन्मध्ये चंद्रांतर्वर्षाणि २१ तस्योपदशाचक्रम्										
ध्रुवांक	चं०४	बु०३	शु०२	मं०१	बृ०९	मं०८	शु०७	बु०३	सू०५	योगाः
०	४	१	३	१	२	१	३	१	१	२१
२	४	१०	४	५	६	५	४	१०	०	०
१५	२७	२०	९	१९	६	१९	९	२०	१८	०
३६	३६	२४	३६	१२	०	१२	३६	२४	०	०
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०

अपसव्यकालचक्रमेषांशदशावर्षाणि १०० तन्मध्ये बुधांतर्वर्षाणि ९ तस्योपदशाचक्रम्										
ध्रुवांक	बु०३	शु०२	मं०१	बृ०९	मं०८	शु०७	बु०३	सू०५	चं०४	योगाः
०	०	१	०	०	०	१	०	०	१	९
१	९	५	७	१०	७	५	९	५	१०	०
२	२१	८	१६	२४	१६	८	२१	१२	२४	०
२४	३६	२४	४८	०	४८	२४	३६	०	०	०
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०

अपसव्यकालचक्रमेषांशदशावर्षाणि १०० तन्मध्ये भृगोरंतर्वर्षाणि १६ तस्योपदशाचक्रम्										
ध्रुवांक	शु०२	मं०१	बृ०९	मं०८	शु०७	बु०३	सू०५	चं०४	बु०३	योगाः
०	२	१	१	१	२	१	०	३	१	१६
१	६	१	६	१	६	५	९	४	५	०
२७	२१	१३	३६	१३	२१	८	१८	९	८	०
३६	३६	१२	०	१२	३६	२४	०	३६	२४	०
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०

अपसव्यकालचक्रमेषांशदशावर्षाणि १०० तन्मध्ये भौमांतर्वर्षाणि ७ तस्योपदशाचक्रम्										
ध्रुवांक	मं०१	बृ०९	मं०८	शु०७	बु०६	सू०५	चं०४	बु०३	शु०२	योगाः
०	०	०	०	१	०	०	१	०	१	७
२५	५	८	५	१	७	४	५	७	१	०
१२	२६	१२	२६	१३	१६	६	१९	१६	१३	०
०	२४	०	२४	१२	४८	०	१२	४८	१२	०
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०

अपसव्यकालचक्रमीनांशदशावर्षाणि ८६ तन्मध्ये गुरोरंतर्वर्षाणि १० तस्योपदशाचक्रम्										
ध्रुवांक	बृ०१२	श ११	श १०	बृ०९	मं०८	शु०७	बु०६	सू०५	चं०४	योगाः
° १	१	०	०	१	०	१	१	०	२	१०
११	१	५	५	१	९	१०	०	६	५	०
५१	२८	१७	१७	२८	२३	९	१६	२९	९	०
३७	३६	२६	२६	३६	१	४६	४४	१८	४	०
४०	१६	३०	३०	१६	२४	२	४०	०	१३	०

अपसव्यकालचक्रमीनांशदशावर्षाणि ८६ तन्मध्ये शन्यंतर्वर्षाणि ४ तस्योपदशाचक्रम्										
ध्रुवांक	श ११	श १०	बृ०९	मं०८	शु०७	बु०६	सू०५	चं०४	बृ०१२	योगाः
° ०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	४
१६	२	२	५	३	८	५	२	११	५	०
४४	६	६	१७	२७	२७	०	२३	२१	१७	०
३९	५८	५८	२६	१३	५४	४१	४३	३७	२६	०
४	३७	३७	३०	३३	२६	५१	१५	४१	३०	०

अपसव्यकालचक्रमीनांशदशावर्षाणि ८६ तन्मध्ये शन्यंतर्वर्षाणि ४ तस्योपदशाचक्रम्										
ध्रुवांक	श १०	बृ०९	मं०८	शु०७	बु०६	सू०५	चं०४	बृ०१२	श ११	योगाः
° ०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	४
१६	२	५	३	८	५	२	११	५	२	०
४४	६	१७	२७	२७	०	२३	२१	१७	६	०
३९	५८	२६	१२	५४	४१	४३	३७	२६	५८	०
४	३७	३०	३३	२६	५१	१५	४१	३०	३७	०

अपसव्यकालचक्रमीनांशदशावर्षाणि ८६ तन्मध्ये गुरोरंतर्वर्षाणि तस्योपदशा चक्रम् ०१										
ध्रुवांक	बृ०९	मं०८	शु०७	बु०६	सू०५	चं०४	बृ०१२	श ११	श १०	योगाः
° १	१	०	१	१	०	२	१	०	०	१०
११	०	९	१०	०	६	५	१	५	५	०
५१	२८	२३	९	१६	२९	९	२८	१७	१७	०
३७	३६	१	४६	४४	१८	४	३६	२६	२६	०
४०	१६	२४	२	४०	९	१३	१६	३०	३०	०

अपसव्यकालचक्रमीनांशदशावर्षाणि ८६ तन्मध्ये भौमांतर्वर्षाणि ७ तस्योपदशा चक्रम्										
ध्रुवांक	मं०८	शु०७	बु०६	सू०५	चं०४	बृ०१२	श ११	श १०	बृ०९	योगाः
०	०	१	०	०	१	०	०	०	०	७
२९	६	३	८	४	८	९	३	३	९	०
१८	२५	१८	२३	२६	१५	२३	२७	२७	२३	०
८	६	५०	४३	३०	२०	१	१२	१२	१	०
२२	५८	१४	१५	४२	५६	२४	३३	३३	२४	०

अपसव्यकालचक्रमीनांशदशावर्षाणि ८६ तन्मध्ये भृगोरंतर्वर्षाणि १६ तस्योपदशाचक्रम्										
ध्रुवांक	शु०७	बु०६	सू०५	चं०४	बृ०१२	श ११	श १०	बृ०९	मं०८	योगाः
२	२	१	०	३	१	०	०	१	१	१६
६	११	८	११	१०	१०	८	८	१०	३	०
५८	२१	२	४	२६	९	२७	२७	९	१८	०
३६	३७	४७	५३	३०	४६	५४	५४	४६	५०	०
१६	४१	२६	१	४२	२	२६	२६	२	१४	०

अपसव्यकालचक्रमीनांशदशावर्षाणि ८६ तन्मध्ये बुधांतर्वर्षाणि ९ तस्योपदशा चक्रम्										
ध्रुवांक	बु०६	सू०५	चं०४	बृ०१२	श ११	श १०	बृ०९	मं०८	शु०७	योगाः
१	०	०	२	१	१	१	१	०	१	९
७	११	६	२	०	५	५	०	८	८	०
४०	९	८	११	१६	०	०	१६	२३	२	०
२७	४	२२	९	४४	४१	४१	४४	४३	२७	०
५०	११	२०	४६	४०	५१	५१	४०	१५	२६	०

अपसव्यकालचक्रमीनांशदशावर्षाणि ८६ तन्मध्ये चंद्रांतर्वर्षाणि २१ तस्योपदशाचक्रम्										
ध्रुवांक	सू०५	चं०४	बृ०१२	श ११	श १०	बृ०९	मं०८	शु०७	बु०६	योगाः
०	०	१	०	०	०	०	०	०	०	५
२०	३	२	६	२	२	६	४	११	६	०
५५	१४	१९	२९	२३	२३	२९	२६	४	८	०
४८	३९	३२	१८	४३	४३	१८	३०	५३	२२	०
५०	४	५	९	१५	१५	९	४२	१	२०	०

अपसव्यकालचक्रमीनांशदशावर्षाणि ८६ तन्मध्ये चंद्रातर्दशार्वर्षाणि २१ तस्योपदशाचक्रम्										
ध्रुवांक	चं०४	बृ०१३	श ११	श १०	बृ०९	मं०८	शु०७	बु०६	सू०५	योगाः
२	५	२	०	०	२	१	३	२	१	२१
२७	१	५	११	११	५	८	१०	२	२	०
५४	१६	९	२१	२१	९	१५	२६	११	१९	०
२५	२	४	३७	३७	४	२०	३	९	३२	०
७	४७	११	४१	४१	११	५६	४२	४६	५	०

अपसव्यकालचक्रकुंभांशदशावर्षाणि ८३ तन्मध्ये बुधांतर्वर्षाणि ९ तस्योपदशा चक्रम्										
ध्रुवांक	बु०३	शु०२	मं०१	बृ०९	श १०	श ११	बृ०१२	मं०१	शु०२	योगाः
१	०	१	०	१	०	०	१	०	१	९
९	११	८	९	१	५	५	१	९	८	०
२	२१	२४	३	०	६	६	०	३	२४	०
१०	१९	३४	१५	२१	८	८	२१	१५	३४	०
७	३२	४२	१०	४२	४०	४०	४२	१०	४२	०

अपसव्यकालचक्रकुंभांशदशावर्षाणि ८३ तन्मध्ये भृगोरंतर्वर्षाणि १६ तस्योपदशाचक्रम्										
ध्रुवांक	शु०२	मं०१	बृ०९	श १०	श ११	बृ०१२	मं०१	शु०२	बु०३	योगाः
२	३	१	१	०	०	१	१	३	१	१६
९	१	४	११	९	९	११	४	१	८	०
२३	०	५	३	७	७	३	५	०	२४	०
५१	२१	४७	५८	३५	३५	५८	४७	२१	३४	०
१९	४१	०	३३	२५	२५	३३	०	४१	४२	०

अपसव्यकालचक्रकुंभांशदशावर्षाणि ८३ तन्मध्ये भौमांतर्वर्षाणि ७ तस्योपदशा चक्रम्										
ध्रुवांक	मं०१	बृ०९	श १०	श ११	बृ०१२	मं०१	शु०२	बु०३	शु०२	योगाः
१	०	०	०	०	०	०	१	०	१	७
०	७	१०	४	४	१०	७	४	९	४	०
२१	२	३	१	१	३	२	५	३	५	०
४१	३१	३६	२६	३६	३६	३१	४७	१५	४७	०
१२	४८	५२	४५	४५	५२	४८	०	१०	०	०

अपसव्य फालचक्र कुंभांशदशावर्षाणि ८३ तन्मध्ये गुरोरंतर्वर्षाणि १० तस्योपदशाचक्रम्

ध्रुवांक	बृ०९	श १०	श ११	गु०१२	मं०१	शु०२	बु०३	शु०२	मं०१	योगाः
०१	१	०	०	१	१	१	१	१	०	१०
१३	२	५	५	२	१०	११	१	११	१०	०
२२	१३	२३	२३	१३	३	३	०	३	३	०
२४	४४	३९	३९	४४	३६	५८	२१	५८	३६	०
३४	६	३८	३८	६	५२	३३	४२	३३	५२	०

अपसव्यकालचक्रकुंभांशदशावर्षाणि ८३ तन्मध्ये शन्यंतर्वर्षाणि ४ तस्योपदशाचक्रम्

ध्रुवांक	श १०	श ११	गु०१२	मं०१	शु०२	बु०३	शु०२	मं०१	बृ०९	योगाः
००	०	०	०	०	०	०	०	०	०	४
१७	२	२	५	४	९	५	९	४	५	०
२०	९	९	२३	१	७	६	७	१	२३	०
५७	२३	२३	२९	२६	३५	८	३५	२६	२९	०
४८	५२	५२	३८	४५	२५	४०	२५	४५	३८	०

अपसव्यकालचक्रकुंभांशदशावर्षाणि ८३ तन्मध्ये शन्यंतर्वर्षाणि ४ तस्योपदशाचक्रम्

ध्रुवांक	श ११	गु०१२	मं०१	शु०२	बु०३	शु०२	मं०१	बृ०९	श १०	योगाः
००	०	०	०	०	०	०	०	०	०	४
१७	२	५	४	९	५	९	४	५	२	०
२०	९	२३	१	७	६	७	१	२३	९	०
५७	२३	२९	२६	३५	८	३५	२६	२९	२३	०
४८	५२	३८	४५	२५	४०	२५	४५	३८	५२	०

अपसव्यकालचक्रकुंभांशदशावर्षाणि ८३ तन्मध्ये गुरोरंतर्वर्षाणि १० तस्योपदशाचक्रम्

ध्रुवांक	गु०१२	मं०१	शु०२	बु०३	शु०२	मं०१	गु०९	श १०	श ११	योगाः
०१	१	०	१	१	१	०	१	०	०	१०
१३	२	१०	११	१	११	१०	२	५	५	०
२२	१३	३	३	०	३	३	१३	२३	२३	०
२४	४४	३६	५८	२१	५८	३६	४४	२९	२९	०
३४	६	५२	३३	४१	३३	५२	६	३८	३८	०

अपसव्यकालचक्रकुंभांशदशावर्षाणि ८३ तन्मध्ये भौमांतर्वर्षाणि ७ तस्योपदशा चक्रम्

ध्रुवांक	मं०१	शु०२	बु०३	शु०२	मं०१	गु०९	श १०	श ११	बृ०१२	योगाः
१	०	१	०	१	०	०	०	०	०	७
०	७	४	९	४	७	१०	४	४	१०	०
२१	२	५	३	५	२	३	१	१	३	०
४१	३१	४७	१५	४७	३१	३६	२६	२६	३६	०
१२	४८	०	१०	०	४८	५२	४५	४५	५२	०

अपसव्यकालचक्रकुंभांशदशावर्षाणि ८३ तन्मध्ये भृगोरंतर्वर्षाणि १६ तस्योपदशा चक्रम्

ध्रुवांक	शु०२	बु०३	शु०२	मं०१	गु०९	श १०	श ११	गु०१२	मं०१	योगाः
२	३	१	३	१	१	०	०	१	१	१६
९	१	८	१	४	११	९	९	११	४	०
२३	०	२४	०	५	३	७	७	३	५	०
५१	२१	३४	२१	४७	५८	३५	३५	५८	४७	०
१९	४१	४२	४१	०	३३	२५	२५	३३	०	०

अपसव्यकालचक्रमकरांशदशावर्षाणि ८५ तन्मध्ये बुधांतर्वर्षाणि ९ तस्योपदशाचक्रम्

ध्रुवांक	बु०३	सू०५	चं०४	बु०६	शु०७	मं०८	गु०१२	श ११	श १०	योगाः
१	०	०	२	०	१	०	१	०	०	५
८	११	६	२	११	८	८	०	५	५	०
७	१३	१०	२०	१३	९	२६	२१	२	२	०
३	३	३५	२८	३	५२	४९	१०	२८	२८	०
३१	३२	१८	१४	३२	५६	२५	३५	१४	१४	०

अपसव्यकालचक्रमकरांशदशावर्षाणि ८५ तन्मध्ये सूर्यांतर्वर्षाणि ५ तस्योपदशाचक्रम्

ध्रुवांक	सू०५	चं०४	बु०६	शु०७	मं०८	गु०९	श ११	श १०	बु०३	योगाः
०	०	१	०	०	०	०	०	०	०	५
२१	३	२	६	११	४	७	२	२	१०	०
१०	१५	२४	१०	८	२८	१	२४	२४	६	०
३५	५२	४२	३५	४९	१४	४५	४२	४२	३५	०
१७	५६	२१	१८	२५	७	५३	२१	२१	१८	०

अपसव्यकालचक्रमकरांशदशावर्षाणि ८५ तन्मध्ये चंद्रांतर्वर्षाणि २१ तस्योपदशाचक्रम्

ध्रुवांक	चं०४	बु०६	शु०७	मं०८	गु०१२	श ११	श १०	बु०३	सू०५	योगाः
० २	५	२	३	१	२	०	०	२	१	२१
२८	२	२	११	८	५	११	११	२	२	०
५६	७	२०	१३	३२	१९	२५	२५	२०	२४	०
२८	४५	२८	३	३५	२४	४५	४५	२८	४२	०
१४	५३	१४	३२	१७	४२	५३	५३	१४	२१	०

अपसव्यकालचक्रमकरांशदशावर्षाणि ८५ तन्मध्ये बुधांतर्वर्षाणि ९ तस्योपदशाचक्रम्

ध्रुवांक	बु०६	शु०७	मं०८	गु०१२	श ११	श १०	बु०३	सू०५	चं०४	योगाः
० १	०	१	०	१	०	०	०	०	२	९
८	११	८	८	०	५	५	११	६	२	०
७	१३	९	२६	२१	२	२	१३	१०	२०	०
३	३	५२	४९	१०	२८	२८	३	३५	२८	०
२१	३२	५६	२५	३५	१४	१४	३२	१८	१४	०

अपसव्यकालचक्रमकरांशदशावर्षाणि ८५ तन्मध्ये भृगोरंतर्वर्षाणि १६ तस्योपदशाचक्रम्

ध्रुवांक	शु०७	मं०८	बृ०१२	श ११	श १०	बु०३	सू०५	चं०४	बु०६	योगाः
० २	३	१	१	०	०	१	०	३	१	१६
७	०	३	१०	९	९	८	११	११	८	०
४५	४	२४	१७	१	१	९	८	१३	९	०
५२	१४	२१	३८	३	३	५२	४९	३	५२	०
५६	७	११	४९	३२	३२	५६	३५	३२	५६	०

अपसव्यकालचक्रमकरांशदशावर्षाणि ८५ तन्मध्ये भौमांतर्वर्षाणि ७ तस्योपदशाचक्रम्

ध्रुवांफ	मं०८	बृ०१२	श ११	श १०	बु०३	सू०५	चं०४	बु०६	शु०७	योगाः
० ०	०	०	०	०	०	०	१	०	१	७
२९	६	९	३	३	८	४	८	८	३	०
३८	२७	२६	२८	२८	२६	२८	२२	३६	२४	०
४९	३१	२८	३५	३५	४९	१४	३५	४९	२१	०
२४	४६	१४	१८	१८	२५	७	१७	२५	१०	०

अपसव्यकालचक्रमकरांशदशावर्षाणि ८५ तन्मध्ये गुरोरंतर्वर्षाणि १० तस्योपदशा चक्रम्

ध्रुवांक	बृ०१२	श ११	श १०	बु०३	सू०५	चं०४	बु०६	शु०७	मं०८	योगाः
० १	१	०	०	१	०	२	१	१	०	१०
१२	२	५	५	०	७	५	०	१०	९	०
२१	३	१९	१९	२१	१	१९	२१	१७	२६	०
१०	३१	२४	२४	१०	४५	२४	१०	३८	२८	०
३५	४६	४३	४३	३५	५३	४२	३५	४९	१४	०

अपसव्यकालचक्रमकरांशदशावर्षाणि ८५ तन्मध्ये शन्यंतर्वर्षाणि ४ तस्योपदशाचक्रम्

ध्रुवांक	श ११	श १०	बु०३	सू०५	चं०४	बु०३	शु०२	मं०१	बृ०१२	योगाः
० ०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	४
१६	२	२	५	२	११	५	९	३	५	०
५६	७	७	२	२४	३५	२	१	२८	१९	०
२८	४५	४५	२८	४२	४५	२८	३	३५	२४	०
१४	५३	५३	१४	२१	५३	१४	३२	१८	४२	०

अपसव्यकालचक्रमकरांशदशावर्षाणि ८५ तन्मध्ये शन्यंतर्वर्षाणि ४ तस्योपदशाचक्रम्

ध्रुवांक	श १०	बु०३	सू०५	चं०४	बु०३	शु०२	मं०१	बृ०१२	श ११	योगाः
० ०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	४
१६	२	५	२	११	५	९	३	५	२	०
५६	७	२	२४	२५	२	१	२८	१९	७	०
२८	४५	२८	४२	४५	२८	३	३५	२४	४५	०
१४	५३	१४	२१	५३	१४	३२	१८	४२	५३	०

अपसव्यकालचक्रधनांशदशावर्षाणि १०० तन्मध्ये गुरोरंतर्वर्षाणि १० तस्योपदशा चक्रम्

ध्रुवांक	गु०९	मं०८	शु०७	बु०६	सू०५	चं०४	बु०३	शु०२	मं०१	योगाः
०	१	०	१	०	०	२	०	१	०	१०
१	०	८	७	१०	६	१	१०	७	८	०
६	०	१२	६	२४	०	६	२४	६	१२	०
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०
० ०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०

अपसव्यकालचक्रधनांशदशावर्षाणि १०० तन्मध्ये भौमांतर्वर्षाणि ७ तस्योपदशा चक्रम्										
ध्रुवांक	मं०८	शु०७	बु०३	सू०५	चं०४	बु०३	शु०२	मं०१	बृ०९	योगाः
०	०	१	०	०	१	०	१	०	०	७
२५	५	१	७	४	५	७	१	५	८	०
१२	२६	१३	१६	६	१९	१६	१३	२६	१२	०
०	२४	१२	४८	०	१२	४८	१२	२४	०	०
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०

अपसव्यकालचक्रधनांशदशावर्षाणि १०० तन्मध्ये भृगोरंतर्वर्षाणि १६ तस्योपदशाचक्रम्										
ध्रुवांक	शु०७	बु०३	सू०५	चं०४	बु०३	शु०२	मं०१	बृ०९	मं०८	योगाः
०	२	१	०	३	१	२	१	१	१	१६
१	६	५	९	४	५	६	१	७	१	०
२७	२१	८	१८	९	८	२१	१३	६	१३	०
३६	३६	२४	०	३६	२४	३६	१२	०	१२	०
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०

अपसव्यकालचक्रधनांशदशावर्षाणि १०० तन्मध्ये बुधांतर्वर्षाणि ९ तस्योपदशा चक्रम्										
ध्रुवांक	बु०३	सू०५	चं०४	बु०३	शु०२	मं०१	बु०९	मं०८	शु०७	योगाः
०	०	०	१	०	१	०	०	०	१	९
२	९	५	१०	९	५	७	१०	७	५	०
२४	२१	१२	२०	२१	८	१६	२४	१६	८	०
०	३६	०	२४	३६	२४	०	०	४८	२४	०
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०

अपसव्यकालचक्रधनांशदशावर्षाणि १०० तन्मध्ये सूर्यांतर्वर्षाणि ५ तस्योपदशा चक्रम्										
ध्रुवांक	सू०५	चं०४	बु०३	शु०२	मं०१	बृ०९	मं०८	शु०७	बु०३	योगाः
०	०	१	०	०	०	०	०	०	०	५
१८	३	०	५	९	४	६	४	९	५	०
०	०	१८	१२	१८	६	०	६	१८	१२	०
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०

अपसव्यकालचक्रधनांशदशावर्षाणि १०० तन्मध्ये चंद्रांतर्वर्षाणि २१ तस्योपदशाचक्रम्

ध्रुवांक	चं०४	बु०३	शु०२	मं०१	बृ०९	मं०८	शु०७	बु०६	सू०५	योगाः
०	४	१	३	१	२	१	३	१	१	२१
२	४	१०	४	५	६	५	४	१०	०	०
१५	२७	२०	९	१९	६	१९	९	२०	१८	०
३६	३६	२४	३६	१२	०	१२	३६	२४	०	०
० ०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०

अपसव्यकालचक्रवृश्चिकांशदशावर्षाणि १०० तन्मध्ये बुधांतर्वर्षाणि ९ तस्योपदशाचक्रम्

ध्रुवांक	बु०३	शु०२	मं०१	बृ०९	मं०८	शु०७	बु०६	सू०५	चं०४	योगाः
०	०	१	०	०	०	१	०	०	१	९
१	९	५	७	१०	७	५	९	५	१०	०
२	२१	८	१६	२४	१६	८	२१	१२	२४	०
२४	३६	२४	४८	०	४८	२४	३६	०	०	०
० ०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०

अपसव्यकालचक्रधनांशदशावर्षाणि १०० तन्मध्ये भृगोरंतर्वर्षाणि १६ तस्योपदशाचक्रम्

ध्रुवांक	शु०२	मं०१	बृ०९	मं०८	शु०७	बु०३	सू०५	चं०४	बु०३	योगाः
०	२	१	१	१	२	१	०	३	१	१६
१	६	१	७	१	६	५	९	४	५	०
२७	२१	१३	३६	१३	२१	८	१८	९	८	०
३६	३६	१२	०	१२	३६	२४	०	३६	२४	०
० ०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०

अपसव्यकालचक्रधनांशदशावर्षाणि १०० तन्मध्ये भौमांतर्वर्षाणि १६ तस्योपदशा चक्रम्

ध्रुवांक	मं०१	बृ०९	मं०८	शु०७	बु०६	सू०५	चं०४	बु०३	शु०२	योगाः
० ०	०	०	०	१	०	०	१	०	१	७
२५	५	८	५	१	७	४	५	७	१	०
१२	२६	१२	२६	१३	१६	६	९	१६	१३	०
०	२४	०	२४	१२	४८	०	२२	४८	१२	०
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०

अथाग्रे कालचक्रमाह

मेषांशे चौरको विद्याच्छ्रीमाञ्छुक्रांशके भवेत् ।। बुधांशे ज्ञानसंपन्नश्चंद्रे च नृपतिर्भवेत् ।।४१।। सिंहांशे राजसः प्रोक्तः सौम्यांशे पंडितो भवेत् ।। तुलांशे राजमंत्री च भौमांशे निर्धनो भवेत् ।।४२।। चापांशे ज्ञानसंयुक्तो मकरांशे च पापकृत् ।। कुम्भांशे च वणिक्कर्म मीनांशे किल धान्यवान् ।।४३।।

कालचक्र जातलक्षण

मेषांश में चोर होता है। वृषांश में श्रीमान् । मिथुनांश में ज्ञानी तथा कर्कांश में राजा होता है।।४१।। सिंहांश में रजोगुणी। कन्यांश में पंडित। तुलांश में राजमंत्री। वृश्चिकांश में निर्धन होता है।।४२।। धनु अंश में ज्ञानी। मकरांश में पापकर्मा। कुम्भांश में वणिग् वृत्ति। मीनांश में अन्नपति होता है।।४३।।

अथोदयफलमाह

आदित्यस्योदये राज्यं कृषिश्चंद्रोदये भवेत् ।। अंगारकस्य शूरः स्यात्पापकर्मणि संगतः ।।४४।। बुधस्य विमला बुद्धिरत्यंतं पंडितो भवेत् ।। गुरुशुक्रोदये राज्यं चौरको मंदकोदये ।।४५।।

उदय फल

सूर्य राशि के उदय में जन्म होने से राजा होता है। चन्द्रराशि के उदय में कृषक। मंगल की राशि के उदय में शूरवीर तथा पापकर्मरत रहता है।।४४।। बुधोदय में निर्मल बुद्धि तथा अति मेधावी होता है। गुरु शुक्रोदय में राजा और शनि के उदय में चोर होता है।।४५।।

अथ देहजीवफलमाह

देहजीवसमायोगे भौमार्करविजादिभिः ।। एकैकयोगे मरणं बहुयोगेषु का कथा ।।४६।। यत्र स्थानेषु संजीवो देहयोगसमन्वितः ।। तत्र पापग्रहैर्योगे तद्दशामरणं वदेत् ।।४७।। देहयोगे महाबाधा जीवयोगे तु मृत्युदः ।। द्वाभ्यां संयोगमात्रेण हन्यते नाऽत्र संशयः ।।४८।। जीवे जीवो यदा राहुः सौरिर्वक्री रविः स्थितः ।। मृत्युकालगतिं ज्ञात्वा शांतिं कुर्याद्यथाविधि ।।४९।। जीवे जीवो यदा सोमे सौम्ये जीवसितः स्थितः ।। तदा सौख्यं प्रकुर्वन्ति रोगमृत्युविनाशनम् ।।५०।। पापक्षेत्रदशायोगे देहजीवौ तु दुःखितौ ।। शुभक्षेत्रदशायोगे शुभयोगे शुभं भवेत् ।।५१।। देहे शुभग्रहैर्युक्ते भूषणादि ध्रुवं भवेत् ।। जीवे शुभग्रहैर्युक्ते पुत्रदारादिकाँल्लभेत् ।।५२।।

देह जीव फल

देह राशि और जीव राशि में सूर्य, मंगल, शनि, राहु, केतु में से एक एक ग्रह भी यदि हो तो मरण होता है। अनेक ग्रह यदि देह जीवराशि में हो तो क्या कहना।।४६।। देहराशि में पापग्रह हो तो महाकष्ट होता है। जीव राशि में पापग्रह हो तो उसकी (उस ग्रह की) दशा में मृत्यु होती है।।४७।। किसी एक ग्रह द्वारा देह जीव से योग हो तो उसकी दशा में मृत्यु होती है।।४८।। जीवराशि में गुरुराशि तथा राहु वक्री शनि सूर्य हो तो मृत्युयोग जानना और उस दशारम्भ काल में यथाविधि शान्ति करना चाहिए।।४९।। जीवराशि में गुरु हो और चन्द्रराशि हो। एवं बुधराशि में गुरुशुक्र हो तो सौख्य होता है तथा रोग और शत्रु का नाश होता है।।५०।। देह जीवराशि में पापग्रह का योग होने से दुःखदायक और शुभयोग होने से शुभ होता है।।५१।। देहराशि में शुभग्रह हों तो भूषण आदि की प्राप्ति होती है। जीव राशि में शुभग्रह हो तो स्त्री पुत्रादि की प्राप्ति होती है।।५२।।

अथ गतिप्रकरणमाह

प्रथमे गतिर्मंडूकी द्वितीये मर्कटी तथा ।। बाणायनवपर्यंत गतिः सिंहावलोकनम् ।।५३।।

गति प्रकरण

प्रथम 'मांडूकी' और दूसरी 'मर्कटी' गति तथा तीसरी ५।९।११ तक की 'सिंहावलोकन' गति होती है।।५३।।

अथ फलमाह

मंडूके तु महाव्याधिर्मर्कटयां तु महद्भयम् ।। सिंहावलोके मरणं गर्गस्य वचनं यथा ।।५४।।

गतिफल

मांडू की गति महाव्याधि दायिनी होती है। मर्कटी गति में महाभय और सिंहावलोकन गति में मरण होता है। यह गर्गजी का वचन है।।५४।।

सिंहावलोकनगतिमांडूकीगतिफलान्याह

कन्यायां कर्कटे वापि सिंहभे मिथुनेपि च ।। माण्डूकीगतिसंज्ञो वै तादृशं रोगकारणम् ।।५५।।
मीने तु वृश्चिके वापि चापो मेषस्तथैव च ।। सिंहावलोकनं चैव तादृशं च फलं लभेत् ।।५६।।
सिंहावगतिमार्गे च मांडूकीगतिसंभवः ।। अपमृत्युकरस्तस्मिन्प्रायश्चित्तेतिशोचति ।।५७।। मीने

तु वृश्चिके याते ज्वरो भवति निश्चितम् ।। कन्यायां कर्कटे याते मातृबंधुविनाशनम् ।।५८।। सिंहे तु मिथुने याते स्त्रियां व्याधिर्भवेद् ध्रुवम् ।। कर्कटे तु रवौ याते बधो भवति देहिनाम् ।। पितृबंधुमृतिं विद्याच्चापान्मेषगते पुनः ।।५९।।

गतिफल

मिथुन, कर्क, सिंह, कन्या ये मांडूकी गति संज्ञक हैं। अतएव महाव्याधिकारक हैं।।५५।। मेष, वृश्चिक धन, मीन ये सिंहावलोकन गति संज्ञक हैं। अतः महाभय कारक हैं।।५६।। सिंहावलोकन की राशि में मांडूकी गति की राशि हो तो अपमृत्यु कारक योग है। अवश्य प्रायश्चित कर्तव्य है।।५७।। मीनराशि दशा में वृश्चिकाधिपग्रह हो तो निश्चय ज्वर होता है। इसी प्रकार कन्या की दशा में कर्केश हो तो माता तथा बन्धु का नाश होता है।।५८।। सिंहराशि दशा में मिथुनांश हो अथवा कन्या हो तो अवश्य व्याधि होती है। कर्क राशि दशा में सूर्य हो तो बध (हत्या) होती है। मेष राशि में धनु होने से पिता, बन्धु की मृत्यु होती है।।५९।।

पुनः गतिफलमाह

कन्यायां कर्कटे याते पूर्वभागे महत्फलम् ।।६०।। उत्तरं देश माश्रित्य सुखं यात्रा भविष्यति ।। सिंहे तु मिथुने याते पूर्वभागो विसृज्यते ।। कायतिपि च नैर्ऋत्यां सुखं यात्रा भविष्यति ।।६१।। कर्कटे मेषसिंहे च कार्यहानिश्च योगयुक् ।। दक्षिणां दिशमाश्रित्य प्रत्यब्दं गमनं भवेत् ।।६२।। कुम्भे व्याधिर्मनोदुःखं मिथुने निर्धनो भवेत् ।। मीने तु वृश्चिके याते उदग्गच्छति संकटम् ।। मकरे संकटं दुःखं चापात्संकटमुच्यते ।।६३।। चापे मेषे भयं यात्रा बधबंधौमृतिर्भवेत् ।। तुला संपद्विवाहश्च स्त्रीप्राप्तिर्वृश्चिके गतिः ।।६४।। मेषे शुक्रफलं विद्याद्दक्षिणे गमनं सुखम् ।। बेहजीवसमायोगे मंदः स्थित्वाऽपमृत्युदः ।।६५।। (एवं राशिफलं बुद्ध्वा नक्षत्रांशक्रमेण तु ।। जीवदेहक्रमाच्चैव महादशांतरदशा ।। प्रदक्षिणेन मार्गेण वृश्चिकादि विवक्षिते ।।)

पुनःगतिफल

कन्या में कर्क राशि हो तो प्रथमार्द्ध में अतिश्रेष्ठ।।६०।। उत्तर दिशा की यात्रा सुखपूर्वक होती है। सिंह राशि में मिथुन हो तो पूर्वार्द्ध नेष्ट। और उत्तरार्द्ध में नैर्ऋत्य दिशा की यात्रा सुखकर होती है।।६१।। कर्क राशि में मेष और सिंह राशि होने से कार्य हानि होती है। और दक्षिण दिशा में प्रतिवर्ष यात्रा होती है।।६२।। कुम्भ में व्याधि और महादुःख तथा मिथुन में निर्धन हो। मीन राशि वृश्चिक राशि हो तो उत्तर दिशा में संकट होता है। मकर राशि में संकट दुःख तथा धनु राशि होने से संकट होता है।।६३।। धनु और मेष राशि में भय और यात्रा बध और बंधन तथा मृत्यु होती है। तुलाराशि दशा में विवाह, स्त्रीप्राप्ति तथा वृश्चिक में यात्रा होती है।।६४।। मेष राशि में बलवृद्धि और दक्षिण दिशा में यात्रा होती है। देह और जीवराशि के योग में यदि शनि हो तो अपमृत्युकारक होता है।।६५।। (इस प्रकार नक्षत्र के

अंश से राशि की दशा तथा अंतरदशा जानकर जीव और देह का योग विचार करे।। गति विचार में सप्तम्यन्त राशि पद से मूलदशा और प्रथमान्त से अन्तर जानना चाहिए। केवल सप्तम्यन्त से अन्तर दशा जानना। दोनों का देह जीव योग देखना।)

अथ महादशाफलमाह

रक्तपित्ताधिकव्याधिर्नृणामर्कफलं भवेत् ।। धनकीर्तिप्रजाबृद्धिवस्त्राभरणदः शशी ।।६६।। ज्वरमाशु दिशेत्पैत्यं ग्रंथिस्फोटः कुजस्य तु ।। प्रजावृद्धिर्धने बुद्धिर्बुधे भोगफलं भवेत् ।।६७।। धनं कीर्तिं प्रजावृद्धिं नानाभोगं बृहस्पतिः ।। विद्या विवाहः सुक्षेत्रं गृहं धान्यं भृगोः फलम् ।।६८।। तापाधिक्यं महादुःखं बन्धुनाशः शनेः फलम् ।। एवमर्कादियोगेन राशियोगेन संयुते ।।६९।। शुभयोगे शुभं ब्रूया दशुभे त्वशुभं फलम् ।। मिश्रे मिश्रफलं ब्रूयाद्ग्रहराशिसमुद्भवम् ।।७०।। द्वादशाष्टमजन्मर्क्षदशायोगेन निर्णयः ।। मृत्युकाल इति ज्ञात्वा शांतिं कुर्याद्विचक्षणः ।।७१।।

कालचक्रमहादशाफल

सूर्य महादशा में–रक्तपित्त की बीमारी विशेषरूप से होती है।

चन्द्रमहादशा में–धन, कीर्ति तथा प्रजा की वृद्धि, तथा वस्त्राभरण प्राप्त होता है।।६६।।

भौमदशा में–पित्तज्वर, ग्रन्थि का फटना आदि होता है।

बुधदशा में–प्रजा तथा धन की वृद्धि एवं ऐश्वर्य प्राप्त होता है।।६७।।

गुरुदशा में-धन, कीर्ति तथा प्रजा की वृद्धि और अनेक भोग मिलते हैं।

शुक्र दशा में– विद्या, विवाह, सुवास, मकान आदि शुभ फल होता है।।६८।।

शनि दशा में–विशेष ज्वर, महादुःख, तथा बन्धुनाश होता है।

इस प्रकार दशा की राशि में सूर्यादि ग्रहों के योग से।।६९।। देखकर शुभग्रह के योग से शुभ फल और अशुभ ग्रह के योग से अशुभफल कहना चाहिए। मिश्रित योग हो तो फल भी मिश्रित होता है।।७०।। अशुभ योग के लिए १२।८ भावेशों का योग आवश्यक है। यदि मृत्यु कारक दशा हो तो शान्ति करना चाहिए।।७१।।

अथांशायुर्निर्णयमाह

भांघ्रिएष्यघटिका हतायुषा बाणचंद्र १५ विधिरायुषः क्रमात् ।। स्वस्ववर्षविहता स्वकीयजा कालचक्रविधिरायुषः क्रमात् ।।७२।। भुक्तनाडिहतावर्षास्तथाबाणेंद्र १५ भाजिताः ।। वर्षमासाहघटिकाः स्वविकल्पविभाजिताः ।।७३।। अस्मिन्नवांशके चंद्रे स्थिते तस्मान्नवांशकात् ।। न वा नवांशराशीनामंते मृत्युर्भविष्यति ।।७४।।

अंशायु निर्णय

भुक्त तथा भोग्य अंशायु स्पष्टीकरण। नक्षत्र के जिस पाद में जातक का जन्म है, उसकी भोग्य घटी पल को एकरस करके अपनी प्राप्त आयु के ध्रुवांक से गुणा करके १५ से भाग देने पर कालचक्र दशा की भोग्य दशा होती है॥७२॥ अथवा इसी प्रकार भुक्त घटी पलको एक रस करके अपने २ दशा वर्ष से गुणा कर १५ का भाग देने से भुक्त दशा होती है॥७३॥ यह विधि चन्द्र स्पष्ट से भी की जा सकती है। यदि इस नवांश राशि के मध्य में मारक नहीं हो तो अंत की दशा में मृत्यु होती है॥७४॥

अथांतर्दशाफलमाह

लग्नर्क्षवीक्षितो यश्च येन केन समायुतः ॥ यस्य राशिः स्थितो जातस्तादृशं फलमाप्नुयात् ॥७५॥ अथाऽतो देवदेवेशि ह्यंशकांतर्दशाफलम् ॥ यथाविधि प्रवक्ष्यामि श्रूयतां कमलानने ॥७६॥ प्रथमांशे बधो भौमे ज्वरश्च व्रणसंभवः ॥ बुधशुक्रेंदुजीवेषु वस्त्राभरणमादिशेत् ॥७७॥ लभते स्वांशके देवि निश्चयं सुरवंदिते ॥ राज्ञातिकलहं सौरेः शत्रुक्षोभं महद्भयम् ॥७८॥ मेषांशस्थे तथादित्येऽनुक्रमात्फलनिश्चयः ॥ राजप्रसादमाप्नोति मेषस्वांशगते गुरौ ॥७९॥ विद्यालाभो महत्प्रीतिः शारीरं सुखमेव च ॥ वृषभस्वांशके देवि गुरौ तत्र गते फलम् ॥८०॥ देशत्यागश्च मरणं ज्वर शस्त्रक्षतं तथा ॥ वृषभस्वांशके देवि कुजे तत्र गते फलम् ॥८१॥ वस्त्राभरणलाभं तु स्त्रियां योगं महत्फलम् ॥ शुक्रेंदुसुतचंद्राणां स्वांशके वृषभे फलम् ॥८२॥ नृपाद्भयं पितृमृतिर्मृगाद्यैश्च महद्भयम्॥क्षुद्ररोग च लभते वृषभस्वांशके रविः॥८३॥

अन्तर्दशा फल

जो राशि लग्नेश दृष्ट हो अथवा शुभ या पाप जैसे ग्रह से युक्त हो, अथवा जिस ग्रह की राशि में जन्म हो इत्यादि सब योग देखकर ही फल कहना चाहिए॥७५॥ हे पार्वति! अब दशा के अन्तरदशाओं का फल यथाविधि कहा जाता है॥७६॥ मेष राशि दशा अन्तर में भौम हो तो ज्वर तथा ब्रण का संभव है। और बुध, गुरु, शुक्र, चन्द्र हों तो (इनकी राशि का अन्तर हो तो) वस्त्र, आभरण आदि प्राप्त होते हैं॥७७॥ हे देवि! शनि अपने अंशदशा में राजा से कलह करता है। शत्रु से भय करता है॥७८॥ मेष राशि नवांशदशा में सूर्यादि ग्रहों का क्रम से फल का निश्चय करना चाहिए। गुरु अपने अंश में राजमहल प्राप्त कराता है॥७९॥ यदि गुरु वृषराशि की दशा के अपने अन्तर में हो तो विद्यालाभ, महान् प्रेम तथा शारीरिक सुख करता है ॥८०॥ और वृष के स्वांश में मंगल हो तो देशत्याग, मरण, ज्वर, शस्त्राघात करता है॥८१॥ वृष के अन्तर में शुक्र, बुध चन्द्रमा हों तो सुन्दर वस्त्र, आभूषणों का लाभ तथा स्त्री सौख्य देते हैं॥८२॥ वृष के अन्तर में सूर्य राजभय, पितृमरण, पशु से भय करता है॥८३॥

मौक्तिकाभरणादीनि दारावस्त्रफलादि च ।। लभते स्वांशके देवि मिथुनस्वांशके भृगौ ।।८४।।
पितृमातृभयं चैव ज्वरश्च व्रणसंभवः ।। प्रयाणं कुरुते देवि मिथुनस्वांशके कुजः ।।८५।।
विद्यालाभं द्रव्यलाभं महाविभवसंभवम् ।। समस्तप्रीतिमाप्नोतिमिथुनस्वांशके गुरौ ।।८६।।
प्रयाणं च महाव्याधिर्मरणं चार्थनाशनम् ।। बंधुनाशो भवेद्देवि मिथुनस्वांशके शनौ ।।८७।।
वस्त्रलाभं पुत्रलाभं विद्यालाभं तथैव च।। समस्तप्रीतिमाप्नोति मिथुनस्वांशके बुधे ।।८८।।
ऐश्वर्य धनलाभं च पुत्रपत्नीसमागमम् ।। मनः प्रीतिमवाप्नोति कुलीरस्वांशके शशी ।।८९।।
नृपाद्भयं शत्रुभयं भृगेभ्यश्च महद्भयम् ।। ज्वरव्याधिश्च दाहश्च कुलीरस्वांशके रवौ ।।९०।।
पुत्रलाभं बंधुलाभं रत्नविद्यार्थमेव च ।। कुलीरस्वांशके देवि बुधशुक्रसमागमे ।।९१।।
विषशस्त्रमृतिं घोरां ज्वरदाहसमुद्भवाम् ।। सर्वदुःखमवाप्नोति कुलीरस्वांशके कुजे ।।९२।।

(मिथुन राशि दशा का फल-शुक्र के अन्तर दशा में मोती आदि रत्नों की प्राप्ति, स्त्री, वस्त्र, भूषण प्राप्त होते हैं।।८४।। मिथुनान्तर में मंगल की राशि दशा हो तो पिता माता को भय, ज्वर, घाव तथा यात्रा का योग होता है।।८५।। गुरु हो तो विद्यालाभ, धन लाभ, महान् वैभव तथा सवसे प्रेम होता है।।८६।। मिथुन के स्वीय अंश में शनि हो तो यात्रा, महाव्याधि, मृत्यु, धननाश तथा बंधुनाश होता है।।८७।। मिथुन में स्वांश में बुध हो तो वस्त्रलाभ, पुत्रलाभ, तथा विद्यालाभ और मित्रों से प्रीति होती है।।८८।। यदि चन्द्रमा स्वांश में हो तो ऐश्वर्य धनलाभ तथा स्त्री पुत्र से मिलाप और मन की प्रसन्नता होती है।।८९।। (अब कर्क दशा फल कहते हैं) कर्क राशि दशा में सूर्यांश हो तो राजभय, शत्रु तथा पशु से भय, ज्वर, व्याधि तथा दाह होता है।।९०।। तथा उसमें बुध या शुक्र के अंश की दशा हो तो पुत्र, विद्या, बन्धु, रत्न, धन का लाभ होता है।।९१।। यदि मंगल स्वांश में हो तो विष या शस्त्र से मृत्यु तथा घोर ज्वरदाह तथा सर्वप्रकार दुःख होता है।।९२।।

विभवस्यातिलाभं च धनलाभं तथैव च ।। नृपप्रसादमाप्नोति कुलीरस्वांशके गुरौ ।।९३।।
वातव्याधिश्च निर्घातमसूराविषदंशकम् ।। सर्वक्लेशमवाप्नोति कुलीरस्वांशके शनौ ।।९४।।
ज्वरपित्तविनाशं च शस्त्रक्षतविषूचिकाः ।। मुखरोगमवाप्नोति मृगेंद्रस्वांशके कुजे ।।९५।।
वस्त्राभरणविद्याश्च सुतस्त्रीलाभमेव च ।। मृगेंद्रस्वांशके देवि भार्गवे च बुधागमे ।।९६।।
आरुढपतनं चैव देशत्यागं महद्भयम् ।। महाधनविघातं च सिंहस्वांशगतः शशी ।।९७।।
महाशत्रुभयं चैव ज्वरश्च व्याधिरेव च ।। अज्ञानं मरणं राज्ञो मृगेंद्रस्वांशगे च वै ।।९८।।
धनधान्यमहालाभं प्रसादं द्विजदेवयोः ।। विद्यालाभमवाप्नोति मृगेन्द्रस्वांशगे गुरौ ।।९९।।
प्रयाणं च ज्वरं चैव क्षुद्भवं वैक्लवं तथा ।। व्याधिदुःखमवाप्नोति कन्यास्वांशगते शनौ।।१००।।
नृपप्रसादनं लाभमैश्वर्यं बंधुसंभवम् ।। विद्यालाभमवाप्नोति कन्या स्वांशगते गुरौ ।।१०१।। प्रयाणं च ज्वरं चैव मसूरीवह्निना भयम् ।। शस्त्रक्षतं च मरणं कन्यास्वांशगते कुजे ।।२।।

कर्क के अपने अंश में गुरु हो तो अति विभव लाभ धनलाभ तथा राजमैत्री प्राप्त होती है।।९३।। इसी प्रकार शनि हो तो वातव्याधि, तथा घात एवं मसूर (जंगली पशु) का विषयुक्त दंशन तथा अन्य अनेक क्लेश प्राप्त होते हैं।।९४।। (अब सिंह राशि के अन्तर कहते हैं) सिंहदशा में कुजान्तर में ज्वर, पित्त, रोग, शस्त्राघात, हैजा तथा मुख के रोग होते हैं।।९५।। शुक्र तथा बुध में सुन्दर वस्त्र, भूषण, विद्या, पुत्र, स्त्री का लाभ होता है।।९६।। सिंह की दशा में चन्द्र हो तो उन्नत अवस्था से पतन, देशत्याग, महाभय, विशेष धनहानि होती है।।९७।। महाशत्रु का भय ज्वर तथा व्याधि, अज्ञान और मृत्यु होती है।।९८।। (सूर्य से उपर्युक्त फल जानना) सिंह राशि की अन्तर दशा में गुरु अपने अंश में हो तो धन सम्पत्ति का लाभ द्विज, देवता की कृपा तथा विद्या लाभ होता है।।९९।। (कन्या राशि दशा में अन्तरदशा फल) शनि स्वांश में हो तो यात्रा, ज्वर, भूख प्यास से कष्ट तथा रोग दुःख प्राप्त होता है।।१००।। स्वांश में गुरु हो तो राजकृपा, लाभ, ऐश्वर्य, बन्धु प्राप्ति तथा विद्या का लाभ होता है।।१०१।। मंगल स्वांश में हो तो व्यर्थ की यात्रा, ज्वर, मसूरी रोग, अग्नि भय, शस्त्र से घाव तथा मृत्यु होती है।।१०२।।

भृत्यपुत्रार्थलाभं च वस्त्राभरणमेव च ।। शुक्रेन्दुसुतचंद्राणां कन्यास्वांशगते फलम् ।।३।। प्रयाणं च ज्वरश्चैव पुत्रहानिस्तथैव च ।। शस्त्रघातेन मरणं कन्या स्वांशगते रवौ ।।४।। स्त्रीलाभं धनलाभं च पुत्रलाभं तथैव च ।। वस्त्राभरणलाभं च तुलास्वांशगते भृगौ ।।५।। पिता सुहृद्धनं चैव शिरोरोगं ज्वरं तथा ।। शस्त्राग्निक्षतघातं च तुलास्वांशगते कुजे ।।६।। धनं रत्नं महालाभं धर्मं चेष्टा नृपावहम् ।। सर्वसंपत्समृद्धिश्च तुलास्वांशगंते गुरौ ।।७।। प्रयाणं च महाव्याधि मेवं क्षेत्रभयं तथा ।। शत्रुबाधा महादुःखं तुलास्वांशगते शनौ ।।८।। पुत्रलाभं धनं स्त्रीणां लाभं चैव मनः प्रियम् ।। सौभाग्यं बंधुलाभं च तुलास्वांशगते बुधे ।।९।। व्याधिनाशं महत्सौख्यं नानासर्वार्थसिद्धिदम् ।। भृगुसौम्यशशांकानां वृश्चिकस्वांशगे फलम् ।।११०।।

शुक्र, बुध तथा चन्द्रमा स्वांश में हों, तो स्त्रीपुत्र, नौकर आदि की प्राप्ति तथा वस्त्रभूषण का लाभ होता है।।१०३।। सूर्य में यात्रा, ज्वर, पुत्रहानि, शस्त्राघात होता है।।१०४।। (तुला राशि दशा के अन्तर) स्वांश में शुक्र हो तो स्त्री, पुत्र, धन, वस्त्र, सम्पत्ति का लाभ होता है।।१०५।। मंगल हो तो पिता, मित्र, धन की हानि, सिर दर्द, बुखार, शस्त्र से आघात तथा अग्नि का भय होता है।।१०६।। गुरु स्वांश में हो तो धन, रत्न, धर्म, सर्व सम्पत्ति तथा राजकृपा का लाभ होता है।।१०७।। शनि स्वांश में हो तो यात्रा, महाव्याधि, शत्रुबाधा तथा हानि होती है।।१०८।। बुध स्वांश में हो तो स्त्रीपुत्र, धनलाभ, इच्छित वस्तु की प्राप्ति, सौभागय और बन्धु लाभ होता है।।१०९।। बुध, शुक्र, चन्द्रमा स्वांश में हों तो व्याधि का नाश, महान् सुख, सम्पूर्ण अर्थ की सिद्धि होती है।।११०।।

शत्रुक्षोभं भयं व्याधिमर्थनाशं पितुर्भयम् ।। मृगाद्भयमवाप्नोति वृश्चिकस्वांशगे रवौ ।।११।। वातपित्तभयं चैव मसूरीव्याधिमेव च ।। अग्निशस्त्रादिभीतिं च वृश्चिकस्वांशगे कुजे ।।१२।। धनं रत्नं च धान्यं च देवब्राह्मणपूजनम् ।। राजप्रसादमाप्नोति वृश्चिकस्वांशगे गुरौ ।।१३।।

धनबंधुविनाशश्च मनोबंधस्तथाकुलम् ॥ शत्रुबाधा महाव्याधिर्वृश्चिकस्वांशगे शनौ ॥१४॥
अतिदाहं ज्वरं छर्दिर्मुखरोगं च कष्टताम् ॥ शरीरक्लेशमाप्नोति चापस्वांशगते कुजे ॥१५॥
श्रीविद्यानां च सौभाग्यं शत्रुनाशं नृपाद्भयम् ॥ भार्गवेंदुजचंद्राणां चापस्वांशगते फलम् ॥१६॥
स्त्रीनाशं वित्तनाशं च कलहं च नृपाद्भयम् ॥ प्रयाणं समवाप्नोति चापस्वांशगते रवौ ॥१७॥
दानधर्मतपोलाभं राजपूजनमेव च ॥ स्त्रीलाभं धनलाभं च चापस्वांशगते गुरौ ॥१८॥
द्विजदेवनृपात्कोपं बंधुभिश्च विनाशनम्॥देशत्यागमवाप्नोति मृगस्वांशगते शनौ॥१९॥

(वृश्चिक राशि दशा के अन्तर फल)-सूर्य में शत्रु से क्षोभ, भय, व्याधि, धननाश, पिता से भय होता है। एवं पशु से क्षति होती है॥१११॥ मंगल के अंश में वातपित्त की बीमारी, शीतला की बीमारी, अग्नि तथा शस्त्र से भय होता है॥११२॥ गुरु के अंश में धनसम्पत्ति रत्न की प्राप्ति, देव ब्राह्मण पूजा तथा राजकृपा प्राप्त होती है॥११३॥ शनि के अंश में धन, बन्धु का नाश, चिन्ता व्याकुलता, शत्रुबाधा, महाव्याधि होती है॥११४॥ मंगल के अंश में दाह, ज्वर, वमन, मुख रोग, दर्द और क्लेश होता है॥११५॥ बुध, शुक्र तथा चन्द्रमा के अंश में धन, विद्या, सम्पत्ति प्राप्त होती है। शत्रु नाश तथा राजभय होता है॥११६॥ (धन राशि दशा के अन्तर फल) सूर्य के अंश में स्त्रीनाश, धन हानि, कलह, राजभय तथा यात्रा होती है॥११७॥ गुरु के अंश में दान, धर्म, तप, स्त्रीधन का लाभ तथा राज सन्मान होता है॥११८॥ (मकर राशि दशा के अन्तर फल) शनि के अंश में देव, ब्राह्मण, राजा का कोप, बन्धुवों से नाश तथा देशत्याग होता है॥११९॥

देवार्चनं तपो ध्यानं द्विजपूजादिसंभवम् ॥ भार्गवज्ञेंदुजीवानां मृगस्वांशगते फलम् ॥१२०॥
शिरोरोगं ज्वरं चैव करपादगतक्षतम् ॥ रक्तपित्तातिसारांश्च मृगस्वांशगते कुजे ॥२१॥
बंधुपुत्रपितुर्नाशं ज्वररोगसमाश्रयम् ॥ नृपशत्रुभयं चैव मृगस्वांशगते शनौ ॥२२॥
नानाविद्यार्थलाभं च पुत्रस्त्रीमित्रसंभवम् ॥ ऐश्वर्यं धनलाभं च घटस्वांशगते भृगौ ॥२३॥
ज्वराग्निचोरघातं च शत्रूणां च महद्भयम् ॥ मनोदुःखमवाप्नोति घटस्वांशगते कुजे ॥२४॥
दुःखव्याधिहरं चैव देवब्राह्मणपूजनम् ॥ मनःप्रीतिमवाप्नोति घटस्वांशगते गुरौ ॥२५॥
त्रिदोषकुपितं चैव कलहं देशविभ्रमम् ॥ क्षयव्याधिमवाप्नोति घटस्वांशगते शनौ ॥२६॥
पुत्रमित्रधनस्त्रीणां लाभं चैव मनः प्रियम्॥ सौभाग्यं वस्त्रलाभं च घटस्वांशगते बुधे॥२७॥

शुक्र, बुध, चन्द्र, बृहस्पति के अंशों में देवार्चन, तप, ध्यान, द्विजपूजा आदि होता है॥१२०॥ मंगल के अंश में सिरदर्द ज्वर, हाथ पैर में घाव, रक्त पित्त, अतिसार की बीमारी होती है॥१२१॥ शनि के अंश में बन्धु, पुत्र, पिता की हानि, ज्वर, राजा तथा शत्रु से भय होता है॥१२२॥ (कुम्भ राशि दशा के अन्तर फल) शुक्र के अंश में अनेक विद्या तथा धन लाभ, स्त्रीपुत्र, मित्र का सुख तथा ऐश्वर्य होता है॥१२३॥ मंगल के अंश में ज्वर अग्नि, चोर से हानि, शत्रु से भय, मन में दुःख होता है॥१२४॥ गुरु के अंश में दुःख, व्याधि का नाश, देव ब्राह्मण की पूजा, मन में सन्तोष होता है॥१२५॥ शनि के अंश में सन्निपात, कलह, देशयात्रा,

क्षय रोग होता है।।१२६।। बुध के अंश में पुत्र, मित्र, धन, स्त्री का लाभ, वस्त्र प्राप्ति, मन में सन्तोष और सौभाग्य होता हैं।।१२७।।

स्त्रीविद्यालाभमाप्नोति ह्याश्रितव्याधिनाशनम् ।। महापीडामवाप्नोति मीनस्वांशगतः शशी ।।२८।। कलहं चौरभीतिं च बंधुभिः क्षयकारणम् ।। स्थानभ्रंशमवाप्नोति मीनस्वांशगते रवौ ।।२९।। शत्रुनाशं च विजयं नृपगोभूसुतागमम् ।। रत्नलाभं च मीने च स्वांशगे बुधशुक्रयोः ।।१३०।। विवादं पित्तरोगं च जंतोर्जारणमारणम् ।। शत्रुक्षयमवाप्नोति मीनस्वांशगते कुजे ।।३१।। धनधान्यकलत्राणि लभते राजपूजनम् ।। वस्त्राभरणलाभं च मीनस्वांशगते गुरौ ।।३२।। ऐश्वर्यस्य प्रणाशश्च वेश्यादीनामुपद्रवैः ।। देशत्यागो दरिद्रं च मीने स्वांशगते शनौ ।।३३।। एवं यथाक्रमेणैव विज्ञेयं स्वांशगते फलम् ।। वामर्क्षेप्येवमेवं च फलं तत्रैव योजयेत् ।।३४।। दशाफलमहं वक्ष्ये धर्मकर्मकृतं पुरा ।। तत्सर्वं प्राणिभिर्नित्यं प्राप्यते नात्र संशयः ।।३५।। सुहृदंतर्दशा भव्या विरुद्धा शत्रुसंभवा ।। मध्यमा मध्यखेटस्य दशादीनामिदं विदुः ।।१३६।।

चन्द्रमा के अंश में स्त्री, विद्या लाभ, आश्रित मनुष्य की व्याधि का नाश तथा पीड़ा होती है।।१२८।। (मीन राशि दशा के अन्तरफल) सूर्य के अंश में कलह, चोर भय, बन्धुओं से हानि, स्थान नाश होता है।।१२९।। बुध, शुक्र के अंश में शत्रु नाश, विजय, राजा, गौ, ब्राह्मण की कृपा तथा मिलाप एवं रत्न लाभ होता है।।१३०।। मंगल के अंश में विवाद, पित्तरोग, सीसाधातु का भस्म करना, शत्रु क्षय आदि होते हैं।।१३१।। गुरु के अंश में धन सम्पत्ति, स्त्री का लाभ, राजपूजा, वस्त्राभरण का लाभ होता है।।१३२।। शनि के अंश में वेश्या संग से समस्त ऐश्वर्य का नाश, देशत्याग, दरिद्र होता है।।१३३।। इस प्रकार क्रम से ग्रहों का फल सव्य मार्ग का कहा गया है। इन्हीं फलों को अप-सव्य मार्ग में भी समझना चाहिए।।१३४।। मनुष्यों के पूर्व जन्मकृत धर्म, कर्म के फल से इस जन्म में जो सुख दुःख प्राप्त होते हैं, वे सब इस दशा के रूप में प्राप्त होते हैं यह निःसन्देह है।।१३५।। मित्रग्रह की अन्तरदशा शुभ, शत्रुग्रह की अशुभ, समग्रह की मध्यम समझना चाहिए।।१३६।।

अथ नवांशफलमाह

मेषे तु रत्नपीडा च वृषभे धान्यवर्द्धनम् ।। मिथुने ज्ञानसंपन्नश्चंद्रे धनपतिर्भवेत् ।।१३७।। सूर्यर्क्षे शत्रुबाधा च कन्यास्त्रीणां च नाशनम् ।। तौलिकें राजमंत्रित्वं वृश्चिके मरणं भवेत् ।।३८।। अर्थलाभो भवेच्चापे मेषस्य नवभागके ।। मकरे पापकर्माणि कुंभे वाणिज्यमेव च ।।३९।। मीने सर्वार्थसिद्धिश्च वृश्चिकेष्वग्नितो भयम् ।। तौलिके राजपूज्यश्च कन्यायां शत्रुवर्धनम् ।।१४०।। शशिभे दारसंबाधा सिंहे च त्वक्षिरोगकृत् ।। मिथुने वृक्षबाधा स्याद्वृषभे च नवांशके ।।४१।। वृषभे अर्थलाभं च मेषे तु ज्वररोगकृत् ।। मिथुने मातुलप्रीतिः कुंभे शत्रुप्रबर्द्धनम् ।।४२।। मृगे चौरस्य संबाधा धनुषि शस्त्रबर्धनम् ।। मेषे तु शस्त्रसंबंधो वृषभे कलहप्रियः ।।४३।। मिथुने सुखमाप्नोति मिथुनस्य नवांशके ।। कर्कटे संकटप्राप्तिः सिंहे राजप्रकोपकृत् ।।४४।।

नवांश फल

(इन पूर्वोक्त राशि दशाओं में प्रत्येक अन्तर में जो राशि होगी, केवल उस राशि के

अनुसार फल कहा जाता है।) मेष अंश में रत्नपीड़ा। वृष में धान्य वृद्धि। मिथुन में ज्ञान। कर्क में धनपति होता है।।१३७।। सिंह में शत्रु बाधा। कन्या में स्त्रीनाश। तुलामें राजमंत्री। वृश्चिक में मृत्यु हो।।३८।। धनु के अंश में धनलाभ। ये मेष के नौ अंश की राशियों के फल हैं।।३९।। (वृषराशि के अंतर) मकर में पापकर्म। कुभं में व्यापार।।३९।। मीन में सर्वसिद्धि। वृश्चिक में अग्नि भय। तुला में राजपूज्यता। कन्या में शत्रुभय।।१४०।। कर्क में स्त्री से कलह। सिंह में नेत्ररोग। मिथुन में वृक्ष से हानि। ये वृषराशि के ९ नवांश राशि का फल है।।४१।। (मिथुनान्तर फल) वृष में अर्थलाभ। मेष में ज्वर। मिथुन में मामा का प्रेम। कुम्भ में शत्रुभय।।४२।। मकर में चोर भय। धन में शस्त्रवृद्धि। मेष में शस्त्र योग। वृष में कलह।।४३।। मिथुन में सुख होता है।। ये मिथुनांश दशा के ९ नवांशराशि का फल है। कर्क में संकट। सिंह में राजकोप।।४४।।

कन्यायां भ्रातृपूजा च तौलिके प्रियकृन्नरः ।। वृश्चिके पितृबाधा स्यात्कर्कटस्य नवांशके ।।४५।। वृश्चिके कलहः पीडा तौलिके ह्यधिकं फलम् ।। कन्यायामतिलाभश्च शशांके मृगबाधिका ।।४६।। सिंहे च पुत्रलाभश्च मिथुने शत्रुवर्द्धनम् ।। मीने तु दीर्घयात्रा स्यात्सिंहस्य नवभागके ।।४७।। कुंभे तु धनलाभश्च मकरे द्रव्यलाभकृत् ।। धनुषि भ्रातृसंसर्गो मेषे मातृविवर्द्धनम् ।।४८।। वृषभे पुत्रवृद्धिः स्यान्मिथुने शत्रुवर्द्धनम् ।। शशिभे तु स्त्रियां प्रीतिः सिंहे व्याधिविवर्द्धनम् ।।४९।। कन्यायां पुत्रवृद्धिः स्यात्कन्यायां नवमांशके ।। तुलायामर्थलाभश्च वृश्चिके भ्रातृवर्द्धनम् ।।१५०।। चापे च तातसौख्यं च मृगे मातृविरोधिता ।। अलौ जायाविरोधं च तुले च जलबाधताम् ।।५१।। कन्यावृद्धिकरं विंद्यात्तुलायां नवभागके ।। कर्कटे ह्यर्थनाशश्च सिंहे राजविरोधिता ।।५२।।

कन्या में भ्रातृपूजा। तुला में सुख। वृश्चिक में पितृबाधा होती है।।४५।। वृश्चिक में कलह पीडा। तुला में अधिक फल। कन्या में अतिलाभ। कर्क में पशु से हानि।।४६।। सिंह में पुत्रलाभ। मिथुन में शत्रुवृद्धि। मीन में दीर्घ यात्रा। सिंह राशि के नवांश का फल है।।४७।। कुंभ में धनलाभ। मकर में द्रव्य लाभ। धनु में भ्रातृ संयोग। मेष में मातृकुल में वृद्धि।।४८।। वृष में पुत्रवृद्धि। मिथुन में शत्रुवृद्धि। कर्क में स्त्री से प्रेम। सिंह में व्याधिवृद्धि।।४९।। कन्या में पुत्रवृद्धि। ये कन्या नवांश दशा के अंतर के फल हैं। तुला में धनलाभ। वृश्चिक में भ्राता वृद्धि।।१५०।। चाप (धनुराशि) में पितृ सुख। मकर में माता से विरोध। तुला में जलबाधा। कन्या में वृद्धि। ये तुला के नवांश का फल हुआ। कर्क में धननाश सिंह में राजविरोध।।५२।।

मिथुने भूमिलाभश्च वृषभे चार्थलाभकृत् ।। चापे तु धनलाभः स्याद्वृश्चिकस्य नवांशके ।।५३।। मेषे तु धनलाभः स्याद्वृषे भूमिविवर्द्धनम् ।। मिथुने सर्वसिद्धिः स्यात्कर्कटे सर्वसिद्धिकृत् ।।५४।। सिंहे तु पूर्ववृद्धिः स्यात्कन्यायां कलहो भवेत् ।। तौलिके चार्थलाभः स्याद्वृश्चिके रोगमाप्नुयात् ।।५५।। चापे तु सुतवृद्धिः स्याच्चापस्य नवमांशके ।। मकरे पुत्रलाभः स्यात्कुंभे धान्यविवर्द्धनम् ।।५६।। मीने कल्याणमाप्नोति वृश्चिके मृगबाधित्ता ।। तौलिके त्वर्थलाभश्च कन्यायां शत्रुवर्द्धनम् ।।५७।। शशिभे श्रियमाप्नोति सिंहे तु मृगबाधिता ।। मिथुने वृक्षबाधा च मृगस्य नवभागके ।।५८।। वृषभे त्वर्थलाभं च मेषस्य त्वक्षिरोगकृत् ।। मिथूने दीर्घयात्रा

स्यात्कुभे स्वस्य विवर्द्धनम् ।।५९।। मकरे सर्वसिद्धिः स्याच्चापे शत्रुविवर्द्धनम् ।। मेषे सौख्यविनाशश्च वृषभे मरणं भवेत् ।।१६०।।

मिथुन में भूमिलाभ। वृष में धनलाभ। धन में अर्थलाभ। ये वृश्चिक के नवांश के फल हैं।।५३।। मेष में धनलाभ। वृष में भूमिवृद्धि। मिथुन में सर्वसिद्धि। कर्क में भी सर्व सिद्धि।।५४।। सिंह में वृद्धि। कन्या में कलह। तुला में धनलाभ। वृश्चिक में रोग।।५५।। धन में सुतवृद्धि। ये धनराशि के नवांश के फल हैं। मकर में पुत्र वृद्धि। कुंभ में धान्यवृद्धि।।५६।। मीन में कल्याण। वृश्चिक में पशु से हानि होती है। तुला में धनलाभ। कन्या में शत्रुवृद्धि।।५७।। कर्क में धनाप्ति। सिंह में पशु से भय। मिथुन में वृक्ष से हानि। ये मकर नवांश का फल है।।५८।। वृष में धन लाभ। मेष में आंख की बीमारी। मिथुन में लंबी यात्रा। कुंभ में वृद्धि।।५९।। मकर में सर्व सिद्धि। धन में शत्रु वृद्धि। मेष में सुखनाश। वृष में मृत्यु।।१६०।।

युग्मे कल्याणमाप्नोति कुंभस्य नवमांशके ।। कर्कटे धनवृद्धिःस्यात्सिंहे तु राजपूजनम् ।।६१।। कन्यायामर्थलाभस्तु तुलायां लाभमाप्नुयात् ।। वृश्चिके ज्वरमाप्नोति चापे शत्रुविवर्द्धनम् ।।६२।। मृगे जायाविरोधं च कुंभे जलविरोधता ।। मीने तु सर्वसौभाग्यं मीनस्य नवभागके ।।६३।। दशाद्यंशक्रमेणैव ज्ञात्वा सर्वफलं वदेत् ।। क्रूरग्रहदशाकाले शांतिं कुर्याद्विचक्षणः ।।१६४।।

इति श्रीबृहत्पाराशरहोराशास्त्रे पूर्वखण्डे कालचक्रदशाफलकथनं नाम पञ्चचत्वारिंशोऽध्यायः ।।४५।।

मिथुन में कल्याण। ये कुंभराशि के नवांश का फल है। कर्क में धनवृद्धि। सिंह में राजा का आदर।।६१।। कन्या में धनलाभ। तुला में लाभ। वृश्चिक में ज्वर। धन में शत्रुवृद्धि होती है।।१६२।। मकर में भार्या से विरोध। कुंभ में जल से हानि। मीन में सर्व सौभाग्य। ये मीन राशि दशा के नवांश राशियों के फल हैं।।६३।। दशा के आदि के अंश के क्रम से फल कहना चाहिए। क्रूरग्रह की दशा के समय शान्ति करनी चाहिए।।१६४।।

इति श्रीबृ० पा० हो० शा० पू० भावप्रका० कालचक्रदशाफलकथनं नाम पञ्चचत्वारिंशोऽध्यायः ।।४५।।

अथ चरदशाफलमाह

अधुना संप्रवक्ष्यामि चरपर्यादशाफलम् ।। यस्य विज्ञानमात्रेण दैवज्ञो जायते द्विज ।।१।। नराणां सर्वमायुश्च सुखदुःखशुभाशुभम् ।। सर्ववेत्ता निर्विशंकं भवतीह न संशयः ।।२।। जन्मलग्नात्समारभ्य भानुभावे द्विजोत्तम ।। आयुर्वर्षप्रदा ज्ञेया फलं तस्या वदाम्यहम् ।।३।। यदा दशाप्रदो राशिस्तस्य रंध्रत्रिकोणगः पापखेटयुते विप्र सा दशा दुःखदायिका ।।४।। तृतीयषष्ठगे पापे जयादिः परिकीर्तिता ।। शुभं खेटयुते तत्र जायतेऽपि पराजयः ।।५।। लाभस्ते शुभपापश्च लाभो भवति निश्चितम् ।। यदा दशाप्रदो राशिः शुभखेटयुतो द्विज ।।६।। शुभक्षेत्रे

हि तद्राशिः शुभकर्ता दशाफलम् ॥ पापयुक्ते शुभक्षेमपूर्वयुक्तं सुखोत्तमे ॥७॥ पापर्क्षे शुभसंयुक्ते पूर्वसौख्यं ततो न्यसेत् ॥ पापक्षेत्रे पापयुक्ते सा दशा सर्वदुःखदा ॥८॥ शुभक्षेत्रदशा रात्रौ युक्ते पापशुभौ द्विज ॥९॥ पूर्वं कष्टं सुखं पश्चान्निर्विशंकं प्रजायते ॥ पापर्क्षे पापशुभगौ पूर्वसौख्यं समेन तत् ॥ शुभक्षेत्रे शुभं वाच्यं पापर्क्षे त्वशुभं फलम् ॥१०॥

चरपर्यादशाफल

अब चरपर्यादशा का फल कहते हैं। जिसके जानने से मनुष्य दैवज्ञ होता है॥१॥ मनुष्यों की सम्पूर्ण आयु के शुभाशुभ सुख दुःख आदि का निश्चय रूप से ज्ञाता होता है॥२॥ जन्म समय के लग्न से आरंभ करके १२ भावों में पूर्वोक्तानुसार आयु के वर्ष होते हैं, उनका फल कहते हैं॥३॥ जब जिस भाव का विचार करना है। तब देखना चाहिए कि-उस राशि से ५।८।९ स्थान में पापग्रह हों तो उस राशि की दशा दुःखदायक होती है॥४॥ विचार्य राशि से ३।६ स्थान में पापग्रह हो तो जय आदि शुभ फल और शुभग्रह युक्त हो तो पराजय होती है॥५॥ लाभ स्थान में शुभ और पाप दोनों प्रकार के ग्रह हों तो निश्चय लाभ होता है। हे द्विज! जब दशास्वामिनी राशि शुभ ग्रह युक्त हो॥६॥ तथा राशि भी शुभस्थान में हो तो दशा का फल शुभ होता है। राशि यदि पापग्रह युक्त शुभस्थान में हो तो कल्याणकारी है॥७॥ राशि पाप हो और उसमें शुभग्रह हो तो पहिले सुख होता है। पापराशि में पापग्रह हो तो वह दशा सर्वदुःख दाता है॥८॥ शुभक्षेत्र की दशा रात्रि की हो उसमें शुभपाप दोनों प्रकार के ग्रह हों तो॥९॥ पहिले कष्ट और पश्चात् सुख होता है। पापराशि में शुभ और पापग्रह हों तो प्रथम सौख्य होता है। राशि यदि शुभ हो तो शुभ और पाप हो तो अशुभ फल होता है॥१०॥

द्वितीये पंचमे सौम्ये राजप्रीतिर्जयो ध्रुवम् ॥ पापे तृतीयगे खेटे शत्रोर्निग्रहणं जयः ॥११॥
चतुर्थे तु शुभे सौख्यमारोग्यं त्वष्टमे शुभे ॥ धर्मवृद्धिर्गुरुजनात्सौख्यं च नवमे शुभे ॥१२॥
विपरीते विपर्यासो मिश्रेमिश्रं प्रकीर्तितम् ॥ पापे भोगे च पापादेर्देहपीडा मनोव्यथा ॥१३॥
सप्तमे पापयोगाभ्यां पापे दारार्तिरीरिता ॥ चतुर्थे स्थानहानिः स्यात्पंचमे पुत्रपीडनम् ॥१४॥
दशमे कीर्तिहानिः स्यान्नवमे पितृपीडनम् ॥ पापाद्व्ययगते पापे पीडा सर्वाप्यबाधिका ॥१५॥
उक्तस्थानगते सौम्ये ततः सौख्यं विनिर्दिशेत् ॥ केंद्रस्थानगते सौम्ये लाभशत्रुजयप्रदः ॥१६॥
जन्मकालग्रहः स्थित्या अगोचरग्रहैरपि ॥ विचारितैः प्रवक्तव्यं तत्तद्राशिदशाफलम् ॥१७॥
यस्यराशिः शुभाक्रांतो यस्य पश्चाच्छुभग्रहाः ॥ तद्दशा शुभदा प्रोक्ता विपरीते विपर्ययः ॥१८॥

द्वितीय, पंचम में सौम्यग्रह हों तो राजप्रीति और जय होती है। तृतीयभात्र में पापग्रह हो तो शत्रु की पराजय तथा बंधन और अपनी जय होती है॥११॥ चतुर्थ भाव में शुभग्रह हो तो सुख और अष्टभाव में शुभग्रह हो तो आरोग्यता होती है। और नवमभाव में शुभग्रह हो तो गुरु जनों से धर्मवृद्धि और सौख्य होता है॥१२॥ विपरीत परिस्थिति हो तो विपरीत कहना। पापराशि में पापग्रह हों तो देहपीड़ा और मनोव्यथा होती है॥१३॥ सप्तमभाव में पापग्रह के योग से या स्थिति से भार्या को कष्ट होता है। चतुर्थभाव में पापयोग हो तो स्थान हानि तथा पंचमभाव में पापयोग से पुत्र को पीड़ा होती है॥१४॥ दशमभाव में पापयोग से कीर्तिहानि

तथा नवम में पापयोग से पितृपीड़ा होती है। और यदि पापग्रह से ११वें भाव में भी पापग्रह हो तो अबाध पीड़ा होती है।।१५।। तथा ११ में सौम्य ग्रह हो तो सौख्य होता है। यदि केन्द्र स्थान में सौम्य ग्रह हो तो लाभ और शत्रु पर जय होती है।।१६।। इस प्रकार जन्मकाल की ग्रह स्थिति तथा वर्तमान ग्रहस्थिति का विचार करके ही तत् २ राशि दशा का फल कहना चाहिए।।१७।। जिस जातक की राशि ग्रह युक्त हो और राशि के पृष्ठभाग में भी शुभग्रह हो वह दशा शुभ फलदायिनी होती है और विपरीत होने से विपरीत फल होता है।।१८।।

त्रिकोणरंध्ररिष्फस्थैः शुभपापैः शुभाशुभम् ।। तद्दशा प्रदराशीषु वक्तव्यं फलमन्यथा ।।१९।। मेषकर्कतुलानक्रराशीनां च यथाक्रमम् ।। बाधास्थानादिसंप्रोक्ता कुंभगोसिंहवृश्चिकाः ।।२०।। पाकश्चरांतराशौ वा बाधास्थाने शुभोत्तरे ।। स्थिते सति महाशोको बंधनं व्ययनाशनम् ।।२१।। उच्चस्वर्क्षग्रहे तस्मिञ्छुभं सौख्यं धनागमः ।। तच्छून्यं चेदसौख्यं स्यात्तद्दशा न फलप्रदाः ।।२२।। बाधकव्ययषड्रंध्रे राहुयुक्ते महद्भयम् ।। प्रस्थानं बंधन-प्राप्ती राजपीडा रिपोर्भयम् ।।२३।। रव्याररराहुशनयो भुक्तिराशौ स्थिता यदि ।। तद्राशियुक्ताः पतनं राजकोपान्महद्भयम् ।।२४।। भुक्तिराशित्रिकोणे तु नीचखेटः स्थितो यदि ।। तद्राशौ वा युते नीचे पापे मृत्युभयं वदेत् ।।२५।। भुक्तिराशौ स्वतुंगस्थे त्रिकोणे वापि तुंगभे ।। यदा भुक्तिदशा प्राप्ता तदा सौख्यं लभेन्नरः।।२६।।नगरग्रामनाथत्वं पुत्रलाभं धनागमम् ।। कल्याणभौमभाग्यं च सेनापत्यं महोन्नतम् ।।२७।।

'५।८।९।१२' भावों में शुभ तथा पाप दोनों प्रकार के ग्रह हों तो मिश्रित फल होता है उस राशि दशा में मिश्रित फल कहना चाहिए।।१९।। मेष, कर्क, तुला, मकर राशियों के फल के प्रतिबंधक स्थान क्रम से कुंभ, वृष, सिंह, वृश्चिक हैं।।२०।। दशाप्रद राशि स्थिर द्विस्वभाव हो और उसके बाधा स्थान में पापग्रह हो तो महाक्लेश, बंधन, व्यय और नाश होता है।।२१।। तथा उस दशाराशि में उच्च का या स्वगृही ग्रह हो तो शुभ, सौख्य और धनलाभ होता है। यदि वह राशि ग्रह शून्य हो तो अशुभ या फलहीन होती है।।२२।। बाधक स्थान से ६।८।१२ राहुयुक्त हो तो महान् भय होता है। यात्रा बंधनप्राप्ति, राजा तथा शत्रु से पीड़ा और भय होता है।।२३।। सूर्य, मंगल, शनि, राहु ये ग्रह यदि दशा राशि में या अन्तरदशा राशि में हों तो पतन और राजकोप से भय होता है।।२४।। दशाराशि से त्रिकोण में यदि नीच राशिगत ग्रह हो अथवा उस राशि में ही नीचस्थ या पापग्रह हो तो उसके भोगकाल में मृत्यु का भय होता है।।२५।। भुक्तिराशि में उच्चस्थ ग्रह हो अथवा उससे त्रिकोणभाव में उच्चस्थ ग्रह हो तो उस दशा के भोगकाल में मनुष्य को बहुत सुख होता है।।२६।। वह मनुष्य नगर तथा ग्राम का स्वामी, धन, पुत्र प्राप्ति, सेनापति का बड़ा ऊँचा पद प्राप्त करता है।।२७।।

पाकेश्वरो जीवदृष्टः शुभराशिस्थितो यदि ।। तद्दशायधनप्राप्तिर्मंगलं पुत्रसंमतम् ।।२८।। सितासितागुराश्यश्च सूर्यस्य रिपुराशयः ।। कौर्पितौलिघटश्चेंदोर्भौमस्य रिपुराशयः ।।२९।। घटमीननृयुक्तौलिकन्या ज्ञस्य ततः परम् ।। कर्कमीनालिकुंभाश्च राशयो रिपुवत्स्मृताः ।।३०।। मेषसिंहधनुः कौर्पिकर्कटाः शनिशत्रवः ।। वृषतौलिनृयुक्कन्याराशयो रिपवोगुरोः ।।३१।। सिंहालिकर्कचापाश्च शुक्रस्य रिपुराशयः ।। एवं ग्रहांतरदशां चिंतयेत्कोविदो द्विजः

।।३२।। ये राजयोगदा ये च शुभमध्यगता ग्रहाः ।। यस्माद्वाऽपित्रिकोणाः स्युः शुभाशुभफलं ग्रहाः ।।३३।। तद्दशायां शुभं ब्रूयाद्राजयोगादिसंभवम् ।। शुभद्वयांतरगतः पापोपि शुभदः फलम् ।।३४।। गताशुभदशामध्यं दशासौम्यस्य शोभना ।। शुभं यस्य त्रिकोणस्य तद्दशापि शुभप्रदा ।।३५।। आरंभांतौ मित्रशुभराश्योर्यदि फलं शुभम् ।। प्रतिराश्यैककोब्दं स्याच्चालनीयं शुभं द्विज ।।३६।।

दशा स्वामी गुरुदृष्ट हो या शुभराशि स्थित हो तो उसकी दशा में धन प्राप्ति तथा पुत्रोत्पत्ति होती है।।२८।। (ग्रहों की शत्रुराशि) सूर्य की शत्रुराशि २।६।७।१०।११ हैं। चन्द्रमा की शत्रुराशि ७।८।११ तथा मंगल की शत्रु राशि।।२९।। ३।६।७।११।१२ हैं। इसके बाद बुध की शत्रु राशि ४।८।११।१२ हैं।।३०।। गुरु की शत्रुराशि २।७।३।६ हैं। और शनि की शत्रुराशि १।५।८।९।४ हैं।।३१।। तथा शुक्र की शत्रु राशि ४।५।८।९ हैं। इन शत्रु राशियों को ध्यान में रखते हुए अन्तरदशा का विचार करे।।३२।। जो ग्रह १-राजयोगकारक हैं तथा २-जो ग्रह शुभ ग्रहों के मध्य में है एवं ३-जिस ग्रह से त्रिकोण में शुभग्रह हों वह ग्रह शुभफल देता है।।३३।। १-राजयोग कारक ग्रह की दशा में राजयोग के अनुसार जो शुभ फल होना संभव है वह शुभ फल होता है। २-इसी प्रकार दो शुभग्रहों के मध्य में जो पापग्रह है वह भी शुभफलकारक ही है।।३४।। अशुभग्रह की दशा में शुभ ग्रह का अंतर शुभ होता है। ३-इसी प्रकार जिस ग्रहके त्रिकोणस्थ शुभग्रह हो उसकी दशा भी शुभफलदात्री होती है।।३५।। जिस पापदशाका आरंभ (दशा) और अंत (दशा) शुभ या मित्रराशिकी दशामें हो तो वह दशा भी शुभफल देनेवाली होती है। इसी प्रकार प्रति राशि एक २ वर्ष चलाना चाहिए।।३६।।

आरंभात्तत्त्रिकोणे तु सौम्ये तु शुभमावहेत् ।। शुभराशौ शुभारंभे दशा स्यादतिशोभना ।।३७।। शुभादिराशौ पापश्चेद्दशारंभे शुभौ द्विज ।। शुभारंभे का कथेति आरंभस्य शुभं भवेत् ।।३८।। नीचादौ तद्दशाद्यंतं भावं भाग्यविपर्ययः ।।३९।। यत्र स्थितो नीचखेटस्त्रिकोणे वाथ राशियः ।।४०।। तदा राशीश्वरे नीचे संबंधो नीचखेटकैः ।। भाग्यस्य विपरीतत्वं करोत्येव द्विजोत्तम ।।४१।। राहोः केतोश्च कुंभादि वृश्चिकादि चतुष्टयम् ।। कुंभे तत्र सभारंभस्तद्दशायां शुभं भवेत् ।।४२।। यद्दशायां शुभं ब्रूयात्सचेन्मकरसंस्थितः ।। यस्मिन्राशौ दशांतः स्यात्तस्मिन्दृष्टे युतेपि वा ।।४३।। शुक्रेण विधुना वा स्याद्राजकोपाद्धनक्षयः ।। दशांतश्चेदरिक्षेत्रे राहुदृष्टियुतेपि वा ।।४४।। इदं फलं शनेः पाके न विचिन्त्यं द्विजोत्तम ।। दशाप्रदे नक्रराशौ न विचिंत्यमिदं फलम् ।।४५।।

आरंभिक राशि से त्रिकोण में शुभग्रह हो तो शुभफल होता है। मूलदशा भी शुभ हो और अन्तरदशा भी शुभ हो तो अतिशुभ फल होता है।।३७।। शुभराशि में पापान्तर भी जब शुभ हो सकता है। तब शुभराशि में शुभान्तर के शुभ होने में तो कहना ही क्या है।।३८।। दशा के आदि तथा अन्त में नीच, शत्रुस्थ ग्रहयोग युक्त राशि का अन्तर हो तो भाग्य का विपर्यय (उलटा निकृष्ट होना) ही जानना ।।३९।। जिस राशि में अथवा जिस राशि के त्रिकोण

नीचस्थ ग्रह हो।।४०।। तथा जब दशाराशि का स्वामी नीच ग्रह हो, अथवा नीचग्रहों से सम्बन्ध हो तब हे द्विजोत्तम! भाग्यभाव की हानि ही करता है।।४१।। राहु तथा केतु के लिए क्रमशः कुंभादि चार तथा वृश्चिकादि चार राशियों में दशा का आरंभ हो तो दशा शुभ होती है।।४२।। जिस दशा को शुभ माना जाय वह दशा यदि मकर राशि की हो अथवा दशांत राशि यदि राहु केतु से दृष्ट या युक्त हो।।४३।। अथवा शुक्र या चन्द्रमा से युक्त या दृष्ट हो तो राजा के कोप से धन क्षयकारी दशा जानना। यही फल जहां शत्रुराशि में दशा का अंत होता हो अथवा राहु की दृष्टि से युक्त या दृष्ट हो तो भी जानना।।४४।। यह फल शनि की दशा में तथा मकर राशि दशा में नहीं देखना।।४५।।

राहोर्दशांते सर्वस्य नाशो मरणबंधने । देशान्निर्वासनं वा स्यात्कष्टं वा महदश्नुते ।।४६।।
तत्त्रिकोणगते पापे निश्चयाद्दुःखमादिशेत् ।।एवं शुभाशुभं सर्वं निश्चयेन वदेद्बुधः ।।४७।।
राह्वादिस्थितराशिः स्याद्दशाप्रदो भवेन्नरः ।। तत्र कालेपि पूर्वोक्तं चिंतनीयं प्रयत्नतः ।।४८।।
दशारंभो दशांतो वा मकरे चेत्तुशोभनम् ।। तस्मिन्नेव च राहुश्चेन्निरोधी द्रव्यनाशनः ।।४९।।
यत्र क्वापि च भे राहौ दशारंभे विनाशनम् ।। गृहभ्रंशः समुद्दिष्टो धने राहुधनीभृतः ।।५०।।
चंद्रशुक्रौ द्वादशे चेद्राजकोपो भवेद्ध्रुवम् ।। भौमकेतू तत्र यदि वधाग्नेर्महती व्यथा ।।५१।।
चंद्रशुक्रौ धनेविप्र यदि राजा प्रयच्छति ।। दशारंभेन्तरश्चाश्च द्वितीयस्थमिदं फलम् ।।५२।।
एवमर्गलफलार्थे च ब्रह्मदेवप्रदर्शितः ।। यस्य पापः शुभो वापि ग्रहस्तिष्ठेच्छुभार्गले ।।५३।। तेन दृष्टेक्षितं लग्नं प्राबल्यायोपकल्पते ।। यदि पश्येद्ग्रहस्तत्र विपरीतार्गलस्थितिः।।५४।। सोपि दृष्टस्थिते लग्ने विपरीते फलं भवेत् ।। तद्दृष्टेऽपि शुभं ब्रूयान्निर्विशंकं द्विजोत्तम।।५५।।

इति बृहत्पाराशरहोराशास्त्रे पूर्वखण्डे चरदशाफलकथनं नाम षट्चत्वारिंशोऽध्यायः ।।४६।।

राहु की दशा के अन्त में सर्वस्व का नाश तथा मरण एवं बंधन होता है। या देशत्याग अथवा महान् कष्ट होता है।।४६।। और राहु या दशाप्रद राशि से त्रिकोण स्थान में पापग्रह हो तो निश्चय ही दुःख होता है। इस प्रकार कही हुई रीति से सब योगायोगों का विचार करके निश्चित फल कहना चाहिए।।४७।। यदि दशाप्रद राशि राहु आदि पापग्रह युक्त हो तो उस दशा में भी पूर्वोक्त अशुभ फल होता है।।४८।। दशा का आरंभ और अन्त मकर राशि में हो तो शुभफल होता है। और उसी राशि में यदि राहु हो तो शुभफल का निरोध करके धननाश कारक होता है।।४९।। जिस राशि मे राहु हो उस राशि की दशा नाशकारक होती है। यदि राहु धन स्थान में हो तो धनी मनुष्य के भी घर का नाश करता है।।५०।। चन्द्र तथा शुक्र जिस राशि के १२ भाव में हो तो राजकोप होता है। यदि १२ स्थान में भौम और केतु हो तो अग्नि से मृत्यु या व्यथा होती है।।५१।। चन्द्रमा और शुक्र यदि धन राशि में हों तो राजा से धनलाभ होता है। दशा के आरंभ तथा अन्त में भी धनलाभ होता है।।५२।। जैसे स्थान आदि के द्वारा जो योग और फल दशाप्रद राशि के लिए कहे गये हैं, वे सब योग अर्गला योग के विचार में भी प्रयुक्त करना चाहिए। ऐसा ही प्रथम ब्रह्मा ने कहा है। जिस दशाप्रद राशि से

अर्गला में पाप या शुभ ग्रह हो॥५३॥ उस ग्रह से यदि लग्न दृष्ट या युक्त हो तो योग की प्रबलता समझना। इसी प्रकार अर्गला के प्रतिबन्धक योग में भी यदि कोई ग्रह की दृष्टि हो तो ॥५४॥ वह योग भी दृष्ट या युक्त लग्न के लिए विपरीत योग होने पर विपरीत फलकारक होता है॥ और शुभयोग यदि प्रतिबंधित नहीं हो तो शुभ फल निःसन्देह होता है॥५५॥

इति श्रीबृ० पा० हो० शा० पू० भावप्रका० चरदशाफलकथनं नाम षट्चत्वारिंशोऽध्यायः ॥४६॥

अथ दशावाहनमाह

अधुना संप्रवक्ष्यामिदशावाहनमुत्तमम् ॥ प्राणिनां च हितार्थाय कथयामि तवाग्रतः ॥१॥ गर्दभो घोटको हस्ती महिषो जम्बुसिंहकौ ॥ काको हंसो मयूरश्च नवैते नरवाहनाः ॥२॥ स्वकीयजन्मनक्षत्राद्‌गणयेलग्नभावधि ॥ नवभिस्तु हरेद्भागं शेषं तु राशिवाहनम् ॥३॥ दशाप्रवेशे खरवाहनश्च उत्पन्नभोगी जडतासमेतः ॥लज्जाविहीनो धनधान्यहीनः स्यान्मानवो वस्त्रविवर्जितश्च ॥४॥ चपलचंचलता बहुभक्षकः प्रकटबुद्धिसघोषचमूपतिः ॥ दृढतनुर्बहुकार्यकरः परस्तुरगयोर्यदि वाहनसंस्थितः ॥५॥

दशावाहन कथन

अब दशा वाहन का उत्तम प्रकरण कहते हैं, जिससे प्राणियों का हित हो॥१॥ गर्दभ, घोड़ा, हाथी, महिष, जम्बु (सियार) सिंह, काक (कौवा), हंस, मयूर ये नौ दशा के वाहन हैं॥२॥ अपने जन्म नक्षत्र से लग्नस्पष्ट के नक्षत्र तक गणना करके ९ का भाग देना। शेष रहे सो वाहन जानना॥३॥ दशाप्रवेश में यदि गर्दभ वाहन हो तो कमाई होने पर खानेवाला मूर्ख, लज्जाहीन, धनधान्यहीन, वस्त्रादि हीन दीन होता है॥४॥ यदि अश्व हो तो चपल, चंचल, बहुभक्षी, बुद्धिमान्, शब्दकारी, सेनापति तथा दृढशरीरवाला परम उद्यमी होता है॥५॥

नानाकार्यकृतो हि मूर्खजननो देवाधिपो वाहनः संतप्तो वहठानताशुभगतिः सेनापतिः शोभनः ॥६॥ सर्वं सौख्यकरः सुभूषणधरः स्याच्चंचलो दुष्टता पाकोयं यदि वाहनो गजपतेर्नानाकलाकौशलः ॥७॥ महिषयोर्बलबुद्धिबिहीनता जयमयं प्रबलाग्निभयातुरम् ॥ कटकयोः प्रबले बलसंयुतो महिषयोर्यदि वाहनता भवेत् ॥८॥ जंबुके बहुतरैव चंचला व्याधिदुःखपरिपीडितांगना ॥ क्लेशता रिपुजनाच्च पीडनं धान्यनाशमतिसंक्षयो भवेत् ॥९॥ दशाप्रवेशे यदि वाहनश्च सिंहो बलिष्ठो विविधैः प्रकारैः ॥ उत्पन्नभोगी रिपुनाशकारी स्याद्वाहने केसरिणां विशेषः ॥१०॥ काके वाहनसंस्थिते यदि दशा स्याच्चंचलो निर्भयो वासारो मलिनः कुवेषधरितो नीचैर्जनैः पूजितः ॥ स्थाने राजभयं तथारिपुभयं मानापमानं नरा दुष्टार्तिः कलहं कुचेष्टितनरः स्त्रीद्वेषकारी भवेत् ॥११॥ जनकलानिधिकेलिसमन्वितो द्विजपतेर्बहुजात्मसुखान्वितः ॥ सदशने मतिना प्रबलायिता सुकथिता खलुहंसपवाहनः ॥१२॥

मयुरवाहनतो बहुलं सुखं धृतिकलाकुशलोऽमलकेलिकृत् ।। मधुरवाक्ययुतो मधुरप्रियः सदसमेन नरस्य समन्वितः ।।१३।।

यदि जातक की दशा का वाहन हाथी हो तो अनेक कार्याकार्यकारी मूर्ख चिन्तित हठी किन्तु शुभगति तथा योग्य सेनापति सुन्दर सजीला।।६।। सुखकारी, चंचल एवं अनेक कला कौशल वाला होता है।।७।। यदि दशा का वाहन महिष हो तो जातक बुद्धिबल से हीन प्रबल अग्निभय से आतुर, दो लड़नेवाले सांडों की तरह लड़ाई में सबसे आगे रहता है।।८।। यदि सियार दशावाहन हो जो जातक अतिचंचल व्याधि दुःखपीड़ित स्त्रीवाला, क्लेशयुक्त तथा शत्रु से पीड़ित तथा धनधान्यहीन होता है।।९।। यदि सिंह दशावाहन हो तो जातक बलवान् तथा अनेक रीति से भोगों को प्राप्त करनेवाला, शत्रुहन्ता होता है।।१०।। यदि कौवा वाहन हो तो जातक चंचल निर्भय पर्यटनप्रिय मलिन कुवेशधारी नीचजनों में संगतिवाला तथा राज एवं शत्रुभययुक्त, मानापमान में समान, रोगी, कलह कामी, कुचेष्टाकारी तथा स्त्री का द्वेषी होता है।।११।। यदि हंस वाहन हो तो अतीव सुन्दर कलाप्रेमी, बहुत सन्तान सुखयुक्त सभा चतुर, प्रबल मतिमान् होता है।।१२।। मयूर वाहन हो तो बहुत सुखी, धैर्यवान्, कलाकुशल, क्रीड़ा प्रेमी, मधुरभाषी मधुरभोजन प्रिय होता है।।१३।।

अथ सुदर्शनचक्रमाह

विश्वचक्रं कालचक्रं दिव्यचक्रं सुदर्शनम् ।। विष्णोः करांबुजावासमीडे तज्ज्ञानमद्भुतम् ।।१४।।

पुनः समस्तज्योतिःशास्त्रतत्त्वकामधेनुरूपं सुदर्शनचक्रमाह

सुदर्शनं द्वादशारं जन्मभेंद्वर्कराशितः ।। केंद्रकोणाष्टगो राहुः पापार्त्यै च शुभो मुदे ।।१५।। तत्त्वाद्यैर्वर्षमासाद्यद्वचेकघस्रान्प्रवर्तयेत् ।। विरिष्फारिशुभैः पापैस्त्रिषडायेषु वै शुभम् ।।१६।। तं तं भावं प्रकल्प्यांगं तत्तत्तन्वादिजं फलम् ।। गुरूपदेशात्संवाच्यं भोजनं स्वप्नपूर्वकम् ।।१७।। भावेशादिद्वादशानां दशवर्षेषु कल्पयेत् ।। तदाद्यंतर्दशास्तद्वन्मासादौ तद्वलैः शुभाः ।।१८।। सुदर्शनं द्वादशारं वृत्तत्रयसमन्वितम् ।। पूर्ववृत्ते जन्मलग्नाद्भावाः खेचरसंयुताः ।।१९।। तदूर्ध्ववृत्ते चंद्राच्च भावाः खेटसमन्विताः ।। तदूर्ध्ववृत्ते सूर्याच्च भावा लेख्याः सखेचराः ।।२०।।

सुदर्शन चक्र

जो विश्व-संसार का चक्र समयफलसूचक है, देवता भी जिसे चाहें ऐसा यह सुदर्शन नामक चक्र के समान ज्योतिषशास्त्र का सारभूत चक्र है, अतः सर्वश्रेष्ठ होने से इसकी प्रशंसा करते हैं। भगवान् विष्णु के करकमल में रहनेवाले चक्र की वन्दना करते हैं।।१४।। समस्त ज्योतिषशास्त्र का तत्त्व कामधेनु के समान यह सुदर्शन चक्र है। १२ कोष्टक का चक्र बनावे। उसके (अंतर्बाह्यरूप से तीन विभाग करे) अन्तर के भाग में जन्मकुंडली, मध्य में चन्द्रकुण्डली, वाह्यचक्र में सूर्यकुण्डली लिखे। उसमें देखना कि केन्द्र, त्रिकोण तथा अष्टम भाव में राहु या पापग्रह हों तो दुःखदायी और शुभग्रह हों तो सुखदायक होते हैं।।१५।। प्रत्येक कोष्टक में प्रति कोष्टक १-१ वर्ष तथा मास एवं २।।-२।। दिन की आवृत्ति करे। छठे तथा बारहवें घर में शुभग्रह न हों और ६।३।११ में पापग्रह हों तो शुभ

है।।१६।। प्रत्येक भाव को तद्भावज फल विचारार्थ लग्न कल्पना करके उस उस भाव से उसके फल का निर्देश करे। गुरु के उपदेशानुसार प्रातःकाल से शयनकाल तक का फल कहंना चाहिए।।१७।। द्वादश भावों में प्रथम प्रत्येक भाव में १०-१० वर्ष की कल्पना करे। पश्चात् उनमें १०-१० मास की अन्तर्दशा जिस भाव की दशा होगी उसी भाव से आरंभ होगी।।१८।। यह सुदर्शन चक्र बारह कोष्टक का है। तीन वृत्त (घेरे) से युक्त है। पहले वृत्त में जन्म लग्न से १२ भाव लिखे और यथास्थान ग्रह लिखे।।१९।। उसके ऊपर के वृत्त में चन्द्रराशि में भाव और ग्रह लिखे। उसके ऊपर सूर्यराशि से भाव और ग्रह लिखे।।२०।।

वृत्तत्रयेऽपि ये खेटा यत्र राशो व्यवस्थिताः ।। ते तत्र संलेख्यास्तस्माद्भावान्निरीक्षयेत् ।।२१।। यद्यद्वृत्ते तु यद्भावात्केंद्रकोणाष्टगस्तमः ।। पापा वा यत्र बहवस्तत्तद्भावविनाशनम् ।।२२।। यत्र भावे सैंहिकेयोऽवश्यं तद्भावहानिदः ।। यस्माद्भावात्केंद्रकोणाष्टमे सौम्याः शुभप्रदाः ।।२३।। तदा तद्भाववृद्धिः स्यात्त्रिवृत्तेपि शुभा ग्रहाः ।। केंद्रादिस्थानगास्ते चेच्छुभाधिक्यफलप्रदाः ।।२४।। तथा पापखगास्तत्र पापारिष्टफलप्रदाः ।। शुभेन वीक्षिताः सौम्यं फलं तद्भावजं समम् ।।२५।।

इति श्रीबृहत्पाराशरहोराशास्त्रे चरदशाफलादि कथनं
नाम सप्तचत्वारिंशोऽध्यायः ।।४७।।

(पूर्वखण्डः समाप्तः)

तीनों वृत्तों में जो ग्रह जिस भाव में हो वहीं लिखे। पश्चात् देखे।।२१।। जिस जिस वृत्त में जिस जिस भाव से केन्द्र, त्रिकोण तथा अष्टमभाव में राहु हो या बहुत पापग्रह हों तो उस उस भाव का नाश होता है।।२२।। और जिस भाव में राहु हो उसका अवश्य ही नाश होता है। जिस भाव से केन्द्र, त्रिकोण तथा अष्टम में सौम्य ग्रह हों वह भाव श्रेष्ठ है।।२३।। तो उस भाव की वृद्धि होती है। तीनों वृत्तों में यदि शुभग्रह केन्द्र, त्रिकोण भाव में हों तो अधिक शुभ फलप्रद होते हैं।।२४।। यदि उन स्थानों में पापग्रह हों तो दुःख अरिष्ट फल देनेवाले होते हैं। और यदि वे पापग्रह शुभग्रहों से दृष्ट हों तो समान फल होता है।।२५।।

उदाहरण चक्र

सुदर्शन चक्र सम्बन्धी श्लोकों का तात्पर्यार्थ—

एक चक्र इस प्रकार बनाना चाहिए, जिसमें १२-१२ घरों के ३ चक्र हों जिसका चित्र इसमें दिखाया गया है। उसमें भीतर के १२ घरों में ग्रह सहित लग्नकुण्डली, बीच के १२ घरों में ग्रह सहित चन्द्र कुण्डली तथा ऊपरके १२ घरों सहित सूर्य कुण्डली लिखना।अब यह चक्र तैयार है। इसमें अपने शरीर के लिये लग्न से तथा अन्य विचार के लिये उन उन पदार्थों के भाव को लग्न कल्पना करके तत् तत् भावों से विचार करना चाहिए। यह ऊपर कहा जा चुका है कि केन्द्र, त्रिकोण तथा अष्टम भाव में राहु और पापग्रह अशुभ हैं। तथा शुभग्रह शुभ हैं। इस ग्रह स्थिति के विचार में स्वगृही, मित्रगृही, उच्च परमोच्चस्थ, मूल त्रिकोणस्थ, स्वनवांशस्थ तथा शुभ वर्ग आदि ग्रह से तत्तत् भाव का फल शुभ एवं नीच, परम नीच, शत्रु राशिस्थ. अस्त, शत्रु

नवांशस्थ, शत्रु वर्गस्थ, पापयुत अथवा दृष्ट ग्रह अशुभ फलदायक होता है। इस विचार में शुभ, पापग्रहों की दृष्टि का भी विचार करना चाहिए। प्रत्येक ग्रह की दृष्टि जितने पाद हो, शुभ और पाप की अलग अलग योग कर, शुभ और पापग्रहों की दृष्टि का अन्तर करके जो अधिक रहे उसके अनुसार शुभाशुभ फल कहना चाहिए।

इस चक्र में मनुष्य की पूर्णायु १२० वर्ष की संख्या को प्रथम १२ भागों में बांट कर चक्र के १-१ घरमें १०-१० वर्षकी कल्पना करे। प्रत्येक घरके वर्षों में उपर्युक्त ग्रह स्थिति के अनुसार शुभाशुभ फल का निर्णय करे तथा प्रत्येक १० वर्ष में अन्तरदशा रूप से १०-१० मास उस उस भाव से १२वें भाव तक कल्पना करे और ग्रह स्थिति के अनुसार फल का निर्णय करे। यह एक प्रकार है।

दूसरा प्रकार—चक्र के १२ भावों में जन्मलग्न से प्रत्येक भाव में १-१ वर्ष की कल्पना करे। इस प्रकार १० आवृत्ति होने से १२० वर्ष की संख्या पूरी होती है। इसकी अन्तरदशा प्रत्येक भाव के १-१ वर्ष के १२ भाग कल्पना करके १-१ मास १-१ भाव पर समझना चाहिए। इसका आरम्भ अपने उसी भाव से करना चाहिए कि जिसकी अन्तरदशा देखनी हो। इसी प्रकार १ मास के भी १२ भाग करने से २।।-२।। दिन होते हैं। उनका विचार भी १२ भावों पर पूर्ववत् प्रत्यन्तर दशा के रूप में करना चाहिए। इसी प्रकार सूक्ष्मान्तर १२।। घटिका और प्राणान्तर प्रायः १-१ घटिका का तत्तत् भाव पर कल्पना करके उपर्युक्त ग्रह योगानुसार वर्ष, मास, दिन, घटी तक का शुभाशुभ फल निर्णय कर सकते हैं। यह सुदर्शन चक्र सरल रूप से जातक का भूत, भविष्य तथा वर्तमान सुख दुःख निर्णय करने में अत्यन्त उपयोगी है। और ज्योतिर्विदों के लिये कामधेनु रूप है।

अथ राहुदृष्टिमाह

सुतमदननवांते पूर्णदृष्टिं तमस्य युगलदशमगेहे चार्धदृष्टिं वदंति।। सहजरिपुविपश्यन्पाददृष्टिं मुनींद्रा निजभवनमुपेतो लोचनांधः प्रदिष्टः ।।२६।।

राहु दृष्टि

राहु की दृष्टि पंचम, सप्तम, नवम में पूर्ण। २।१० में अर्ध दृष्टि। ३।६ में पाप दृष्टि। और अपने भाव में दृष्टि हीन होता है।।२६।।

अथ ग्रहाणामुदयवर्षाण्याह

आकृत्यो २२ जिन २४ संमिता गजकरा २८ नेत्राग्नयः ३२ षोडश १६ स्वत्वाः २४ न्यंगगुणा ३६ द्विवेद ४२ प्रमिताःसूर्यादिकानां समाः ।। यःखेटः स्वगृहे स्वतुंगभवने षड्वर्गशुद्धश्चयस्त-स्याब्दे हि नृणां भवेदतिसुखं भाग्योदयो निश्चितम्।।२७।।

ग्रहों के भाग्योदय वर्ष

सूर्यादि ग्रहों के ये वर्ष भाग्योदय के लिये नियत हैं।। २२,२४,२८,३२,१६,२४,३६ और ४२ हैं।। जो ग्रह अपने घर में उच्च स्थान में, षड्वर्ग में शुभ हो, उसी ग्रह के अनुसार उस जातक का भाग्योदय ऊपर कथित ग्रह के वर्ष में निश्चित जानना।।२७।।

इति श्रीबृहत्पाराशरह राशास्त्रे पूर्वखण्डे ज्योतिर्वित्प० श्रीरामनारायणात्मजताराचन्द्र-शास्त्रिविरचितायां भावप्रकाशिकाटीकायां सप्तचत्वारिंशोऽध्यायः ४७।।

समाप्तश्चायं पूर्वखण्डः ।। श्रीरस्तु ।।

अथ उत्तरखण्ड प्रारभ्यते

मैत्रेय उवाच—भगवन्सर्वमाख्यातं जातकं विस्तरेण मे ।। ससहस्रायुतग्रंथरशीत्यध्यायसंयुतैः ।।१।। संकरात्तत्फलानां तु ग्रहाणां गतिसंकरात् ।। नान्येन हीदृगस्येदमिति वक्तुमलं नराः ।।२।। कलौ युगे ततोऽल्पैव बुद्धिः पापोत्तरा नराः ।। अतो न चास्य प्रचयगमनं न प्रयोजनम् ।।३।। अत्र त्रेतायुगे केचिद्द्वापरे च कृते युगे ।। कुशाग्रमतयः सर्वे पुण्यभाजश्चिरायुषः ।।४।। अतोऽल्पबुद्धिगम्यं यच्छास्त्रमेतद्वदस्व मे।। लोकयात्रापरिज्ञानमायुषो निर्णयं तथा ।।५।।

उत्तरखण्ड प्रारंभ

मैत्रेयजी ने कहा-हे भगवन्! पूर्वभाग में आपने ८० अध्यायों के ११,००० श्लोकों से जातकशास्त्र का विस्तारपूर्वक वर्णन किया है।।१।। किन्तु ग्रहों की गति आदि का विचार अति कठिन होने से फलनिर्णय करना अति कठिन है।।२।। क्योंकि-फलनिर्णय के प्रकार अति विस्तृत और दुरूह है, अतः सरल सुबोध प्रक्रिया युक्त फलनिर्देश का प्रकार कहिये कि जिसके अनुसार कार्य करने से फलज्ञानरूप प्रयोजन सिद्ध हो।।३।। सत्ययुग, त्रेता, द्वापरयुगों में तो मनुष्य दीर्घायु परम मेधावी तथा पुण्यात्मा थे अतः वे इस गहन ग्रन्थ से फलनिर्देश करने में भी समर्थ थे।।४।। परन्तु इस कलियुग में तो (वैसे दीर्घायु और तीक्ष्ण बुद्धि सम्पन्न मनुष्य न होने से) सर्वसाधारण बोधगम्य सरल मार्ग का उपदेश करिये, जिससे मनुष्यों को सुख दुःख का ज्ञान हो और आयु के निर्णय का प्रकार भी विस्तार पूर्वक कहिये।।५।।

पराशर उवाच-साधु पृष्टं त्वया ब्रह्मन्वदामि तव सुव्रत ।। लोकयात्रापरिज्ञानमायुषो निर्णयं तथा ।।६।। संकरस्याविरोधं च शास्त्रस्यापि च सिद्धये ।। प्रयोजनस्य लोकानामुपकाराय तच्छृणु ।।७।। लग्नादिव्ययपर्यंता भावाः संज्ञानुरूपतः ।। फलदाः शुभसंदृष्टा युक्ता वा शोभना मताः ।।८।।पापदृष्टयुता भावाः कल्याणेतरदायकाः ।। नितरां शत्रुनीचस्थैर्न च मित्रोच्चगैश्च तैः ।।९।। एवं सामान्यतः प्रोक्तं होराविद्भिस्तु सूरिभिः ।। मयैतत्सकलं प्रोक्तं पूर्वाचार्यानुवर्तिना ।।१०।। आयुश्च लोकयात्राश्च शास्त्रेऽस्मिंस्तत्प्रयोजनम् ।। निश्चेतुं तन्न शक्नोति वसिष्ठो वा बृहस्पतिः ।।११।। किं पुनर्मनुजास्तत्र विशेषात्तु कलौ युगे ।। नष्टादिषु च नातीव द्रेष्काणादिफलेषु च ।।१२।।

पराशरजी ने कहा-हे मैत्रेय! आपने सुन्दर प्रश्न किया है, अब हम वह शास्त्र कहते हैं कि जिससे जातक का शुभाशुभ तथा आयु का ठीक ठीक ज्ञान हो।।६।। और तुमने जो यह कहा है कि-पूर्वभाग में वर्णित रीति से फलनिर्णय अतिकठिन हो गया है सो उसकी भी स्पष्टता के लिए तथा विरोध परिहार के लिए भी विशेषरूप से वर्णन करते हैं।।७।। इस शास्त्र में लग्न आदि १२ भाव ही फलादेश के मूल हैं। वे शुभग्रहयुक्त या दृष्ट हों तो शुभफल, अशुभ (पाप) ग्रहयुक्त या दृष्ट हों तो अशुभ फल देते हैं।।८।। उसमें भी शत्रु, नीच अस्त से युक्त दृष्ट में नेष्ट फल की अधिकता और मित्र, उच्च, स्वगृही आदि युक्त, दृष्ट में शुभ फल की अधिकता होती

है।।९।। जैसे पूर्वाचार्यों ने कहा है उसी प्रकार से हमने कहा है।।१०।। यह ज्यौतिष शास्त्र अति गम्भीर और दुर्बोध है, मनुष्यों का शुभाशुभ तथा आयुनिर्णय में महान् आचार्य भी असमर्थ हैं, साधारण मनुष्य तो कैसे समर्थ हो सकते हैं।।११।। और नष्ट वस्तु ज्ञान में तो द्रेष्काण, नवांश आदि के विचार द्वारा फल कहना तो अतिकठिन है।।१२।।

आचार्यस्य मुखादेतच्छास्त्रं तु शृणुयाद्बुधः ।। संप्रदायेन यः श्रांतश्चास्मिञ्च्छास्त्रे महामतिः ।।१३।। कर्मज्ञानविदा वेदो द्विधा यद्वत्तदाऽऽह्वये ।। होराशास्त्रं द्विधा प्रोक्तं सकीर्णनिश्चयादिति ।।१४।। प्रोक्तः संकीर्णभागस्तु निश्चयांशस्तु कथ्यते ।। यो वेत्ति सम्यगेतत्तु दैवज्ञः स उदाहृतः ।।१५।। भावदृष्टयादिषु प्रोक्तानर्थान्मिसम्यग्विचार्य च ।। समीचीनांस्तु संगृह्य विरुद्धांस्तु परित्यजेत् ।।१६।। आयुर्दायैः परं योगैः फलान्यष्टकवर्गतः ।। तन्वादीनां तु भावानां सूक्तैर्भावादिभिः फलैः ।।१७।। ज्ञात्वाऽऽदौ करणं स्थानं बिंदुरेखे च वर्गणाम् ।। क्रमादष्टकवर्गस्य पृथक्कृत्य फलं वदेत् ।।१८।।

अतः यह शास्त्र गुरुमुखद्वारा अध्ययन करके परिशीलन करने से उत्तरोत्तर ज्ञान विशद होगा।।१३।। यह शास्त्र वेद के समान ही है, जैसे वेद ज्ञान और कर्म का प्रतिपादक है उसी तरह यह शास्त्र भी १—'संकीर्ण' और २—'निश्चय' भेद से दो प्रकार का है।।१४।। उसमें संकीर्ण भाग पूर्वखण्ड में कहा जा चुका है और 'निश्चय' भाग अब कहते हैं।।१५।। जन्मलग्न आदि १२ भावों पर जो सप्तम आदि स्थानों मे पूर्णदृष्टि आदि दृष्टि कही गई है, उसका स्पष्ट करके शुभ दृष्टि में पापदृष्टि हीन करके शुभफल निर्णय करना।।१६।। पश्चात् प्राप्त शुभाशुभ के निर्णय के लिए प्रथम आयु का परिमाण देखना चाहिए (क्योंकि आयु ही नहीं होगी तो शुभाशुभ फल को भोगेगा ही कौन?) बाद शुभाशुभयोग और अष्टकवर्ग जन्य फल बलानुसार निश्चित करना।।१८।।

तनुस्वायुस्त्रिरिष्फेषु पंच कामे सुखेर्णवाः ।। अरौ भाग्ये त्रयः पुत्रे षट् करौ खे भवे च भूः ।।१९।। लग्नेंदुजीवशुक्रज्ञास्तनौ खेमरणेपिच ।। रविभौमार्किचंद्रार्या व्यये ज्ञेंदुसितार्यकाः ।।२०।। सुखे होरेंदुशुक्राश्च धर्मेकार्किकुजा अरौ ।। होंरज्ञार्येन्दवः कामे भवे दैत्येंद्रपूजितः ।।२१।। सहजेकार्किशुक्रार्यभौमाःखे गुरुभार्गवौ ।। सुतेकार्कीन्दुलग्नारशुक्राः स्युः करणं रवेः ।।२२।।

(अब 'अष्टक वर्ग' का फलाफल निर्णय करने के लिए सूर्यादि सात ग्रह और लग्न इनकी विन्दु तथा रेखा के स्थान सबके भिन्न भिन्न कहते हैं। इस प्रकरण में विन्दु की 'करण' संज्ञा है। और रेखा की 'स्थान' संज्ञा है) प्रथम सूर्य की करण संख्या कही जाती है। सूर्य से प्रथम, द्वितीय, तृतीय, अष्टम, द्वादश भाव में पांच पांच करण हैं। चतुर्थ, सप्तम में चार चार करण। तथा छः नौ में तीन २ करण। पंचममें छः करण। दशममें दो करण। एकादशमें एक करण होता है।।१९।। अब नाम कहते हैं। सूर्य से-प्रथम, द्वितीय, अष्टम में लग्न, चन्द्र, बुध, गुरु, शुक्र ये ५ करण देते हैं। चतुर्थ में चन्द्र, बुध, गुरु, शुक्र ये चार ग्रह करण देते हैं। नवम में-लग्न, चन्द्र, शुक्र ये तीन। छठे भाव में सूर्य, मंगल, शनि ये तीन करण देते हैं। सप्तम भाव में लग्न, चन्द्र, बुध,

गुरु ये चार करणदाता। तृतीय में सूर्य, मंगल, गुरु, शुक्र, शनि ये पांच ग्रह। दशम में गुरु, शुक्र ये दो पंचभाव में लग्न, सूर्य, चन्द्र, मंगल, शुक्र, शनि ये छः करण देनेवाले ग्रह हैं। बारहवें में सू० चं० मं० गु० श० ये ५ हैं। ग्यारहवें में शुक्र १ । यह सूर्य की करण संख्या तथा नाम हैं॥२०॥२१॥२२॥

भाग्यस्वयोश्च षड्वेश्म मृतिहोरासु पंच च ॥ मानदुश्चिक्ययोरेकः सुते वेदा अरिस्त्रियोः ॥२३॥ त्रयो व्ययेष्टावाये च शून्यं शीतकरस्य तु ॥ होरार्कारार्किभृगवोंगज्ञार्केन्द्वार्किभार्गवाः ॥२४॥ जीवोर्कार्कीन्दुलग्नाराहोरेंदुगुरुभास्करौ ॥ सितज्ञार्याः कुजतनुर्मंदास्ते सितशीतगुः ॥२५॥

चंद्रमा की करण संख्या—चन्द्रमा से २।९ में करणसंख्या छः है। १।४।८ भाव में पांच। ३।१० में १। पंचमभाव में ४,६।७ भाव में ३ हैं। १२ वें भाव में करण संख्या ८ हैं। तथा ११ भाव में करण संख्या नहीं है।।२३।। (करण नाम) करण देनेवालों के नाम-चन्द्रमा से प्रथम घर में लग्न, सूर्य, मंगल, शुक्र, शनि ये पांच हैं। दूसरे घर में लग्न, सू० चं०, बु०, शु० श० ये छः हैं। तीसरे में गुरु एक ही है। चौथे में लग्न सू० चं० मं० श० ये ५ हैं। पांचवे घर में लग्न सू०, चं० गु० ये ४ हैं। छठे घर में बु० बृ० शुक्र ये ३ हैं। सातवें घर में लग्न मं० श० ये ३ हैं। आठवें घर में लग्न चं०, शु०, मं०, श० ये ५ हैं। नवें घर में लग्न सू० मं० बु० गु० श० ये ६ हैं। दसवें घर में श० १ है। ग्यारहवें घर कोई नहीं तथा बारहवें घर में लग्न सहित सातों ग्रह करण देनेवाले हैं।।२४।।२५।।

होरार्कारार्किविज्जीवाः शनिः खं सकलाः क्रमात्॥ व्ययवेश्मसुतस्त्रीषु षट् सप्त धनधर्मयोः ॥२६॥ होरामृत्य्वोः.शरा वेदा विक्रमे खे त्रयः क्षते ॥ द्वौ भवे शून्यमेवं स्यात्करणं भूमिजस्य तु ॥२७॥ कुजस्यार्केंदुविज्जीवसिता लग्नशनी च ते ॥ सितारगुरुमंदाः स्युर्धर्मोक्तेषुकुजं विना ॥२८॥ चंद्रारगुरुशुक्रार्किलग्नानि कुजभास्करी ॥ ज्ञेंद्वर्कसितलग्नार्या एषु शुक्रं विना ततः ॥२९॥ विना शनिं सप्तधर्मे सितेन्दुज्ञा वियत्ततः ॥ अर्कार्किज्ञेंदुलग्नाराः करणं प्रोच्यते क्रमात् ॥३०॥

अथोदाहृणार्थं मंगलकरणकोष्ठकम्										
	भा०	सू०	चं०	मं०	बु०	गु०	शु०	श०	ल०	सं०
१	ल०	०	०		०	०	०			५
२	द्वि०	०	०		०	०	०	०	०	७
३	तृ०			०	०	०	०	०		४
४	च०	०	०		०	०	०		०	६
५	पं०		०	०		०	०	०	०	६
६	ष०			०				०		२
७	स०	०	०		०	०	०		०	६
८	अ०	०	०		०	०	०		०	५
९	न०	०	०	०	०	०	०		०	७
१०	द०		०		०		०			३
११	ए०									०
१२	द्वा०	०	०	०	०			०	०	६

मंगल की करण संख्या–मंगल से ४।५।७।१२ वें भाव में करण संख्या ६, २।९ में ७,१।८ में ५, ३ में ४, २ में ३, ६ में २, ११ में कोई नहीं।।

बिन्दु देनेवाले ग्रहों के नाम—मंगल से पहिले भाव में सू० चं० बु० बृ० शु० ये ५। दूसरे में सू० च०बु०बृ० शु० श० और लग्न ये ७। तीसरे घर में मं०गु०शु०श० ये ४। चौथे घर में सू० चं० बु० बृ० शु० और लग्न ये ६। पांचवे घर में चं० मं० गु० शु० श० लग्न ये ६। छठे घर में मं० श० २। सातवें घर में सू० चं० बु० बृ० शु० लग्न ये ६। आठवें घर में सू० चं० बु०, गु० लग्न ये ५। नवें घर में सू० चं० मं० बु० बृ० शु० लग्न ये ७। दसवें घर में चं० बु० शु० ये ३, ग्यारहवें में कोई नहीं। बारहवें घर में सू० चं० मं० बु० श० लग्न ये ६

तनुस्वगृहकर्मारिधर्मेष्वग्निर्मृतौ करौ ।। मातृस्त्रियो रसा लाभे शून्यं पुत्रेव्यये शराः ।।३१।।
बुधस्यार्केन्दुगुरवो गुरुसूर्यबुधाः क्रमात् ।। लग्नार्कारार्किचंद्रार्या ज्ञार्कार्या हि बुधस्य तु ।।३२।।
जीवारेन्द्वार्किलग्नानि शुक्रमंदधरासुताः ।। ज्ञेन्दुलग्नार्कशुक्रार्या ज्ञार्कौ जीवेन्दुलग्नकाः ।।३३।।

अथोदाहरणार्थं बुधकरणकोष्ठकम्

	भा०	सू०	चं०	मं०	बु०	गु०	शु०	श०	ल०	सं०
१	ल०	०	०			०				३
२	द्वि०	०			०	०				३
३	तृ०	०	०	०		०		०	०	६
४	चं	०			०	०				३
५	पं०		०	०		०		०	०	५
६	ष०			०			०	०		३
७	स०	०	०		०	०	०		०	६
८	अ०	०			०					२
९	न०		०			०				२
१०	द०	०				०	०			३
११	ए०									०
१२	द्वा०		०	०			०	०	०	५

अर्कार्यशुक्राः शून्यं च होरेन्द्वारार्किभार्गवाः ॥ रूपंधनाययोः खे द्वौ व्यये सप्तकृतेऽर्णवाः ॥३४॥

बुध की बिन्दु संख्या–बुध से १।२।४।६।९।१० वें घर में ३, ८ में २, ३।७ भाव में ६, ११ में कुछ नहीं। ५।१२ में ५ ॥ करण देनेवाले ग्रहों के नाम-बुध से पहिले घरमें सू० चं० गु० ३। दूसरे भाव में सू०बु०गु०३। तीसरे भाव में सू० चं० मं० गु० श० लग्न ये ६। चौथे भाव में सू० बु० गु० ये ३। पांचवें घर में चं० मं० गु० श० लग्न ये ५। छठे घरमें,मं०शु०श० ये ३। सातवें घर में, सू० चं० बु० बृ० श० लग्न ये ६। आठवें घर कोई नहीं। बारहवें में चं० मं० शु० श० लग्न ये ५॥
गुरु की करण संख्या–गुरु से २।११ में १, १० में २, १२ में ७, ६ में ४, ३।८ में ५, १।४।५।७।९ में ३-३ संख्या जानना॥३१-३४॥

मृतिविक्रमयोः पंच गुरोः शेषेषु वह्नयः ॥ शुक्रेन्दुमंदा लग्ने स्व आये मंदश्च विक्रमे ॥३५॥लग्नारेन्दु–ज्ञभृगवः सुतेकार्यकुजा गृहे ॥ शुक्रमंदेंदवो द्यूने बुधशुक्रशनैश्चराः ॥३६॥ जीवारार्केन्दवः शत्रौ मंदं सर्वे बिना व्यये ॥ कमणीन्दुशंनी धर्मे मंदारगुरवो मृतौ ॥३७॥

अथोदाहरणार्थं गुरुकरणकोष्ठकम्										
	भा०	सू०	चं०	मं०	बु०	गु०	शु०	श०	ल०	सं०
१	ल०		०				०	०		३
२	द्वि०							०		१
३	तृ०		०	०	०		०	०		५
४	च०		०				०	०		३
५	पं०	०		०		०				३
६	ष०		०	०		०	०			४
७	स०				०		०	०		३
८	अ०		०		०		०	०	०	५
९	न०	०								१
१०	द०	०	०	०	०				०	५
११	ए०									०
१२	द्वा०		०	०			०	०	०	५

गुरु से करण संख्या देनेवालों के नाम-गुरु से पहले घर में चं० शु० श० ये ३,२।११ में श० १,३ में लग्न चं० मं० बु० शु० ये ५,४ में चं० शु० श० ये ३.५ में सू० मं० गु० ये ३, ६में चं० मं० गु० शु० ये४,७वेंमें बु० शु० श० ये ३। आठवें में लग्न चं० बु० शु० श० ये ५। नवें में

मं० गु० श० ये३। दसवें में चं० श०२। ग्यारहवें में श० १। बारहवें में श० को छोड़ सब॥३५॥३६॥३७॥

लग्नार्किसितचंद्रज्ञाः करणं च गुरोरिदम् ॥ सुतायुर्विक्रमेष्वक्षितनुस्वव्ययखेष्विषुः ॥३८॥ अष्टौ स्त्रियामरौ षड्भूर्धर्मे मित्रेग्निखं भवे ॥ लग्ने स्वेऽर्कारविज्जीवमंदाः सर्वे च कामभे ॥३९॥ अर्कार्यौ विक्रमस्थाने सुतेऽर्कारौ शुभे रविः ॥ सुखेऽर्कबुधजीवाः स्युर्भौमजौ मृतिभे द्विज ॥४०॥ शुक्रार्केन्द्वार्किलग्नार्याः शत्रौ शून्यं भवे व्यये ॥ होरार्किबुधशुक्रार्यास्तन्वारज्ञेन्द्विनाश्च खे ॥४१॥

अथ उदाहरणार्थ शुक्रकरणकोष्ठकम्

	भा०	सू०	चं०	मं०	बु०	गु०	शु०	श०	ल०	सं०
१	ल०	०		०	०	०		०		५
२	द्वि०	०		०	०	०		०		५
३	तृ०	०				०				२
४	च०	०			०	०				३
५	पं०	०		०						२
६	ष०	०	०			०	०	०	०	६
७	स०	०	०	०	०	०	०	०	०	८
८	अ०			०	०					२
९	न०	०								१
१०	द०	०	०	०	०				०	५
११	ए०									०
१२	द्वा०				०	०	०	०	०	५

शुक्र की करण संख्या-शुक्र से ५।३ में २ दो करण हैं। १।२।१०।१२ घर में ५-५ करण हैं। सातवें में ८ हैं। तथा ६ में ६ करण हैं। नवें में १ तथा चौथे में ३ हैं। ११ वें में नहीं हैं।।३८।।

ग्रहों के नाम-१।२ घर में सू० मं० बु० गु० श० ये ५ हैं। ७ वें घर में सब हैं। तीसरे में सू० बु० ये दो हैं। ५वें में सू० मं० ये दो हैं। नवें में सू० बु० गु० ये ३ हैं। ८ में मं० बु० ये दो हैं। ६ में सू० चं० गु० शु० श० ल० ये ६ हैं। ११वें नहीं है। १२ वें घर में बु० गु० शु० श०ल० ये ५ हैं। १० में सू० चं० मं० बु० लग्न ये ५ हैं।।३९।।४०।।४१।।

स्वस्त्रीधर्मेषु सप्तांगं मृतिहोरागृहेषु च ।। आज्ञाभ्रातृव्यये वेदा रूपं शत्रौ सुते शराः ।।४२।। आये शून्यं शनेरेवं करणं प्रोच्यते बुधैः ।। गृहे तनौ च लग्नार्कौ स्वस्त्रियोश्च रविं विना ।।४३।। हित्वा धर्मे बुधं माने लग्नाररविचन्द्रजान् ।। ततो भ्रातरि जीवार्कबुधशुक्राः क्षते रविः ।।४४।। व्यये लग्नेंदुमंदार्काः सितार्केन्दुज्ञलग्नकाः ।। सुते मृतौ बुधार्कौ च हित्वाऽऽये खं शनेर्विदः ।।४५।।

अथोदाहरणार्थ शनिबिंदु कोष्ठकम्

	भा०	सू०	चं०	मं०	बु०	गु०	शु०	श०	ल०	सं०
१	ल०		०	०	०	०	०	०		६
२	द्वि०		०	०	०	०	०	०	०	७
३	तृ०	०			०	०	०			४
४	च०		०	०	०	०	०	०		६
५	पं०	०	०		०		०		०	५
६	ष०	०								१
७	स०		०	०	०	०	०	०	०	७
८	अ०		०	०		०	०	०	०	६
९	न०	०	०	०		०	०	०	०	७
१०	द०		०			०	०	०		४
११	ए०									०
१२	द्वा०	०	०					०	०	४

शनि की करण संख्या—शनि से २।७।९ में ७।७ हैं। तथा ३।१०।१२ में ४।४ हैं। ६ में १ तथा ५ में ५ हैं। तथा १।४।८ में ६ हैं। ११ में नहीं है॥४२॥ करणदाता के नाम—शनि से चौथे में १,४ में चं० मं० बु० गु० शु० श० ये छः हैं। २।७ घर में चं० मं० बु० गु० शु० श० ल० ये ७ हैं। १० में चं० गु० शु० श० ये ४ हैं। ३ में सू० बु० गु० शु० ये ४ हैं। ६ में सू० यह १ है। बारहवें में सू० चं० श० ल० ये ४ हैं। ५वें में सू० चं० बु० शु० ल० ये ५ हैं। ८ में चं० मं० गु० शु० ल० ये छः हैं। ११ वें में नहीं हैं॥४३॥४४॥४५॥

उक्ताऽन्ये स्थानदातार इति स्थानं विदुर्बुधाः ॥ अथ स्थानग्रहान्वक्ष्ये सुखबोधाय सूरिणाम् ॥४६॥ स्वायुस्तनुषु मंदारसूर्याजीवबुधौ सुते ॥ विक्रमे ज्ञेन्दुलग्नानि लग्नार्कार्किकुजा गृहे ॥४७॥ ते च ज्ञेन्दुस्वभेचाऽऽये सर्वे शुक्रं बिना व्यये ॥ लग्नशुक्रबुधाः शत्रौ ते च जीवसुधाकरौ ॥४८॥

अथ उदाहरणार्थ सूर्यरेखाचक्रम्

गृ०	भा०	सू०	चं०	मं०	बु०	गु०	शु०	श०	ल०	सं०
१	ल०	।		।				।		३
२	द्वि०	।		।				।		३
३	तृ०		।		।				।	३
४	च०	।		।				।	।	४
५	पं०				।	।				२
६	ष०		।		।	।	।		।	५
७	स०	।		।			।	।		४
८	अ०	।		।				।		३
९	न०	।		।	।	।		।		५
१०	द०	।	।	।	।			।	।	६
११	ए०	।	।	।	।	।		।	।	७
१२	द्वा०			।	।		।		।	४

इस प्रकार बिन्दु निर्णय कहा गया। अब रेखा निर्णय कहा जाता है। संक्षेप में जो ग्रह जिस भाव में बिन्दु देते हैं। उनसे बाकी ग्रह रेखा देते हैं। यथा सूर्य से १।२।८ में सू० मं० श० ये तीन रेखा देते हैं। ५ में बु० गु० ये २ हैं। ३ में चं० बु० ल० ये ३ हैं। ४ में सू० मं० श० ल० ये ४ हैं। १० में सू० चं० मं० बु० श० ये ५ हैं। ११ में सू० चं० मं० बु० गु० श० ल० ये ७ हैं। १२ में बु० शु० ल० ये ३ हैं। छठे भाव में चं० बु० गु० शु० ल० ये ५ हैं। ७ में सू० मं० शु० श० ये ४ हैं। ९ में सू० मं० बु० श० ये ४ हैं।।४६–४८।।

द्यूनेऽर्कारार्किशुक्राश्च धर्मेर्कारार्किविद्गुरुः ।। ज्ञेन्दुजीवाः कुजार्यौ ज्ञार्केन्द्वारार्कितनूशनाः ।।४९।। जीवशुक्रबुधा भौमबुधशुक्रशनैश्चराः ।। रवीन्द्वारार्किलग्नानि रवीन्द्वार्यज्ञभार्गवाः ।।५०।। अर्कज्ञजीवाः शुक्रेन्दू ते च तौ लग्नभूसुतौ ।। सर्वे शून्यं क्रमात्प्रोक्तं स्थानं शीतकरस्य च ।।५१।।

अथ उदाहरणार्थं चन्द्ररेखाकोष्ठकम्

गृ०	भा०	सू०	चं०	मं०	बु०	गु०	शु०	श०	ल०	सं०
१	ल०		।		।	।				३
२	द्वि०			।		।				२
३	तृ०	।	।	।	।		।	।	।	७
४	च०				।	।	।			३
५	पं०			।	।		।	।		४
६	ष०	।	।	।				।	।	५
७	स०	।	।		।	।	।			५
८	अ०	।			।	।				३
९	न०		।				।			२
१०	द०	।	।	।	।	।	।		।	७
११	ए०	।	।	।	।	।	।	।	।	८
१२	द्वा०									०

चन्द्रमा के भावों में रेखा दाताओं के नाम—चन्द्रमा से प्रथम में चं० बु० गु०। दूसरे में मं० गु०। तीसरे में सू० चं० मं० बु० शु० श० लग्न। चौथे में बु० बृ० शु०। पांचवें में मं० बु० शु० श०। छठे में सू० मं० श० लग्न। सातवें में सू० चं० बु० गु० शु०। आठवें में सू० बु० गु०। नवें में चं० शु०। दशवें में सू० चं० मं० बु० गु० शु० लग्न। ग्यारहवें में सू० चं० मं० बु० गु० शु० श० लग्न।।४९–५१।।

लग्नमंदकुजा भौमो होराज्ञेन्दुदिनाधिपाः ।। मन्दाराज्ञरविज्ञेन्दुजीवार्कतनुभार्गवाः ।।५२।।
मंदारौ तौ सितश्चार्किकुजार्कार्यार्किलग्नकाः ।। सर्वे गुरुसितौ स्थानं भौमस्यैवं विदुर्बुधाः ।।५३।।

अथोदाहरणार्थ मंगलरेखाचक्रम्

गृ०	भा०	सू०	चं०	मं०	बु०	गु०	शु०	श०	ल०	सं०
१	ल०			।			।		।	३
२	द्वि०			।						१
३	तृ०	।	।		।				।	४
४	च०			।				।		२
५	पं०	।			।					२
६	ष०	।	।		।	।	।			५
७	स०			।				।		२
८	अ०			।			।	।		३
९	न०							।		१
१०	द०	।		।		।		।	।	५
११	ए०	।	।	।	।	।	।	।	।	८
१२	द्वा०					।	।			२

मंगल के १२ भावों मे रेखादाताओं के नाम-प्रथम में लग्न मं० श० ये ३ हैं। २ रे में मं० १। ३ रे में लग्न सू० चं० बु० ये ४, ४ थे में मं० श० २, ५ वें में सू० बु० २, ६ठे में सू० चं० गु०

शु० लग्न ५,७ वें में, मं० श० २, ८ वें में मं० शु० श० ३, ९वे में श० १, १०वें में सू० मं० गु० श० लग्न ५, ११ वें में सब ८, १२ वें में गु० शु० २॥५२-५३॥

लग्नमंदारशुक्रज्ञा लग्नारेन्दुसितार्कजाः ॥ शुक्रज्ञौ लग्नचन्द्रार्किसिताराज्ञार्किभार्गवाः ॥५४॥
जीवज्ञार्केन्दुलग्नानि भूमिपुत्रशनैश्चरौ ॥ तौ च लग्नेन्दुशुक्रार्या मंदारार्कज्ञभार्गवाः ॥५५॥
लग्नमंदारविच्चन्द्राः सर्वे जीवज्ञभास्कराः ॥ गुरोर्लग्न सुखे जीवलग्नारार्कबुधा धने ॥५६॥
चन्द्रशुक्रौ च दुश्चिक्ये मंदार्यार्काः शनिर्व्यये ॥ सुते शुक्रेन्दुलग्नज्ञमन्दाश्चन्द्रं बिना त्वरौ ॥५७॥
लग्नारायाऽर्कैंदवोऽस्ते मृतौजीवार्कभूसुताः ॥ धर्मे शुक्रार्कलग्नेन्दुबुधा मंदं विनाऽऽयभे ॥५८॥

अथोदाहरणार्थ बुधरेखाचक्रम्

गृ०	भा०	सू०	चं०	मं०	बु०	गु०	शु०	श०	ल०	सं०
१	ल०			।	।		।	।	।	५
२	द्वि		।	।			।	।	।	५
३	तृ०				।		।			२
४	च०		।	।			।	।	।	५
५	पं०	।			।		।			३
६	ष०	।	।		।	।			।	५
७	स०			।				।		२
८	अ०		।	।		।	।	।	।	६
९	न०	।		।	।		।	।		५
१०	द०		।	।	।			।	।	५
११	ए०	।	।	।	।	।	।	।	।	८
१२	द्वा०	।			।	।				३

अथ उदाहरणार्थं गुरुरेखाचक्रम्

गृ०	भा०	सू०	चं०	मं०	बु०	गु०	शु०	श०	ल०	सं०
१	ल०	।		।	।	।			।	५
२	द्वि०	।	।	।	।	।	।		।	७
३	तृ०	।				।		।		३
४	च०	।		।	।	।			।	५
५	पं०		।		।		।	।	।	५
६	ष०	।			।			।	।	४
७	स०	।	।	।		।			।	५
८	अ०	।		।		।				३
९	न०	।	।		।		।		।	५
१०	द०	।		।	।	।	।		।	६
११	ए०	।	।	।	।	।	।		।	७
१२	द्वा०							।		१

बुध के १२ भावोंके रेखा दाताओं के नाम—बुध से पहिले घर में मं०, बु०, शु०, श०, लग्न ये ५ रेखा देते हैं। दूसरे में लग्न चं० मं० शु० श० रेखा देते हैं। तीसरे में बु० शु० ये दो। चौथे में चं० मं० शु० श० ल० ये ५ ५ में सू० बु० शु० ये ३। छठे में सू० चं० बु० गु० ये ४ हैं। सातवें में मं० श० ये २ हैं। आठवें में चं० मं० गु० शु० श० ल० ये छः हैं। नौवें में सू० मं० बु० शु० श० ये ५ हैं। दशवें में चं० मं० बु० श० ल० ये ५ हैं। एकादश में आठों ही रेखा देते हैं। १२ में सू० बु० गु० ये ३ हैं। ॥५४॥५५॥

गुरु के १२ भावों के रेखादाताओं के नाम—गुरु से १।४ घर में सू० मं० बु० गु० ल० ये ५ हैं। दूसरे में सू० चं० मं० बु० बृ० शु० ल० ये ७ हैं। तीसरे में सू० गु० श० ये ३ हैं। ५ वें में चं० बु० शु० श० ल० ये ५ हैं। छठे में बु० शु० श० ल० ये ४ हैं। ७ वें में चं० मं० गु० ल० ये ४ हैं। ८ में सू० मं० गु० ये ३ हैं। नौवें घर में सू० चं० बु० शु० ये ४ हैं। ११ वें में शनि रहित सब रेखा देते हैं। १० में सू० मं० बु० बृ० शु० ल० ये ६ हैं॥५६॥५७॥५८॥

माने गुरुबुधारार्कशुक्रहोरास्तथा विदुः ॥ लग्नशुक्रेंदवस्ते ज्ञार्क्यारास्ते ज्ञवर्जिताः ॥५९॥ सुतभे लग्नशशिजशशांकार्यार्किभार्गवाः ॥ ज्ञारौ शून्यं सिताऽर्केन्दुगुरुलग्नशनैश्चराः ॥६०॥ सर्वे रविं विना शुक्रगुरुमन्दाश्च मानभे ॥ सर्वे कुजेन्दुरवयः क्रमाद्भृगसुतस्य च ॥६१॥

अथ उदाहरणार्थ शुक्ररेखाचक्रम्

गृ०	भा०	सू०	चं०	मं०	बु०	गु०	शु०	श०	ल०	सं०
१	ल०		।				।		।	३
२	द्वि०		।				।		।	३
३	तृ०		।	।	।		।	।	।	६
४	च०		।	।			।	।	।	५
५	पं०		।		।	।	।	।	।	६
६	ष०			।	।					२
७	स०									०
८	अ०	।	।			।	।	।	।	६
९	न०		।	।	।	।	।	।	।	७
१०	द०						।	।	।	३
११	ए०	।	।	।	।	।	।	।	।	८
१२	द्वा०	।	।	।						३

शुक्र के रेखा दाताओं के नाम—शुक्र से चं० शु० ल० ये ३ रेखादाता प्रथम तथा द्वितीय भाव के हैं। तीसरे में चं० मं० बु० श० ल० शु० ये ६ हैं। ४ में सू० चं० मं० शु० ल० ये ५ हैं। ५ वें में ल० चं० बु० गु० शु० श० ये ६ हैं। छठे घर में मं० बु० ये दो। सातवें में नहीं है। ८वें में सू० चं० गु० शु० श० ल० ये ६ हैं। नौवें में चं० मं० बु० बृ० शु० श० ल० ये ७ हैं। १० वें घर में शु० श० ये दो हैं। ११वेंमें सब रेखा देते हैं। १२ वें में सू० चं० मं० ये ३ हैं॥५९॥६०॥६१॥

शने रवितनू सूर्यो लग्नेन्दुकुजसूर्यजाः ।। लग्नार्कौ जीवमंदाराः सर्वे सूर्यं विना क्षते ।।६२।।
अर्कोऽर्कज्ञौ बुधोऽर्कारतनुज्ञाः सकलास्ततः ।। कुजज्ञगुरुशुक्राश्च क्रमात्स्थानमिदं विदुः ।।६३।। तनौ
तुर्ये च वह्निः स्याद्बुश्चिक्ये द्वौ धने शराः ।।बुद्धिमृत्य्वंकरिः फेषु षट् खेशक्षतराशिषु ।।६४।।

अथोदाहरणार्थं शनिरेखाचक्रम्

ग्र०	भा०	सू०	चं०	मं०	बु०	गु०	शु०	श०	ल०	सं०
१	ल०	।							।	२
२	द्वि०	।								१
३	तृ०		।	।				।	।	४
४	च०	।							।	२
५	पं०			।		।		।		३
६	ष०		।	।	।	।	।	।	।	७
७	स०	।								१
८	अ०	।			।					२
९	न०				।					१
१०	द०	।		।	।				।	४
११	ए०	।	।	।	।	।	।	।	।	८
१२	द्वा०			।	।	।	।			४

शनि की रेखादाताओं के नाम—शनि से प्रथम भाव में सू० ल० २ हैं। दूसरे में सू० एक ही है। तीन में चं० मं० श० ल० ४ हैं। ४ में सू० ल० २ हैं। ५वें में मं० गु० श० ३ हैं। ६ में चं० मं० बु० बृ० शु० श० ल० ७ हैं। ८ में सू० बु० २ हैं। ७ में-सू० १ है। ९ वें में बु० १ है। १० वें में-सू० मं० बु० ल० ४ हैं। एकादश में सब ८ हैं। १२ वें में मं० बु० गु० शु० ४ हैं।।६२।।६३।।

लग्न के बिन्दु तथा रेखा विन्यास—प्रथम बिन्दु विवरण-लग्न तथा ४ में ३ हैं। तीसरे में २। दूसरे में ५। पाँच, आठ, नौवें द्वादश में ६ हैं। छठे, ग्यारहवें, दसवें में १-१ है। तथा सातवें में ७ बिन्दु हैं।।६४।।

रूपं स्त्रियां गुरुं त्यक्त्वा लग्नस्य करणं त्विदम् ॥ होरासूर्येन्दवो लग्ने लग्नारेंद्विनसूर्यजाः ॥६५॥
गुरुज्ञौ लग्नचंद्रारा लसूचमंबुसौरयः ॥ क्षते शुक्रस्तथा चैकः कामे सर्वे गुरुं विना ॥६६॥ मृतौ भृगुबुधौ त्यक्त्वा धर्मे गुरुसितौ विना ॥ कर्मण्याये तथा शुक्रो व्यये सूर्येन्दुवर्जिताः ॥६७॥

अथोदाहरणार्थं लग्नबिंदुकोष्ठकम्

गृ०	भा०	सू०	चं०	मं०	बु०	गु०	शु०	श०	ल०	सं०
१	ल०	०	०						०	३
२	द्वि०	०	०	०				०	०	५
३	तृ०				०	०				२
४	च०	०	०						०	३
५	पं०	०	०	०	०			०	०	६
६	ष०					०				१
७	स०	०	०	०	०		०	०	०	७
८	अ०	०	०	०		०		०	०	६
९	न०	०	०	०	०			०	०	६
१०	द०						०			१
११	ए०						०			१
१२	द्वा०			०	०	०	०	०	०	६

लग्न में बिन्दुदाताओं के नाम—लग्न से-लग्न तथा सू० चं० ये ३ हैं। दूसरे में ल० सू० चं० मं० श० ये ५ हैं। ३ में बु० गु० ये २ हैं। ४ में चं० मं० ल० ३ हैं। ५ में ल० सू० चं० मं० बु० श० ये ६ हैं। ६ में शु० यह १ हैं। ७ वें में सू० चं० मं० बु० शु० श० ये ७ हैं। ८ में सू० चं० मं० गु० श० ल० ये ६ हैं। ९वें में सू० चं० मं० बु० श० ल० ये ६ हैं। १० में तथा ११ में शु० यह १-१ ही है। १२ वें में मं० बु० गु० शु० श० ल० ये ६ हैं॥६५॥६६॥६८॥

लग्नस्येदं तु संप्रोक्तं करणं द्विजपुंगव ॥ अथ स्थानं प्रवक्ष्यामि लग्नस्य द्विजपुंगव ॥६८॥
आर्किज्ञशुक्रगुर्वाराः सौम्यदेवेज्यभार्गवाः ॥ हित्वा सौम्यगुरू शेषाः सूज्ञेज्यभृगुसूर्यजाः ॥६९॥

तथा जीवभृगू बुद्धौ सर्वे शुक्रं विना क्षते।। जीवं एकस्तथा द्यूने मृतौ सौम्यभृगू तथा ।।७०।। धर्मे गुरुसितावेव खे सर्वे शुक्रमंतरा ।। सूर्यचन्द्रौ तथा रिष्फे स्थानं लग्नस्य कीर्तितम् ।।७१।।

अथ उदाहरणार्थं लग्नरेखाचक्रम्										
गृ०	भा०	सू०	चं०	मं०	बु०	गु०	शु०	श०	ल०	सं०
१	ल०			।	।	।	।	।		५
२	द्वि०				।	।	।			३
३	तृ०	।	।	।			।	।	।	६
४	च०	।			।	।	।	।		५
५	पं०					।	।			२
६	ष०		।		।	।	।		।	५
७	स०					।				१
८	अ०				।		।			२
९	न०					।	।			२
१०	द०	।	।	।	।	।		।	।	७
११	ए०	।	।	।	।	।		।	।	७
१२	द्वा०	।	।							२

लग्न के १२ भावो में रेखाप्रदों के नाम—लग्न में मं० बु० गु० शु० श० ये ५ हैं। दूसरे में बु० गु० शु० ये ३ हैं। तीसरे में सू० चं० मं० शु० श० ल०ये ६ हैं। चौथे में सू० बु० गु० शु० श० ये ५ हैं। ५ वें में गु० शु० ये दो हैं। ६ में सू० चं० मं० बु० गु० श० ये ६ हैं। सातवें में गु० यह १ है। ८ वें में बु० शु० ये दो हैं। नौवें में गु० शु० दो हैं। १०-११ भाव में सू० चं० मं० बु० गु० श० ल० ये ७-७ हैं। १२ वें में सू० चं० ये दो हैं।।६८।।६९।।७०।।७१।।

करणं बिंदुवत्प्रोक्तं स्थानं रेखा तथोच्यते ।। मुनिदिग्वसुवेदादिगिष्वद्रष्टयनवेषवः ।।७२।। रुद्रार्कावर्गणा मेषाद्विषयेष्वष्टवायवः ।। पंक्तिस्वरेषवः सूर्याद्वर्गणा प्रोच्यते बुधैः ।।७३।। अष्ट

रेखा लिखेदूर्ध्वास्तिर्यग्रेखास्त्रयोदश ।। तदा चतुरशीतिः स्युर्ग्रहयोगे पदानि तु ।।७४।।

इति श्रीबृहत्पाराशरहोरायामुत्तरभागेऽष्टकवर्गप्रधानः प्रथमोऽध्यायः ।।१।।

उपदेश—

करण से बिन्दु जानना। स्थान नाम से रेखा समझना चाहिए। सूर्यादि ग्रहों के ध्रुवांक और १२ भावों के ध्रुवांक कहते हैं। मेष ७, वृ०१०, मि०८, क०४, सिं०१०, क०५, तु०७, बृ०८, ध०९, म०५, कुं०११, मी०१२। ये मेषादि १२ राशियों के ध्रुवांक हुए।। अव सूर्यादि ग्रहों के ध्रुवांक कहे जाते हैं-सू० ५ चं० ५, मं०८, बु०५, गु०१०, शु०७, श०५ ध्रुवांक हैं।।७२।।७३।। अष्टकवर्ग के चक्र की रीति कहते हैं। खड़ी ९ रेखा करना। तिरछी १४ रेखा करना। तो **१२X** ८=९६ कोष्टक होंगे। उनमें ८ घरों में ग्रह तथा लग्न और १२ घरों में लग्न आदि १२ भाव लिखना चाहिए। बीच के कोष्टकों में ऊपर कहे अनुसार 'बिन्दु' 'रेखा' लिखनी चाहिए।।७४।।

इति श्रीबृ० पा० हो० शा० उत्तरखण्डे अष्टकवर्ग निरूपणं
नाम प्रथमोऽध्यायः ।।१।।

अथ त्रिकोणशोधनमाह

राशिचक्रं यथामार्गं निक्षिप्याष्टग्रहस्य च।।त्रिकोणशोधनं कुर्यादादौ सर्वेषु राशिषु।।१।।

त्रिकोण शोधन प्रकार

सूर्य से शनि तक सात ग्रह और लग्न (८) इनका शून्य रेखात्मक 'अष्टक वर्ग' स्थापित करके त्रिकोण शोधन करना चाहिए।।१।।

अथ रवेरष्टकवर्गः ४८

सू०	चं०	मं०	बु०	बृ०	शु०	श०	ल०
१	३	१	३	५	६	१	३
२	६	२	५	६	७	२	४
४	१०	४	६	९	१२	४	६
७	११	७	९	११	०	७	१०
८	०	८	१०	०	०	८	११
९	०	९	११	०	०	९	१२
१०	०	१०	१२	०	०	१०	०
११	०	११	०	०	०	११	०
०	०	०	०	०	०	०	०

अथ चंद्राष्टकवर्गः ४९							
सू०	चं०	मं०	बु०	बृ०	शु०	श०	ल०
३	१	२	१	१	३	३	३
६	३	३	३	२	४	५	६
७	६	५	४	४	५	६	१०
८	७	६	५	७	७	११	११
१०	९	१०	७	८	९	०	०
११	१०	११	८	१०	१०	०	०
०	११	०	१०	११	११	०	०
०	०	०	११	०	०	०	०
०	०	०	०	०	०	०	०

उदाहरण-रेखास्थापन की विधि यह है कि-जो ग्रह जिस भाव में हो उस ग्रह की रेखा उस भाव से गणना करके चक्र में लिखित स्थानों में रेखा लिखना, बाकी स्थानों में शून्य लिखना। जैसे कि-(चक्र में देखें) सूर्याष्टिक वर्ग चक्र में सूर्य ११ भावों में है और सूर्य के रेखा स्थान १।२।४।७।८।९।१०।११ हैं, अतः एकादश भाव से इन स्थानों में रेखा और बाकी स्थानों में शून्य रखा गया है। चन्द्रमा पंचमभाव में है, अतः चन्द्रमा से ३।६।१०।११ भावों में रेखा और अन्य भावों में शून्य है। इसी प्रकार प्रत्येक ग्रह तथा लग्न के चक्रों में लिखे अंकों के स्थान में रेखा लिखना बाकी में शून्य लिखना। इसका तात्पर्य यह है कि-अमुक ग्रह अमुक ग्रह और भाव से अमुक (अर्थात् रेखांकित) स्थानों में शुभफलदाता है, और शून्यांकित स्थानों में अशुभफलदायक है।

भौमस्याष्टकवर्गः ३९							
र०	चं०	मं०	बु०	गु०	शु०	श०	ल०
३							
५	३	१	३	६	६	१	१
६	६	२	५	१०	८	४	३
१०	११	४	६	११	११	७	६
११	०	७	११	१२	१२	८	१०
०	०	८	०	०	०	९	११
०	०	१०	०	०	०	१०	०
०	०	११	०	०	०	११	०

बुधस्याष्टकवर्गः ५४

र०	चं०	मं०	बु०	गु०	शु०	श०	ल०
		१	१		१	१	
५	२	२	३	६	२	२	१
६	४	४	५	८	३	४	२
९	६	७	६	११	४	७	४
११	८	८	९	१२	५	८	६
१२	१०	९	१०	०	८	९	८
०	११	१०	११	०	९	१०	१०
०	०	११	१२	०	११	११	११

गुरोरष्टकवर्गः ५६

र०	चं०	मं०	बु०	गु०	शु०	श०	ल०
१	२	१	१	१	२	३	१
२	५	२	२	२	५	५	२
३	६	४	४	३	६	६	४
४	९	७	५	४	९	१२	५
७	११	८	६	७	१०	०	६
८	०	१०	९	८	११	०	७
९	०	११	१०	१०	०	०	८
१०	०	०	११	११	०	०	१०
११	०	०	०	०	०	०	११
०	०	०	०	०	०	०	०
०	०	०	०	०	०	०	०
०	०	०	०	०	०	०	०

शुक्रस्याष्टकवर्गः ५२							
र०	चं०	मं०	बु०	गु०	शु०	श०	ल०
८	१	३	३	५	१	३	१
११	२	४	५	८	२	४	२
१२	३	६	६	९	३	५	३
०	४	९	९	१०	४	८	४
०	५	११	११	११	५	९	५
०	८	१२	०	०	८	१०	८
०	९	०	०	०	९	११	९
०	११	०	०	०	१०	०	११
०	१२	०	०	०	११	०	०
०	०	०	०	०	०	०	०
०	०	०	०	०	०	०	०
०	०	०	०	०	०	०	०

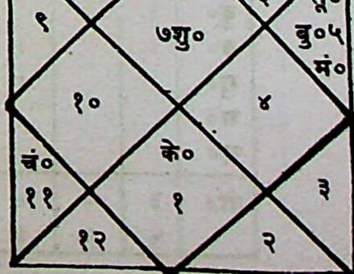
शनेरष्टकवर्गः ३९							
र०	चं०	मं०	बु०	गु०	शु०	श०	ल०
१	३	३	६	५	६	३	१
२	६	५	८	६	११	५	३
४	११	६	९	११	१२	६	४
७	०	१०	१०	१२	०	११	६
८	०	११	११	०	०	०	१०
१०	०	१२	१२	०	०	०	११
११	०	०	०	०	०	०	०
०	०	०	०	०	०	०	०
०	०	०	०	०	०	०	०

लग्नाष्टकवर्गः ५२							
र०	चं०	मं०	बु०	गु०	शु०	श०	ल०
३	३	१	१	१	१	१	३
४	६	३	२	२	२	३	६
६	१०	६	४	४	३	४	१०
१०	११	१०	६	५	४	६	११
११	१२	११	८	६	५	१०	०
१२	०	०	१०	७	८	११	०
०	०	०	११	९	९	०	०
०	०	०	०	१०	०	०	०
०	०	०	०	११	०	०	०

द्वादशभावस्पष्टचक्रम्												
ल०	सं०	ध०	सं०	स०	सं०	सु०	सं०	सु०	सं०	शं०	सं०	भा०
६	७	७	८	८	८	९	९	१०	११	११	०	रा०
१६	००	१५	००	१४	२९	१४	२९	१४	००	१५	००	अ०
१७	५५	३४	१२	५१	२९	०८	२९	५१	१२	३४	५५	क०
१९	५०	२१	५२	२३	५४	२५	५४	२३	५२	२१	५०	वि०
जा०	सं०	आ०	सं०	ध०	सं०	क	सं०	ला०	सं०	व्य०	सं०	भा०
०	१	१	२	२	२	३	३	४	५	५	६	रा०
१६	००	१५	००	१४	२९	१४	२९	१४	००	१५	००	अं०
१७	५५	३४	१२	५१	२९	८	२९	५१	१२	३४	५५	क०
१९	५०	२१	५२	२३	५४	२५	५४	२३	४२	२१	५०	वि०

तात्कालिकाः स्पष्टा ग्रहाः								
सू०	चं०	मं०	बु०	गु०	शु०	श०	रा०	के०
४	१०	४	४	५	६	७	६	०
२३	२६	२७	२१	१३	०१	१५	२०	२०
२८	३०	४५	३४	२७	५८	०५	०५	०५
१८	३३	३८	४५	३६	३४	१२	१५	१५
५७	७२७	३९	९९	१३	७१	२	३	३
२२	५०	३६	४८	१८	२२	४२	११	११

जन्मलग्नम्



उदाहरण

सूर्यरेखाचक्रम्

भावाः	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२
सू०	०	।	०	०	।	।	।	।	।	०	।	।
चं०	०	।	।	०	०	०	।	०	०	।	०	०
मं०	०	।	०	०	।	।	।	।	।	०	।	।
बु०	।	०	।	।	०	०	।	।	।	।	०	०
बृ०	०	०	०	।	।	०	०	।	०	।	०	०
शु०	०	०	०	०	०	।	।	०	०	०	०	।
श०	०	।	।	०	।	०	०	।	।	।	।	।
ल०	०	०	०	।	।	।	०	०	।	।	०	।
यो०	१ ७	४ ४	३ ५	३ ५	५ ३	४ ४	५ ३	५ ३	५ ३	५ ३	३ ५	५ ३

सूर्यत्रिकोणैकाधिपत्यशोधनचक्रम्

राशिः	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४
ग्रहाः	सू० मं०बु०	बृ०	रा० शु०	श०			चं०		के०			
रेखाः	५	४	५	५	५	५	३	५	१	४	३	३
त्रि०	४	०	२	२	४	१	०	२	०	०	०	०
एका०	४	०	२	२	२	१	०	०	०	०	०	०
पिण्डः	राशिपिंड ८३ ग्रहपिंड ९४ यो० १७७											

चन्द्ररेखाचक्रम्

भावाः	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२
सू०			।	।	।		।	।				।
चं०	।	।	।		।		।			।	।	
मं०			।				।	।			।	।
बु०	।	।		।	।		।	।		।		।
बृ०	।		।				।		।	।		।
शु०			।	।	।		।		।	।	।	
श०				।		।	।					।
ल०				।	।				।			।
यो०	३ ५	२ ६	५ ३	५ ३	५ ३	१ ७	७ १	३ ५	३ ५	४ ४	३ ५	६ २

चन्द्रत्रिकोणैकाधिपत्यशोधनचक्रम्												
राशयः	११	१२	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०
ग्रहाः	चं०		के०				सू०मं० बु०	बृ०	रा० शु०			
रेखाः	३	६	३	२	५	५	५	१	७	३	३	४
त्रि०	०	३	०	१	२	२	२	०	४	०	०	२
ऐका०	०	३	०	०	२	२	२	०	३	०	०	२
पिण्डः	राशि पिंड १२९ ग्रह पिंड ७१ योग २००											

उदाहरण

भौमरेखाष्टकचक्रम्												
भावाः	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२
सू०	।	०	०	।	०	०	०	।	।	०	०	०
चं०	०	।	०	०	०	०	।	०	०	।	०	०
मं०	०	।	०	०	।	।	०	।	।	०	।	।
बु०	।	०	।	।	०	०	०	०	।	०	०	०
बृ०	०	०	०	०	।	०	०	०	।	।	।	०
शु०	०	०	०	०	०	।	०	।	०	०	।	।
श०	०	।	०	०	।	०	०	।	।	।	।	।
ल०	०	०	।	।	०	०	।	०	।	०	।	०
रे०यो०	२	३	२	३	३	२	२	४	६	३	५	३
विं०यो०	६	५	६	५	५	६	६	४	२	५	३	५

भौमत्रिकोणैकाधिपत्यशोधनचक्रम्												
राशयः	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४
ग्रहाः	सू०मं० बु०	बृ०	शु०	श०			चं०					
रेखाः	३	२	२	४	६	३	५	३	२	३	२	३
त्रि०	१	०	०	१	४	१	३	०	०	१	०	०
ऐका०	१	०	०	१	४	०	२	०	०	१	०	०
पिण्डः	राशि पिंड ९६ ग्रह पिंड ३३ योग १२९											

बुधरेखाष्टकचक्रम्

भा०	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२
सू०			।	।	०		।	०	।	।	०	
चं०			।	।		।		।		।		।
मं०		।	०		।	।	।	।	।		।	।
बु०	।		।	।	०			।	।	।	।	
वृ०					।		।			।	।	
शु०		।		।	।		।	।	।	।	।	
श०		।	।		।			।	।	।	।	।
ल०		।		।	।		।	।		।		।
रे०यो	१	४	४	५	५	२	४	६	५	६	५	४
विं०यो	७	४	४	३	३	६	४	२	३	२	३	४

बुधत्रिकोणैकाधिपत्यशोधनचक्रम्

राशयः	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४
ग्रहाः	सू० मं० बु०	बृ०	शु०	श०			चं०					
रेखाः	५	२	४	६	५	६	५	४	१	४	४	५
त्रि०	४	०	०	२	४	४	१	०	०	२	०	१
ऐका०	४	०	०	२	४	३	१	०	०	२	०	१
पिण्डः			राशि पिंड १४२ गृह पिंड ९५ योग २३७									

गुरुरेखाष्टकचक्रम्

भावाः	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२
सू०	।	।	०	०	।	।	।	।	।	०	।	।
चं०	०	।	०	०	०	।	०	।	।	०	०	।
मं०	०	।	०	०	।	।	०	।	।	०	।	।
बु०	०	।	।	।	०	०	।	।	।	०	।	।
बृ०	।	।	।	०	०	।	।	०	।	।	०	।
शु०	०	।	०	।	०	।	०	०	।	।	।	०
श०	।	०	०	।	०	।	।	०	०	०	०	०
ल०	।	।	०	।	।	०	।	।	०	।	।	।
रे०यो०	४	७	२	४	३	६	५	५	६	३	५	६
विं०यो०	४	१	६	४	५	२	३	३	२	५	३	२

गुरुत्रिकोणैकाधिपत्यशोधनचक्रम्												
राशयः	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४	५
ग्रहाः	गु०	शु०	श०			चं०						सू०मं० बु०
रेखाः	६	५	५	६	४	७	२	४	३	६	५	५
त्रि०	३	०	३	२	१	२	०	०	०	१	३	१
ऐकाः	२	०	३	२	०	१	०	०	०	०	३	१
पिण्डः	राशि पिंड ८५ ग्रह पिंड ५८ योग १४३											

शुक्ररेखाष्टकच०												
भावाः	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२
सू०	०	०	०	०	०	।	०	०	।	।	०	०
चं०	।	०	।	।	।	।	।	।	।	०	०	।
मं०	।	।	०	।	०	०	।	०	।	।	०	०
बु०	।	०	।	।	०	०	।	०	।	।	०	०
बृ०	०	०	०	।	०	०	।	।	।	।	०	०
शु०	।	।	।	।	।	०	०	।	।	।	।	०
श०	०	०	०	।	।	।	०	०	।	।	।	।
ल०	०	।	।	०	।	०	।	।	।	।	।	०
रेखाः	४	३	४	६	४	३	५	४	८	७	३	२
विं०यो	४	५	४	२	४	५	३	४	०	१	५	६

शुक्रत्रिकोणैकाधिपत्यशोधनचक्रम्												
राशयः	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४	५	६
ग्रहाः	शु	श०			चं०						सू०मं० बु०	
रेखाः	५	४	८	७	३	२	४	३	४	६	४	३
त्रि०	२	२	४	४	०	०	०	०	१	४	०	०
ऐका०	२	२	४	४	०	०	०	०	१	४	०	०
पिण्डः	राशि पिंड ११० ग्रह पिंड २४ योग १३४											

शनिरेखाष्टकचक्रम्

भावाः	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२
सू०	०	।	०	०	।	।	०	।	।	०	।	।
चं०	०	०	।	०	०	०	।	०	०	।	०	०
मं०	।	०	।	।	०	०	०	।	।	।	०	०
बु०	।	०	।	।	०	०	०	।	।	।	०	०
बृ०	०	०	०	।	।	०	०	०	०	।	।	०
शु०	०	०	०	०	०	।	०	०	०	०	।	।
श०	०	०	०	।	०	।	।	०	०	०	०	।
ल०	०	०	०	।	।	०	।	०	।	।	०	।
रे०यो०	२	१	३	५	३	३	३	३	४	५	३	४
वि०यो०	६	७	५	३	५	५	५	५	४	३	५	४

शनित्रिकोणैकाधिपत्यशोधनचक्रम्

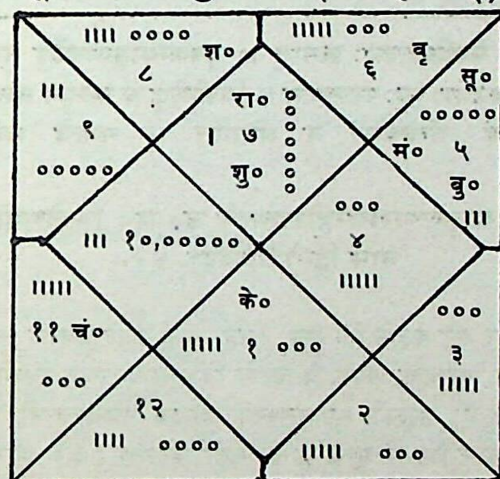
राशयः	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४	५	६	७
ग्रहाः	श०								सू०मं० बु०	बृ०	शु०	
रेखाः	३	४	५	३	४	२	१	३	५	३	३	३
त्रि०	०	२	४	०	१	०	०	०	२	१	२	०
ऐका:	०	१	४	०	०	०	०	०	२	१	२	०
पिण्डः:	राशि पिंड ४७ ग्रह पिंड ३८ योग ८५											

लग्नरेखाष्टकचक्रम्

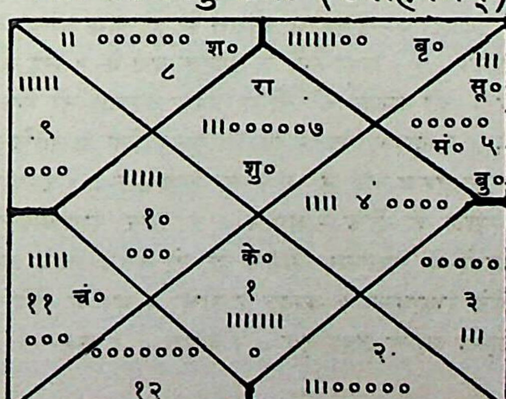
भा०	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२
सू०	।	।	०	।	०	०	०	।	।	।	०	०
चं०	०	।	।	।	०	०	।	०	०	।	०	०
मं०	।	०	०	।	०	०	०	।	।	०	।	०
बु०	।	०	।	०	।	०	।	।	।	०	।	०
बृ०	।	०	।	।	।	।	०	।	।	।	०	।
शु०	।	।	।	।	।	०	०	।	।	०	०	०
श०	०	।	०	।	।	०	।	०	०	०	।	।
ल०	०	०	०	।	।	०	०	०	।	०	०	।
रे०यो०	५	४	४	६	५	१	३	५	६	३	३	३
वि०यो	३	४	४	२	३	७	५	३	२	५	५	५

लग्नत्रिकोणैकाधिपत्यशोधनचक्रम्												
राशयः	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४	५	६
ग्रहाः	शु०	श०			चं०						सू०मं० बु०	बृ०
रेखाः	३	५	६	३	३	३	५	४	४	६	५	१
त्रि०	०	२	१	२	०	०	०	३	१	३	०	०
ऐ०	०	२	१	२	१	०	०	३	१	३	०	०
पिण्डः	राशि पिंड ४७ ग्रह पिंड ३८ योग ८५											

सूर्याष्टकवर्गकुण्डली (उदाहरणम्)



चन्द्राष्टकवर्गकुण्डली (उदाहरणम्)



अथ लग्नत्रिकोणैकाधिपत्यशोधनम्												
ल०								चं०	श०बु०	सू०गु०	शु०मं०	ग्रहाः
मे०	वृ०	मि०	क०	सिं	क०	तु०	वृ०	ध०	म०	कुं०	मी०	राशयः
४	५	५	३	३	२	५	६	३	५	४	४	रेखाः
१	३	१	२	२	२	१	३	०	३	०	१	त्रि०शो
१	२	०	०	०	०	१	२	०	३	०	१	ए०शो०
ग्रहपिंडः ४५ राशि पिंडः ७७ उ०याग पिंड २२												

त्रिकोणं तु कथं प्रोक्तं मेषसिंहादयः क्रमात् ।। वृषकन्यामृगाख्येषु तुलाकुंभयुगेषु च ।।२।। कर्कवृश्चिकमीनास्ते त्रिकोणाः स्युः परस्परम् ।। त्रिकोणेषु च यन्न्यूनं तत्तुल्यं त्रिषु शोधयेत्।।३।। एकस्मिन् भवने शून्यं तत्त्रिकोणं न शोधयेत् ।। समत्वे सर्वगेहेषु सर्वं संशोध्य बुद्धिमान् ।।४।।

इति श्रीबृहत्पाराशरहोराशास्त्रे उ० खं० त्रिकोणशोधनं
नाम द्वितीयोऽध्यायः ।।२।।

त्रिकोण कैसे जानना सो कहते हैं। मेष, सिंह, धनु इसी प्रकार वृष, कन्या, मकर और मिथुन, तुला, कुंभ, कर्क, वृश्चिक, मीन, ये चारों विभाग परस्पर त्रिकोण हैं। (१) इनमें जो न्यून संख्यावाली राशि है, उसकी स्पष्टसंख्या अधिक संख्यावाली राशियों की स्पष्ट में घटाना, (२) यदि एक राशि में शून्य है तो नहीं घटाना (३) और सब राशि में समान संख्या हो तो सबस्थानों में शून्य अंक प्राप्त होगा। इन तीन प्रकारों को ध्यान में रखकर त्रिकोण शोधन करे।।२–४।।

त्रिकोण शोधन का उदाहरण—त्रिकोण शोधन में जो कम संख्या वाली राशि है, उसका फलांक तीनों जगह घटाना (१) यथा-सूर्य के अष्टक वर्ग में-१-मेष के नीचे २-सिंह के नीचे ३-धन के नीचे ४-यहां २ की संख्या को तीनों जगह घटाया तो मेष के नीचे-० । सिंह के नीचे-१। धन के नीचे २ । २-दूसरा प्रकार-किसी एक राशि के नीचे शून्य हो तो यथास्थित रहता है। जैसे-कल्पित उदाहरण वृष के नीचे का रेखाफल-३ । कन्या के नीचे- ५। मकर के नीचे-० । यहां मकर राशि के नीचे रेखाफल-० है, अतः यथास्थित अंक रहे।। ३-तीसरा प्रकार-यदि तीनों राशियों में रेखाफल समान हो तो सबके नीचे शून्य होगा। जैसे गुरु के अष्टक वर्ग में वृष के नीचे रेखाफल- ५-कन्या के नीचे- ५ मर के नीचे भी-५ तो ५ से शोधित होने पर तीनों जगह शून्य प्राप्त हुआ-वृष-० । कन्या-० । मकर-० ।

इति श्रीबृ० पा० हो० शा० उ० खं० भा० प्र० त्रिकोणशोधननाम
द्वितीयोऽध्यायः ।।२।।

अथैकाधिपत्यशोधनमाह

एवं त्रिकोणं संशोध्य पश्चादेकाधिपत्यता ।। क्षेत्रद्वये फलानि स्युस्तदा संशोधयेद्बुधः ।।१।। क्षीणेन सह चान्यस्मिञ्छोधयेद् ग्रहवर्जिते ।। ग्रहयुक्ते फले हीने ग्रहाभावे फलाधिके ।।२।। अनेन सह चान्यस्मिञ्छोधयेद् ग्रहवर्जिते ।। फलाधिके ग्रहैर्युक्ते चान्यस्मिन्सर्वमृत्सृजेत् ।।३।। उभयोर्ग्रहसंयुक्ते न संशोध्यः कदाचन ।। उभयत्रग्रहाभावे समत्वे सफलं त्यजेत् ।।४।। सग्रहाग्रहयोस्तुल्ये सर्वं संशोध्यमग्रहे ।। कुलीरसिंहयो राश्योःपृथक् क्षेत्रं पृथक् फलम् ।।५।।

इति श्रीबृहत्पाराशरहोराशास्त्रे उत्तरखंडे एकाधिपत्यशोधनं
नाम तृतीयोऽध्यायः ।।३।।

पूर्वोक्त प्रकार से त्रिकोण शोधन करने के बाद 'ऐकाधिपत्य' शोधन करना चाहिए। (यहां ध्यान रखना चाहिए कि 'फल' त्रिकोण–शोधित अंक का नाम है।)

ऐकाधिपत्यशोधन के नियम—

(१) क्षीणेन सह चान्यस्मिन् शोधयेद् ग्रहवर्जिते ।

१–दोनों राशि ग्रहरहित हों तो अधिक में न्यून का शोधन करना।

(२) उभयोर्ग्रहसंयोगे न संशोध्यः कदाचन।

२–दोनों राशि स्वग्रह हों तो शोधन नहीं करना ।.

(३) ग्रहयुक्ते फलैर्हीने ग्रहाभावे फलाधिके। ऊनेन सममन्यास्मिन् शोधयेत् ग्रहवर्जिते।

३–ग्रहयुक्तराशि कमफल हों, अग्रह अधिक हो तो अधिक में अल्प घटाना, सग्रह का फल यथावत् रखना।

(४) फलाधिके ग्रहैर्युक्ते चान्यस्मिन् सर्वमुत्सृजेत्।

४-सग्रह राशि फलाधिक हो तो अग्रह राशि का फल शून्य होता है।

(५) उभयत्र ग्रहाभावे समत्वे सकलं त्यजेत्।

५-दोनों अग्रह हों, फल तुल्य हो तो दोनों में शून्य होगा।

(६) सग्रहाग्रहयोस्तुल्ये सर्वं संशोध्यमग्रहे।

६-यदि एक सग्रह दूसरी अग्रह हो, फल समान हो तो अग्रह के फल का शून्य कर देना।

(७) कुलीरसिंहयो राश्योः पृथक् क्षेत्रं पृथक् फलम्।

७-कर्क और सिंह अपने स्वामी की १-१ राशि होने से शोधन नहीं होता।।१-५।।

इति श्रीबृहत्पाराशरहोराशास्त्रे उत्तरखंडे भावप्रकाशिकायां ऐकाधिपत्यशोधनं नाम तृतीयोऽध्यायः।।३।।

अथ पिंडोत्पत्तिमाह

शोध्यावशेषं संस्थाप्य राशिमानेन वर्द्धयेत् ।। ग्रहयुक्तेऽपि तद्राशौ ग्रहमानेन वर्द्धयेत् ।।१।।

अथ गुणकध्रुवाकानाह

गोसिंहौ दशगुणितौ वसुभिर्मिथुनालिनौ ।। वणिग्मेषौ तु मुनिभिः कन्यकामकरौ शरैः ।। शेषाः स्वमानगुणिता राशिमाना इमे क्रमात् ।।१।। जीवारशुक्रसौम्यानां दशवसुमुनीन्द्रियः क्रमाद्गुणकाः ।। बुधस्य संख्या शेषाणां ग्रहगुणैर्गुणयेत् पृथक् पृथक्कार्याः ।।२।।

इति श्रीबृहत्पाराशरहोराशास्त्रे उत्तरखण्डेसारांशे पिंडोत्पत्तिकथनं
नाम चतुर्थोऽध्यायः ।।४।।

पिंडोत्पत्तिप्रकार

त्रिकोणशोधन के पश्चात् ऐकाधिपत्यशोधन द्वारा प्राप्त अंक को राशिगुणक और ग्रह गुणक से गुणा कर सबका योग करने से 'पिण्ड' (राशि संख्या) प्राप्त होती है।।१।।

गुणांक ध्रुवांक–क्रम से–मे० ७, वृ० १०, मि० ८, क० ४, सिं० १०, क० ५, तु० ७, वृ० ८, ध० ९, म० ५; कुं० ११, मी० १२, सू० ५, चं० ५, मं० ८, बु० ५, बृ० १०, शु० ७, श० ५, वृष और सिंह के –१०। मिथुन, वृश्चिक के ८। मेष तुला के ७; कन्या, मकर के ५, बाकी राशियों के गुणक राशिसंख्या ही है। ये राशियों के मान (गुणक) हैं।। गुरु, मंगल, शुक्र बुध इनके क्रमशः १०।८।७।५ गुणक हैं। बाकी ग्रहों के बुध वाले ५-५- ही हैं। ग्रह और राशि के गुणक से अलग अलग गुण कर जोड़ने से पिंडसंख्या होती है।।२।।

अथ राशिगुणकचक्रम्												
मे०	वृ०	मि०	क०	सिं०	क०	तु०	वृ०	ध०	म०	कुं	मी०	रा०
७	१०	८	४	१०	५	७	८	९	५	११	१२	गु०
अथ ग्रहगुणकचक्रम्												
सू०	चं०	मं०	बु०	गु०	शु०	श०	ग्रहाः					
५	५	८	५	१०	७	५	गुणकाः					

इति श्रीवृहत्पाराशरहोराशास्त्रे उत्तरखण्डे भावप्रकाशिकायां पिण्डोत्पत्तिकथनं नाम चतुर्थोऽध्यायः ।।४।।

अथाष्टकवर्गफलमाह

आत्मप्रभावशक्तिश्च पितृचिन्ता रवेः फलम् ।। मनोबुद्धिप्रसादश्च मातृचिन्ता मृगांकतः ।।१।। भ्रातृसत्त्वं गुणं भूमिं भौमेन तु विचिन्तयेत् ।।२।। वाणिज्यकर्मवृत्तिश्च बुधेन तु विचिन्तयेत् ।। गुरुणा देहपुष्टिं च बुद्धिपुत्रार्थसंपदः ।।३।। भृगोर्विवाहकर्माणि भोगस्थानं च वाहनम् ।। वेश्यास्त्रीजनगात्राणि शुक्रेणैव निरीक्षयेत् ।।४।। आयुष्यं जीवनोपायं दुःखशोकमहद्भयम् ।। सर्वक्षयं च मरणं मंदेनैव निरीक्षयेत् ।।५।। रविः पिता शशी माता भ्राता भौमौ बुधः सुहृत् ।। मातुलेयः स्मृतो जीवो ज्ञानपुण्ये स्त्रियः सितः ।। एषामृक्षे च तत्काले मरणं कुरुते शनिः ।।६।। तत्तत्कारकभावकर्णगुणितं शोध्यावशिष्टं फलं विंशत्या सह सप्तभिश्च विहृतं तच्छेषतारा शनौ ।। तातः स्याज्जननी सहोदरजवो बंधुः सुतः स्त्री स्वयं तत्तुल्यं विलयं प्रयाति विपुलं श्रीनाथहेतुश्च वा ।।७।।

अष्टकवर्ग फल

सूर्य से विचारणीय फल, अपना प्रभाव, शक्ति तथा अपने पिता का स्वास्थ्य, जीवन, मरण आदि। चन्द्रमा से मानसिक स्थिति बुद्धि (बोध=ज्ञान) तथा माता के विषय में स्वास्थ्य, जीवन आदि विचारना चाहिए।। मंगल से बल, साहस, भ्राता सम्बन्धी विचार, भूमि तथा गुणों का विचार। बुध से व्यापार, वृत्ति शुभाशुभ कर्म का विचार करना। बृहस्पतिसे शरीरकी पुष्टता तथा पुत्रसन्तान सम्बन्धी विचार, धन तथा बुद्धि का विचार करना।। शुक्र से विवाह, भोग तथा वाहन का विचार एवं भार्या का स्वरूप आदि का विचार।। शनि से आयु का विचार स्वास्थ्य, दुःख, शोक, भय, हानि आदि का विचार करना। ग्रहों में स्थिरकारकता-सूर्य,-पिता। चन्द्रमा मातृकारक। मंगल भ्राता। बुध मित्र। बृहस्पति मामा। शुक्र स्त्री एवं ज्ञान और पुण्य। शनि मृत्युकारक है। आगे जो इन ग्रहों के नक्षत्र बताये जाँयगे उनमें उपर्युक्त फल का विचार करना चाहिए।।ये बताये गये कारक ग्रह तथा भावोंके गुणक से शोधित पिण्ड संख्या को गुणा करके २७ का भाग देने पर जो शेष रहे उस संख्या के नक्षत्र पर जब शनि हो तब भावानुसार जननी, बंधु, सहोदर भ्राता, पुत्र, स्त्री, आदि का नाश एवं स्वयं जातक की मृत्यु का विचार करना।।७।। (शार्दूलविक्रीड़ित)

आदित्याष्टकवर्गं च निक्षिप्याकाशचारिषु ।। अर्कस्थितस्य नवमो राशिः पितृगृहं स्मृतम् ।।८।। तद्राशिफलसंख्याभिर्वर्द्धयेद्योगापिंडकम् ।। सप्तविंशोद्धृतं शेषं नक्षत्रं याति भानुजम् ।।९।। तस्मिन्काले तस्य तस्य भावस्यार्तिं विनिर्दिशेत् ।। तस्मिन्काले पितृक्लेशो भवतीति न संशयः ।।१०।। तत्त्रिकोणगते वापि पितापितृसमोऽपि वा ।। मरणं तस्य जानीयाद्दशाछिद्रेषु कल्पयेत् ।।११।। अर्कात्तु तुर्यगे राहौ मंदे वा भूमिनंदने ।। गुरुशुक्रेक्षणमृते पितृहा जायते नरः ।।१२।। लग्नाच्चंद्राद्गुरुस्थाने याते सूर्यसुते यदि ।। पित्रोर्नाशं तदा काले वीक्षिते पापसंयुते ।।१३।। दशानुकूलकालेन योजयेत्कालवित्तमः ।। लग्नात्सुखेशराशीशदशायां च पितृक्षयः ।।१४।। सुखनाथदशायां तु बहुप्राप्तेश्च संशयः ।। पितृजन्माष्टमे जातस्तदीशे लग्नगेपि वा ।।१५।। तेनैव पितृकार्याणि कारयेन्नात्र संशयः ।। सुखेशे लाभलग्नस्थे चंद्रलग्नाद्विशेषतः ।।१६।। पितृगृहं समायुक्ते जातः पितृवशानुगः ।। तेनैव पितृकार्याणां कर्मशेषं समापयेत् ।।१७।।

(अब फलाफल विचार की राशि कहते हैं गणित सिद्ध ग्रहों द्वारा सूर्याष्टिक वर्ग के पिण्डांक संख्या पर विचार करने के लिए) सूर्य से नवमभावराशि पिता का स्थान है, उस नवमभाव की राशि के फलांक से सूर्याष्टिक वर्ग के पिण्ड को गुणा करके २७ का भाग देने पर जो शेष रहे सो सूर्य का नक्षत्र जानना। उस नक्षत्र पर सूर्य का (गोचर) संचार होने पर सूर्य जब तक उस नक्षत्र पर रहे तब तक कथित भाव की हानि तथा पिता को क्लेश, या कष्ट होता है, इसमें कोई संशय नहीं है। और उस नक्षत्र से ५।९ नक्षत्र पर भी सूर्य संचार होने पर पिता या चाचा, ताऊ (पिता के ज्येष्ठ भ्राता) को मरण या कष्ट निश्चय होता है। यह समस्त विचार सूर्य की दशा अथवा उस भाव की चरपर्यादशा के वर्ष में अवश्य करना चाहिए। (अब कुछ विशेष योग कहते हैं) सूर्य से चतुर्थ भाव में राहु हो या मंगल अथवा शनि हो और गुरु तथा शुक्र की दृष्टि नहीं हो तो (दशानुकूल समय में) पिता की मृत्यु होती है।।

लग्न से या चन्द्रमा से नवम स्थान पर शनि हो तो दशानुकूल समय पर पिता की मृत्यु होती है परन्तु पापग्रह की दृष्टि अवश्य होनी चाहिए।। इसी प्रकार लग्न से चतुर्थ भाव राशि के स्वामी की दशा में भी पितृक्षय जानना। चतुर्थेश की दशा में बहुत द्रव्य आदि की प्राप्ति में संशय जानना। पिता के जन्म लग्न से ८वीं राशि में जातक का जन्म हो अथवा अष्टमभाव का स्वामी लग्न में हो तो उसीसे पिता सम्बन्धी कार्य हों (पिता की मृत्यु हो)। चतुर्थेश लाभ राशि में हो विशेषकर के चन्द्रमा से चतुर्थेश लाभ भाव में या दशम भाव में हो तो जातक पिता का आज्ञाकारी होता है। और उसी से पिता सम्बन्धी सब कार्य होते हैं ।।८-१७।।

पितृजन्मतृतीयर्क्षे जातः पितृधनाश्रितः ।। पितृकर्मगृहे जातः पितृतुल्यगुणान्वितः ।।१८।।
तदीशे लग्नसंस्थेपि पितृश्रेष्ठो भवेत्सुतः ।। सूर्याष्टवर्गे यच्छून्यं मासं संवत्सरं प्रति ।।१९।।
विवाहव्यवहारादि मासे ऽस्मिन्वर्जयेत्सदा ।। कलहो मासदुःखानि शून्यमासे भवंति च ।।२०।।
एवमादिफलं ज्ञात्वा मासं प्रति समाचरेत् ।। संशोध्य पिंडं सूर्यस्य रंध्रमानेन वर्द्धयेत् ।।२१।।
द्वादशादिहृताच्छेषं मेषादि गणयेत्पुनः ।। तस्मिन्मासे मृतिं विंद्यात्तत्त्रिकोणगतेपि वा ।।२२।।
सूर्यादि कल्पयेत्त्वन्ये परतो भास्करे स्मृतिः ।। विशेषं भावसूत्रेऽग्रे पितुर्दायादिकं दिशेत् ।।२३।।

पिता के जन्म लग्न से तीसरी राशि में जन्म हो तो जातक पिता के धन पर आश्रित रहता है तथा १०वीं राशि पर जन्म हो तो पिता के बराबर विद्या और गुणयुक्त होता है। और वही दशमेश यदि लग्न में हो तो पिता से भी बढ़कर गुणवान् होता है। सूर्याष्टिक वर्ग में जो शून्य संख्या है उस संख्या के महीने और वर्ष में विवाहादि, शुभ कार्य नहीं करने चाहिए। क्योंकि उस महीने में कलह दुःख होते हैं।। इस प्रकार अष्टक वर्ग के विचार से महीना जानना। सूर्याष्टिक वर्ग के पिण्ड को अष्टमभाव के नीचे के अंक से गुणाकर १२ का भाग देने से जो संख्या बाकी रहे, मेष आदि क्रम से गिनकर जो महीना प्राप्त हो उस महीने में जब सूर्य हो तो पूर्वोक्त कहे हुए सब फल प्राप्त होने की संभावना है। और इसका विशेष विचार आगे कहा जायेगा। १८-२३।।

उदाहरण-सूर्य से ९वीं राशि पिता का घर है यह कह चुके हैं। यहां सूर्य कुम्भ राशि में है। उसकी ९वीं राशि तुला है। उसके नीचे अष्टक वर्ग का फल ६ है। और पिण्ड योग ९१ है। ६ से गुणा किया तो ५४६ हुआ। इसमें २७ का भाग किया तो लब्धि २० हुई जिसे छोड़ दिया। बाकी अंक ६ प्राप्त हुआ। अश्विनी से गिना तो आर्द्रा नक्षत्र हुआ। अतः आर्द्रा नक्षत्र में शनि के आने पर पिता को कष्ट या मृत्यु हो। इसी तरह आर्द्रा के त्रिकोण नक्षत्र स्वाती और शतभिषा नक्षत्र होने पर भी पिता को कष्ट या मृत्यु हो।। अथवा सूर्य का पिण्ड ९१ को ३ से गुणा किया तो २७३ हुआ। इसमें १२ का भाग किया तो लब्धि २२ व्यर्थ और शेष ९ बचे, तो धन राशि प्राप्त हुई। अतः ज्ञात हुआ कि धन राशि में शनि होने पर और धन के त्रिकोण मेष और सिंह राशि में शनि होने पर पिता को कष्ट या मृत्यु हो। पिता के अभाव में पिता के समान चाचा आदि को कष्ट या मृत्यु हो।

अथ चन्द्रफलमाह

चंद्राच्चतुर्थगे मातुः प्रासादग्रामचिंतनम् ।। चंद्राष्टवर्गे शून्यं च शून्यराशिगते विधौ ।।२४।। तन्नक्षत्रं परित्यज्य शुभकर्माणि कारयेत् ।। चंद्राष्टमे शनिक्षेत्रेत्रितयेषु विशेषतः ।।२५।। आयामव्याधिदुःखानि लभते नात्र संशयः ।। चन्द्रात्सुखफलात्पिण्डं वर्धयेच्छोध्यपूर्ववत् ।।२६।। शेषे मृगे शनौ याते मातृहानिं विनिर्दिशेत् ।। तत्त्रिकोणेषु वा केचिद्दशाछिद्रेषु कल्पयेत् ।।२७।। चन्द्राल्लग्नात्सुतस्थाने भौमे वा भास्करात्मजे ।। दृश्यते वा तयोः स्थानं पूर्वोक्ते कालसंगते ।।२८।। तदभावे स्वयं मृत्युर्दशान्तरगतेऽपि वा ।। चन्द्रात्सुखेष्टमे राशेस्त्रिकोणे दिवसाधिपे ।।२९।। मात्रा वियोगश्चास्तीति निर्दिशेल्लग्नतः पितुः।। पितुर्वा मातृचिन्ताया भास्करादीन् प्रकल्पयेत् ।।३०।।

चन्द्रमा का फल

चन्द्रमा से चौथे भाव में माता, मकान, ग्राम, भूमि आदि का विचार करना चाहिए। चन्द्राष्टक वर्ग में यदि शून्य संख्या हो और चन्द्रमा भी शून्य राशि पर हो तो चन्द्रमा के नक्षत्र को छोड़कर बाकी नक्षत्रों में शुभ काम करे। चन्द्रमा से ८वें नक्षत्र से तीन नक्षत्रों में शनि के नक्षत्र हैं। उनमें रोग, व्याधि, दुःख आदि होता है। चन्द्रमा से ४थे भाव के पिण्ड को चौथे भाव के फलसे गुणा करने पर शेष नक्षत्र प्राप्त होगा। शेष नक्षत्र यदि मृगसिर हो और उसमें शनि आये तो माता की मृत्यु होती है। तथा उसके त्रिकोण नक्षत्रों में भी शनिचारसे माता की मृत्यु होती है। और चतुर्थभाव राशि की दशा में भी ऐसा ही समझना। चन्द्रमा या लग्न से ४थे स्थान में मंगल या शनि हो अथवा पूर्वोक्त रीति से मंगल शनि चन्द्र नक्षत्र पर आते हों तो जातक को कष्ट या मृत्यु प्राप्त होती है। चन्द्रमा से ४थे ८वें भाव अथवा ९वें ५वें भाव पर सूर्य हो तो माता से वियोग होता है। ऐसे ही चन्द्रमा से माता और चन्द्रमा से सूर्य पूर्वोक्त इसी रीति से पिता के लिये फलकारक है ।।२४-३०।।

उदाहरण :(कल्पित उदाहरण में) चन्द्रमा धन राशि में है। अष्टम सिंह राशि। उसका स्वामी सूर्य घनिष्ठा नक्षत्र में हो, रेवती तथा ज्येष्ठा नक्षत्र में हो तो रोग, व्याधि, दुःख देता है। इसलिये इन नक्षत्रों में विवाह आदि शुभ कार्य न करे। चन्द्रमा से सुखस्थ स्थान १२, इसका अष्टक वर्ग से प्राप्त हुआ फल ३। योग पिण्ड ९१ को ३ से गुणा किया तो २७३ हुआ। २७ का भाग दिया तो शेष ३ बचा। अतः कृत्तिका नक्षत्र और उसका त्रिकोण उत्तरा फाल्गुनी और उत्तराषाढ़ा नक्षत्र पर शनि होने पर माता को कष्ट या मृत्यु हो। राशि के लिये योग पिण्ड ९१ को २से गुणा किया तो १८२ हुआ। १२ का भाग दिया तो २ शेष रहा: इस प्रकार वृष राशि तथा उसकी त्रिकोण राशि कन्या और मकर राशि के शनि में माता को कष्ट या मृत्यु हो। माता के अभाव में माता के समान मौसी आदि को फल हो।।

अथ भौमफलमाह

भोमाष्टवर्गे संचिन्त्यं भ्रातृविक्रमधैर्यकम्।। भौमस्थितस्य सहजो राशिर्भ्रातृगृहं स्मृतम् ।।३१।। त्रिकोणे शोधनं कृत्वा यत्र भूयांसि तत्र च ।।३२।। भौमो बलविहीनश्चेद्दीर्घायुर्भ्रातृको भवेत् ।।

फलानि यत्र क्षीयंते तत्र भूमितराः स्मृताः ॥३३॥ तद्राशिफलसंख्यैश्च वर्धयेच्छोध्यपूर्ववत् ॥ शेषमृक्षं शनौ याते भ्रातृहानिं विनिर्दिशेत् ॥३४॥

भौम फल

भौमाष्टक वर्ग में भ्राता, पराक्रम, साहस का विचार करना चाहिए। मंगल से ३रा भाव भ्राता का घर है। त्रिकोण शोधन करके विचार करना चाहिए। मंगल यदि बलहीन हो तो भ्राता दीर्घायु होता है। मंगल बलवान् हो तो भ्रातृभाव की हानि करता है। पूर्ववत् पिण्ड से नक्षत्र निकाल कर देखना चाहिए। उस नक्षत्र पर शनि हो तो भ्राता की मृत्यु होती है३१-३४॥

उदाहरण : (कल्पित) मंगल मीन राशि का है, इससे ३रा राशि वृष हुआ। उसका फल २ है। मंगल का योग पिण्ड ५९ इसको २ से गुणा किया तो ११८ हुआ। २७ का भाग किया तो शेष १० रहे। अतः मघा नक्षत्र और इसका त्रिकोण नक्षत्र मूल और अश्विनी इनमें शनि होने पर भ्राता को कष्ट हो॥ राशि के लिये पिण्ड ५९ अष्टमभाव राशि अंक ३ से गुणा किया तो १७७ हुआ। १२ का भाग किया, शेष ९ धन राशि हुआ। अतः धन, मेष, सिंह राशि के शनि होने पर भ्राता को कष्ट हो।

अथ बुधफलमाह

बुधात्तुर्यं कुटुंबं च धनपुत्रादिमातुलाः तत्पंचमे मंत्रविद्यालिपिबुद्ध्यादि चिंतयेत् ॥३५॥ बुधाष्टवर्गं संशोध्य शेषमृक्षगते शनौ ॥ बंधुमित्रविनाशादील्लँभते नात्र संशयः ॥३६॥

बुध फल

बुध से दूसरा और चौथा स्थान धन, पुत्र और मामा का होता है। पांचवां स्थान मन्त्र सिद्धि विद्या, कला-कौशल का है। अतः उपर्युक्त स्थानों से उनके फलों का विचार करना चाहिए। बुध के अष्टक वर्ग का शोधन करके बताये हुए भाव की राशि से गुणाकर २७ का भाग देने से शेष नक्षत्र में शनि हो तो बन्धु, मित्र आदि का विनाश करता है, इसमें कोई संशय नहीं।

उदाहरण : (कल्पित) बुध मकर में है, इसका ४था मेष राशि है। इसके नीचे का फल ४ है। बुध का योग पिण्ड १३२ है। इसे ४ से गुणा किया तो ५२८ हुआ। २७ का भाग किया तो शेष १५ रहा। अतः स्वाती (त्रिकोण नक्षत्र शतभिषा और आर्द्रा) नक्षत्र में शनि होने पर बन्धु, मित्र आदि को कष्ट होता है। राशि निकालने के लिये योग पिण्ड १३२, अष्टम भाव का फलाङ्क ५ से गुणा किया तो ६६० हुआ। १२ का भाग दिया, शेष शून्य रहा। अतः मीन, कर्क वृश्चिक राशि के शनि होने पर बन्धु,पिता,मित्र आदिको कष्ट हो।इसी प्रकार पंचम स्थानसे विचार करना चाहिए।

अथ गुरुफलमाह

जीवात्पंचमतो ज्ञानं पुत्रधर्मधनादिकम् ॥ गुरोरष्टकवर्गेषु संतानमपि कल्पयेत् ॥३७॥

गुरुस्थितसुतस्थाने यावच्च विद्यते फलम् ।। शत्रुनीचग्रहं त्यक्त्वा तावंतश्च सुताः स्मृताः ।।३८।। संख्या नवांशतुल्या वा तदीशस्थाऽथ वा पुनः ।। सुतभेशनवांशैश्च समानावधि कल्पयेत् ।।३९।। गुरोरष्टकवर्गेषु शोध्यशेषफलानि च ।। क्रूराश्रितफलं त्यक्त्वा शेषास्तस्यात्मजाः स्मृताः ।। व्ययार्थसुतसंस्थैश्च पापैः स्यात्क्षीणसंततिः ।।४०।। गुरोरष्टक वर्गेषु सुतराशिस्थितं समम् ।। अल्पात्मजः स विज्ञेयो गुरोः पंचमगेऽपि वा ।। तदीशयोगदृष्टे वा तदा पुत्रान्समादिशेत् ।।४१।। एतैर्बुहुप्रकारैश्च कल्पयेत्कालवित्तमः ।। बहुलक्षणसंयोगे तदा तस्मिन्समादिशेत् ।।४२।। वंशक्षयादियोगश्च पुरस्ताद्वक्ष्यते मया ।। पूर्वोक्तलक्षणेनात्र वंशभर्तुः समादिशेत् ।।४३।।

गुरु फल

बृहस्पति से पंचम भाव में ज्ञान, पुत्र, धर्म, धन आदि का विचार करना चाहिए। गुरु के अष्टकवर्ग में सन्तान का भी विचार होता है। गुरु राशि से ५वें स्थान में जो फलाङ्क हो उसमें शत्रु राशि के और नीच राशि के ग्रह की संख्या घटाकर बाकी जो संख्या शेष रहे, जातक के उतने ही पुत्र होते हैं। अथवा बृहस्पति स्थित नवांश के बराबर पुत्र हों। अथवा गुरु राशि के स्वामी के बराबर संख्या जानें। अथवा स्वामी के नवांश राशि के बराबर संख्या जानें। अथवा गुरु के अष्टकवर्ग में जो फलं हो उसमें पापग्रह की संख्या घटाकर बाकी यथार्थ पुत्रों की संख्या जानें। दूसरा और बारहवां तथा पांचवां भाव इनमें पापग्रह जितने हैं उतनी संख्या की संतान नष्ट हुई जानें। गुरु के अष्टकवर्ग में पंचम भाव में यदि सम राशि हो तो पुत्र कम कन्या अधिक हों। अथवा गुरु से पंचम भाव में भाव के स्वामी की दृष्टि या योग हो तो पुत्रों की संख्या जानें। इस प्रकार अनेक रीतियोंसे विचार करके पुत्रों की संख्या कहे और आगे हम वंश क्षय अथवा संतान हीन के योग कहेंगे। पूर्वोक्त लक्षणों से वंश कर्ता संतान का लक्षण कहा गया है। ।।३७-४३।।

उदाहरण :(कल्पित) गुरु कुम्भ राशि में है, इसकी पंचम राशि वृष है। उसका फल ४ है। गुरु का योग पिण्ड ९१ है। परस्पर गुणा किया, तो ३६४ हुआ। २७ का भाग दिया तो शेष ११ रहा। अतः पूर्वा फाल्गुनी, पूर्वाषाढ़ा और भरणी नक्षत्र में शनि होने पर संतान कष्ट हो। अथवा योगपिण्ड ९१ को अष्टम राशि के अंश ५ से गुणा किया तो ४५५ हुआ। १२ का भाग दिया तो शेष ११ रहा। अतः कुम्भ, मिथुन और तुला राशि के शनि में संतान कष्ट हो।

अथ शुक्र फलमाह

भृगोरष्टकवर्गं च निक्षिप्याकाशचारिषु ।। येषु येषु फलानि स्युर्भूयांसि किल तत्र तु ।।४४।। भूमिं कलत्रं वित्तं च तद्देशे निर्दिशेन्नृणाम् ।। शुक्राज्जामित्रतो लब्धिदरिशान्वितदिग्भवा ।।४५।। दाराधिपस्थितं क्षेत्रं दारजन्मर्क्षकं विदुः ।। तस्योच्चनीचराशौ वा केचिदिच्छंति तद्विदः ।।४६।। तस्यांशकत्रिकोणे वा भार्याया जन्म संभवेत् ।। लग्नेन्द्वोर्भाग्यभं जन्म लग्नभं परिकीर्तितम् ।।४७।। तयोः समागमर्क्षे च कल्पयेत्तत्र बुद्धिमान् ।। स्वक्षेत्रस्वोच्चगो वापि स्वभिन्नर्क्षगतोऽपि वा।।४८।। स्वमित्रांशगतो वापि वक्तव्यं दारलक्षणम् ।। शुक्रजामित्रतो लब्धिस्त्रिकोणाद्देशदिक् स्त्रियः ।।४९।।

शुक्र फल

शुक्र का अष्टक वर्ग फल निकालना चाहिए। जिन २ भावों में फलाङ्क संख्या अधिक हो उन भावों के देश के अनुसार भूमि, स्त्री, धन, व्यापार आदि का निर्देश करना चाहिए। शुक्र के सातवें घर के स्वामी से युक्त जो राशि हो उस राशि के दिशा से उपर्युक्त भूमि, स्त्री, धन आदि की प्राप्ति हो, ऐसा कहना चाहिए। सप्तमेश स्थित नक्षत्र में जातक की स्त्री का जन्म हो। कोई आचार्य ऐसा कहते हैं कि सप्तमेश की उच्च राशि और नीच राशि में उसका जन्म नक्षत्र हो। अथवा सप्तमेश के नवांश की राशि या उसकी त्रिकोण राशि में जन्म होना चाहिए। लग्न तथा चन्द्रमा के नवम भाव की राशि स्त्री का जन्म लग्न हो। अथवा लग्न चन्द्रमा की सम्बधित राशि में जन्म लग्न हो। स्त्री के लक्षण का विचार-सप्तमेश स्वक्षेत्र या उच्च का हो अथवा अपने नवमांश में या मित्रांश में हो तो उस राशि के अनुसार स्त्री का लक्षण कहें। स्त्री का स्थान-शुक्र के ७वें स्थान की राशि का अथवा उसके त्रिकोण राशि का देशकाल व दिशा कहना चाहिए।।४४-४९।।

प्रोक्तराशिर्यदा दारा जन्मर्क्षं संततिस्तदा ।। अनुक्तराशिर्जन्मर्क्षमस्ति चेन्नास्ति संततिः ।।५०।। भृगुदरिशयुक्तर्क्षं फलं संख्याः स्त्रियो विदुः ।। क्षेत्रस्त्रीग्रहणे साम्यं नृपस्य द्विगुणं तथा ।।५१।। मंदांशे मंदसंयुक्ते मंदक्षेत्रेऽथवाभृगौ ।। नीचांशे पापसंयुक्ते नीचस्त्रीभोगमिच्छति ।।५२।। मेदिनीतनयभोगनिवासी मेदिनीभवसदालययुक्तः।।मंगलेक्षणयुतःसितस्तदाऽत्यंतसुंदरपरांगनारतः ।।५३।।भौमांशकगते शुक्रे भौमक्षेत्रगतेपि वा ।। भौमेन युतदृष्टे च परस्त्रीभोगमिच्छति।।५४।। दारागारे मंदभांशे कुजांशे मंदाराभ्यां वीक्षिते यस्य पुंसः ।। स्यात्तद्दारा जारिणी चंचला वा वेश्यादासी स्वामिसंतोषनिघ्नी ।।५५।। जामित्रे मंदभौमांशे तदीशे मंदभौमगे ।। वेश्या वा जारिणी वापि तस्य भार्या न संशयः ।।५६।।

ऊपर बताई हुई राशि यदि जन्म की राशि हो तो स्त्री संतानवाली और अनुक्त राशि हो तो स्त्री संतान रहित होती है। शुक्र और सप्तमेश की राशि को जोड़ने पर अधिक हो तो १२ से भाग देने पर जो संख्या शेष रहे सम्पर्कित स्त्रियों की उतनी संख्या अधिक से अधिक हो। यह संख्या औरों में उतनी ही तथा राजा में द्विगुण समझना। सप्तम स्थान में शनि का नवमांश हो, शनि युक्त हो तो, अथवा शनि की राशि में शुक्र हो और नीच नवमांश में पापग्रह से युक्त हो तो जातक नीच जाति की स्त्री का भोगी होता है। यदि शुक्र मंगल की राशि में या मंगल से युक्त या मंगल की दृष्टि हो तो सुन्दर परस्त्रीका भोगी होता है। सप्तम भाव में शनि का या मंगल का नवमांश हो। शनि मंगल की दृष्टि हो तो उस जातक की स्त्री चंचल, व्यभिचारिणी अथवा वैश्या होकर स्वामी के लिये असन्तोषजनक रहती है। सप्तम स्थान में शनि मंगल का नवमांश हो, सप्तमेश शनि मंगल के घर में हो तो जातक की भार्या वैश्या या व्यभिचारिणी निश्चय होती है।।५०-५६।।

पापारूढांशगे चंद्रे जामित्रे व्ययगेऽपि वा ।। पापग्रहान्विते शुक्रे स्त्रीहेतोः शुचमावहेत् ।।५७।। शुक्रांशकसमाना स्त्री वर्णरूपगुणान्विता ।। भवेच्छशांकतुल्या वा दारेशस्य गुणान्विता ।।५८।। सपापभागगे विधौ व्ययेंगनाऽलयेऽपि चेत् ।। सपापभार्गवेंगनानिमित्ततः शुचां पदम् ।।५९।।

सितांशकप्रमाणिकाः स्त्रियो भवंति सद्गुणाः ।। चरांशसंमितास्तथास्वनाथतुल्यसद्गुणाः ।।६०।। शुक्रान्मंदे त्रिकोणस्थे नेष्टं जीवे सुखप्रदम् ।। तेषां बलाबलत्वेन भार्याया लक्षणं वदेत् ।।६१।। एवमादि फलं ज्ञात्वा निर्दिशेच्छुक्रवर्गतः ।।६२।।

आरूढ लग्न के नवांश में पापग्रह युक्त चन्द्रमा ७वें या १२ वें स्थान में हो, शुक्र भी पापग्रहयुक्त हो तो जातक स्त्री के कारण दुःखी रहता है। स्त्री का वर्ण, रूप और गुण शुक्र के नवमांश के समान होना चाहिए। अथवा सप्तमेश के गुणों से युक्त चन्द्रमा के समान होना चाहिए। चन्द्रमा पापग्रह युक्त पापग्रह के नवांश में १२वें या ७वें स्थान में हो और शुक्र पापग्रह सहित हो तो स्त्री के कारण दुःखी रहता है। शुक्र के नवमांश के अनुसार स्त्रियाँ होती हैं। चर नवमांश के अनुसार उनके गुण होते हैं। अथवा नवमांश स्वामी के अनुसार उनके गुण कहने चाहिए।। शुक्र से शनि त्रिकोण में हो तो नेष्ट है। बृहस्पति त्रिकोण में हो तो सुख देनेवाला होता है। इस प्रकार शनि और गुरु का बलाबल देखकर स्त्रीका लक्षण कहना चाहिए। ऐसे शुक्राष्टक वर्ग का फल कहा गया।
उदाहरण :(कल्पित) शुक्राष्टक वर्ग का पिण्ड ४१ है। शुक्र से सप्तमभाव की राशि कन्या है जिसका फल ४ है उससे ४१ को गुणा किया तो १६४ हुआ। २७ का भाग देने पर शेष २ रहा। अतः भरणी, पूर्वा फाल्गुनी, पूर्वाषाढ़ा नक्षत्र पर शनि होने से स्त्री को कष्ट संभव है। तथा योग पिण्ड ४१ को ४ से गुणा किया तो १६४ हुआ। उसमें १२ का भाग दिया तो शेष ८ रहा। अतः वृश्चिक, मीन, कर्क राशि में शनि होने से स्त्री को कष्ट हो।।५७-६२।।

अथ शनिफलमाह

**शनैश्चरस्थितस्थानादष्टमं मृतिरुच्यते ।। शनेरष्टकवर्गे च स्वस्यायुष्यं विनिर्दिशेत् ।।६३।।
लग्नात्प्रभृति मंदांतं फलान्येकत्रकारयेत् ।। लग्नादिफलतुल्याब्दे व्याधिवैरं समादिशेत् ।।६४।।
मन्दादिलग्नपर्यंतं फलान्येकत्र संयुतम् ।। मंदादिफलतुल्याब्दे व्याधिं तस्य समादिशेत् ।।६५।।
तयोर्योगसमाब्दे तु मृत्युयोगं प्रचक्षते ।। शोध्यादिगुणनं कृत्वा पिंडं संस्थाप्य यत्नतः ।।६६।।**

शनि फल

शनि के अष्टम स्थान से मृत्यु का निर्देश किया जाता है इसलिये शनि के अष्टक वर्ग से जातक की आयु का विचार करे।। लग्न से आठवें स्थान तक के फलांकों को जोड़ना, उस जोड़ में आई हुई संख्या के वर्ष में व्याधि या द्वेष (लड़ाई-झगड़ा) होता है।। शनि के स्थान से लग्न तक की राशियों के फल का योग (जोड़) करे। आई हुई संख्या के वर्ष में व्याधि (रोग) होती है।। और आई हुई इन दोनों संख्याओं का जोड़ जो संख्या हो उस वर्ष में मृत्युयोग है। शनि के अष्टक वर्ग के पिण्ड की संख्या को गुणक से गुणा करके।।६६।।

**अष्टमस्थफलैर्हत्वा सप्तविंशतिभाजितम् ।। शताद्र्ध्वं तु तत्पिंडं शतमेवाग्रतस्त्यजेत् ।।६७।।
आयुः पिंडं तु जानीयात्प्राग्वद्वेलां तु कल्पयेत् ।। त्रिकोणैकाधिपत्यर्क्षशोधनं विरचय्य च ।।६८।।
पिंडं संस्थाप्य गुणयेल्लग्नादष्टमगैः फलैः ।। सप्तविंशतिहृच्छेषं मृत्युकालं वदेद्बुधः ।।६९।।**

समूलाष्टकवर्गे च यत्र नास्ति फलं गृहे ।। तत्र नास्ति फलं तस्य यदा याति शनैश्चरः ।।७०।। तद्गृहे रविचन्द्रौ चेद्दशाछिद्रे मृतिं वदेत् ।। दशाछिद्रसमायोगे मृत्युरेव न संशयः ।।७१।। मंदाष्टवर्गराशीनां हीनराशौ क्षयो भवेत् ।। तद्गृहे भास्करे मंदे तस्मिन्काले मृतिं वदेत् ।।७२।। मंदाष्टवर्गाद्यथरिष्टयोगे दुष्टानि वर्षाणि विचारयंति ।। पूर्वोक्तसंशोधनतो हि शुद्धं पिंडं सुधीमान्विलिखेत्पृथक्स्थम् ।।७३।। लग्नात्तु मंदान्तमथोफलानामैक्यं शनेर्लग्नमुपांत्यमेव ।। तद्योगतुल्ये शरदीहकाले व्याधिं मृतिं वा परदेशयानम् ।।७४।। धनक्षयं तत्प्रतितुल्यवर्षे तद्योगयोगाब्दसमे तु कष्टम् ।। सामर्थ्यहीनग्रहपाककाले प्राप्ते तदा निश्चयतो मृतिः स्यात् ।।७५।। विलग्नशनिमध्यगानिच फलानि संताडयेन्नगैर्भविहृतानि शेषमितभे खले याति चेत् ।। तदा धनसुखक्षतिं तदनुचांगभादष्टमस्थितैर्विगुणयेद्गणं भपरिशेषभस्थे शनौ ।।७६।।

अर्थात् अष्टमराशि के फलांक से गुणा करके २७ का भाग देने से। और गुणा किया हुआ अंक सौ (१००) से अधिक हो तो १०० की संख्या घटाने से आयु का पिण्ड होता है।। (अर्थात् लग्न से शनि के अष्टकवर्ग की राशियों के फलांक योग और शनि से लग्न तक की राशियों के फलांक योग का जोड़ आयु के वर्ष हैं।) इस प्रकार आयु का समय की कल्पना करे। त्रिकोण शोधन के बाद ऐकाधिपत्य शोधन किये हुए भावों की राशियों से पिण्डसंख्या लेकर अष्टमराशि के फलांक से गुणा करके २७ का भाग देने पर जो संख्या प्राप्त हो उस संख्या के नक्षत्र में शनि के संचार में मृत्युकाल जानना।। अष्टकवर्ग में जिस राशि के नीचे शून्य (फलांक) हो उस भाव की दशा में जब गोचर में शनि का संचार हो।। और सूर्य तथा चन्द्रमा को योग हो तो राशि की दशा या अन्तर में निश्चय मृत्यु होती है।। शनि के अष्टकवर्ग में जो हीन (बलहीन) राशि हो तो भी उस दशा में शनि का संचार हो तो मृत्यु जानना।। इस प्रकार शनि के अष्टकवर्ग से व्याधियोगों के दुष्ट वर्षों का विचार किया जाता है। अतः पूर्वोक्त त्रिकोण शोधन और ऐकाधिपत्य शोधन करके शुद्धता पूर्वक पिंड का आनयन करना चाहिए।। पूर्वोक्त क्रियानुसार लग्नसे शनि तक और शनिसे लग्न तक की जो योग संख्या होती है उस वर्ष में रोग, मृत्यु या परदेश यात्रा (चिन्ताकारी यात्रा) होती हैं। या तो हानि, चोरी आदि से धनक्षय होता है, या शारीरिक व्याधि होती है। और बलहीन ग्रह की दशा हो तो उसकी दशा में मृत्यु होती है।। लग्न से शनि तक की फलांक संख्या को ७ से गुणा कर २७ का भाग देने से जो नक्षत्रसंख्या प्राप्त हो उस नक्षत्र पर शनि (या राहु, मंगल) का संचार होने पर धनहानि, सुखक्षय होता है। इसी पिण्ड की संख्या को अष्टमराशि के फलांक से गुणा कर २७ का भाग देने से जो शेष संख्या हो उस नक्षत्र पर शनि का संचार होने से उपर्युक्त फल जानना ।।श्लोक ६७ से ७६ तक।।

उदाहरण : (कल्पित)-लग्न से शनि तक के फलांक १,४,४,३,४,३,२,३,४, इनका योग २८ हुआ अतः २८वें वर्ष में रोग या मृत्यु, हानि, परदेश यात्रा हो। शनि से लग्न तक के फलांक ४,५,२ इनका योग ११ हुआ, इस वर्ष में भी पूर्व के समान व्याधि, हानि, यात्रा आदि का योग है। और इन २८, ११ संख्या का योग ३९ हुआ, इस वर्ष में भी हानि, चिन्ता, कष्ट आदि जानना परन्तु मृत्युरोग नहीं है। लग्न से शनि तक के फल योग २८ को ७ से गुणा किया

तो १९६ हुआ, २७ का भाग दिया तो शेष ७ रहा, अतः पुनर्वसु नक्षत्र में पापग्रह के संचार में धनहानि या सुखक्षय हो। शनि के अष्टक वर्ग का योग पिण्ड १६९ इसको अष्टमभाव के फलांक ३ से गुणा किया तो ५०७ हुआ, इसमें २७ का भाग दिया तो शेष २१ रहे, अतः उत्तराषाढ़ा, कृत्ति का, उत्तराफाल्गुनी नक्षत्र में शनि के संचार होने पर धन, सुख की हानि हो।।

प्रयाति वियदब्दके सति दशद्यारिष्टे सति भृशं मरणनिश्चयं निगदितं तदा नो मृषा ।। त्रिकोण भवने ततोपि सति दुष्टपाकोदये प्रयाति मरणं पुमानपि च रक्षकश्चेच्छिवः ।।७७।।

शनि के अष्टकवर्ग में जिस राशि के नीचे शून्य हो, उस राशि में शनि हो या दशा हों और पापग्रह का योग हो अथवा पापदशा या अन्तर हो तो उस वर्ष में निश्चय मृत्यु या उसके त्रिकोण ५।९ राशि की दशा हो और पापग्रह का योग तथा शनि का संचार हो तो शिवजी रक्षा करें तो भी निश्चय मृत्यु होती है।।७७।।

पुनः भौमफलमाह

भौमांतं तनुतः कुजात्तनुलयं योगे फलानां तथा तत्तुल्यं शरदीह कष्टमनिशं शस्त्रानलोत्थं भयम् ।। मंदारांगभयोः फलैक्यकमिते सौम्योज्झिते शस्त्रभीर्मन्दारैक्यमिते फलक्षतिभयं राहोः सुखानां क्षतिः ।।७८।।

भौम फल

पूर्वोक्त अनुसार लग्न से मंगल और मंगल से लग्न तक जो फलांक योग है उस वर्ष में शस्त्र या अग्नि से भय होता है। शनि, मंगल की राशि के फलांक योग के वर्ष में यदि शुभग्रहयोग, दृष्टि रहित हो तो शस्त्र से भय होता है। और मंगल, शनि, राहु के फलयोग मित वर्ष में हानि, चिन्ता आदि नेष्ट फल होता है।।७८।।

उदाहरण (कल्पित) :-मंगल के अष्टकवर्ग में लग्न से मंगल तक के फल का योगांक ३६ अथवा मंगल से लग्न तक योगांक २ और इनका योगांक ३८ हुए। अतः २।३६।३८ इन वर्षों में रोग आदि कष्ट हो।। (शनि, मंगल के अष्टकवर्ग से यह फल कहा गया है)

अथ शुभाशुभफलमाह

शुभखचरफलैक्यं प्राप्तवर्षे नितांतं धनतनयसुखानां भाजनं स्यान्मनुष्यः ।। धरणितनयवर्गे बिंदुसंज्ञांतयोगे तनुलयमिह वर्षे पापगे मृत्युभीतिः ।।७९।। मार्तण्डपुत्राष्टकवर्गमध्ये यद्यद्गृहे शून्यफलं भवेच्च ।। तत्तद्भमध्ये रविजेऽथ सूर्ये तदा शरीरामय पीडनं स्यात् ।।८०।।

शुभाशुभ योगफल

शुभग्रहों के भाव राशियों के फल का जो योग हो, उस वर्ष में धनप्राप्ति, पुत्रसन्तान सुख आदि श्रेष्ठ फल प्राप्त होते हैं। और मंगल के अष्टकवर्ग में मंगल राशि से शून्यफलराशि तक की संख्या में तथा लग्न से अष्टमभावराशि तक के फलांकयोग के वर्ष में पापग्रह का योग होने पर मृत्युपर्यन्त का भय होता है।।७९।। शनि के अष्टकवर्ग में जिस जिस भाव में शून्य हो, उस उस राशि में शनि या सूर्य का संचार हो तब तब रोग, व्याधि आदि होते हैं।।८०।।

उदाहरण– (कल्पित)

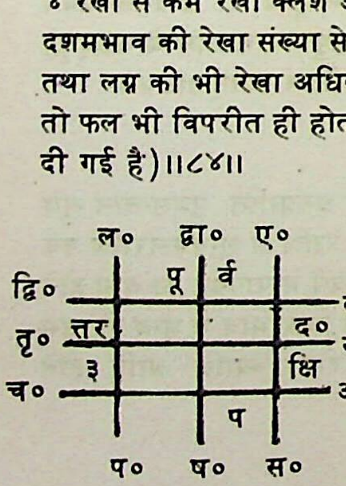
चन्द्राष्टकवर्गमें चन्द्रमा से लग्न तक फलयोग १५ और लग्न से चन्द्रमा तक फलयोग ३४ हुआ, अतः १५वें और ३४ वें वर्ष में धन, पुत्रादि की प्राप्ति का सुख हो। इसी प्रकार बुधाष्टकवर्गमें बुध से लग्न तक का फलयोग १४ और लग्न से बुध तक का फलैक्य ४२ हुआ, अतः १४ या ४२ वें वर्ष में धन प्राप्ति आदि का योग है। एवं गुरु के अष्टकवर्ग में गुरु से लग्न तक का योग ८ लग्न से गुरु तक का फलयोग ४८ है, अतः इन वर्षों में धन, पुत्र, सुख हो। इसी प्रकार शुक्राष्टक वर्ग में शुक्र से लग्न तक योग ४ आदि से तथा लग्न की राशि भी यदि शुभ हो तो उससे भी शुभफल का निश्चय करे। शनि के अष्टक वर्ग को राशियों में फलांक संख्या शून्य उक्त उदाहरण में नहीं है। अतः नहीं लिखा।।

अथ सर्वाष्टकवर्गफलमाह

मेषादिभानां सकलाष्टवर्ग उत्पन्नरेखागणमेव कुर्यात् ।। धृत्यादि १८ तत्त्वांतमितं कनिष्ठं त्रिंशावसानंकिल मध्यवीर्याः ।।८१।। त्रिंशाधिकं तूत्तमवीर्यदाः स्युः शरीरसौख्यार्थयशोविशेषाः ।। स्वस्वाष्टवर्गे यदि वेदहीनाः क्लेशाय सौख्याय च वेदपुष्टाः ।।८२।। दशमभवनरेखाभ्योधिकं लाभमानं भवति यदि विहीनं स्याद्व्ययाख्यं ततोपि ।। अधिकतरविलग्नं भोगसंपत्तिमुक्तं विनिमयवशतस्तद्वैपरीत्यं जनस्य ।।८३।। मध्या १० त्फलाधिको लाभो मध्यात्क्षीणफलो व्ययः ।। यस्य रेखाधिकं लग्नं भोगवानर्थवान् भवेत् विपरीते तु दारिद्र्यं भवत्येव न संशयः ।।८४।। प्रादक्षिण्यादिभानां सकलफलयुतिं दिक्चतुष्कक्रमेण कृत्वा तद्भागतो यः समधिकफलतः शोभनं हानिमल्पात् ।।८५।। सौम्याः स्वोच्चस्वगेहोदितखचरयुते दिग्विभागे स्वकार्ये वित्तेशाशासु वित्तं मृतिपतिगतदिग्भागगे देहनाशः ।।८६।।

सर्वाष्टकवर्गफल

सर्वाष्टिक वर्ग में मेष आदि १२ राशियों की रेखा संख्या को एकत्र योग करे। वह योग यदि १८ से २५ तक हो तो 'कनिष्ठ' है। २५ से ३० तक हो तो 'मध्य' है।।८१।। ३० से अधिक हो तो 'अधिक बली' है। शरीरसुख, धनसमृद्धि और यश वृद्धि करने वाली हैं। अपने अपने वर्ग में ४ रेखा से कम रेखा क्लेश और ४ या अधिक हों तो सुखकारिणी हैं।।८२।। (अन्यमत से–) दशमभाव की रेखा संख्या से लाभस्थान की रेखा अधिक हों और उससे व्ययभाव की कम हों तथा लग्न की भी रेखा अधिक हों तो सम्पत्ति और भोग से युक्त हो। तथा इससे विपरीत हो तो फल भी विपरीत ही होता है।।८३।। (स्वमत से भी–यही कहा है, अन्य की केवल सम्मति दी गई हैं)।।८४।।



चक्र में दिखाये हुए क्रम से चार दिशाओं में प्रदक्षिण क्रम से ३-३ भाव रखना, जिस दिशा के भावों का फल अधिक हो, वह दिशा लाभकारी होती है और फल अल्प हो तो हानिकारी जाने। और जिस दिशा के भावों में सौम्यग्रह उच्च, स्वगृही तथा उदित ग्रह हों, वह दिशा अपने व्यापार में धनलाभकारी है। इसी प्रकार अष्टमभाव की दिशा मृत्युकारिणी है।।८६।।

अथ भावफलमाह

भावं विलोक्य सदसत्फलदायकं यत्तद्राशिसंभवफलैश्च तदुक्तपिंडम् ।।८७।। पिंडे रेखाताडिते भावशेषे १२ राशौ तस्मिन्याति सौरिः समायाम् ।। यस्यां तत्तद्भावहानिं च विद्यात्प्राहुर्वंशे वाऽथवा तत्त्रिकोणे ।। कृत्वा बिंदुम्यस्तु कालं सुधीमांस्तस्माद्वाच्यःप्राप्तिकालः शुभत्वे ।।८८।।

भावफल

शुभ और अशुभ फलदायक भावों का फल प्राप्त करके पिण्ड करे, उसमें से इष्टभाव के पिंड को रेखा की संख्या से गुणा करके १२ का भाग दे, जो संख्या शेष रहे, उस संख्या के वर्ष में जब गोचर में शनि, उस भाव की राशि में अथवा त्रिकोण राशि में संचार करे तो उस भाव की हानि होती है, और पिंड को बिन्दु संख्या से गुणा करके १२ का भाग देकर भी यह फल जाने। और गुरु आदि शुभग्रह सञ्चार करे तो शुभफल प्राप्त होता है।।८७।।८८।।

तथा च

मृत्युभावेशभात् कोणनिघ्नफलं, मृत्युजं सूर्यशेषर्क्षयुक्ते रवौ ।। तत्त्रिकोणेऽथवा रिष्टमासं वदेत्, तातमातृगहाद्येऽथवा कल्पयेत् ।। सूर्यजाल्लग्नमृत्य्वीश्वरान्तं च तत्, पिण्डकं ताडितं मृत्युमानेन च ।। सूर्य शेषर्क्षगे भास्करे नाशनं तत्त्रिकोणेऽथवा स्याद्विधिः सर्वतः ।।८९।।९०।।

अष्टमभाव का स्वामी जिस राशि में हो उसके त्रिकोण शोधित फल से अष्टमभाव के फल को गुणा करे पश्चात् १२ का भाग दे जो अंकसंख्या शेष रहे उस राशि में सूर्य हो अथवा उससे त्रिकोण राशि में सूर्य हो उस सौरमास में अरिष्ट कहना चाहिये। इसी रीति से पिता के लिए दशम से अष्टमभाव तथा माता के लिए चतुर्थ से अष्टम भाव एवं भ्राता के लिए तृतीय से अष्टमभाव से अरिष्टमास की कल्पना करे।।८९।। अथवा शनि से लग्नपर्यन्त या अष्टमभाव पर्यन्त के त्रिकोणशोधितफल के योग को अष्टमभाव के फल से गुणा करे, पश्चात् १२ का भाग देने से जो संख्या शेष रहे उस संख्यक राशि में सूर्य हो तब अथवा उससे त्रिकोण राशि में सूर्य हो तब हानि तथा कष्ट होता है। यह विधि पिता माता आदि भावों में भी समझना।।९०।।

मीनाद्यं मिथुनान्तकं प्रथमकं प्रोक्तं वयः प्राक्तनैः, कर्काद्यं वणिजान्तकं तरुणतासंज्ञं च मध्यं बुधैः ।। कुम्भान्तं स्थविराह्वयं च ःबहुभिर्यत् तत् फलैः संयुतं तत्सौख्यार्थ विशेषकं बल युते नैतद्विशेषाच्छुभम् ।।९१।।

आयु के तीन भाव के अनुसार 'मीन, मेष, वृष, मिथुन' ये चार राशियां आयु के प्रथमभाग में तथा 'कर्क, सिंह, कन्या, तुला' ये चार राशियां आयु के द्वितीयभाग में तथा 'वृश्चिक, धनुः, मकर, कुम्भ, ये चार राशियां आयु के तृतीय भाग में समझना । जिस भाग की राशि में फल अधिक हो आयु के उस भाग में अधिक सुख,धन आदि विशेष होता है। ऐसा प्राचीन आचार्यों ने कहा है।।९१।।

अथ राहुयुक्तगुरुफलमाह

राहुयुक्तगुरुराशिगे ९।१२ गुरौ तत्त्रिकोणमथ रिष्टकारकम् ॥ अल्पमृत्युरिपुभावनायको योगकृत्तदिह मृत्युसंभवः॥९२॥ लग्नेंदुतस्त्रिंशतिमे दृकाणे गुरौ त्रिकोणेपि तदीश्वरस्य ॥ वर्षे विवादो परदेशयानं शरीरपीड़ा मृतिसन्निभास्यात् ॥९३॥

राहुयुक्त गुरुफल

जन्मलग्न यदि गुरुराशि ९।१२ हो, और उसमें राहु स्थित हो तो गोचर में जब बृहस्पति इस राहुस्थित राशि में या उससे त्रिकोण राशि में संचार करे तब अरिष्ट होता है। और यदि षष्ठेश से सम्बन्ध हो तो मृत्यु भी संभव हैं।।९२।। जन्मलग्न या चन्द्रलग्न से तीसवें द्रेष्काण में गुरु हो अथवा लग्नेश या चन्द्रलग्नेश के साथ ५।९ (त्रिकोण) स्थान में जिस वर्ष में गुरु संचार करे तो उस वर्ष में पारिवारिक कलह, विदेश यात्रा, शरीर पीड़ा व मृत्युतुल्य कष्ट होता है।।९३।।

अथ निधनार्कमाह

मृत्युपद्द्वादशांशत्रिकोणेऽसुरो मृत्युनाथत्रिकोणस्थसूर्ये मृतिः ॥ अर्कलिप्ताहतो राहुलिप्तागणश्चक्रलिप्ता २१६०० प्तयुक्तो रविर्मृत्युदः ॥९४॥ भौममार्तंडलिप्ताहतिःकारयेच्चक्रलिप्ताहताल्लब्धयुक्तो रविः ॥ याति यस्मिंस्तदा तत्त्रिकोणेपि वा क्लेशमाहुः क्षयं मासि धीमान्वदेत् ॥९५॥

अथ श्लोकद्वयं लग्नविषयकमाह

निधनेशद्वादशांशत्रिकोणे भास्करे मृतिः ॥ निधनेशत्रिकोणे वा सूर्यादिष्वागतेष्वपि ॥९६॥ षष्ठाष्टमव्ययेशानां स्फुटयोगगते शनौ॥ मृतिं तत्र विजानीयात्तत्त्रिकोणगतेऽपि वा ॥९७॥

निर्धनार्क साधन (अवश्य ज्ञातव्य)

निधनार्क–अर्थात् जातक की मृत्यु किस सूर्य (सौरमास) में होगी, यह निश्चय करना।

अष्टमेश जिस द्वादशांश में हो उस राशि से त्रिकोण राशि में (गोचर में) जब राहु हो तब अष्टमेश से सूर्य जब त्रिकोण राशि में (गोचर में) संचार करे तब मृत्यु होती है। (इस नियम से मृत्यु का मास परिज्ञान हुआ, अब दिन और समय का ज्ञान कहा जाता है) सूर्य की राशि, अंश, घटी तथा राहु की राशि, अंश, घटी को घटचात्मक एकरस करे, इस घटचात्मक संख्या में से सूर्य के घटचात्मक अंक को पृथक् भी रखे, बाद सूर्य राहु की घटचात्मक संख्या का योग करे तथा इस योग पिण्ड में २१६०० (१२ राशि X३०X६०) का भाग दे, भाग देने से जो लब्ध घटचात्मक अंक संख्या प्राप्त हो, वह पृथक् स्थित सूर्य की घटचादि संख्या से युक्त करे, बाद ६० का भाग देकर अंश और अंशों में ३० का भाग देने से राशि, अंश, कलादि सूर्य स्फुट होगा। उपर्युक्त नियमानुसार सूर्य जिस मास में जिस दिन और जिस समय उक्त राश्यादि के समान हो उस मास के उस दिन में सूर्यागत समय में जातक की मृत्यु होगी।।९४।।

उदाहरण–(कल्पित)

कल्पना किया कि किसी जन्मपत्र में सूर्य स्पष्ट ५।७।१४।३० है तथा राहु २।४।३०।१० है, इन दोनों को कलादि पिण्ड किया तो सूर्य ९४२० और राहु ३८४० हुआ। इनको परस्पर

गुणित किया तो ३६१७२८०० हुआ। इसमें २१६०० का भाग दिया तो लब्ध घटचादि १६७४।४० आया। इसको सूर्य के कलात्मक पिण्ड में युक्त किया तो ११०९४।४० आया। इसका राश्यादि किया तो ६।४।५४।४० सूर्यस्पष्ट प्राप्त हुआ। सूर्य के ये राशि अंश जिस मास में जिस दिन मिलें उस दिन सूर्य की कला ५४ विकला ४० से इष्टसमय निकालकर मृत्यु का समय जाने। समय जानने की रीति यह है कि–उपर्युक्त राशि अंशात्मक सूर्य जिस दिन हो उस दिन के दैनिक सूर्य से कलादि का अन्तर करके अन्तर को ६० से गुणा करे पश्चात् गुणित संख्या तथा सूर्य की दैनिक गति को पलात्मक करके गतिसंख्या का भाग दे, लब्ध घटी पल को इष्ट जानना। इस इष्ट का घण्टा मिनट करना हो तो ५ का भाग देकर लब्ध अंक को द्विगुणित करना, यदि सूर्य प्रातःकालिक हो तो सूर्योदय में जोड़ना नहीं तो सूर्य स्पष्ट के समय में बढ़ाना। इष्ट सूर्य दैनिक सूर्यसे पीछे हो तो घटाना तब मृत्युकाल घण्टात्मक होगा।इस 'निधनार्क' की गणित को सावधानी से करना चाहिए। अथवा भौमस्पष्ट और सूर्यस्पष्ट को कलात्मक करके २१६०० का भाग देकर लब्ध अंक सूर्य में युक्त करना। तत् समान सूर्य जिस काल में हो अथवा उससे पंचम या नवम हो, उस समय क्लेश कष्ट या मृत्यु कहना।।९५।।
(यहां तक राहु तथा मंगल से सूर्य योग का फल कहा अब अष्टमेश आदि के द्वारा कहते हैं) अष्टमेश जिस द्वादशांश राशि में हो उससे ५।९ राशि में जब (गोचर में) सूर्य हो तब मृत्यु जानना। अथवा अष्टमेश से ही ५।९ नवम राशि में सूर्य हो तब मृत्यु जानना।।९६।। तथा ६।८।१२ इनके स्वामी के राशि, अंश, कला के योग के समान (गोचर में) जब राश्यादि शनि हो तब अथवा उस राशि से ५।९ वें (गोचर में) शनि हो तब मृत्यु जानना ।।९७।।
(यहां समय निर्देश पूर्वोक्त प्रकार से करना चाहिए) इन योगों में अन्य मारक योगों के विचार से संभवासंभव का विचार भी करना चाहिए।)

अथ निधनचन्द्रमाह

अष्टमेशत्रिकोणेविधुःस्याद्यदा योगमिंदौ तथा तन्नवांशेऽपि वा ।। तत्त्रिकोणे प्रयाते मृतिं निर्दिशेन्निश्चयात्स्वल्परेखोद्भवे वासरे ।।९८।।

अथनिधनलग्नमाह

जन्मलग्नेंदुगा नन्द ९ भागाः क्रमाद्द्वेदषष्टयंश ६४ राशौ प्रयाते तनौ ।। मृत्युजन्मांगनीचोदये शून्यगे दुष्टपाकोदये देहमुक्तिर्भवेत् ।।९९।।

अथ समुदायाष्टकवर्गफलमाह

सर्वाष्टकग्रहफलैर्विनियोगचक्रं मूत्यादिगुण्यमशुभं शुभमेव तत्र ।। जन्मादितःफलसमेतदशाः-समीक्ष्य यात्राविवाहसमये बहुमृत्युयुक्तः ।।१००।।

निधन चन्द्रज्ञान

अष्टमेश जिस राशि में हो उस राशि से त्रिकोण ५।९ राशि में अथवा अष्टमेश जिस

नवांश में हो उससे ५।९ नवांश राशि में जब चन्द्रमा सञ्चार (गोचर में) करे तथा चन्द्रराशि की रेखासंख्या कम हो तो निश्चय मृत्यु कहना चाहिए। (समयज्ञान रीति पूर्ववत्)।।९८।।

निधनलग्नज्ञान

१–जन्म लग्न अथवा जन्मकालीन चन्द्रमा जिस नवांश में हो, उससे ६४वी नवांश राशि के लग्न मे मृत्यु हो। २–अथवा लग्न या अष्टमभाव के त्रिकोण ५।९ राशि के लग्न में से जिस राशि में कम रेखा हो उस राशि के स्वामी की दशान्तर्दशा में मृत्यु जानना।।९९।।

इसी प्रकार यात्रा तथा विवाह समय में भी इस समुदायाष्टक वर्ग चक्र के अशुभ या शुभ राशियों के रेखा बिन्दु के फलाफल जन्मचक्र के समान ही विचार करना चाहिए।।१००।।

सर्वकर्मफलोपेते ह्यष्टवर्गक उच्यते ।। अन्यथा फलविज्ञानं दुर्ज्ञेयं गुणदोषजम् ।।१०१।। त्रिंशाधिकफला ये स्यू राशयस्ते शुभप्रदाः ।। त्रिंशांतं पंचविंशादिराशयो मध्यमाः स्मृताः ।।१०२।। अतिक्षीणफला ये च राशयः कष्ट दुःखदाः । श्रेष्ठराशिषु सर्वेषु शुभकार्याणि कारयेत् ।।१०३।।श्रेष्ठान्‌राशीन्मुहूर्तेषु योजयेन्मतिमान्नरः ।। तत्तज्जन्मप्रभावास्तु पुन्सस्तैःसार्द्धमाचरेत् ।।१०४।। कष्टराशिमुहूर्तेषु वर्जयेन्मतिमान्नरः ।। मध्यात्फलाधिके लाभो लाभात्क्षीणफले व्ययः ।।१०५।। लग्नं फलाधिकं यस्य भोगवानर्थवान् हि सः ।। विपरीतेन दारिद्रचं भविष्यति न संशयः ।।१०६।। लग्ने यावत्फलं चास्ति तद्दशायाः फलं वदेत् ।। मूर्त्यादिव्ययपर्यंतं दृष्ट्वा भावफलानि वै ।।१०७।।

इस सर्वाष्टकचक्रमें त्रिकोणशोधनादि सम्पूर्ण क्रिया कर सब राशियों की संख्या का योग करके विचार करना चाहिए। अन्यथा शुभाशुभफल का ज्ञान होना कठिन है।।१०१।। फलाफल–३० की संख्या से अधिक फलवाली राशियां (भाव) शुभ हैं, और २५ से ३० तक की संख्यावाली राशि मध्यम हैं। इससे कम संख्या की राशियां कनिष्ठ हैं।। जो राशियां बहुत कम फलवाली हों, वे कष्ट और दुःख देनेवाली होती हैं। अतः श्रेष्ठ राशियों में ही शुभकर्म करना चाहिए।।१०२।।१०३।। तथा मुहूर्तों में भी (तात्कालिक ग्रहस्पष्ट और भावस्पष्ट तथा अष्टकवर्गस्पष्ट करके तद्वारा) श्रेष्ठ राशि निश्चित करके लेना चाहिए, जन्मकाल से ज्ञात श्रेष्ठ राशि का ही योग करना।।१०४।। और जन्मकाल से ज्ञात हुई नेष्टराशि का परित्याग करना चाहिए।। जिसके जन्मकालिक अष्टकवर्ग में दशमभाव से एकादशभाव के राशि फल अधिक हों और लाभ भावसे रेखाफल व्ययभावका कम हो।।१०५।।तथा लग्नका भी रेखाफल अधिक हो तो वह मनुष्य अपने जीवन में भोगी और धनी होता है। विपरीत हो तो निश्चय ही दरिद्री होता है।।१०६।। लग्न से व्यवभाव पर्यन्त के फल (रेखासंख्या) देखकर जिस भाव की अधिक संख्या हो उसका श्रेष्ठ और न्यून का न्यून फल कहना चाहिए, यदि अत्यल्पफल हो तो क्षय और मृत्यु होती है।।१०७।।

अधिके शोभनं विद्यात्क्षीणे हीने च मृत्यवे ।। मध्यमे मध्यमं याति विचार्यं भावसंमतम् ।।१०८।। खंडत्रयं विनिक्षिप्य दशानयनवत्तथा ।। पापग्रहसमारूढं खण्डं क्लेशकरं स्मृतम् ।।१०९।।

सौम्यैर्जुष्टं शुभं ज्ञेयं मिश्रैर्मिश्रफलं वदेत् ।। खण्डत्रयफलं ज्ञात्वा दशाफलमुदीरयेत् ।।११०।। लग्नात् प्रभृति मंदांतमेकीकृत्य फलानि वै।सप्तभिर्गुणयेत्पश्चात्सप्तविंशोद्धृतात्फलम् ।।१११।। तत्समानगते पापे दुःखं वा रोगमादिशेत् ।। मन्दात्प्रभृति लग्नान्तमेवमेवं प्रकल्पयेत् ।।११२।। भौमा च्चलग्नपर्यंतमेकीकृत्य तु बिन्दव। पूर्ववद्गुणितं कृत्वा वर्षमेवं प्रकल्पयेत् ।।११३।। तद्वर्षे पापसंयुक्ते व्याधिमृत्युभयं भवेत् ।। वर्षेषु हीनभागेषु तद्भावं वर्जयेत्तदा ।।११४।। गोष्ठं क्षेत्रं कृषिं वापि श्रेष्ठराशो स्थितं शुभम् ।। क्षीणराशौ स्थितं द्रव्यं तद्द्रव्यं नाशतां व्रजेत् ।।११५।।

मध्यम श्रेणी का फल हो तो भाव के अनुसार मध्यम फल होता है।।१०८।। अष्टकवर्ग के १२ भावों के ३ खण्ड कल्पना करे, लग्न से ४ पर्यन्त प्रथम खण्ड, तथा ५ से ८ तक द्वितीय खण्ड और ९ से १२ तक तृतीय खण्ड कल्पना करे एवं इन खंडों में पापग्रह युक्त खण्ड को क्लेशकारी समझना।१०९।।तथा शुभग्रहयुक्त खण्डको शुभ एवं शुभ पापमिश्रितसे मिश्रित फल जानना। इस प्रकार तीनों खंडों के फल जानकर दशा का फल कहना चाहिए।।११०।। लग्न से शनिराशि तक के रेखा फल का योग करके सात से गुणा करके २७ का भाग देना।।१११।। भाग से जो लब्ध संख्या हो उस संख्या के वर्ष में दुःख या रोग होता है, इसी प्रकार शनि से लग्न तक देखना।।११२।। तथा भौम से लग्न तक की बिन्दुसंख्या का योग करने ७ से गुणा कर २७का भाग देना।११३।और लब्ध (तथा शेष) वर्षमें पापग्रहका संचार होने पर व्याधि तथा मृत्युभय होता है।। जिन वर्षों में पापफल हो, उन वर्षों में शुभकार्य नहीं करना चाहिए।।११४।। जमीन सुधारना तथा खेती आदि कार्य श्रेष्ठ राशि में शुभ होते हैं। क्षीण राशि में व्यापार आदि कार्यों में लगाया हुआ द्रव्य नष्ट होता है।।११५।।

वित्तेश्वरस्य दिग्भागे वित्तमाप्नोति निश्चितम् ।। रंध्रेश्वरस्य दिग्भागे देहस्तत्र विनश्यति ।।११६।। मेषादियद् गृहगता वसुसंख्यया तास्तद्भावपुष्टिबलबुद्धिकरा भवंति ।। षट्पंचसप्तस हितानि शुभप्रदानि त्रिद्व्येककर्णयुतभानि न शोभनानि ।।११७।। मिश्रं फलं भवति सागरकर्णयोगे रोगापवादभयदा यदि शून्यभावाः ।। एकादिकर्णयुतभानुमुखग्रहाणां भिन्नाष्टवर्गजनि सर्वफलं प्रवच्मि ।।११८।।

अथ मासफलमाह

संक्रमदिने ग्रहाणामष्टकवर्गेषु चारवशात् ।। रेखैक्याच्छुभमशुभं मासफलं तद्वशाद्दिनफलं च ।।११९।।

द्वितीय भाव का स्वामी जिस दिशा में हो उस दिशा से अवश्य धन की प्राप्ति होती है, एवं अष्टमेश जिस दिशा में हो उस दिशा में देह का नाश (मृत्यु) होता है।।११६।। अब इस अष्टकवर्ग के प्रत्येक भाव का भिन्न भिन्न फल कहते हैं कि—मेष आदि ६ राशियों में यदि आठ रेखाएं हों तो उस भाव की पुष्टि तथा ऐश्वर्य की वृद्धिकारक होती हैं, और इससे कम ५-६-७ रेखाएं भी शुभफलदायक ही हैं। एक, दो और तीन रेखाएँ अथवा बिन्दु शुभ नहीं है।।११७।। और सुख दुःख मिश्रित फल होता है और यदि ७ बिन्दु हों तो रोग, निन्दा तथा भयकारक होती हैं। इसी प्रकार एक आदि बिन्दु के अनुसार फल जानना।।११८।।

मासफल

सूर्य–के राशि संचार के समय अष्टकवर्ग में फल का विचार पूर्वोक्त रीति से करना, रेखाओं के योग से एक मास के फल का निर्णय तथा चन्द्रसञ्चार से दिन के फल का निर्णय करना चाहिए।।११९।।

अथ रेखाशांतिफलमाह

रेखाभिः सप्तभिर्युक्ते मासे मृत्युर्नृणां भवेत् ।। सुवर्णं विंशतिपलं दद्याद्द्वौ तिलपर्वतौ ।।१२०।। वसुभिर्जातिहीनः स शीघ्रं मृत्युवशो नरः ।। असत्फलविनाशाय दद्यात्कर्पूरजां तुलाम् ।।१२१।। रेखाभिर्नवभिः सर्पान्म्रियते मनुजो ध्रुवम् ।। अश्वैश्चतुर्भिः संयुक्तं रथं दद्याच्छुभाप्तये ।।१२२।। रेखाभिर्दशभिः शस्त्रात्प्राणांस्त्यजति मानवः ।। दद्याच्छुभफलावाप्त्यै कवचं वज्रसंयुतम् ।।१२३।। रुद्रैः प्राप्याभिशापं च प्राणैर्मुक्तो भवेन्नरः ।। दिक्पलैःस्वर्णघटितां प्रदद्यात्प्रतिमां विधोः ।।१२४।। आदित्यैर्जलदोषेण मानवस्य मृतिं वदेत् ।। भूमिं दद्याद्ब्राह्मणाय दद्याच्छुभफलं भवेत् ।।१२५।। त्रयोदशमितैर्व्याघ्रान्मानवो मृत्युमाप्नुयात् ।। विष्णोर्हिरण्यगर्भस्य दानं कुर्याच्छुभाप्तये ।।१२६।।

रेखा के दुष्ट फल की शान्ति

जिस मास में ७ रेखा हों तो मृत्यु का भय होता है, उसकी शान्ति के लिए २० पल सुवर्ण और दो ढेरी तिल की दान करे।।१२०।। यदि आठ रेखा हों तो स्वजाति से अपमान और मृत्युभय होता है। इस दोष की शान्ति के लिए कपूर से तुलादान करे।।१२१।। यदि नौ रेखा हों तो सर्प से मृत्यु का भय होता है, शान्ति के लिए ४ घोड़े युक्त रथ का दान करे।।१२२।। दस रेखा हों तो शस्त्राघात से मृत्यु होती है, शुभफल प्राप्ति के लिए हीरों से युक्त कवच का दान करे।।१२३।। ११ रेखा हों तो किसी के शाप से मृत्युभय होता है, शान्ति के लिए १० पल की सुवर्णनिर्मित चन्द्रमाकी मूर्त्ति का दान करे।।१२४।। १२रेखा हों तो जलसे मृत्युका भय है, शान्ति के लिए ब्राह्मण को भूमि का दान करे।।१२५।। तेरह रेखा से व्याघ्र का भय होता है, शान्ति के लिए विष्णु की सुवर्ण की प्रतिमा का दान करे।।१२६।।

अचिराज्जीवितं जह्याच्छक्रैः कालेन भक्षितः ।। वराहप्रतिमां दद्यात्कनकेन विनिर्मिताम् ।।१२७।। राज्ञो भयं तिथिमितैस्तत्र हस्ती प्रदीयते ।। रिष्टभूपैः कल्पतरोः प्रतिमां च निवेदयेत् ।।१२८।। ऋषिचंद्रैर्व्याधिभयं गुडधेनुं निवेदयेत् ।। कलहोष्टेंदुभिर्दद्याद्रत्नगोभू-हिरण्यकम् ।।१२९।। देशत्यागोऽर्कचंद्रैः स्याच्छांतिं कुर्याद्विधानतः ।। विंशत्या बुद्धिनाशः स्यात्कुर्याल्लक्षमितं जपम् ।।१३०।। भूमिपक्षै रोगपीडा दद्याद्धान्यस्य पर्वतम् ।। यमाश्विभिर्बन्धुपीडा दद्यादादर्शकं बुधः ।।१३१।। रामपक्षयुते मासे नानाक्लेशान्प्रपद्यते ।। सौवर्णीं प्रतिमां दद्याद्रवेः सप्तपलैः क्रमात् ।।१३२।। वेदाश्विभिर्बन्धुहीनो दद्याद्गोदानकं दश ।। सर्वरोगादिनाशार्थं जपहोमादि कारयेत् ।।१३३।।

यदि १४ चौदह रेखा हों तो शीघ्र ही मृत्यु का भय है। शान्ति के लिए सुवर्ण की वराह-मूर्ति का दान करे।।१२७।। पन्द्रह रेखा हो तो राजा से भय होता है, शान्ति के लिए

हाथी का दान करना चाहिए। १६ रेखा से अरिष्ट होता है, शान्ति के लिए कल्पतरु की सुवर्ण मूर्ति का दान करे।।१२८।। सत्रह रेखाओं से व्याधि का भय होता है, शान्तिं के लिए गुड़ की गौ का दान करे। १८ रेखाओं से कलह होती है, शान्ति के लिए रत्न, गौ, पृथ्वीं तथा सुवर्ण का दान करे।।१२९।। १९ रेखाओं से देशत्याग होता हैं, उसकी विधिवत् शान्ति करनी चाहिए।। २० रेखाओं से बुद्धि का नाश होता है। शान्ति के लिए लक्ष जप करना चाहिए।।१३०।। २१ रेखाओं से रोग और दर्द आदि पीड़ा होती है, शान्ति के लिए धान्य की ढेरी का दान करना चाहिए। २२ से बन्धुओं से पीड़ा होती है, शान्ति के लिए दर्पण का दान करे।।१३१।। २३ रेखा से नाना प्रकार के क्लेश होते हैं, शान्ति के लिए ७ पल की सुवर्ण मूर्ति का दान करे।।१३२।। २४ रेखाओं से बन्धु की हानि होती है, शान्ति के लिए १० गौ का दान करे, तथा सम्पूर्ण रोग आदि की निवृत्ति के लिए जप होम आदि करे।।१३३।।

ऋतुपक्षैर्बुद्धिहीनः पूज्या वागीश्वरी तथा ।। धनक्षयः स्यान्नक्षत्रैः श्रीसूक्तं तत्र संजपेत् ।।१३४।। वसुपक्षे युते मास न लाभो हानिखेचरैः ।। सूर्यहोमश्च विधिना कर्तव्यः शुभकांक्षिभिः ।।१३५।। एकोनत्रिंशता चापि चिंताव्याकुलितो भवेत् ।। घृतवस्त्रसुवर्णानि तत्र दद्याद्विचक्षणः ।। त्रिंशता धनधान्याप्तिरिति जातकनिर्णयः ।।१३६।। भूवह्निभिर्महोद्योगः पुत्रसंपद्गणाग्निभिः ।। सहेमवस्त्रलाभश्च चतुस्त्रिंशत्समन्विते ।।१३७।। पंचरामैर्भवेद्धीमान्षट्त्रिंशत्सुतवित्तदा ।।१३८।। सप्तत्रिंशद्धनस्याप्तिरष्टत्रिंशत्सुखार्थदा ।। द्रव्यरत्नाप्तिंरेकोनचत्वारिंशद्धि विद्यते ।।१३९।।धनवान्कीर्तिमांश्चैव चत्वारिंशति वर्द्धते।।अत ऊर्ध्वं यशोर्थाप्तिः पुण्यश्रीरुपचीयते ।।१४०।।

इति श्रीबृहत्पाराशरहोराशास्त्रे उत्तरखण्डे अष्टकवर्गफलकथनं नाम पञ्चमोऽध्यायः ।।५।।

२५ तथा २६ रेखाओं से बुद्धिहीनता होती है, शान्ति के लिए सरस्वती का पूजन करे। २७ हों तो धनक्षय होता है, शान्ति के लिए 'श्रीसूक्त' का पाठ करे।।१३४।। २८ रेखा से लाभ नहीं होता और हानि होती है, शान्ति के लिए विधिपूर्वक सूर्य का होम करे।।१३५।। २९ रेखा से चिन्ता की वृद्धि हो, शान्ति के लिए घृत, वस्त्र और सुवर्ण का दान करे ।। ३० रेखा से धन और धान्य की प्राप्ति होती है, ऐसा जातक शास्त्र का निर्णय है।।१३६।। ३१ रेखा से भारी उद्योग (बड़े २ व्यापार) हों, ३३से पुत्र, संपत्तिके द्वारा सुवर्ण वस्त्रका लाभ होता है।।१३७।। यदि ३४-३५ रेखा हों तो श्रेष्ठ बुद्धि हो, ३६ रेखा हों तो धन-पुत्र हों।।१३८।। ३७ हों तो धनप्राप्ति और ३८ हों तो धन सुख हो। ३९ हों तो द्रव्य-रत्न की प्राप्ति हो।।१३९।। ४० रेखा हों तो धनवान् तथा यशस्वी होता है। इससे अधिक रेखा हों तो यश और धन की प्राप्ति तथा श्रेष्ठ लक्ष्मी की वृद्धि होती है।।१४०।।

इति श्रीबृहत्पाराशरहोराशास्त्रे उत्तरखंडे भावप्रकाशिकायां पञ्चमोऽध्यायः ।।५।।

अथ ग्रहबलाबलमाह

लग्नं सुखात् सुखं कामात् कामं खात् खं च लग्नतः ।। त्र्यंशमेकद्विगुणितं युंज्याल्लग्नादिषु क्रमात् ।।१।। पूर्वापरयुतेरर्धं संधिस्स्याद्भावयोर्द्वयोः ।। एवं द्वादश भावास्तु भवन्ति च ससंधयः ।।२।।

ग्रह तथा भावो के बलाबल का लक्षण कहा जाता है। बल ६ प्रकार के होते हैं। (१) दृष्टिबल (२) स्थानबल (३) दिग्बल (४) कालबल (५) निसर्गबल (६) चेष्टाबल। इन ६ प्रकार के बलों के लिये प्रथम ग्रहस्पष्ट तथा भावस्पष्ट जानना आवश्यक है। अतः जन्मसमय के इष्टघटी, पलपर नवग्रहस्पष्ट तथा स्पष्ट सूर्य से लग्नस्पष्ट एवं नत तथा उन्नत से दशम भावस्पष्ट पूर्वखण्ड में कहे अनुसार करना चाहिए। पश्चात् लग्न और दशम भाव में छः छः राशि का संयोग करके क्रमशः सप्तम और चतुर्थ भाव स्पष्ट करना। इस रीति से लग्न, चतुर्थ, सप्तम और दशम ये चार भाव स्पष्ट हुए। अब चतुर्थ में लग्न घटाकर जो शेष रहे उसका तृतीयांश भाग लग्न में जोड़ने से द्वितीय भाव तथा तृतीयांश को दो से गुणा कर लग्न में जोड़ने से तृतीय भाव होता है। इसी प्रकार सप्तम भाव में चतुर्थ, दशम भाव में सप्तम और लग्न में दशम भाव घटाकर पूर्वोक्त रीति से तृतीयांश लेकर चतुर्थ में जोड़ने से पांचवां द्विगुणित तृतीयांश चतुर्थ में जोड़ने से छठा भाव होगा। इसी प्रकार आगे के ६ भाव स्पष्ट करना। यह बारह भाव स्पष्ट हुए। इन भावों की सन्धिस्पष्ट करने के लिए प्रथम और द्वितीय दो भावों को जोड़कर आधा करने से प्रथम द्वितीय भाव की सन्धि होगी। इसी प्रकार आगे भी द्वितीय तृतीय भाव को जोड़कर आधा करने से, इसी प्रकार बारह भावों की सन्धि करना। बताई हुई रीति के अनुसार जन्मलग्न कुण्डली सूर्यादि नवग्रहों का स्पष्ट तथा सन्धि सहित बारह भावों का स्पष्ट सिद्ध होता है।।१।।२।।

दृश्याद्विशोध्य द्रष्टारं षड्राशिभ्योऽधिका भवेत् ।। दिग्भ्यो विशोध्य द्वाभ्यां तु भागीकृत्य च दृष्टयः ।।३।। शराधिके विना राशि भागाद्विघ्नाश्च दृष्टयः ।। वेदाधिकं त्यजेद्भूताद्भागा-दृष्टिस्त्रिभाधिके ।।४।। विशोध्यार्णवतो द्वाभ्यां लब्धत्रिंशद्युतं भवेत् ।। कराधिकेविना-राशिभागास्तिथियुतास्तथा ।।५।।

अब दृष्टिबल कहा जाता है। ग्रहों की ग्रहों पर तथा भावों पर दृष्टि स्पष्ट करने की रीति। देखनेवाले का नाम दृष्टा है। जो देखा जाय, वह दृश्य कहा जाता है। जैसे-सूर्य, चन्द्रमा को देखता है तो सूर्य दृष्टा और चन्द्रमा दृश्य है। दृश्य में से दृष्टा को घटाना चाहिये। शेषांक ६ राशि से अधिक हो तो दस राशि में घटाना। जो शेष रहे उसके अंश करके २ का भाग देना, यही स्पष्ट दृष्टिबल है। (१) यदि शेषांक ५ से अधिक हो तो राशि अंक को त्यागकर अंशादि को द्विगुणित करना दृष्टि होती है। (२) इसी प्रकार शोधित अंक चार से अधिक हो तो पांच में घटाना। शेष रहे वही दृष्टि है। (३) शोधित अंक तीन से अधिक हो तो चार में घटाकर आधा करना तथा तीस और मिलाना तो दृष्टि होती है। (४) शेषांक २ से अधिक हो तो राशि अंश छोड़कर अंश में १५ और मिलाना तो दृष्टि होती है। (५) शेषांक १ से अधिक हो तो राशि को त्यागकर अंशादि अंक को आधा करना तो दृष्टि स्पष्ट होती है।।३।।४।।५।।

रूपाधिके विना राशिं भागा द्वाभ्यां विभाजिताः ।। त्रिदशे च त्रिकोणे च चतुरस्त्रे क्रमादथ ।।६।। शरवेदाःखरामाश्च तिथयो योजिताः क्रमात् ।। शनिदेवेज्यभौमानामादौ दृष्टिःस्फुटा भवेत् ।।७।।

अथ ग्रहदृष्टिचक्रमाह

	सू०	चं०	मं०	बु०	गु०	शु०	श०	यो०
सू०	० ० ०	० ० ०	० ० ०	० ० ०	० ० ०	० ० ०	० ० ०	० ० ०
चं०	० ४ २२	० ० ०	० ४४ १३	० ० ०	० १० ४	० २६ ४५	० ० ०	० ० ०
मं०	० ० ०	० १५ ४७	० ० ०	० ८ १५	० ० ०	० ० ०	० ९ ११	० ० ०
बु०	० ० ०	० ० ०	० ३१ ३४	० ० ०	० ० ०	० १३ २०	० ० ०	० ० ०
गु०	० ० ०	० ० ०	० ० ०	० ० ०	० ० ०	० ० ०	० ० ०	० ० ०
शु०	० ० ०	२ ५ ५२	० ० ०	० ० ०	० ० ०	० ० ०	० ० ०	० ० ०
श०	० ० ०	० ० ०	० ५७ ३७	० ० ०	० ० ०	० ५९ २९	० ० ०	० ० ०
शुभ	० ४ २२	० ५ ५२	० १५ ३२	० ० ०	० १० ४	० ४० ५	० ० ०	० १५ ४५
० पाप	० ० ०	० १५ ४७	० ५० ३७	० ८ १५	० ० ०	० ५७ ५४	० ९ ११	२ १० ४४

नीचोनं तु ग्रहं भार्धाधिके शक्राद्विशोधयेत् ।। भागीकृत्यत्रिभिर्भक्तं फलमुच्चबलं भवेत् ।।८।।

शनि, गुरु, मंगल की दृष्टि का विशेष प्रकार कहा जाता है। पहले कही हुई रीति से यदि शनि की दृष्टि सिद्ध करना हो तो शनि से ३ और दसवें भाव की प्राप्त दृष्टि में ४५ और मिलाना। गुरु से पंचम, नवम भाव की दृष्टि हो तो ३० और मिलाना। मंगल से चौथे, आठवें भाव की दृष्टि हो तो १५ और मिलाना तो स्पष्ट दृष्टि होती है।।

अब उच्चबल कहा जाता है। ग्रहस्पष्ट में उसी ग्रह की नीच राशि और अंश घटाकर शेषांक ६ से अधिक हो तो १२ राशि में घटाना। शेष का अंशादि करके ३ का भाग देना। लब्ध अंशादि उच्चबल होता है।।६-८।।

अथोच्चबलचक्रम्

सू०	चं०	मं०	बु०	गु०	शु०	श०	यो०
० ३८ ४	० १७ २९	० ४० १९	० २१ २९	० १३ ३२	० ६३ २४	० ३३ ५४	३ ३८ २

अथ सप्तवर्ग बलचक्रम्

मू०	स्व०	ऽमि०	मि०	स०	श०	ऽश०
० ४५ ०	० ३० ०	० २० ०	० १५ ०	० १० ०	० ४ ०	० २ ०

अथ तात्कालिकमैत्रीचक्रम्

सू०	चं०	मं०	बु०	गु०	शु०	श०	ग्र०
चं० मं० शु० श० बु०	सू० चं० बु० गु० शु० श०	सू० चं० बु० गु० श०	सू० चं० मं० शु० गु०	चं० मं० शु० बु० श०	सू० चं० बु० गु० श०	सू० मं० गु० शु०	मित्र
गु०	०	शु०	श०	सू०	मं०	बु०	शत्रु०

अथ नैसर्गिकमैत्रीचक्रम्

सू०	चं०	मं०	बु०	गु०	शु०	श०	ग्रहाः
चं.म० गु०	सू.बु०	सू.चं० गु०	सू.शु०	सू.चं० मं०	बु० श०	बु.शु०	मित्र
बु०	मं शु० गु.श०	शु० श०	मं.गु० श०	श०	मं० गु०	गु०	सम०
शु० श०	०	बु०	चं०	बु० शु०	सू० चं०	सू.च० मं०	शत्रु

मूलत्रिकोणस्वभाधिमित्रमित्रसमारिषु ।। अधिशत्रुगृहेचापि स्थितानां क्रमशो बलम् ।।९।।

अब सप्तवर्ग बल कहा जाता है। जिस ग्रह का वर्गबल करना हो, वह यदि मूल त्रिकोण में हो तो बल ४५ (घटी) होता है। स्वराशि में हो तो बल ३०, अधिमित्र में हो तो बल २० मित्रराशि में हो तो बल १५, समराशि में हो तो बल १०, शत्रुराशि में हो तो बल ४, अधिशत्रु में हो तो बल २ होता है।।९।।

अथ पंचधा मैत्रीचक्रम्

सू०	चं०	मं०	बु०	गु०	शु०	श०	ग्रहाः
चं.मं०	सू.बु०	सू.चं.गु०	सू.शु०	चं.मं०	बु.श०	शु०	ऽमित्र
बु०	मं.गु.गु.श०	बु.श०	मं.गु०	श०	गु०	गु०	मित्र
गु.शु.श०	०	०	चं०	सू.शु.बु०	सू.चं०	मं.बु.सू.चं०	सम
०	०	शु०	श०	०	मं०	०	शत्रु
०	०	०	०	०	०	०	ऽतिशत्रु

अथ सप्तवर्गचक्रम्

सू०	चं०	मं०	बु०	गु०	शु०	श०	ग्र०
११ श० स्व०	९ गु० मि०	१२ गु० मि०	१० श० स्व०	११ श० स्व०	१२ गु० मि०	१० श० स्व०	गृ०
५ सू० स्व०	४ चं० स्व०	५ सू० स्व०	४ चं० मि०	४ चं० मि०	४ चं० मि०	४ चं मि०	हो०
११ श० स्व०	५ सू० स०	८ मं० ऽमि०	२ शु० मि०	३ बु० श०	१२ गु० मि०	१० श० स्व०	द्रे०
११ श० स्व०	२ शु० मि०	१२ गु० मि०	६ बु० श०	२ शु० मि०	७ शु० मि०	५ सू० स०	स०
८ मं० ऽमि०	८ मं० ऽमि०	१२ गु० मि०	६ बु० श०	११ श० स्व०	६ बु० श०	१२ गु० मि०	न०
१३ गु० मि०	७ शु० मि०	१० श० स्व०	२ शु० मि०	५ सू० स०	२ शु० मि०	१ मं० ऽमि०	द्वा
१ मं० ऽमि०	७ शु० ऽमि०	८ मं० ऽमि०	६ बु० श०	९ गु० मि०	६ बु० श०	६ बु० श०	त्रिं०

अथ सप्तवर्गबलचक्रम्

सू०	चं०	मं०	बु०	गु०	शु०	श०	ग्रहाः
० ३० ०	० १५ ०	० १५ ०	० ३० ०	० ३० ०	० १५ ०	० ३० ०	गृ०
० ३० ०	० १५ ०	० १५ ०	० ३० ०	० ३० ०	० १५ ०	० ३० ०	हो०
० ३० ०	० १० ०	० २० ०	० १५ ०	० ४ ०	० १५ ०	० ३० ०	द्रे०
० ३० ०	० १५ ०	० १५ ०	० ४ ०	० १५ ०	० १५ ०	० १५ ०	स०
० ३० ०	० २० ०	० १५ ०	० २० ०	० ३० ०	० ४ ०	० १५ ०	न०
० १५ ०	० १५ ०	० ३० ०	० १५ ०	० १० ०	० १५ ०	० २० ०	द्वा
० २० ०	० १५ ०	० २० ०	० ४ ०	० १५ ०	० ४ ०	० ४ ०	त्रिं०
३ ५ १	१ ४५ ०	२ १० ०	१ ५८ ०	२ १४ ०	१ २३ ०	१ २४ ०	योग

भूताब्धयः खरामाश्च नखास्तिथिर्दिशो युगाः ॥ द्वाविंदुशुक्रौ युग्मांशे तिथिरोजांशगाः परे ॥१०॥

सम विषम बल। चन्द्रमा और शुक्र ये दो ग्रह समराशि और समनवांश में हो तो बल १५, विषम राशि और विषम नवांश में हो तो बल शून्य होता है। विषम ग्रहों का बल इससे विपरीत अर्थात् विषमराशि नवांश में हो तो बल १५ एवं समराशि नवांश में हो तो बल शून्य होता है।।१०।।

अथ युग्मायुग्मबलचक्रम्

सू०	चं०	मं०	बु०	गु०	शु०	श०	यो०
० ० ०	० १५ ०	० ० ०	० १५ ०	० १५ ०	० १५ ०	० ० ०	० ० ०

अथ केंद्रादिबलचक्रम्

सू०	चं०	मं०	बु०	गु०	शु०	श०	यो०
० ३० ०	० १५ ०	० १५ ०	१ ० ०	० ३० ०	० १५ ०	१ ० ०	३ ४५ ०

केंद्रादिषु स्थिता लग्नात्षष्टिस्त्रिंशत्तिथिः क्रमात् ॥ आदिमध्यावसानेषु द्रेक्काणेषु स्थिताः क्रमात् ॥११॥ पुन्नपुंसकयोषाख्या बघुस्तिथिबलं ग्रहाः ॥ स्वषड्वर्गगतास्मिंस्तदेषां स्थानबलं विदुः ॥१२॥

ग्रहों का केन्द्र बल-जन्म लग्न से ग्रह केन्द्र में (१।४।७।१०) हो तो बल ६० होता है। तथा पर्णफर (२।५।८।११) में हो तो बल '३०' होता है। एवं आपोक्लिम (३।६।९।१२) में हो तो बल '१५' होगा।

द्रेष्काण बल-पुरुष ग्रह (सू० मं० गु०) प्रथम द्रेष्काण में (दस अंश तक) हों तो बल '१५ इससे अधिक अंश हो तो बल शून्य। तथा नपुंसक ग्रह (बु० श०) द्वितीय द्रेष्काण में (१० अंश से अधिक २० अंश तक) हो तो बल '१५' अन्यथा शून्य। स्त्री ग्रह (चं० शु०) तीसरे द्रेष्काण में (२० अंश से अधिक) हों तो बल '१५' अन्यथा बल शून्य होता है।

विशेष-जो ग्रह षड् वर्ग में अपने ही वर्ग का हो तो उसका बल '३०' होता है।।११।।१२।।

अथ द्रेष्काणबलचक्रम्							
सू०	चं०	मं०	बु०	गु०	शु०	श०	यो०
० १५ ०	० १५ ०	० ० ०	० १५ ०	० ० ०	० ० ०	० ० ०	० ४५ ०

अथ पंचानां योगचक्रम्							
सू०	चं०	मं०	बु०	गु०	शु०	श०	यो०
४ २८ ४	२ ४७ २९	३ २५ १९	३ ४५ २९	३ १२ ३३	२ ४६ २४	३ ५७ ५४	२४ २७ १२

अर्कात्कुजात्सुखं जीवाज्ज्ञाच्चास्तं लग्नमार्कितः ॥ मध्यलग्नं भृगोश्चंद्राद्धित्वा षड्भाधिके सति ॥१३॥

अथ दिग्बलचक्रम्							
सू०	चं०	मं०	बु०	गु०	शु०	श०	यो०
० ४९ १	० १ ५६	० ३२ २५	० ३१ ३०	० ४३ १२	० २१ ५८	० २९ १५	३ २८ १७

चक्राद्विशोध्य रामाप्तं भागीकृत्य च तद्दलम् ॥ आमध्याह्नादर्धरात्राद्दिवारात्रिरिति क्रमात् ॥१४॥ अर्कभार्गवसूरीणांद्विघ्ना नाड्यो गता दिवा ॥ भौमचंद्रशनीनां तु षष्टिभ्यो वर्जयेदिमाः ॥१५॥

दिशाबल-सूर्य तथा मंगल के राश्यादि में चतुर्थ भाव घटाना, बुध, गुरु में सप्तम भाव घटाना और शनि में लग्न तथा चन्द्र, शुक्र में दशम भाव घटाना। शेष अंक ६ राशि से अधिक

हो तो १२ राशि में घटाना और ३ का भाग देना। लब्धांक 'दिशाबल' होता है॥१३॥

नतोन्नत बल-(प्रथम 'नत' का ज्ञान होना आवश्यक है। नतसाधन "पूर्वं नतं स्याद् दिन-रात्रिखण्डं, दिवानिशोरिष्टघटी विहीनम्।" अर्थात् दिनार्द्ध या रात्र्यर्द्ध में इष्टघटी पल घटाने से पूर्व नत या 'नत' होता है। और नत (घटी पल) को ३० (घटी) में घटाने से उन्नत होता है) (श्लोकार्थ) मध्याह्न से मध्यरात्रि तक इष्टकाल हो तो दिनबल और मध्यरात्रि से मध्याह्न तक इष्टकाल हो तो रात्रि बल कहा जाता है। उन्नत की घटी पल को द्विगुणित करने से (दिवाबल में) सूर्य, गुरु, शुक्र का दिवाबल होता है। और ६० में घटाने से चन्द्र, मंगल, शनि का दिवाबल होता है। और ६० में घटाने से चन्द्र, मंगल शनि का दिवाबल होता है। यदि रात्रिबल हो तो इससे विपरीत - अर्थात् उन्नत द्विगुणित चन्द्र, मंगल, शनि का रात्रिबल और ६० में से घटाने पर सूर्य, गुरु, शुक्र का रात्रिबल होता है। बुध का दिवाबल और रात्रिबल ६० ही रहता है॥१४॥१५॥१६॥

दिवाबलमिति प्रोक्तं बलं नैशं ततोऽन्यथा ॥ षष्टिरेब सदा ज्ञस्य ॥ चंद्रादर्कं विशोध्य च ॥१६॥ अंगाधिके विशोध्यार्काद्भागीकृत्यत्रिभिर्भजेत् ॥ पक्षजं बलमिंदुज्ञशुक्रार्याणां तु षष्टितः ॥१७॥

अथ नतोन्नतबलचक्रम्							
सू०	चं०	मं०	बु०	गु०	शु०	श०	यो०
० ४८ ४४	० ११ १६	० ११ १६	० ० ०	० ४८ ४४	० ४८ ४४	० १६ ११	४ ० ०

अथ पक्षबलचक्रम्							
सू०	चं०	मं०	बु०	गु०	शु०	श०	यो०
० ४० ५	० १२ ५५	० ४७ ५	० १२ ५५	० १२ ५५	० १२ ५५	० ४७ ०	३ १२ १५

पक्ष बल-चन्द्रस्पष्ट राश्यादि में सूर्य स्पष्ट राश्यादि घटाना (यदि सूर्यस्पष्ट राश्यादि अधिक हो तो चन्द्रराशिमें १२राशि बढ़ाकर सूर्य घटाना) शेष अंकसंख्या ६राशिसे अधिक हो तो १२ राशी में घटाना। शेषांक को अंश करके ३ का भाग देना जो लब्ध हो वह चन्द्र,बुध,गुरु,शुक्र का पक्षबल होता है। उस बलको ६० में से घटाने से सूर्य, मंगल, शनि का बल होता है।।१६।।१७।।

हित्वान्येषामहोरात्रिं त्रिभागीकृत्य यत्र तु ।। जन्मलग्नतदंशाधिपतेः षष्टिबलं भवेत् ।।१८।।
आधाने चित्प्रवेशे तु त्रिंशद्भूतार्णवा बलम् ।। ज्ञाऽर्कमंदेंदुशुक्राराः पतयः सर्वदा गुरुः ।।१९।।

अथ दिनरात्रित्रिभागचक्रम्							
सू०	चं०	मं०	बु०	गु०	शु०	श०	यो०
१ ० ०	० ० ०	० ० ०	० ० ०	१ ० ०	० ० ०	० ० ०	२ ० ०

अथ वर्षमासादि चक्रम्							
सू०	चं०	मं०	बु०	गु०	शु०	श०	यो०
० ३० ०	० ० ०	० ० ०	० ० ०	० ४५ ०	० ० ०	० १५ ०	० ३० ०

दिन रात्रि बल-दिन तथा रात्रिके ३-३ भाग करे। दिन के तीन भागों के स्वामी क्रमशः बुध, सूर्य, शनि हैं। और रात्रि के तीन भागों के स्वामी क्रमशः चन्द्र, शुक्र, मंगल हैं। जिस भाग में जातक का जन्म हो उस भाग के स्वामी ग्रह का बल ६० होता है। एवं आधान काल के बल विचार में ६० की जगह ३० बल होता है, तथा 'चित् प्रवेश' या 'चैतन्य काल' के विचार में ४५ बल होता है। इस बल में गुरु का सदा ६० (घटी) अथवा १ (अंश) बल होता है।।१८।।१९।।

वर्ष पति, मास पति, दिनपति का बल-(वर्ष पति तथा मासपति सिद्ध करने के लिए अहर्गण की तथा तदंग चक्र की आवश्यकता है) अहर्गण बनाने की रीति ग्रह लाघव से लिखी जाती है।।

अहर्गण साधन, ग्रहलाघव मध्यमाधिकार श्लोक ४।५

छपब्धीन्दोनित शक ईश कृत् फलं स्या, चक्राख्यं रविहतशेषकं तु युक्तम् । चैत्राद्यैः पृथगमुत सद्‌ध्न चक्रा, द्दिग्युक्तादमरफलाधिमासयुक्तम् ।।४।। खत्रिघ्नं गततिथि युङ् निरग्रचक्रां,-गांशा ढ्यं पृथगमुतोऽब्धिषट्कलब्धैः । ऊनाहैर्वियुत महर्गणो भवेद्वै, वारः स्याच्छर-हतचक्रयुग् गणोऽब्जात् ।।५।।

अर्थ-शालवाहनीय शक संख्या में १४४२ कम करना जो शेष रहे उसमें ११ का भाग देना। जो लब्धि प्राप्त हो वह 'चक्र' कहाता है। भाग देने से जो वर्ष संख्या शेष है उसको १२ से गुणा करना और अपने इष्ट से शुक्ल प्रतिपदादि जो गत मास में हों, सो युक्त करना पश्चात् दो जगह रखना। एक जगह चक्र को द्विगुण करके १० जोड़कर ३३ का भाग देना जो लब्ध हो वह 'अधिमास' है। इस अधिमास संख्या को पृथक् स्थित में युक्त करना तो 'मासगण' होता है।।४।। पश्चात् ३० से गुणा करे तथा शुक्ल प्रतिपद से इष्ट काल की गततिथि युक्त करे और चक्र का छठा भाग युक्त करे बाद दो जगह रखे। एक जगह ६४ का भाग देने से 'ऊनाह' संख्या प्राप्त होगी वह दूसरी जगह की संख्या में घटाने से 'अहर्गण' होता है। वार जानने के लिए चक्र को ५ से गुणा करके जोड़कर ७ का भाग दे शेष संख्या वार है। सोमवार से गणना करे। कभी २ एक कम या अधिक भी होता है।।५।।

उदाहरण :-श्रीसं० २०१८ शक सम्वत् १८८३ है। शकारंभ में वैशाख कृष्ण १३ गुरुवार को अहर्गण स्पष्ट करना है। शक १८८३ में १४४२ घटाया तो शेष ४४१ रहा, इसमें ११ का भाग दिया तो लब्ध '४०' यह 'चक्र' हुआ। शेष १ है। इसको १२ से गुणा किया तो १२ हुआ, इसमें चैत्र शुक्ल प्रतिपद से गतमास '०' से युक्त किया तो १२ हुआ, इसको २ जगह रखा, एक जगह चक्र को द्विगुण ८० में १० युक्त ९० करके १२ में योग किया तो १०२ हुआ ३३ का भाग दिया ३ अधिमास प्राप्त हुआ, इसको दूसरे में युक्त किया तो १५ हुआ। इसको ३० से गुणा किया तो ४५० और चक्र ४० का छठा भाग ६ युक्त किया तो ४५६ हुआ, शकारंभ उपर्युक्त तिथि में ही माना गया है अतः गततिथि ० युक्त की तो यही रहा, दो जगह रखा। एक जगह ६४ का भाग दिया तो ७ 'ऊनाह' प्राप्त हुए, इसको दूसरी जगह घटाया तो ४४९ शेष रहा। यह अहर्गण हुआ। वार जानने के लिए चक्र ४० को ५ से गुणा करके २०० अहर्गण में युक्त किया तो ६४९ हुआ। इसमें ७ का भाग दिया तो शेष ५ यह वार हुआ। इसमें १ कम करके सोमवार गणना किया तो गुरुवार हुआ।

वर्षमासदिनेशानां तिथिस्त्रिंशच्छरार्णवाः।।कालहोराधिपस्यैवं पूर्णं बलमुदाहृतम्।।२०।।

अथ कालबलचक्रम्

सू०	चं०	मं०	बु०	गु०	शु०	श०	यो०
३ ४५ ४९	० २४ ११	० ५८ २१	१ ४७ ५	२ ४६ ३९	२ १ ३८	१ १३ २१	१२ १७ ४

वर्षपति तथा मासपति स्पष्ट—केशवी जातक बलाध्याय से-

"द्विष्ठोऽयं ग्रहलाघवद्युनिचय श्चक्राहतैः षट्शरैः षट् दस्रैश्च युतः सबाणतपनः सेषुश्च खांगाग्निभिः । खाग्नंशै र्विहृतं फले गुणयमघ्ने चक्रनिघ्नाक्षखोपेते, सत्रियुगे नगोर्वरितके स्तोऽर्कात् समामासपौ ॥"

वर्षपति-अर्थ-इष्ट चक्र को ५६ से गुणा कर अहर्गणा में युक्त करना। पुनः १२५ जोड़कर ३६० का भाग देना। लब्ध अंक को ३ से गुणा करे अब इसमें-चक्र को ५ से गुणा करके ३ जोड़कर जो संख्या हो वह जोड़ कर ७ का भाग दे, जो शेष रहे वह रविवार से गिनकर 'वर्षपति' प्राप्त करे।

मासपति स्पष्ट-अहर्गण में-२६ से गुणित चक्र संख्या युक्त करना। पुनः ५ और जोड़ना, ३० का भाग देना। लब्धांक द्विगुणित करना ४ और जोड़कर ७ का भाग देना, शेषांक रविवार में मासपति होता है।।

दिनपति स्पष्ट-जिस दिन जो वार हो वही ग्रह दिनपति होता है। और दिनपति का बल ४५ होता है। दिनबल चक्र में ग्रहों का बल शून्य रखना।।

होरा बल-इष्ट काल में जिस ग्रह की होरा हो वह होरापति होता है। उसका बल पूर्ण (१) होता है। इस प्रकार वर्ष, मास, दिन, होरा, ये चारों प्रकार के प्रत्येक ग्रह के स्पष्टकर के चारों बलों का योग करना, तब चक्र में जिस ग्रह का जितना बल प्राप्त हो सो लिखना। यह काल बल सम्पन्न हुआ।।२०।।

अयन बल-तात्कालिक ग्रह स्पष्ट करके अयनांश युक्त करना। (अयनांश "वेदाब्ध्यब्ध्यूनः खरसहृतः शकोयनांशाः ।" (ग्रहला०) अर्थात् शाका में ४४४ घटाकर ६० का भाग देने से लब्ध अंश और शेष घटी। यह अयनांश होते हैं।) पश्चात् 'भुज' करे। (भुज साधन-ग्रह लाघव-द्वितीय अधिकार-श्लोक १ "दो स्त्रिभोनं त्रिभोर्द्ध्वं विशेष्यं रसै, श्चक्रतोंऽकाधिकं स्याद् भुजोनं त्रिभम् ।" ग्रहस्पष्ट सायन करने पर तीन राशि से कम हो तो वही भुज है। तीन राशि से अधिक हो तो ६ राशि में शोधित करने से भुज होता है।

आधाने चित्प्रवेशे तु त्रिंशच्छरजलाकराः ।। सायनांशग्रहभुजराशीनिष्वब्धिभिः सुरैः ॥२१॥ सूर्यैर्हत्वा क्रमाद्राशिभागः स्यादनुपाततः ।। एवं राश्यादिके युंज्यादर्करार्योशनः सु च ॥२२॥ राशित्रयमथो युंज्यान्मेषादिस्थेषु तेष्वथ ।। तुलादिस्थेषु राश्यादींस्त्रिराशिभ्यस्तु वर्जयेत् ॥२३॥ चंद्रार्क्योर्विपरीति स्यात्सदा युंज्याद्बुधस्य तु ।। भागीकृत्य त्रिभिर्भक्तं ग्रहाणामायनं बलम् ॥२४॥

छः राशि से अधिक हो तो छः राशि कम करना तो भुज होगा ९ राशि से अधिक हो तो १२ राशि में घटाना तो भुज होता है। ध्रुवांक तीन हैं–४५।३३।१२ भुज में जो राशि हो उस ध्रुवांक से (अर्थात् राशिस्थान में शून्य हो तो ४५ से, १ हो तो ३३ से, और २ हो तो १२ से) ग्रह के अंशादि अंक को गुणा करना। और गुणित अंश में ३० का भाग देना। जो लब्ध

अंशादिक हो सो गत खंड में जोड़ना। बाद राश्यादि अंक करके ग्रह यदि तुलादि छः राशि में हो तो तीन राशि घटाना तथा मेषादि छः राशि में हो तो ३ राशि जोड़ना। यह मेष तुलादि संस्कार चन्द्रमा तथा शनि में विपरीत करना। और बुध के अयन बल में ३ राशि सदा जोड़ना। पश्चात् अंशादि करके ३ का भाग देना तो अयन बल स्पष्ट होता है। केवल सूर्य का अयन बल द्विगुण करना।।२१।।२२।।२३।।२४।।

अथ अयनबलचक्रम्							
सू०	चं०	मं०	बु०	गु०	शु०	श०	यो०
० २७ १५	० ५७ ४०	० ३९ ३२	० ५५ ९	० १८ ५०	० १८ ४५	० ५५ ५३	० २३ ४

रवोर्द्विगुणमेवं स्याद्युध्यतोर्ग्रहयोरथ ।। विश्लेषं बलयोश्चापि निर्जितस्य बलं भवेत् ।।२५।। अपनीते योजिते तु जितस्य च बलं भवेत्।। षष्टिर्वक्रगतेर्वीर्यभनुवक्रगते दलम् ।।२६।। पादं विकलभुक्तः स्याद्दलमेव समागमे ।। पादं मंदगतेस्तस्य दलं मन्दतरस्य च ।।२७।।

ग्रहों का युद्ध बल-इष्टकाल के ग्रहस्पष्टों में कोई भी २ ग्रह राशि, अंश, कला, विकला में समान हों तो उन दोनों ग्रहों का युद्ध समझना चाहिए। इस युद्ध बल के जानने की रीति यह है कि उन दोनों ग्रहों का आया हुआ बल परस्पर घटाकर जो अन्तर हो वह हीन बल में घटाना और अधिक बल में युक्त करना। तो हीनबली ग्रह दक्षिण दिशा का निर्जित बल कहलाता है। और बधाधिकग्रह उत्तर दिशा का विजयी कहलाता है।।२५।।

गतिबल-जो ग्रह बक्री है उसका बल ६०। और मार्गी ग्रह का बल ३०। तथा सूर्य युक्त का बल १५। चन्द्रयुक्त का ३०। मंदगति का १५। अल्प गति का ७।३०। शीघ्रगति का ४५। अति शीघ्रगति का ३० बल लेना चाहिए।।२६।।२७।।

शीघ्रभुक्तेस्तु पादोनं दलं शीघ्रतरस्य तु ।। मध्यमस्फुटविश्लेषदलयुक्तोनित स्फुटात् ।।२८।। मध्यमे त्वधिके न्यूने शीघ्रादत्रास्फुटं त्यजेत् ।। चेष्टाकेद्रं भखेटानां रवींद्वोरयनांशयुक् ।।२९।।

सूर्यादिग्रहों का चेष्टाबल—प्रथम सूर्यादि ग्रहों को "मध्यम" करना और पश्चात् स्पष्ट करना। ग्रहों के मध्यम तथा स्पष्ट करने की रीति 'ग्रह लाघव' या सारिणी से करना हो तो 'केशवी जातक' से करना। पश्चात् मध्यम और स्पष्ट ग्रह का अन्तर करके जो अन्तर हो उसको आधा करे। मध्यम ग्रह स्पष्ट ग्रह से अधिक हो तो मध्यम ग्रह में जोड़ना और कम हो तो घटाना पश्चात् शीघ्रोच्च फल में घटाना तो चेष्टा केन्द्र होता है। बाद अंश करके ३का भाग देना तो चेष्टाबल होता है। सूर्य चन्द्र में यह विधि करके ३ राशि मिलाने से चेष्टा बल होता है।।२८।।२९।।

अथ चेष्टाकेंद्रचक्रम्					
मं०	बु०	गु०	शु०	श०	ग्रह
० १६ ४१	१० २ ३२	१० २१ ४७	१० २ ३२	९ ११ १८	मध्यम
११ २७ ४	९ १० ३४	१० १५ ३९	११ ७ १४	९ ८ ४७	स्पष्ट
११ १० २२	० २१ ५८	० ६ ८	१ ४ ४२	० २ ३१	अंतर
५ २० ११	० १० ५९	० ३ ४	० १७ २१	० १ १५	दलं
१० २ ३२	५ १३ ३०	१० २ ३२	० २५ १६	१० २ ३२	शीघ्रोच्च
३ ६ २	१ २१ ५७	५ १३ ४९	३ २४ ३७	५ ७ १५	केंद्र

अंगाधिकेऽर्कात्संशोध्य भागीकृत्य त्रिभिर्भजेत् ।। सूर्यचंद्रौ सत्रिराशीकृत्वा प्रोक्तविधिस्तथा ।।३०।। एवं चेष्टाबलं प्रोक्तं नैसर्गिकमथो शृणु ।। षष्टिरेकेषवः सप्त दश षड्विंशतिस्ततः ।।३१।।

निसर्ग (स्वाभाविक) बल—सूर्यादिग्रहों का क्रमशः ६०।५१।१७।२३।३४।४३।९ यह निसर्ग बल होता है।।३०।।३१।।

चतुस्त्रिंशत्त्रिवेदांकाः सूर्यादीनां निसर्गजाः ।। शुभपापदृगब्ध्यंशयुतहीनानि तानि च ।।३२।।

प्रथम साधन किये हुए तनु, धन आदि १२ भावों पर सूर्यादि सात ग्रहों की दृष्टि में शुभग्रहों की तथा पापग्रहों की दृष्टि का भिन्न भिन्न योग करके इनको परस्पर अन्तर करना। बाद आये हुए अन्तर का चतुर्थांश लेना। वह १/४ अंश शुभ दृष्टि अधिक हो तो पूर्वोक्त

पंचबल (स्थान बल, दिग्बल, कालबल, चेष्टाबल, नैसर्गिकबल) के योगमें युक्त करना। और पापदृष्टि अधिक हो तो चतुर्थांश पंचबल योग में हीन करना। यह दृष्टिबल का संस्कार है। इस प्रकार सूर्य आदि ग्रहों का षड् (प्रकार) बंल विचार समाप्त हुआ।।३२।।

षड्बलानि ग्रहाणां स्युरेवमेकीकृतानि तु ।। शुभदृष्टिचतुर्थांशंयुतं स्वज्ञार्यदर्शनैः ।।३३।।
हीनपापं दृगब्ध्यंशैर्युतं स्वामिबलं बलम् ।। गुरुज्ञाभ्यां तु युक्तस्य पूर्णमेकंतु योजयेत् ।।३४।।
मंदाररवियुक्तस्य बलमेकेन वर्जितम् ।। दिवा शीर्षोदयाश्चैव संध्यायामुभयोदयः ।।३५।।

अथ षड्बलचक्रमाह

सू०	चं०	मं०	बु०	गु०	शु०	श०	ग्रह०
४ २८ ४	२ ४७ १९	३ ५ १९	४ ४९ २९	३ १२ ३३	२ ४६ २४	३ ५७ ५४	स्था०
० ४९ १	० १ ५६	० ३१ २५	० ३१ ३०	० ४३ १२	० २१ ५८	० २९ १५	दिग्बलं
३ ५ ४९	० २४ ११	० ५८ २१	० ४७ ५	२ ४६ ३९	२ १ ३८	१ १३ २१	कालबलं
० २७ १५	० ५७ ४०	० ३२ ०	१ १२ २८	१ १३ २६	० ५६ ५७	१ ४८ ४८	चेष्टाबलं
१ ० ०	१ ५१ ०	१ १७ ०	१ २६ ०	१ ३४ ०	१ ४३ ०	० ९ ०	नैसर्गिक बलं
० ० ५ ध०	० २ ३९ ऋ०	० ६ १३ ध०	० २ ४ ऋ०	० २ ३१ ध०	० ४ २७ ऋ०	० २ १८ ऋ०	दृग्बलं
९ ५१ १४	४ ४९ ४७	५ ३० १८	४ ४४ २८	८ ३२ २१	६ ४५ ३०	७ ३५ ३०	ऐक्यबलं

अब भावबल कहा जाता है। जिस भाव में बुध या गुरु स्थित हो उसके पूर्वोक्त भावबल में १ युक्त करना और शनि, मंगल युक्त हों तो भावबल में १ कम करना।।३३।।३४।। भाव का कालबल–दिन का जन्म हो तो शीर्षोदय राशि–मिथुन, सिंह, कन्या, तुला, वृश्चिक, कुम्भ ये राशि बलावान् होती हैं। रात्रि का जन्म हो तो मेष, वृष, कर्क, धनु, मकर ये भावराशि बलवान् होती हैं। प्रातः सायं जन्म हो तो मीन बली है। कथित समय में कथित राशि बलवान् और अन्य राशि बलहीन होती है।।३५।।

अथ भावदृष्टिचक्रम्

	त०	ध०	स०	सु०	सु०	रि०	जा०	मू०	ध०	क०	आ०	व्य०
सू०	० १६ ४९	० ३७ ५३	० ३० ४१	० २ २५	० ५७ १८	० ४४ ५३	० २९ ६	० १४ ५३	० ० ४१	० ० ०	० ० ०	० ० ७
चं०	० ३९ ४३	० २१ १	० १४ २८	० ५७ ५	० ४१ १८	० २५ ३१	० ९ ४३	० ० ०	० ० ०	० ० ०	० ३ ४२	० २३ ५९
मं०	० ० ०	० ३ ४३	० ३३ ४४	० ५५ ४५	० २४ ११	० १४ ४८	१ ० ०	० ५२ ३६	० २७ ६	० १२ ५३	० ० ०	० ० ०
बु०	० ४० २९	० ३३ ३	० ७ ४१	० ४१ ३०	० ४८ ५१	० ३ ३३	० १७ १६	० ३ ३	० ० ०	० ० ०	० ० ०	० ११ ५७
गु०	० १० १२	० ३३ ४९	० ५३ ३७	० २८ ४०	० ३४ २८	० ५० ३६	० ५५ १२	० ३१ ४६	० ६ २३	० ० ०	० ० ०	० ० ०
शु०	० ० ०	० १३ ३७	० ४० ३९	० ३२ ५८	० ५ १	० ५४ २८	० ४५ ३६	० २८ ३१	० १७ ११	० २ ५८	० ० ०	० ० ०
श०	० ४६ ७	० ३१ ५५	० ५ २४	० ४६ ४	० ४७ ४२	० ३१ ५५	० ५४ १४	० ७ २८	० ० ०	० ० ०	० ० ०	० ५२ २२
शु०	१ ३० २८	१ ४१ ३०	१ ५६ २५	२ ४० १३	२ ९ ३८	२ १४ १०	२ ७ ४७	१ ३ २०	० १७ ३४	० २ ५८	० ३ ४२	१ ५ ४६
पा०	१ २ ५६	१ १३ ३०	० ५९ ४५	१ ४४ १४	२ ९ ५१	१ ३० ३६	३ २१ २७	१ १५ ७	० २७ ४७	० १२ ५३	० ० ०	० ५२ ५९
ऽन्त०	० २७ ३२	० २८ ०	० ५६ ४०	० ५५ ५९	० ० १३	० ४३ ३४	० १३ ३३	० ११ ५३	० १० १३	० ९ ५५	० ३ ४२	० १३ १७
दृग्बलं	० ६ ५३ ध०	० ७ ० ध०	० १४ १० ध०	० १३ ५९ ध०	० ० ३ ऋ०	० १० ५३ ध०	० ३ २३ ऋ०	० २ ५८ ऋ०	० २ ३३ ऋ०	० २ २९ ऋ०	० ० १५ ध०	० ३ १९ ध०

नक्तं पृष्ठोदयाश्चैव बलाधिक्य उदीरिताः ॥ नृयुग्मजूकपाथोनचापपूर्वार्द्धकुंभभात् ॥३६॥ मृगचापपरार्धाख्यमेषसिंहवृषादपि ॥ अलेः कर्कट काच्चापि मृगांत्यार्धाच्च मीनभात् ॥३७॥ अस्तं सुखं क्रमाल्लग्नं खं हित्वांगाधिके सति ॥ चक्राद्विशोध्य रामैश्च भजेद्भागीकृतं बलात्॥३८॥

भावों का दिग्बल–मिथुन, कन्या, तुला, धनु का पूर्वार्द्ध, कुंभ इन राशियों के भाव में सप्तमभाव कम करना, शेषांक छः राशि से अधिक हो तो १२ राशि में घटाना, शेष के अंश करके ३ का भाग देना। लब्ध अंक 'दिग्बल' होता है। इसी प्रकार मकरराशि का पूर्वार्द्ध, धन का उत्तरार्द्ध, मेष, वृष, सिंह इन राशियों के भावों में चतुर्थ भाव घटाकर और कर्क, वृश्चिक राशि के भावों में लग्न घटाकर तथा मकर का उत्तरार्द्ध और मीन में दशमभाव घटाकर छः राशि से अधिक हो तो १२ में शुद्ध करके अंश कर ३ का भाग देने से दिग्बल प्राप्त होता है॥३६॥३७॥३८॥

भावानां च ग्रहाणां च बलान्येवं विदुर्बुधाः ॥ अंकाग्नयोऽगरामाश्च खाग्निः करजलाकराः ॥३९॥ नवाग्नयः सुराः खाग्निर्दशसंगुणिताः क्रमात् ॥ रव्यादयःसुबलिनो राशीनां स्वामिनो वशात् ॥४०॥ अधिकं पूर्णमेवं स्याद्बलं चेद्बलिनो मताः ॥ गुरुसौम्यरवीनां तु भूतषट्केंदवो द्विज ॥४१॥ पंचाग्नयः खभूतानि करभूमिसुधाकराः ॥ खाग्नयश्च क्रमात्स्थानदिक्चेष्टासमयायने ॥४२॥ सितेन्द्वोस्त्र्यग्निचंद्राश्च खेषवः खाग्नयः शतम् ॥ चत्वारिंशत् क्रमाद्भौममन्दयोःषण्णवक्रमात् ॥४३॥

सात ग्रहों तथा १२ भावों का 'सुबल' तथा 'पूर्णबल' विचार

सूर्य आदि ग्रहों के पूर्णवल के ध्रुवांक–सू० ३९, चं० ३६, मं० ३०, बु० ४२, गु० ३९, शु० ३३, श० ३०, इन अंको को १० गुणित ध्रुवांक जानना। यथा सू० ३९०। चं० ३६०। मं० ३००। बु० ४२०। वृ० ३९०। शु० ३९०। श० ३०० ये पूर्णवल के ध्रुवांक हैं। (इन अंको में ६० से अधिक होने से ६० का भाग देकर क्रम से सूर्यादि ग्रहों के–सू० (६।३०) चं० (६।०), मं० (५।०), बु० (७।०), वृ० (६।३०), शु० (५।३०),श०(५।०) पूर्ण वलांक हुए। इतने या इससे अधिक हों तो पूर्ण बली और कम हो तो सुबली जानना। ये बल सूर्यादि ग्रहों के हैं। तथा १२ भावों का बल अपने अपने स्वामी के बल से जानना। भावों में भी कथित ध्रुवांकों से कम वल हो तो बली, समान हो तो सुबल, अधिक हो तो पूर्ण बल जानना। भावों का बल ग्रहों के समान ही जानना क्योंकि–राशि का बल अपने स्वामी के आधीन होता है॥३९॥४०॥ अब भिन्न भिन्न ग्रहों का स्थानबल, दिग्बल, चेष्टाबल, कालबल तथा अयन बल के पूर्णत्व के ध्रुवांक कहते हैं। हे मैत्रेय! सूर्य, बुध, गुरु का स्थानबल ध्रुवांक १६५ है। (६० से भाग देने पर २।४५) इससे अधिक हो तो पूर्ण बली होता है। इसी प्रकार दिग्बल अंक ३५ है। इससे अधिक हो तो पूर्ण बली। चेष्टा बलांक ५० है, अधिक हो तो पूर्णबली। कालबल ११२ है, अधिक हो तो पूर्णबली (६० से भाग देने पर १।५२ होता है) अयन बल ३० है। इसी प्रकार शुक्र, चन्द्रमा के क्रमशः १३३ (२।१३) ५०।३०।४०।४० हैं। और मंगल, शनि के क्रमशः ९६ (१।३६) ३०।४०।६७ (१।७) २० ये पूर्ण बलांक हैं।

अथ भावषड्बलचक्रम्

त०	ध०	स०	सु०	सु०	रि०	जा०	मृ०	घ०	क०	आ०	व्य०	नाम
८ ४ २०	६ ४५ ३०	८ ४४ २८	४ ४९ ४७	९ ४१ १४	८ ४४ २८	६ ४५ ३०	८ ४ २०	८ ३२ २१	७ ३५ ३०	७ ३५ ३०	८ ३२ २१	भाव- स्वामि- बलं
० २८ २५	० १८ ५७	० ४१ ३	० २८ २५	० १० ३१	० १० ३१	० ० ०	० ५० ३१	० १८ ५६	० ० ०	० ३८ ५६	० ११ ३	दिग्बलं
८ ३२ ४५	७ ४ २७	९ २८ ३१	५ २८ १२	९ ५१ ४५	८ ५४ ५९	६ ४५ ३०	८ ३२ ४५	८ ५१ १७	७ ३५ ३०	८ १४ २६	८ ४३ २४	योगबलं
० ६ ५३ ध०	० ७ ० ध०	० १४ १० ध०	० १३ ५९ ध०	० ० ३ ऋ०	० १० ५३ ध०	० ३ २३ ऋ०	० २ ५८ ऋ०	० २ ३३ ऋ०	० ९ २९ ऋ०	० ० १५ ध०	० ३ १९ ऋ०	दृग्बलं
९ २९ ३८	७ ११ २७	९ ३९ ४१	५ ४२ ११	९ ५१ ४२	९ ५ ५२	६ ४२ ७	९ २९ ३८	८ ४८ ४४	७ ३३ १	८ १४ ४१	८ ४६ ४३	ब० योगबलं भ०
० ५० ४१	१ ६ ५२	१ १ १८	१ १० १०	१ २७ १९	० ५४ ९	१ १२ २८	० ३४ ४९	० ६ २३	० ० ०	० ० ०	० ४८ ४३	ज्ञेज्यदृग्- बलं
१० २० १९	८ १८ १९	१० ४० ५९	६ ५२ २१	११ १५ १	१० ० १	७ ५४ ३५	१० २० १९	६ ५५ ७	७ ३३ १	८ १४ १४	९ ३० २८	षड्बलैक्यं

अथ ग्रहाणां भावानां बलसुबलपूर्णबलत्वज्ञापकनियतांकचक्रम्							
रवेः	चंद्रस्य	भौमस्य	बुधस्य	गुरोः	शुक्रस्य	शनेः	ग्रहाणाम्
अंकाग्र०	अगरामाः	खाग्नयः	करजला	नवाग्नयः	सुराः	खाग्नयः	षड्बलैक्यं
३९ ६ ३९० ३०	३६ ६ ३६० ०	३० ५ ३०० ०	४२ ७ ४२० ०	३९ ६ ३९० ३०	३३ ५ ३३० ३०	३० ५ ३०० ०	सुबलपूर्णबलांकाः
भू०ष०द०	त्र्यग्निचं	षण्णवः	भू०ष०द०	भू०ष०द०	त्र्यग्निचं	षण्णवः	स्थानबले
१६५	१३३	१९६	१६५	१६५	१३३	९६	सुबलपूर्ण
२ ४५	२ १३	१ ३६	२ ४५	२ ४५	२ १३	१ ३६	बलांकाः
पंचाग्नः	खेषवः	त्रिंशत्	पंचाग्नयः	पंचाग्न	खेषवः	त्रिंशत्	दिग्बले
० ३५	० ५०	० ३०	० ३५	० ३५	० ५०	० ३०	सुबलत्वादि द्योतकांकाः
खभूताः	खाग्राः	खवेदाः	खभूताः	खभूताः	खाग्नयः	खवेदाः	चेष्टाबले
० ५०	० ३०	० ४०	० ५०	० ५०	० ३०	० ४०	सुबलत्वादि द्योतकांका
क०भू०सु०	शतं	सप्तांगाः	क०भू०सु०	क०भू०सु०	शतम्	सप्तांगाः	कालबले
११२	१००	६७	११२	११२	१००	६७	
१ ५२	१ ४०	१ ७	१ ५२	१ ५२	१ ४०	१ ७	सुबलत्वादि द्योतकांकाः
खाग्नयः	चत्वारिं	नखाः	खाग्नयः	खाग्नयः	चत्वारिं	नखाः	अयनबले
० ३०	० ४०	० २०	० ३०	० ३०	० ४०	० २०	सुबलत्वादि द्योतकांकाः
६ ३२	५ ५३	४ १३	६ ३२	६ ३२	५ ५३	४ १३	पंचबल-संहतिः

त्रिंशत्खवेदाः सप्तांगा नखाश्च बलिनो विदुः ।। भावस्थानग्रहैः प्रोक्तयोगे ये योगहेतवः ।।४४।।
तेषां बली यः कर्तासौ स एवास्य फलप्रदः ।। योगष्वाप्तेषु बहुषु न्याय एवं प्रकीर्तितः ।।४५।।
गणितेषु प्रवीणश्चशब्दशास्त्रे कृतश्रमः ।। न्यायविद्बुद्धिमान् होरास्कंधश्रवणसम्मतः ।।४६।।
दैवविद्देशिको देवसंमतो देशकालवित् ।। ऊहापोहपटुः प्राज्ञः पटुः स्वजनसंमतः ।।४७।।

इति श्रीबृहत्पाराशरहोराशास्त्रे उत्तरखण्डे भावषड्बलादिवर्णनंनाम षष्ठोऽध्यायः।।६।।

यदि अनेक ग्रह पूर्णवली हों तो ग्रह के स्वगृही, उच्चराशिस्थ, मूलत्रिकोणस्थादि से विशेष बल का निश्चय करना चाहिए।।४१।।४२।।४३।।४४।।४५।।
अधिकारी लक्षण–गणित में कुशल, व्याकरण में व्युत्पन्न, न्याय निपुण, साहित्यविज्ञ, देवाराधन तत्पर, देशकालज्ञान में चतुर तर्क समर्थ, जनहितैषी, मधुरभाषी दैवज्ञ इस शास्त्र के पठन तथा फलादेश कहने में समर्थ होता है।।४६।।४७।।

इति श्रीबृहत्पाराशरहोराशास्त्रे उत्तरखण्डे भावप्रकाशिकायां भावषड्बलादिवर्णनंनाम षष्ठोऽध्यायः।।६।।

अथ रश्मीष्टकष्टवर्णनाह

नीचोनं तु ग्रहं भार्धाधिक्ये चक्राद्विशोधयेत् ।। उच्चरश्मिर्भवेद्राशिः सैको द्विघ्नांशसंयुतः ।।१।।

अथोच्चरश्मिचक्रम्							
सू०	चं०	मं०	बु०	गु०	शु०	श०	यो०
४ ४८ २८	२ ४४ ५८	५ १ ५२	३ ८ ५२	२ २१ १८	६ २० २८	४ २३ २६	२८ ४९ २२

सायनांशार्क इंदुश्च सत्रिभो भानुवर्जितः ।। चेष्टाकेंद्रः कुजादीनां पूर्वाध्याये समीरितम् ।।२।।

अथ शुभरश्मिचक्रम्							
सू०	चं०	मं०	बुं०	गु०	शु०	श०	यो०
३ ५० २०	२ १ १४	४ ५ १६	२ ५६ २३	४ २४ २८	५ ३४ ५१	५ १८ ५८	२८ ४१ ३९

अथाशुभरश्मिचक्रम्							
सू०	चं०	मं०	बु०	गु०	शु०	श०	यो०
८ ९ ३१	५ २८ ४६	३ ५४ ४४	५ ३ ३७	३ ५ ३२	२ २५ ९	२ ११ २	२६ १८ २१

अथ चेष्टारश्मिचक्रम्							
सू०	चं०	मं०	बु०	गु०	शु०	श०	यो०
२ ५२ ३०	२ १७ ३०	३ ८ ४०	२ ४३ ५४	६ २७ ३८	४ ४९ १४	६ १४ ३०	२८ २३ ५६

उच्चरश्मिबल–जिस ग्रह का उच्चरश्मि बल स्पष्ट करना हो उसके राश्यादि स्पष्ट में से उसकी नीचराशि अंश घटाना, शेष अंक ६ राशि से अधिक हो तो १२ राशि में से घटाना, बाद राशि में १ जोड़ना और अंशादि द्विगुण करना (अंश कलादि में ३०-६० का भाग देकर यथास्थित करना) तो 'उच्चराशि' स्पष्ट होती है।।१।। चेष्टारश्मि बल–चेष्टारश्मि साधन के लिए प्रथम चेष्टाकेन्द्र कहते हैं। स्पष्टसूर्य को सायन करके ३ राशि जोड़ने से सूर्य का 'चेष्टाकेन्द्र' होता है। सूर्य में चन्द्रस्पष्ट घटाने से चन्द्रमा का चेष्टा केन्द्र होता है। मंगल आदि ५ ग्रहों का चेष्टाकेन्द्र पहिले कहा गया है।।२।।

उच्चरश्मिवदानीय चेष्टारश्मिं द्वयोर्युतेः ।। दलं तु शुभरश्मिः स्यादष्टभ्यो वर्जितोऽशुभः ।।३।।
उच्चचेष्टाकरौ व्येकौ दिग्भिर्हत्वा तु योजयेत्।।दलयेदिष्टमन्यत्स्यात्षष्टिभ्यो वर्जितं फलम्।।४।।

अथ इष्टचक्रम्							
सू०	चं०	मं०	बु०	गु०	शु०	श०	यो०
२८ ५४ ५०	१५ १२ २०	३० ५२ ५०	१९ २३ ५०	३४ ४ ४०	४५ ४८ ३०	४३ १९ ४०	२१६ ५६ ४०

अथ कष्टचक्रम्							
सू०	चं०	मं०	बु०	गु०	शु०	श०	यो०
३१ ३५ १०	४४ ४७ ४०	२९ ७ १०	४० ३६ ४०	२५ ५५ १०	१४ ११ ३०	१६ ४० २०	२०२ ५३ १०

चेष्टारश्मि, शुभरश्मि, अशुभरश्मि स्पष्टीकरण–चेष्टाकेन्द्र से चेष्टारश्मि साधन करने का प्रकार उच्च रश्मि की तरह ही जानना। इस प्रकार स्पष्ट की हुई चेष्टा रश्मि और उच्च रश्मि दोनों को जोड़कर आधा करना तो शुभ रश्मि होती है। और ८ में घटाने से अशुभ रश्मि होती है।।३।।

इष्ट बल और कष्ट बल–उच्च रश्मिमें १ घटाना, बाद १० से गुणा करना तथा चेष्टा रश्मि में भी १ घटाकर दससे गुणा करना, बाद दोनों को जोड़कर आधा करना तो इष्टबल होता है। इसको ६० में घटाने से कष्ट बल होता है।।४।।

स्वोच्चे मूलत्रिकोणे च स्वर्क्षेऽधिसुहृदि क्रमात् ।। मित्रर्क्षे च समर्क्षे च शत्रुभे चातिशत्रुभे ।। नीचे च षष्टिरिष्वब्धिः खाग्निः करकरास्तिथिः ।। नागा वेदाः करौ शून्यं शुभमेतत्फलं विदुः ।।६।। षष्ठिभ्यो वर्जिताश्चैते शिष्टं स्यादशुभं फलम् ।। तदर्धं तु फलं प्रोक्तमन्यवर्गे शुभाऽशुभम् ।।७।।

बृहत् इष्ट-कष्ट फल—उच्च राशि के ग्रह का बल ६०। मूल त्रिकोण का ४५। स्वराशि का ३०। अतिमित्र का २२। मित्र राशि का १५। समराशि का ८। शत्रुराशि का ४। अतिशत्रु का २। नीच का ०। यह शुभग्रह का इष्ट बल कहा। इस बल को ६० में घटाने से अशुभ या कष्टबल होता है। और होरा, द्रेष्काण, सप्तमांश, नवमांश, द्वादशांश, त्रिशांश इन वर्गों की राशियों में उच्चादिक हो तो जितना बल कहा है उसका आधा लेना। और पापवर्ग में हो तो पापग्रह का आधा लेना। इसप्रकार शुभवर्ग में हो तो शुभग्रह का आधा और अशुभ वर्ग में हो तो अशुभ ग्रह का आधा बल लेना।।५।।६।।७।।

अथ अशुभसप्तकवर्गकष्टबलचक्रम्

सू०	चं०	मं०	बु०	गु०	शु०	श०	ग्रहाः
० ३० ०	० ४५ ०	० ४५ ०	० ३० ०	० ३० ०	० ४५ ०	० ३० ०	ग्रहः
० २८ ०	० २२ ३०	० २२ ३०	० २६ ०	० २२ ३०	० २२ ३०	० २२ ३०	होरा
० १५ ०	० २६ ०	० १२ ०	० २२ ३०	० २८ ०	० २२ ३०	० १५ ०	द्रेष्का.
० १५ ०	० ० ०	० २२ ३०	० २८ ०	० ० ०	० ० ०	० २६ ०	सप्तां.
० १९ ०	० १९ ०	० २२ ३०	० १८ ०	० १६ ०	० २८ ०	० २२ ३०	नवां.
० २२ ३०	० ० ०	० १५ ०	० ० ०	० २६ ०	० ० ०	० १९ ०	द्वाद०
० १९ ०	० ० ०	० १९ ०	० २८ ०	० २२ ३०	० २८ ०	० २८ ०	त्रिंशा.
२ २८ ३०	१ १२ ३०	० ४९ ०	२ २९ ०	२ २४ ०	२ २६ ०	२ ४३ ०	ऐक्य.

अथ शुभसप्तकवर्गइष्टबल चक्रम्

सू०	चं०	मं०	बु०	गु०	शु०	श०	ग्रहाः
० ३० ०	० १५ ०	० १५ ०	० ३० ०	० ३० ०	० १५ ०	० ३० ०	ग्रह
० ३ ०	० ७ ३०	० ४ ०	० ७ ३०	० ७ ३०	० ७ ३०	० ७ ३०	होरा
० १५ ०	० ४ ०	० ११ ०	० ७ ३०	० २ ०	० ७ ३०	० १५ ०	द्रेष्का.
० १५ ०	० ३० ०	० ७ ३०	० २ ०	० ३० ०	० ३० ०	० ४ ०	सप्तां०
० ११ ०	० ११ ०	० ७ ३०	० ११ ०	० १५ ०	० २ ०	० ७ ३०	नवां.
० ७ ०	० ३० ०	० १५ ०	० ३० ०	० ४ ०	० ३० ०	० ११ ०	द्वाद०
० ११ ०	० ३० ०	० ११ ०	० २ ०	० ७ ३०	० २ ०	० २ ०	त्रिंशां.
१ ३२ ३०	२ ७ ३०	१ ११ ०	१ ३० ०	१ ३६ ०	१ ३४ ०	१ १७ ०	ऐक्य

पंचस्विष्टफलं चादौ षष्ठं सममुदाहृतम् ।। अशुभास्तु त्रयः प्रोक्ता इति शास्त्रेषु निश्चयः ।।८।। दिग्बलं दिक्फलं तस्य तथा दिनफलं भवेत् ।। तयोः फलं शुभं प्रोक्तं षष्टया वर्ज्यं तयेतरत् ।।९।। शुभादिके शुभं नेष्टमशुभे चादिके शुभात् ।। बलैरेव हते स्यातां दृष्टिं हन्यात्स्फुटैव सा ।। १०।। बलैः षड्भिः समेधित्वा समानीतैः पृथक् पृथक् ।। बलिनश्चोक्तसंज्ञैश्च बलैरेव हरेत्ततः ।।११।। तत्तद्वलफलानि स्युरशुभानि शुभानि च ।। शुभपापफलाभ्यां च दृष्टिं हन्याद्वलं तथा ।।१२।।

प्रथम जो उच्चादि ९ प्रकार का बल कहा है, उसमें इतना विशेष जानना कि उच्च, मूलत्रिकोण, स्वगृह, मित्रक्षेत्र, अतिमित्र क्षेत्र, इन ५ स्थानों के ग्रहों का बल शुभ होता है। और सम क्षेत्री ग्रह का बल सम एवं नीच, शत्रु, अति शत्रु राशिगत ग्रह का बल अशुभ जानना।।८।।

दिग्बल आदि से बृहत् इष्ट-कष्ट बल लाने का प्रकार–

दिग्बल का दशम भाग लेकर फल स्पष्ट करना। इसी तरह दिग्बल का १५ में भाग लेकर फल लेना। दोनों को जोड़ने से जो अंक आये वही इष्ट बल होता है। ६० में घटाने से कष्टबल होता है। इनमें शुभ बल अधिक हो तो शुभ एवं अशुभ बल अधिक हो तो अशुभ होता है। इष्ट-कष्ट दृष्टि साधन–प्रथम संख्या ४,५ श्लोक में जो इष्ट, कष्टबल कहा है, उससे दृष्टि को गुणा करने से इष्ट दृष्टि, कष्ट दृष्टि होती है।।९।।१०।। प्रथम जो होरा, द्रेष्काण आदि षड्बल कहा गया है, वह प्रत्येक ग्रह का भिन्न भिन्न जोड़ने से जो अंक होगा, उसकी पिण्डक संज्ञा है। पूर्वोक्त इष्ट, कष्ट बल से भाग देने से जो फल प्राप्त हो वह बृहत् इष्ट एवं बृहत् कष्ट बल होता है। इष्टबल को शुभ तथा कष्ट बल को अशुभ समझना। इस शुभ और अशुभ फलाङ्क से दृष्टि को गुणा करना और बल को गुणा करना।।११।।१२।।

दृष्टेश्चशुभपापोत्थे बले स्यातां तथैव च ।। भावानां च फले प्रोक्ते पतीनां च फले उभे ।।१३।। सराशिर्ग्रहयुक्तश्चेद्भावसाधनसंगुणे ।। फले तस्य शुभे युंज्यादाशुभे वर्जयेच्छुभे ।।१४।। पापश्चेदन्यथा चैवं बले दृष्टयां च तेऽत्र तु ।। युंज्यादुच्चादिषु फलममित्रादिषु वर्जयेत् ।।१५।।

जो फल प्राप्त हो वह दृष्टि का और बल का शुभ तथा अशुभ फल होता है। प्रथम जो ग्रहबल और भाव बल कहा है उसमें जो भाव जिस ग्रह से युक्त हो उस ग्रह की राशि बल से भाव के बल को गुणा करना। यदि शुभ बल हो तो गुणन फल जोड़ना, अशुभ फल हो तो घटाना। बल के फल में विपरीत करना। पाप हो तो युक्त करना और शुभ हो तो हीन करना। दृष्टि बल में भी यही क्रिया करना। अर्थात् फल उच्चादिक का हो तो युक्त करना, शत्रु आदि का हो तो हीन करना।।१३।।१४।।१५।।

स्थाने चैवं क्रमात्प्रोक्तं करणे चान्यथा क्रमः ।। राशिद्वयगते भावे तद्राश्यधिपतेः क्रिया ।।१६।। स्थानाधिकस्तु भावेन लाभभावः प्रकीर्तितः ।। तत्समाने च तद्भावे तदानीं स्थानदान् ग्रहान् ।।१७।। संयोज्य स्थानसंख्यायां दलमेतत्समं भवेत् ।।१८।।

इति श्रीबृहत्पाराशरहोराशास्त्रेउत्तरखण्डे इष्टकष्टवर्णनं नाम सप्तमोऽध्यायः ।।७।।

अष्टक वर्ग में जो रेखा का फल कहा है, बिन्दु में उससे विपरीत जानना। और भावों में जो ग्रह संधिगत हों उस भाव की राशि को ग्रह के बल में जोड़ने से स्थान बल के समान हो तो लाभदायक होता है और आधा करने से यह फल स्पष्ट होता है।

इति श्रीबृ० पा० हो० शा० उत्तरखण्डे भा० प्र० इष्ट, कष्ट
वर्णनं नाम सप्तमोऽध्यायः ।।७।।

अथ रश्मिफलवर्णनाध्यायः

विधातृलिखिता या सा ललाटक्षरमालिका ।। तस्याः शरीरकथनं वक्ष्यामि च पृथक्पृथक् ।। लग्नाच्छरीरचिंता च द्वितीयात्स्वं च पैतृकम् ।। भरणीयं कुटुबं च पश्वादि च वदेद्बुधः ।।२।। तृतीयात्सोदरं बुद्धिं दुःपूर्वां विक्रमं विदुः ।। चतुर्थात्पितरं वेश्म सुखं लालित्यमेव च ।।३।। सौमनस्यमपत्यानि प्रज्ञां मेधां च पंचमात् ।। हानिं व्याधिमरिं षष्ठान्मैथुनं स्त्रीं जयं ततः ।।४।।

रश्मि फल वर्णन

जातक के ललाट में विधाता की लिखी हुई प्रारब्ध भोग की जो अक्षर माला है, वह प्रत्यक्ष नहीं देखी जा सकती। अतः उसके ज्ञान के लिये लग्न आदि १२ भावों का फल कहा जाता है। लग्न से शरीर के सुख दुःख का विचार करना। धन भाव से स्वोपार्जित धन का तथा पितृधन, सेवक, परिवार, पशु, खेती आदि का विचार करना।।१।।२।। तीसरे भाव से भ्रातृवर्ग, दुष्ट बुद्धि और पराक्रमका विचार। चौथेभाव से मकान, भूमि, सुख,सुन्दरता तथा पिताका विचार पंचम भाव से मन की प्रसन्नता, पुत्रादिकों का, सद्‌विचार का, स्मृति शक्ति का विचार। छठे भाव से हानि, रोग और शत्रु का विचार। सप्तम भाव से भार्या का, भार्या सुख का, जय का विचार करना।।३।।४।।

मृतिं पराजयं दुःखं हानिं व्याधिं तथाष्टमात् ।। सौशील्यभाग्य धर्मांश्च नवमाद्दशमात्तथा ।।५।। मानास्पदाज्ञाकर्माणि आयादर्थं व्ययाद्व्ययम् ।। दिग्भवेष्विषुसप्ताष्टशराः स्वोच्चेकरा रवेः ।।६।। नीचे न चांतरा प्रोक्ता रश्मयस्त्वनुपातजाः ।। नीचोनं तु ग्रहं भार्धाधिके चक्राद्विशोधयेत् ।।७।।

अथ रश्मिचक्रम्							
सू०	चं०	मं०	बु०	गु०	शु०	श०	यो०
५ ४० २३	२ ३१ १२	३ ४५ ४६	१ ४३ ४१	१ २२ २५	६ ५३ ३८	२ २६ २६	२४ २३ ३२

अष्टम भाव से मरण, पराजय, दुःख, व्यसन, हानि, व्याधि तथा रोग का विचार। नवम भाव से भाग्य, सुशीलता, ऐश्वर्य तथा धर्म का विचार। दशम भाव से सत्कार, स्थान, शुभाशुभ कर्म का विचार। लाभ भवन से धन आदि के लाभ का विचार। द्वादश भाव से धन के अच्छे बुरे काम में खर्च का विचार करना।।५।। (तथा अर्ध श्लोक)

उच्चरश्मि साधन—उच्चराशि साधनार्थ ध्रुवांक- सू० १०। चं० ११। मं०५। बु० ५। गुरु ७। शु० ८। श० ५ ये उच्चरश्मि के ध्रुवांक हैं।।६।।

रश्मि साधन—स्पष्टग्रह को नीच में घटाना, छः राशि से अधिक हो तो १२ राशि में घटाना शेष अंक को रश्मि ध्रुवांक से गुणा करना, वाद ६ का भाग देना जो लब्ध हो वह 'रश्मि' होती है।।७।।

स्वीयरश्मिहतं षड्भिर्भजेत्स्यूरश्मयः स्वकाः ।। उच्चस्वर्क्षसुहृत्सूर्यभागेंगाब्धिद्विसंगुणाः ।।८।।

अथ द्वादशांशरश्मिचक्रम्							
सू०	चं०	मं०	बु०	गु०	शु०	श०	यो०
० ० ०	५ २ २६	२२ ३४ २६	० ० ०	० ० ०	२७ ३४ ३२	२ १७ १७	५७ २८ ४१

नीचारिद्वादशांशे तु नृपांशोनाः कराश्च ते ।। मूलत्रिकोणस्वर्क्षाधिमित्रमित्रनवांशके ।।९।। द्रेष्काणेऽपि च होरायां त्रिंशांशे च क्रमात्तथा ।। अष्टघ्ना द्व्यब्धिषट्सप्तभक्ता युक्तास्तु रश्मयः ।।१०।।

द्वादशांश संस्कार—जो ग्रह द्वादशांश में उच्चराशि में हो तो ६ से गुणा करना। स्वगृही हो तो ४ से तथा मित्रक्षेत्री हो तो २ से गुणा करना। और यदि नीच या शत्रुक्षेत्री हो तो १६ अंश कम करना। इस प्रकार संस्कार करने से द्वादशांश संस्कार स्पष्ट होता है।।८।।

होरा, द्रेष्काण, नवांश, त्रिंशांश की उच्चरश्मि का विशेष संस्कार—जिस ग्रह की उच्चरश्मि लाना हो उसके उक्त होरा आदि में यदि वह ग्रह मूलत्रिकोण, स्वक्षेत्री, अतिमित्र या मित्रराशिं में हो तो प्रथम स्पष्ट किया हुआ उच्चरश्मि फल आठ से गुणा करके मूलत्रिकोण,नवांश का वर्ग हो तो दो का भाग देना। स्वक्षेत्री का वर्ग हो तो चार का भाग देना। अतिमित्रवर्ग हो तो ६ का भाग देना। मित्रवर्ग में सात का भाग देना तो अपने २ वर्ग की स्पष्ट उच्चरश्मि होती है। और उपर्युक्त वर्गों में शत्रुराशि में हो तो ४ का भाग देकर मूलरश्मि में कम करना और अतिशत्रु वर्ग में २ का भाग देकर हीन करना एवं नीच वर्ग में हो तो शून्य बल रखना।।९।।१०।।

अ० न० मा० मू० त्रिकोणरश्मि चक्रम्							
सू०	चं०	मं०	बु०	गु०	शु०	श०	यो०
१३ १४ १३	० ० ०	८ २ ४७	५ १० ४३	२ ५६ ३६	० ० ०	५ १३ ४७	३३ ३८ ६

अथ द्रेष्काणरश्मिक्रम्							
सू०	चं०	मं०	बु०	गु०	शु०	श०	यो०
० ० ०	५ ५९ ३०	११ १७ १८	४ १० २२	० ० ०	० ० ०	० ० ०	२१ २७ १०

अथ होरारश्मिचक्रम्							
सू०	चं०	मं०	बु०	गु०	शु०	श०	यो०
१७ १ ९	७ ३३ ३९	८ ४६ ४७	० ० ०	० ० ०	० ० ०	० ० ०	३४ २१ ३५

अथ त्रिंशांशरश्मिचक्रम्							
सू०	चं०	मं०	बु०	गु०	शु०	श०	यो०
० ० ०	५ २४ २	११ १७ १८	० ० ०	६ ५२ ५	० ० ०	० ० ०	२२ ३३ २५

अरावध्यरिनीचे च वेदद्व्यखिलहीनकाः ।। उच्चे च त्रिगुणं प्रोक्तं स्वत्रिकोणे द्विसंगुणम् ।।११।। स्वर्क्षे त्रिघ्ना द्विसंभक्तास्त्वधिमित्रगृहेपि च ।। वेदघ्ना रामसंभक्ता मित्रभे षड्गुणास्ततः ।।१२।। पंच भक्तास्तथा शत्रुगृहे द्विघ्नाश्चतुर्हृताः ।। अतिशत्रोः करघ्नाश्च पंचभक्ता न नीचभे ।।१३।।

मित्रराशिमें ५/६ शत्रुराशिमें २/४। अतिशत्रुमें २/५ भाग। यहां ऊपर का अंक गुण और नीचे का अंक भाग का द्योतक है।।

उक्त रश्मि स्पष्ट में अन्य विशेष संस्कार—

अंशपति उच्च वर्ग में हो तो प्राप्त रश्मि बलकाो ३ से गुणा करना। तथा रश्मिपति त्रिकोण में हो तो पूर्वरश्मि को द्विगुणित करना। यदि अतिमित्र वर्ग में हो तो चतुर्गुणित कर तीन का भाग देना तो रश्मि स्पष्ट होती है। इसी प्रकार मित्रगृह में हो तो छः से गुणा कर ५ का भाग देना। शत्रु राशि में हो तो दो से गुणा कर चार का भाग देना। अतिशत्रु के वर्ग में हो तो दो से गुणा कर पाञ्चका भाग देना तथा नीचवर्ग में हो तो कोई विशेष संस्कार नहीं करना। संक्षेप—उच्च मेंX३। मूल त्रिकोण में X २। अतिमित्र में ३/४ ।।११-१३।।

शनिं सितं विना ताराग्रहा अस्तंगता यदि ।। विरश्मयो भवंत्येवं वक्रादौ द्विगुणास्ततः ।।१४।। अनुपातोऽन्तरे वक्रं त्यागेऽष्टांशविहीनकाः ।। मंदायां दशभागोना वस्वंशोनाः कराः स्मृताः ।।१५।। तथा शीघ्रतरायां च वेदांशोनाः कराः स्मृताः ।। अगांशोनाश्च शीघ्रायां केचिदेवं वदन्ति हि ।।१६।।

अथ मतांतररश्मिचक्रम्							
सू०	चं०	मं०	बु०	गु०	शु०	श०	यो०
० ० ०	३ १ २७	५ १ १	० ५१ ५१	१ ३८ ५४	२० ४० ५४	३ ३९ ३९	३४ ५३ ४६

वक्रानुवक्रा विकला शीघ्रा शीघ्रतरा गतिः ।।वृद्धिहीने तु शिष्टे द्वे वर्जनीये समासमा ।।१७।।

मतान्तर से हानि वृद्धि—

मं०, बु० गु० अस्त हों तो रश्मि बलहीन होते हैं, किन्तु शुक्र, शनि रश्मिबल हीन नहीं होते एवं रश्मिपति वक्रारंभ में हो तो रश्मिबल द्विगुण होगा। वक्रांत में अष्टमांश। मध्य में त्रैराशिकसे स्पष्ट करना। रश्मिपति मंद हो तो दशमांश हीन होता है। अतिमन्द हो तो अष्टमांश हीन। शीघ्रगति षष्ठांश हीन। शीघ्रतर हो तो चतुर्थांश हीन करना।।१४।।१५।।१६।।

ग्रह-गति के आठ भेद—

वक्र, अनुवक्र, विकल, शीघ्र, शीघ्रतर मन्द, मन्दतर, सम ये आठ प्रकार की ग्रहों की गति होती हैं। इनमें दो गति वर्ज्य हैं, क्योंकि-शीघ्रतर गति वृद्धि हीन होने से मन्द और शीघ्रगति वृद्धिहीन होने से मन्दतर कही जा सकती है।।१७।।

योगेषु ये ग्रहाः प्रोक्तास्तेषां योगे च रश्मयः ।। पापसौम्यारिमित्राणां योगे हानिश्च कीर्तिता ।।१८।। उच्चादिषु च पूर्वोक्तः पापो बलवशाद्भवेत् ।।१९।। चतुर्गुणा राजयोगे पूर्वन्यायेन बोधिताः ।। पंचाष्टषण्नवाष्टांकवेदाः स्यू रश्मयः स्वकाः ।।२०।। द्विग्रहादिषु योगेषु ग्रहभावफलाहताः ।। गतिसंज्ञानुरूपेण फलानां निर्णयः स्मृतः ।।२१।। इष्टकष्टफलसंगुणा-स्ततस्तत्करानथच संयुतांस्तुतान् ।। निश्चितार्थमखिलं समीक्ष्य तत्प्रस्तुतं तु सकलं वदेद्बुधः ।।२२।।

राजयोग, दरिद्रयोग कारक आदि में विशेष संस्कार—

राजयोग कारक तथा दरिद्रयोग कारक ग्रहों का यदि एक राशि से सम्बन्ध हो तो दरिद्रयोग कारक ग्रह की रश्मि राजयोग कारक ग्रह में घटाना, जो बाकी रहे सो राजयोगकारक की रश्मि होती है।।१८।।

उच्चादिस्थानगत रश्मिनिर्णय—

शुभग्रहों की उच्चादि स्थानगत रश्मि यथावत् रखना किन्तु पापग्रहों की रश्मि में कमोवेशी बलाबल के अनुसार होती है।।१९।। प्रथम कहे गये (श्लोक सं० ६।७ में) राजयोग के संस्कारों से प्राप्त रश्मि में विशेष संस्कार-

यदि राजयोग कारक ग्रह हो तो सूर्य के ५, चन्द्र के ८, भौम के ६, बुध के ९, गुरु के ८, शुक्र के ९, शनि के ४ इन ध्रुवांकों से पूर्व कथित रीति से रश्मि स्पष्ट करके चतुर्गुणित करने से रश्मि स्पष्ट होती है।।२०।। जो योग दो, तीन या चार आदि ग्रहों से होता हो वहां उन ग्रहों की रश्मियों से भावांक गुणा करके ६० का भाग देना, जो लब्धि प्राप्त हो वह फल होगा। आगे कहा गया रश्मि का फल गति के अनुसार कहना चाहिए।।२१।।

इष्ट, कष्ट बल का गुणन में उपयोग—

इष्टफल और कष्ट फल से रश्मि को गुणा करके परस्पर युक्त करके उस फल के अनुसार आगे कहा गया इष्ट या अनिष्ट फल कहना चाहिए।।२२।।

एकादि पंचकं यावद्दरिद्रा भृशदुःखिताः।।नीचानां दासतां याता अपि जाताः कुलोत्तमे ।।२३।।

अथ इष्टबलचक्रमाह

सू०	चं०	मं०	बु०	गु०	शु०	श०	यो०
२	०	१	०	०	५	१	१३
४१	३८	५६	३३	४६	१५	४५	३७
१२	१८	१२	३१	४७	४४	४३	२७

अथ कष्टबलरश्मिचक्रम्							
सू०	चं०	मं०	बु०	गु०	शु०	श०	यो०
२	१	४	१	०	१	०	१०
५९	५२	४९	१०	३५	३७	४०	४५
१०	५१	२३	९	३६	४७	४०	४६

परतो दशके यावत्केवलं जठराय वै ।। निःस्वाः कदाचिद्दासाश्च भारवाहाः कदाचन ।। स्त्रीपुत्रगृहहीनाश्च वंशायोग्यक्रियारताः ।।२४।। एकादशोऽल्पपुत्राः स्वल्पधनाः स्त्रीविमानिता मनुजाः ।। बिभ्रति कृच्छ्रेण निजं स्वल्पं च कुटुंबमेव तदा ।।२५।। द्वादशे निर्धना मूर्खा धूर्ताः सत्त्वविनाशकाः ।। त्रयोदशे च चोराः स्युर्निर्धनाः कुलपांसनाः ।।२६।।

रश्मिफल कथन—

रश्मि संख्या १ से ५ तक हो तो जातक दरिद्र तथा महादुःखी रहता है। उत्तमकुल में जन्म होने पर भी नीच आदमी का नोकर ही होता है।।२३।। और ५ से '१०' रश्मि तक रश्मियोग हो तो केवल उदर भरणयोग्य ही रहता है कभी दरिद्री, कभी दास, कभी भारवाही तथा कुल की अपकीर्ति कारक कार्यरत रहता है।।२४।। यदि रश्मियोग '११' हो तो कम पुत्रवाला साधारण आमदनीवाला, और सम्पत्तिरहित, अपने परिवार के भरण पोषण में भी असमर्थ रहता है।।२५।। यदि रश्मियोग '१२' हो तो मनुष्य, निर्धन, मूर्ख, धूर्त, असत्यभाषी होता है। '१३' रश्मियोग हो तो चोर, दरिद्री तथा कुलहीन होता है।।२६।।

विद्वांश्चतुर्दशे धर्मे रतो मर्षी धनार्जकः। कुटुंबभरणे सक्तः कुलयोग्यक्रियो भवेत् ।।२७।। रश्मिभिः पंचदशभिरेवं गुणयुतोऽपि सन् ।। स्ववंशमुख्यो धनवानित्याह भगवान्मुनिः ।।२८।। आविंशतेः कुलेशाना बहुभृत्याः कुटुंबिनः ।। कीर्तिमंतश्च पूर्णाश्च स्वजनेन च षोडश ।।२९।। एकविंशतिविख्यातः पंचाशज्जनपोषकः ।। दानशीलः कृपायुक्तो द्वाविंशे लोभसंयुतः ।।३०।। धनवानल्परिपुश्च प्रभुः स्वल्पगुणो भवेत् ।। त्रयोविंशे तु मुख्यश्च विद्याहीनो धनी सुखी ।।३१।। आत्रिंशत्परतः श्रीमान्सर्वसत्त्वसमन्वितः ।। राजप्रियश्च चंडश्च जनश्च बहुभिर्वृतः ।।३२।।

योग '१४' हो तो धर्मात्मा, शान्तस्वभाव, उद्यमी, कुटुम्बपालक, तथा उचित कर्म करनेवाला होता हैं।।२७।। '१५' योग हो तो धर्मात्मा, शान्त, उद्यमी, परिवार पालन में समर्थ, धनी तथा कुल मुख्य होता है।।२८।। १६ से २० तक रश्मि योग हो तो परिवार पोषण समर्थ कीर्तिमान्, धनी, प्रसिद्ध होता है।।२९।। रश्मि योग '२१' हो तो ५० मनुष्यों तक का पालन करनेवाला, दानी, दयावान् होता है। '२२' योग हो तो लोभी, धनी, शत्रुहीन, समर्थ तथा अल्पगुणी होता है।।३०।। रश्मियोग २३ हो तो विद्याहीन होने पर भी समाज में आदरणीय, धनी तथा सुखी होता है।।३१।। २४ से ३० तक रश्मियोग हो तो धन, ऐश्वर्यवान्, सर्वबल सम्पन्न, राजप्रिय, प्रतापी तथा समाज सेवित होता है।।३२।।

एकत्रिंशे च सचिवो द्वात्रिंशे वाहिनीपतिः ।। पूर्वभागे समुद्दिष्टफलानि परतो विदुः ।।३३।। पंक्ति सूर्या तिथिनृपात्यष्टिधृतिश्च विंशतिः ।। नखा मूर्च्छा जिनास्तत्त्वं त्रिंशद्द्वात्रिंशदेव च ।।३४।। पंचाशच्चैव षष्टिश्च शतं चैव सुतादयः ।। आरभ्य विश्वसंख्यायाः क्रमात्स्वजनपोषकाः ।।३५।। अत ऊर्ध्वं नृपे श्चांत आपंचत्रिंशतः क्रमात् ।। शतपंचकमारभ्य सहस्रावधि पोषकः ।।३६।। अत ऊर्ध्वं तु देशानां संख्याः स्युः पंचविंशतिः।षड्विंशतिश्च भानि स्युस्त्रिंशत् षट्त्रिंशदेव च ।।३७।।

रश्मियोग ३१ हो तो प्रधान मन्त्री तथा ३२ हो तो सेनापति होता है। इससे अधिक रश्मियोग का फल पूर्वखण्ड में कहा है।।३३।।

रश्मियोग के अनुसार सन्तान संख्या का विचार—

३३ रश्मि योग हों तो १० पुत्र हों। इसी प्रकार ३४ योग से १२। ३५ से १५। ३६ से १६। ३७ से १६। ३८ से १७। ३९ से १८। ४० से १८। ४१ से २०। ४२ से २१। ४३ से २४। ४४ से २५। ४५ से ३०। ४६ से ३२। ४७ से ५०। ४८ से ६०। ४९ से १०० से संतान होती है। १०० से ऊपर संख्या कही नहीं गई हैं तथापि ५० या ५० से अधिक रश्मियोग हो तो संतान भी १०० से अधिक समझना चाहिए।।३४।।३५।।

रश्मि के प्रमाण से बहुजन पोषक योग—

३२ रश्मि के योग से ४५ मनुष्यों तक पोषक होता है। ३५ रश्मियों से ५०० से १००० मनुष्यों तक का पोषण करनेवाला होता है।।३६।।

रश्मियोग से देशाधिपतित्व विचार—

३६ रश्मि योग हो तो २५ गांवों का अधिपति हो। ३७ रश्मि योग हो तो २६ गांवों का अधिपति हो। इसी प्रकार ३८ योग से २७ गांव, ३९ योग से ३० गांव, ४० रश्मियोग से ३६ गांवों का अधिपति होता है।।३७।।

अत उर्ध्वं नृपाः क्षात्रधर्मिणः क्षत्रियोऽथ वा ।। भूद्वित्र्यब्धीषु षट्सप्तभूभृज्जनपदाधिपाः ।।३८।। पंचाशद्रश्मिसंयोगे सम्राट् स्यादनुपाततः ।। अतऊर्ध्वं तु देवेन्द्रतुल्याः स्युरिति पद्मभूः ।।३९।। उच्चचेष्टोत्थयोगार्धगुणिताः षष्टिभाजिताः ।। नरादीनां तु संख्याः स्युः स्पष्टा इत्याह पद्मभूः ।।४०।। शूद्रादयः कलौ राजधर्मिणो म्लेच्छधर्मिणः ।। विप्राश्चेच्छ्रीधनैर्युक्ता यज्ञकर्मक्रियारताः ।।४१।।

४१ रश्मि योग से एक देश का राज्य। ४२ रश्मियोग से २ देशों का राज्य। ४३ से ३ देशों का। ४४ से ४ देशों का। ४५ से ५ देशों का। ४६ से ६ देशों का। ४७ रश्मियोग से ७ देशों का राज्य करनेवाला होता है।।३८।। ५० रश्मियोग से सार्वभौम राजा। इसी प्रकार ४८ और ४९ रश्मि योग हो तो ७ देश और सार्वभौम के मध्य में जानना। ५० से ऊपर रश्मियोग हो तो इन्द्र के समान विभूतिवाला होता है।।३९।। अब रश्मि सम्बन्ध में विशेष फल कहा जाता है। उच्च रश्मि और चेष्टा रश्मि दोनों का योग करना। उसे दो जगह रखना। एक जगह आधा करना। उस आधे किये हुए अङ्कसे दूसरे जगह रखे हुए योगको गोमूत्रिका न्याय से गुणा करना। बाद ६०का भाग देना। लब्धि जो अङ्क हो उतनी ही संख्या के नौकर,चाकर,गौ,घोड़े आदि होंगे ऐसा जानना।।४०।। पूर्व कहे गये

राजयोग कलियुगमें धर्महीन क्षत्री आदिक के लिये जानना। यदि वे राजयोग ब्राह्मण के हों तो उनके प्रताप से यज्ञ याग आदि कर्मनिष्ठ होकर विद्वान् और सुखी होगा। और ज्ञान तथा पुण्य के प्रताप से अन्त में स्वर्ग राज्य भोगनेवाला होगा ऐसा जानना।।४१।।

योगरश्मिसमायोगे तदानीं तत्फलं विदुः ।। नाभसादिषु योगेषु राजयोगे स्थितं तु तत् ।।४२।। योगकर्तारमारभ्य बलिनं च विनिर्णयेत् ।। पूर्व भागे समुद्दिष्टभाग्यकर्मफलानि तु ।।४३।। अनुपातेन विज्ञाय योजयेद्वर्जयेद्बुधः।। स्थानवीर्यादिके देशे मुख्यः स्यादनुपाततः ।।४४।। दिग्बले विजयश्चेष्टा वीर्ये तु प्रभुता भवेत् ।। कालवीर्याधिके कार्ये सदोत्साही तथायने ।।४५।।

जो रश्मियोग का फल कहा गया है वह फल राजयोग सहित रश्मि योग हो तो राज्य फलदायक होगा, ऐसा समझना चाहिए। और नाभस आदिक जो योग हैं उनमें भी रश्मियोग होने से यथार्थ फल प्राप्त होगा।।४२।। प्रथम भाग में भाग्य और कर्मभाव का जो फल कहा गया है वह फल रश्मियोग के अनुपात से न्यूनाधिक शुभाशुभ समझना चाहिए।।४३।।

सप्तबल विचार—

स्थान बल १, दिग्बल २, चेष्टाबल ३, कालबल ४, अयन बल ५, उच्चबल ६, नैसर्गिक बल ७ ये सात बल होते हैं। इनका फल—स्थान बल अधिक हो तो देश में मुख्य पुरुष हो। दिग्बल अधिक हो तो विजयी हो। चेष्टाबल अधिक हो तो नेता हो। कालबल अधिक हो तो सर्वकार्य में चतुर हो। अयन बल अधिक हो तो जीवन भर सुखी रहे।।४४।।४५।।

स्ववंशोत्कर्षता स्वोच्चे नैसर्गे जातिनिर्णयः ।। राशीनां च ग्रहाणां च स्वभावाः कथिता मया ।।४६।। ये चात्र योजनीयाश्च दैवज्ञेन सुबुद्धिना ।।४७।।

इति श्रीबृहत्पाराशरहोराशास्त्रेउत्तरखण्डे रश्मीष्टकष्टादिशासने अष्टमोऽध्यायः ।।८।।

उच्चबल अधिक होवे तो अपने वंशमें मुख्य हो। निसर्गबल अधिक हो तो स्वजाति धर्म का व्याख्याता हो।।४६।।

इस प्रकार भाव और ग्रहों का फल कहा गया। जहां जैसा उचित हो वहां वैसे फल का निर्देश करें।।४७।।

इति श्रीबृ० पा० हो० शा० उत्तरखण्डे भा० प्रका० रश्मि, इष्ट, कष्टादि वर्णनं नाम अष्टमोऽध्यायः ।।८।।

अथ लोकयात्रावर्णनाह

मूलस्थानाधिके स्थाने स भावः शुभ इष्यते ।। न्यूनेऽशुभः समे मातृपितृबंधून्वदिष्यते ।।१।।

स्ववेश्म धर्मकर्मायलग्नैर्द्युम्नं पतिं वदेत् ।। मृतिव्ययारिभिस्तेषां व्ययं हानिं पृथग्वदेत् ।।२।। ये योगाः पूर्वभागे तु द्विग्रहाद्या नभादयः ।। राजयोगादयः सर्वेयथान्यायं प्रयोजयेत् ।।३।। भरणीयकुटुंबस्य द्वितीयेन शुभाशुभे ।। अन्येषां चैव भावानां स्वनामसदृशं फलम् ।।४।। सूर्येण वेश्म स्थानेन पितुर्मृतिपदं वदेत् ।। चंद्रेण पंचमेनैव मातुर्मृतिपदं वदेत् ।।५।।

लोकयात्रा वर्णन

अष्टक वर्ग फल कहा जाता है। जिस ग्रह की रेखा जिस भाव में कही है वहां देखना चाहिए कि रेखा अधिक हों तो फल शुभ जानना और कम हों तो अशुभ, सम हो तो सम जानना।।१।। दूसरा, चौथा, नवां, दशवां, ग्यारहवां और लग्न ये ६ भाव अपने स्वभाव से ही श्रेष्ठ हैं और उत्तम फल देनेवाले हैं। तथा आठवां, बारहवां ये दोनों भाव हानि तथा खर्च करनेवाले हैं।।२।। प्रथम जो नाभस आदि जो राजयोग कहे हैं उनका फल इष्ट, कष्ट, रश्मि तथा अष्टकबल का बलाबल विचार कर कहना।।३।। दूसरे भाव से रेखा और शून्य की न्यूनाधिकता से कुटुम्ब पोषण का शुभाशुभ देखना। तथा अन्य भावों का फल भी उनके नाम के अनुसार जानना चाहिए।।४।। सूर्य से तथा चतुर्थ भाव से पिता की मृत्यु का विचार करना।।५।।

सूर्ये चंद्रे सपापे च तयोश्च मरणं भवेत् ।। तयोरंतरलिप्ताश्च शतद्वयविभाजिताः ।।६।। अब्दादयोऽशुभस्यापि दृष्ट्या संगुणयेत्ततः ।। षष्ट्याविभज्याब्दाद्याश्च तस्मात्पापे बलोत्तरे ।।७।। तदामृतिर्भवेन्न्यूनेतद्बलेनैव वर्धयेत् ।। तदा मृत्युस्तयोर्मृत्युस्थाने पापग्रहे सति ।।८।। तस्याशुभस्य विन्यस्य चाष्टवर्गं ततः क्रमात् ।। त्रिकोणैकाधिपस्यास्य कुर्याच्छोधनकं बुधः ।।९।। त्रिषु द्वयोर्वा यन्न्यूनमितरच्चसमं भवेत् ।। एकस्मिन् भवनेशून्यं तत्त्रिकोणं न शोधयेत् ।।१०।।

मृत्युकाल निर्णय करने के लिये चतुर्थ और पंचम भाव तथा सूर्य चन्द्रमा की राशि अंश की कला करके २०० का भाग देना। लब्धि अंक संख्या मृत्यु के वर्षों की होती है। यह क्रिया समबल अवस्था में जानना। यदि न्यूनाधिक बल हो तो भिन्न क्रिया है। न्यूनाधिक बल में सूर्य चन्द्र से पापग्रह बलवान् हो तो पूर्व प्राप्त फल को पापग्रह की दृष्टि से गुणा करना और ६० का भाग देना। लब्ध वर्षादिक जानना। पापग्रह अल्पबली हो तो सूर्यचन्द्र बल से गुणा करना और ६० का भाग देना। लब्ध वर्षादिक होते हैं। और यदि अष्टमभाव में पापग्रह हो तो उसीसे माता पिता का अरिष्ट कहना।।६।७।।८।।

अष्टक वर्ग के बिन्दु और रेखा से भावफल का निर्णय—

सूर्य, चन्द्र तथा ४।५।८ भावस्थित पापग्रह इनका अष्टकवर्ग रखकर त्रिकोणशोधन तथा ऐकाधिपत्यशोधन करना।।९।। त्रिकोण शोधन में जिस स्थान की संख्या कम हो वह घटाना तीन स्थानों में एक स्थान शून्य हो तो शोधन नहीं होता और तीनों स्थान में बराबर संख्या हो तो सब स्थान में शून्य रखना।।१०।।

समत्वे सर्वगेहेषु सर्वं संशोधयेद्बुधः ।। क्षीणेन सह चान्यस्मिञ्छोदयेद् ग्रहवर्जितम् ।।११।। ग्रहयुक्ते फले हीने ग्रहाभावे फलाधिके ।। अनेन सह चान्यस्मिञ्छोधयेद् गृहवर्जिते ।।१२।।

फलाधिके ग्रहयुक्ते चान्यस्मिन्सर्वमुत्सृजेत् ।। उभयोर्ग्रहसंयुक्ते न संशोध्यः कदाचन ।।१३।। उभयोर्ग्रहहीनाभ्यां समत्वं सकलं त्यजेत् ।। सग्रहाग्रहतुल्यत्वात्सर्वं संशोध्यमग्रहात् ।।१४।। एकत्र नास्ति चेत्सर्वहानिरन्यत्र कीर्तिता ।। कलीरसिंहयो राश्योः पृथक् क्षेत्रं पृथक् फलम् ।।१५।।

एकाधिपत्य शोधन—

जहां एक ग्रह की दो राशि हों वहां यह विचार करना होता है। एक राशि में रेखा कम और दूसरी में अधिक हो, और दोनों राशि ग्रह रहित हों तो-रेखाधिक में न्यूनरेखा की संख्या कम करके शेष अंक रखना। न्यून रेखास्थान में शून्य रखना। यदि दोनों राशियों में समान रेखा हों तो दोनों स्थान में शून्य होगा। एक राशि ग्रहयुक्त रेखाधिक हो तो अन्य राशि का फल त्याग करना। दोनों राशि ग्रह युक्त हों तो संशोधन नहीं होता। दोनों राशि ग्रहहीन हों रेखा सम हों तो दोनों स्थान में शून्य होगा। सग्रह राशि ग्रह के समान होने से ग्रहरहित से हीन होती है। एक राशि में रेखा नहीं हो तो दूसरी राशि की संख्या का भी त्याग करना। कर्क सिंह राशि में एकाधिपत्य शोधन नहीं होता।।११।।१२।।१३।।१४।।१५।।

ग्रहयोगेन हानिः स्यात् वर्गणाघ्नंपृथक् ततः ।। संयोज्य सप्तभिर्हत्वा सप्तविंशतिभाजिताः ।।१६।। अब्दादयस्तदा देहनाशः करणदे सति ।। तस्मिन् पापे ग्रहे तस्माद्बलिन्येवं विधिः स्मृतः ।।१७।। बलहीनेतु तं हन्यात्सप्तभिः पंचभिर्भजेत् ।। आयुस्तयोः स्यात्स्थानस्य प्रदे चेदशुभे सति ।।१८।। मुनिभक्तं वसुघ्नं स्यान्नैवं चेन्नैतयोर्मृतिः ।। वक्ष्यमाणेन विधिना वदेदाह पराशरः ।।१९।। सूर्यादायुः करौ भूपा मनवोर्का नवार्णवाः ।। वेदाक्षीणि तु लग्नस्य वक्ष्याम्यायुस्तथैव तत् ।।२०।।

एकाधिपत्यशोधन के अंकों से माता पिता का स्पष्ट मरणकाल जानने की रीति—

मेषादि राशियों में जो अंक एकाधिपत्य शोधन द्वारा प्राप्त हुए हैं सो चतुर्थ भाव से अष्टम भाव के बल को तथा ग्रह बल को मेषादि राशि के वर्गणाकों से गुणा करे तथा ग्रह ध्रुवांकों से भी गुणा करके अलग २ योग करके फिर दोनों का योग करे पश्चात् ७ से गुणा कर २७ का भाग दे, लब्धांक वर्ष, मास, दिनादि अंक माता पिता के अरिष्ट काल का होगा। या उनकी आयु का अंक समझना। यह रीति करण (बिन्दु) से कही गई है। यदि पापग्रह बलवान् हो तो पूर्वोक्त रीति से निश्चय करना। और पापग्रह बलहीन हो तो ७ से गुणा कर ५ से भाग देना। लब्ध वर्षादिक माता पिता की आयु जानना यदि रेखाप्रद पापग्रह बलवान् हो तो पिण्ड को आठ से गुणा करके ७ का भाग देना, लब्ध संख्या माता पिता की आयु होती है। शून्य गणित से प्राप्त आयु से रेखा गणित का प्रमाण अधिक हो तो माता पिता को कोई भय नहीं समझना। ऐसा भगवान् पराशरजी का मत है।।१६।।१७।।१८।।१९।। (करण का त्रिकोणैकाधिपत्य शोधित चक्र आगे देखें।)

प्रथम सूर्य, चतुर्थ और अष्टमभाव से आयु विचार कथन करके अब सूर्य तथा चतुर्थ भाव से आयु विचार करने के लिए सूर्यादि ग्रहों के क्रमशः २।१६।१४।१२।९।४।४।२ तथा अंतिम ध्रुवांक लग्न का जानना।।२०।।

अथ रवेस्त्रिकोणैकाधिपत्यशोधितकरणचक्रम्												
र०गु०	शु०मं०	ल०								चं०	शु०	बु०
कु०	मी०	मे०	वृ०	मि०	क०	सिं०	क०	तु०	वृ०	ध०	म०	राशयः
३	४	६	५	४	५	५	१	२	४	४	५	मूलप्राप्त-करणबिंदवः
१	०	२	४	२	१	१	०	०	०	०	४	त्रिकोणशोधनेना वशिष्टाः
१	०	०	०	०	१	१	०	०	०	०	३	एकाधिपत्यशोध नावशिष्टाः

स्वोच्चे नीचे तु पातः स्याद्धरणादिविधिस्ततः ।। आयुस्तयोः स्यातौ तस्मिन् भवने तु तथा स्थितौ ।।२१।। न कश्चित्स्थानदः स्याच्चेत्तत्काले च मृतिर्भवेत् ।। शुभयोगे शुभा प्रोक्ता तयोः स्याद्रश्मिसंभवः ।।२२।। अष्टभिर्गुणयेत्षड्भिर्विभज्यायुः परं भवेत् ।। वेश्मनि स्थानदा न स्युर्जन्मकाले स्फुटीकृतः ।।२३।।

यदि ग्रह उच्चराशि का हो तो उक्त ध्रुवांक ही स्पष्ट आयु समझना चाहिए। यदि ग्रह नीच राशि का हो तो त्रैराशिक गणित से स्पष्ट आयु लाना चाहिए।।२१।। और यदि कोई ग्रह रेखा दाता नहीं हो तो उसी समय मृत्युकाल जाने। शुभग्रह का सम्बन्ध या योग हो तो उत्तम रीति से और पापग्रह का योग हो तो निकृष्टरीति से मृत्यु जानना।।२२।।
रश्मि से आयुसाधन-सूर्य तथा चतुर्थ भाव की रश्मिको ८ से गुणा करके ६ से भाग देना। लब्ध वर्ष आदि माता पिता की आयु की अवधि समझना।।२३।।

कलीकृतश्च खनखैर्विभज्याब्दादयः क्रमात् ।। एवं शुभाशुभं ब्रूयान्मातापित्रोर्द्विजोत्तम ।।२४।। करणस्थानदातारः पापपुण्यफलप्रदाः ।। पुनश्चोच्चादिषु तथा त्रिगुणाद्यास्तु पूर्ववत् ।।२५।। शत्रुनीचाधिशत्रूणां स्थानेष्वपि तु पूर्ववत् ।। राशिं हित्वा तु भावानां सर्वत्रैवं क्रिया भवेत् ।।२६।। द्वितीयभावलिप्ताश्च राशिलिप्ता विभाजिताः ।। स्ववर्गणाहतास्तत्स्थखेटानां वर्गणाहताः ।।२७।। भावरश्मिभिराहन्यात्सप्तभिश्च विभाजयेत् ।। मूलरश्मिसमूहेन शिष्टं हन्यात्तथैव तान् ।।२८।। इष्टानिष्टफलाभ्यां च हत्वांतरमथ द्वयोः ।। सप्तविंशतिभिर्हत्वा सप्तभिश्च विभाजयेत् ।।२९।।

हे द्विजोत्तम! चतुर्थ भाव में रेखाप्रद ग्रह नहीं हो तो चतुर्थ भाव स्पष्ट की कला (घटी) करके २०० का भाग देना। लब्ध वर्ष मासादि माता पिता का शुभ या अशुभ योग

समझना।।२४।। सो इस प्रकार समझना कि-शून्यप्रदग्रह पापफल देते हैं और वे ग्रह उच्चादि स्थान में हों तो त्रिगुण, द्विगुण आदि पूर्वोक्त (उच्चे च त्रिगुणं प्रोक्तं स्वत्रिकोणे द्विसंगुणम् इत्यादि) रीति से आयु विचार करना।।२५।। जहां भाव स्पष्ट से आयु का विचार करना हो वहां भावस्पष्ट की राशि छोड़कर केवल अंशादिक से पूर्व कही रीति से संस्कार करना।।२६।।

मूलकार का ही उदाहरण :

यथा द्वितीय भाव की राशि त्यागकर अंशादि की लिप्ता (घटी) की गई। पश्चात् द्वितीय भावराशि की वर्गणा से गुणा किया, बाद द्वितीयभावस्थ ग्रह की वर्गणा से गुणा किया, और भाव की रश्मि से गुणा करके ७ से भाग दिया शेष अंक की मूलरश्मि योग से गुणा किया पश्चात् इष्ट, कष्ट फल से गुणा करना (अलग २) बाद दोनों के अन्तर को २७ से गुणा करके ७ का भाग दिया तो भाव द्वितीय का फल (भरणीय कुटुम्बीजनों की) संख्या प्राप्त हुई।।२७।।२८।।२९।।

भरणीयकुटुंबानां पुंस्त्रियस्तत्समा विदुः ।। राशीन हित्वा तु लग्नादिभावभागादिकान् पृथक् ।।३०।। गुणयेद्रश्मिभिः स्वैश्च भावभागादयो विदुः ।। कलीकृत्य भलिप्ताभिर्विभज्याप्तं फलं ततः ।।३१।। सूर्यभक्तावशिष्टं तु भावानां साधनं विदुः ।। राशीन् हित्वा ततो लिप्ताः खखनेत्रविभाजिताः ।।३२।। साधनघ्ना विभक्ताश्च वर्गणाभिः फलाहताः ।। उच्चादिवृद्धिहानिं च कुर्यात्तत्संख्यका भवेत् ।।३३।।

इति श्रीबृहत्पाराशरहोराशास्त्रे उत्तरखण्डेलोकयात्रावर्णनं नाम नवमोऽध्यायः ।।९।।

इसी प्रकार राशि त्याग करके लग्न आदि भाव के अलग २ अंशादि को भावस्वामी की रश्मि से गुणा करे। पुनः घटी करे। पश्चात् दो जगह रखकर १२ का भाग देना तो भावसाधन फल होता है।।३०।।३१।।

पूर्वोक्त गणित की सुलभ रीति-

भाव की राशि त्यागकर अंशादि की घटी करके २०० का भाग दें। जो लब्ध हो उसको भावसाधन से गुणा करके ध्रुवांक का भाग देना। बाद फल से गुणा करना तो भरणीय कुटुम्ब पोषण की संख्या होती है।।३२।।३३।।

इति श्रीबृ० पा० हो० शा० उत्तरखण्डे भावप्रका० लोकयात्रावर्णनं नाम नवमोऽध्यायः ।।९।।

पुनः लोकयोत्रावर्णनाह

भाग्योत्कर्षं भाग्यहानिं कुटुंबं दुःखं हानिं शत्रुमायं व्ययं च ।। उद्वाहं स्त्रीपुत्रलाभादिकं च ब्रूयादेवं चाब्दचर्याक्रमेण ।।१।। अब्दमासदिनचर्यविधानं बक्ष्यते खलु मया सुमते ते ।। वक्ष्यमाणविधिना परमायुः सम्यगेव विदधीत महात्मन् ।।२।। भावानां साधनं हत्वा दृष्टिभिश्च बलेन च ।। षड्बर्गादिपतीनां च भावे भावे पृथक् पृथक् ।।३।। तेषां च दृग्बलानां च

संहत्या भाजयेदथ ।। स्वामिदृष्टिस्थितानां तु काले भावफलं विदुः ।।४।। ज्ञानसंभवकालस्तु जन्मकालाद्बला यदा ।। लग्नादिव्ययपर्यन्ता भावाः काले तथा विदुः ।।५।।

छठे अध्याय में वर्षचर्यारूप से भाग्योदय, अवनति, परिवार का सुख दुःख, शत्रुचिन्ता, लाभ, खर्च पुत्रादि का विवाह आदि कहा जाता है।।१।। हे मैत्रेय! अब वर्षचर्या, मासचर्या, तथा दिनचर्या और आयु का निश्चय भी उत्तमरूप से कहते हैं।।२।।

द्वादश भावों में भावफल के समय का निणर्य

जिस भाव के फल का समय निर्देश करना हो उस भाव को प्रथमदृष्टि से पश्चात् भावबल से गुणा करे बाद षड् वर्ग के स्वामी की दृष्टि तथा बल का योग (जोड़) करके भाग दे लब्ध वर्षादि अंक उस भाव के फल का समय होगा। इस प्रकार सप्तमभाव से स्त्री, पंचमभाव से पुत्रादिकों आदि तत् २ भाव से फल का समय निर्देश करना।।३।।४।।५।।

लग्नषड्वर्गहोराणां भोक्तारः पतयः स्मृताः ।। त्रिपंचवेददिक्सप्तमुनिरामांशके फलम् ।।६।। शुभग्रहास्तु द्रष्टारः स्थानदाः सकलग्रहाः ।। युक्ताः सदा तु सद्भावाः संज्ञानुफलदास्तदा ।।७।। पापान् हानिकरान्हित्वा स्वोच्चे कोणसुहृत्स्थितान् ।। तद्राशिर्यस्य शत्रुर्वा नीचयोर्वा ग्रहो यदि ।।८।। हानिं कुर्यात्तदा तस्य दृष्टियोगानुपाततः ।। उद्वाहकारकौ चंद्रशुक्रौ ज्ञो वा तपोऽथ वा ।।९।। शनिर्मृतिकरो भौमरवी नीचासतीपती ।। गुरुः शुभकरः पुत्रे कुजो भ्रातरि शत्रुभे ।।१०।। मंदश्चाये शुभाःसर्वे स्वोच्चगौ भौमसूर्यजौ ।। भाग्येऽशुभाःशुभाःपापा अशुभाः स्वपतिं विना ।।११।।

भावों के षड्वर्गपति की दशा में भावोक्त फल होता है। भावराशीश अपनी दशा के तृतीयांश में तथा इसी प्रकार होरापति, द्रेष्काणपति, सप्तांशपति, नवांशपति, द्वादशांशपति और त्रिंशांशपति क्रमशः अपनी २ दशा के ५।४।१०।७।७।३ वें अंश में अपना २ फल देते हैं। यह शुभग्रहों की अवधि कही। अष्टक वर्ग में रेखा दाता शुभ या पाप कोई भी दोनों का शुभाशुभ फल होता है। जिस २ भाव में उस भाव का पति उच्च, मूलत्रिकोण आदि शुभ स्थान युक्त हों उनका शुभफल और शत्रु राशि आदिका हो तो अशुभ फल होता है।।६।।७।।८।।

ग्रहों की नैसर्गिक कारकता—

शुक्र और चन्द्रमा विवाह कारक हैं। मतान्तर से बुध गुरु भी विवाह कारक हैं। शनि मृत्यु कारक है। मंगल कुलटा कारक तथा सूर्य पतिव्रता कारक है।।९।। कौन ग्रह किस भाव में निसर्गतः शुभ हैं, यह कहा जाता हैं। गुरु ५ भाव में शुभ हैं। मंगल ३ में शुभ। शनि ६ में तथा अन्य ग्रह एकादश भाव में शुभ हैं। मंगल शनि उच्च के शुभ तथा नवमभाव में शुभग्रह शुभ होते हैं। पापग्रह हों तो अशुभ होते हैं किन्तु नवमभाव में पापग्रह स्वगृही हो तो शुभ है और भाग्य वृद्धिकारक है।।१०।।११।।

पूर्वभागे समुद्दिष्टदृग्बलेन फलानि तु ।। विरुद्धानि परित्यज्य समीचीनानिसंग्रहेत् ।।१२।। ग्रहराशिस्वभावेन पुंस्त्रियोराशिमेव च ।। स्वभावं च वदेद्बुद्ध्या देशकालकुलानुगः ।।१३।। तेषामिष्टफले वृद्धिस्त्वशुभाख्यफलोदयः ।। अन्यथा त्वसदेवस्यात्तस्यतस्मान्मृतौफलम् ।।१४।। रविस्तु पाचको ज्ञेयश्चंद्रमा बोधकः सदा ।। पाचको बोधकश्चैव कारको वेधकः क्रमात् ।।१५।।

पूर्व भागमें जो दृष्टि से फल कहा है। उसमें से पापदृष्टिका फल त्यागकर शुभ ग्रहण करना चाहिए।।१२।। तथा मनुष्यों का स्वभाव और रूप रंग आदि भी देश, काल, कुल आदि के अनुसार ग्रह, भाव, स्थिति का ध्यान रखते हुए सूक्ष्म विचार कर निर्देश करना।।१३।। जिस भाव का इष्ट बल (शुभवल) अधिक हो उस भाव की उत्तरोत्तर वृद्धि और जिस भाव का कष्ट बल अधिक हो उस भाव की उत्तरोत्तर हानि होती है।।१४।। सूर्य 'पाचक' संज्ञक है। चन्द्रमा 'बोधक' संज्ञक है। तथा सूर्य 'कारक' संज्ञक एवं चन्द्रमा 'बेधक' संज्ञक भी है। यह इनकी नैसर्गिक (स्वाभाविक) संज्ञा है।।१५।।

रव्यादीनांच विज्ञेया मंदारेज्यसितास्तथा ।। शुक्रारमंदरवयो रवीन्दुशनिचंद्रजाः ।।१६।। चंद्रेज्यसितभौमाश्च मंदारेन्दुदिनेश्वराः ।। भौमज्ञसूर्यमंदाः स्युः सितेन्दुगुरुभूमिजाः ।।१७।। षट्सप्तनवरुद्रेषु सप्त मंदभवत्रिषु ।। द्विषडायव्ययेष्वेवंद्विवेदेन्द्रियवह्निषु।।१८।। षट्पंचसप्ता रिष्फेषुद्विषड्व्ययचतुष्वपि ।। त्रिरुद्रषट्सप्तमेषु स्थिताः स्थानेषु ते ग्रहाः।।१९।। पाचका-द्यास्तु चत्वारः सूर्यादिभ्यः क्रमादिह ।। पीडर्क्षे वाप्यपीडर्क्षे केंद्रेलग्नं विना तथा ।।२०।। षट् सप्तधर्मकमायमृतिष्वेव गताः क्रमात् ।। पाचकाद्याश्चतुर्थे च बलवंतः समीरिताः ।।२१।। कारको मद फलदो वेधको विघ्नकृत्स्मृतः ।। बोधकः शीघ्रफलदः पाचको विफलप्रदः ।।२२।। तदंशकालस्यान्ते वाप्यादावंत्यांशकेऽपि च ।। अंत्यांशकेऽपि फलदाः पाचकाद्याः क्रमादिह ।।२३।।

अब आगे सूर्यादि सातों ग्रहों की स्थानभेद से पाचक, बोधक, कारक, बेधक संज्ञा कही जाती है-

१-सूर्यादि सातों ही ग्रह चतुर्थ, सप्तम, दशम भाव में हों तो बलवान् होते हैं।

२-तथा सूर्य ६ठे भाव में, चन्द्रमा ७ में, मं० ९ में, बुध १० में, गुरु ११ में, शु० ८ में, श० ४ भाव में बलवान् होते हैं। अन्यथा समान हैं। अब सूर्यादि ग्रहों से कौन ग्रह किस स्थान में होने से पाचक, बोधक, कारक तथा बेधक होता है। यह भिन्न २ कहा जाता है। सूर्य से ६ठे भाव में शनि पाचक, मंगल ७वें भाव में बोधक तथा गुरु ९ भाव में कारक एवं शुक्र ११ भाव में बेधक होता है। अब आगे इसी प्रकार क्रमशः समझना। चन्द्रमा से शु० मं० श० सू० ७।९।११।३ स्थानों में पाचक, बोधक, कारक, बेधक संज्ञक होते हैं। मंगल से सू० चं० श० बु० २।६।११।१२ स्थान में पा० बो० का० बे० होते हैं। बुध से चं० गु० शु० मं० क्रमशः २।४।५।३ स्थानों में पा० बो० का० बे० होते हैं। गुरु से श० मं० चं० सू० क्रमशः ६।५।७।१२ भाव में पा० बो० का० बे० होते हैं। शुक्रसे मं०बु०सू०श० २।६।१२।४ भाव में पा० बो० का० बे० होते हैं। शनि से शु० चं० बृ० मं० क्रमशः ३।११।६।७ भाव में पा० बो० का० बे० होते हैं। इनका फल नामानुरूप ही है। यथा-कारक ग्रह अपने नियामक ग्रह का साधारण फल कारक होता है तथा बेधक ग्रह अपने नियामक के फल में विघ्नकारक होता है। बोधक ग्रह अपने नियामक का ही फल शीघ्र देता है। पाचक ग्रह नियामक के फल को विफल करता है। ये पाचक आदि ग्रह अपने नियामक ग्रह के आदि नवांश या अन्तिम नवांश में फलदाता होते हैं। किन्तु यह नियम नहीं है, मध्य में भी फलदायक हो सकते हैं।।१६ से २३ तक।।

पाचकादि ग्रह निर्माण चक्रम्							
सू०	चं०	मं०	बु०	गु०	शु०	श०	ग्र०
श० ६	शु० ७	सू० २	चं० २	श० ६	भौ० २	शु० ३	पाचक
भौ० ७	भौ० ९	चं० ६	गु० ४	भौ० ५	बु० ६	चं० ११	बोधक
गु० ९	श० ११	श० ११	शु० ५	चं० ७	सू० १२	बृ० ६	कारक
शु० ११	सू० ३	बु० १२	भौ० ३	सू० १२	श० ४	भौ० ७	वेधक

सूर्यादिपाचकादि चक्रम्							
सू०	चं०	मं०	बु०	गु०	शु०	श०	ग्र०
०	०	०	०	०	०	०	पाचक
०	०	०	०	०	०	०	बोधक
०	०	श०	०	०	सू०	०	कारक
शु०	सू०	०	मं०	०	०	०	वेधक

आदौ फलप्रदौ भौमरवी मध्ये सितार्यकौ ॥ सर्वदा ज्ञः शशी मंदस्त्ववसाने फलप्रदौ॥२४॥

इति श्रीबृहत्पाराशरहोराशास्त्रे उत्तरखंडे लोकयात्रावर्णनं
नाम दशमोऽध्यायः ॥१०॥

स्वाभाविक कार्यकाल-

सूर्य, मंगल यदि राशि के प्रथम त्रिभाग में हों तो फल देते हैं। गुरु, शुक्र मध्य त्रिभाग में फलदायक होते हैं। चन्द्र, शनि अन्तिम त्रिभाग में फलदाता तथा बुध सर्वकाल फलदाता है।।२४।।

इति श्रीबृ० पा० हो० शा० उ० खं० भावप्रका० लोकयात्राफलनियम वर्णनं नाम दशमोऽध्यायः ।।१०।।

अथ मासचर्यादि फलमाह

धनहानिभयानां च व्याधीनां दिवसास्तथा ।। शुभाशुभानि कर्माणिं यात्रादि विजयादि च ।।१।। मासचर्याविधानेनब्रूयादन्येनचेतरान् ।। लग्नारिमृतिरिःफेषु बर्गणां च पतींस्तथा ।।२।। करणेशान्समालोच्य कथ न्मुनिपुंगव ।। रसेषवो मुनिः खाष्टो रविभूपा दिशस्तथा ।।३।। द्विशतंचक्रमात्सूर्याद्दिवसाश्चाष्टमे स्थिताः द्वितीयऽर्धं त्वंतरे च त्रैराशिकवशेन तु ।।४।।

इति श्रीबृहत्पाराशरहोराशास्त्रे उत्तरखण्डे मासचर्यादिवशात्फलज्ञानकथनं नाम एकादशोऽध्यायः ।।११।।

धनहानि, भय, रोग इनका विचार दिनचर्या से करना तथा शुभाशुभ कर्म, यात्रा, विजय इनका विचार मास चर्या विधि से कहना।।१।। लग्न, षष्ठ, अष्टम और व्ययभाव की वर्गणा संख्या तथा इन भावों के स्वामियों की वर्गणा संख्या।।२।। तथा करण- (विन्दु) दाता ग्रहों की संख्या अर्थात् किस भाव में कितनी है आदि विचार करके फल कहना। सूर्यादि ग्रहों की दिन संख्या कही जाती है। सू० ५६। चं० ७। मं०८०। बु० १२। गु० १६। शु० १०। श० २०० यह संख्या अष्टम भाव की है। द्वितीय भाव की इससे आधी जानना। मध्यराशियों की संख्या त्रैराशिक से जानना।।३।।४।।

इति श्रीबृ०पा०हो०शा०उ०खं० भाव प्रकीर्णककथननाम एकादशोऽध्यायः ।।११।।

अथ लोकयात्रामाह

तेषां भंगमथो वक्ष्ये यथाह कमलासनः ।। गर्गाय भगवान्सोऽपि ममाहाहं तव द्विज ।।१।। तथा च रिःफषष्ठाष्टस्थानानां करणाधिपाः ।। तत्तद्भावस्य भंगस्य कर्तारः सति संभवे ।।२।। तत्तद्भावाष्टवर्गोत्थसंख्या तद्वर्गणाहता ।। रविभक्ता ततः शिष्टा राशिर्मेषादिका भवेत् ।।३।। षष्ठाष्टरिःफे राशिश्चेद्भंग एष प्रकीर्तितः ।। फलं च मुनिसंवृद्धं रविभक्तं तथा भवेत् ।।४।।

हे मैत्रेय! अब योगभंग कहा जाता है। यह रीति ब्रह्माजी ने गर्गजी को कही थी और गर्गजी ने हमे कही सो वही रीति अब तुम्हें कहते हैं।।१।। लग्न से ६।८।१२ भावों में विन्दु देनेवाले ग्रहविचारणीयभावों में हों या ६।८।१२ के स्वामी के साथ संयोग हो तो उन भावों के

भंग करनेवाले होते हैं।।२।। जिस भाव का फल विचार करना हो उस भाव की अष्टक वर्ग की विन्दु संख्या को उस भाव की वर्गणा से गुणा करना और १२ का भाग देना जो अंक शेष रहे वह मेषादि क्रंम से राशि जानना। वह राशि यदि ६।८।१२ भाव में हो तो उस भाव का भंग (हानि) होता है।।३।। और लब्धांक को सात (७) से गुणा कर १२ से भाग देना जो शेष रहे वह राशि यदि ६।८।१२ भाव में हो तो भी उस भाव का भंग होता है।।४।।

शिष्टमेव यदि तदा शत्रुभं वाथ भंगदम् ।।तद्भावानिष्टफलकं तच्छत्रुफलसंगुणम्।।५।।सप्ताप्तं शिष्टमेवात्र पापरश्मिगुणं ततः ।। अर्कशिष्टं यदि भवेत्षष्ठरिःफाष्टमेऽपि वा ।।६।। शत्रुभं वापि भंगर्क्षं हानिस्तस्य प्रकीर्तिता ।। यथोत्तरमितीवाप्तं क्षयवृद्धिस्ततो भवेत् ।।७।। षष्ठ्यंशे च कलांशे च त्वप्रकाशग्रहोदये ।। राहुकालसमायोग तद्भावफलभंगदः ।।८।। अनिष्टाख्यं च रश्मिं च तद्भावफलसंगुणम् ।। द्वादशाप्तावशेषं च पूर्ववत्फलमीरितम् ।।९।।

और दूसरी बार जो शेष रहे वह यदि षष्ठभाव राशि हो तो भावफल की भंगकारक है। तथा इसी प्रकार कष्टफल से गुणाकर ७ से भाग देना जो शेष रहे तो शत्रु ग्रह की रश्मि से गुणा करना और १२ का भाग देना तो शेष राशि यदि ६।८।१२ में हो तो उस भाव का भंग करती है। यहां अनेक भगकारक रीति दिखाने का यह प्रयोजन है कि जितनी बार भंग प्रद राशि प्राप्त हो उतनी अधिक हानिकारी है।।५।।६।।७।।

अन्य प्रकार-विचारणीय भाव के षोडशंाश या षष्ठ्यंश में धूम, पात, परिधि, चाप, ध्वज इनमें से किसी का उदय हो तो उस भाव का भंग होता है।।८।।

प्रकारान्तर-विचारणीय भाव की अनिष्ट रश्मि को इष्टबलांक से गुणा कर १२ से भाग देना जो राशि प्राप्त हो उसका पूर्ववत् फल जानना।।९।।

यद्यत्फलं प्रोक्तमथोत्तरत्र तत्सर्वमन्यत्र च योजनीयम् ।। भंगं च भंगं च मुनिश्च गर्गः प्रोवाच यद्वन्मुनिपुंगवाहम् ।।१०।। षष्ठ्यंशे च कलांशे च त्रिष्वेकोऽपि यदा न चेत् ।। अधिमित्रं च मित्रं च भंगभंगः प्रकीर्तितः ।।११।।

इति श्रीबृहत्पाराशरहोराशास्त्रे उत्तरखण्डे लोकयात्रायां भावभंगोपदेशेद्वादशोऽध्यायः ।।१२।।

यह जो भंग विचार कहा गया है, वह हर एक भाव में देखना चाहिए।।१०।। इस भंग का खंडक योग भी है। यदि षोड़शांश या षष्ठ्यंश अथवा शत्रुराशि में धूमादि ग्रहों का (अप्रकाश ग्रहों का) योग अथवा काल राहु का योग न हो और राशि मित्र, अधिमित्र हो तो भंग का भी भंग योग होता है।।११।।

इति श्रीबृ० पा० हो० शा० उ० खं० भा० प्र० भंगादियोग कथनं नाम द्वादशोऽध्यायः ।।१२।।

अथ लोकयात्रायां ग्रहभावफलमाह

आत्मा शरीरं होरा च कल्प-लग्ने च मूर्तयः ।। स्वं कुटुम्बं च दुश्चिक्य विक्रमं सहजं सहः ।।१।। पातालं हिबुक वेश्म मित्रबंधूदकं सुखम् ।। त्रिकोणं प्रतिभा बुद्धिमातृविद्यासुतास्ततः ।।२।। व्याधिक्षतारिभंगाश्च क्रोधो लाभोऽथ मत्सरः ।। कामो विवाहो यात्रा स्त्री रतिद्यून मदोऽज्ञता ।।३।। पराभवो मृतिर्बंधो रंध्रायुर्निधनं च्युतिः ।। शुभं धर्मस्ततो भाग्यं त्रिकोणं च गुरुर्विभुः ।।४।। व्यापारास्पदमेषूरणमानाज्ञा च कर्म खम् ।। भावाय लाभाय तपो रिःफं हानिर्व्ययः स्मृतः ।।५।। यात्रायां दशमेनैव निवृत्तिः सप्तमेन तु ।। वृद्धिश्चतुर्थलग्नेन त्रितयं संप्रकीर्तितम् ।।६।। स्वोच्चमित्रस्ववर्गस्था एवमर्थाश्च सप्ततिः ।। नीचारिवर्गगाश्चान्यत्पुष्टं चापुष्टमेव च ।।७।।

अब अन्वर्थक नामोंसे १२ भावोंके विचारणीय पदार्थ कहे जाते हैं। लग्न संज्ञा-आत्मा, शरीर, होरा, कल्प, लग्न, मूर्ति, (अंग) द्वितीयभावसंज्ञा-स्व, कुटुम्ब। तृतीयभावसंज्ञा-दुश्चिक्य, विक्रम, सहज, सह।

चतुर्थभावसंज्ञा-पाताल, हिबुक, वेश्म, मित्र, बन्धु, उदक, सुख। पंचमभाव के नाम-त्रिकोण, प्रतिभा, बुद्धि, मातृ विद्या, सुत। षष्ठभाव के नाम-व्याधि, क्षत, अरि, भंग, क्रोध, लोभ, मत्सर। सप्तमभाव के नाम-काम, विवाह, स्त्री, रति, द्यून मंद, अज्ञता। अष्टमभाव के नाम-पराभव, मृति, बंध, रंध्र, आयु, निधन, च्युति। नवमभाव के नाम-शुभ, धर्म, भाग्य, त्रिकोण, गुरु, विभु। दशमभाव के नाम- व्यापार, आस्पद, मेषूरण, मान, आज्ञा, कर्म, रव। एकादशभाव के नाम-भाव, आय, लाभ, अप, तप। व्ययभाव के नाम-रिःफ, हानि, व्यय। इस प्रकार वे ६७ संज्ञाएँ नामानुरूप तात्पर्यवाली हैं।। दशमभाव से यात्रा-सम्बन्धी विचार करना तथा सप्तमभाव से निवृत्ति और चतुर्थभाव से वृद्धि का विचार करना चाहिए। इस प्रकार यात्रा, निवृत्ति, वृद्धि ये तीन नाम और मिलाने से ७० नाम संख्या होती है। जो ग्रह उच्च मित्र या स्ववर्ग में हो तो पूर्वोक्त फल उत्तम और नीच शत्रु आदि में हो तो नेष्ट फल होता है। इस प्रकार बलाबल का विचार करके फल कहना चाहिए।।१ से ७ तक।।

रविः शरीरे होरायां स्वे च भ्रातर्रिवेश्मनि ।। सुते व्याधौ क्षते शत्रौ मृतौ तपसि कर्मणि ।।८।। आये व्यये फलं दद्याच्छीतगुर्विक्रमे सुखे ।। कुटुंबे भ्रातरि क्रोधे प्रतिभायां शुभे मृतौ ।।९।। भाग्ये त्रिकोणे व्यापारे लाभे रिःफे फलप्रदः ।। कुजः शरीरे होरायां कल्पविक्रमबंधुषु ।।१०।। सहजे च सहे शत्रौ क्रोधे लोभे च रंध्रके ।। क्रियायामायतौ हानौ जये भंगे फलप्रदः ।।११।। बुधो मनसि विद्यायां बुद्धौ हिबुकवेश्मनि ।। लाभे शिल्पे च गानादिप्रिये स्वे लाभरिःफयोः ।।१२।।

जैसे लग्नादिभावों से तत् २ फल का विचार होता है, इसी प्रकार सूर्यादि ग्रहों से भी फल विषयक विचार होता है। यही कहा जाता है। सूर्य से शरीर का विचार, धनभाव में हो तो धन का और भाई, मकान, पुत्र, व्याधि, शत्रु, मृत्यु, धर्म, कर्म, लाभ, खर्च आदि का विचार सूर्य से करना। चन्द्रमा से पराक्रम, सुख, कुटुम्व, भ्राता, क्रोध, प्रतिभा, शुभ, मृत्यु, भाग्य, व्यापार, लाभ, खर्च का विचार चन्द्र से भी करना। मंगल से लग्नभाव का फल, विक्रम प्रताप, बन्धु, भ्राता, शत्रु, क्रोध, लोभ, प्रभाव आदि का विचार। बुध से मानसिक चेष्टा, विद्या, सुख, लाभ, शिल्प, गायन विद्या, धन, लाभ, व्यय आदि का विचार।।८ से १२ तक।।

गुरुर्धर्मे च तपसि त्रित्रिकोणे त्रिकोणके ।। आज्ञायां च सुते हानौ कारागृहनिवेशने ।।१३।। अभिशापे तथा व्याधौ स्वे कल्पे मूर्तिवेश्मसु ।। विद्याबुद्धिसुखे भावे शांत्यादिषु फलप्रदः ।।१४।। कामान्यस्त्रीविवाहेषु गीतनृत्यप्रियादिषु ।। सुखे वेश्मनि दुश्चिक्ये स्वे कुटुंबे च वेश्मनि ।।१५।। आज्ञाक्रियातपोभाग्ये लाभायव्ययहानिषु वदान्यत्वे दयायां च भार्गवः फलदः सदा ।।१६।। शनिमृतौ व्यये रिःफे दुश्चिक्ये क्षतचेतसि ।। सहजे च सहे भावे बंधने फलदो भवेत् ।।१७।।

बृहस्पति से नवम भाव तथा पंचमभाव आज्ञा, पुत्र, हानि, कारागृह प्रवेश, अभिशाप, व्याधि, संकल्प, गृह, विद्या चतुर्थ भाव शान्ति, पुष्टि, कर्म आदि का विचार करना।।१३।।१४।। शुक्र से काम, अन्य स्त्री समागम, विवाह, गायन, नृत्य, प्रिय, सुख, गृह, तृतीय भाव, धन, द्वितीयभाव, चतुर्थ भाव, आज्ञा, क्रिया, तप, भाग्य, लाभ, व्यय, हानि, दान, दया आदि का विचार करना। शनि से मृत्यु, नाश, व्यय भाव, तृतीय भाव, चित्त, सहजभाव, बन्धु, बन्धन का विचार करना।।१५।।१६।।१७।।

कालहोरादृकाणेशाः क्षत्रार्कनवभागपाः ।। सप्तांशत्रिंशदंशेशा होरेशश्चाष्टमो भवेत् ।।१८।। क्रमादावृत्तितः प्रोक्ता बलिष्ठः पूर्वतो यथा ।। सूर्यादयो ग्रहा लग्नपतिश्चावृत्तितः क्रमात् ।।१९।।

श्रीबृहत्पाराशरहोराशास्त्रे उत्तरखण्डे लोकयात्रायां
ग्रहभावफलविचारे त्रयोदशोऽध्यायः ।।१३।।

सूर्यादिग्रहों से होरा, द्रेष्काण, भावेश, नवमांश, द्वादशांश, त्रिंशांश, होरेश यह क्रम से अधिकाधिक बलवान् हैं। सूर्यादिग्रह तथा अष्टम और लग्नपति इनमें जो बलवान् हो वह प्रथम फल देगा, बाद उससे हीन उससे हीन फल दाता होते हैं।।१८।।१९।।

इति श्रीबृ० पा० हो० शा० उत्तरखण्डे भा०प्र० लोकयात्रा
ग्रहभावफल विचारे त्रयोदशोऽध्यायः ।।१३।।

अथ आयुर्दायाह

वक्ष्येऽहमथ दायोत्थं नृणामायुः परं मुने ।। पैडचो द्वादशधा प्रोक्तो ध्रुवरश्मिसमुद्भवौ ।।१।। अंशकाष्टकवर्गोत्थौ प्रत्येकं तु चतुर्विधम् ।। विषयोक्तौ द्विधा प्रोक्तौ नक्षत्रांशकसंभवौ ।।२।। द्वात्रिंशद्भेदभिन्नं स्यात्परमायुर्नृणामिह ।। अतिधृतिरर्कस्येन्दोस्तत्त्वानि भूमिसुतस्य पंचदश ।।३।। द्वादश बुधस्य च गुरोस्तिथिः कवेर्मूर्छना नखाश्चार्केः ।। परमोच्चे नीचेऽर्ध परेषु भावेषु वा तथा प्रोक्ताः ।।४।। अनुपातः कर्तव्यस्त्वंतः संस्थेषु खेटेषु ।। खखभूमेः खयुग्मेंद्वोः स्वांशाः पूर्ववत् कृतौ च विज्ञेयौ ।।५।। कृतिरेको यमौ रत्नमष्टादश नखाः क्रमात् ।। सैकतानमिनादीनां दाये नैसर्गिके स्मृतम् ।।६।। षोडश विंशतिरेको नवाष्टनवपंचविंशतिः क्रमशः ।। षड्विंशतिस्त्त-थोच्चे नीचे चार्धं त्विमेऽथ इतरे वा ।।७।।

आयुर्दाय विचार

हे मैत्रेय! अव आयु का निर्णय कहा जाता है। इसके निर्णय की रीति के प्रधानतया ३२

भेद हैं। उनमें पैण्डयायुर्दाय १२ प्रकार का है। अंशायु, ध्रुवायु, निसर्गायु, रश्मिआयु, स्वरांशायु, अष्टकवर्गायु। इनके ४-४ भेद हैं। नक्षत्रायु, अंशायु को कालचक्रायु भी कहते हैं। इनके २-२ भेद हैं। इस प्रकार यह सब ३२ भेद होते हैं।।१।।२।।

पिण्डायु के ध्रुवाङ्क-सूर्य १९, चन्द्र २५, मंगल १५, बुध १२, गुरु १५, शुक्र २१, शनि २० ये ध्रुवाङ्क परमोच्च ग्रह के जानना। परम नीच के अर्ध भाग लेना। मध्य में त्रैराशिक से समझना। यह शतायु अथवा १२० वर्ष की आयु के लिये कहा गया है।।३।।४।।५।।

ध्रुवायुर्दाय के ध्रुवाङ्क-सूर्य २०, चन्द्र १, मंगल २, बुध ९, गुरु १८, शुक्र २०, शनि ५०, इसको निसर्गायुर्दाय या स्वाभाविक आयुर्दाय भी कहते हैं।।६।।

रश्म्यायुर्दाय के ध्रुवाङ्क-सूर्य १६, चन्द्रमा २०, मंगल १, बुध ९, गुरु ८, शुक्र ९, शनि २५, अथवा २६ ये ध्रुवाङ्क उच्च के हैं। नीच राशि में आधा और मध्य में अनुपात से जानना।।७।।

कलीकृतं ग्रहं व्योमखाब्धिनेत्रावशेषितम् ।। शतद्वयेनाभिभजेदब्दमासादयः क्रमात् ।।८।।

मध्यमपिंडायुश्चक्रमाह

सू०	चं०	मं०	बु०	गु०	शु०	श०	यो०
१२	१९	१२	२	१७	८	२०	९३
१	३	९	०	८	७	९	४
२९	१७	१९	१७	६	२२	०	२३
२०	४४	४८	३८	३	५५	०	३१
२४	३६	०	२४	३६	१३	०	२

मध्यमध्रुवायुर्नामनिसर्गायुश्चक्रम्

सू०	चं०	मं०	बु०	गु०	शु०	श०	यो०
१२	७	११	१	२२	८	३५	९९
५	७	२	६	६	५	४	३
७	२३	२६	१३	२६	२०	१५	११
१२	२	३८	१३	९	२४	०	३९
०	२४	२४	४८	१८	०	०	५४

म० सत्तायुर्नभिस्वरांशायुश्चक्रम्							
सू०	चं०	मं०	बु०	गु०	शु०	श०	यो०
११	१९	१२	१	१५	६	२३	९१
४	११	५	६	७	६	८	१
५	१०	९	१३	१	२२	३	६
४५	४८	५०	१३	४०	४०	०	५९
३६	०	२४	४८	४८	४८	०	२४

ऊपर बताई हुई तीनों आयु के वर्षादिक लाने की रीति सूर्यादि ग्रह के स्पष्ट की कला करके २४०० का भाग देकर शेष में २०० का भाग देना। लब्धि वर्ष होते हैं। अब जो शेष रहे उसको पिण्डायु प्रकरण में कहे हुए ग्रह के ध्रुवाङ्क से गुणाकर २०० का भाग देकर प्राप्त हुए लब्धि अङ्क पूर्व वर्ष संख्या में नियुक्त करे। शेष अङ्क को १२ से गुणाकर २०० का भाग देने से मासाङ्क मिलेगा। शेषाङ्क को ३० से गुणा कर २०० का भाग देने से दिनाङ्क प्राप्त होगा। शेष को ६० से गुणा कर २०० का भाग देने से घटी और इसी प्रकार पल प्राप्त करना। इस रीति से सूर्यादि ७ ग्रहों की पिण्डायु, ध्रुवायु तथा रश्म्यायु स्पष्ट करना।।८।।

सूर्यादिगुणिताच्छेषाद्वृद्धिं कुर्याद्यथोत्तरम् ।। स्वोच्चहीनं ग्रहं ज्ञात्वा कर्कादि च मृगादि च ।।९।। गृहीत्वा तु भुजं कोटिं कृत्वा लिप्तीकृतं तु तम् ।। हत्वा नवांशदायेन भजेद्भूत्रयलिप्तिभिः ।।१०।। वत्सराद्या भवंत्येते वर्जयेन्मकरादिके ।। केन्द्रे नवांशदाये स्वे त्रिघ्ने कर्कटकादिके ।।११।।

कोटी करना। (भुज को ३ राशि में घटाने से कोटी होती है।) जो शेष बचे उसकी कला करना। नवांश के ध्रुवाङ्क से गुणा करना। ५४०० का भाग देना। जो लब्धि हो वह वर्ष संख्या होगी। शेष को १२ से गुणाकर ५४०० का भाग देना। लब्धि मास संख्या। शेष को ३० से गुणा कर ५४०० का भाग देना। लब्धि दिन संख्या। शेष को ६० से गुणाकर ५४०० का भाग देना। लब्धि घटी संख्या। और इसी प्रकार पल संख्या लेना। अब जो प्राप्त हुआ वर्ष, मास, दिन, घटी, पल अंक उसको ग्रह यदि मकर आदि ६ राशियों में हो तो ऋण और कर्कादि ६ राशियों में हो तो धन होता है। इसमें मकर आदि केन्द्र हो तो ध्रुवाङ्क को ३ गुणा करके वर्ष संख्या में घटाना और कर्कादि केन्द्र हो तो ध्रुवाङ्क का आधा वर्ष संख्या में जोड़ना तो नवांश आयु स्पष्ट होती है।।९।।१०।।११।।

युंज्यादधोकृते तस्मिन् प्रक्रमानुगतो मतः।।१२।। द्विघ्ने त्वपनयेत्तस्मिन्युंज्यादेव दलीकृते ।। निक्षिप्याष्टकवर्गे तु राशिचक्रे तु पूर्ववत् ।। त्रिकोणैकपशुद्धिं च कृत्वा तु गुणयेद्गुणैः ।।१३।।

मध्यम अंशायुश्चक्रम्							
सू०	चं०	मं०	बु०	गु०	शु०	श०	यो०
३	१९	१८	७	१०	२५	११	११६
८	३	७	०	५	६	५	०
१	०	१	२९	२३	४	२३	१६
५२	४४	५३	९	३२	७	२०	९
४०	४८	५२	२४	०	४	२	८

खवह्निभक्तमब्दाद्याः क्रमाद्भिन्नाष्टवर्गजाः ।। एवकृत्वा तु संयोज्य भाप्तमब्दादयः स्मृताः ।।१४।। कृत्वा करणदैरेव स्वोत्पन्नौ दायसंज्ञितौ ।। प्रत्येकं भिन्नदायोत्था एवं त्रिंशद्भिदा मताः ।।१५।।

इसी प्रकार क्रमानुगत आर्युदाय स्पष्ट करना। नवांश आयु प्राप्त आयु मकर आदि ६ राशि में हो तो मूल ध्रुवांङ्क को द्विगुण करके हीन करना। कर्कादि ६ राशि में हो तो मूल ध्रुवांङ्क को आधा करके जोड़ना चाहिए।।१२।।

अष्टक वर्गायु प्रकार-प्रथम अष्टक वर्ग सिद्ध करके त्रिकोण शोधन और एकाधिपत्य शोधन करना। और पूर्वोक्त रीति से प्रत्येक राशि गुणक से गुणाकर पिण्ड संख्या स्पष्ट करना। बाद ३० का भाग देना तो वर्षादिक भिन्नाष्टक वर्गायु होती है।

समुदायाष्टक वर्गायु की रीति-भिन्नाष्टक वर्गायु के अंक जोड़कर २७ का भाग देना तो वर्ष, मास, दिनादिक समुदायाष्टक वर्गायु होती है। इस प्रकार रेखा पिण्ड से तथा बिन्दु पिण्ड से रेखाष्टक वर्गायु तथा कर्णाष्टक वर्गायु होती है। इस प्रकार अब तक ३० भेद सिद्ध हुए, जिसमें पिण्डायु ७ प्रकार की, ध्रुवायु ७, रश्मायु ७ और अंशायु ७, रेखाष्टक वर्गायु १ और कर्णाष्टक वर्गायु १ ये ३० भेद स्पष्ट हुए।।१३-१५।।

पंच मूर्च्छा सप्त रत्नं दश षोडश वारिधिः ।। नवांशा विधितः प्रोक्ता अंत्यात्प्रोक्तास्तु भादितः ।।१६।। रवींद्वाराहिजीवार्किबुधकेतुसिताः क्रमात् ।। आग्नेयाद्रुद्रगणेशाः स्युः स्वामिनो वत्सराः क्रमात् ।।१७।। षडाशाः सप्त धृतयो नृपो एकोनविंशतिः ।। अत्यष्टिः सप्त च नखा उच्चे नीचेऽर्धमुच्यते ।।१८।। अस्मिस्तु हरणं तस्मात्पूर्वस्मिस्तु द्वयं हितम् ।। अनयोः पापदायादावंते स्युरपमृत्यवः ।।१९।। द्वात्रिंशद्भेदभिन्नोयमायुषो निर्णयः कृतः ।। लोकयात्रापरिज्ञानहेतवे दायनिर्णयः ।।२०।। भावानां संप्रवक्ष्यामि शृणुष्व मुनिपुंगव ।। आयुश्च परमं हत्वा स्वेन स्वेन बलेन च ।।२१।। विभजेद्बलयोगेन भावानां दाय एव सः ।। अथ वांशर्क्षदायेन वर्गेशानां बलेन तु ।।२२।। स्थानाद्यश्च समुद्भूतः षड्विधो दाय उच्यते ।।२३।।

इति श्रीबृहत्पाराशरहोराशास्त्रे उत्तरखण्डे आयुर्दायकथने चतुर्दशोऽध्यायः ।।१४।।

नवांशायुर्दाय के ध्रुवाङ्क-(इनको कालचक्र भी कहते हैं।) सूर्य ५, चन्द्र २१, मंगल ७, बुध ९, बृहस्पति १०, शुक्र १६, शनि ४ यह सूर्यादि ग्रहों के ध्रुवाङ्क हैं।।१६।।

नक्षत्र आयुर्दाय प्रकार-कृतिका नक्षत्र से ३ बार आवृति करने से सूर्यादि ग्रहों के नक्षत्र होते हैं। ग्रहों के वर्ष-सूर्य के ६, चन्द्रमा के १०, मंगल के ७, राहु के १८, गुरु के १६, शनि के १९, बुध के १७, केतु के ७ तथा शुक्र के २०। ये ध्रुव परमोच्च के हैं। ग्रह नीच राशि का हो तो पूर्वोक्त ध्रुवों का आधा लेना। बीच की राशियों में त्रैराशिक से समझना। पापग्रहों की आयु में आदि या अन्त में अपमृत्यु होती है। शुभग्रहों की आयुर्दाय शुभफल कारक है।।१७।।१८।।१९।। पूर्वोक्त ३० प्रकार की आयु तथा नवांश आयु और नक्षत्र आयु ये सब ३२ प्रकार के आयुर्दाय हुए। इस तरह यह आयु का निर्णय लोकयात्रा के ज्ञान के लिये कहा गया। इसमें कुछ विशेष कहते हैं। प्रथम जो ७ प्रकार का आयुर्दाय कहा उनमें प्रत्येक आयुर्दाय को अपने भावबल से गुण कर भावबल योग से भाग देना। लब्ध वर्षादि आयुर्दाय होती है। दूसरा प्रकार-नवांश आयुर्दाय से परमायु को गुणकर षड्वर्ग पति बल योग से भाग देना। लब्ध वर्षादि भावायु होती है। इस प्रकार ६ भेद होते हैं। भावायु, नक्षत्रायु, नवांशायु, अष्ट वर्गायु, अंशायु तथा पैण्ड्यायु। अर्थात् अनेक भेद होते हुए भी सभी भेद इन ६ भेदों के अन्तर्गत हैं। हे मैत्रेय! इस आयुर्दाय विचार को स्पष्ट रीति से जानना चाहिए ।।१६ से २३ तक।।

इति श्रीबृ० पा० हो० शा० उत्तरखण्डे भा० प्रका० आयुर्दाय वर्णनंनाम चतुर्दशोऽध्यायः ।।१४।।

अथदायवर्णनाह

आरार्कौ वक्रिणौ मृत्युश्चान्योन्यभवनस्थितौ ।। वेश्मषण्मृत्युरिःफस्थाः क्षीणेन्द्वत्पत्तिपाष्टमाः ।।१।।अष्टमस्था ग्रहाः सर्वे पापदृष्टियुतास्तु वा ।। भौममंदर्क्षगाश्चेत्तु शुभदृष्टिविवर्जिताः ।।२।। केन्द्रत्रिकोणे च शुभाश्च पापाः षष्ठे तृतीये न च मृत्युसंस्थाः ।। अष्टोत्तरं जीवति वर्षमायुर्नरो गुणाढ्यो नवतिः सुशीलः ।।३।। लग्ने गुरौ दैत्यगुरौ चतुर्थे बुधे सुते षष्ठगते च सूर्ये ।। स्थानं च शत्रोश्च मृतिं च हित्वा त्वन्ये [1]स्थिताश्चेन्नवतिश्चा षट् च ।।४।।

इस एकादश अध्याय में मारक योग से आयु में हानि तथा कारक योग से वृद्धि होती है। उन योगों में प्रथम मारक योग कहे जाते हैं। शनि, मंगल वक्री होकर परस्पर एक दूसरे के भाव में हों, तो मृत्युकारक होते हैं। क्षीण चन्द्र, लग्नेश तथा अष्टमेश ये तीनों ४।६।८।१२ स्थानों में हों तो मृत्युकारक होते हैं। अथवा सब अष्टमभाव में हों तो मृत्युकारक होते हैं। अथवा सब मृत्युकारक ग्रह १।८।१०।११ राशियों में हों तो मृत्युकारक होते हैं।।१।।२।।

आयुर्दायिक योग–शुभग्रह केन्द्रत्रिकोण में हो तो १०८ वर्ष की आयु तथा कोई भी पापग्रह ३।६।८ में न हो तो ९० वर्ष की आयु हो तथा सुशील, सुस्वभाव एवं गुणसंपन्न हो।।३।। लग्न में गुरु, चतुर्थभाव में शुक्र, पञ्चम में बुध तथा षष्ठभाव में सूर्य हो तो ९० वर्ष की आयु होती है। चन्द्र, मंगल शनि ये तीनों ग्रह शत्रुराशि तथा अष्टमभाव में न हों तो ९६ वर्ष की आयु होती है।।४।।

सुखादिकेंद्रेषु गुरुः स्थितश्चेत्तत्पंचमे ज्ञे तु भृगौ तु षष्ठे ।। षडुत्तरा सप्ततिरष्टयुक्ता त्वशांतिरेकोत्तरतः प्रदिष्टा ।।५।। केन्द्रादिस्थाः शतं दद्युर्नवाष्टादींश्च दिग्गुणान् ।। मिश्रं संयुज्य दलिता अनुपातेन वत्सराः ।।६।। शत्रुनीचसमांशेषु दिग्विधेषु न चेत्स्थिताः ।। शतायुर्योगहीनास्तु सर्वे प्रोक्ताः कलौ युगे ।।७।। दायानां हरणं वक्ष्ये शृणुश्च मुनिपुंगव ।। आयुर्दाये तु हरणं षड्विधं संप्रकीर्त्यते ।।८।। व्ययादिहरणं पूर्वमस्तारिहरणे तथा ।। क्रूरोदयस्थहरणं चंद्रयुक्तमस्तथा ।।९।।

लग्न से ४ भाव में गुरु हो, गुरु से पंचम बुध हो और छठे घर में शुक्र हो तो ७६ वर्ष की आयु होती है। लग्न से सप्तमभाव में गुरु, गुरु से ५ बुध और छठे शुक्र हो तो ८८ वर्ष की आयु। अथवा लग्न से १० भाव में गुरु और गुरु से ५ भाव में बुध और छठे शुक्र हो तो ८१ वर्ष की आयु होती है।।५।।

केन्द्रादिभाववश से आयुनिर्णय–यदि सभी ग्रह केन्द्र में हों तो १०० वर्ष की आयु होती है। और पणकर में हों तो ९० वर्ष की आयु, एवं आथोक्लिम में हों तो ८० वर्ष की आयु होती है। और यदि केन्द्र, पणकर आदि आदि स्थानों में ग्रह हों तो दो स्थानों की आयु जोड़ कर आधा करना तो आयु जाने। और तीन स्थानों में ग्रह हों तो तीनों संख्या जोड़ कर तृतीयांश आयु प्रमाण जानना। इस प्रकार जो दशयोग जन्य आयु का प्रमाण कहा अर्थात् १०८।९०।९०।९६।९६।७६।८८।८१।१००।९०।८०। इन दशयोगोंके कर्ता ग्रह शत्रु,नीच,सम आदि अंशों में न हों तो पूर्ण आयु होती है नहीं तो उक्त योगों का भंग होता है। प्रायः कलियुग में शतायुहीन ही मनुष्य होते हैं।।६।।७।।

उक्त आयुयोगों में कमीकारक योग–बारहवें घर से सातवें घर तक हारक योग १, अस्तंगत योग २, शत्रुक्षेत्र गत ग्रहयोग ३, क्रूरोदयस्थ योग ४, राहुयुक्त चन्द्र ५, द्वादश भावगत पापयोग ६, ये छः योग हैं, इनसे आयु का हरण होता है।।८।।९।।

पापो व्ययस्थो हरति सर्वदायं द्विजोत्तम ।। अथद्वित्रिचतुःपंचषडंशोनं क्रमादमी ।।१०।।

अथ स्पष्टांशायुश्चक्रम्								
सू०	चं	मं०	बु०	गु०	शु०	श०	ल०	यो०
६	१६	०	३	५	१७	७	१	५९
१०	१०	०	६	२	९	७	९	८
०	४	०	१४	२६	२	२५	२४	८
५६	२४	०	३४	४६	३	३३	१९	३७
२०	१२	०	४२	०	३२	०	३६	३२

लाभादिसंस्थिताः खेटा वामतः प्रक्रियां शृणु ।। हरंति सौम्याः प्रोक्तार्धं लग्नद्वादशसंधिषु ।।११।। पापश्चेत्सकलं हंति शुभो दलमथोत्तरम् ।। लग्नाद्द्वादशसंधौ च ग्रहान्पापान्विवर्जयेत्

।।१२।। राश्यभावे तु भागादीन् दायघ्नान् षष्टिभाजितान् ।। दाये द्विघ्ने तु सौम्यस्य राशिरेको दलंयदि ।।१३।। अधिकेनापहृत्ततु क्रमाद्राशिंविना कृतम् ।। दायद्विगुणया सौम्यो लब्ध्वा वाऽपचये समाः ।।१४।।

द्वादश भाव में पापग्रह हों तो उसकी सम्पूर्ण आयु का ह्रास होता है। ११ भाव में अर्धभाग का ह्रास होता है। दशमभाव में पापग्रह हो तो तृतीयांश, नवमभाव में पापग्रह हो तो चतुर्थांश, आठवें भाव में पंचमांश, सातवें में षष्ठांश, आयु का भाग हरण करता है। और शुभग्रह हो तो उक्त भाग का आधा भाग हरण करते हैं।।१०।। संधिगत ग्रह यदि पाप हो तो उक्त मान आयु और शुभ हो तो आधा हरण करते हैं।।११।। बारहों संधियों में स्थित शुभ या पापग्रहों के अंशादि को अपने अपने आयुवर्ष संख्या से गुणा करके ६० का भाग देने से जो लब्धि प्राप्त हो वह संधि में कम करने से जो शेष रहे वह आयु का हरण फल हुआ। यह संस्कार ग्रह के स्पष्ट में राशि होने पर ही करना चाहिए। राशि न होने पर पापग्रह का तो यही संस्कार है। शुभग्रह में आयु के अंको को द्विगुणित करके उससे अंशादि को गुणा करना। बाद ६० का भाग देकर लब्धि को संधि में घटाना तो आयु का हरण फल होता है। अथवा एक जगह राशि हो अन्यत्र नहीं हो तो अधिक में से कम को घटाकर शेष बचे सो आयु हरणफल होता है।।१२।।१३।।१४।।

बहवो बलिनो घ्नंति समाश्चेत्प्रथमो मतः ।। अंशकं ग्रहयोगे च द्वयोः पापे हरत्युत ।।१५।। सौम्योपि पापवर्गे च स्थितो रिफादिषट्सु चेत् ।। त्रिषुभावगतानां च पापानां करणं स्मृतम् ।।१६।। कुटुंबभरणं चापि दुश्चित्तं लाभमेव च ।। मेधां च प्रतिभां शांतिं मंदक्रोधं करिष्यति ।।१७।। अस्तंगतानां सर्वेषां दलं दायः स्मृतस्तदा ।। राशिसंख्यासमाश्चाब्दा लग्नेऽब्जे बलवत्तरम् ।।१८।। अंशान् लिप्ताहतान् कृत्वा खखाक्षिभ्यां समाहृताः ।। शेषा मासादयः प्रोक्ता वर्तमानाब्दयोजने ।।१९।।

इस प्रकार संधिगत एक एक ग्रह का फल कहा गया। यदि एक ही संधि में अनेक ग्रह हों तो उनमें पाप ग्रह आयु का हरण करता है, शुभग्रह नहीं।।१५।। दो शुभग्रहों का योग हो तो जो ग्रह पापवर्ग में हो अथवा ७वें से १२वें भाव तक हो तो आयु का हरक (हरण करने वाला) होता है। इसी प्रकार ७वें से १२वें घर तक रवि, मंगल, शनि हो तो भी आयु का हरण करते हैं।।१६।।

बिन्दु के सम्बन्ध में विचार—पापग्रह १२वें भाव में हो तो कुटुम्ब का पोषण कारक होता है। ११ वें भाव में हो तो दुश्चित्त करे। १०वें घर में लाभ। ९वें घर में ज्ञान का उदय। ८वें घर में शांति। ७वें घरमें क्रोध कारक होता है।।१७।।जो ग्रह अस्त हों उनका जो फल प्राप्त हो उसका आधा भाग हरण होता है। यदि लग्न में चन्द्रमा बलवान् हो तो लग्न की राशि की संख्या ही आयु के वर्ष जानना। लग्न में चन्द्रमा बलहीन हो या न हो तो अंशो को ६० से गुणा कर २०० से भाग देकर लब्ध वर्षादिक आयु जानना।।१८।।१९।।

क्रूरेक्रूरोदयघ्नं तमष्टोत्तरशतैर्हृतम् ।। लब्धं चापनये द्दाये स्वे तथा परमायुषि ।।२०।। स्वोच्चे

**मूलत्रिकोणे च लब्धस्यार्धं विवर्जयेत् ।। मित्रेऽधिसुहृदि प्रोक्तं पादोनेनापनायनम् ।।२१।।
भावेष्वेवं विधिः प्रोक्तो वर्गाणामधिपेषु च ।। तिष्ठंतौ शुभपापौ चेत्पापोदयविधिः स्मृतः ।।२२।।
क्रूरेष्टमेऽष्टमांशेन भावस्याप्यनुपाततः ।। लग्नाधिपेतराष्टांशं पापो हरति मृत्युगः ।।२३।।
बहवश्चेद्बलीसौम्यपापेष्वेवंविधिः स्मृतः ।। तयोर्दायांतरं दायः केन्द्रस्य च विधीयते ।।२४।।**

लग्न में पापग्रह हो तो लग्न के अंशादि को पापग्रह की नवांश राशि से गुणा करके १०८ का भाग देना। जो लब्ध हो सो आयु में से कम करना तो स्पष्ट आयुर्दाय होती है। लग्न में पापग्रह उच्चं राशि या मूल त्रिकोण में हो तो पूर्वोक्त रीति से जो लब्धाङ्क प्राप्त हुआ है उसको आधा करके परमायु में घटाना। यदि पाग्रह मित्र या अधिमित्र का हो तो चतुर्थांश कम करके बाकी स्पष्ट आयु जानना। यदि लग्न में शुभ और पाप दोनों ग्रह हों तो जो बलवान् हो उसके अनुसार क्रिया करना।।२०-२२।।

आठवें भाव में पापग्रह हो तो लग्नेश को छोड़कर और भावों के स्वामी की अष्टमांश आयु का हरण करता है।।२३।। यदि अनेक पापग्रह हों तो जो बलवान् हो उसमें पूर्वोक्त विधि से आयु हरण करे। अथवा शुभ, पाप दोनों प्रकार के ग्रह हों तो दोनों ग्रहों के आयुफल का अन्तर करके जो बाकी रहे वह आयुफल होता है। इसी प्रकार केन्द्रस्थित ग्रहों के लिये भी समझना चाहिए।।२४।।

**सेन्दौ राहौ दशां राहोरानीता मूलदायवत् ।। चंद्रायुःपिंडतः शोध्या तद्राहुकरणं स्मृतम् ।।२५।।
अंशदायक्रमेणैव तमसोऽब्दाः समीरिताः ।। तस्मिन्सचन्द्रे तल्लग्नभावसाधनतस्ततः ।।२६।।
तत्तद्दृष्टिहतं कृत्वा पष्ट्याप्तं धनशोधने ।। सोदये च सराह्विदावेवं न्यायः समीरितः ।।२७।।
स्थानवृद्धिः क्षयः कार्यो द्रेष्काणर्क्ष सराशिकम् ।। अस्तंगतानामर्धं स्याद्विना भृगुसुतं शनिम् ।।२८।।
तयोर्वेदांगहीनं स्यात्त्र्यंशोनंशत्रुगस्य तु ।। अंगारकं वर्जयित्वा शत्रुक्षेत्रगतैर्ग्रहैः ।।२९।।**

अब चन्द्रयुक्त राहु का विचार कहते हैं चन्द्रयुक्त राहु हो तो पूर्वोक्त रीति से दशा स्पष्ट करके चन्द्रमाकी आयु घटाना।जो शेष रहे वह राहु का वर्षादि स्पष्ट होता है।।२५।। यदि चन्द्र सहित राहु लग्न में हो तो लग्न के आयु स्पष्ट से राहु दृष्टि और चन्द्र दृष्टि को गुणाकर ६० से भाग देना। शेष मकरादि में धन तथा कर्कादि में ऋण करना तो आयु स्पष्ट होती है।।२६।।२७।।

द्रेष्काण योग से आयु की वृद्धि तथा ह्रास–द्रेष्काण तथा भाव की राशि एक हो तो भाव स्थान फल की वृद्धि होती है। भिन्न हो तो क्षय होता है। अस्तंगत ग्रहों का आयुर्दाय आधा होता है।।२८।। शुक्र, शनि अस्तंगत हों तो ३/४ (पौना) होता है।।२८।। शत्रु क्षेत्री ग्रह का आयुर्दाय मंगल बिना तृतीयांश कम होता है। मित्र क्षेत्रीग्रह का षष्ठांश कम होता है।।२९।।

सुहृद्वर्गगतानां तु तद्बलं हरति स्वकम् ।। एवं भावेषु सर्वेषु षड्विधं हरणं न हि ।।३०।। हरणं नैव कर्तव्यमंशदायेऽष्टवर्गजे ।। स्वोच्चे च त्रिगुणे प्रोक्तं स्ववर्गे द्विगुणं तथा ।।३१।। अधिमित्रगृहे सार्धं त्र्यशं मित्रगृहे युतम् ।। अरावध्यरिभावे च त्र्यंशखंडविवर्जितम् ।।३२।। अष्टवर्गोत्थदायेषु प्रोक्तोऽयं विधिरंजसा ।। भावदायेषु सर्वेषु प्रोक्तोयं विधिरुत्तमः ।।३३।। दायगस्य तु सर्वस्य सहगस्य दलं भवेत् ।। सुतधर्मगयोस्त्रयंशं पादं मृतिसुखस्थयोः ।।३४।।

पूर्वोक्त ६ प्रकार के जो आयु हरण की रीति कही है वह ग्रहों के विषय में जानना, भावों

के विषय में नहीं।।३०।। अष्टक वर्गोत्पन्न अंशायु में हरण नहीं होता। प्रत्युत योग करना। उच्च का ग्रह हो तो प्राप्त आयु को त्रिगुणित करना। स्व राशि का हो तो द्विगुणित। अधिमित्र का हो तो अर्धाधिक (डचोढ़ा)। मित्र राशि का हो तो तृतीयांश युक्त। शत्रु राशि अथवा अधिशत्रु राशि का हो तो तृतीयांश हीन करना। यह रीति अष्टकवर्गोत्पन्न आयु तथा भावायु में भी समान रीति से करना। आयुर्दाय का जो स्वामी है उसका जो दाय भाग है उसका आधा भाग दायपति के साथ रहनेवाला ग्रह लेता है। दायेश से त्रिकोण में स्थित ग्रह तृतीयांश हरण करता है। सप्तमस्थ ग्रह सप्तमांश हरण करता है।।३४।।

सप्तांशं सप्तमस्थस्य प्रक्रिया प्रोच्यतेऽधुना ।। अंशान्परस्परहताञ्छेदेनैव विभाजितम् ।।३५।।
तत्तदंशविभक्तं च स्वस्य स्वस्य समं भवेत् ।। नीचार्धपक्षे सर्वत्र विधिरेष विधीयते ।।३६।।
नीचाभावेष्टवर्गोत्थं भावदायेंऽशकक्रमे ।। नायं विधिः स्मृतस्तत्र बहवश्चेत्तु तेऽखिलम् ।।३७।।
केन्द्रादिगा ग्रहाः सर्वे ददत्येवापहृत्य च ।। अर्धत्र्यंशंच पादं च हरणाभावसम्मतौ ।।३८।।

अन्तरदशा का प्रकार–अंशच्छेद और समच्छेद करके मूल दशा को गुणा करना और अंशच्छेद तथा समच्छेद का भाग देना। तो स्पष्ट अन्तरदशा प्राप्त होगी।।३५।।३६।। यह पूर्वोक्त प्रकार वहीं होगा जहां ग्रह नीच का न हो। तथा अष्टक वर्गायु और अंशायु में भी नहीं होता।।३७।। सम्पूर्ण ग्रह केन्द्र में अर्ध, पणफर में तृतीयांश तथा आपोक्लिम में चतुर्थांश आयु देते हैं।।३८।।

अथ दशाक्रमचक्रमाह								
शु०	श०	गु०	मं०	ल०	सू०	बु०	चं०	योग
१७ ९ २ ३ ३२	७ ७ २५ ३३ ०	५ २ २६ ४६ ०	० ० ० ० ०	१ ९ २४ १९ ३६	६ ९ २७ ३८ ०	३ ६ १४ ३४ ४२	६ १० ४ २४ १२	५९ ८ ७ ३४ १२
१९००	१९१८	१९२६	१९३१	१९३१	१९३३	१९४०	१९४३	१९६०
१० ४ १४ २२	७ ६ १७ ५४	३ १ ५० ५४	५ २८ ३६ ५४	५ २८ ३६ ५४	३ २२ ५६ ३०	१ २५ ३४ ३२	८ ५ ९ १२	६ ९ ३३ २४

अंशच्छेदचक्रम्				चंद्रान्तरदशाचक्रम्				
चं०	ल०	शु०	भौ०	चं	ल०	शु०	भौ०	योग
१ १	१ ३	१ ४	१ ४	९ उ ५१ २३	३ ० २२ ३७ १	२ ३ १६ ५७ ५४	२ ३ १६ ५७ ५४	१६ १० ४ २४ १२

समच्छेदचक्रमाह								
चं०	ल०	शु०	भौ०	१९४३	१९५२	१९५५	१९५८	१९६०
४८ ४८	१६ ४८	१२ ४८	१२ ४८	८ ८ २७ ३२	१० १६ १८ ५५	११ ८ ५५ ५६	२ २५ ५३ ५०	६ १२ ५१ ४४

सर्वद्वित्रित्रिवेदाश्च त्रिषट्सप्ताष्टपाणयः ।। स्वर्क्षहोराद्दकाणेशास्त्रिंशांशेशाद्रिभागपाः ।।३९।। नवार्ककालहोरेशाः षष्ट्यंशेशकलांशपौ ।। भुंजते च क्रमात्सर्वे त्वंतर्दायविधौ तथा ।।४०।। ग्रहाद्भावात्ततस्तस्मात्स्थितानां द्वादशस्वपि ।। भावानं च क्रमात्प्रोक्ता भागांशाश्च स्वयंभुवा ।।४१।। सर्वद्विवेदसप्ताष्टषट्त्रिरत्नदिशाऽद्रयः ।। वेदांगा हारका एव ग्रहाणां समुदीरिताः ।।४२।। हत्वा दायं बलैः स्वैस्तु बलं योगेन भाजयेत् ।। आयव्यये तु भावानां ग्रहाणां वियदादिषु ।।४३।।सर्वाद्वित्रीषुवेदत्रिपंच सप्त ततः क्रमात् ।। स्थानांतरे तु भागांशाःसर्वभावेषु कीर्तिताः।।४४।।सर्वत्रिसप्तरामेषुषट्त्र्याग्निद्वियमाः क्रमात् ।। कालांशा अर्धहोरांशाः पतयोऽथ हरा यथा ।।४५।।

इति श्रीबृहत्पाराशरहोराशास्त्रे उत्तरखण्डेदायवर्णनं नाम पञ्चदशोध्यायः।।१५।।

अन्तरदशा का स्वामी स्वराशि में हो तो पूर्ण आयु, होरा में आधा, द्रेष्काण में तृतीयांश कम तथा त्रिंशांश में तीसरा भाग, सप्तांशक में चतुर्थांश भोगता है। नवांश में तृतीयांश तथा द्वादशांश में हो तो छठा अंश, होरापति हो तो सातवां भाग, षष्ठ्यंश का स्वामी हो तो आठवां भाग भोगता है। षोड़शांश में आधा भाग भोगता है। यह अन्तरदशा का पाचक क्रम कहा गया है।।३९।।४०।। ग्रहों के और भावों के भागांश जो ब्रह्मा ने कहे हैं सो कहे जाते हैं।।४१।। प्रथम भाव का संपूर्ण आयु, दूसरे भाव की आधी, तीसरे भाव की चतुर्थांश, चौथे की सप्तमांश, पंचम की अष्टमांश, छठे की षष्ठांश, सातवें की तृतीयांश, आठवें की नवमांश, नवम की दशमांश, दशम की सप्तमांश, ग्यारहवें की चतुर्थांश, बारहवें भाव की आयु का षष्ठांश भाग हारक जानना।।४२।।

भावों के भागांश–११,१२ भाव का निर्णय यह है कि पूर्वोक्त रीति से हरण करके जो शेष रहा उसको अपने अपने बल से गुणा करे, सर्व बलयोग से भाग देना जो लब्ध हो, वह स्पष्ट अन्तरदशा है। इसी प्रकार तीसरे भाव का सर्वांश, चौथे भाव का आधा, पांचवें का तीसरा, छठे का पांचवां, सातवें का चौथा, आठवें का तीसरा, नवें का पांचवां, दशवें का ७ वां भाग, भागांश कहे जाते हैं तथा प्रथम भाव का सम्पूर्ण भाग, दूसरे भाव का आधा भाग भागांश होता है। कालांश तथा अर्ध होरांश पति कहते हैं– सम्पूर्ण, तृतीयांश, सप्तांश, तृतीयांश, पंचमांश, षष्ठांश, तृतीयांश, द्वितीयांश और द्वितीयांश ये अधिपति और हारक होते हैं।।३९–४५।।

इति श्रीबृहत्पाराशरहोराशास्त्रेउत्तरखण्डे भावप्रकाशिकायांदायवर्णनं पञ्चदशोऽध्यायः।।१५।।

पुनः दायवर्णनाह

ग्रहेषु सर्वेषु बलोत्तरेषु स्वोच्चांशगेषु प्रबलस्य वर्गे ।। दिग्वीर्यचेष्टाबलपूर्तियुक्ते पैण्डचेषु नीचार्धकृतापहाराः ।।१।। अष्टत्रिंशद्भिदाः संति ताः स्वोच्चादिसुसंस्कृताः ।। लग्नादिभावगानां च ग्रहाणां स्थितिभेदतः ।।२।। द्विघ्नाश्चतुरशीतिश्चभिदाः संतिद्विजोत्तम ।। स्वोच्चादिस्थितिभेदेन भिन्नाः सूर्येषुभूमयः ।।३।।

पुनः दायवर्णन

पिंडायु की विविध भेद प्रकार संख्या–पहले पिण्डायु प्रकरण में पिण्डायु के १२ भावों की आधा, तिहाई, चौथाई घटाने से १२X३ = ३६ तथा २ अन्य भेद, इस प्रकार ३८ भेद कह आये हैं। ये ३८ भेद उच्च संस्कार होने से ३८X२ = ७६ भेद होते हैं। तथा १२ भावों में उच्चांश, अधिक बल, दिग्बल, चेष्टाबल, वर्ग बल आदिक ७ ग्रहों के भेद से १२X७ = ८४ भेद होते हैं। और हे मैत्रेय! इन ७ ग्रहों के स्वराशि, उच्च, मूल, त्रिकोण आदि ९ शुभयोग तथा ९ अशुभ योग मिलाकर १८ गुणित होने पर ८४X१८ = १५१२ भेद होते हैं। इस प्रकार ७६ और १५१२ भेद पिण्डायु के होते हैं।।१।।२।।३।।

सलग्नानां बलैः सर्वैरधिकानां क्रमाद्द्विज ।। अंशोद्भवस्तथा पैंडचो निसर्गोत्थाभिधः परः ।।४।। शतस्वरांशो भौमाच्च नक्षत्रांशकसंज्ञकौ ।। स्वरांशश्चेतरो दायः करदायस्तथेतरः ।।५।। स्वोच्चनीचसुहृच्छत्रुवर्गगैश्च चतुर्विधः ।। अतिनीचातिशत्रोश्च भागराशिगतस्य च ।।६।। समुदायाष्टवर्गश्च भिन्नाऽष्टक उदीरितः ।। तत्र मूलत्रिकोणे च भिन्नवर्गे च वृद्धिकृत् ।।७।। तथा समारिवर्गे च न वृद्धिहरणे तथा ।। सूर्यादयः क्रमाल्लग्नगताश्चेद्बलवत्तराः ।।८।।

किस बल से कौनसी आयु लेना, यह कहा जाता है। है मैत्रेय! लग्न बलवान् हो तो अंशायु लेना, सूर्य बलवान् हो तो पिंडायु लेना, चन्द्र बलवान हो तो निसर्गायु लेना, मंगल बलवान हो तो स्वरांशायु लेना, बुध बलवान हो तो नक्षत्रायु,गुरु बलवान हो तो नवांशायु, शुक्र बलवान हो तो स्वरांशायु, शनि बलवान हो तो कर दाय आयु लेना।।४।।५।।

उच्चादि बल के कारण आयु के ग्रहण का विचार=उच्च वर्ग में हो तो पिण्डायु, नीच वर्ग

में हो तो निसर्गायु, त्रिवर्ग में हो तो स्वरांशायु, शत्रुवर्ग में हो तो नक्षत्रायु, अति नीच नवांश में हो तो समुदायाष्टक वर्गायु, अति शत्रु नवांशक वर्ग में हो तो भिन्नाष्टक वर्गायु लेना।।६।। जो ग्रह मूल त्रिकोण के त्रिवर्ग में हो तो पूर्वोक्त रीति से वृद्धि करना। नीच तथा शत्रु वर्ग में हो तो कम करना। सम शत्रु वर्ग में हो तो कम करना। सम शत्रुवर्ग में यथा प्राप्त आयु ग्रहण करना।।७।। सूर्यादिग्रह बलवान होकर लग्न में स्थित हों तो उनके बल के अनुसार आयु लेना। यथा सूर्य से पिण्डायु, चन्द्र से ध्रुवायु, मंगल से समुदायाष्टक वर्गायु, बुध से भिन्नाष्टक वर्गायु, गुरु से क्रमानुगत आयु, शुक्र से अंशायु, शनि से करदाय आयु ग्रहण करना।।८।।

पैंड्यो ध्रुवोऽष्टवर्गोत्थः प्रक्रमानुगतोंऽशकः ।। करदायःक्रमाल्लग्ने रव्यादौ तु स्थिते सति ।।९।। पैंड्यः स्वरांशो ध्रुवोय एव तत्प्रक्रमांशश्च तथांशकोत्थः।। भिन्नाष्टवर्गः समुदायसंज्ञः करोत्थ उच्चादिषु योजनीयः ।।१०।। ध्रुवः सुखस्थस्य तु सप्तमस्य पैंड्यः स्वरांशः खलु कर्मगस्य ।। द्वितीयसंस्थस्य च पैंड्य उक्तस्तृतीयधीधर्मगतस्य चैव ।।११।। षष्ठव्ययस्थस्य तु भिन्नसंज्ञस्त-थेतरो मृत्युगतस्य चैवम् ।। पैंड्यः स्वरांशो ध्रुव आय उक्तः पैण्ड्यौ भवेदाद्यगतस्य चैव ।।१२।।

लग्न में उच्चादि भेद से स्थित ग्रह से आयु का ग्रहण लग्न में उच्चराशि का ग्रह हो पिण्डायु लेना। त्रिकोण में उच्चराशि का ग्रह हो तो स्वरायु लेना। स्वराशि का हो तो ध्रुवायु लेना। अधिमित्र का हो तो प्रकमांश आयु। मित्रक्षेत्री हो तो अंशायु। शत्रु क्षेत्री हो तो भिन्नाष्टक वर्गायु। अधिशत्रु क्षेत्री हो तो समुदायाष्टक वर्गायु। नीच का हो तो अंशायु लेना चाहिए।।९।।१०।।

मतान्तर–लग्न से चौथे घर में ग्रह हो तो ध्रुवायु, ७वें हो तो पिण्डायु, २,१०वें घर में स्वरांशायु, ३,५,९वें घर में हो तो पिण्डायु, ६ठे घर में हो तो भिन्नाष्टक वर्गायु, ८वें घर में हो तो समुदायाष्टक वर्गायु, लग्न में हो तो पिण्डायु, ११ वें घर में हो तो पिण्ड, स्वर, ध्रुव इन ३ आयु में से एक आयु लेना।।११।।१२।।

लाभेरवींद्वारबुधेज्यशुक्रमंदाः स्थिताः प्रक्रमदाय एव ।। लग्नार्यभौमज्ञरवीन्दुमन्दशुक्रास्तृतीये सुतभे च धर्मे ।।१३।। स्वेशुक्रमंदार्यबुधार्कभौमचंद्राः सुखेऽस्ते निधनेऽपिचैव ।।बुधात्क्रमाद्व्यु-त्क्रमतश्च चंद्राद्भौमार्कमंदार्यसितज्ञचंद्राः ।।१४।। षष्ठे व्यये कर्मणि लाभगा वा रवीन्दुशुक्रा-र्किकुजार्यसौम्याः ।। सौम्यात्कुजाद्भार्गवतः क्रमात्स्युर्मिश्रे तु दाये क्रमशः प्रदिष्टम् ।।१५।। नक्षत्रदायोंऽशकपिंडदायो भिन्नाष्टवर्गः समुदायसंज्ञः ।। स्वरांशदायौ क्रमशः प्रदिष्टौ विशेष-तस्तत्र वदामि यस्मात् ।।१६।।

बारह भावों में मिश्रायु लेने का प्रकार–एकादश स्थान में ७ ग्रहों की आयु लेना। लग्न तथा ३,५,९ भाव में गुरु, मंगल, बुध, सूर्य, चन्द्र, शनि, शुक्र, इस क्रम से आयु लेना। २रे भाव में शु० श० गु० बु० सू० मं० चं० इस क्रम से आयु लेना। ४थे घर में बुध, सू० मं० चं० शु० श० गु० इस क्रम से, ७ वें भाव में चं० मं० सू० बु० गु० श० शु० इस क्रम से, ८वें भाव में मं० सू०

श० गु० शु० बु० चं० इस क्रम से, ६ठे भाव में सू० चं० शु० श० मं० गु० बु० क्रम से, १२वें भाव में बु० सू० चं० शु० श० मं० गु० क्रम से, १०वें भाव में मं० गु० बु० सू० चं० शु० श० क्रम से, ११वें भाव में शु० श० मं० गु० बु० सू० चं० इस क्रम से आयु देने वाले कहे गये हैं।।१३।।१४।।१५।।

आयुर्दाय की गणना–नक्षत्रायु, अंशायु, पिण्डायु, भिन्नाष्टक, वर्गायु, समुदायाष्टक वर्गायु, स्वरांशायु, इनके भेद आगे कहे जाते हैं।।१६।।

अष्टत्रिंशदमिश्रे तु अंकसूर्यकलांशकैः ।। मूर्छाक्षिणी भिदाः संति रश्मिजास्त्रिंशदेब हि ।।१७।। एकस्य विषये द्वौ चेदाययोगदलं भवेत् ।। ज्यादयश्चेद्युतास्त्रचादिसंख्याप्ताश्च दशा भवेत् ।।१८।। रबावुच्चगते चान्ये बलिष्ठामूलकोणगाः ।। स्वोच्चस्थेषु बलिष्ठेषु सर्वेषु शशहंसके ।।१९।। एवं चिरायुषां योगेष्वन्येषु गणितेषु च ।। चंद्रयोगेषु त्रिषु च चंद्रे तु बलवत्तरे ।।२०।। राजयोगेषु सर्वेषु पैंडचमाह पराशरः ।। लग्न गुरौ कर्मगते च भानौ चंद्रे सुख वाऽस्तगते बलिष्ठे ।। पूर्णे त्रिकोणोपचये शुभेषु पापेष्वथात्रोक्तमसंस्थितेषु ।।२१।। शुभाश्च केंद्रे त्रिषडायभेऽन्ये विपर्यये पैंडचमतः प्रदिष्टम् ।। रिःफाष्टषष्ठेषु सहस्ररश्मौ भौमे क्रमाच्छीतकरे तु पैंडचः ।।२२।। पापाल्लग्ने चाष्टमे सप्तमे वा सौम्याःषष्ठे कर्मभेरिःफभेवा ।। नीचाभावे पैण्डचायः प्रदिष्टो मंदे लग्ने स्वोच्चगे च ध्रुवाख्यः ।।२३।।

अमिश्रित आयु के भेद ३८ होते हैं, उनमें नवांश, द्वादशांश, षोडशांश के भेद से २२१ भेद होते हैं। रश्मि आयु के ३० भेद हैं।।१७।। एक भाव में २ ग्रह आयु दाता हों तो दोनों का योग करके उसका आधा लेना। ३ आदि अधिक ग्रह हों तो सबकी आयु का योग करके ग्रह संख्या से भाग देना। जो लब्धि हो सो वही आयु भाव की होती है।।१८।।

पिण्डायु ग्रहण में विचार–सूर्य उच्च का हो और ग्रह बलवान् हों तथा शश योग, हंस योग, दीर्घायु योग, सुनका योग, अनफा, दुर्धरा, चन्द्र, राज आदि योग हों तथा चन्द्रमा बलवान् हो तो पिण्डायु ग्रहण करना, ऐसा पराशर भगवान् कहते हैं।।१९।।२०।।२१।।२२।।

प्रकारान्तर से पिण्डायु ग्रहण का विचार–गुरु लग्न में, सूर्य १०, चन्द्र ४ अथवा ७, शुभग्रह त्रिकोण या त्रिषडाय में, १,२,७,८,१२ में अथवा शुभग्रह केन्द्र, त्रिषडाय में, गुरु १२, मंगल ८, चन्द्र ६ अथवा पापग्रह १।७।८ शुभ ग्रह ६।१०।१२ इन भावों में नीच वर्जित हों तो पिण्डायु लेना।।२१।।२२।। जन्म लग्न में तुलाराशि का शनि स्थित हो तो ध्रुवायु लेना।।२३।।

वीणायां कार्मुके चक्रे गदायामर्धचन्द्रके ।। रवौ पैंडचोंऽशको लग्ने ध्रुवश्चन्द्रे च भूमिजे ।।२४।। भिन्नाष्टवर्गः सौम्ये तु नक्षत्रांशसमुद्भवः ।। गुरौ नक्षत्रदायः स्यात्प्रक्रमानुगतः सिते ।।२५।। समुदायाष्टवर्गस्तु मंदे तु बलवत्तरे ।। वाप्यां पाशे शरे पद्मे समुद्रार्कादिषु क्रमात् ।।२६।। बलिष्ठेषु नवांशोत्थो ध्रुवः पैण्डचःस्वरांशकः ।। भिन्नाष्टवर्गो ह्यंशोत्थो नक्षत्रांशक ईरितः ।।२७।। रज्जौ विहंगे मालायां नले च मुसले क्रमात् ।। पैंडचो ध्रुवः क्रमात्प्रोक्तो रव्यादौ तु बलोत्तरे ।।२८।। गंडे शक्तौ च शकटे यूपे केदारशूलयोः ।। प्रक्रमानुगतश्चाथ रश्मिजौ ध्रुवसंज्ञितौ ।।२९।। अष्टवर्गसमुद्भूतौ क्रमादेवं बलोत्तरे ।। नौछत्रवज्रदामाख्ये

स्वरदायोऽतिनीचगे ।।३०।। कूटे गंडे शरे नागे गोले भृंगाटके पुनः ।। कालकूटे क्रमात्प्रोक्ताः पैंड्याद्याः सप्त वै द्विज ।।३१।। पैंड्यास्त्रयो ध्रुवाश्चांशदायाश्चाष्टकवर्गकौ ।। द्रेष्काणेषु नवांशेषु द्वादशांशेषु च क्रमात् ।। कलांशेषु नव प्रोक्ता दायाश्चैव पुनः पुनः ।।३२।।

योग विशेष से आयु ग्रहण–वीणा, कार्मुक, चक्र, गदा, अर्धचन्द्र योग हों, सूर्य बलवान् हो तो पिण्डायु लेना। केवल सूर्य बलवान् हो तो पिण्डायु लेना। लग्न की बलवत्ता में अंशायु। चन्द्र बलवान् हो तो ध्रुवायु। मंगल बली हो तो भिन्नाष्टक वर्गायु, बुध बली हो तो नक्षत्रांशायु, गुरु बली हो तो नक्षत्रायु, शुक्र बली हो तो क्रमानुगतायु, शनि बली हो तो समुदायाष्टक वर्गायु लेना।।२४।।२५।।

प्रकारान्तर–वापी, पाश, शर, पद्म, समुद्र, इनमें से कोई योग हो तथा सूर्य बली हो तो नवांशायु। चन्द्र में ध्रुवायु, मंगल में पिण्डायु, बुध में स्वरांशकायु, गुरु में भिन्नाष्टक वर्गायु, शुक्र में अंशायु, शनि में नक्षत्रांशायु लेना।।२६।।२७।।

अन्य प्रकार–जन्म कुण्डली में रज्जु योग हो तो पिण्डायु, बिहंग योग हो तो ध्रुवायु, माला हो तो पिण्डायु, नलयोग हो तो ध्रुवायु, मुसल योग हो तो पिण्डायु, गण्ड योग हो तो क्रमायु, शक्ति में रश्म्यायु, शकट में ध्रुवायु, यूप में अंशायु, केदार में भिन्नाष्टक वर्गायु, शूल में समुदायाष्टक वर्गायु लेना तथा सूर्यादिग्रह की बलवत्ता भी होनी चाहिए।।२८।।२९।। नौका, छत्र, वज्र, दामयोग हों, सूर्यादि ग्रह नीच के हों तो स्वरांशायु लेना।।३०।। हे मैत्रेय! कूट योग में पिण्ड, गण्ड योग में ध्रुव, शर में अष्टक वर्ग, नाग में प्रक्रम, गोल में अंशायु, श्रृंगाटक में स्वरांशायु तथा कालकूट में रश्म्यायु लेना।।३१।।

प्रकारान्तर-लग्न में प्रथम द्रेष्काण हो तो पिण्ड, दूसरे द्रेष्काण में ध्रुव, तीसरे में स्वरांश आयु लेना। नवांश में ध्रुवादिक क्रम से ९ आयु लेना। द्वादशांश में अंशादि क्रम से लेना। उच्च आदिक ९ स्थानों में ग्रह हो तो भिन्नाष्टक, समुदायाष्टक, आदि क्रम से आयु ग्रहण करना।।३२।।

त्रिंशत्सवेदाः स्वरपाचकाश्च सुरांश्च दंताः क्षितिपावकाश्च ।। षट्त्रिंशदिष्वग्नय एव भानि छंदांसि मूर्च्छाश्च जिनाः कराश्चेत् ।।३३।। पैंडचस्तथा द्वादशधा प्रभिन्नः क्रमेण दायो नियतः प्रदिष्टः ।। तत्त्वाग्निनंदाग्नय एव रत्नदस्रास्त्रिदस्रा ध्रुवदायभेदाः ।।३४।। एकस्त्रयश्चेत्समुदाय संज्ञस्ततस्तु वेदा इतरोऽष्टवर्गः ।। पंचादिकेष्वंशकदाय उक्तो रुद्राश्च सूर्या यदि पैंड्य आद्यः ।।३५।। विश्वे मनुश्चेत्स्वरभागदायो नक्षत्रदायस्थितिसंज्ञकश्चेत् ।।३६।। नृपेऽत्यष्टित्रये प्रोक्ता आद्यपैंड्यभिदास्तथा ।। प्रक्रमानुगतो विंशत्यष्टत्रिंशेऽष्टवर्गजः ।।३७।। चत्वारिंशत्रये पैंड्यो नक्षत्रांशस्त्रये ततः ।। शेषेषु षट्सुपैंड्यः स्यादाद्यो गर्गोयमाह च ।।३८।। इष्टरश्म्यधिक प्रोक्तक्रम एव कराधिके ।। केंद्रादिषु ग्रहाणां च बलोत्तरवशात्क्रमः ।।३९।।

अब रश्मि के भेद से आयु का भेद कहा जाता है। रश्मि के योग की संख्या २१।२४।२६।२७ तथा ३० से ३७ तक हो तो पिण्डायु लेना। और २५।२९।२३।३९ योग हो तो ध्रुवायु लेना। तथा १।२।३ योग हो तो समुदायाष्टक वर्गायु लेना। ४ का योग हो तो भिन्नाष्टक वर्गायु, ५ से १० तक योग हो तो अंशायु, ११।१२ में पिण्डायु, १३।१४ में

स्वरांशायु, १५ में नक्षत्रायु, १६ से १९ तक पिण्डायु, २० में प्रक्रम आयु, ३८ में अष्ट वर्गायु, ४०।४१।४२ में पिण्डायु, ४३।४४।४५ में नक्षत्रायु, २२।२८ तथा ४६ से ४९ तक रश्मि योग हो तो पिण्डायु लेना। यह गर्ग ऋषि का कथन है।।३३ से ३९ तक।।

बलोत्तरवशादेव स्थानेतरवशात्तथा ।। इष्टात्फलक्रमादेव रश्म्युक्तविधिना क्रमात् ।।४०।।
कल्पादौ भगवान् गर्गः प्रादुर्भूय महामुनिः ।। ऋषिभ्यो जातकं सर्वमुवाच कलिमाश्रितः ।।४१।।
अस्मिन्नुत्तरभागे तु मयानुक्तं च यद्भवेत् ।। तत्सर्वं गर्गहोरायां मैत्रेय त्वं विलोकय ।।४२।।

इति श्रीबृहत्पाराशरहोराशास्त्रे उत्तरखण्डे दायप्रकरणं नाम षोडशोऽध्यायः।।१६।।

यह आयुर्दाय के भेद बल की न्यूनाधिकता से तथा मित्रादि भेद एवं स्थान बल के तारतम्य से इष्ट, कष्ट, बल योग से एवं रश्मि के निमित्त से कहे गये हैं।।४०।। कलियुग के प्रारंभ में गर्ग मुनि ने अपने शिष्यों को कहा था। जो इस विषय में हमने नहीं कहा है वह गर्ग होरा में देख लेना।।४१।।४२।।

इति श्रीबृ० पा० हो० शा० उ० खं० भावप्रका० आयुर्दायप्रकरणे
षोडशोऽध्यायः ।।१६।।

अथ कलांशादि फलमाह

भाग्यं कर्म च वक्ष्यामि मैत्रेय शृणु सुव्रत ।। भाग्यादेव नृणां सिद्धिर्भाग्यदेव धनायती ।।१।।
यंशासि भाग्यतो भाग्यविपर्यासाद्विपर्ययः ।। करिष्यमाणकर्माणि ज्ञातव्यानि प्रयत्नतः ।।२।।
लग्नादिन्दोश्च नवमं भाग्यं बलवशाद्भवेत् ।। शुभपापारिमित्राख्यैर्ग्रहैरेवं शुभाशुभैः ।।३।।
उच्चादिपंचकाद्‌वृद्धिरन्यस्माद्धानिरिष्यते ।।स्वस्मिन्नन्यत्र विषये स्वदेशेतरदेशयोः ।।४।।

कलांशादि फल

हे मैत्रेय! ऐश्वर्य तथा शुभाशुभ व्यापार का साधन, धन, तथा यशप्राप्ति यह सब भाग्योदय से होती है, अतः भाग्योदय का लक्षण कहा जाता है।।१।।२।। लग्न तथा चन्द्रमा से नवम भाव, भाग्य का स्थान है। इसमें बलाबल के अनुसार भाग्य की वृद्धि या हानि का विचार करना। उच्च स्वगृही, मित्र क्षेत्री, अतिमित्रक्षेत्री, मूलत्रिकोणी होकर जो ग्रह भाग्यभाव में स्थित हो तो भाग्य की वृद्धि होती है। नीच शत्रुक्षेत्री, अतिशत्रुक्षेत्री तथा समराशि में होकर भाग्यस्थान में हो तो भाग्य की हानि करता है। भाग्येश स्ववर्ग में हो तो स्वदेश में एवं परवर्ग में हो तो परदेश में भाग्योदय होता है।।३।।४।।

स्वेष्वन्येषु तु वर्गेषु ज्योतिर्विद्दशसु स्थितैः ।। अद्यंशो राशिलिप्तायाः सप्तांशः संप्रकीर्तितः ।।५।। अष्टादशर्क्षकांशस्तु कलांश इति कीर्तितः ।। षष्टचंश एव षष्टचंशः क्रमेण पतयः स्मृताः ।।६।। भाग्यत्रिकोणोपगतैः शुभं स्याद्भाग्यं तु केन्द्रोपगतैः शुभश्च ।।७।। पापैस्तथा स्यादशुभं च भाग्यं मित्रादिभिः स्यान्नियमो विशिष्टात् ।।८।। एवं भाग्यविपर्यासौ भावानां च वदेत्तथा ।।

भावग्रहांतरकला द्विशत्याप्ताः समादयः ।।९।। द्विघ्नाद्विघ्नाः करघ्नाश्च षष्टचाप्ताश्च समादयः ।। अथेष्टादिफलघ्नं च समयो भाग्यभावयोः ।।१०।।

सप्तांश, षोडशांश, षष्ठ्यंश–राशि, अंश की कला करके ७ का भाग देना, लब्ध सप्तमांश, १८ १२ का भाग षोडशांश तथा ६० का भाग षष्ट्यंश कहाता है। अथवा राशिचक्र को २९ से भाग देना तो षोडशांश होता है।।५–७।।

लग्न तथा चन्द्रमा से जो नवम स्थान हो उससे केन्द्र १।४।७।१०) त्रिकोण (५।९) भाव में शुभग्रह हों तो भाग्य उत्तम और पापग्रह हों तो अशुभ होता है। परन्तु यह विशेष है कि उपर्युक्त राशियों में स्थित ग्रह स्वराशि, मित्रराशि आदि के होने चाहिये। नीचादि होने से नेष्ट फल समझना चाहिये।।८।।

भाग्योदय वर्ष–भावस्पष्ट और ग्रहस्पष्ट राश्यादि का अन्तर करना। पश्चात् कला करके २०० का भाग देना। लब्ध वर्ष, मासादिक जानना, पश्चात् द्विगुणित करके दो जगह रखना। एक जगह के अंक को द्विगुण करके ६० का भाग देकर दूसरी जगह के अंक में कम करना। शेष रहे वह भाग्योदय का वर्षादि समय होगा।।९।।१०।।

फलेन च दशघ्नेन रश्मिना च हतास्तथा ।।११।। भावाष्टवर्गोत्थसमाहितत्तद् ग्रहान्तरोत्थास्तु समादयः स्युः तत्तद्ग्रहोत्थाब्दहतास्तथा स्युरेवं तथा भाग्यफलानि तत्र ।।१२।। स्थानानि नववर्गाश्च तेषां भाग्यफलं शृणु ।। रव्यादीनां क्रमाच्छृंगचामरादेश्च विक्रये ।। कृषिकर्मणि सेवायां पैशुन्ये लिपिकर्मणि ।।१३।। धनार्जने व्यये व्याधौ गमनागमविक्रये ।। विवादे प्रेतकार्ये च भ्रातृणां कलहे तथा।।१४।। धनार्जने सुते दारग्रहणे लिपिकर्मणि ।। उच्चादिस्थानवर्गेषु लाभदश्च रविः क्रमात् ।।१५।।

प्रकारान्तर–ग्रह, भाव के अन्तर को १० से गुणा करना। बाद उसी ग्रह की रश्मि से भाग देना। शेष वर्ष मासादि भाग्योदय का समय होता है।।११।। इस प्रकार प्रत्येक भाव के फलप्राप्ति का ऊपर कही रीति से जानना और भाव के फल का विशेष निर्णय आगे कहे अनुसार नौ वर्ग से कहना।।१२।।

अब ग्रहों के उच्चादि वर्ग विचार से फलविशेष का निर्देश किया जाता है।

सूर्य का फल–सूर्य यदि उच्च, त्रिकोण, स्वगृही, मित्रराशि, अतिमित्रराशि अथवा इनके वर्ग में हो तो निम्नलिखित वस्तुओं के व्यापार से लाभ होगा। शृंग, चामर, कृषिकर्म, सेवा, दुर्जनकर्म, लिपिकर्म, व्याज, वैद्यक वणिज, वकालत, प्रेतकार्य, भ्रातृकलह, पुत्र से विवाह आदि कार्य से लाभ होगा।।१३–१५।।

शंखमाणिक्यमुक्तानां लाभे तत्क्रयविक्रये ।। सुरते स्त्रीषु मैत्रे च राज्ञः पुरुषमित्रता ।।१६।। धनायतिस्तथा तत्र मैत्रं च कृषिकर्मणि ।। वस्त्रादिधनसिद्धिश्च ब्राह्मणेन विरोधता ।।१७।। धननाशो भवेद्युद्धे पराजयपराभवौ ।। कलांशार्द्धहोरांशफलानिक्रमशः स्थिते ।।१८।। स्वर्णसिद्धिर्जयो वस्त्रलाभो मित्रसमागमः ।। विवादो भ्रातृभिः शत्रुकर्म स्त्रीचंचलाक्षकः

।।१९।। स्त्रीलाभो दासलाभश्च कृत्स्नेहा च बलक्षयः ।। बलैर्धनायतिः स्वोच्चे क्षेत्राद्यैर्न्यायतो भवेत् ।।२०।। मूलत्रिकोणे क्षेत्रेण राज्ञो वाथ धनायतिः ।। स्वर्थे वस्त्रं कांचनादिसिद्धिश्चाथ सुहृत्फलम् ।।२१।। धान्यायतिश्च मैत्री च क्रूर कर्मप्रवर्तनम् ।। कुष्ठं चाप्यग्निभीतिश्च गृहदाहोऽतिशत्रुभे ।।२२।।

चन्द्रमा उच्चादि राशि या वर्ग (उच्चादि) में हो तो क्रम से शंख, मैथुन, स्त्रीमैत्री, राजपुरुष मित्रता, धननियोग, कृषिकर्म, वस्त्रव्यापार, द्विजविरोध, नीचकर्म से हानि, स्वदेश त्याग, धनहानि, बलहानि यह फल होता है। (यहां शंख से तात्पर्य शंखनिर्मित वस्तु और मणि मुक्तादि हैं।)।।१६–१८।।

यदि मंगल उच्चादि राशि या वर्ग में हो तो क्रमशः सुवर्ण सिद्धि, जय, वस्त्रलाभः मित्रसमागम, बन्धुविवाद, शत्रुविद्वेष, चाञ्चल्य, स्त्रीलाभ, दासलाभ, इच्छापूर्ति, बलक्षय, बलप्रयोग से लाभ, यह फल जानना। यदि मंगल भाग्य स्थान में मूलत्रिकोणी हो तो राज से धनप्राप्ति, स्वराशि का भाग्यभाव में हो तो वस्त्रादि की प्राप्ति, मित्रराशिगत हो तो अन्नादि की प्राप्ति, यदि अतिशत्रु राशिगत होकर भाग्यभाव में हो तो क्रूर कर्म प्रवृत्ति, अग्निभय, कुष्ठ, संग्रहणी, गुल्म आदि रोग हो।।१९–२२।।

ग्रहणी गुल्मरोगश्च धननाशश्च तत्र तु ।। विद्यार्जने सुखे स्त्रीभिः कलहश्च धनायतिः ।।२३।। क्षेत्रदासादिलाभं च कृषिकृत्यं धनायतिः ।। विवादो बंधुर्भियुद्धे जयश्चैवपराजयः ।।२४।। विद्याबुद्धिधनक्षेत्रयशांसि च फलंति च ।। राज्ञस्तत्पुरुषेणैव स्वर्णक्षेत्रायतिस्तथा ।।२५।। स्वर्क्षे धनायतिः प्रोक्ता लिपिना शिल्पकर्मणा ।। वस्त्रस्वर्णादिसिद्धिश्च राजस्त्रीभिर्धनायतिः ।।२६।। कायस्य कर्मणा त्वायो विद्यानाशः स्वकर्मणा ।। धननाशोऽश्मरी कुष्ठं कलांशादिफलं ततः ।।२७।। बिवादाद्बंधुभिर्दायो देशपर्यटनाद्धनम् ।। क्षेत्रसिद्धिर्जयो विद्यालाभो धान्यविवर्धनम् ।।२८।।

बुध का फल कहा जाता है। यदि बुध भाग्यभाव में उच्चराशि का हो तो विद्या तथा सुख प्राप्त हो। शत्रुराशि का हो तो स्त्रियों से कलह, मित्रराशि में धन लाभ, भूमि आदि लाभ, कृषि से लाभ। नीचराशि का हो तो बंधुविरोध, कलह, हानि, पराजय, आदि हो। यदि उच्चादिगत हो तो विद्या, बुद्धि, धन, यश, सुवर्ण, भूमि तथा राजपुरुष से लाभ हो। स्वराशि का हो तो लेखन, शिल्पकर्म, राजस्त्रीनियोग, वस्त्र, सुवर्ण आदि से लाभ। समराशि में हो तो शारीरिक परिश्रम से, अति शत्रुक्षेत्री हो तो विद्याविस्मृति, व्यापारनाश, अश्मरी (पथरी) रोग, कुष्ठ आदि रोग हो। अपने षोडशांश में हो तो बन्धुविद्रोह में धनप्राप्ति, देशाटन से लाभ तथा भूमि, विद्या, धन, जय लाभ हो। खेती से लाभ, विद्याप्राप्ति के सुयोग की प्राप्ति हो।।२३–२८।।

कृषिकर्मसमुद्योगः सेवाकरणकौशलम् ।। विद्यार्जनमथ प्रोक्तं गुरोः श्रीमान् सुखी गुणी ।।२९।। बह्वायतिरमात्यत्वं सर्वसंपत्समन्वितः ।। धननाशः प्रमोहेण क्षेत्रनाशः पराभवः ।।३०।।

विद्यार्जनं तथा सेवाकरणं संपदस्तथा ॥ पुत्रैर्धनायतिर्मित्रैः स्त्रीभिश्च कृतकर्मणा ॥३१॥ विवाहो धनलाभश्च क्रमादेवंफलं वदेत् ॥ राज्ञां कृत्यकरः श्रीमान्पुत्रबंधुसमन्वितः ॥३२॥ सेनानाथस्तथामात्यो विद्यार्जनपरो धनी ॥ पाठको याजकश्चाथ बहुस्त्रीकोऽतिशत्रुभे ॥३३॥ स्त्रीसक्तो निर्धनो मूर्खः पातकी भारको भवेत् ॥ सेनाधिकारी राज्ञश्च प्रियैर्बंधुभिरायतिः ॥३४॥ सेवावृत्त्या च कृष्या च विद्याबाः पूर्तकर्मणा ॥ सर्वसंपद्युतः श्रीमान् शुक्रस्यैवं फलं लभेत् ॥३५॥

गुरु भाग्य स्थान में हो तो धनी, गुणी, सुखी, प्रधान, सर्वसंपत्तिमान् हो। शत्रुक्षेत्री हो तो धन, क्षेत्र-नाश, पराजय हो। मित्रगृही हो तो विद्याप्राप्ति, सेवक हो और अतिमित्र हो तो ऐश्वर्य प्राप्ति, पुत्रादि से लाभ, धनप्राप्ति, स्त्रीजाति से लाभ, विबाह आदि होता है।।२९।।३०।।३१।।

शुक्रफल—शुक्र उच्चादि स्थानगत भाग्यभाव में हो तो राजसेवी, श्रीमान्, परिवार से सुखी, सेनापति, प्रधान, विद्यासेवी, धनी, अध्यापक, ऋत्विक्, अनेक स्त्रीभोगी होता है। अतिशत्रु राशि में हो तो कामातुर, दरिद्री, बुद्धिहीन, पातकी, भारवाहक होता है। स्वक्षेत्री हो तो सेनाधिकारी, बन्धुओं से लाभ, सेवा से लाभ, कृषीकर्मी, विद्यासेवी, इष्टापूर्त्त, दत्त, वापी, कूप, तालाब आदि युक्त सर्वसम्पत्तिमान् होता है।।२९-३५।।

कुजोच्चादिफलं चार्के कलांशादिफलं भवेत् ॥ कलांशादिषु यत्प्रोक्तं कलांशादि फलं त्विदम् ॥३६॥ उच्चादिषु तथा प्रोक्तं फलमेवं विचिंतयेत् ॥ स्वभाग्यर्क्षगतानृक्षान्न्यूनांश्चाप्यधिकांस्ततः ॥३७॥ स्वरश्मिघ्नान् ग्रहे युक्ते तद्रश्मिघ्नांस्तथोत्तरम् ॥ त्रिभिर्विभज्य निःशेषे त्वोजराशौ नवांशके ॥३८॥ आदिमध्यावसाने स्याद्युग्मे तत्र नबांशके ॥ आदौ मध्येऽवसाने स्याद्युग्मे चौजे नवांशके ॥३९॥ मध्येऽवसाने चाद्ये च युग्मे मध्यांतिमादिमे ॥ आदौ मध्येऽवसाने स्यादेवं चेद्भाग्यलक्षणम् ॥४०॥ ओजराशौ नवांशे चेद्युग्मे मध्यांतिमादिमे ॥ युग्मे राशौ नवांशे चेदोजे मध्येऽन्तिमेऽपि च॥४१॥प्रथमेऽपि बयस्येवं युग्मे मध्येंऽतिमादिमे॥ शेषं द्वयं चेदेकं स्यात्कालो व्यत्यासतो भवेत्॥४२॥ कलाभ्यां चाहते तद्वच्चराद्यंशे चरे च भे ॥ आदौ मध्येवसाने स्यात्स्थिरेंऽते मध्यमादिमे ॥४३॥

शनिग्रह का फल मंगल के समान जानना।।३६।।

पूर्वोक्त फल प्राप्ति समय ज्ञान—भाग्यभाव की नवमांश राशि को भाग्यभाव की रश्मि से गुणा करना, बाद भाग्यभाव स्थितग्रह रश्मि से गुणा करना, पश्चात् ३ का भाग देना, भाग देने पर शून्य शेष रहे तो नीचे लिखे अनुसार फल की अवधि जानना। भाग्यराशि विषम तथा नवांश राशि भी विषम हो तो चर, स्थिर, द्विःस्वभाव के अनुसार क्रम से आदि, मध्य, अंत में फल होता है। नवांश राशि सम हो और भावराशि बिषम ही हो तो चरादि राश्यनुसार आदि, मध्य, अंत में फल होता है। और भाग्यराशि सम हो तथा नवांश राशि विषम हो तो चरादि के अनुसार क्रमश मध्य, अन्त, आदि में फल होता है। नवांश राशि भी सम हो तो चरादि के अनुसार मध्य, अन्त, आदि या आदि, मध्य, अन्त में फल होता है। अथवा विषम

राशि नवांश सम हो तो मध्य, अन्त, आदि में फल होता है और सम राशि में विषम नवांश हो तो मध्य, अन्त, आदि में फल होता है। कुमार या युवावस्था में भी इसी प्रकार दोनों युग्म राशि हों तो मध्य, अन्त, आदि में फल जानना। यदि ३ के भाग देने पर १ या २ शेष रहे तो पूर्वोक्त समय विपरीत जानना।।३७–४३।।

उभये मध्यमे ऽन्ते च आदावेवं प्रकीर्तिताः ।। भावानां चैव सर्वेषां चंद्रलग्नात्तु लग्नतः ।।४४।। अंशदायोक्तवत्कृत्वा शुभपापदृगाहतम् ।। षष्टयाप्तं तद्बलाप्तं स्याद्भ्रात्रादीनां च संख्यका ।।४५।। रश्मिघ्नं च बलाप्तं च त्वनिष्टमपवादगम् ।।४६।।

इति श्रीबृहत्पारारशरहोराशास्त्रे उत्तरखण्डे कलांशादिफले सप्तदशोऽध्यायः।।१७।।

बारहों भावों का विचार जन्म लग्न से तथा चन्द्र लग्न से इस रीति से करना कि प्रथम पूर्वोक्त रीति के अनुसार, अंशायुर्दाय की गणित करके दो स्थान में रखना। एक जगह शुभ दृष्टि योग से, दूसरी जगह पापदृष्टि योग से गुणा करना और ६० का भाग देना तथा इसी प्रकार भाव बल से गुणा कर ६० का भाग देना। शेष रहे वह भावबलकी संख्या समझना। अथवा रश्मि योग से गुणा कर भावबल से भाग देना। शेष शुभाशुभ फल जानना। ।।४४-४६।।

इति श्रीबृहत्पाराशरहोराशास्त्रे उत्तरखण्डे भावप्रकाशिकायां सप्तदशोऽध्यायः ।।१७।।

अथ अब्दवर्णनाह

नाडीद्वयं मुहूर्तः स्याद्द्विनाडीद्वयमेव च ।। रवेरुदयतो मेषात्क्रमात्सर्वजितः स्मृतः ।।१।। आर्द्रा श्लेषनुराधाश्च मघाश्चाथ धनिष्ठिकाः ।। उत्तराषाढसंज्ञश्च सर्वजिद्रोहिणी तथा ।।२।। विशाखा च ततो ज्येष्ठा मूलं च शततारकम् ।। भरणीपूर्वफाल्गुन्यौ विश्वजिच्च ततो भवेत् ।।३।। उत्तराप्रोष्ठपाच्चैव रेवती च ततः परम् ।। अभिजिच्चोत्तरा चाथ कृत्तिका रोहिणी ततः ।।४।। मूलं च रोहिणी चाथ मृगशीर्षं च हस्तकम् ।। पुष्यश्च श्रवणो हस्तचित्रे स्वातिः क्रमात्स्मृताः ।।५।।

अब्दवर्णन

मुहूर्त लक्षण-२ घड़ी का एक मुहूर्त होता है। पूरे दिन के १५ मुहूर्त। इसी प्रकार पूरी रात्रि के १५ मुहूर्त होते हैं। दिनमान तथा रात्रिमान के न्यूनाधिक होने से मूहूर्त काल की २ घड़ी में भी न्यूनाधिकता होती है। सूर्य जिस राशि का होता है प्रातः काल वही लग्न होता है। बाद अपने २ क्रम से दूसरे दिन के प्रातःकाल तक १२ लग्न भुक्त होते हैं। दिन-रात्रि के ३० मुहूर्त हैं उनमें दिन के १५ मुहूर्तों के नाम क्रम से—आर्द्रा १. आश्लेषा २, अनुराधा ३, मघा ४, धनिष्ठा ५, उत्तराषाढ़ा ६, सर्वजित् या अभिजित् ७, रोहिणी ८, विशाखा ९, ज्येष्ठा १०, मूल ११, शतभिषा १२, भरणी १३, पूर्वाफाल्गुनी १४, अभिजित् १५। ये दिन के मुहूर्त हैं। रात्रिके मुहूर्त—उत्तरा भाद्रपद १, रेवती २, अभिजित् ३, उत्तरा ४, कृत्तिका ५, रोहिणी ६, मूल ७, रोहिणी ८, मृगसिर ९, हस्त १०, पुष्य ११, श्रवण १२, हस्त १३, चित्रा १४, स्वाती १५।।१ से ५ तक।।

नाडीद्वयमुहूर्तानां संज्ञा एताः क्रमाद्द्विज ॥ सर्वजिद्भरणीहस्तविश्वजिद्रोहिणी तथा ॥६॥ दस्रश्च मृगशीर्षश्च शर्वः पुष्योऽथ रुद्रभम् ॥ उत्तरा विश्वजिच्छ्रोणी चित्रा पुष्यश्च वायुभम् ॥७॥ अभिजिद्वसुभं पौष्णं कृत्तिका च पुनर्वसु ॥ पूर्वोत्तरप्रोष्ठपदौ शततारा च विश्वभम् ॥८॥ ज्येष्ठा सूर्यं च मूलं च भाग्यश्च क्रमशः स्मृताः ॥ ज्येष्ठा चाथ विशाखा च मूलं च शततारका ॥९॥ नामानि च मुहूर्तानां विनाडीद्वयरूपिणाम् ॥ आवृत्या षष्टि ताः प्रोक्ताः कालांशा नाडिरूपिणः ॥१०॥

द्विनाड़ी मुहूर्त—दिन-रात के ३२ मुहूर्त होते हैं। भरणी १, हस्त २, विश्वजित् पूर्वाषाढ़ा ३, रोहिणी ४, दस्र अश्विनी ५, मृगशीर्ष ६ (शर्व) आर्द्रा ७ पुष्य ८, (रुद्रभम), आर्द्रा ९, उत्तरा १०, (विश्वजित्) पूर्वाषाढ़ा ११, (श्रोणी) श्रवण १२, चित्रा १३, पुष्य १४, (वायु) स्वाती १५,अभिजित् १६,(वसु)धनिष्ठा १७, (पौष्णं) रेवती १८, कृत्तिका १९,पुनर्वसु २०, (पूर्वाप्रोष्ठपत्) पूर्वाभाद्रपद २१, (उत्तराप्रोष्ठपत्) उत्तराभाद्रपद २२, शततारका २३, (विश्वभं), स्वाती २४, ज्येष्ठा २५, (सूर्यं) हस्त २६, मूल २७, (भाग्यः) पूर्वा फाल्गुनी २८, ज्येष्ठा २९, विशाखा ३०, मूल ३१, शततारका ३२, ये विनाड़ी मुहूर्त कहे गये॥६॥७॥८॥९॥

एक नाड़ी मुहूर्त—प्रथम जो दिन रात के ३० मुहूर्त कहे गये हैं उन्हीं की २ आवृत्ति करने से १-१ घटी का १-१ मुहूर्त होता है। इसी का दूसरा नाम कला मुहूर्त भी है॥१०॥

नक्षत्रसंज्ञया प्रोक्ताः षष्ठ्यावृत्त्या कलांशकाः ॥ मेषो यमो वृषःकुंभो झषो जूकश्च कर्कटः ॥११॥ सिंहोऽथ वृश्चिकश्चापो मृगः कन्या क्रमाद्भवेत् ॥ राशिचक्रकलांशे तु क्रमादेव प्रकीर्तिताः ॥१२॥ मेषो गौर्यमकर्की च लेयकन्यातुलालयः ॥ धनुर्मृगघटोमीनमुदयाद्-घटिकासु च ॥१३॥

कलांश मुहूर्त—जो प्रथम ३२ मुहूर्त कहे हैं उन्हीं की द्वितीयावृत्ति करने से ६४ मुहूर्त नक्षत्र के ६४ भाग करके १-१ भाग का १-१ मुहूर्त जानना।

राशिचक्र कलांश मुहूर्त—सूर्योदय से ५-५ घटी पर १-१ राशि का मुहूर्त समझना। मेष १ , मिथुन २, वृष ३, कुम्भ ४, मीन ५, तुला ६, कर्क ७, सिंह ८, वृश्चिक ९, धनु १०, मकर ११, कन्या १२, इस क्रम से राशि कलांश मुहूर्त होते हैं॥११॥१२॥

नित्योदय लग्नक्रम-मेष, वृष, मिथुन, कर्क, सिंह, कन्या, तुला, वृश्चिक, धनु, मकर, कुंभ, मीन ये बारह राशियां अपने २ स्थान के पलात्मक भोग के अनुसार (पूर्वखण्ड में कहा गया है) नित्यं उदय होती हैं॥१३॥

सिंहान्मेषाच्च चापाच्च नक्षत्रक्रम ईरितः ॥ चंद्रज्ञशुक्रधूमार्कपरिवेषारकार्मुकाः ॥१४॥ गुरुः पातः शनिः केतुर्ग्रहाः स्युर्द्वादशक्रमात् ॥ चक्रलिप्तांशके चैवं केत्वादिस्तारकांशके ॥१५॥

काल्पनिक नक्षत्रक्रम-प्रश्नकाल में इष्ट घटी संख्या तक यह क्रम ग्रहण करना और जो ग्रह आवे उसके अनुसार फल जानना। यदि इष्ट पर आया हुआ लग्न सिंहादि ४ राशियों में हो तो

मघा से आश्लेषा तक, और धन राशि से ४ राशि मे हो तो मूल से ज्येष्ठा तक गणना करना। मेषादि ४ राशि में लग्न हो तो अश्विनी से रेवती तक ग्रहण करना। इन नक्षत्रों में क्रम मे चन्द्रमा,बुध, शुक्र,धूम, सूर्य, परिवेष, मंगल कार्मुक, गुरु पात, शनि, केतु ये १२ ग्रह (ग्रह तथा अप्रकाश ग्रह) बारह राशियों में अर्थात् सिंहादि, धनुरादि, मेषादि क्रम गणना में जो राशि (काल्पनिक) प्राप्त हुई है, उसमें जानना। यदि मेषादि लग्न हो तो केतु से विपरीत क्रम से गणना करना। और अन्य में क्रम गणना सूर्य से करना। जो ग्रह प्राप्त हो उसके अनुसार शुभाशुभ फल जानना।। श्लोक १४ से १५ तक।।

अर्कादिधूमपर्यंताः क्रमात्स्युर्घटिकांशके ।। सत्र्यंशा घटिकास्तिस्रो मेषानिमिषयोर्द्विज ।।१६।।
चतस्रः कुंभवृषयोस्तथा मकरयुग्मयोः ।। वित्र्यंशाः पंच सत्र्यंशास्ताः कर्किधनुषोः स्मृताः ।।१७।।
सिंहवृश्चिकयोः षट् च अंशोनाः सप्त शेषयोः ।। नित्यं मानमिदं प्रोक्तं मेषादुदयराशिजम् ।।१८।।
रव्याक्रांतात्तथा प्रोक्ता एकद्वित्रिचतुर्घटी ।। मानानि मेषतः सिंहाच्चापादर्कोदयात्ततः ।।१९।।
दशवर्गाधिपाश्चित्याः प्रोक्ताश्चेंदुनवांशकाः ।। अन्यत्र कीर्तिताः प्रश्ने नष्टद्रव्यविनिश्चये ।।२०।।

नित्य लग्न का परिमाण-मेष और मीन का ३ घटी २० पल। वृष-कुम्भ का ४ घटी०पल । मिथुन-मकर का ४।४०, कर्क-धन का ५।०, सिंह-वृश्चिक का ६।०, कन्या-तुला का ६।४०।।१६।।१७।।१८।।

प्रकारान्तर-उदय लग्न से मेष, वृष, मिथुन, कर्क इन ४ राशियों में १,२,३,४ घटी क्रम से काल प्रमाण जानना। इसी प्रकार आगे भी सिंह से ४ राशि तथा धन से ४ राशियों में १,२,३,४ घटी रूप काल प्रमाण जानना। नष्ट द्रव्य के प्रश्न में इसका तथा दश वर्ग और चन्द्र नवांश का प्रयोजन है।।१९।।२०।।

श्रीमान् रिक्तश्च मूर्खश्च कुशलो वंचनः पटुः ।। स्त्रीसक्तो वेदविद्वीरो मंदाग्निस्तीव्ररोषणः ।।२१।। मूलरोगी च पिशुनः सदाऽटनपरोऽशुचिः ।। सेवाकरः सुभाषी च धनवाँल्लोभसंयुतः ।।२२।। प्रख्यातो विद्यया भीरुर्बुद्धिश्रीमान्सुशीलकः ।। परदाररतः श्रीमान्सुशीलो बलवान्गुणी ।।२३।। अध्वन्यो निगमव्यग्रः पातकी च तपोयुतः ।। परदाररतो वेश्यासक्तोऽसत्फलबासनः ।।२४।। सिंहासनस्थो रिक्तश्च जटिलः कुलपांसनः ।। योगी बुद्धश्च सन्यासी सेनानीर्बुद्धिमान्सुखी ।।२५।। कुष्ठीभूतकरः श्रीमानेकपुत्रसमन्वितः ।। शास्त्रज्ञो दासकृत्यश्च चंडरोषसमन्वितः ।।२६।। स्त्रीसक्तः परदारोक्तो भृत्यः पटुररोगवान् ।। कुरूपश्चापि कुशलो जितारिः पुत्रवर्जितः ।।२७।। क्रूरो वीरश्च चंडश्च कुशलः कुक्षिरोगवान् ।। ग्रामणीर्विटपो धूर्तः सतीपतिररिंदमः ।।२८।। वंध्यापतिः सुरापी च रिक्तसाध्यपतिः सुखी ।। विजयी युद्धभीरुश्च चौरोऽमर्षी धनार्जकः ।।२९।। धनार्जनाय सततमकृत्यशतकारकः ।। वृषलीपतिरिन्द्रश्च सेनानीः सत्यवाक्छुचिः ।।३०।। शिरोरोगी च कुष्ठी च मेही च पिशुनः सुखी ।। जलवद्रोगसंयुक्तः कृतज्ञो निर्घृणो घृणी ।।३१।। विवादशीलः सुमुखः क्रोधनः कामुकः पटुः ।। चलचित्तो धनी वाग्मी विद्यार्जनपरः सुखी ।।३२।। अपुत्रः कृषिकृद्वीरः परदाररतः शुचिः ।। विद्याहीनश्च मूर्खश्च बुद्धिमाञ्छास्त्रपारगः ।।३३।। सदाभीरुर्जडो वाग्मी कृत्येषु कुशलः सुखी ।। नीतिज्ञो लेखको नीचजातिकृत्यपरः

पटुः ॥३४॥ प्रेष्यो गोमयविक्रेता वदान्यो धनवंचकः ॥ सेनानीः क्षेत्रवान्वीरो लेखवृत्त्या च जीवति ॥३५॥ मूर्खो जितेंद्रियो वाग्मी सदा कृत्यपरः सुखी ॥ अन्नदाता च मिष्टाशी शिवभक्तो जितेंद्रियः ॥३६॥ कुब्जो वक्रशरीरश्च जात्यंधो बधिरः शठः ॥ अमर्षी नर्तकः क्रुद्धो दुर्जनो वेदपारगः ॥३७॥ वक्ता च गायकः श्रीमान् सर्वदा च धनार्जकः तालज्ञो विद्यया युक्तः पंचपंचाशदुत्तरम् ॥३८॥ शतं गुणाश्च श्रीयोगा एकयोगावसानकम् ॥ पूर्वपूर्वयुता ओजे युग्मे राशौ तु वामतः ॥३९॥ चरे क्रमः स्थिरे वाममुभयोर्धपदादितः ॥ आदौ त्रिंशद्गुणा अंते वामतस्त्रिंशदेव हि ॥४०॥

अब १५५ योग कहे जाते हैं। इनका फल नामानुरूप ही है। श्रीमान् १। रिक्त २। मूर्ख ३। कुशल ४। वंचन ५। पटु ६। स्त्रीसक्त ७। वेदवित् ८। धीर ९। मंदाग्नि १०। क्रोधी ११। अतिक्रोधी ११। मूलरोगी १२। पिशुन १३। भ्रमणशील १४। शुचि १५। दास १६। सुभाषी १७ धनी १८। लोभी १९। विद्वान् २०। भीरू २१। बुद्धिधन २२। सुशील २३। पारदागामी २४। श्रीमान् २५। सुशील २६। बलवान् २७, गुणी २८। भ्रमणशील २९। वेदाभ्यासी ३०। पात की ३१। तपस्वी ३२। परदारगामी ३३। वेश्यागामी ३४। मनमोदकी ३५। पदाधिकारी ३६। निरुद्योगी ३७। जटाधारी ३८। नीच ३९। योगी ४०। प्रबुद्ध ४१। संन्यासी ४२। सेना पति ४३। बुद्ध ४४। सुखी ४५। कोढ़ी ४६, सेवड़ा ४७। धनी ४८। एक पुत्रवाला ४९। शास्त्रज्ञ ५०। दास ५१। महाक्रोधी ५२। कामी ५३। परस्त्रीसक्त ५४। नौकर ५५। चतुर ५६। नीरोगी ५७। कुरूप ५८। कुशल ५९। जितशत्रु ६०। पुत्ररहित ६१। शूर ६२। वीर ६३। अतिकोपी ६४। कुशल ६५। जठररोगी ६६। ग्रामणी ६७। स्त्रैण ६८। धूर्त ६९। सतीपति ७०। शत्रुहर्ता ७१। बन्ध्यापति ७२। सुरायी ७३। कुलटारत ७४। सुखी ७५। विजयी ७६। युद्धभीरू ७७। चोर ७८। क्रोधी ७९। उपार्जनरत ८०। पाप उपार्जन रत ८१। शूद्रस्त्रीसेवी ८२। इन्द्र ८३। सेनानी ८४। सत्यवादी ८५। शुचि ८६। शिरोरोगी ८७। कुष्ठी ८८। प्रमेही ८९ चुगलखोर ९०। सुखी ९१। जलोदरी ९२। कृतज्ञ ९३। निर्दय ९४। घृणी ९५। झगड़ालू ९६। मुमुक्षु ९७। क्रोधी ९८। कामी ९९। कुशल १००। चंचल १०१। धनी २। वक्ता ३। विद्यासेवी ४। सुखी ५। अपुत्र ६। खेतीहर ७। परदारत ८। शुचि ९। विद्याहीन ११०॥ मूर्ख ११। बुद्धिमान् १२। शास्त्रज्ञ १३। सदाभीरु १४। मूर्ख १५। वाग्मी १६। कार्यपुट १७। सुखी १८। नीति चतुर १९ लेखक १२०। नीच कार्यरत २१। चतुर २२। दूत २३। गोमयविक्रेता २४। दानी २५। वंचक २६। सेनानी २७। क्षेत्रवान् २८। वीर २९। लेखक १३०। मूर्ख ३१। जितेन्द्रिय ३२। वाग्मी ३३। उद्योगी ३४। सुखी ३५। अन्नदाता ३६। मिष्टभाषी ३७। शिवभक्त ३८। जितेन्द्रिय ३९। कुबड़ा १४०। कुब्ज ४१। क्रोधी ४२। बधिर ४३। धूर्त ४४। क्रोधी ४५। नट ४६। सदाक्रोधी ४७। दुष्ट ४८। वेदपारगामी ४९। व्याख्याता १५०। गायक ५१। श्रीमान् ५२। सर्वजनप्रेमी ५३। तालज्ञ ५४। विद्वान् १५५। ये १५५ श्रीयोग नाम के योग हैं। विषमराशि के नवांश में क्रम से, समराश क नवांशमें विपरीत क्रमसे जानना। चर राशि में क्रम से, स्थिर राशि में विपरीत क्रम से, द्विस्वभाव राशि में अर्द्धभाग से गणना करनी चाहिए। श्लोक २१ से ४० तक॥

षष्ठ्यंशे तु गुणाः प्रोक्ताः प्राग्वदोजचरादिकाः ॥ मेषादुत्क्रमतः राहुः केतुर्याति वृषात्क्रमात्

।।४१।। ऋक्षसंध्यंतरे जातः प्रष्टाऽसौ म्रियते भृशम् ।। केतुराहुस्थिते राशौ भसंधौ मरणं भवेत्।।४२।।इतरेषां त्रयाणां च प्रकाशे व्याधिपीडितः।।दुर्बलो बुद्धिहीनश्च जायते न मृतो यदि।।४३।।कलांशराशितोऽरिष्टे नक्षत्रारिष्टसंभवे।।पित्रादीनां सुतस्यापि तद्वशाच्चिंतयेत्सुधीः ।।४४।। पापशत्रुग्रहाक्रांता भावास्तद्दृष्टिसंयुताः ।। सौम्यपापादयश्चैवं शुभाशुभफलप्रदाः।।४५।।

एकद्वित्रिचतुः पंचषट्सप्ताष्टांकदिग्धराः ।। सूर्येन्दुनृपमूर्च्छेन्द्रनृपभार्कनृपा जिनाः ।।४६।। पंचाष्टवसुभूतेषु सुरदंताजिनाद्रयः ।। नखास्त्रिंशत्खवेदाः षट्सप्ततिः षष्टिरद्रियुक् ।।४७।। नवतिश्च शतं मूर्च्छाजिना दंता जिना दिशः ।।एवं नवशतं प्रोक्ताः क्रमादेवं तु तत्र तु ।।४८।। पूर्वपूर्वयुता संख्या लक्ष्मीयोगफलप्रदा।। नक्षत्रे राशिचक्रे तु दिवसे वामतः स्मृता ।।४९।।

(प्रश्नकालिक कल्पित राहु केतु की गति)

राहु मेष से विपरीत क्रम से तथा केतु वृष से क्रम से चलता है।।४१।। राहु केतु का प्रश्नकाल के लग्न में योग हो तो प्रश्नकर्ता का मरण जानना। धूम, कार्मुक, परिवेष का भी यही फल जानना।।४२।।४३।।

पिता भ्राता आदि का शुभाशुभ विचार कहा जाता है-

षोडशांश से या नक्षत्र (पूर्वकथित) से अथवा भावग्रह सम्बन्ध से नीचे लिखी संख्या के योग में शुभग्रह सम्बन्ध से शुभ और अशुभग्रह सम्बन्ध से अशुभ फल समझना चाहिए। योग संख्या ये हैं। १,२,३,४,५,६,७,८,९,१०,१,१२, १,१६,२१,१४,१६,२७, १२,१६,२४,५,८, ८,५,५,५,३२,२४,७,२०,३०,४०,७६,६७,९०,१००,२१,२४,३२,२४,१० इन योगों पूर्वापर विचार से शुभाशुभ का निर्णय करना।।४४–४९।।

शुभमित्रग्रहाक्रांता भावास्तद्दृष्टिसंयुताः ।। द्वित्रिपंच च षट् सप्त वसुनंददिशोऽद्रयः ।।५०।। त्रिंशद्दिशो नखाः षष्टिसूर्यमूर्च्छाजिनाजिनाः ।। आकृतिर्भानिभार्काग्निनखाश्छंदः शतं नखाः ।।५१।। त्रिंशत्खवेदा दिग्विश्वे शतं षष्टिः शतं जिनाः ।। वेदाः खवेदाः पूर्वार्द्धे परार्धे प्राग्वदत्र तु ।।५२।।

तथा ये योग भी विचारणीय हैं, २,३,५,६,७,८,९,१०,७,३०,१०,२०,६०,१२,२१,२४, २४,२१,२७,१२, ३,२०,२६,१००,२०,३०,४०,१०,१३,१००,६०,१००,२४,४,४० राशि के पूर्वार्द्ध में क्रम से, और परार्द्ध में उत्क्रम से यदि उपर्युक्त योगसंख्या प्राप्त हो तो अशुभ है।।५० से ५२ तक।।

एते योगबलाच्चैव केवलं दुर्गतिप्रदाः ।। दिनर्क्षे चक्रसंख्याः स्युरादिमध्यावसानिकाः ।।५३।। सप्तविंशतिसप्तत्यां शते षष्ट्यां शतद्वये ।।५४।। कुब्जः कलांश मूकस्तु शतद्वयशतत्रये ।।५५।। सहस्रे द्विशते जातः पंचमे पापसंयुते ।।द्वित्रिपंचाष्टदिग्विश्वनृपतिधृतिभूमयः ।।५६।। नवदिग्भसुरैस्तानैस्तिथिविश्वाष्टकैः कमात् ।।गुणेन वामतः प्रोक्तो लक्ष्म्यंशे श्रीसमन्वितः ।।५७।।

दिन की मूहुर्त संख्या, नक्षत्र संख्या तथा राशिसंख्या के योग से निम्नलिखित योग संख्या प्राप्त हो तो कुब्ज कुबड़ा होगा। योग संख्या ये हैं :-२७,७०,१००,६०,२००,६,५०,२०,९६,

८०,६०,२०,१००,६०,२००।। ये संख्या कुब्ज की और २००,३००,१०००,२०० ये संख्या तथा पंचमभाव पर पापदृष्टि हो तो मूक हो। और २,३,५,८,१०,१३,१६,१८,१,९,१०,२७, ३३,४९,१५,१३,८ ये संख्या हों तो धनी हो।।५३-५७।।

रविचंद्रतमः पातकालेष्वरिभवेषु च ।। पंचाशीतिशते वेदे मनौ द्वित्रिशते पुनः ।।५८।। खाब्दिपंचसु दिग्भागे सहस्रे चाक्षिचंद्रगे ।। खखानि रूपं विश्वाष्टत्रिचंद्रखखभूमिपैः ।।५९।। शताधिके च जातोस्मिन्बधिरः षष्टिसंयुते ।। कर्किवृश्चिकमीनांशे तद्राशीशांशके तथा ।।६०।। पातकेत्वोश्च शत्र्वृक्षगतयोरंशके पुनः ।। एकादित्रिशतैर्यावत्क्रमात्तास्तु सुभाजिताः ।।६१।। आकाशपूर्णधृतयो निःशेषं लब्धसंख्यके ।। सदोषेऽनंतरांशे तु जातस्यैतेऽपमृत्यवः ।।६२।।

सूर्य, चन्द्र, राहु काल पात में ६,११,८५,१००, ४,१४,२,३,१००,४०,५,१०,१०००,३०, १००,१३,८,३,१, इन योगों में बधिर हो।।५८।।५९।।

कर्क, वृश्चिक, मीन के चं० मं० गु० स्वामी हैं, अतः चं० मं० गु० की राशि मेष, कर्क, वृश्चिक, धन मीन इन राशियों में तथा पात में एवं शत्रुराशि के अंश में तीन सौ तक के अंको से १८०० में भाग देना, जब तक निःशेष न हो तब तक भाग देना। लब्ध अंक तुल्य अंश यदि पापग्रह युक्त हो तो अपमृत्यु जानना।।६०।।६१।।६२ ।।

पंचाशतः षडावृत्त्या स्वल्पमध्यचिरायुषः ।। क्रमेणोत्क्रमशस्ते तु त्रैराशिकविधानतः ।।६३।। खाक्ष्यद्रयस्तु षष्ट्यंशास्त्रिंशांशाः खरसाग्नयः ।।६४।। अष्टषड्भूमयः कालहोराः सप्तदिनेषु च ।। वेदेंद्रा द्वादशांशाः स्युर्नवांशा गजखेन्दवः ।।६५।। सप्तांशा वेदनागास्तु द्रेष्काणास्तु षडग्नयः ।। अर्द्धहोरा जिनाः प्रोक्ता नक्षत्राणि च राशयः ।।६६।। भुंजते च ग्रहाश्चैवं मनुसंख्याश्च भुंजते ।। राशयश्च ग्रहाश्चैव नक्षत्राणि च भुंजते । रव्यादिशिखिपर्यंतानव भूभेंद्रकार्मुकौ ।।पातश्चपरिवेषश्च कालश्चेति चतुर्द श ।।६८।।

पचास की संख्या से ६ बार आवृत्ति करना। प्रथमावृत्ति में अल्प, मध्य, दीर्घ और बाद २ आवृत्ति में दीर्घ, मध्य, अल्प अथवा प्रथमावृत्ति में अल्पायु द्वितीयावृत्ति में मध्यायु एवं तृतीयावृत्ति में दीर्घायु बाद दीर्घ मध्य अल्प क्रम से आयु का निर्णय करना।।६३।।

चौदह ग्रहों के तथा नवग्रहों के अंश कहते हैं :-

षष्ठंचश को १२ राशि संख्या से गुणा करने से ७२० होते हैं। इसी प्रकार त्रिंशांश के ३६०, कालहोरा के १६८, द्वादशांश के १४४, नवांश के १०८, सप्तांश के ८४, द्रेष्काणके ३६, होरा के २४, यह क्रम से नत्रक्ष, राशि, सू० १ चं० २ मं० ३ बु० ४ बृ० ५ शु० ६ श० ७ रा० ८ के० ९ धूम १० इन्द्रचाप ११ पात १२ परिवेष १३ काल १४ इनके अंशों में पूर्वोक्त फल जानना।।६४।।६५।।६६।।६७।।६८।।

तेषां प्रादुर्भवे चैवमन्यदा तु नवग्रह।।दस्रात्पंच भगात् षट् च पंचार्द्राद्वारुणादपि ।।६९।। कूर्पात्सप्त क्रमात्प्रोक्तास्तत्तदशेषु सर्वदा ।। अक्षिणी पंचदश च नखास्तत्त्वं तथामराः ।।७०।। सत्र्यंशाश्च षडंशोनाश्चत्वारिंशत्क्रमादथ ।। शतं खेष्विंदवः प्रोक्ताः विनाडीतनवोऽपि च ।।७१।।

अब नक्षत्रों से संख्या कहते हैं, अश्विनी से ५ पूर्वा से ६ आर्द्रा से ५ शतभिषा से ४ अनुराधा से ७ इस क्रम से तारासंख्या जानना। कलांश संख्या २,१५,२०,२५,३३,३३,३३,४०,१००, १५०, यह भाग काल के ध्रुवांक हैं।।६९।।७०।।७१।।

कलांशाद्यर्धहोरांशभोगकालः प्रकीर्तितः ।। प्रमाणराशयश्चैते भागहाराः कलात्मकाः ।।७२।। तत्तदंशकला इच्छाराशयो गुणराशयः ।। कटुको मधुरस्तिक्तः कषायो लवणाम्लकौ ।।७३।। कलांशे क्रमशो गण्याः षष्ट्यंशे व्युत्क्रमात्स्मृताः ।। त्रिंशांशे तु कषायादिः कालहोरांशके पुनः ।।७४।। तिक्तादि द्वादशांशेषु मधुरादि नवांशके ।। अम्लादि मुनिभागे तु द्रेष्काणे मधुरादितः ।।७५।।

अब इन अंशों में उत्पन्न जातक का फल कहते हैं :-

क्रम से-कटुक, मिष्ट, तिक्त, कषाय, लवण, अम्ल, ये क्रम से रस कहे हैं। त्रिंशांश में कषाय से तिक्त तक गणना करना, कालहोरा में तिक्त से, द्वादशांश में मधुर से नवांश में अम्ल से सप्तांश, होरा तथा द्रेष्काणमें मधुर से गणना करना। फल जातककी प्राप्ति रसमें रुचि का ज्ञान।।७२ से ७५ तक।।

अर्धहोरांशके तद्वज्जातस्यैष्वेव जायते ।। वेदाष्टदशभैरामैः प्रषष्ट्यंशे च भास्करे ।।७६।। त्रिषट्नवत्रिखार्काब्धिजिनदंतसुराः क्रमात्।। नवदिग्भैर्जिनार्कैश्च सूर्यैस्तानैस्त्रिपंचभिः ।।७७।। पंचाशद्भिः क्रमाद्गुण्या वंध्यावंध्या प्रकीर्तिता ।। त्रिवेदाद्यंकविश्वेंद्रनखच्छंदोजिना यमाः ।।७८।। पंचाशच्च शतं पूर्वयुता मृतसुता स्मृता ।। पुत्राणां तु कलांशे तु शेषे जाता मृता द्विज ।।७९।। द्वादशे च चतुर्विंशे चतुस्त्रिंशे सुरांशके ।। द्विसप्तांशे नवांशांशे षष्ट्युत्तरशतांशके ।।८०।। षट्शते च सहस्रे च खखाहींद्वंशके पुनः ।। खांशतिथ्यंशके जातो भवेत्प्रव्रजितो नरः ।।८१।।

षष्ठ्यंश संजात कन्या का बन्ध्यायोग-४,८,१२,२७,३, इन अंशों में सूर्य हो तो बन्ध्या जानना। तथा ३।६।९।३।०।१२।१४।२४।३२।३३ इनमें क्रमशः ९।१०।२७।२४।१२।१२।४९ ।३।५।५० इन षष्ठ्यंश में उत्पन्न कन्या वन्दनीया होती है।।७६।।७७।। तथा ३।४।७।९।१३। १४।२०।२६।२४।२।५०।१०० इन अंकों में पूर्वोक्त संख्या योग प्राप्त सूर्य में मृतवत्सा जानना।।७८।।

मृत पुत्रज्ञान के लिए-षोडशांश में इन अंशों पर सूर्य से विचार करना।।७९।।

सन्यासयोग-१२।२४।३३।७२।९।१६०।६००।१०००।१८००।१५।१० इन संख्या तुल्य अंशों में जन्म हो तो सन्यासी होता है।।८०।।८१।।

गुरुशुक्रोदये राशौ तयोः परमहंसकः ।। शत्रुराशिगतौ तौ चेदप्रकाशयुतौ तु वा ।।८२।। भ्रष्टः स्यात्तु तथा ज्ञे तु त्रिदंडी वा बहूदकः ।। रवौ जटाधरः शैवः कुजे नग्नोऽटनः स्मृतः ।।८३।। मंदे बौद्धोऽथ वाग्मी स्याद्राहौ केतौ तथैव च ।। धूमे कापालिकश्चापे काले तु परिवेषके ।।८४।। गूढपापो यथा लिंगी कुलमार्गगतस्तथा ।। षष्ट्यंशे ऋक्षसंध्यंशे सार्पे पौष्णेंद्रभांशके ।।८५।। त्रिंशांशे कालहोरांशे तत्तदंशांशकेऽपि च ।। नव मूर्छासुरांशे तु यथा षष्टितमे युतः ।।८६।।सुतांशे खाब्धितिथ्यंशे

द्वादशांशे नवांशके ।। राश्यंतांशे तु सप्तांशे ऋक्षसंधिमृगांतिके ।।८७।। मृगकर्कालिसिंहादिमीनतूलांशकादिमे।। अंत्यांशेऽपि च जातस्य षडर्थाऽक्षि जिने रदे ।।८८।। द्रेष्काणेनार्धहोरायां त्रिसप्तेन नखेषु तु ।। जातः प्रव्रजितश्चैषु सर्वत्रैकयुतेष्वपि ।।८९।।

(श्लोक ४४ से ८१ तक का भाग अनुपयुक्त है)

परमहंस योग-लग्न (जन्मलग्न में) गुरु या शुक्र हो तो जातक परमहंस होता है, यदि गुरु, शुक्र 'धूम' आदि अप्रकाश ग्रहयुक्त हो तो 'धर्मभ्रष्ट परमहंस' होता है। यदि गुरु, शुक्र, बुध ये तीनों जन्मलग्न में हों तो त्रिदण्डी संन्यासी होता है, अथवा बहूदक होता है। सूर्य हो तो शिवभक्त, मंगल हो तो दिगम्बर,शनि हो तो बौद्ध तथा केतुयोग से भी बौद्ध और 'धूम' योग हो तो कापालिक एवं चाप, काल, परिवेष हो तो क्रमशः गुप्तपापी, पाखण्डी, कौतिक (वाममार्गी) होता है।।८२।।८३।।८४।।

संन्यासी के अन्य योग-जन्मलग्न के षष्ठचंश में आश्लेषा, रेवती, ज्येष्ठा, नक्षत्रों के अंश में और त्रिंशांश में या कालहोरा, नवांश में अथवा राशि के अन्तिम अंश में,सप्तांश में नक्षत्रसंधि में (इन उपर्युक्त अंशों में) यदि मकर, कर्क, वृश्चिक, सिंह, मेष, मीन, तुला के आदि या अन्त के अंश में जन्म हो तो संन्यासी होता है। अथवा २।५।६।२४।३२ इन अंशों में इनकी होरा या द्रेष्काण में या इन पूर्वोक्त संख्या में एक योग करने से जो अंक हो उस संख्या में जन्म हो तो संन्यासी होता है।।८५ से ८९ तक।।

पापाप्रकाशसंयोगे कलत्रे त्वशुभं भवेत् ।। रवौ वंध्या तु शीतांशौ क्षीणे तु व्यभिचारिणी ।।९०।। कुजे तु म्रियते मन्दे दुर्भगा राहुसंयुते ।। परदाररतिः स्वीयनिषेकाभावतोऽसुताः ।।९१।। धूमे विवाहहीनः सन म्रियते कार्मुके सति ।। परिवेषे तु दुःशीला केतौ वंध्याऽसती भवेत् ।।९२।। कालेऽभावस्तु पापे तु गर्भस्रावेण संयुता ।। सुशीला स्त्रीप्रसूता च पूर्यमाणे तु शीतगौ ।।९३।। बुधे त्वपुत्रा जीवे तु गुणयुक्ता सुपुत्रिणी ।। शुक्रे सौभाग्यसंयुक्ता श्रीमती पुत्रिणी भवेत् ।।९४।।

स्त्रीके लक्षण-सप्तमभावमें पापग्रह या धूमादि नेष्ट ग्रह हो तो स्त्री दुष्टा होती है। अब प्रत्येक ग्रह के अनुसार अलग २ फल कहा जाता है। सूर्य से बन्ध्या, क्षीण चन्द्रमा से व्यभिचारिणी, मंगल से स्त्रीनाश, शनि से दुर्भागिनी, राहु से परदार रति, धूम हो तो अविवाहित मृत्यु, कार्मुक हो तो पूर्वोक्त फल, परिवेश हो तो दुःशीला, पात हो तो गर्भस्राविनी, केतु हो तो बन्ध्या या दुष्टा, काल हो तो स्त्री हानि, पूर्ण चन्द्र सप्तम स्थान में हो तो कन्या प्रजावती, बुध हो तो अपुत्रा, गुरु हो तो सुपुत्रा, शुक्र हो तो सौभाग्यवती होती है।।९० से ९४ तक।।

एष्वेवं दशमे पापपुण्यकर्मरतो भवेत् ।। पंचाशद्भिः सुरैस्तत्त्वैर्नृपैश्च मुनिभिर्ग्रहैः ।।९५।। अष्टभिः षड्भिरेवाथ सप्तादिभिरनुक्रमात् ।। पंचादिभिश्च होराः स्युरेकोत्तरचयैरथ ।।९६।। पापपुण्यक्रियाकर्ता क्रमाल्लब्धांतरांशजः ।। आवृत्तिरुत्तरा प्रोक्ता पापपुण्यक्रिया रतिः ।।९७।।

दशमभाव का विशेष फल-दशम भाव शुभग्रह युक्त या दृष्ट हो तो शुभ फल, पापग्रह युक्त या दृष्ट हो तो अशुभ फल होता है। शुभ, पाप, समान हो तो मिश्र फल, न्यूनाधिक हो तो जो अधिक हो उसका विशेष फल होता है। तथा जो अंश दिये जाते हैं ५०,३३,२५, १६,७, ८,९,६,५ और इनमें १-१ जोड़ने पर जो संख्या हो उसमें पापग्रह आदि के योग से शुभाशुभ कर्मफल जानना।।९५।।९६।।९७।।

मिश्रे तु मिश्रं त्वधिकवशादेव तु निर्णयः ।। वर्णाश्रमाचारविहीनबुद्धिः स्त्रियां च पापी परदारसक्तः ।। क्षेत्रापहारी च परस्वसर्वं निहत्य योगं सकलं करोति ।।९८।। परस्य चोत्कर्षविघातकारी विषाग्निदः पातककर्मकृच्च ।।९९।। ग्रामस्य देशस्य च विप्रवर्यधनापहारी व्यसने कृतार्थः ।। मृतिप्रदं कर्म करोति सूर्यात्पाप्यप्रकाश सितशीतगोश्च ।।१००।। दयारतो दानरतः सुतेजाः स्वाचारपाती विजितेंद्रियश्च ।। इष्टं च पूर्तं च करोति जीवे शुक्रे वदान्यः कृतदारशीलः ।।१०१।।

शुभ योग में शुभ फल, अशुभ योग में अशुभ फल होता है। अशुभ योग का फल दिखाते हैं-वर्ण और आश्रम के धर्म से हीन परस्त्री लम्पट, दूसरे का धन तथा भूमि हरण करनेवाला, पर निन्दक, विष देनेवाला, ग्राम जलानेवाला, ब्राह्मणों का धन हरनेवाला, सूर्य के योग मे हत्याकारी, बुध से पापकर्मी होता है। चन्द्र योग से विख्यात और यशस्वी, मंगल से दयावान्, गुरु से इष्टापूर्त कर्म करे। शुक्र से दानी, शनि से स्त्री स्वभाव वाला होता है।।९८ से १०१ तक।।

मेषे त्वगम्यागमनप्रियश्च त्वभक्ष्यभक्ष्यो वृषभे सुशीलः ।। देवेशदेवालयधर्मकारी युग्मे विरक्तोऽत्यधनैर्विहीनः।।१०२।। चांद्रे च तीव्रं च करोति पापं परस्वहर्तापि च पूर्तकारी ।। सिंहे तु देवस्य विघातकारी पाथोनके धर्मरतिः सुकृत्यः ।।१०३।। जूके परेषां धनदश्च पूर्तं करोति चापेऽपि च वृश्चिके तु ।। परस्वहर्ता परदारसक्तो मृगेऽपि चैवं घटभे कृतज्ञः ।।१०४।।

मेष राशि में जन्म हो तो अगम्यागामी, अभक्ष्य भक्षणशील। वृष राशि में जन्म हो तो श्रेष्ठ स्वभाव, देवभक्त। मिथुन में वैराग्य सम्पन्न, दरिद्री। कर्क में पापी और चोर तथा बावड़ी, कूंवा बनावे। सिंह में देवस्थान का नाश करे। कन्या में धर्म कर्मरत । तुला में दानी। धन में महादानी। वृश्चिक में पर सन्तोषी, परस्त्री लम्पट। मकर में दानी। कुम्भ में यज्ञकर्ता तथा उपकारी। मीन में तालाब आदिक श्रेष्ठ कर्म कर्ता हो।।१०२ से १०४ तक।।

यज्ञस्य कर्ता झषभेतथैव पूर्तादिकारी बहुयोजकः स्यात् ।। नर्तको गायको बंदी शिल्पी याच्ञापरस्ततः ।।१०५।। गायको नर्तको भारवाही प्रणतियोजकः ।। प्रेष्यश्च भारको बंदी याचको धातुवादकः ।।१०६।। वेदाध्यायी स्मृतिज्ञस्तु शैवाश्रमकृतश्रमः ।। शिल्पलेखनकर्ता च मीमांसान्यायतर्कवित् ।।१०७।। पंचरात्रार्थशास्त्रज्ञ इतिहासपुराणवित् ।। आयुधश्रमहेतुश्च आयुर्वेदकृतश्रमः ।।१०८।।

सूर्यादि ग्रहों का कलांश अनुसार फल-क्रम से प्रति अंश नर्तक १, गायक २, बंदी ३, शिल्पी ४, याचक ५, गायक ६, नर्तक ७, भारवाही ८, नम्र ९, दूत १०, भारवाही ११, बंदी १२, याचक १३, धातुवादी १४, वेदाध्ययनशील १५, स्मृति शास्त्रज्ञ १६, शिवभक्त १७, शिल्पी अथवा लेखक १८, मीमांसक या नैयायिक १९, आगम तंत्री २०, पौराणिक २१, शस्त्र करनेवाला २२, वैद्य २३, यह फल सूर्य से शनि पर्यन्त ग्रहों के कालांश क्रम से जानना।।१०५ से १०८ तक।।

अर्कात्कलांशतश्चैव क्रमादेव प्रकीर्तिताः ।। अध्यापकस्तु वेदानां सेवकः शास्त्रपाठकः ।।१०९।। अश्वसादीभसादी च लिपिलेखनतत्परः ।। मंदुराबंधको नटचो देशिको याज्ञिको गुरुः ।।११०।। दानशीलस्तु तृणको ग्रामणीर्व्यसनाधिपः ।। आरामकरणीद्युक्तः पुष्पविक्रयतत्परः ।।१११।। राजकार्यरतः सेनालतापुष्पफलक्रयी ।। नृत्यगीते च कुशलस्तांबूलफलविक्रयी ।।११२।। निषिद्धविक्रयकरो ग्रामाणामधिकारकृत् ।। बंदी च देशिकः प्राज्ञो धूपकश्चौषधिक्रियः ।।११३।। कायस्थ करणोद्युक्तो भारको भांडविक्रयी ।। कृषिकृच्च वणिग्धातुचर्मकारी च कर्षकः ।।११४।। शास्त्राधिकारी विज्ञानी पुंस्तेको रंजको वणिक् ।। वेदवेदांगवेत्ता च शास्त्रज्ञो बंदिपाठकः ।।११५।। ग्रामणीरधिकारी च गणको दंडकारकः ।। मारकश्चेंधनाहारी फलमूलादिविक्रयी ।।११६।। शांतकृत्स्वर्णकारी च कृषिकृत्पलविक्रयी ।। याजकोऽध्यापकोऽध्यक्षः प्रतिग्रहपरःफली ।।११७।।

षष्ठ्यंश फल—वेद पढ़ना १, सेवा करना २, शास्त्र पढ़ना ३, घुड़सवार ४, पीलवान ५, लेखक ६, साहीस ७, नर्तक ८, अध्यापक ९, ऋत्विज १०, गुरु ११, दानी १२, विक्रयकारी १३, चौधरी १४, दुःखदाता १५, माली १६, माली १७, राजकर्मचारी १८, बनस्पति व्यवसायी १९, नृत्यगीत कुशल २०, फल व्यापारी २१, निन्दित व्यापारी २२, ग्रामाधिकारी २३, राजसेवक २४, देशिक २५, बुद्धिमान २६, सौगन्धिक २७, पंसारी २८, बहुरूपिया २९, भारवाही ३०, धातु व्यापारी ३१, कृपक ३२, व्यापारी ३३, धातुचर्म व्यापारी ३४, कृषक ३५, शास्त्राधिकारी ३६, अनुभवी ३७, ग्रन्थ चुम्बक ३८, रंगरेज ३९, व्यापारी ४०, महाविद्वान ४१, शास्त्री ४२, राजसेवक ४३, चौधरी ४४, ग्रामाधिकारी ४५, गतिणज्ञ ४६, जज ४७, जल्लाद ४८, काष्ठ चोर ४९, फल विक्रयी ५०, शान्तकर्मी ५१, सुनार ५२, कृषक ५३, मांस विक्रयी ५४, ऋत्विक् ५५, अध्यापक ५६, हाकिम ५७, दानी ५८, फलोपभोगी ५९, सम्मानित ६०। विषम राशि में क्रम से और सम राशि में उत्क्रम से यह फल होते हैं।।१०९-११७।।

क्रमाद्व्युत्क्रमतश्चैव षष्टिः स्यादंशकेषु तु ।। रवीशहरिविष्ण्वीशदुर्गागणपतिष्वथ।।११८।। चंडिकायां च चंडेशचंद्रविष्णवीशपावके ।। त्रिपुराचेंदिराविष्णुहरिशंकरशंभुषु ।।११९।। क्षेत्रेशे गरुडे स्कंदे शास्तरि ब्रह्मणीश्वरे ।। विषापहरणोद्युक्ते जिने बुद्धे क्रमात्तथा ।।१२०।। ज्वरश्लेष्मातिसारासृग्जठरव्याधिमूलरुक् ।। मेहग्रहणिपिटिकापावकावनिशस्त्रत. ।।१२१।। दाहज्वरविषाभ्यां तु सूर्यात्कालेंतिमे मृतिः ।। राशौ ग्रहांशके पित्तवातश्लेष्मजरोगतः ।।१२२।।

त्रिंशांश फल–त्रिशांश में क्रमानुसार प्रत्येक अंश में जातक किस देवता का भक्त होगा यह कहा जाता है। प्रथम अंश में सूर्य भक्त। द्वितीय में महादेव। तृतीय में हरि। चतुर्थ में विष्णु, पंचम में ब्रह्मा। षष्ठ में दुर्गा। सप्तम में गणपति । अष्टम में चण्डिका। नवम् में चण्डिका। दशम में महादेव। ग्यारहवें में चन्द्र। १२ में विष्णु। १३ में ईश। १४में अग्नि। १५ में त्रिपुरा। १६ में इन्दिरा। १७ में विष्णु। १८ में हरि। १९ में तथा २० में शंकर। २१ में क्षेत्रपाल। २२ में गरुड़। २३ में स्कन्द। २४ में सरस्वती। २५ में ब्रह्मा, २६ में ईश्वर। २७ में गरुड़। २८ में जैन। २९ में बौद्ध। ३० में सर्वमतावलम्बी होता है।।११८।।११९।।१२०।।

मरण निमित्त–सूर्य से काल नामक ग्रह तक १४ ग्रह होते हैं। जन्मराशि में जो ग्रह हो उसके अनुसार क्रम से ये रोग जानना। सूर्य से ज्वर, चन्द्र से कफ, अतिसार ३, रक्तव्याधि ४, उदरव्याधि ५, मूलव्याधि ६, प्रमेह ७, संग्रहिणी ८, पिटक रोग ९, अग्नि १०, अवनी ११, शस्त्र १२, अग्नि १३, ज्वर या विष १४ ।।१२१।।

प्रकारान्तर–सूर्य से पित्त, चन्द्र से वायु, मंगल से कफ, बुध से पित्त, गुरु से वायु, शुक्र से कफ, शनि से कफ, राहु से पित्त, केतु से वायु रोग से मृत्यु होती है।।१२२।।

पित्तवातकफश्लेष्मपित्तवातैः क्रमात्स्मृतः ।। ज्वरसन्निपातजठरामयांत्ररुग्रामप्रमेहजलकाज्जलाग्नितः ।। ज्वरसन्निपातलोत्रभवेन्मृतिः क्रियपूर्वकस्तु निधनांशकेषु तु ।।१२३।।गुल्मोदरज्वरविषाग्निजलादिपातशस्त्रादिपातगुदकीलभगंदरोत्था ।।रक्तातिसारजठरज्वरमेहगुल्मकुष्ठातिसारपिटकादिभिरश्मरीयैः ।।१२४।। शूलाशनिक्षतजपित्तसमावृतानि शीतज्वरप्रभृतिराशिवशात्क्रमेण ।।१२५।। कालादिरव्यंतखगोक्तजाता चेद्दुर्गपातपतनज्वरसन्निपातात् ।। गोपातसत्त्वजनिता च मृतिः क्रमेण वामेन चापि पुनरेवमथांशकेषु ।।१२६।।

नवांश के कारण मृत्यु के निमित्त–प्रथम नवांश में जन्म हो तो ज्वर से मृत्यु । २ में सन्निपात से। ३ में उदर रोग से। ४ में अन्त्र रोग से। ५ में प्रमेह से, ६ में जल से, ७ में अग्नि से, ८ में ज्वर से, ९वें नवांश में सन्निपात से मृत्यु होती है।।१२३।।

जन्मलग्नराशि से मरणनिमित्त–मेष में गुल्मरोग से, वृष में ज्वर या उदररोग से, (आगे क्रम से) विष, अग्नि, जल से ३, शस्त्र से ४, गुदरोग या भगंदर से ५, रक्तातिसार, ज्वर या उदररोग से ६, प्रमेह या गुल्मरोग से ७, कुष्ठ या अतिसार से ८, पिटक या अश्मरी से ९, शूल या वज्रपात से १०, पित्तरोग से ११, शीतज्वर से १२ मृत्यु होती है।।१२४।।१२५।।

कालादि सूर्यान्त व्युत्क्रम गणना में मरणनिमित्त–कालग्रह के अंश में दुर्गपात से १ (आगे क्रम से) पतन से २, ज्वर से ३, सन्निपात से ४, वृषभनिमित्त से ५, पतन से ६, प्राणीनिमित्त से ७।८, वृषभनिमित्त से ९।१०, सन्निपात से ११, ज्वर से १२, पतन से १३, दुर्गपात से १४, ये १४ कारण ग्रह तथा उनके नवांश के भी जानना चाहिए।।१२६।।

आचतुर्थात्खभूतानि त्रयो द्वादश हारकौ ।। अथ स्यादष्टमात्षष्टिः पंचाष्टौ दशमात्ततः ।।१२७।। पञ्चपञ्चाशदब्दाः स्युस्त्रयोरत्रानि हारकाः ।। एकादशेऽष्टषष्टिः स्यात्सप्तकाष्ठाश्च

हारकाः ।।१२८।। त्रयोदशे च तानाः स्युर्द्विसप्ततिरथो मनौ ।। रश्मयः पंचदश चेत्पंचसप्ततिररिरेव च ।।१२९।।। वेदपंचरसा हारा दश रुद्राश्वरश्मयः।। आत्रिंशतः क्रमादब्दा अशीतिरथ सप्ततिः ।।१३०।। खेषवः खाब्धयः खाद्रिवेदाद्रिवेदसप्ततिः ।। षष्टिरष्टाद्रिरष्टेषु पञ्चसप्ततिरद्रियुक् ।।१३१।। एकाशीतिश्चतुर्युक्ता चत्वारिंशत्स्मृताः समाः ।। सप्तांकरसतर्केषु नवाद्रिरसषट्कराः ।।१३२।।

रश्मिसंख्या से वर्षानयन– तथा हार–रश्मिसंख्या ४ से ३० तक वर्ष संख्या तथा हारसंख्या–चक्र में देखें ।।श्लोक १२७ से १३२ तक।।

अथ रश्मिवर्षाहाराज्ञानचक्रम्															
रश्मयः	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३	१४	१५
वर्षा०	०	०	०	५०	५०	५०	५०	६०	०	५५	६८	०	४९	७५	७५
हार-कांकाः	०	०	०	३	३	३	३	५	०	३	७	०	७२	५४	१०
०	०	०	०	१२	१२	१२	१२	८	०	९	१०	०	०	६	११
रश्मयः	१६	१७	१८	१९	२०	२१	२२	२३	२४	२५	२६	२७	२८	२९	३०
वर्षाणि	८०	७०	५०	४०	७	७४	७४	६०	७८	५८	७५	७७	८१	८५	४०
हार-कांकाः	७	९	६	६	५	९	७	६	६	२	११	१०	९	६	१२

रुद्रा दिङ्नवतर्कार्का अब्दहाराः क्रमादमी ।। रुद्रार्कमनुविश्वष्टिः सप्तांकेष्वर्कदिक्छराः ।।१३३।। वेदेषुर्वेदकांकाः स्युरंशहाराः प्रकीर्तिताः ।। पंचानां च चतुर्णां च तत्तत्षण्णवतिः शतम् ।।१३४।। दश रुद्रा नखा मूर्छा हाराः स्युः क्रमशः स्मृताः ।। शते रसार्करुद्राश्च दशविंशोत्तरं शतम् ।।१३५।। एते हाराः क्रमात्प्रोक्ताः केषांचित्परमायुषः ।। केषांचिदनयोर्योगदलमब्दा विशेषतः ।।१३६।।

अंशायु के हारांक– ११।१२।१४।१३।१६।७।५९।१२।१०।५।५४।९४।। ये अंशायु के हारांक हैं।।१३३।।

नवांशायु के हारांक–५।४।६।९०।१००।१०।११।२०।२१ ये क्रम से हारांक हैं।।१३४।। जहां आयुर्योग से १०० वर्ष की आयु हो वहां १२।११।१०।१२० इन हारांकों का प्रयोग करना।।१३५।। मतान्तर–हार, शतायु का योग करके आधा करना, वह वर्षसंख्या होती है।।१३६।।

दशमं यावदायातः स्वकुटुबं बिभर्ति च ।। कृच्छ्रेण दशमे पुत्रबाहुल्यानेकसंयुतः ।।१३७।। एकादशे तु विद्वांसो निर्धना जगतीं सदा ।। अटंति द्वादशे नित्यं निर्धनाः कुलपांसनाः ।।१३८।। स्वदेहार्थधना दासा अतो यावत्तु विंशतिः ।। अतः परं मृतिं याता बाल्य एव यथागताः ।।१३९।।

रश्मिफल-रश्मियोग १० हो तो बहुत पुत्र हों और कठिनाई से परिवार का भरण पोषण करे। ११ रश्मि योग हो तो पुत्र विद्वान् तो हों परन्तु दरिद्री हों। १२ हों तो जातक दरिद्र और नीचवृत्ति होता है। १३ रश्मि से २० तक योग हो तो कठिनाई से या नोकरी से आजीवन हो या बाल्य अवस्था में ही मृत्यु हो।।१३७-१३९।।

एवं प्राग्वत्सराः प्रोक्ताः प्रथमेचोत्तरेस्मृताः ।।१४०।। केंद्रत्रिकोणेष्वशुभा ग्रहास्तु त्रिलाभषष्ठाष्टमगाः शुभाश्चेत् ।। द्वितीयवेश्मास्तगताश्च भौमक्षीणेंदुमंदा यदि वा च वामम् ।।१४१।। स्थानेषु धनदेष्वेवं शत्रुवर्गगता यदि ।। रव्यारार्कितमः क्षीणचंद्राः स्यू रेकदा इमे ।। एवं त्रिकादियोगानां संयोगो रेकदो गुणैः ।।१४२।। अन्यथा तारतम्येन कादाचित्को भवेद्द्विज ।। लग्ने द्विधर्मकर्मायसुखपुत्रास्तविक्रमे ।।१४३।। स्थितः स्थितौ स्थिताःखेटाः शत्रु ग्रहनिरीक्षिताः ।। आदौ वयसि मध्येऽन्ते दरिद्राः स्युः क्रमाद्भवेत् ।।१४४।।

शुभाशुभ योग-केन्द्र या त्रिकोण में पापग्रह तथा त्रिषडाय और आठवें में शुभग्रह हो अथवा २।४।७ में क्षीणचन्द्र, मंगल, शनि हो या सू० मं० श० रा० क्षीणचन्द्र हो तो दरिद्र योग होता है। अथवा १।२।९।१०।११।४।५।७।३ अर्थात् १ से ५ तक तथा ७ तथा ९ से ११ तक के भावोंमें १-१ ग्रहो हो शत्रु या पापदृष्टि हो तो प्रथम अवस्था में दरिद्र और दो ग्रह हों तो मध्य अवस्था में तथा तीन आदि ग्रह हों तो अन्तिम अवस्था में दरिद्र योग होता है।।१४०-१४४।।

नव योगा इमे प्रोक्तास्त्रिषु स्थानेषु रेकदाः ।। कर्कटाद्वृश्चिकान्मीनाच्चतुर्ष्वेव क्रमास्थिताः ।।१४५।। शत्रुगेहे स्थिताः पापा मंध्येऽन्ते प्रथमे क्रमात् ।। सुखान्मृत्योर्व्ययात्पुत्राद्धर्माल्लग्नात्तथै-व च ।।१४६।। एवमक्षा यदि न्यूनाश्चाष्टवर्गसमुद्भवाः ।। केंद्रेषु च त्रिकोणेषु शुभा उपचये परे ।।१४७।। धनदेषु शुभाश्चान्ये परेषु च यदि स्थिताः ।। इष्टरश्मिफलाधिक्यैकश्च द्वौ च त्रयोऽपि वा ।।१४८।। उच्चादिपंचकस्थाने नवांशेष्वेव वा यदि ।। लक्ष्मीयोगा इमे प्रोक्तास्सुहृद्दृष्टास्तथा परे ।।१४९।।

अन्य योग-कर्क राशि से ४ राशियों में शुभ पापग्रह हों तथा शत्रुदृष्टि हो तो मध्य अवस्था में फल हो और वृश्चिक आदि ४ राशियों में शुभ पाप ग्रह हो तो अन्त्य अवस्था में योगफल, मीनादि चार राशियों में शुभ पापयोग हो तो प्रथम अवस्था में योगफल होता है।।१४५।।१४६।।

शुभयोगविचार-केन्द्र त्रिकोण में शुभग्रह और त्रिषडाय में पापग्रह हो तथा धनस्थान में शुभग्रह हो और इष्टरश्मियोग अधिक हो उच्च और मूलत्रिकोण में १ या २-३ ग्रह हों अथवा उच्चादि नवांश में हो तो लक्ष्मीवान् योग होता है।।१४७-१४९।।

रेके प्रोक्ताधिकाक्षांशाः शुभारिः फाष्टषड्विना ॥ उच्चौ द्वौवा त्रयः कोणे चत्वारोऽतिसुहृत्स्थिताः ॥१५०॥ मित्रेण पंच षट् सप्त खेटाश्चेच्छ्रीप्रदाः स्मृताः ॥ द्विर्द्वादशे शुभौ चंद्रात्सप्तमे वा तनोस्तथा ॥१५१॥ गुरौ लग्ने द्वितीये ज्ञे व्यये शुक्रेऽथवा भवेत् ॥ भावदृग्बलकष्टेष्टफलभावस्वभावतः ॥१५२॥ दायानां च फलैरेव भाववर्गेशसंयुतैः ॥ रश्म्यंशसंभवादेव वर्षचर्या तु दैववित् ॥१५३॥ एषामंशाश्च संभूताः कारकादिग्रहैरपि ॥ मासचर्या दिनोत्थां चाप्यष्टवर्गसमुद्भवात् ॥१५४॥

अन्य योग-दरिद्र योग में जो अक्षांश कहे हैं, वे ६।८।१२ भावों के बिना हों, और उच्च या त्रिकोण के १ से ४ तक ग्रह हो तथा ५।६।७ ग्रह अतिमित्र राशि या वर्गगत हों तो धनी योग होता है॥१५०॥

अन्य योग-चन्द्रमा से २।१२ में शुभग्रह हों, लग्न से ७ चन्द्र हो, लग्न में गुरु हो, २ में बुध तथा १२ भाव में शुक्र हो तो श्रीमान् योग होता है, परन्तु भावबल, दृष्टिबल, इष्टकष्ट बल के न्यूनाधिक्य से फल में तारतम्य होता है॥१५१॥१५२॥

अन्य योगान्तर- आयुर्दाय फल भावफल, वर्गफल, रश्मिफल इन सबके विचार से वर्ष तथा रश्मिविचार से मासफल, अष्टकवर्ग से दिनचर्या कहना॥१५३॥१५४॥

भावदृष्ट्योः प्रधानत्वात्कारको बोधको बले ॥ इष्टकष्टफले त्वन्ये पाचको रश्मिसंभवे ॥१५५॥ अंतर्दाये तु भावानां प्रधानो बेधकः स्मृतः ॥ अन्तर्दाये दशानां तु कारको बोधकस्तथा ॥१५६॥ भावस्वभावविषये पाचकस्त्वन्यथा भवेत् ॥ पाचकस्त्वन्यथा सूर्यश्चंद्रमा बोधकः स्मृतः ॥१५७॥

इति श्रीबृहत्पाराशरहोराशास्त्रे उत्तरखण्डे अब्दचर्यावर्णनं नाम अष्टादशोऽध्यायः ॥१८॥

बलाबल ग्रहण विचार-भाव तथा दृष्टिविचार में मुख्य कारक ग्रहण करना, बलाबल विचार में 'बोधक' लेना। इष्टकष्ट विचार में पाचक लेना। अन्तर्दशा विचार में बेधक लेना। दशा के अन्तर्दाय विचार में बोधक, कारक लेना। भावविचार में पाचक लेना। सूर्य स्वभाव से ही पाचक और चन्द्रमा बोधक है॥१५५-१५७॥

इति श्रीबृ०पा०हो०शा०उ०खं०भावप्रका० योगवर्णनंनाम अष्टादशोऽध्यायः॥१८॥

पुनः अब्दवर्णनाह

षष्ठादिरश्मिष्वाद्येंऽशे जनको जन्मतोभृशम् ॥ धनादिहीनो रिक्तश्च द्वितीयेंऽशे पितुर्मृतिः ॥१॥ निःस्वस्तृतीये दासश्च चतुर्थे रंकसंयुतः ॥ व्याधिभिः पीडितस्तद्वत्पंचमे भृशदुःखितः ॥२॥ नवमे दशमे चैवंषष्ठेंऽशे सप्तमेऽपि च॥व्याधियुक्तो दरिद्रश्च यदि जीवति जीवति ॥३॥ एकादशेऽपि रश्मौ चेदाद्येंशे पितृलालितः ॥ पितुर्धनव्ययकरो द्वितीये बंधकीपतिः ॥४॥ वेश्यासक्तस्तृतीये

स्यान्निर्धनः कुलपांसनः ।। मृतपुत्रोऽथ वाऽभाग्यश्चतुर्थे स्त्रीविमानितः ।।५।। पंचमे त्वल्पपुत्रः स्यात्षष्ठे चाप्यरुजा युतः ।। श्रीयोगे धनवान्कश्चित्सप्तमे दुःखितोऽधनः ।।६।। आद्येंऽशे द्वादशे रश्मौ नैव तस्य शुभाशुभौ ।। द्वितीये बलवान्मूर्खश्चौरद्रव्येण जीवति ।।७।। तृतीये च चतुर्थे च वेश्यापतिररिंदमः ।। नृपपूरुषमृत्युश्च भार्याहीनोऽसुतोऽधनी ।।८।।

रश्मिफल तथा वर्षचर्या-छठी रश्मि के प्रथमांश में जन्म हो तो पिता दरिद्र हो, द्वितीयांश में पिता की मृत्यु हो। तीसरी में दरिद्र और नौकर हो, चौथी में दरिद्री और रोगी, पांचवीं में अति पीड़ित, ६।७।८।९।१० में रोगी, दरिद्री तथा जीवन में भी संशय हो। ११ वीं रश्मि के आद्यंश में मातृहीन तथा दरिद्र, द्वितीयांश में 'पुंश्चलीपति, वेश्यागामी, ३ में निर्धन, कुलहीन, अभागी या मृतपुत्र हो, चौथे में स्त्रीजित, पांचवें में अल्पपुत्र, छठे में नीरोगी, स्त्रीयोग से धनी, ७वें में दुःखी निर्धन हो। १२ रश्मि के प्रथमांश में शुभाशुभ समान हो, दूसरे में बलवान् तथा मूर्ख चोर हो, तीसरे चौथे में वेश्यापति, शत्रुनाश हो तथा राजपुरुष के द्वारा मृत्यु हो या जीवित रहे तो धन, पुत्र, भार्याहीन हो।।१-८।।

विद्वांश्चतुर्दशे त्वाद्ये पितृभ्यां लालितःसुखी।। द्वितीये क्लेशभाग्वापि शत्रुजिच्च रणाजिरे ।।९।। पितृभ्यां हीन एवाथ लब्धकिंचिद्धनार्जकः ।। देशाद्देशमटत्येव तृतीये धनतत्परः ।।१०।। सद्भिरीड्यः सुखी ख्यातः शांतबुद्धिररिंदमः ।। चतुर्थे धनवान् क्षत्री विद्ययार्जितपोषकः ।।११।। सतिश्रीयोगसंयुक्तः पंचमे दुःखभाग्धनी ।। पुत्रादिसंपत्संयुक्त एवं पंचदशे भवेत् ।।१२।। अस्मिन्षष्ठे धनी प्राज्ञो विद्यया सद्यशो भवेत् ।। एवं च षोडशे चांशे त्वतीवधनवान्भवेत् ।।१३।। स्वबंधुभ्योऽधिकोऽन्येंऽशे विद्ययाऽथ धनेन वा ।। पुत्रादिसंयुतः श्रीमांस्त्र्यंशे स्यात्स्वजनेश्वरः ।।१४।। इष्टापूर्तेन संयुक्तस्त्वष्टादशोनविंशके ।। पूर्ववद्विंशरश्मौ तु लब्धधामपरायणः ।।१५।। वदान्यः पूर्वधर्माणां मनुवद्बहुपुत्रकः ।। एकविंशे धनैर्युक्तमाद्येऽनंतर भागके ।।१६।। तृतीये तु भुवि ख्यातो दानेन च धनेन च ।। द्विनामत्वं तु वा यज्वा यानवाहनसंयुतः ।।१७।। श्रीमान्बहुधनानां च साधकश्च चतुर्थेके ।। अग्निमांद्येन रोगार्तश्चतुर्थे धनवान्सुखी ।।१८।। पंचमे देशयोर्विद्वान्वदान्यो दंतुरोऽथवा ।। सप्तमे धनहानिः स्याद्राजयोगैश्च मृत्युयुक् ।।१९।। अष्टमे निर्धनस्थानां जनानां पोषणे रतः ।। द्वाविंशे प्रथमेंशे तु पितुः पुत्रो धनस्य तु ।।२०।।

चौदहवीं रश्मि के १ अंश में विद्वान, २ में मातृ पितृयुक्त सुखी। ३ में क्लेश, शत्रुजित्, मातृपितृ हीन, भ्रमणशील, चौथे में धनी, सुखी, प्रसिद्ध, शान्तबुद्धि, शत्रुनाशकारी, सज्जनानुरक्त, ५वें धनी भूमिपति, विद्योपजीवि, श्रेष्ठभार्यापति, छठे में दुःखी, आगे धन पुत्र से सुखी हो। १५वीं रश्मि का फल ५ अंश तक उपर्युक्तानुसार है, छठें में बुद्धिमान् धनवान् हो। १६-१७ रश्मि में प्रथम अंश में अतिधनी, दूसरे में प्रतापी, तीसरे में धन, विद्या पुत्र से सुखी, चौथे में पदाधिकारी, ५-६ में यज्ञ, पुण्य, कूपादि का कर्ता हो। १८-१९ रश्मि का फल सत्रहवीं रश्मि के समान जानना। बीसवीं रश्मि में वासभूमिलुब्ध, दानी, पुत्रवान् हो। २१ रश्मि में १-२ अंश में धनी, ३ में दान धर्म में विख्यात, वाहनवान, यज्ञकर्ता, धनी,सुखी हो, चौथे में

अग्निमांद्य का रोगी, धनी हो। ५ में प्रतिष्ठित, दन्तुर हो, ७ में धनहीन हो, राजनिमित्त से मृत्यु हो। ८वें अंश में निर्धन दरिद्रों का पोषण कर्ता हो।।९-२०।।

द्वितीये धनहीनश्च किंचित्कृषिकरः सुखी ।। तृतीये राजकार्यार्थी तत्क्रमार्जितवित्तकः ।।२१।। चतुर्थे तु प्रभुश्चान्यनामभाग्दृढबंधनात् ।। पंचमे तद्वदेव स्यात्षष्ठे कार्यस्य हानिकः ।।२२।। सर्वव्ययश्च रिक्तश्च सप्तमे रोगयुग्धनी ।। त्रयोविंशे तु जनकलालितश्च सुखी भवेत् ।।२३।। तृतीये मूर्खकृत्येन पराभवसमन्वितः ।। चतुर्थे चौरकृत्येन पंचमे व्याधिसंभवः ।।२४।। षष्ठे दरिद्रः पुरुषो व्याधिना पीडितो भवेत् ।। श्रीमान्पुत्रश्चतुर्विंशे प्रथमे लालितो भृशम् ।।२५।। स्वजात्यनुगुणो विद्वान्प्रथमे च द्वितीयके ।। तेन ख्यातस्तृतीये स्यात्स्वतंत्रः सर्वसंमतः ।।२६।। क्षेत्रदारसुहृत्पुत्रकलत्रैर्बहुभिर्वृतः ।। पंचमे व्याधितः षष्ठे बहुव्ययपरायणः ।।२७।।

बाईसवीं रश्मि के प्रथम अंश में पितृधन से धनी, दूसरे में निर्धन, कृषक, सुखी हो, तीसरे में राजसेवी,चौथे में समर्थ,अन्यनाम से प्रसिद्ध, पांचवें में चौथे फल के अनुसार, छठे में कार्य हानिकर, ७वें में रोगी और धनी हो।। तेईसवीं रश्मि के प्रथमांश में पितृसुख, २में सुखी, तीन में मूर्खता से हार, चौथे में चोर, पांच में रोगी, ६में दरिद्री,रोगी हो।। चौबीसवीं रश्मिके प्रथम अंश में धनी, विद्वान्, पिता से सुख, स्वजाति गुणयुक्त हो, दूसरे अंश में प्रथम के समान ही फल है। तीसरे अंश में स्वतंत्र तथा सर्वसम्मत हो। चौथे अंश में पूर्ण परिवार वाला सुखी, ५वें में रोगी, छठे में अधिक व्ययशील हो।।२१-२७।।

पंचविंशे तु षष्ठांशे फलहीनस्तु जीवति ।। षड्विंशे प्रथमांशे तु दरिद्रःस्यात्सुतोऽपि सन् ।।२८।। पितुः कार्ये तु वृद्धिः स्याद्द्वितीये पितृवेश्मतः ।। अन्यत्र गत्वा तत्रैव स्वयोग्येन च कर्मणा ।।२९।। स्वदेहपोषकोन्येंऽशे धनी च कृत्यवित् स्थितः ।। चतुर्थे पंचमे चैव पट्टबंधादिसंयुतः।।३०।। अतीव धनवान्स स्यात्षष्ठे त्वंशे स्वदेहभाक् ।। क्षेत्रदारादिवृद्ध्या तु व्यथाव्याधिसमन्वितः ।।३१।। नवमे धनहानिः स्यात्पुत्रदारविवर्जितः ।। यावद्दश नवांशाश्च षड्विंशवदथ द्वये ।।३२।।

पच्चीसवीं रश्मि के छठे अंश में जीवन निष्फल हो, छब्बीसवीं रश्मि के १ अंश में अन्य देश में जीवनयापन हो, तीसरे अंश में धनी, चतुर हो, ४-५ में दीक्षित, छठे में धनी, सातवें में साधारण आजीवन ८वें में भूमि, स्त्री का सुख, ९वें में मानसी चिन्ता, रोगी हो। १० वें अंश में स्त्री, पुत्र, धनहीन हो, २७, २८ रश्मियोग में भी पूर्वोक्त फल होता है।।श्लोक २८ से ३२ तक।।

राजप्रियस्तततश्चंडः शुद्धः स्यादंशके ततः ।। एकोनत्रिंशे रश्मौ तु सुखी स्याच्च द्वितीयके ।।३३।। राजसेवी तृतीयेंशे कृत्याकृत्यविदीश्वरः ।। बहुबंधुयुतः श्रीमान्मानवाहनसंयुतः ।।३४।। देशग्रामाधिकारी च त्रिंशे त्वेतैः समन्वितः ।। सेनानीनीतिमाच्छूरः पंचमांशे भवेदिदम् ।।३५।। षष्ठे तु विजयो युद्धे सप्तमेऽपि रुजा युतः ।। न्यूनायतिस्तु वस्वंशे नवांशे त्वधिकायतिः ।।३६।। त्रयस्त्रिंशे तु राजानः षष्ठांशे वा तृतीयके ।। अभिषिक्तो भवेद्यद्वा पट्टबंधुस्तु योगतः ।।३७।। रश्मौ तथा चतुस्त्रिंशे चतुर्थांशे पराजयः ।। तृतीये पंचमे षष्ठे युद्धे तु विजयी भवेत् ।।३८।। अष्टमे नवमेंऽशे तु वृद्धिः स्याद्दशमे न हि ।। षडंशविषये यस्माच्चत्वारिंशत्ततःपरे ।।३९।।

द्वितीये च तृतीये च चतुर्थे चाद्यके तथा ।। राजा स्यात्पंचमे षष्ठे सप्ताष्टनवमे ततः ।।४०।। दशमे च क्रमाद्युद्धव्याधिर्वाऽथ पराजयः।। इतरांशेषु संख्यातः सर्वसंपत्समन्वितः ।।४१।। ततः परं च सम्राट् स्याच्चतुर्थे पंचमे जयी ।। अंशास्तुल्यास्तु तेष्वेवं विपरीतफलं विदुः ।।४२।। व्याधिरुक्तदेव स्याद्यावद्विंशतिरश्मयः ।। यद्यप्यंशाः परं नाऽत्र अधिकारं भजन्ति ते ।।४३।।

२९वीं रश्मि के प्रथमांश में सुखी, दूसरे में राजसेवी, ३ में सत्कर्मी, ४ में पदाधिकारी, ५ में बन्धु समागम, छठे में श्रीमान्, ७ में सम्मान पावे, वाहन हो, ८वें में देशाधिपति हो, नवम में ग्रामाधिपति हो, इसी प्रकार ३०वीं रश्मि का भी फल है। ३१वीं रश्मि के ५वें अंश में सेनाधीश, नीतिमान्, शूर हो। छठे में युद्ध में विजयी, ७ में रोगी, ८ में किंचित् लाभवान्, नवम में बहुलाभवान् होता है। ३२ वीं रश्मि में पूर्वोक्त फल जानना। ३३वीं रश्मि में तीसरे, छठे, अंश में राजा होता है। ३४वीं रश्मि के ४ थे अंश में पराजय। ३।५।६ में जय हो। ८।९ में वृद्धि हो। ३५ वीं रश्मि से ४० वीं रश्मि तक के १।२।३।४ अंशों में राजा होता है। ७ में युद्ध, ८ में व्याधि, ९वें में व्याधि, तथा दशम अंश में पराजय होती है। बाकी के अंशों में सर्व सम्पत्तिवान् होता है।।श्लोक ३३ से ४३ तक।।

अथ स्थानगतानां तु रव्यादीनां क्रमात्फलम् ।। ततो रवि शिरोरोगं बंधूनां च विरोधताम् ।।४४।। द्वितीये धनहानिश्च तृतीये मित्रवर्द्धनम् ।। धनलाभं सुखे सौख्यं शत्रुभिश्च समागमम् ।।४५।। पंचमे पुत्रलाभं च बुद्धिमुद्यमसिद्धिकृत् ।। षष्ठे धनं जयं कुर्यात्सप्तमे स्त्रीविरोधनम् ।।४६।। अष्टमे व्याधिं हानिं च नवमे मित्रबंधनम् ।। भाग्यहानिं च दशमे धनलाभं सुखं जयम् ।।४७।। एकादशे धनानां च सिद्धिं मित्रसमागमम् ।।द्वादशे धनहानिं च व्ययं वा कुक्षिरुक् क्रमात् ।।४८।। चंद्रे लग्ने च कलहं द्वितीये धनयोजनम् ।। तृतीये भ्रातृभिर्लाभं धनवस्त्रादिसंग्रहम् ।।४९।। चतुर्थे धनवस्त्रादिवाहनादिसुसंयुतम् ।।५०।। तीक्ष्णे धनी सुतयुतः परिपूर्णसंपत्षष्ठे तु रोगसहितं कुमतिं च कामे ।। विद्याधनक्षितिसुखादिसमन्विश्च मृत्यौ च मृत्युविषयः खलु कुक्षिरोगी ।।५१।। स्त्रीस्वर्णदासायतिरेव धर्मे माने सुचारित्रगुणं धनं च ।। लाभे तु चैतत्सकलं व्यये तु धनस्य रिःफं कुरुते शशी तु ।।५२।।

सूर्यादि ग्रहों का १२ भावों का फल-सूर्य १ भाव में-शिरोरोग, विरोध। २ में धन हानि। ३ में मित्र, धनलाभ, ४ भाव में सौख्य। ५ में पुत्रवृद्धि, बुद्धि का विकास, उद्योग की सिद्धि। ६ में जय धन, ७ में स्त्री विरोध। ८ में व्याधि, हानि। ९ में मित्र बंधन, भाग्यहानि। ९ में धनलाभ, सुख, जय, १० में भाग्यहानि, ११ में धनसिद्धि, मित्रसमागम। १२ में धनहानि, व्यय, कुक्षिरोग कारक होता है।।४४ से ४८ तक।।

चन्द्रफल—१ भाव में कलह। २—धनलाभ। ३—भ्राता से वस्त्रादि का लाभ। ४ में धन, वस्त्र, वाहन प्राप्ति। ५ में धन, पुत्र, सम्पत्तिकी प्राप्ति। ६ में रोग, कुबुद्धि। ७ में विद्या, धन, भूमि,

सुख प्राप्ति।। ८ में मृत्यु दुःख, कुक्षिरोग। ९ में स्त्री, सुवर्ण, दास प्राप्ति। १० में उत्तमगुण धन की प्राप्ति। ११वें में दसके समान फल। १२ वें में द्रव्यनाश होता है।।४९–५२।।

कुजे लग्ने तु चापल्यात्क्षतं स्वे धननाशनम् ।। विक्रमे भ्रातृमरणं धनलाभः सुखं यशः ।। चतुर्थे बंधुमरणं शत्रुवृद्धिर्धनव्ययम् ।।५३।। पंचमे पितृहानिं च धनायतिसुतौ यशः ।। षष्ठे रिपुसमृद्धिं च जयं बंधुसमागमम् ।।५४।। अर्थवृद्धिं स्त्रियां दारमरणं नीचसेवनम् ।। नीचस्त्रीसंगमो मृत्यौ धननाशं पराभवम् ।।५५।। पराभवमनर्थं च धर्मे पापरुचिक्रिया ।। धनव्ययं च दशमे धनलाभं कुकर्म च ।।५६।। लाभे धनं सुखं वस्त्रं स्वर्णक्षेत्रादिसंग्रहम् ।। व्यये नेत्ररुजं भ्रातृनाशं च कुरुते कुजः ।।५७।।

मंगल का फल-१में चपलतावश क्षत। २में धनहानि। ३में भ्रातृनाश, धनलाभ, सुख, यश। ४में बन्धुमरण, शत्रुवृद्धि, धन का खर्चा। ५ में पितृहानि,धनसुख,पुत्र,यश प्राप्ति। ६ में-शत्रुवृद्धि, जय, बन्धु-समागम, धनवृद्धि। ७ में-स्त्री की मृत्यु,नीच सेवा नीच स्त्रीसंग। ८ में धनहानि, पराजय, अनर्थ। ९ में- पापबुद्धि, पापकर्म, धनव्यय। १० में-धनलाभ, कुकर्म। ११ में धन, सुख सुवर्णलाभ, भूमिलाभ। १२ में नेत्ररोग, भ्रातृनाश करता है।। श्लोक ५३ से ५७ तक।।

बुधः षष्ठेऽरिवृद्धिं च युद्धे सति पराजयम् ।। मृतौ बंधुविहीनत्वं बंधनं व्ययभे व्ययम् ।।५८।। भावोक्तफलवृद्धिं तु परे तु कुरुते तथा ।। गुरुशुक्रौ तृतीये तु शत्रुवृद्धिं धनक्षयम् ।।५९।। षष्ठे पराजयं व्याधिमष्टमे बन्धनं तथा ।। रिःफे चोरहृतस्त्वं तु नेत्ररोगपराजयम् ।।६०।। सप्तमे च चतुर्थे च सेनापत्यधनायतिः ।। सर्वसंपत्समृद्धिं च नवमे राजसंपदम् ।।६१।।

बुध का फल-बुध ६ठे भाव में शत्रुवृद्धि और लड़ाई होने पर पराजय। अष्टमभाव में बन्धुहानि, बन्धन। १२ भाव में खर्च करता है। अन्यभावों में अन्यभावों की वृद्धि करता है।।५८।।

गुरु और शुक्र का फल-गुरु, शुक्र, तीसरे भाव में हों तो शत्रुवृद्धि और धनक्षय करते हैं। छठे भाव में पराजय तथा व्याधि। आठवें में बंधन करते हैं। १२वें में चोरी, नेत्ररोग, पराजय कारक हैं। ४ तथा ७ में सेनापतित्व, धनलाभ, सर्वसम्पत्ति वृद्धि और नवम भाव में राजसमान सम्पत्ति देते हैं।। अन्य भावों में भावोक्त फल की वृद्धि करते हैं।।५९ से ६१ तक।।

पूर्वोक्तफलसंयोगमन्येष्वपि समं भवेत् ।। कुजवद्रविवन्मंदः पापत्र्यंशं दलं गतः ।।६२।। पादोनमेकं मित्राधिमित्रस्वर्क्षे च कोणभे ।। उच्चे तु नीचे त्रिगुणमध्यरौ द्विगुणं ततः ।।६३।। अरौ सार्धं क्रमात्कालफलजस्त्वेव निर्णयः ।। शुभैर्दृष्टो रवी राजसेवाफलधनायतिः ।।६४।। शत्रुभिः कलहं दुःखं रुजं जठरनेत्रयोः ।। मित्रदृष्टौ जयं बंधुलाभं पापश्च रोगिताम् ।।६५।।

शनि का फल सूर्य, मंगल के समान ही जानना।। इनमें से कोई भी ग्रह मित्रक्षेत्री होने से

चतुर्थांश फल, अतिमित्रक्षेत्री तृतीयांशफल, स्वक्षेत्री हो तो ३ पाद, इसी प्रकार त्रिकोणी भी ३ पाद फल, उच्चराशि में सम्पूर्णफल समझना। नीचराशि का त्रिगुण हीन फल अधिशत्रु में द्विगुण और शत्रुक्षेत्री हो तो आधा फल करता है।।६२।।६३।।

दृष्टिफल-सूर्य पर शुभग्रहों की दृष्टि हो तो राजसेवा तथा धनप्राप्ति होती है। शत्रुग्रहों की दृष्टि हो तो कलह, दुःख नेत्ररोग हो। मित्रग्रहों की दृष्टि हो तो जय, बंधु-लाभ हो। पापग्रहों की दृष्टि हो तो रोगी हो।।६४।।६५।।

धनहानिं शशी पापैः शिरोनेत्ररुजं तथा ।। शत्रुभिः पापकरणं धननाशं गमागमौ ।।६६।।
शुभैररोगतां सौख्यं धनलाभं च बंधुभिः ।। मित्रलाभं जयं क्षेत्रदेशलाभं करोति हि ।।६७।।
पापैर्दृष्टः कुजः क्षेत्रधनधान्यादिनाशनम् ।। शत्रुभिर्बन्धनं रोगं चाहवं दूरवासनम् ।।६८।।
शुभैस्तु विजयं देशक्षेत्रलाभं सुहृच्छुभम् ।। मित्रैश्च धनसंसिद्धिं करोति हि न संशयः ।।६९।।
शुभैर्बुधो लिपिज्ञानं विद्यालाभं च कौशलम् ।। मित्रैर्भूषाधनक्षौमरत्नलाभं च शत्रुभिः ।।७०।।
अतिसारं च दुर्बुद्धिं प्रतीकेषु सदोद्यमम्।। पापैर्महाविषादं च कुक्षौ शूलं च वर्द्धते ।।७१।।

चन्द्र पर दृष्टिफल-चन्द्रमा पर पापदृष्टि हो तो सिर में, नेत्र में पीड़ा, धनहानि हो। शत्रुदृष्टि हो, तो पापकर्म करता है, धनहानि, भ्रमण हो। (शुभाशुभमिश्रित दृष्टि हो तो मिश्रित फल हो) शुभदृष्टि हो तो नीरोगता,सुख, बन्धुसमागम, धनलाभ, मित्रलाभ,जय,भूमि आदि का लाभ करे।।६६।।६७।।

मंगल पर दृष्टिफल-मंगल पर पापदृष्टि से भूमि, धन, धान्यहानि तथा शत्रुदृष्टि हो तो बंधन, रोग, कलह करे। शुभदृष्टि हो तो विजय, पराक्रम, देश, भूमि, मित्रवर्ग से सुख हो। मित्रगृहदृष्टि होतो धनप्राप्ति हो।।६८।।६९।।

बुध पर दृष्टिफल-बुध पर शुभदृष्टि हो तो विद्यालाभ, लिपिज्ञान हो। मित्रदृष्टि से धन, वस्त्र, रत्न लाभ हो। शत्रुदृष्टि हो तो अतिसार रोग, दुर्बुद्धि, उद्योग तत्पर रहे। पापग्रह दृष्टि से महाक्लेश तथा कुक्षिशूल हो।।७०।।७१।।

गुरुः शभैस्तु संदृष्टो धर्मकार्योद्यमं सुखम् ।। जयं धनायतिर्मित्रैदारक्षेत्रादिसंग्रहम् ।।७२।। शत्रुभिः कुष्ठरोगं च त्वग्दोषकलहं रणम् ।। पापैः पराजयं बुद्धेः केदारादिवियोजनम् ।।७३।। शुभैः शुक्रः सुखं योषालाभं भूषा धनायतिम् । मित्रैस्तु पट्टबंधादि देशलाभादि चाखिलम् ।।७४।। पापैः पराजयं योषावियोगं धननाशनम् ।। शत्रुभिर्याप्यरोगं च मूत्रकृच्छ्रादिकं तथा ।।७५।। मंदः पापैस्तथा कुक्षिरोगं बन्धनकं क्षयम् ।। शत्रुभिः शत्रुबाधां च पराभवमथाभयम् ।।७६।।

गुरु पर दृष्टिफल-गुरु पर शुभ दृष्टि हो तो उद्योग, सुख, जय, धन प्राप्ति हो। मित्रदृष्टि से स्त्री भूमिका लाभ हो। शत्रुदृष्टि हो तो कुष्ठ, त्वचारोग, कलह, संग्राम हो।।७२।।७३।।

शुक्र फल-शुक्र पर शुभदृष्टि से सुख, स्त्रीलाभ, अन्न धन की प्राप्ति करे। मित्रदृष्टि से भूमि आदि का लाभ हो। पापदृष्टि हो तो पराजय, स्त्रीवियोग, धननाश हो। शत्रुदृष्टि हो तो कष्टसाध्य रोग मूत्रकृच्छ्रादि हो।।७४।।७५।।

शनि फल-पापदृष्टि से-कुक्षिरोग, बन्धन, क्षय हो। शत्रुदृष्टि से बाधा, पराभव, रोग हो। शुभदृष्टि से रोग दूर हो। मित्रदृष्टि से बन्धु समागम हो।।७६।।

शुभैररोगतां मित्रैर्दृष्टो बंधुसमागमम् ।। रवौ स्थानबले पूर्णे स्वदेशे विद्यया बली ।।७७।। चंद्रे प्रभुतया भौमे ग्रामण्येन बुधे सति ।। श्रौतया विद्यया वाऽऽर्यलिपिलेखनकर्मणा ।।७८।। जनैर्धनैरमात्येषु बुद्धया च बलवान्गुरौ ।। यद्वा स्वदेशराजस्तु कार्येणैव बली मतः ।।७९।। शुक्रे स्वदेशमुख्यो वा त्वाधिपत्येन योषिताम् ।। मंदे भृतकदासानां मुख्यः स्याद्बलवानपि ।।८०।। उक्तैस्तु पीडितः प्रेष्यः स्थानवीर्योनितेषु तु।।समन्यूनाधिकाद्वीर्याद्दृष्टोत्कर्षात्फलं वदेत् ।।८१।।

सूर्यादि ग्रहों का स्थान बल से फल-सूर्य स्थान बल से पूर्ण बली हो तो अपने देश में ही विद्याबल से प्रख्यात हो। चन्द्रमा बली हो तो अधिकारी पद प्राप्त हो। मंगल बली हो तो ग्रामाधिकारी हो। बुध बली हो तो वेदविद्या तथा लेखन कर्म से प्रसिद्ध हो। गुरु बली हो तो निज देश में प्रतिष्ठित हो। शुक्र बली हो तो स्वदेश में प्रधान हो। शनि बली हो तो शरीर से पुष्ट तथा वैतनिकों में मुख्य हो, बलहीन हो तो दासत्व करे।।७७ से ८१।। तक।।

दिग्बलेनाधिके सूर्ये वाणिज्येन धनायतिः ।। यशश्च धनवृद्धिश्च चन्द्रे तु राजसेवया ।।८२।। भौमे तु सेवया ख्यातिर्वेदाभ्यासेन सर्वदा ।। बुधे धनायतिः कृष्या यशः स्याद्बुद्धिमत्तया ।।८३।। गुरौ धनायतिस्तेन वीर्येण धनशुभ्रता ।। राजकार्येण शुक्रे च वदान्यत्वेन वा यशः ।।८४।। मंदे दासाधिपत्येन धनायतिररिंदमात् ।। कालायनबलाधिक्ये रवौ भौमे शनैश्चरे ।।८५।। मंत्रोपदेश-विधिना पाखंडिपदसंश्रयात् ।। दासभावेन कृष्णादौ कृषितो विद्ययान्यथा ।।८६।। गुरौ शुक्रे बुधे पाथोनिधिजे चात्रिसंभवे ।। विद्यायां बाधने संख्याबलदिग्बलवृद्धितः ।।८७।। नानाविधायतिः प्रोक्ता इति चेष्टाधिकेषु तु ।। कविद्गवो यथापूर्वं विशेषादेव निर्णयः ।।८८।। बलिष्ठो दायरश्म्युक्तफलं सर्वं करोति वै ।। न्यूनाधिकेनुपातेन फलमेव विचिंत्यताम् ।।८९।।

सूर्यादिग्रहों का दिग्बल से फल-सूर्य दिग्बल से पूर्ण बली हो तो व्यापार से धनी और यशस्वी होता है। चन्द्रमा दिग्बल में पूर्णबली हो तो राजसेवा से प्रतिष्ठित और मंगल पूर्णबली हो तो वेदाभ्यास तथा सेवा से सुखी हो। बुध पूर्णबली हो तो बुद्धिमता से यशस्वी हो और गुरु पूर्णबली हो तो धनी और कीर्तिमान् हो। शुक्र दिग्बल में पूर्णबली हो तो दानशीलता से यशस्वी हो। शनि पूर्णबली हो तो शूरवीरता से ख्यातिमान् होता है।। कालबल तथा अयनबल से अधिक होने का फल—सूर्य, मंगल, शनि, कालबल तथा अयन बल में अधिक हों तो पाखण्ड तथा दास्य वृंत्ति से निर्वाह हो। क्षीण चन्द्र बली हो तो खेती से निर्वाह। बुध, बृहस्पति, शुक्र तथा पूर्ण चन्द्र बली हों तो विद्या, धन से निर्वाह हो। सूर्यादि सभी ग्रह चेष्टाबल में बलवान् हों तो अनेक विद्या से धन की प्राप्ति होती है।।८२-८९।।

सौम्येष्विष्टफलाधिकेषु नितरां श्रीमान्सुशीलो गुणी।मित्रेष्वेवमतीव धर्मनिरतो दाता सुखी सत्त्ववान् ।। पापेष्वेवमथापि पापनिरतः शत्रुष्वथो शत्रुभि-र्वीर्येणाथ पराजयो जय इमान्प-र्यायतःप्राप्नुयात् ।।९०।।

ईष्ट, कष्ट, बलाधिक का फल-बुध, गुरु, शुक्र तथा चन्द्रमा ईष्ट बल में अधिक हों तो महाधनी, सुशील, धर्मरत, दानशील, सुखी और बलवान् होता है। पापग्रह ईष्टबल में अधिक हो तो पापबुद्धि, शत्रुओं से पराजय पाता है।।९०।।

अधिकेष्वशुभेष्वेवमनिष्टाख्यफलानि तु ।।९१।। व्याधिभिः कलहैर्मित्रैः पीडयते नात्र संशयः ।। एवं पापेषु दुश्चेष्टः पातकी भवति ध्रुवम् ।।९२।। शत्रुष्वेवं सदा रोगी मित्रैर्बन्धुविवर्जितः ।। सर्वद्वेष्टृबलाधिक्ये सर्वत्राफलदो ग्रहः ।।९३।। शुभेषु च फलेष्वेव स्पष्टमेव फलप्रदः ।। अत्यनिष्टफलः खेटः शुभेषु त्वफलप्रदः ।।९४।। अनिष्टफलदोऽन्येषु खेटः सर्वत्र सर्वदा ।। स्वोच्चादिस्थानषट्स्थाः स्युस्तथा दिग्वर्गगा अपि ।।९५।। क्षेत्रपुत्रकलत्रादिधनधान्यसमृद्धिदाः ।। यदि मित्रादिवर्गस्था धनधान्यविवर्द्धनाः ।।९६।।

अन्य फल-पापग्रह बलाधिक हों तो रोगी,पातकी, दुश्चेष्टावान् होता है। शत्रुगृही हो तो सदा रोगी, मित्र-बन्धु रहित, सर्व द्वेषी होता है। उच्च राशि, मूल त्रिकोण, स्वक्षेत्र, मित्रक्षेत्र अतिमित्र क्षेत्र अथवा समक्षेत्री हो तो स्त्रीपुत्र, धनधान्य की समृद्धि होती है।।९६।।

व्याधिदुर्गतिदा प्रोक्तादशारम्भे तु शीतगोः ।। स्वोच्चादि संस्थिता दायप्रारंभे शुभदा दशा ।।९७।। अन्यथाऽशुभदा प्रोक्ता प्रारंभे ज्योतिषां दशा ।। केंद्रधूम्रगताः खेटा दशायां शुभदाः सदा ।।९८।। द्रव्यकर्मगुणा यस्य स्वभावाः कथिताः पुरा ।। ते सर्वे स्वदशाकाले योज्या भावदृगादिषु ।।९९।। भावदृष्टिबलेष्टानि फलानि कथितानि च ।।भावाध्यायोक्तरव्यादि-फलान्यत्रैव योजयेत् ।।१००।।

दशा का फल-चन्द्रमा की दशा आरम्भ में व्याधि, दुर्गति देती है। इसी प्रकार उच्चादि ६ स्थानों में जो ग्रह हों उनकी दशा प्रारम्भ में शुभ फल देनेवाली होती है। अन्यथा अनिष्टफल देनेवाली होती है। केन्द्रादि शुभ स्थान में स्थित ग्रह की दशा अपनी दशा के सम्पूर्ण काल में शुभ फल देनेवाली है। सूर्यादिग्रहों के गुण, कर्म, स्वभाव, द्रव्य जो पूर्व कहे हैं उनका विचार करके अपने २ दशाकाल में फल की योजना करनी चाहिए। भावबल, षड्वर्ग बल, इष्टकष्टबल का फल भी दशाकाल में ही होता है।।९७ से १०० तक।।

आदौ बलफलं प्रोक्तं ततो दृष्टिफलं स्मृतम् ।। ततो भावफलं प्रोक्तमिष्टानिष्टफलावहम् ।।१०१।। चेष्टाबलफलं चादौ स्थानवीर्यं ततो भवेत् ।। दिग्बलं च ततः प्रोक्तं कालायनबले ततः ।।१०२।।

इति श्रीबृहत्पाराशरहोराशास्त्रे उत्तरखण्डे अब्दचर्यादि फलवर्णनं नाम ऊनविंशोऽध्यायः ।।१९।।

बलों का क्रम-प्रथम निसर्गबल मुख्य है। तदनन्तर दृष्टि बल, वाद भावबल, इष्टानिष्ट

वल, चेष्टा बल, स्थान वल, कालवल, अयनवल ये उत्तरोत्तर बलवान् हैं।।१०१।।१०२।।

इति श्रीबृ० पा० हो० शा० उत्तरखण्डे भाव प्रका० फलवर्णनंनाम
ऊनविंशोऽध्यायः ।।१९।।

अथ मासचर्याफलमाह

भावांशैः समतां गतः खलु खगः पूर्णं विधत्ते फलं संधिस्थो न फलप्रदोऽन्तरगतैस्त्रैराशिकेनैव च ।। भावन्यूनमथ ग्रहस्य गुणयेदंशादिकं चार्णवैर्हित्वा चास्य च संधितोऽधिकमथो प्रोक्तं फलं भावजम् ।।१।। ऊर्ध्वमुखो रवियुक्तो राशिसमेतस्त्वधोमुखो ज्ञेयः ।। तिर्यङ्मुखोऽखिलयुतो राशिभावाः परेऽप्येवम् ।।२।।

मासचर्याफल

भावफल-जो ग्रह जिम भाव में है उस भाव के अंश के समान ग्रह के अंश हों तो पूर्ण फल होता है। संधि के अंश के समान अंश हो तो निष्फल जानना। भाव के अन्य अंशों में ग्रह हो तो अनुपातसे फलकी न्यूनाधिकता जानना। भावांशसे ग्रहांश कम हों तो ४ से गुणा करना। भावांश से ग्रहांश अधिक हों तो ऋण, नहीं तो धन करना, तो भावफल स्पष्ट होता है। जो भाव सूर्ययुक्त हो वह भाव ऊर्ध्व मुख, ग्रह रहित हो तो अधोमुख, अन्य ग्रहयुक्त हो तो तीर्यङ्मुख होता है।।१-२।।

अन्यजातीययोगे तु तत्तद्भावफलं वदेत् ।। स्वजातीयेषु योगेषु त्रिंशाद्यंशा भवंत्युत ।।३।। तत्त्वमाकृतिरेकाक्षिच्छंदस्तत्त्वं चतुस्त्रयः ।। एकोनविंशतिच्छन्दो नवाक्षी षट् त्रयस्तथा ।।४।। वेदेषवो नृपाः स्थाने भावसंख्याः प्रकीर्तिताः ।। एकत्रिंशत्त्रयस्त्रिंशद्भानि त्रिंशत्तथैव च ।।५।। एकत्रिंशद्द्विनेत्रे च मुनिरामाः खपावकाः ।। भानि त्रिंशतिरेकद्वौ खवेदाः करणस्य तु ।।६।।

भाव का जो शुभाशुभ फल भाव दृष्टि के अनुसार पूर्णफल होने पर ३० अंश जानना।।३।।

बारह भावों के स्थानाङ्क-क्रम से १२ भावों के ये स्थानाङ्क हैं ३१।२२।२१।२६।२५।३४।१९।२६।२९।३६।५४।१६।४।।

भावों के कर्णाङ्क क्रम से ३१।३३।२७।३०।३१।२२।३७।३०।२७।२०।२१।४०।। श्लो० ५।६।।

विषमायां क्रमादोजे युग्मे स्यातां शुभाशुभे ।। समायां भवतस्तद्वत्पापसौम्यफले क्रमात् ।।७।। ओजे व्याधिः समे हानिर्यावत्तु दशकं भवेत् ।। परतः पंचकं चौजे समे व्याधिरथान्यथा ।।८।। यावत्तु दशकं प्रागवत्ततस्तद्वत्फलं वदेत् ।। शिरोरोगाक्षिरोगाश्च रक्तासृक्कामलाज्वरः ।। ग्रहणी शीतको मेहप्लीहो गुल्मलतः क्रमात् ।।९।। रत्नैर्धान्यैश्च हेमैश्च गोभिः क्षेत्रैश्च राजभिः ।। दासैश्च महिषैरुष्ट्रैर्गजाश्वैर्वृद्धयः स्मृताः ।।१०।।जात्या देशस्य कालस्य स्वानुरूपं फलं वदेत् ।। तत्तद्भावानुसंज्ञं च ग्रहाद्भावात्फलं वदेत् ।।११।। उच्चादिषु नवस्वेव कलांशादिषु यत्फलम् ।। भाग्याध्यायोक्तमप्यत्र योजयेत्तु विशेषतः ।।१२।।

इति श्रीबृहत्पाराशरहोराशास्त्रे उत्तरखण्डे मासचर्याफल वर्णनंनाम विंशोऽध्यायः ।।२०।।

स्थानकरण के सम विषम संख्या के अनुसार शुभाशुभ फल-विषम राशि में स्थान संख्या विषम हो तो शुभ होती है। सम राशि में स्थान संख्या सम हो तो अशुभ होती है। और विषम राशि में कर्ण संख्या सम हो तो अशुभ और विषम हो तो शुभ होती है।।७।। विषम राशि में स्थान करण संख्या १० तक हो तो व्याधि का नाश हो। सम राशि में १० तक हो तो हानि। १५ तक व्याधि, २५ तक सम राशि में व्याधि, विषम राशि में हानि।।८।। विषम राशि में स्थान करण संख्या २६ हो तो सिरदर्द, २७ में नेत्र रोग, २८ में रक्त विकार, २९ में कामला ज्वर, ३० में ज्वर, ३१ में संग्रहिणी, ३२ में शीतज्वर, ३३ में प्रमेह, ३४ में प्लीहा, ३५ में गुल्म रोग होता है।।९।। सम राशि में स्थान करण संख्या ३६ हो तो रत्न बुद्धि, ३७ में धान्य वृद्धि, ३८ में सुवर्ण वृद्धि, ३९ में पशु वृद्धि, ४० में भूमिवृद्धि, ४१ में राजा से लाभ, ४२ में दास वृद्धि, ४३ में पशु वृद्धि, ४४ में निकृष्ट पशुवृद्धि, ४५ में उत्कृष्ट पशु वृद्धि ।।१०।। स्थान करण संख्या का फल देश, काल, जाति, स्वरूप, स्वभाव आदि के अनुसार समझना चाहिए। पूर्वोक्त उच्चादि स्थानगत फल, कलांशादि स्थित ग्रह फल, भाग्याध्यायोक्त सर्व फल स्थान करण विचार में भी युक्त करना चाहिए। ।।७-१२।।

इति श्रीबृ० पा० हो० शा० उत्तरखण्डे भा० प्र० मासचर्याफल
वर्णनं नाम विंशाऽध्यायः ।।२०।।

अथ दिनचर्यादिफलमाह

अर्केन्दुगुरवः शुक्रः क्रमादन्ये बलक्रमात् ।। भवंति स्थानदाः खेटाश्चत्वारश्च यदैकदा ।।१।। धनादीनां यथा लब्धिः पंच चेत्पूज्यतायुतः ।। आरोग्यं वस्त्रलाभश्च षट्सु पट्टस्य बन्धनम् ।।२।। सप्त चेद्राज्यलाभः स्यादेवं करणदा यदि ।। धनहानिस्ततो व्याधिस्ततस्तु विपदादयः ।।३।। सप्तभिर्मरणं प्रोक्तमक्षाभावे मृतिर्भवेत् ।। तत्र तिष्ठति चेत्खेटे त्वन्यस्मिन्यदि वामतः ।।४।। उच्चसंख्याधिका अंशाश्चंद्रस्य स्थानदाः परे ।। शुभाख्याः शुभदाः प्रोक्ता राशिनात्र क्रमात्फलम् ।।५।।

स्थानादिबल से ग्रहों का फल-सूर्य, चन्द्रमा, गुरु, शुक्र और मंगल, बुध, शनि, एक समय स्थानप्रद हों तो धन प्राप्ति। पंचम भाव में स्थानप्रद हों तो पूज्य, लाभ, धन प्राप्ति होती है।। ६ ग्रह स्थानप्रद हों तो राजा होता है। ७ ग्रह रेखाप्रद हों तो राज्य लाभ होता है।

करणफल-४ ग्रह करणप्रद हों तो धन हानि, ५ हों तो व्याधि, ६ हों तो विपत्ति, ७ हों तो मृत्यु, करण का सर्वथा अभाव हो तो भी मृत्यु। चन्द्रमा का उच्चांश ३ है। इससे अधिक हो तो स्थानफल दायक जानना।।१ से ५ तक।।

होराशास्त्रमिदं सर्वं भाषितं तव सुव्रत ।। पुण्यं यशस्यं धन्यं च त्रिकालज्ञानकारणम् ।।६।। विनामनुतपस्ये च शास्त्रज्ञानेन केवलम् ।। हस्तामलकवत्सर्वं जगतां लोकयेत्फलम् ।।७।। पुत्राय शिष्याय च धीमते च तपस्विने मंत्रविदे च दात्रे दद्यादिमंशास्त्रमहासमुद्रं यथैवशम्भुः शिशवेपयोधिम् ।।८।। बुद्धिहीनाय दाम्भाय दांभिकाय त्वमर्षिणे ।। न दद्याद्यदि दद्याच्चेद्विद्या स्वस्य विनश्यति ।।९।। एवं ते कथितं शास्त्रं त्वयि स्नेहाद्द्विजोत्तम ।। जातकांशं विद्यांशं किं भूयस्त्वं श्रोतुमिच्छसि ।।१०।।

इति श्रीबृहत्पाराशरहोराशास्त्रे उत्तरखण्डे दिनचर्यादिफलवर्णनं
नाम एकविंशोऽध्यायः ।।२१।।

शास्त्र का फल और उपसंहार-हे मैत्रेय! यह होराशास्त्र तुमको कहा, यह पवित्र, कीर्तिदाता, धनधान्य सम्पादक, भूत, भविष्य, वर्तमान काल का शुभाशुभ सूचक है। इसका ज्ञान प्राप्त करके मन्त्रादि द्वारा देवता की आराधना करे। हथेली पर रखे हुए आंवले के समान सम्पूर्ण जगत् का शुभाशुभ फल इस शास्त्र से जाना जाता है। यह शास्त्र आज्ञाकारी पुत्र को, योग्य शिष्य को, मंत्रवेत्ता पुरुष को देना चाहिए। यह शास्त्र समुद्र के समान अगाध है। यह शास्त्र दम्भी, क्रोधी, दुष्ट को नहीं देना चाहिए, देने से विद्या नष्ट होती है। पूर्वोक्त दोष रहित बालक भी हो तो यत्न से पढ़ाना चाहिए। जैसे कि शिवजी ने तपस्वी अभिमन्यु को दिया। हे मैत्रेय! तुम्हारे स्नेह से यह जातकांश तुमको कहा और क्या सुनने की इच्छा है सो कहो ।।६-१०।।

इति श्रीवृ० पा० हो० शा० उत्तरखण्डे भा० प्र० दिनचर्याफलवर्णनं
नाम एकविंशोऽध्यायः ।।२१।।

अथ प्रश्नप्रकरणाह

मैत्रेय उवाच-भगवन्प्रश्नशास्त्रं तु सूचिकानांप्रकाशितम् ।। कलौ युगे तु मंदानां यज्ज्ञातुं तद्वदस्व मे ।।१।। कृते युगे तु धर्मस्य पूर्णत्वात्तपसान्विताः ।। सर्वे जानंति भूतं च भवद्भावि द्विजोत्तम ।।२।। त्रेतायां तपसा युक्ताः केचिज्जानन्ति वै द्विजाः ।। पश्यन्ति द्वापरे शास्त्रज्ञानेन तपसाऽपि च ।।३।। कलौ युगे तु धर्मस्य पादमात्रव्यवस्थितिः ।। तपः शक्त्या तु तज्ज्ञातुं न शक्ता मानवा भुवि ।।४।।

प्रश्नप्रकरण

मैत्रेयजी ने कहा-हे भगवन्! आपने जो प्रश्नज्ञान का उपाय कहा वह अतिदूरूह सूक्ष्मबुद्धि गम्य है, अतः इस कलियुग में उसका ज्ञान होना कठिन है। जो सरल प्रश्नशास्त्र विषयक ज्ञान हो सो कहिये।।१।। श्रीपराशरजी ने कहा-हे मैत्रेय! सत्ययुग में धर्मपूर्ण होने से प्रायः सभी तपस्वी होते थे, अतः भूत भविष्य का ज्ञान रहता था, त्रेता में भी कुछ तपस्वी शास्त्र बल से भूत भविष्य जानते थे, द्वापर में कुछ तपोबल और शास्त्रज्ञान से युक्त थे अतः भूत भविष्य ज्ञान में समर्थ थे, परन्तु इस कलियुग में धर्म की तो १ पादमात्र स्थिति है, अतः तपोबल और ज्ञानबल क्षीण हुए मनुष्य शास्त्रज्ञान में कुशल नहीं हैं। अतः तुम्हारा यह प्रश्न उचित ही है।।२।।३।।४।।

तथाऽत्र परमः शंभुर्लोकानुग्रहकांक्षयाः ।। लक्षीकृत्य निजां शक्तिं विद्यामाधात्स ईश्वरः ।।५।। कलावधि च भक्तानां त्रिकालज्ञानदायिनी ।। वेदादि वाग्भवं गौरिवदद्वयमथो गिरि ।।६।। परमैश्वर्यसिद्ध्यर्थं वाग्भवं स्यादयं मनुः ।। सर्वज्ञेति पदं पूर्वं नाथ तं पार्वतीपते ।।७।। सर्वलोकगुरो पश्चाच्छिवेति द्वयमक्षरम् ।। शरणं तु पदं पश्चात्त्वां प्रपन्नोऽस्मि तत्परम् ।।८।।

अतः शास्त्रज्ञान के लिये उपाय कहते हैं कि इस पृथ्वी में मन्दबुद्धि पुरुषों के ज्ञान के लिए महादेवजी के परोपकारार्थ 'शिव शक्ति' दोनों के मन्त्र का निर्माण किया। वे मन्त्र ये हैं-"**ॐ ऐं गौरि वद २ गिरि परमैश्वर्य सिद्ध्यर्थं ऐं ।।**" यह शक्ति मन्त्र और "**ॐ सर्वज्ञ नाथ पार्वती पते शिव, शरणं त्वां प्रपन्नोऽस्मि पालय ज्ञानं प्रदापय।**" यह शिव मन्त्र है।।५-८।।

पालयेति पदं ज्ञानं प्रदापय ततः परम् ।। ऋषिस्तु दक्षिणामूर्तिर्गौरी परमेश्वरी तथा ।।९।। सर्वज्ञश्च शिवो देवो गायत्री च्छंद ईरितम् ।। अनुष्टुप् च षडंगं स्याद्वाग्भवेन हृदादि च ।।१०।। अनेनाभ्यां द्विजश्रेष्ठ बुद्धिस्तु विमला भवेत् ।। जपमात्रेण सिद्धिः स्याद्दैवज्ञत्वं प्रकाशते ।।११।। उद्यानस्यैकवृक्षाधः परे हैमवते द्विज ।। क्रीडंतीं भूषितां गौरीं शुक्लवस्त्रां शुचिस्मिताम् ।।१२।। देवदारुवने तत्र ध्यानस्तिमितलोचनम् ।। चतुर्भुजं त्रिनेत्रं च जटिलं चंद्रशेखरम् ।।१३।।

दोनों मन्त्रों के छन्द आदि "**अनयो र्मंत्रयोः दक्षिणा मूर्ति र्ऋषि गौरी परमेश्वरी सर्वज्ञः शिवश्च देवते गायत्र्यनुष्टुभौ छन्दसी मम त्रिकालदर्शक ज्योतिः शास्त्रज्ञानप्राप्तये जपे विनियोगः ।।**" यह विनियोग करके '**ऐं**' इस बीज मंत्र से ही करन्यास, अंगन्यास करे। इन दोनों मन्त्रों के पुरश्चरण करने से बुद्धि निर्मल होकर इस शास्त्र का यथार्थ ज्ञान होगा।।९।।१०।।११।। न्यास के बाद मूलोक्त श्लोक पाठ करके ध्यान करे। यथा-हिमालय पर्वत पर अति सुन्दर बगीचे में बट वृक्ष के नीचे उत्तम आसन पर स्थित शोभायुक्त, श्वेतवस्त्र सम्पन्न, हंसमुख, श्रीभगवती गौरी, तथा ध्यानस्थ, त्रिनेत्र, चतुर्भुज भालचन्द्र, जटाधारी, सर्वजगन्नियंता, देवाधिदेव महादेव साक्षात् परब्रह्मस्वरूप शिव का ध्यान करे।।१२।।१३।।

शुक्लवर्णं महादेवं ध्यायेत्परममीश्वरम् ।। द्विविधं गणितं ज्ञात्वा शाखास्कंधं विमृश्य च ।।१४।। होरास्कंधस्य शकले श्रुत्वार्थमवधार्य च ।। वाग्मी द्विजवरो यः स्यान्न वंध्या तस्य भारती ।।१५।। अलुब्धोः नैष्ठिकः शुद्धो विनयप्रश्रयान्वितः ।। रत्नं स्वर्णं धनं वस्त्रं पुष्पमूलफलानि तु ।।१६।। दैवज्ञपुरतो दत्त्वा पृच्छेदिष्टं प्रियान्वितः ।। अथ प्राङ्मुख आसीनः शुचिर्दैवविदग्रतः ।।१७।। तिर्यगूर्ध्वाश्रितस्त्रस्तु रेखा रज्जुसमा लिखेत् ।। एकीकुर्यात्तु चत्वारि मध्यस्थानि पदानि च ।।१८।। तत्र पद्मं लिखेद्रेखापद्ममध्यं सकर्णिकम् ।। ईशान्यकोष्ठादारभ्य मीनाद्या राशयः क्रमात् ।।१९।। मेषवीथी वृषाद्यास्तु कौर्प्याद्या मिथुनस्य तु ।। वीथयो मीनमेषौ तु तुलाकन्ये वृषस्य तु ।।२०।। आरूढाद्वीथिभं यावत्तावच्छत्रं तु लग्नतः ।। आरूढराशिर्लग्नं चेच्छत्रं चाऽपि भवेत्तथा ।।२१।। जन्मलग्नं समासाद्य यद्यत्प्रोक्तं तु जातके ।। तत्सर्वं प्रश्नलग्नेन प्रश्नकालाद्वदेद्बुधः ।।२२।।

इस प्रकार उपासना करके गुरुद्वारा भूगोल, खगोल की गणित का अभ्यास करके इस होराशास्त्रका जातकफल सम्बन्धी ज्ञान प्राप्त करें वह सर्वहितैषी,मिष्टभाषी ब्राह्मण दैवज्ञ और त्रिकालदर्शी होता है। उसकी वाणी मिथ्या नहीं होती।।१४।।१५।। इसी प्रकार पूछनेवाला भी निष्ठावान्, निष्कपट, नम्र, लोभरहित होकर द्रव्य (भेंट) रखकर, यदि दरिद्र हो तो फल, पुष्प आदि दैवज्ञं को पूजित करके प्रसन्न चित्त से प्रश्न करे।।१६।। दैवज्ञ को चाहिए कि-पूर्वाभिमुख बैठकर प्रथम राशिचक्र लिखे, और आरूढ लग्न का विचार करे। सो इस रीति से कि-पृच्छक जिस दिशा में बैठा हो वह आरूढ लग्न जाने या पृच्छकं जिस राशि का-स्पर्श करे वह आरूढ लग्न जाने और वृषादि चार राशि में मेषबीथी और वृश्चिकादि चार राशि मिथुन

बीथी तथा शेष राशि वृषबीथी में जानना। आरूढ लग्न से प्रश्नलग्न तक जो संख्या हो उतनी संख्या की राशि बीथी में देखना, उस बीथी की राशि छत्र संज्ञक होती है।।श्लोक० १७ से २२ तक।।

वीथीज्ञानचक्रम्		
२	८	१
३	९	१२
४	१०	७
५	११	६
मेष	मिथुन	वृष

अथ राशिचक्रम्			
१२	१	२	३
११			४
१०			५
९	८	७	६

यत्कालावधि लग्नं तत्तत्कालावधि चेत्स्थिते ।। तेषां बलवतां चैव निर्णयः स्वायुषः स्मृतः ।।२३।। आद्यद्रेष्काणमंत्यं च मृत्युदं च क्रमाद्भवेत् ।। मृगादिकर्कटानां च मीनस्यारूढलग्नतः ।।२४।। लग्ने पृष्ठोदये क्रूरवेश्मास्तव्ययगा यदि ।। धने धर्मे कुजे मंदे चंद्रे रंध्रे मृतिर्भवेत् ।।२५।। पापैर्दुरुधरे जाते लग्नकामसुहृत्स्थिते ।। चंद्रेऽर्के च विलग्नस्थे म्रियते व्याधिना भृशम् ।।२६।।

आरूढलग्न से आयु निर्णय तथा द्रेष्काण फल–तत्काल लग्न से आयु का निर्णय करे। मकर, वृश्चिक, कर्क, मीन इनका आरूढ लग्न से आद्यन्त द्रेष्काण हो वह लग्न मृत्युकारक होता है।।२३।।२४।। प्रश्नकाल में पृष्ठोदय लग्न हो लग्न से पापग्रह ४।७।१२ स्थान में या २।९ में शनि मंगल हो और ८ में चन्द्रमा हो तो मृत्युकारक होता है।।२५।।

अन्य योग–पापग्रहों से दुरुधरा योग हो, ४।७ में चन्द्रमा और लग्न में सूर्य हो तथा प्रश्न समय में राहुकाल का समायोग हो तो व्याधि से मृत्यु होती है।।२६।।

राहुकालसमायोगे मरणं निश्चितं भवेत् ।। मेषाद्व्युत्क्रमतो राहुर्वृषात्कालः क्रमाच्चरेत् ।।२७।। राशौ राशौ तु पंचाशद्भोगकालो विनाडिकाः ।। अर्कोदयादितश्चोभौ भुंजाते च पुनः पुनः ।।२८।। एकदृष्टचब्धिरामेषु षडष्टौ नाडिकाः क्रमात् ।। अर्कवारादितो राहू रात्रावेवमुदीरितः ।।२९।। राहुरुत्क्रमशः प्राच्याः कालश्च क्रमशश्चरेत् ।। उभौ सार्धविनाडचेन राशिषु द्वादशस्वपि ।।३०।। इंद्रेंद्वग्निनिशाचरशमवारीशवायवः ।। रुद्रचंद्रजलेशेशपापकेंद्रयमस्थितः ।।३१।। रक्षो वायुस्ततोऽग्नीशयमवारुणराक्षसाः ।। वायुसोमशचीनाथरक्षोग्निजलपेंदवः ।।३२।। वाय्वीशेंद्रयमाः पश्चाद्युग्मेंद्रौ च निशाचरः ।। मरुद्वरुणचंद्रेशपावको वरुणो यमः ।।३३।। वायुरुद्रशशींद्राग्निराक्षसाश्च ततः परम् ।। वायुरक्षः शशींद्रेशपावकांतकवारुणाः।।३४।।

राहु काल समायोग का विचार–'राहु' की गति वक्र है और 'काल' की गति मार्गी है। सूर्योदय

से ५०-५० पल प्रतिराशि का भोग करते हैं। अतः एक राशि पर दिन रात में बारम्बार समायोग होता है। सूर्यादि चारों में १।२।३।४।५।६।८ घटिकाओं के हिसाब से 'राहु' पूर्व आदि दिशाओं में विपरीत क्रम से 'काल' ग्रह मार्गी क्रम से २॥-२॥ घटी (या १-१ घंटा) चलते हैं। वारके क्रम से दिशा का संचार क्रम-रविवार को पूर्व से, सोमवार को उत्तर से, मंगल को आग्नेय से, बुध को नैर्ऋत्य से, गुरु को दक्षिण से, शुक्र को पश्चिम से, शनि को वायु कोण से १-१ घंटा क्रम, व्युत्क्रम से चलते हैं।। रविवार को पूर्व उत्तर, आग्नेय, नैर्ऋत्य, दक्षिण, पश्चिम। सोमवार को ईशान, उत्तर, पश्चिम, ईशान, दक्षिण। मंगल को नै० वा० आग्ने० ईशा० दक्षि० क्रम से। बुध को-वा० उत्त० पू० नै० द० अग्नि० प० उत० क्रम से। गुरुवार को वा०ई० पू० द०प०नै० इस क्रम से । शुक्रवार को वा०प०उ०ई०अ०प०द० इस क्रम से, शनिवार को वा०ई०उ०पू० अग्नि० नै० वा० इस क्रम से अथवा-उ० पू० ई० आग्ने० द० प० इस क्रम से चलते हैं।।२७-३४।।

अर्कवारादितो वामं राहुः संचरति क्रमात् ।। रुद्रः समीरः सोमाग्नी यमोऽथ निर्ऋतिर्जलम् ।। नक्षत्रेऽपि च वारे च तिथौ चोत्क्रमतः क्रमात् ।।३५।। अंतिमादादिमाद्राहुः कालश्च चरतस्तथा ।। द्वयोर्योगे तु मरणमेकस्मिन्व्याधिरुच्यते ।।३६।।

नक्षत्र, तिथि, वार क्रम से संचरण-

संचरण दिशाओं का क्रम-ईशान, वायु, उत्तर, आग्नेय, दक्षिण, नैर्ऋत्य, पश्चिम इन ७ दिशा विदिशाओं में अश्विनी से वर्तमान नक्षत्र तक जानना। राहु अंतिम दिशा से उलटा और काल आरंभ से क्रम से चलता है। नक्षत्र, तिथि वार पर चलाना। यदि वर्तमान (प्रश्न दिन) दोनों का संयोग हो तो मृत्यु तथा एक का योग हो तो व्याधि जानना।।३५।।३६।।

नृपा मूर्छा शरास्तत्त्वं तिथिषोडश पंच च ।। द्वितीये त्वष्टमे भावस्त्वंतरे त्वनुपाततः ।।३७।। नागाब्देषु गुणा रुद्रा वाजिवेदांगपंक्तयः ।। दशपंचाष्टका मेषाद्रश्मयः संप्रकीर्तिताः ।।३८।। एकयोगे तु सर्वेषु व्याधिर्द्वाभ्यां भवेन्मृतिः ।। लक्ष्मीयोगेषु सर्वेषु व्याधिस्तस्य नवाऽपि वा ।।३९।। वैधृतौ च व्यतीपाते सार्पभेंतिमसंज्ञिते ।। कुलीरे विषनाडीसु सूर्यदुष्टेषु पंचसु ।।४०।। पापयुक्ते च नक्षत्रे राशौ तत्संयुतेऽपि च ।। संधौ च मासशून्यर्क्षं तिथिराशिषु जन्मभे ।।४१।। व्ययाष्टमे च क्षीणेंदौ शत्रुग्रहनिरीक्षिते।। पादं षष्ठं च जंघां च जानु नाभिं च गुल्फके ।।४२।। कर्णौ च चक्षुषी भालमास्यं कंठं स्पृशेद्यदा ।। व्याधिर्वा म्रियते तद्वन्मृतिं राशिं स्पृशेत्तु वा ।।४३।। अष्टमर्क्षं स्पृशेद्यद्वा कलांशादिषु वा तथा ।। विपद्वधप्रत्यृक्षे च वैनाशं ऋक्षमेव वा ।।४४।। संस्पृशेत्प्रश्नकाले तु व्याधिर्वा तस्य वा मृतिः ।।४५।।

१२ भावों की रश्मि- द्वि० १६, तृ० २१, चं० ५, पं० २५, ष० १५, स० १६, अ० ५ रश्मि हैं, अन्य भावों की पूर्व कथित लेना। बारह राशियों की रश्मि-क्रम से-८।८।५।३।११।७।४।६।१०।१०।५।८ हैं।।अपवाद।। ये जो मृत्युयोग कहे गये हैं इनमें यदि प्रश्नलग्न में शुभयोग या धनयोग भी हो तो मृत्यु न होकर केवल व्याधि या सुख ही होता है।।३७।।३८।।३९।। यदि प्रश्नकाल में वैधृति, व्यतिपात, आश्लेषा, रेवती, कर्क नवांश,

विषघटी तथा मं० बु० गु० शु० श० पापग्रह युक्त नक्षत्र संध्या, प्रातः या मध्याह्न काल, मास शून्य तिथि, वार, नक्षत्र, या जन्म नक्षत्र हो अथवा प्रश्नलग्न से ८।१२ में चन्द्र हो या शत्रुदृष्टि हो। काल—राहु समायोग हो, तो व्याधि या मृत्यु होती है। अथवा राहु अष्टम राशि में या षोड़शांश में हो या 'विपत्' तारा हो वैनाशिक नक्षत्र में हो व्याधि या मृत्यु हो।।४०-४५।।

शिरोललाटभ्रूनेत्रनासाकर्णकपोलकाः ।। ओष्ठं च चिंबुकं कंठमंसौ हृदयमेव च ।।४६।। पार्श्वौ च वक्षः कुक्षिश्च नाभिश्च कटिरेव च ।। जघनं च नितंबं च लिङ्गमंडं च बस्ति च ।।४७।।

नक्षत्र क्रम से श्लोकोक्त २७ अंग–सिर, ललाट, भ्रू, नेत्र, नासिका, कर्ण, कपोल, ओष्ठ, ठोडी, कंठ, कंधे हृदय।।४६।। पाँसू, वक्ष, कुक्षि, नाभि, कटि, जांघ, नितंब, उपस्थ, अंड और वस्ति, ये अंग नक्षत्र पर से जानना।।४७।।

ऊरू च जानू जंघा च गुल्फांघ्री चाश्विभात्क्रमात् ।। तैलाभ्यक्तोऽथ वा शुद्धो जलगर्तसमीपगः ।। प्रष्टा दैवविदे वाथ मरणं तस्य निर्दिशेत् ।।४८।। लग्नत्रिसुतकामारिधर्मकर्मायगः शुभः ।। रोगशांतिकरा नोचेद्रिपुनीचग्रहस्थिताः ।।४९।। एषु पापा मृतिकरा नोचेत्स्वर्क्षोच्चमित्रगाः ।। यस्य यस्य शुभं वाथ रिःफस्थानगताः शुभाः ।।५०।। यद्वा त्रिकोणकेंद्रस्थास्तस्य तस्य शुभप्रदाः ।। मृगकर्क्यादितः सूर्यो राशिपूर्वापरार्धतः ।। शनिशुक्रारचंद्रज्ञगुरवः शिशिरादिषु ।।५१।।

यदि प्रश्नकर्ता तैलाभ्यक्त, सूतकवाला, तालाब के पास बैठा हुआ हो तो पृच्छक की मृत्यु होती है।।४८।। प्रश्नलग्न से ५।३।६।९।१०।११ इन भावों में शुभग्रह होतो रोग-शान्ति होगी और पापग्रह हों तो मृत्यु होगी। परन्तु शुभग्रह बलहीन तथा पापग्रह बलवान न हों।।४९।। जन्मलग्न या प्रश्नलग्न में १।५।७।९।१०।११ स्थानों में शुभग्रह हों तो शुभदायक होते हैं।।५०।। प्रश्नलग्न या जन्म-लग्न से जन्मसमयकाज्ञान-कुंडली में सूर्य मकर से ६ राशि तक हो तो उत्तरायण कर्कादि ६ राशि तक हो तो दक्षिणायन जानना। इसी प्रकार मकर आदि ६ राशि के पूर्वार्द्ध में शनि हो तो शिशिर, शुक्र हो तो वसंत, मंगल हो तो ग्रीष्म, चन्द्र हो तो वर्षा, बुध हो तो शरद् गुरु हो तो हेमन्त जानना, कर्कादि ६ राशि के उत्तरार्द्ध में पूर्वोक्त ग्रहों से पूर्वोक्त ऋतु जानना।।५१।।

अर्के ग्रीष्मस्ततोऽन्यैर्वा वाऽयनादृतुरेव च ।। शुक्रारमंदचंद्रज्ञजीवाश्च परिवर्तिताः ।।५२।। लग्नद्रेष्काणपाः प्रोक्ता नवांशेनैव चापरे ।। तत्पूर्वपरतो मासौ तिथिः स्यादृतुपाततः ।।५३।। लग्नत्रिकोणगो जीवो नवांशस्थोऽथ वा भवेत् ।। ज्ञात्वा वयोनुरूपेण ह्यनुमानवशात्समाः ।।५४।। सूर्यस्थितांशतुल्यां वा तिथिं प्रोवाच भार्गवः ।। राशौ रात्रिदिवाख्ये च जन्म स्यात्तु विलोमतः ।।५५।।

प्रश्नलग्न में—लग्न में सूर्य से ग्रीष्म, चन्द्र से वर्षा, मंगल से शरद, बुध से हेमन्त, गुरु से शिशिर, शुक्र से वसन्त जानना। अथवा शु० मं० श० चं० बु० गु० ये ग्रह लग्न के द्रेष्काणपति हों तो क्रम से ग्रीष्म आदि ऋतु या नवांश से ऋतु लेना।।५२।।

मास, तिथि ज्ञान—पूर्व में जो ऋतुज्ञान कहा गया है उसके पूर्वार्द्ध और उत्तरार्द्ध के विभाग से पूर्वोत्तर मास ज्ञान होगा। इसी अनुपात से तिथि जानना।।५३।।

वर्षज्ञान—प्रश्नलग्न से त्रिकोणस्थान गुरु हो तो जिस राशि का गुरु हो उस राशि का गुरु पूर्वकाल में जिस वर्ष में हो वह जन्म का वर्ष पृच्छक की अवस्था देखकर अनुमान से जानना। यदि १२ वर्ष के गुरुराशि भ्रमण में बीच में कहीं हो तो नवांश से वर्ष जानना।।५४।।

तिथिज्ञान—सूर्य के अंश के अनुरूप (तुल्य) तिथि और लग्न (प्रश्न) रात्रि का हो तो दिन का जन्म और दिन का प्रश्नलग्न हो तो रात्रि का जन्म जानना।।५५।।

गतप्राणैर्जन्मकाले ते च प्राणा भवंत्यथ ।। यद्राशिगः शशी मासःसमं वाऽस्पृशदंगकम् ।।५६।।
तत्त्रिकोणबलाधिक्यं राशिर्लग्नात्तु यावति ।। चंद्रस्तावतिभं चापि जन्मलग्नं विनिर्दिशेत् ।।५७।।
मीने मीनं तु लग्नं वा तथान्यैस्त्वन्यलग्नभम् ।। छायया संयुता यामवारर्क्षतिथिराशयः ।।५८।।
यावतस्तु धनिष्ठादिजन्मर्क्षं तद्विनिर्दिशेत् ।। कलांशादिषु यत्प्रोक्तमृक्षं तद्वा भवेदिदम् ।।५९।।

प्रश्नकाल में जिस राशि का चन्द्रमा हो वह मास, (चैत्रादि) चन्द्रमा सम या विषम जिस राशि में हो उससे ५।९ राशि बलवान् हो तो प्रश्नलग्न से उतनी ही संख्या राशि में जन्मलग्न जानना।।५६।।५७।।

जन्मनक्षत्रज्ञान—प्रश्नसमय के छायापादकी संख्या में प्रहर, वार, नक्षत्र, संख्या का योग करना, २७ का भाग देना जो शेष रहे वह धनिष्ठादि नक्षत्र होता है।।५८।। प्रकारान्तर—कलांश से होरा तक की संख्या से जानना।।५९।।

कलांशाद्यर्धहोरांतं प्रोक्तहोरैर्विभावयेत् ।। पृथग्लिप्तीकृतं लग्नं वर्गणाभिहतं पुनः ।।६०।। आरूढच्छत्रयोर्वीर्यबलस्य वर्गणाहतम् ।। ओजे योगः समे हानिरिति तस्य विधीयते ।।६१।। स्वैः स्वभागैश्च भक्तं तत्तथा मासादयः स्मृताः ।। यद्वा कलीकृतं लग्नं तथा कुर्याद्विचक्षणः ।।६२।। भावकस्य च शुद्धिं च योगं चैव करोत्यतः ।।नवभिश्च कलांशाद्यैस्तथैवोच्चादिभिः क्रमात् ।।६३।। एकाशीतिभिदाः संति नवकाद्यंशशोधनैः ।। येषां योगगते काले समांतेषु सतां यतः ।।६४।।

मासज्ञान में प्रकारान्तर—लग्नराशि की कला करके दो जगह रखना। एकस्थान में स्ववर्ग से गुणा कर आरूढ, छत्र में जो बलवान् हो उसके वर्ग से गुणा करना, पश्चात् लग्नराशि विषम हो तो दूसरी जगह रखे हुए में युक्त करना। सम हो तो हीन करना। १२ का भाग देना तो मास तथा ३० के भाग से दिन होता है।।६०।।६१।। अथवा पूर्वोक्त रीति के पश्चात् नव कलांशरीति से ९ के भाग से जहां अवसान हो वह लग्न जाने।।६२-६४।।

राशिस्तु बलवान्स्वामिगुरुज्ञप्रेक्षणान्वितः ।। अन्यैः पापैरदृष्टः स्याच्छुभदृष्ट्या प्रयोजयेत् ।।६५।।
चंद्रार्कार्चार्यशुक्रज्ञाः पादं मित्रभकर्मणी ।। पश्यंति च शनिः पूर्णमथ धर्मसुतौ गुरुः ।।६६।।
सर्वेऽर्धबंधुमृत्यू च पूर्णं पश्यंति भूमिजः ।। परे त्रिपादं पूर्णं च सर्वे पश्यति सप्तमम् ।।६७।।

उच्चमूलसुहृत्स्वर्क्षस्वद्रेष्काणनवांशके ।। स्थितस्य स्थानवीर्यं स्यात्कुजार्कौ दशमे शनि। ।।६८।।
सप्तमे ज्ञगुरू लग्ने चन्द्रशुक्रौ तु वेश्मनि ।। दिग्वीर्यसंयुता एते नाऽन्यत्र प्रश्न कर्मणि ।।६९।।

लग्नबल ज्ञान–लग्न को गुरु, बुध पूर्णदृष्टि देखते हों तो बली किन्तु पापदृष्टि रहित हो।।६५।।

ग्रहदृष्टि–सू० चं० मं० बु० गु० शु० ये ग्रह ३।१० वें भाव को १ पाद दृष्टि से और शनि पूर्णदृष्टि से देखता है। ९।५ को और सब २ पाद, गुरु पूर्ण दृष्टि से तथा ४।८ को और सब ३ पाद, मंगल पूर्णदृष्टि से देखता है। सप्तमभाव को सभी ग्रह पूर्णदृष्टि सें देखते हैं।।६६।।६७।।

ग्रहों का स्थानादिबल–जो ग्रह स्वक्षेत्र, उच्च, मूलत्रिकोण, मित्र, अतिमित्र राशि का हो या स्वनवांश, स्वद्रेष्काण में हो तो स्थानबल से बली होता है। प्रश्नलग्न से १० भाव में सूर्य, मंगल दिग्बली तथा ७ में शनि बली, प्रथम में बु० गु० बली ४ में चं० शु० दिग् बल से बलवान् होते हैं। यह प्रश्न लग्न का ही बल विचारना, अन्य जातक में नहीं।।६८।।६९।।

मृगादिराशिषट्कस्थाश्चंद्रार्कज्ञार्यभार्गवाः ।। बलवंतः कुजार्की तु कर्कटादिगतौ तथा ।।७०।। पूर्वपक्षे शुभे कृष्णे पापस्तु बलिनस्तथा ।। वक्रिणो बलिनः खेटाश्चेष्टाबलसमन्विताः ।।७१।। शुभाः पापा दिवा रात्रौ बलिनः स्युः क्रमात्स्मृताः ।। निसर्गबलिनः प्राग्वदेव स्युः प्रश्नकर्मणि ।।७२।। लग्नहोराद्रेष्काणार्कनवांशाः सप्तमांशकः ।। कलांशः कालहोरा च त्रिंशांशः षष्टि-भागकः ।।७३।।

अयन बल–मकरादि ६ राशि में सू० चं० बु० गु० शु० अयनबली और कर्कादि ६ में मं० श० अयन बली होते हैं।।७०।।

पक्षबल–शुक्लपक्ष में शुभग्रह बलवान् तथा कृष्णपक्ष में पापग्रह बलवान् होते हैं।

चेष्टाबल–वक्री ग्रह चेष्टाबली होता है। शुभग्रह दिवाबली और पापग्रह रात्रिबली होता है। निसर्ग बल पूर्ववत् जानना।।७१।।७२।।

१० वर्ग बल–लग्न, होरा, द्रेष्काण, द्वादशांश, नवांश, सप्तांश, षोडशांश, कालहोरांश, त्रिशांश, षष्ठ्यंश ये उत्तरोत्तर हीन बल हैं।।७३।।

पूर्वपूर्वो बली प्रोक्तो न बली चोत्तरोत्तरः ।। प्रश्नलग्नं कलीकृत्य नवघ्नं भेनभाजितम् ।।७४।। लब्धं नवांशकं ज्ञेयं शिष्टमात्मकसंस्थिते ।। लब्धं सप्तगुणं वेदभक्तं शिष्टमिहांशकः ।।७५।। नवांशसदृशं लग्नं यद्वा त्रिघ्नार्कभाजितम् ।। सप्ताप्तशिष्टं लग्नं च सप्तमे मासि निश्चिते ।।७६।। सौम्ये तदेव कर्मर्क्षं जन्मर्क्षं वा भवेद्बलम् ।। इदं शास्त्रं मया प्रोक्तमाद्यन्तं तव सुव्रत ।।७७।। नाशिष्याय प्रदातव्यं नापुत्राय कदाचन ।। गुणशीलयुतायैव शिष्यायैव द्विजातये ।। दातव्यं तु प्रयत्नेन वेदांगमिदमुच्यते ।।७८।।

इति श्रीबृहत्पाराशरहोराशास्त्रे उत्तरखण्डे प्रश्नप्रकरण नामद्वाविंशोऽध्यायः ।।२२।।

प्रश्न से जन्मकाल–प्रश्नलग्न की कला करके ९ से गुणा कर २७ का भाग देना। लब्ध नवांश जानना। शेष अलग रखना। पुनः लब्ध को ७ से गुणा कर ४ से भाग देना तो लब्ध नवांश राशि तुल्य जन्म लग्न होना चाहिए। अथवा लब्ध को ३ से गुणा कर १२ से भाग देना, शेष जन्मलग्न होता है। शेष को ७ का भाग देने से सप्तम मासारंभ जानना। शुभग्रह की राशि हो तो वही जन्मनक्षत्र जानना॥७४॥७५॥७६॥

यह आद्यन्त ज्योतिष शास्त्र कुपुत्र या कुशिष्य को नहीं देना चाहिए। गुण, शील, युक्त को देना चाहिए। यह शास्त्र वेद के नेत्रस्वरूप, सर्वमान्य, वेद मूलक है॥७७॥७८॥

इति श्रीबृहत्पाराशरहोराशास्त्रे उत्तरखंडे भावप्रकाशिकायां प्रश्नप्रकरणं नाम द्वाविंशोऽध्यायः ॥२२॥

अथाध्यायानुक्रमवर्णनाह

अध्यायानुक्रमं वक्ष्ये त्वादौ शास्त्रावतारणम् ॥ प्रादुर्भावो ग्रहाणां तु द्वितीये च प्रकीर्तितः ॥१॥ ततो राशिस्वभावश्च चतुर्थे दृष्टिवर्णनम् ॥ गर्भाधानं ततः पश्चात्सूतिकाविधिरेव च ॥२॥ अरिष्टं सप्तमाऽध्याये सुतस्य तदनंतरम् ॥ पित्रोश्च मातुलादीनां तद्भंगो दशमात्स्मृतः ॥३॥ धूमाद्येकादशे मिश्रः पंचांगानां फलं तथा ॥ कारकादि फलं तद्वद्भावानां च फलं तथा ॥४॥ द्वादश द्वादशाऽध्याये द्विग्रहाद्याश्च षट् स्मृताः ॥ एवं क्रमेण ज्ञातव्यन्नाभसादिस्तु चापरे ॥५॥ चिरायुषादियोगाश्च पंचाध्यायास्ततःपरम् ॥ राजयोगास्तथावस्था अंतर्दायविधिस्ततः ॥६॥ दायानां च फलं सप्तस्वंतर्दायस्त्रयोदश ॥ लक्षणं भूपवर्गाणां योगादिषु बलं ततः ॥७॥

अध्यायानुक्रमणिका

पूर्वभाग के प्रथम अध्याय में शास्त्रोत्पत्ति, द्वितीय अध्याय में ग्रहों का प्रादुर्भाव, तीसरे में राशियों का स्वभाव, चौथे में दृष्टि, पांचवें में गर्भाधाननिर्णय, ६ में सूतिका विधान, ७ में अरिष्टयोग, ८ में पुत्रादिभाव विचार, ९ में मातुलादि विचार, दश में योगभंग विचार, ११ में धूम्रादिग्रहविचार, १२ से २३ तक में मिश्र फल, पञ्चांग फल, कारकादि फल, भावफल द्विग्रहादि योग वर्णन फल। २० अध्यायों में नाभासादि योगवर्णन, दीर्घायु योगविचार, आगे ५ अध्यायों में राजयोग वर्णन, अवस्थाविचार, अन्तर्दशा विधि, दशाफल, बाद ७ अध्यायों में अन्तर्दशा का विचार, बाद १३ अध्यायों में राजवर्ग का लक्षण, बाद बलाबल विचार, इस प्रकार ८० अध्याय पूर्वखण्ड में कहे गये हैं॥१-७॥

एवं त्वशीतिरध्यायाः पूर्वभागे समीरिताः ॥ कलौ युगे ततः प्रोक्तं तुर्यान्तमष्टवर्गकम् ॥८॥ पञ्चमे भावदृग्वीर्यमिष्टकष्टबलं ततः ॥ सप्तमे रश्मिसंभूतिरिष्टकष्टं द्विजोत्तम ॥९॥ लोकयात्रैकदेशे च अष्टमे च ततः परम्॥भंगं च लोकयात्राणामेकादशस्य वर्णनम्॥१०॥ द्वादशे लोकयात्रा च तत्परं दाय एव च ॥ अंतदार्यस्तथाध्याये दायानां विषयस्ततः ॥११॥ षोडशे च तथा भाग्यं कलांशादिफलं द्विज ॥ सप्तदशेऽब्दचर्या च विजानीहि ततः परम् ॥१२॥ अब्दचर्याफलं पश्चान्मासचर्याफलं ततः ॥ दिनचर्यां ततः प्रश्नजातकं प्रब्रवीति हि ॥१३॥ अध्यायानुक्रमं पश्चाच्चतुर्विंशेफलं द्विज! ॥ एवं होराशताध्यायी सर्वपापप्रणाशिनी ॥१४॥ युगेषु च चतुष्वेव प्रत्यक्षफलदायिनी ॥१५॥

इति श्रीबृहत्पाराशरहोराशास्त्रे उत्तरखण्डेऽध्यायानुक्रमवर्णनं नामत्रयोविंशोऽध्यायः ॥२३॥

उत्तरभाग की अनुक्रमणिका–प्रथम चार अध्यायों में अष्टकवर्ग का क्विार, ५ में भावबल, दृष्टिबल, ६ में इष्टकष्ट विचार, ७ में रश्मि, इष्ट कष्ट बल, ८ में सुख दुःख विचार, ९ तथा १०में योग भंग विचार,११ में लोकयात्रा, १२ में लोकयात्रा, १२ में दायविचार, १४ में अन्तर्दशाविचार, १५ में दशाविचार, १६ में भाग्यविचार, कलांशादिफल, षोड़शांशादिफल, १७ में वर्षचर्या विचार, १८ में वर्षचर्या, १९ में मासचर्या, २० में दिनचर्या, २१,२२ में प्रश्नविद्या, २३ में अनुक्रमणिका, २४ में शास्त्रफल है। इस प्रकार पूर्वार्द्ध तथा उत्तरार्द्ध में १०० अध्याय हैं। उनका जो कोई पठन या श्रवण करता है, उसका पापनाश होता है। यह शास्त्र प्रत्यक्षफलदायक है। विशेष करके कलियुग में प्रत्यक्षफल प्रदर्शक है।। ८–१५।।

इति श्रीवृहत्पाराशरहोराशास्त्रे उत्तरखण्डे भावप्रकाशिकायां अनुक्रमणिकावर्णनं नाम त्रयोविंशोऽध्यायः ।।२३।।

अथ फलश्रुतिकथनाह्

होराशास्त्रमिदं सर्वं श्रद्धाविनयसंयुतः ।। श्रुत्वा गुरुमुखादेव बुद्धिमानवलोक्य च ।।१।। यो जानाति स शास्त्रार्थं सर्वपापैः प्रमुच्यते ।। श्रावयेद्दर्शयेद्विद्वानन्यो गर्गो द्विजोत्तमः ।।२।। सर्वपापविनिर्मुक्तो ब्रह्मलोकं स गच्छति ।। वेदेभ्यश्च समुद्‌धृत्य ब्रह्मा प्रोवाच विस्तृतम् ।।३।। शास्त्रमाद्यं तदेवेदं वेदांगं वेदचक्षुषी ।। गर्गस्तस्मादिदं प्राह मया तस्माद्यथा तथा ।।४।। तदुक्तं तव मैत्रेय शास्त्रमाद्यंतमेव हि ।।५।।

इति श्रीबृहत्पाराशरहोरायामुत्तरभागे फलश्रुति-कथनं नाम चतुर्विंशोऽध्यायः ।।२४।।

फलश्रुतिकथन

फल और उपदेश परम्परा-इस शास्त्र को गुरुमुख से पढकर अभ्यास करना चाहिए। गुरु और शास्त्र के प्रभाव से मनुष्य सर्वज्ञ होता है तथा पापमुक्त होता है। दूसरे योग्य अधिकारी को उपदेश करना चाहिए। इसके सम्यक् ज्ञान से ब्रह्मलोक की प्राप्ति होती है।।१।।२।। ब्रह्माजी ने पूर्वकाल में वेदों से उद्धार करके इस शास्त्र का उपदेश गर्ग मुनि को किया। यह शास्त्र वेद का नेत्र है।।३।। और गर्गजी ने ब्रह्माजी से पढ़कर हमको उपदिष्ट किया, और हमने तुमको आद्यन्त कहा है।।४।।५।।

इति श्रीबृ० पा० हो० शा० उ० खं० भा० प्र० फलकथनं नाम चतुर्विंशतितमोऽध्यायः ।।२४।।

पं० ताराचन्द्रशास्त्री ज्योतिषाचार्यात्मजेन पं० कामाख्या प्रसाद शर्मणा सम्पादिता श्रीवृहद्‌पाराशर होरा शास्त्रस्य (भावप्रकाशिकाटीका) समाप्ता ।।

ज्योतिष शास्त्र संबंधी हमारे कुछ अन्य प्रकाशन

केरलीय प्रश्न रत्न–हिन्दी टीका सहित
केरल तत्व प्रश्नसंग्रह–हिन्दी टीका सहित
गर्ग मनोरमा–हिन्दी टीका सहित
ग्रह लाघव–हिन्दी टीका सहित
चमत्कार चिन्तामणि–हिन्दी टीका सहित
चमत्कार ज्योतिष–हिन्दी टीका सहित
जातकाभरण–हिन्दी टीका सहित
ज्योतिषसार–हिन्दी टीका सहित
ज्योतिष श्याम संग्रह–चक्रोदाहरणयुक्त हिन्दी टीका सहित
ज्योतिर्गणित कौमुदी–शुद्ध ग्रह गणित का अपूर्व ग्रन्थ
प्रश्नवैष्णव–हिन्दी टीका सहित
प्रश्न ज्ञान प्रदीप–हिन्दी टीका सहित
बालबोध ज्योतिष–हिन्दी टीका सहित
बृहद्यवन जातक–हिन्दी टीका सहित
भाव कुतूहल–हिन्दी टीका सहित
भुवन दीपक–संस्कृत टीका व हिन्दी टीका सहित
भृगु सूत्र–हिन्दी टीका सहित
रमलरत्न–हिन्दी टीका सहित
सामुद्रिक शास्त्र–हिन्दी टीका सहित
रमल गुलजार भाषा
वसन्तराजशाकुन–संस्कृत व हिन्दी टीकासहित
ताजिक नीलकण्ठी–हिन्दी टीका सहित
पत्रीमार्ग प्रदीपिका–हिन्दी टीका सहित
प्रश्न चण्डेश्वर–संस्कृत व हिन्दी टीका सहित
प्रश्न शिरोमणि–हिन्दी टीका सहित
श्रीवेंकटेश्वर शताब्दि पंचांग–विक्रम सम्वत् २००१ से २१०० तक पूरे एक सौ वर्ष का पंचांग एक ही जिल्द में। सम्पादक : नवलगढ़ निवासी पं० ईश्वरदत्तजी शर्मा
बृहद् यवन जातक–हिन्दी टीका सहित
बृहद्दैवज्ञरंजन–मूल मात्र
भविष्य फल भास्कर–हिन्दी टीका सहित
मानसागरी–हिन्दी टीका सहित
मुहूर्त चिन्तामणि–हिन्दी टीका सहित
मुहूर्त प्रकाश–हिन्दी टीका सहित
लीलावती–हिन्दी टीका सहित
वर्षयोग समूह–हिन्दी टीका सहित
वर्ष प्रबोध–हिन्दी टीका सहित
वाराही (बृहत्) संहिता–हिन्दी टीका सहित
विश्वकर्माप्रकाश–हिन्दी टीका सहित
शम्भुहोरा प्रकाश–हिन्दी टीका सहित
सर्वार्थ चिन्तामणि–हिन्दी टीका सहित
समरसार–संस्कृत व हिन्दीटीकासहित

उक्त पुस्तकों के अलावा ज्योतिष व मंत्र, स्तोत्र कर्मकाण्ड, धर्मशास्त्र आदि विषयों के हमारे लगभग तीन हजार प्रकाशनों की विस्तृत जानकारी के लिये बृहत्पसूचीपत्र मुफ्त मगा देखिये।

पुस्तकें मिलने के स्थान :-

१. खेमराज श्रीकृष्णदास,
श्रीवेंकटेश्वर स्टीम् प्रेस,
खेमराज श्रीकृष्णदास मार्ग,
सातवीं खेतवाड़ी खम्बाटा लेन
बम्बई-४०० ००४

२. गंगाविष्णु श्रीकृष्णदास,
लक्ष्मीवेंकटेश्वर स्टीम् प्रेस,
व बुक डिपो,
अहिल्या बाई चौक, कल्याण,
(जि० ठाणे-महाराष्ट्र)

३. खेमराज श्रीकृष्णदास, चौक-वाराणसी (उ. प्र.)

खेमराज श्रीकृष्णदास, बम्बई-४